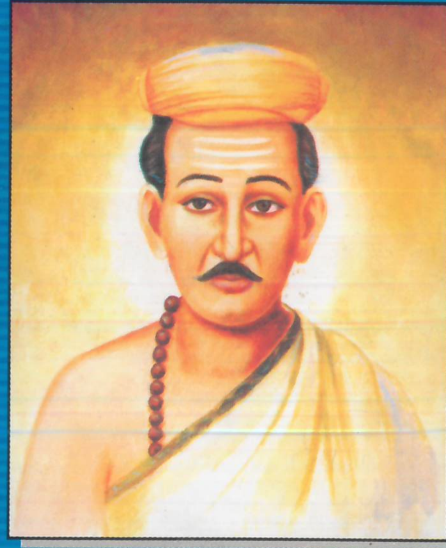
प्रेम सौन्दर्य विधायक

विद्यापति



डॉ० वीरेन्द्र मल्लिक

प्रेम सौन्दर्य विधायक
विद्यापति

प्रेम सौन्दर्य विधायक विद्यापति

डॉ० वीरेन्द्र मल्लिक



प्रकाशक
शेखर प्रकाशन, पटना-24

ISBN : 978-81-931779-2-1

प्रकाशक : : शेखर प्रकाशन
पटना - 800024
मो. नं. - 09334102305

प्रथम संस्करण : 2016 ई.

मूल्य : साधारण संस्करण रु. 500.00
डिलक्स सजिल्द
पुस्तकालय संस्करण रु. 700.00

आवरण/टाइप सेटिंग : अजय कुमार (टुट्टु)

पुस्तक प्राप्ति स्थान

- डॉ० संजीव मल्लिक
यू.जी. 3, एस.एच अपार्टमेंट
प्लाट नं. 1, खसरा न. 202,
बुराड़ी, नई दिल्ली-110084

- श्रीमती मणिबाला मल्लिक
ग्राम-पो. परसौनी-847223
मधुबनी-847214
(बिहार)

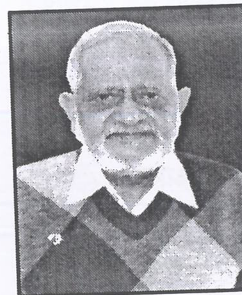
- शेखर प्रकाशन
पोपुलर फर्माक पाछा, न्यू मार्केट
पटना-800001

PREM SAUNDARYA VIDHAYAK VIDYAPATI

BY

Dr. Virendra Mullick

प्रसंगवश



प्रस्तुत शोध-प्रबन्धमे मैथिली साहित्यक पुरोधा महाकवि विद्यापतिक प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी अवधारणाक मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कएल गेल अछि । संसारक प्रायः सभ देश एवं सभ कालक साहित्यक शाश्वत तत्व थीक - प्रेम आओर सौन्दर्य । यैह मानवक मूल वृत्तिसमुदाय थीक, जे ओकर समस्त स्थूल एवं सूक्ष्म सत्ताक मूल मे निहित अछि आओर अपन रससँ जीवनक जटिलतम स्नायु-जालकेँ अनुप्राणित कयने रहैछ । साहित्यक उक्त विषय सनातन होइतहुँ चिर नवीन अछि । एकर आयाम एतबाने विस्तृत एवं गँहीर अछि जे एहि मे मानव-मोनक समस्त वृत्ति तथा जगतक समस्त रूप समाहित भए जाइछ । ई जाहि रूपेँ जीवन सँ सम्बद्ध अछि, ताही रूपेँ साहित्य वा काव्यहु सँ । प्रेम एवं सौन्दर्यक ई अनादि भावना मानव प्राणियेक सम्पत्ति नहि, ई मानवेतर जगत मे सेहो परिव्याप्त अछि । निम्न जीव-जगत आओर ताहि सँ बढ़ि कए वनस्पति जगत मे सेहो प्रेम एवं सौन्दर्यक चेतना परिलक्षित होइछ । प्रेम एवं सौन्दर्य-यैह कविताक आदि विषय थीक । हजारहु पुनरावृत्तिक अतिरिक्त यैह विषय कविताक उपजीव्य रहल अछि । अतः साहित्य मनीषी, विषय आओर वस्तु दुनू दृष्टियेँ प्रेम एवं सौन्दर्य केँ काव्यक मुख्य विषय सिद्ध करैछ । महाकवि विद्यापतिक सम्पूर्ण साहित्यमे प्रेम एवं सौन्दर्यक मणि-कांचन-संयोग भेल अछि । यद्यपि एहि विषयक सम्यक विश्लेषण, विद्यापतिक समस्त साहित्यक गहन अध्ययन एवं कठिन परिश्रमक अपेक्षा रखैछ, परंच अपना विषय केँ विशेष सशक्त एवं स्पष्ट रूप मे प्रस्तुत करबाक हेतु हम 'पदावली'ए धरि केन्द्रित भए अपना केँ परिसीमित राखल अछि । विद्यापतिक प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी अवधारणाक मनोवैज्ञानिक अध्ययनक दृष्टि सँ ई प्रायः मैथिलीक प्रथम शोध-प्रबन्ध थीक।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध एक विशेष दृष्टिकोण सँ लिखल गेल अछि । एहि मे प्रायः प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी पाश्चात्य एवं भारतीय दृष्टिकोणक वैज्ञानिक रूपेँ तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कए, महाकवि विद्यापतिक प्रेम

एवं सौन्दर्य सम्बन्धी अवधारणाक यथा संभव सभ प्रवृत्तिक अध्ययन कें प्रमुखता देल गेल अछि । विषयक विस्तारक भय सँ प्राय: ओही पद्यांश एवं उद्धरण कें एहिमे स्थान देल गेल अछि जे अनिवार्य एवं प्रतिनिधि बुझना गेल अछि । प्रस्तुत शोध-प्रबन्धक विषय 'प्रेम-सौन्दर्य-विधायक विद्यापति' राखल गेल अछि । अत: प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी ओही प्रवृत्ति कें महत्व प्रदान कएल गेल अछि जकर मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ विशेष महत्व अछि ।

उपर्युक्त दृष्टिकें प्रस्तुत करैत विषयकें निम्नलिखित ढंग सँ विभिन्न अध्याय मे विभक्त कएल गेल अछि - उपस्थापन, प्रेम आओर सौन्दर्यक मनोवैज्ञानिक अध्ययन, प्रेम आ सौन्दर्यक स्वरूप, राधाकृष्णवाद आ विद्यापतिक राधाकृष्णमे प्रेम-सौन्दर्यक उद्भावना, प्रेम-सौन्दर्य विधायक विद्यापति, विद्यापतिक काव्य-सौन्दर्य आ काव्य शास्त्रीय परम्परा, श्रृंगारक उन्मुक्त गायक विद्यापति, विद्यापतिक प्रेम-काव्य मे लोक-चेतनाक उन्मेष, विद्यापतिक प्रेम-काव्यक परवर्ती कविलोकनि पर प्रभाव तथा उपसंहार । उपस्थापन मे प्रेम एवं सौन्दर्य शब्दक व्युत्पत्ति, शब्दार्थ एवं परिभाषा प्रस्तुत कए ओकर मूल स्वरूपक विश्लेषण तथा विविध रूपक विवेचन प्रस्तुत कयल गेल अछि । द्वितीय अध्याय मे प्रेम एवं सौन्दर्यक मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कएल गेल अछि जकरा अन्तर्गत काम, सेक्स एवं प्रेमक पारस्परिक सम्बन्धक विश्लेषणक संग मानवक सौन्दर्य प्रियताक समीचीन विवेचना कएल गेल अछि । तृतीय अध्याय मे राधाकृषवादक स्वरूप-विकासमे प्रेम सौन्दर्यक उद्भावना पर प्रकाश देल गेल अछि, संगहि विद्यापतिक राधा कृष्णक प्रेम एवं सौन्दर्यक विस्तृत व्याख्या कएल गेल अछि । चतुर्थ अध्याय मे शोध-प्रबन्धक सार तत्व निहित अछि जाहिकें अन्तर्गत प्राय: प्रथमत: मैथिलीमे विद्यापतिक प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी समस्त अवधारणा कें विस्तृत रूपें व्याख्यायित कए, विद्यापतिकें प्रेम-सौन्दर्य-विधायक घोषित कएल गेल अछि । पंचम अध्यायमे काव्य शास्त्रीय परम्पराक आधार पर विद्यापतिक काव्य-सौन्दर्यक मूल्यांकन कएल गेल अछि। षष्ठ अध्यायक अन्तर्गत विद्यापति कें सप्रमाण एवं सोदाहरण श्रृंगारक उन्मुक्त गायक सिद्ध कएल गेल अछि । सप्तम अध्यायमे विद्यापतिक प्रेम-काव्यमे निहित लोक-चेतनाक उन्मेषक आधार पर महाकवि कें जन-कवि प्रमाणित कएल गेल अछि, संगहि विद्यापति कालीन मिथिलाक राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवस्था, मिथिलाक काव्यानुराग तथा संगीत-नृत्य-परम्पराक विश्लेषण कएल गेल अछि । अष्टम अध्याय मे विद्यापतिक प्रेमकाव्यक परवर्ती कविलोकनि पर प्रभाव कें प्रदर्शित कएल गेल अछि, संगहि मैथिली, ब्रजबुली, बंगला, असमिया, उडिसा, भोजपुरी, नेपाली आदि भाषाक साहित्य पर विद्यापतिक प्रभावक अनुशीलन करबाक विनम्र प्रयास कएल गेल अछि । नवम अध्याय उपसंहारक रूपमे प्रस्तुत कएल गेल अछि जाहि मे प्रस्तुत शोध-प्रबन्धक सारतत्व कें प्रस्तुत कए ओकर सम्यक विवेचन-विश्लेषण कएल गेल अछि।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्धक प्रणयन डॉ. प्रेमशंकर सिंह, एम.ए. (मैथिली, हिन्दी), पी-एच.डी., अध्यक्ष, मैथिली विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालयक प्रेमपूर्ण प्रेरणा, निर्देशन एवं सहयोगक फलस्रूप संभव भए सकल अछि । जीवनक किशोरावस्थहि सँ साहित्य-सर्जना एवं अध्ययन-अध्यापनक कारणें मोन मे संकल्प जकाँ भए गेल छल जे अपन बिस्फी प्रखण्ड मे प्रादुर्भूत महाकवि विद्यापतिक प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी भावनाक मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करी । प्रथम साक्षात्कारहिमे सिंह जी एहि संकल्प कें क्रियान्वित करबाक लेल हुलसि कए प्रेरित-प्रोत्साहित कयलन्हि । एहि गुरुतर कार्य कें अग्रसरित करबामे परम श्रद्धेय गुरुवर डॉ. प्रबोध नारायण सिंहजीक आदर्श एवं लक्ष्यक पवित्रता मोन मे साहसक संचार कयलक । कार्य द्रुत गतिए प्रारंभ भेल आ अन्तत: एहि शोध-प्रबन्ध पर भागलपुर विश्वविद्यालय द्वारा सन् 1978 ई.मे पी-एच.डी. उपाधि प्रदान कएल गेल । अस्तु, एहि शोध-प्रबन्धमे जे किछु उत्कृष्ट अछि तकर श्रेय डॉ. प्रेमशंकर सिंह कें छन्हि आ जे त्रुटि अछि, तकर मूलमे हमर अपन सीमा अछि ।

एहि शोध-प्रबन्धक मूल मे जाहि महानुभाव लोकनिक ग्रंथ सँ किंवा साक्षात्कार सँ समस्याक समाधान मे सहायता भेटल अछि, हम हुनकालोकनिक हृदय सँ आभारी छी । विशेष रूपें एहि प्रकारक पांक्तेय विद्वान एवं सहृदय लोकनिक नाम अछि डॉ. अणिमा सिंह, प्रो. राधाकृष्ण चौधरी, डॉ. सुभद्र झा, डॉ. जयकान्त मिश्र, डॉ. शैलेन्द्र मोहन झा, डॉ. आनन्द मिश्र, डॉ. मुनीश्वर झा, आ. रमानाथ झा, पं. शिवनंदन ठाकुर, बाबू लक्ष्मीपति सिंह, पं. राजेश्वर झा, पं. गोविन्द झा तथा नरेन्द्रनाथ दास विद्यालंकार । अंतमे हम श्रीकान्त मंडलजीक प्रति अपन हार्दिक आभार प्रकट करैछ जनिक प्रोत्साहन एवं सहयोगक अभाव मे प्रस्तुत शोध कार्य कें करब हमरा लेल कठिन छल । इत्यलम् ।

-वीरेन्द्र मल्लिक

महाशिवरात्रि

7 मार्च, 2016

संकेत निर्देशिका

मि.म. - खगेन्द्रनाथ मित्र एवं अमूल्यचरण विद्याभूषण विमान विहारी मजुमदार
वि.वि.म. - विमान विहारी मजुमदार
बेनी. - रामवृक्ष बेनीपुरी
वि.रा.प. - विहार राष्ट्रभाषा परिषद
ब्रज.स. - ब्रजनन्दन सहाय
सु. झा. - सुभद्र झा
रा. सिंह - रामइकबाल सिंह
व.कु.मा. - वसंत कुमार माथुर
न. गु. - नगेन्द्रनाथ गुप्त
प. स. - पदामृत समुद्र
मि.गी.सं. - मैथिली गीत संग्रह
पृ. - पृष्ठ
प. - पद
ब्रज. स. - ब्रजनन्दन सहाय

अनुक्रम



प्रथम अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्यक स्वरूप

प्रथम अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्यक स्वरूप

प्रेमक व्युत्पत्ति, शब्दार्थ आ परिभाषा :

'प्रेम' शब्दक प्रयोग यद्यपि प्राचीनतम भारतीय साहित्य ऋग्वेदमे नहि भेटैछ, तथापि प्रिय शब्दक प्रयोग अवश्य भेल अछि आ तीनू लिंग तथा सभ विभक्ति मे भेल अछि ।[1] 'प्रेम' आगाँ चलि कऽ पुराण-इतिहास काल मे श्रीमद्भागवत आदि पुराण आ नारद भक्ति सूत्रादि भक्तिप्रधान ग्रंथ सभ मे प्राप्त अछि ।

व्युत्पत्ति :

'प्रेमन्' भाववाचक संज्ञा शब्द थिक। ई शब्द संस्कृत मे नपुंसक लिंग तथा हिन्दी आ मैथिली मे दुनू लिंग मे प्रयुक्त होइछ । वाचस्पत्य कोष मे एकर व्युत्पत्ति प्रिय शब्द सँ कयल गेल अछि – यथा, "प्रियस्य भावः इमनिच प्रत्यय प्रादेशः"[2] । प्रियस्यभावः = प्रेमा (पुलिंग) प्रिय 'प्र' प्रकृति आ भवार्थक 'इमन्' प्रत्यय सँ 'प्रेमा' शब्द निष्पन्न भेल । तेँ 'प्रेमन्'क अर्थ भेल 'प्रियता', प्रियक भाव वा प्रिय होयब । प्रेमन् शब्दक व्युत्पत्ति प्री (अर्थात् प्रसन्न करब, आनन्द लेब वा आनन्दित होयब) धातु सँ मनिन् (मन्) प्रत्यय जोड़ि कऽ सेहो भऽ सकैछ । एहि शब्दक लिंग नपुंसक होयत। 'प्रेम' शब्दक एक आओर व्युत्पत्ति व्याकरणक अनुसारेँ भऽ सकैछ। 'प्रीञ्' 'प्रीतो' धातु सँ उणादि सूत्र 'सर्व धातुभ्यः' सँ मनिन् प्रत्यय कय 'प्रेम' शब्द निष्पन्न भेल अछि । एवं क्रमेँ व्युत्पत्ति लभ्य 'प्रेम' शब्दक अर्थ भेल-जे प्रीति दैत हो, अर्थात् अनन्त तृप्ति प्रदान करैत हो ।

शब्दार्थ :

'प्रेम' शब्द एकटा अत्यन्त व्यापक शब्द थीक जे एकर विविध अर्थक व्याप्ति द्वारा विदित होइछ । एकर शब्दार्थे सँ एकर व्यापक आयाम अथवा विशाल भावनाक बोध होइछ । वाचस्पत्य कोषकार, अमरकोषकार एवं सुप्रसिद्ध कोषकार आप्टे एहि शब्द केँ अनेक सूक्ष्म भावनाक वाहक

कहलन्हि अछि ।[3] पाश्चात्य कोषकार लोकनि सेहो प्रेमक यैह विशाल भावना दर्शौलन्हि अछि तथा सूक्ष्मता प्रदान कयलन्हि अछि ।[4] ध्यान देबाक विषय ई अछि जे पूर्व एवं पश्चिमक सभ कोषकार प्रेम केँ स्थूल इन्द्रिये धरि सीमित नहि रखलन्हि अछि, प्रत्युत् ओकरा मोनक सूक्ष्म एवं उदात्त स्तर धरि पहुँचौलन्हि अछि ।

कोषकार लोकनिक अर्थक आधार प्रायः व्याकरणगत व्युत्पत्ति आ साहित्यगत प्रयोगादि होइछ, अतः ओ पूर्ण प्रामाणिक होइत अछि । एतदरिक्त कवि, भक्त, दार्शनिक एवं अन्य साधक लोकनिक सेहो अनुभव आ अध्ययनक आधार पर शब्दक वास्तविक अर्थक स्थापना होइछ । अतः 'प्रेम' शब्दक अर्थ केँ स्पष्टतः बुझबाक लेल कतिपय विचार सूत्र, व्याख्या किंवा परिभाषा एतय प्रस्तुत कयल जाइछ ।

परिभाषा अथवा विचार-सूत्र

संस्कृत :

(1) अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् । मूकास्वादवत् । प्रकाशते क्वापि पात्रे ।
गुण रहितं कामनारहितं प्रतिक्षण वर्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपम् ।
'तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदैवश्रृणोति तदैव भाषयति तदैव चिन्तयति ।
– महर्षि नारद[5]

(2) सम्यङ् मसृणितस्वान्तो ममत्वातिशयाङ्क्तिः ॥
भावः स एव सान्द्रात्मा बुधैः प्रेमा निगद्यते ॥
– श्री रूपगोस्वामी[6]

(3) निःसंदेह प्रेम सँ संतप्त प्राणी चेतन आ जड़क भेद करबा मे असमर्थ होइछ । – कालिदास[7]

(4) प्रेम बड़जोरी उत्पन्न नहि कयल जा सकैछ, ओ गुण सभ सँ स्वयं उत्पन्न होइछ । – शूद्रक[8]

(5) ई तँ कोनो अज्ञाते कारण थिक जे दू हृदय केँ मिला दैछ, कोनो बाह्य कारण-सौन्दर्यादि पर प्रेमी आश्रित नहि रहैछ । – दंडी[9]

(6) प्रेम मोनक एकटा विकल्प मात्र थिक – – दंडी[10]

(7) जाहि भाव केँ उत्पन्न भेला पर दू व्यक्तिक मोनं, विचार, संशय आदि सँ शून्य भऽ जाइछ, जाहि सँ आनन्दक स्रोत प्रवाहित होमय लगैछ, ओहि भाव केँ प्रेम कहल जाइछ ।[11]
– राजशेखर

(8) कहल जाइछ जे प्रेमक आनन्द लेबाक लेल आत्मा पुनः एक बेरि अस्थिपिंजर मे बन्द होयबाक लेल प्रस्तुत भेल अछि । बाह्य सौन्दर्य कोन काजक, जखन कि प्रेम, जे आत्माक भूषण थिक, हृदय मे नहि हो । प्रेम जीवनक प्राण थिक । जकरा मे प्रेम नहि, ओ मात्र मासु आ हारक ढेरी थीक ।[12] –ऋषितिरुवल्लुवर

हिन्दी :

(9) छिनहि चढ़ै, छिन उतरै, सो तो प्रेम न होय ।
अघट प्रेम पिंजर बसै, प्रेम कहाबै सोय ॥ – कबीरदास
– जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान । – कबीरदास

(10) एक भरोसो एक बल, एक आस बिसवास ।
एक राम घनस्याम हित, चातक तुलसीदास ॥ – तुलसीदास

(11) घायल को गति घायल जाने, कि जिण घायल होइ । – मीराबाई

(12) प्रेम हरि को रूप है, त्यौ हरि प्रेम स्वरूप । – रसखान

(13) या अनुरागी चित्त की, गति समुझे नहि कोय । –
ज्यों-ज्यों बूड़े स्याम रंग, त्यों-त्यों उज्ज्वल होय – बिहारीलाल

(14) अति सूधो सनेह को मारगु है । – घनानन्द

(15) प्रेम को पंथ कराल महा तलवार की धार पे धावनो है । – बोधा

(16) मारग प्रेम को, को समुझै,
हरिचन्द यथारथ होत यथा है । – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

(17) विशिष्ट वस्तु वा व्यक्तिक प्रति भेला उत्तर लोभ ओ जे सात्विक रूप प्राप्त करैछ तकरा प्रीति वा प्रेम कहल जाइछ ।
– आ. रामचन्द्र शुक्ल

उर्दू :

(18) शायद इसी का ऩाम मोहब्बत है शैफत ।
एक आग सी है दिल मे हमारे लगी हुई ॥ – गालिब

(19) हम तेरे इश्क से तो वाकिफ नहीं हैं लेकिन ।
सीने में कोई जैसे दिल को मला करे है ॥ – मीर

बंगला :

(20) जखन हम अपनाकेँ विश्वव्यापी बुझैत छी तँ हमरा मे स्वार्थ नहि रहि जाइछ, मुदा जखन हम भ्रमवश ई सोचय लगैत छी जे हम स्वयं मर्यादित छी तँ हमर प्रेम संकीर्ण तथा विशेष भावापन्न भऽ जाइछ । संसारक सभ वस्तु ईश्वरजन्य थीक आ तेँ ओ प्रेमपात्र थीक । यैह

ध्यान मे रखबाक चाही जे समष्टिक प्रेमहि मे अंशक प्रेम अन्तर्भूत अछि । – स्वामी विवेकानन्द

अंग्रेजी :

(21) प्रेमानुभव सँ रहित व्यक्ति सर्वदा अन्हार मे भुतिआइत रहैछ ।
– प्लेटो [13]

(22) प्रेम सँ हमर अन्तःचक्षु फुजि जाइछ । – नित्शे [14]

(23) प्रेम-व्यापारक द्वारा अभेदक स्थिति प्राप्त होइछ ।
– हेगल [15]

(24) भुज-पाश मे बन्हला उत्तरे कल्पनाक प्रस्फुटन् होइछ ।– मूलर [16]

(25) प्रेम नहि देखैछ आंखि सँः
ओ देखैत अछि हृदय सँ
यैह तँ बस कारण थिक –
क्यूपिडक चित्र होइछ आन्हर । – शेक्सपियर [17]

(26) मानव-मोनक सबसँ सुन्दर दुर्बलता प्रेम थीक । – ड्राइडन [18]

(27) जे प्रथम दृष्टिमे प्रेम नहि कयलक,
ओ प्रेम की कयलक । – मारलो [19]

(28) जे प्रेम करय नहि जनैछ, बूझि लीअऽ ओकरा पास हृदय नहि छैक ।
– वोल्टेयर [20]

(29) सुन्दरता केँ बेसी सुन्दर बना दैछ प्रेम । – वर्ड्सवर्थ [21]

(30) प्रेम देब आ लेब – दुनू मधुर होइछ । – शेली [22]

(31) जुनि पुछू जे प्रेम की थीक ? पुछू जे ईश्वर मे सभ सँ बढ़ियाँ की थिकैक । – पी.जे. बैली [23]

(32) ज्ञान शुष्क अछि, प्रेम मधुर अछि । – रोजेटी [24]

(33) तुच्छ वासना केँ रहैत प्रेमक कमल नहि फुला सकैछ ।
– हैव्लॉक एलिस [25]

(34) जीवन मे कहियो प्रेम नहि करबाक अपेक्षा बढ़ियाँ होइछ प्रेम करब आ ओकरा छोड़ि देब, किंवा असफल होयब ।
– टैनिसन [26]

(35) प्रेम नहि करबाक अर्थ अछि जीवनक निषेध किंवा जीवित मृत्यु।
– आर. डब्ल्यू. ट्विन [27]

(36) भाव ई अछि जे विभिन्न मानव-समुदायकेँ तथा विभिन्न सामाजिक वर्ग, सम्बन्ध आ प्राणी केँ एक सूत्रमे बान्हयवला प्रेमे अछि । अनेक विभेद केँ रहलो सन्ता मूल मे एकटा प्रेम अछि जकर नीवक गहराई, व्यवहार आ दर्शन, दुनू क्षेत्रमे स्वीकृत छैक ।
– क्रिस्टोफर काडवेल [28]

(37) भाव ई जे प्रेमक अतिरिक्त एहि संसार मे सभ किछु नश्वर थीक। प्रेम यदि नहि होअए तँ धन-सम्पत्ति भार थिक आ हमर ज्ञान-ध्यान एकटा एहन प्रकाश अछि जे जीवनक जड़ता वा अन्धकार केँ किछु आर बढ़यबे करैत अछि, घटबैछ नहि। वस्तुतः प्रेम ओ मधुर ऊष्मा थीक जे हृदय केँ शीतल-गरम कयने रहैछ आ अनिर्वचनीय तृप्ति एवं शांति प्रदान करैछ । लेबा मे नहि, देबा मे प्रेमक स्वाद होइछ । सभ किछु बेकार थीक, बस प्रेमहि एकटा सार वस्तु थीक।
–विल डूराण्ट [29]

(38) सामान्यतः प्रेमक अर्थ होइछ अंधकारक त्याग द्वारा अपन मुक्ति।
– व्लादीमीर सोलवियेव [30]

(39) वास्तविक प्रेम सूर्य जकाँ आत्माक प्रकाशकेँ पसारैछ..... प्रेमक अर्थ होइछ वास्तविक सौन्दर्यक दर्शन......ई सत्य थीक जे ओ व्यक्ति जे कहियो प्रेम नहि कयलक, तकरा ईश्वरक प्राप्ति भइये नहि सकैछ । – स्वामी रामतीर्थ [31]

(40) भाव ई जे प्रेम एकटा भावने मात्र नहि थीक । ओ परमार्थ थीक, परम सत्य थीक, सृष्टिक आनन्द-प्रेरणा थीक, ब्रह्मक शुभ्र ज्योति थीक, एकरहि माध्यमेँ हम ब्रह्म-विहार कऽ सकैतछी । मात्र प्रेम रहित व्यक्ति एकटा प्रेमोपहारो पर हानि-लाभ वा उपयोगिताक रूपमे विचार करैत अछि, मुदा ई प्रेम नहि थीक।
– रवीन्द्रनाथ टैगोर [32]

(41) प्रेमक अनुभवे मानव जीवनक परम फल थीक ।– राधाकृष्णन [33]

मैथिली :

(42) संसार मे सार वस्तु एकहिटा थीक-तिलभरि संगम आ जीवन पर्यन्त बनल रहयवला प्रेम । – विद्यापति [34]
– प्रेमक गति अत्यंत विचित्र होइछ ।– ओएह [35]
– सज्जन लोकनिक प्रेम स्वर्णतुल्य होइछ जे दुःखक आँच मे पड़ि कऽ द्विगणित भऽ जाइछ ।– ओएह [36]

– प्रेमकेँ गुप्त रखबाक चाही, दोसरा सँ जतबा नुकायब, स्नेहक स्रोत ओतबहि बढ़त ।– ओएह [37]

प्रेमक मूल स्वरूप :

समष्टि मे जे ब्रह्म किंवा व्यापक परमात्मा छथि, व्यष्टि मे ओएह तत्त्व आत्मा रूपेँ प्रतिष्ठित छथि । तात्विक रूपेँ व्यक्तिक आत्मा मे सेहो ब्रह्म वा परमात्माक सत्-चित् आ आनन्द तीनू रूप प्रतिष्ठित अछि । जे व्यक्ति आत्माक अनुभव वा साक्षात्कार कऽ लैत अछि, ओ वस्तुतः ब्रह्म वा परमात्मेक साक्षात्कार करैत अछि । सत्-चित् आ आनन्द, ब्रह्मक ई तीनू स्वरूप, भिन्न-भिन्न विभाजित खण्ड वा अंश नहि थिक, अपितु तीनू मिलि कऽ एक अछि । वस्तुतः ककरो, एक-दोसरा सँ पृथक कऽ कए नहि देखल जा सकैछ । जे सत्य अछि, ओ अनिवार्यतः चित् अछि आओर जे चित् अछि, ओ आनन्द अछि । ब्रह्म मे वा आत्मा मे ई तीनू सम मात्रा मे एवं सामंजस्यक संग शाश्वत रूपेँ विद्यमान अछि । हमरालोकनि मात्र व्यावहारिक ज्ञान किंवा शास्त्रीय विवेचनक लेल ओकरा भिन्न-भिन्न कऽ देखैत छी वा भिन्न-भिन्न रूपमे ओ देखाइ दैत अछि । वस्तुतः ई तीनू रूप मिलिएकऽ, एक भऽ कऽ ओहि पूर्णताक भावना सँ परिचित करबैत अछि । एहि मे सँ, जे क्यो ब्रह्मक एक्को स्वरूपक साक्षात्कार कऽ लैछ, ओ वस्तुतः सभ स्वरूपक साक्षात्कार कऽ लैत अछि । जे वास्तविक भक्त अछि, ओ वास्तविक ज्ञानी अछि । जे वास्तविक ज्ञानी अछि; ओ पूर्ण भक्त अछि; आ जे वास्तविक कर्मयोगी अछि, ओएह वास्तविक ज्ञानी एवं वास्तविक भक्त अछि ।

उपर्युक्त तीनू स्वरूप अनुभूयमान अछि आ शास्त्रक कथन अछि जे ब्रह्मक आनन्द-स्वरूप सहज-गम्य अछि ।[38] एहि स्वरूपक साक्षात्कार लेल आत्मा केँ निर्गुण सँ उतरिकऽ सगुण रूपमे आबय पड़ैत छैक ।[39] आत्मा निर्गुण आ सगुण दुनू थिक ।[40] अपन निर्गुण स्वरूपमे ओ जीव-देहक उपाधि अज्ञान आ ईश्वरक उपाधि माया, प्रकृतिक शुद्ध (विशुद्ध तत्व) आ अशुद्ध (सत्व, रज आ तम) गुण, देश-काल, कार्य-कारण, भाव, ज्ञान एवं द्वन्द्वादि सँ फराक पूर्ण निरुपाधि, प्रकाशवान् एवं पूर्ण सत्ता अछि जे तटस्थ, मौन, एकरस, अचिन्त्य, अरूप आ अनाम भए अपन समस्त शक्ति केँ समेटि कऽ व्यक्ति मे लीन रहैत अछि । ओकर सगुण रूप चित्त ओ देहेक माध्यम सँ प्रकाशित होइछ । प्रेमेक अनुभूति सँ आत्माक उन्मीलन होइछ आ आनन्द सँ कला निःसृत होइछ । निर्मल प्रेमक अनुभूति एकटा एहन व्यापक, विराट एवं शक्तिशाली अनुभूति थिक जे ओहि सँ अन्तःकरण मे स्थित आत्माक

तत्काल अनुभव होइछ । जीवन आ प्रकृतिक सम्पूर्ण रहस्य तत्काल बुझबा मे आबि जाइछ आ अनुभव होमय लगैछ जे चराचर जगतक समस्त पदार्थ एक्केटा दिव्य सत्ता मे 'सूत्रे मणिगणा इव' गाँथल अछि । एहि अनुभूतिक पूर्व सभ किछु निर्जीव, आनन्दरहित आ जड़ थिक आओर एकर अनुभूति भेले उत्तर सभ किछु दिव्य, प्रफुल्लित, आलोकमय, जागृत आ सहृय । एहि अनुभूति सँ प्राणी बन्धनादि सँ मुक्त होइछ[41], आ पवित्र भऽ देह आ चित्त सँ उपर उठिकऽ अपन आत्माक आनन्दमय स्वरूप मे लीन भऽ जाइत अछि ।[42]

प्रेमक एहन उदात्त अनुभूति-स्वरूपक पूर्ण संतोषजनक विश्लेषण एही आत्म तत्व केँ आधार बनाकऽ कयल जा सकैछ, आन कोनो प्रकारेँ नहि ।[43] विश्लेषणक अन्यान्य पद्धति उपरे-उपर दहाइत रहि जाएत, अतल मे जाकऽ प्रेमक वास्तविक सत्ताक मर्मोद्घाटन नहि कऽ सकत । स्थूल दृष्टिञे ई सत्य अछि जे प्रेम-वृत्तिक उदय एवं विकास चित्तभूमिञे पर (प्रकृतिमे) होइछ, ओ प्रकृतियेक धर्म बुझना जाइछ तथा इन्द्रियेक माध्यम सँ प्रकाशित होइछ, मुदा एकर गतिविधि केँ एतहि धरि सीमित कऽ देनाइ ओहिना प्रतीत होइछ जेना कोनो बटुक द्वारा विद्यालय धरि नहि पहुँचिकऽ बाध मे गुड्डी उड़ाकऽ घर आपस आयब होइछ । वास्तविकता ई थिक जे स्थूलतः चित्त आ इन्द्रिय सँ अभिव्यक्त भेलो सन्ता प्रेम-भावनाक मूल उद्गम हमर आत्मे थिक । आत्माक प्रेरणा बिनु कोनो आनन्दात्मक इन्द्रिय-व्यापार नहि भऽ सकैछ ।[44] ओतहि सँ एहि अनुभूति केँ प्रकाशक चैतन्य रूप एवं दिव्य स्पर्श प्राप्त होइछ। प्रेमक सार तत्व आत्मिक दृष्टिशील भेले सन्ता ग्रहण कयल जा सकैछ। स्वयं वात्स्यायन सेहो अपन कामसूत्र मे एहि अमर तत्व आत्मे केँ प्रमुख स्थान देलन्हि अछि ।[45] तथापि स्पष्टताक लेल, प्रेमक विवेचन दू गोट आधार पर कयल जा सकैत अछि –

1. आत्माक दृष्टि सँ, जकरा अनुसारेँ प्रेम शाश्वत (नित्य) आत्माक शाश्वत धर्म थिक ।[46]

2. देह आ चित्तक दृष्टि सँ, जकरा अनुसारेँ प्रेम मात्र चित्त वा प्रकृतियेक धर्म, थिक[47], आ जे परिवर्तित भऽ अस्थिर आ अनेक रूपवला भऽ जाइछ ।

एहि मे सँ पहिल आधारहि स्वस्थ एवं पुष्ट अछि कारण आत्माक आधार पर कयल गेल प्रेमक आध्यात्मिक व्याख्या विशेष पूर्ण आ संतोषजनक

बूझल जाइछ। आत्मिक आधार मे देहक समस्त क्रियाकलाप समाहित भऽ जाइछ, जखन कि चित्त आओर देहक आधार पर प्रस्तुत व्याख्या मे आत्मतत्व अस्पृश्ये रहि जाइछ । अतः एहि प्रकारक व्याख्या अपूर्ण होइछ आओर सहृदय चित्त, हृदय एवं बुद्धिक लेल ओ पूर्ण ग्राह्य नहि भऽ सकैछ।

निराकार रूपमे आत्मा अपना मे सभ शक्ति कें समेटने रहैत अछि। आत्माक धर्म-प्रेम वा आनन्द, अपन मूल स्थान आत्मा मे शाश्वत रूपें विद्यमान अछि, मुदा ओकर प्रकाशन आत्माक सगुण रूप मे अयले उत्तर संभव होइछ । हमरालोकनिक आत्मा प्रकाशमान सूर्य-पिंड सदृश अछि। ओ प्रकाश ओ शक्तिक पुंज अछि आ समस्त अन्तः-बाह्य जीवन कें प्रकाश-दान कयनिहार अथवा आलोकित रखनिहार केन्द्र थिक । अतः आत्मा, धर्मरूप सेहो अछि आ धर्मी रूप सेहो । जाधरि आत्मा अपन प्रकाश चित्त एवं इन्द्रियक माध्यम सँ विकीर्ण नहि करैछ, ताधरि ओ अपन निराकारे रूप मे रहैत अछि आ जखनहि प्रकृतिक सहायता सँ ओ अपन प्रकाश विकीर्ण करय लगैछ, ओकर सगुण रूपक उन्मीलन भऽ जाइत छैक । निर्गुण रूप मे प्रेम आ आत्मा दुनू एक्के बात थिक, एक-दोसराक पर्याय थिक । एहि उदात्त प्रेमकें सूचित करबाक लेल कहल जाइत अछि – LOVE IS GOD AND GOD IS LOVE.

मुदा एहि निर्गुण अवस्था मे तँ प्रकाश कें विकीर्ण होयबाक प्रश्ने नहि उठैछ । जखन प्रेम-रूप धर्मक प्रकाशन बाहर चित्त एवं देहक माध्यम सँ होमय लगैछ, तखन प्रेमक प्रकाश-किरण-पुंज फूटय लगैछ। एकरा बुझबाक लेल हम एहि प्रकारें कहि सकैत छी । विद्युत-शक्ति-केन्द्र सँ सम्पूर्ण नगर कें प्रकाश भेटैत छैक । प्रकाशक भेटब वा नहि भेटब ओकरे पर निर्भर करैछ । एही प्रकारें जखन आत्मा निर्गुण रूप मे रहैत अछि तँ ओही निष्क्रियमाणताक कारणें प्रेमक विद्युत-धारा वा प्रकाशक प्रवाह संभव नहि होइछ मुदा जखन आत्मा रूपी केन्द्र सक्रिय भऽ कऽ प्रकाश दैछ तँ सम्पूर्ण अन्तःकरण जगमगा उठैछ । आत्माक ई प्रकाश सर्वप्रथम चित्त रूपी दर्पण मे प्रतिबिम्बित होयत आ ओतय सँ ओ बाह्य इन्द्रिय ओ प्रकृति मे पसरत । एहन अवस्था मे प्रकृति बन्धनक कारण नहि, प्रत्युत मुक्तिक आनन्द देनिहार होयत । एतय चित्त कें समस्त अन्तःकरणक अर्थ मे प्रयोग कएल जाइछ जाहि मे मोन, बुद्धि आ अहंकारादि सभक समावेश थीक । ई

चित्त मूल रूपें एक विशाल एवं उज्ज्वल दर्पण थीक । ई जतबहि स्वच्छ रहत, आत्माक प्रेम-प्रकाश ओतबहि उज्ज्वल भए आगाँ इन्द्रियसभक दिस अपन किरण कें विकीर्ण करत । यदि चित्त उज्ज्वल नहि अछि तँ उज्ज्वलतम आत्माक आलोक सेहो नीक जकाँ प्रकाशित नहि होएत ।[48] बाहर सूर्य चमकि रहल अछि । हम एहन कोठली मे बैसल छी जकर खिड़की सभ मे लाल, हरियर, नील, पीयर, शीशा लागल छैक । जेहन शीशा रहतैक, तेहने प्रकाश छनिकऽ अओतैक । ओहिना हमर चित्त जेहन रहत, ओहने प्रकाश हम ग्रहण करब । एहि मे सूर्यरूप आत्माक कोनो दोष नहि । ओ तँ शीशा सभक ओहि पार वा मेघ मे जतय कतहु हो, पूर्ण उज्ज्वल एवं प्रकाशमान अछि ।[49]

जँ प्रकाश अपन मूल रूप मे आयल तँ प्रेम थीक, अन्यथा ओ प्रेम सँ इतर कामादि कोनो मनोविकार होयत । काम आ प्रेम मे बड़ अन्तर अछि। प्रेमक निवास पूर्णतः शुद्ध चित्त मे होइछ आ कामक निवास अशुद्ध चित्त मे । अशुद्ध काम लोह सदृश थीक आ शुद्ध प्रेम निर्मल एवं प्रकाशवान स्वर्ण सदृश । काम स्वार्थ-भावमूलक थीक तथा प्रेम अन्यान्य कें निःस्वार्थ सुख पहुँचाकऽ तृप्त होइछ ।[50] चित्त जँ निःस्वार्थ अछि तँ प्रेम थीक मुदा जँ देह वा इन्द्रियसभक संग ओकर सम्पर्क सीमित भऽ गेल तँ ओ हल्लुक भऽ जाइछ । मुदा ई निश्चित जे ओ इन्द्रियसभक माध्यमे प्रकाशित सेहो होयबे करत अन्यथा, ने ओ काम कहाओत, ने प्रेम । उपनिषद् सभ मे काम, सृष्टि-निर्माणक प्रेरिका-शक्तिक व्यापक आ परिष्कृत अर्थ मे आएल अछि। ओ काम आनन्द-भावना सँ समन्वित अछि । अतः श्रेयस्कर अछि ।[51]

चित्त आ देहक घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । देहक सम्पूर्ण गतिविधिक नियंत्रण चित्तवृत्तिए सभक हाथमे रहैछ । आत्मा आ देहक बीच चित्त ग्रन्थि स्वरूप अछि । ओ एहि दुनूक योजको अछि आ विभाजको । चित्त पर आयल आत्म-प्रकाश आगाँ बढ़ि इन्द्रिय द्वारा व्यक्त होयत । ई तखने संभव जखन इन्द्रिय सभ चित्तानुरूप आचरण करय । जँ चित्त, देहक संग अपन तादात्म्यकें शिथिल कऽ चुकल हो तँ ओ प्रकाशन संभव नहि होयत आ ओ प्रकाश चित्तहि मे अटकल रहत तथा तत्काल आत्महि मे घुरिआओत कारण बिनु धारण कयने बहिर्गति नहि । यदि चित्त नहि रहत तँ देहो नहि रहत । हँ, विक्षिप्तावस्था मे वृत्तिसभक विपर्यय सँ स्थिति किछु भिन्ने होयतैक जकर सम्बन्ध मनोवैज्ञानिक प्रयोग सँ छैक। देहकें अक्षुण्ण रहलो उत्तर चित्तक

कृतकार्यता नहि रहैछ । मात्र आत्मेक रहला सँ काज तँ चलत नहि । योगी जखन चित्तवृत्ति सभक निरोध कय योग मे लीन रहैछ तखनो प्रकाश हुनका चित्त मे प्रकाशित रहैछ । सविकल्प अवस्था मे चित्त केँ आलोकित कय ओ चित सँ अभिन्न भऽ कए रहैछ, बाहर इन्द्रिय सभक माध्यमे प्रकाशित नहि होइछ । समाधिक सविकल्प अवस्था केँ सेहो अज्ञानरूप कहल गेलैक अछि, कारण एहि उच्च अवस्था मे सेहो पुरुष प्रकृतिक बन्धन सँ सर्वथा मुक्त नहि कहल जा सकैछ ।[52] ओकरा मे पुरुष आ प्रकृति एहू अवस्था मे अभिन्न रूपेँ मिलल रहैछ । एहि ग्रंथि के फोलिये देबाक नाम छैक निर्विकल्प समाधि, निर्बीज समाधि, वा कैवल्य । एहि समय मे प्रकाश चित्त केँ छोड़ि दैछ आ घुरि कए आत्मस्वरूप मे प्रतिष्ठित भऽ जाइछ । ओम्हर चित्त सेहो प्रकाश सँ फराक भऽ मूल प्रकृतिमे लीन भऽ जाइछ आ यैह कैवल्य वा मोक्ष थीक ।[53]

उपर्युक्त दृष्टि सँ आत्मकेँ मूलाधार मानि प्रेम-तत्वक विवेचन भेल । आब चित्त ओ इन्द्रियक आधार पर प्रेम-तत्व पर विचार कयल जायत । उपर निर्दिष्ट अछि जे ई स्वरूपतः निर्गुणे होइछ, सगुण नहि । अतः आत्माक निष्क्रियताक मादेँ ई हो तर्क देल जा सकैछ जे प्रेम चित्तक गुण थीक, कारण ओ चित्तहितक द्वारा देहक माध्यम सँ अभिव्यक्त होइछ । बहुतो लोक आत्म-तत्व सदृश वस्तु मे विश्वासो नहि करैछ । प्रेम मे ओलोकनि अपन आस्था रखैछ । परंच तर्कके ँ रहलो सन्ता ई नहि बुझल जा सकैछ जे प्रेम आत्मासँ सर्वथा निरपेक्ष चित्तहिक गुण थिक । एतहु यद्यपि कार्य चित्तहि करैछ, मुदा आत्मेसँ प्रकाश प्राप्त कऽ, किंवा आत्मेक तत्वावधान मे ।[54] आत्मा तटस्थ साक्षी रूप थीक आ चित सक्रिय । एकरा उपनिषद्मे वर्णित परमात्मारूपी वृक्षक दू गोट चिड़ैयक पारस्परिक सम्बन्ध बुझू, जहिमे एकटा (परमात्मा) तँ साक्षी रूपमे सभ किछु देखैत रहैछ आ दोसर (जीवात्मा) प्रारब्धानुसार सुख-दुःख रूपेँ कर्म-फलकेँ भोगैछ । दुनू अवस्थामे, प्रेमक प्रकाशन चित्त वा देहक द्वारा हेतैक, एहिमे कोनो संदेह नहि । तेँ मात्र एहि अर्थ मे प्रेम, चित्तहिक धर्म भेल । एहिमे कोनो संदेह नहि जे देहसँ सम्बद्ध भइयेकऽ चित्त, वृत्तिसभकेँ जन्म दैछ आ चित्तसँ सम्बद्ध देहे ओहि वृत्तिसभक अनुरूप आचारण करैछ । भाव ई जे देह-सम्बधक अभावमे कोनो वृत्तिक उदय नहि भऽ सकैछ । हमरा चित्तमे प्रेम, क्रोध, घृणा, ईर्ष्या आदि नाना प्रकारक चित्तवृत्तिसभक आविर्भाव आ विकास मूलतः देहकेँ रहले पर तँ संभव थीक । जँ देह नहि हो तँ ने

चित्तवृत्तिसभक उदयेक प्रश्न उठैछ, ने ओकरासभक घुरि अयबैक आ ने देहात्मबोधहिमे घुरि अयबाक प्रश्न उठैछ ।

प्रेमवृत्तिक बीजारोपण आत्मासँ सर्वथा स्वतंत्र रहियोकऽ भऽ सकैछ, मुदा ओकर पोषण तथा विकासक कार्य आत्मेक द्वारा संभव थिकैक । जाहि प्रकारेँ भूमि (चित्त) मे रोपल गेल बीज (प्रेमवृत्ति)क पोषण आ विकास धरतीसँ लेल गेल रस, जल, प्रकाश तथा पवन (आत्मा) द्वारा होइछ, ताही प्रकारेँ चित्तमे जड़ीभूत प्रेमवृत्तिक विकास आत्माक संसर्ग सँ संभव भऽ सकैछ । एकसर भूमि किछु नहि कऽ सकैछ । बीज रोपल जेतैक धरतीयेमे, मुदा अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होयतैक दिव्य तत्वे (आत्मा)क संसर्ग सँ । भूमि तँ निमित्त मात्र थिकैक । अतः चित्तमे प्रेम रूपी धर्मक रहब अपेक्षित, आ तखनहि विकास संभव, अन्यथा विकास कथी आ ककर ? एहि दृष्टियेँ प्रेम आत्माक धर्म नहि, चित्तक गुण थिक । आत्मा तँ मात्र विकासमे सहायक होइछ ।

एहि सँ स्पष्ट होइछ जे प्रेमक पूर्ण विकासक हेतु आत्मा एवं देह, सभक पूर्ण आवश्यकता थिकैक । आत्मारूपी प्रकाश, जल, पवन आदिक अभावमे प्रेम-बीजक पल्लवन ओ विकास नितान्त असंभव अछि । आत्मा बीजक बीज सेहो अछि । जखन फसिल तैयार भऽ गेल, फल काममे आबि गेल, तखन ओ तत्व, जे ओहि स्थानमे क्रियाशील छल, सभ पुनः अपन मूल स्थान आत्मामे घुरि आओत । माने ई जे आत्म-तत्व प्रेम-विकासमे सहायक भऽ कऽ पुनः आत्मामे घुरि अबैत अछि ।[55] आत्मा प्रेम प्रकाशनक निमित्त-भूमि पर उतरैत अछि । योगी चित्त वृत्तिसभक निरोध कय देहकेँ बिसरि जाइत अछि । अतःओकरा भाव अथवा चित्तवृत्तिसँ विचलित होयबाक कोनो भय नहि रहैछ । देह जखन पूर्णतः निवृत्तहो, तखन ओ वृत्ति नहि रहत. ....यथा, जारनि केँ जरि गेला पर आगि स्वतः शांत भऽ अपना तत्वमे लीन भऽ जाएत ।[56] एही प्रकारेँ प्रेमक विकास देहमे होइतो प्रेमक साधना करैत-करैत चित्त आ देह दुनू समाप्त भऽ सकैछ । जखन देह गेल तँ चित्त सेहो गेल आ चित्त गेल तँ देह गेल । दुनूकेँ चल गेलो सन्ता प्रेमक अनुभूति तँ भइये जाइछ ।[57] एहि अवस्थामे आबिकऽ प्रेम अत्यन्त उच्च, निर्मल एवं पवित्र भऽ जाइछ । एकसर देहमे मात्र भोग-भाव रहैछ, परिष्कृत चित्तसँ युक्त देहेटा स्वस्थ एवं निर्मल प्रेमक अनुभव कऽ सकैछ । उज्ज्वल चित्तमे अत्यन्त उज्ज्वल प्रकाश छल । चित्तमे तथा देहमे, दुनूमे आत्माक क्रिया

विद्यमान छल । सभ कार्य कयला सन्ता प्रेम पुनः अपना मूल स्थान आत्मामे घुरि आयल । आगि काठमे छल । ओ जराओल गेल तँ जरि गेल । जराओल नहि गेल छल तँ ओ ओकरा भीतरमे छल । जरेलाक बाद आगि पुनः अपना तत्वमे लीन भऽ गेल । काठ समाप्त भऽ गेलैक । आगि अमर अछि । ओ काठकेँ जरा देलक, स्वयं समाप्त नहि भेल । ओ तँ अपने तत्वमे समाहित अछि । एहि प्रकारेँ ई सिद्ध होइछ जे प्रेमक प्रकाशन चित्त वा देहेक द्वारा संभव भऽ सकैछ - यद्यपि ओ अपन आदि रूपमे देहेमे निवास करैछ । अतः ई सिद्ध होइछ जे प्रेम आत्मेटाक वस्तु आ शाश्वत आत्माक शाश्वत धर्म थिक । प्रेमे जीवनक सारभूत पदार्थ थिक ।

एहि प्रकारेँ आत्मा, चित्त आ देह तीनू प्रेमानुभूतिमे सहायक होइछ। आत्मा प्रमुख अछि, तेँ चित्त आओर देह एहिमे सँ ककरो प्रेमक एकमात्र धर्मो नहि कहल जा सकैछ । वस्तुतः प्रेमक मूल स्रोत एवं आदि उद्गम-स्थान तँ निःसंग एवं निर्लेप आत्मेटा अछि, परंच ओकर प्रकृत संचरण भूमि चित्त अछि । चित्त आत्मासँ प्रेम रसक दोहन कय देहकेँ संचालित करैछ । एहि प्रकारेँ प्रेमक पूर्णाभिव्यक्ति द्वारा सात्विक आनन्दकेँ प्राप्त करैछ, जकरा प्रेमानन्द कहल जाइछ । भाव ई जे, आत्मा, चित्त आ देहक भूमिका परस्पर सम्पृक्त रहलो सन्ता सभक पृथक्-पृथक् अस्तित्व अछि । मूलतः आत्माकेँ प्रेमक मूलस्रोत, चित्तकेँ संचरणभूमि तथा देहकेँ प्रेम प्रकाशनक प्रकृत माध्यम मानल जाय, सैह उचित ।

आब प्रश्न अछि जे चित्तमे तँ प्रेम, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध आदि अनेक प्रकारक वृत्ति अवस्थित अछि, तेँ कोना बूझल जाए जे अमुक प्रेम-वृत्ति अछि तँ अमुक घृणा-वृत्ति । एकर उत्तर ई अछि जे प्रेम, क्षमा, क्रोध आदि सब मूलतः चित्तहिक वृत्ति थिक, परंच स्वरूपमे सभ एक-दोसरा सँ नितान्त भिन्न अछि । प्रेम सभ वृत्तिमे एकटा स्वतंत्र वृत्ति थिक आ ओकर किछु अपन लक्षण एवं मौलिक गुण छैक । एतबहि नहि, प्रेम-वृत्ति सभ चित-वृत्तिक मूलमे अछि आ प्रत्यक्ष वा परोक्षरूपेँ प्रायः सभ चितवृत्तिक स्वरूप-निर्धारण तथा नियमन-संचालन करयवला अछि । एकरा आओर स्पष्ट करबाक लेल एहि सम्बन्धमे किछु आर विश्लेषण करय पड़त । हमरालोकनिक चित्तमे तीन प्रकारक वृत्ति पाओल जाइछ - 1. इच्छा (FEELING), 2. ज्ञान (KNOWLEDGE) तथा क्रिया वा संकल्प वृत्ति (WILLING) । एहि तीनूमे सँ प्रेमक सम्बन्ध 'इच्छा' वृत्ति केन्द्रसँ अछि । मुदा इच्छा करबे मात्र

प्रेम नहि थिक । ओ काम सेहो भऽ सकैछ आ प्रेम सेहो । जखन हम एकटा विशिष्ट प्रकारक इच्छा करैत छी, तखनहि ओ प्रेम कहबैत अछि । ई विशिष्ट इच्छा की थीक ? ककरो चाहब आ शुद्ध आनन्दक हेतु चाहब । प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूपसँ हमरा आनन्द भेटय, यैह प्रेमक मूलभूत भावना थिक। की चाही ? आनन्द । ककरा सँ चाही व्यक्तिसँ, विचारसँ वा आत्मासँ। चाहैत धरि हम अवश्य छी । यदि एकरा वा एही रूपक चाहबसँ हमरा ई विशिष्ट आनन्द प्राप्त होइछ, तँ प्रेम थिक, अन्यथा काम । ई आनन्द पूर्णताक दृष्टियेँ, हम चक्षुसँ, श्रुति सँ एवं मोनसँ सेहो चाहैत छी ।[58]

एहि प्रकारेँ प्रेममे चित्तक तीनू वृत्तिक सुखद संयोग रहैत अछि। प्रेम मूलतः इच्छा होइछ जे ज्ञानक निर्देशन वा नियंत्रण पाबि विशिष्ट वा संयत रूप ग्रहण करैछ । बिनु ज्ञानक इच्छा आन्हर अछि आ बिनु इच्छाक ज्ञान पंगु आ क्रियाक अभावमे दुनू निष्क्रिय । इच्छा गति प्रदान करैछ, ज्ञान ओकरा उचित दिशा-निर्देश करैछ आ क्रिया दुनूक समन्वयात्मक स्वरूप प्रेमकेँ अभिव्यक्त करैछ किंवा दुनू क्रियाक माध्यमसँ अभिव्यक्तिक मार्ग निर्धारित करैत अछि ।

प्रेम-भावनाक पूर्ण स्पष्टीकरण एवं विकासक लेल दू केर कल्पना करय पड़ैछ - भक्त-भगवान, माता-पुत्र, मातृभूमि-देश, प्रेमी-प्रेमिका, मित्र-मित्र आदिक । कारण दू केर सम्बन्ध बिनु प्रेम-वृत्तिक, प्रकाशन संभव नहि ।[59] परंच प्रेम प्रायःमानवीये सम्बन्धसभमे अपनाकेँ विशेष रूपेँ प्रकट वा चरितार्थ करैछ । वय-सम्बन्धक आधार पर प्रेमकेँ तीन श्रेणीमे विभाजित कयल जा सकैछ[60] –

1. छोटक पैघक प्रति प्रीति : अर्थात् श्रद्धा (देवता, ऋषि, मुनि, गुरु, नेता एवं अन्य पूजनीय व्यक्तिक प्रति) ।
2. दूगोट समवयस्कक प्रीति : अर्थात् सख्य वा मैत्री (मित्रक वा प्रेमी-प्रेमिकाक पारस्परिक प्रेम) जाहिमे प्रणय सेहो सम्मिलित अछि ।
3. श्रेष्ठक छोटक प्रति प्रीतिः वात्सल्य (अपन वा आनक पुत्र, कोनो बालक वा अन्य स्नेहपात्रक प्रति प्रीति) ।

एहि तीनू श्रेणीक प्रेममे द्वितीय कोटिक प्रेम (प्रेमी-प्रेमिकाक सख्य अथवा प्रणय) सभसँ विशेष गम्भीर, व्यापक आ शक्तिशाली कहल जाइछ ।[61] कारण जतय प्रथम श्रेणीक प्रीतिमे पूज्यभाव होयबाक, तथा तृतीयमे वात्सल्य-भाव

होयबासँ दुनूमे लज्जा, संकोच आदिक पूर्ण तादात्म्यक अनुभूतिमे विक्षेप वा व्यवधान होइछ, ओत्तहि बीचक कोटिक प्रेममे दैहिक, मानसिक आ आध्यात्मिक सम्बन्धक सहज आ पूर्ण विकास संभव मानल जाइछ । यैह कारण जे काव्यमे रसानुभूतिक लेल आचार्यलोकनि एही प्रकारक प्रेमकेँ श्रृंगार रसोपयुक्त स्थिर कय, अन्य सभप्रकारक प्रेमकेँ भाव मात्र मानलन्हि ।

ईश्वर-प्रेम, एहि सभ प्रकारक प्रेमक चरम विकास मानल जाइछ। माधुर्य-भाव, सेव्य-सेवक-भाव, सख्यभाव एवं वात्सल्यभाव, ई चारि गोट मार्ग उपासनाक मार्ग थिक । एहिमे सँ कोनो भावक अनुसार उपासना कयला सन्ता ईश्वरक साक्षात्कार होइछ, से कहल जाइछ । मुदा ईश्वरोक प्रेम ओही हृदयसँ होइछ जाहिसँ हम दिन-राति प्रेमानुभव करैत छी । दोसर, ई प्रेम मानव-प्रेमक अत्यन्त उज्ज्वल एवं विकसित रूप थिक ।

तखन, उपर्युक्त आनन्दक विश्लेषण दू प्रकारेँ कयल जा सकैछ -

1. हम आँखि, कान, नाक, मुँह, त्वचा आदि सँ मात्र अपनहि आनन्दक कामना करी आ जनिका सँ ई आनन्द चाही, तनिक आनन्दक कनिञो चिन्ता नहि करी ।
2. हमरा अपन आनन्द एकदम नहि चाही । हमर प्रिय, पूर्ण सुख एवं आनन्दमे रहथि यैह हमर एकमात्र आ प्रिय कामना होअय। एहि आनन्द प्राप्तिक लेल हम अपन सर्वस्व न्यौछावर करबाक लेल प्रस्तुत रही ।

ई स्पष्ट अछि जे पहिल कोटिक आनन्द निकृष्ट आनन्द थिक। ओ स्थूल भोगवाद, मांसलता एवं इन्द्रियपरायणता थिक । मात्र अपन सुखक निमित्त, शुद्ध स्वार्थक निमित्त, प्रेम करब आत्म-चैतन्य-शून्य जड़ता थिक ।

दोसर कोटिक प्रेम अत्यन्त उदात्त आ निर्मल थिक । एहिमे प्रेमी एकमात्र प्रियक सुख चाहैछ भने ओकर तन, मन आ धन सर्वस्व नष्ट भऽ जाइक । प्रियकेँ आनन्द भेटबाक चाही । एहि प्रेममे प्रियपात्रक उठब, बैसब, चलब, हँसब, बाजब आदि सभ किछु सुन्दर प्रतीत होइछ, नीक लगैछ । एहि प्रेमक सूत्र थिकः हम अहाँक छी । एहिमे सर्वस्व त्याग, उत्सर्ग एवं समर्पणक ध्वनि निहित अछि ।[62] एहि प्रेममे सम्पूर्ण आनन्द मात्र एहि भावनामे निहित अछि जे हम प्रियकेँ जी-जानसँ प्रेम करैत छी, ओ हमरा चाहथि वा नहि चाहथि ।[63] एहि प्रकारक प्रेमक सबसँ उज्ज्वल एवं उदात्त स्वरूप भारतीय साहित्यमे राधा वा गोपीक प्रेममे प्रतिबिम्बित भेल अछि । ई प्रेम ततेकने उच्च अछि जे गोपी सभ श्रीकृष्णकेँ अपन सर्वस्व अर्पित कऽ

दैत छथि । मात्र कृष्ण आ गोपीक प्रेममे, काम तथा प्रेममे अन्तर नहि मानल गेल अछि । गोपीसभ श्रीकृष्णक सुखक लेल अपन यौवन अर्पित कइयोकऽ पूर्ण पवित्र बनल रहैत छथि । एहि माधुर्य भावक प्रेमसँ बढ़िकऽ भक्तलोकनि आर कोनो प्रेमक कल्पना नहि करैत छथि आ ने करहे चाहैत छथि । एहि प्रेममे ओ अपनाकेँ जीवनमुक्त मानैत छथि । मुदा एहि प्रकारक प्रेम अत्यन्त कठिन होइछ तथापि गोपीक लेल ओ एकदम सरल छल ।

प्रेम एक व्यापक धारणा थिक, जकरा अनुसारेँ मानव जीवनमे अनुभूयमान सभ प्रकारक प्रेम-सम्बन्धक सफलतापूर्वक व्याख्या कयल जा सकैछ । प्रेम चाहे जेहन हो, भौतिक वा अलौकिक; यदि ओ आत्म-सम्बन्ध सँ झंकृत एवं अनुप्राणित अछि, तथा चैतन्यसँ आलोकित अछि तँ ओ प्रेम थिक, अन्यथा स्थूल कामोपभोगक वृत्ति । एकरा एना सेहो कहल जा सकैछ जे प्रेम-सम्बन्धमे ई आत्म तत्व किंवा चैतन्य जाहि अनुपातमे अभिव्यक्त होइछ, ओही अनुपातमे ओ प्रेम उच्च अछि, अन्यथा निम्न ।

प्रेमक विवेचन

(क) प्रेमक सामान्य लक्षण

प्रेमक मूल स्वरूपक व्याख्याक प्रसंगमे प्रेमक अनेक लक्षण आ गुणक चर्चा भेल अछि । अतः ओकर सामान्य लक्षण आ गुणक संश्लिष्ट रूपमे विचार करब परमावश्यक बुझना जाइछ ।

प्रेम कोनो प्रकारक हो-भक्ति, दाम्पत्य, वात्सल्य एवं सख्य, ओकर मुख्य लक्षण थिक आत्माकेँ तृप्त करब । मुदा ई तृप्ति तखनहि संभव अछि, जखन कि प्रेम उच्च गुणसँ संयुक्त हो । एहि प्रकारक प्रेम तृप्त, मुक्त किंवा पवित्र कयनिहार होइछ । आत्माक यैह रसमय अनुभव जीवनक पूर्णताक अनुभव थिक । मनुक्खक लेल ई अनुभव आत्यंतिक होइछ वा ई कहल जाए जे अनिवार्य होइछ, अन्यथा ओकर जीवन निष्प्रयोज्य एवं निष्फल थिकैक । प्रतिभा, धन, मान-मर्यादा आ ख्याति आदि सब किछु एहि अनुभवक अभावमे प्राणहीन अछि ।[64] आत्मा प्रेमहिसँ सरस, स्वस्थ आ प्रफुल्लित होइछ । प्रेमक अभावमे जीवन जड़ आ दीन अछि । यैह कारण थिक जे एहि तृप्तिक संधानमे मनुक्ख नाना प्रकारक शारीरिक एवं मानसिक कष्ट उठबैत अछि, संयम एवं त्याग करैत अछि तथा सहर्ष कंटकाकीर्ण मार्गक अनुसरण करैत अछि, चाहे ओकरा लेल ओकर प्रिय किछुओ नहि करैक । प्रेमीक लेल यैह बहुत होइछ जे ओकर प्रिय ओकरा लगमे छैक ।

एतबहिसँ वास्तविक प्रेमीक सभ दुःख दूर भऽ जाइछ ।[65] भवभूतिक दृष्टियेँ आदर्श प्रेम सभ अवस्था मे समान रहैछ, देश-कालक परिस्थिति सभ किएक ने बदलैत होइक ।[66] एहने प्रेम हृदयकेँ अनिर्वचनीय सुख आ शांति प्रदान करैछ । वस्तुतः एहन पवित्र प्रेम भाग्यसँ ककरो भेटैत छैक ।[67] प्रेमक एहन मार्मिक अनुभव कयले सन्ता प्रेमीकेँ वास्तविक सौन्दर्यानुभूति (वस्तु-सौन्दर्य, भाव-सौन्दर्य, कर्म-सौन्दर्य आदि) होइछ । एहन सौन्दर्यक अनुभूति करवयवला प्रेम तपस्येसँ निर्मल एवं पवित्र होइछ ।[68] प्रेमक प्राप्तिक अपेक्षा प्रेमक अप्राप्तिए प्रेमीक हेतु श्रेयस्कर होइछ, कारण ओ प्रेमीकेँ शक्ति एवं प्रेरणा प्रदान करैछ । यद्यपि कालिदास उभयनिष्ठ प्रेमकेँ विशेष महत्व प्रदान कयलन्हि अछि, तथापि कालिदासक दृष्टिमे सेहो वास्तविक प्रेम तऽ विरहावस्थेमे प्रस्फुटित होइछ ।[69] मिलनमे ओ मन्द व सुषुप्त सदृश भऽ जाइछ । वस्तुतः विरह प्रेमक जाग्रत गति होइछ आ मिलन ओकर सुषुप्ति ।[70] एहन उच्च प्रेमी निश्चित रूपेँ अधोगामिनी वासना सँ भिन्न होइछ । प्रेमक स्वर्ण-स्पर्शमे एहन प्रभाव होइछ जे ओ वासनाकेँ सेहो पवित्र प्रेममे परिवर्तित कऽ सकैछ ।[71] प्रेम जखन मर्यादित वा धर्माचरणयुक्त भए स्त्री-पुरुषक प्राकृतिक यौन-सम्बन्धमे प्रकट होइछ, तखन रति-व्यापारमे सेहो ब्रह्मक मधुर इच्छा प्रकाशित होइछ ।[72] यैह कारण जे प्रणय-सम्बन्ध सेहो ईश्वर-प्रसादात् मधुर होइछ । ईहो प्रेम ततेकने पवित्र आ तीव्र होइछ जे प्रेमी-युगलक आत्मा जन्म-जन्मान्तर धरिक लेल एक भऽ जाइछ ।[73] एहिसँ ई प्रेम, ईश्वरीय प्रेमक पवित्रतासँ मंडित भऽ जाइछ । भर्तृहरि एवं भवभूति एहन प्रेमकेँ पूर्व-पुण्यक फल बुझि एकर भोक्ताकेँ धन्य मानैत छथि ।[74]

प्रेम-तत्व तँ अखण्ड रूपेँ सर्वत्र ओत-प्रोत अछि, केओ ओकरा किएक ने कोनो प्रेम-सम्बन्धक माध्यमसँ अनुभूत कऽ सकैछ । योगमे ईश्वर-प्राप्तिक हेतु सभ साधनकेँ विधेय बताओल गेल अछि ।[75] जाहि ध्येय मे ध्यान, धारणा, समाधि आदिक समावेश भऽ जाय, ओतहि हमर परम लक्ष्य प्राप्त भऽ जाइछ । अतः प्रेम-सम्बन्धेक माध्यमसँ ईश्वरक प्राप्ति भऽ जाइत अछि । मात्र ईश्वरेक प्रेम कठिन अछि आ अन्य प्रेम सरल, से बात नहि । वस्तुतः एहन भेद सेहो कृत्रिमे थिक । सभ प्रकारक प्रेममे आत्माक पूर्ण शक्ति सभक आह्वान करय पड़ैछ । तेँ प्रेमकेँ सामान्य रूपसँ परम पुरुषार्थ कहल गेल अछि । ओहिमे एतबा शक्ति छैक जे ओ अपन स्वतंत्र-मार्ग निर्मित कऽ सकैछ । स्वामी रामतीर्थ लिखलन्हि अछि जे प्रेममे

एहन शक्ति छैक जे ओ पैघ-सँ-पैघ नियमकेँ सेहो भंग कऽ सकैछ । प्रेम सृष्टिक सर्वोच्च नैतिक अथवा आध्यात्मिक नियम थिक । यदि प्रेम जीवनमे नहि रहैछ तँ सृष्टिमे आनन्द रहिये नहि सकैछ ।[76] प्रेमहि जीवनक स्फूर्ति अछि, प्रेरणा अछि आ प्रतिभा अछि । प्रेमक ई महान अनुभूति इन्द्रियक माध्यमसँ सेहो संभव अछि । प्रेमक वास्तविक रहस्यकेँ बुझनिहार कवि इन्द्रियक माध्यमेसँ मुक्ति लाभ करय चाहैछ, कारण ओकरा दृष्टिमे ब्रह्म सेहो अपनाकेँ इन्द्रिय-समूहमे प्राकाशित कऽ रहलाह अछि ।[77] ई महाकवि रवीन्द्रक भावना छन्हि । ओ अन्यत्रो कहैत छथि जे हम असंख्य बन्धनमे रहियो कऽ मुक्तिक स्वाद लऽ सकब ।

प्रेमक किछु आओर वैशिष्ट्य अछि । कालिदासक दृष्टिमे अपन प्राणप्रियक अंगमे सटि कए चिताक आगि सेहो पवित्र भऽ जाइछ ।[78] प्रियक संसर्ग एवं सामीप्यसँ दुस्साध्य एवं कंटकाकीर्ण जीवन स्निग्ध गतियेँ चलय लगैछ ।[79] वास्तविक प्रेम प्राकृतिक चयनक नियमानुसार मात्र श्रेष्ठ व्यक्तिसँ होइछ, अथवा ई कहल जाय जे जकरा हम चुनि लैत छी, ओएह श्रेष्ठ भऽ जाइत अछि ।[80] प्रेम एतबा ने संवेदनशील होइछ जे कनियोँ आशंका ओकरा लेल सह्य नहि ।[81] प्रिय केर ध्यान एतबा शांतिदायी एवं धैर्यप्रदायी होइछ जे ओएह हृदयक सम्बल भऽ जाइछ ।[82] प्रेमपूर्ण व्यक्तिक निर्माणसँ कवि ब्रह्मक रचनाकेँ निर्दोष मानय लगैछ ।[83] कबीरक दृष्टिमे प्रेममे स्थायित्व ओकर सबसँ पैघ विशेषता होइछ । प्रेम कयनिहार व्यक्ति अपना मुँह सँ अपन गुणगान नहि करैछ ।[84]

संक्षेपमे यैह प्रेमक सामान्य लक्षण वा विशेषता थिक जे ओकर किछु मौलिक गुण पर आश्रित रहैछ । अतः आब ओहि गुणसभक विवेचन कयल जाएत ।

(ख) प्रेमक गुण

प्रेममे दू व्यक्तिक कल्पना अनिवार्य होइछ-यथा, भक्त-भगवान, प्रेमी-प्रेमिका, मित्र-मित्र आदि । प्रेमीक लेल ई भावना सेहो आवश्यक जे ओकर प्रिय सुखी रहैक । जाहि अनुपातमे हमरा हृदयमे ई सहज आनन्दमयी भावना प्रज्वलित रहत, ओही अनुपातमे हमर प्रेम उच्च, उदार आ निष्कलुष रहत । मुदा प्रियकेँ सुखी रखबाक लेल बड़ पैघ साधनाक अपेक्षा रहैछ । ई साधना बाह्य लौकिक दृष्टिसँ आत्म-पीड़न बुझल जा सकैछ, मुदा प्रेमीक लेल ओ सहज-साध्य भऽ जाइछ । एहि साधनाक आधार किछु एहन

चारित्रिक गुण होइछ, जकर अभ्यासहि ओहि प्रेमकेँ शिवत्व एवं शुभ्रता प्रदान करैछ । बस, यैह गुण, उच्च प्रेमक गुण थिक । चातक एवं मेघक प्रेमक व्याजसँ, प्रतीक पद्धति सँ, तुलसी रामक प्रति अपन प्रेमक जे वर्णन दोहावलीमे कयने छथि, ओहिमे प्रेमक सभ गुण एक संग प्राप्त भऽ जाइछ।[85] प्रेमक जाहि निर्मल स्वरूपक कल्पना तुलसी द्वारा कयल गेल अछि, ओ हृदयक आमूल प्रक्षालन करयवला अछि । एहि रूपक उदात्त एवं निर्मल प्रेमक कल्पना अन्यत्र दुर्लभ अछि । पपीहा आदर्श प्रेमी अछि आ बादल आदर्श प्रिय अथवा प्रेम-पात्र । एहि दुनूक प्रेम-सम्बन्धक माध्यमसँ तुलसी प्रेमक सर्वोच्च रूप प्रस्तुत कयने छथि । बादल पपीहाक एकमात्र भरोस, एकमात्र बल, एकमात्र आशा आ विश्वास छैक । बादल चाहे जीवनभरि नहि बरसौक, मुदा प्रेमी चातकक आशतँ अमर थिकैक । पपीहाक प्यास तँ नित्य बढ़ैत रहौक, सैह नीक । बादलक नाम रटैत-रटैत जीभ सुखा गेलैक, प्रेमक कारणेँ अंग क्षीण भऽ गेलैक, मुदा शरीरक रंग तँ नित्य नव तथा सुन्दरे भेल जाइत छैक । मेघ कतबो निर्ममता, कठोरता आ निर्दयता प्रदर्शित करौक, मुदा पपीहाक लेल तँ प्रेमक मर्यादाक निर्वाह करहिमे आनन्द छैक । मेघ जीवन भरि स्वातिक बुन्न दौक वा नहि दौक, पपीहा अन्यत्र नहि तकतैक । हँ, ओ अपन प्रेम-भीख लेल तकतैक धरि अवश्य, मुदा दीन भऽ कऽ कनिञो नहि, पूर्ण आत्म सम्मानक संग । ई थिक तुलसीक आदर्श प्रेमक कल्पना । एहि प्रेममे अनन्यता, आशा, विश्वास, निश्छलता, निष्कामता, पवित्रता आदि गुणक साम्राज्य अछि। वस्तुतः तुलसीक प्रेमक ई गुण भक्ति-प्रेमहिक गुण थिक, परंच एहि विशिष्ट गुणक पूर्ण समावेश कोनो प्रेम सम्बन्धमे भऽ जाइक, तँ एहिमे बेस दिव्यता आबि जैतैक ।[85]

जाहि प्रकारेँ तुलसी एहि प्रकारक उच्च गुणसभकेँ रामभक्तिक प्रसंगमे प्रकट कयललन्हि अछि, ओही प्रकारेँ यूनानी दार्शनिक प्लेटो भौतिक प्रेम-सम्बन्धमे एही गुण सभकेँ प्रदर्शित कऽ प्रेमकेँ उच्च आध्यात्मिक धरातल प्रदान कयने छथि । ओ अपन 'सिम्पोजियम' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थमे प्रेम-देवताक कल्पना कयने छथि आ हुनकामे प्रेमक आदर्श स्थापित करैत अपन प्रेम-सम्बन्धी उदात्त भावनाकेँ व्यक्त कयने छथि । ओ कहैत छथि जे प्रेम-देवता अत्यन्त रूपवान, सुकुमार, बलिष्ठ, लावण्यपूर्ण, प्रसन्नवदन, कलानिपुण, संवेदनशील, सद्भावनापूर्ण, विनयवान, बुद्धिमान, ओजस्वी, नीतिपूर्ण, यशस्वी, सुप्रसिद्ध, आत्मसंयमी, साहसी, वीर, आज्ञाकारी, पूर्ण अहिंसाभावयुक्त,

प्रतिभासम्पन्न, शांतिप्रिय, सन्मित्र एवं स्वर्गक सभ देवतामे सभसँ कम आयुवला नवयुवक देव छथि । ओ शांत, सुरभित एवं सुरम्य कुंजमे तथा प्रेमी-प्रेमिका सभक हृदयमे निवास करैत छथि । जतय कर्कशता एवं कठोरता देखल जाइछ, ओतयसँ ओ विदा भऽ जाइत छथि । ओ मनुक्ख एवं देवता-सभक लेल वरदान स्वरूप छथि । लेखकक कथन छनि जे यदि प्रेम-देवता स्वर्गमे उत्पन्न भऽ गेल रहितथि तँ देवतालोकनिमे कहियो उपद्रव नहि मचितनि ।[86]

प्रकारान्तर सँ ई ओएह गुण थिक जकरा तुलसी भक्तिक धरातल पर अपन प्रेम-धारणामे व्यक्त कयलन्हि अछि । संक्षेपमे, यैह थिक प्रेमक विशिष्ट गुण । ई गुण लौकिक हो किंवा अलौकिक, कोनो अधिकरणमे, प्रकट भऽ प्रेमकेँ पूर्ण ईश्वरीय किंवा दिव्य बना सकबामे पूर्ण समर्थ अछि । मुदा मानवक, मानवक प्रति प्रेम किंवा भौतिक वस्तुसभक प्रतिएँ प्रेम प्रायः अकाल्पनिक, सीमित वा क्षणभंगुर देखना जाइछ । यैह कारण अछि जे प्रेमी अथवा भक्तलोकनि, प्रेमक पूर्णताकेँ भक्त एवं भगवानक प्रेम-सम्बन्धहिमे अधिष्ठित कयलन्हि अछि । मानवजगत किंवा पदार्थजगतक सभ आधार देश-कालक बन्धनसभसँ ग्रस्त अछि, अतः ओ अपूर्ण अछि । अपूर्ण मे सँ पूर्ण कोना भेटत ? एही अपूर्णताकेँ पूर्ण करबाक हेतु प्रायः मानव-मस्तिष्क विश्वासक आधार पर ईश्वर नामक एक अत्यन्त भव्य, नित्य-नव, सुन्दर एवं अनुकूल वस्तुक आविष्कार कयलक जाहिमे ओ परम पूर्णता, सुन्दरता, पवित्रता, स्निग्धता, निर्मलता, शक्ति, सामर्थ्य आदि गुणकेँ आरोपित कयलक । हिन्दू हृदय राम, कृष्ण एवं शिवमे ओही पूर्णताक दर्शन कऽ पुलकित भऽ उठल, नाचि उठल । यैह बात अन्य धर्म एवं सम्प्रदायमे सेहो भेलैक । प्रेम करबाक हेतु ओहि ईश्वरसँ बढ़िकऽ जेना आन कोनो वस्तु नहि; हँ, ओहि मानवमूर्ति (ईश्वर) सँ प्रेम करबाक हेतु प्रेमक सम्पूर्ण भाव-सामग्री अथवा वस्तु-सामग्री ओ किएक ने ग्रहण कऽ लेने हो, जे मानव-मानवक बीच व्यक्त होबयवला प्रेम-सम्बन्धमे प्रयुक्त होइत अछि ।

प्रेमक गुणक विवेचनक बाद हम आब प्रेमक विविध रूप सभक संक्षेपमे विवरण प्रस्तुत करब ।

प्रेमक विविध रूप

(क) विभाजनक आधार

मानव-जीवनमे प्रेम अनेक रूप ग्रहण करैत अछि । यद्यपि प्रेमक

आत्मा, चाहे ओ कोनो प्रकारक प्रेम हो, सभमे समान रूपेँ व्याप्त रहैछ, परंच प्रत्येक रूपक क्षेत्र, परिधि एवं ओकर व्यक्तिगत विशेषता आदिक व्यवस्थित परिज्ञानक हेतु प्रेमक वर्गीकरण किंवा विभाजन किछु विशिष्ट बौद्धिक आधार पर कयल जा सकैछ । ओ आधार निम्नलिखित अछि :-

1. व्यक्त किंवा स्थूल (व्यक्ति, गाछ-वृक्ष एवं अन्य पदार्थ)क प्रति आ अव्यक्त किंवा सूक्ष्म (ईश्वर, कोनो भावना वा आदर्श)क प्रति प्रेम;
2. जड़ (पहाड़, गाछ-वृक्ष, लता, कोनो ग्रंथ, लेखनी, भावनादि)क प्रति आ चेतन (चेतन मानव एवं चेतनाक क्रममे विकसित जीव.....यथा, हाथी, घोड़ा, आदि)क प्रति प्रेम; तथा
3. जेठक छोटक प्रति (पिताक पुत्रक प्रति, गुरुक शिष्यक प्रति, वात्सल्यादि), छोटक जेठक प्रति (यथा, श्रद्धा), वा समवयस्कक एक दोसराक प्रति (मैत्री, सख्य, प्रणय आदि) प्रेम ।

वस्तुतः विभाजनक यैह किछु स्थूल आधार बनि सकैत अछि । एहिमे प्रथम दू गोट आधार तँ पर्याप्त पुष्ट अछि, कारण एहिमे दृश्य एवं अदृश्य, जड़ वा चेतन, व्यक्त वा अव्यक्त, ऐन्द्रिय वा अतीन्द्रिय आदि दू गोट स्पष्ट वर्गक सभ सत्ताक समावेश अछि । मुदा तृतीय आधार अपूर्ण अछि । एहिमे मात्र मानवक प्रेम-सम्बन्धकेँ ध्यानमे राखल गेल अछि । यद्यपि वैज्ञानिक व्यवस्थाक हेतु वर्गीकरणक कोनो आधार ग्रहण कयल जा सकैत अछि, मुदा पूर्ण निर्दोष आधार कोनो नहि भए सकैत अछि । अतः प्रेमकेँ कोनो आधार पर वर्गीकृत करबाक चेष्टा कय ओकर विवेचन करबाक अपेक्षा ओकर विविध रूपक स्वतंत्र विवेचने उपयुक्त अछि । मानव-जीवनमे प्रेम सामान्यतः निम्न रूप ग्रहण करैत दृष्टिगत होइछ - भक्ति (निर्गुण-सगुण), प्रणय, वात्सल्य, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम वा मानव-प्रेम, कुटुम्ब-प्रेम, मैत्री (समवयस्कक प्रेम), श्रद्धा, सेव्य-सेवक प्रेम, सूक्ष्म (भावना, कल्पनादि)क प्रति प्रेम, स्थूल (पदार्थ)क प्रति प्रेम, आत्म-प्रेम वा स्व-प्रेम आदि । अतः एहि सभक अत्यन्त संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कयल जाएत ।

(ख) प्रेमक विविध रूपक विवेचन

भक्ति :

श्रद्धा आ प्रेमक योगसँ जे धर्मक रसात्मक अनुभूति होइछ, ओकरा

भक्ति कहल जाइछ ।[87] भक्ति दू प्रकार होइछ......(1) निर्गुण भक्ति, एवं (2) सगुण भक्ति । निर्गुणे सगुण रूपमे प्रकट होइत अछि, अतः आदि वा मूल सत्ता भारतीय चिन्तनक अनुसार निर्गुणेकेँ मानल जाइछ । जखन निर्गुण ब्रह्मक व्यक्त रूपमे कोनो बाह्य आलम्बनक प्रति, भक्त वा साधकक व्यक्तिगत रागात्मक सम्बन्ध स्थापित भऽ जाइछ, तखनहि भक्तिक जन्म होइछ । प्रेमक भेद वा प्रकार सभमे भक्तिकेँ सर्वश्रेष्ठ मानल जाइछ, कारण एहिसँ साधककेँ अखंड आनन्दक प्राप्ति होइछ । सृष्टिक मूलमे निवास कयनिहार जे प्रकाशमान अमर एवं चेतन सत्ता, निराकार एवं निर्गुण तत्व अछि, ओकर पूर्ण सामीप्य-लाभ करबाक हेतु, ओकरा संग जे व्यक्तिगत, आन्तरिक वा एकान्तिक प्रेम-सम्बन्ध स्थापित कयल जाइछ ओ भक्ति थिक। ओ परमात्मामे परम प्रेम भक्ति थिक ।[88] ई भक्ति वा प्रेम अमृतस्वरूप अछि । एकरा प्राप्त कय मनुष्य कृतकृत्य भऽ जाइछ, अमर भए जाइछ, तृप्त भए जाइछ, निष्काम, शोकरहित एवं द्वेषरहित भए जाइछ । सांसारिक पदार्थमे ओकरा मोन नहि लगैछ । ओकरा प्रति ओकरामे कोनो उत्साह नहि रहि जाइछ। ओ भक्तिक आनन्द प्राप्त कऽ उन्मत्त भए उठैछ, जड़ एवं निष्क्रिय भए जाइछ तथा मात्र आत्मामे मग्न रहैछ । ओ मात्र भगवानक इच्छा करैछ, आओर ककरो नहि ।[89] एहि प्रकारक प्रेममे मात्र आत्मसमर्पण रहैछ । प्रेमी बदलामे किछुओ नहि चाहैछ ।[90] ई प्रेम अनिर्वचनीय अछि, बौकक गुड़ सदृश अछि ।[91] ई प्रेम सत, रज आ तम-तीनू गुणसँ पृथक अछि, पूर्णतः कामनारहित अछि आ प्रत्येक क्षण बढ़ैत जाइत अछि । एकर अटूट प्रवाह सर्वदा वर्त्तमान रहैछ । ई अत्यन्त सूक्ष्म अछि तथा मात्र अनुभवे सँ जानल जा सकैछ ।[92] ई प्रेम शन्तिस्वरूप एवं परमानन्दरूप अछि।[93] एहि प्रेमक अनुभवकर्ता भक्तलोकनि परस्पर ईश्वरगुणानुवाद करैत प्रेमसँ कण्ठावरोध, रोमांच तथा अश्रुसँ युक्त भऽ अपन वंशकेँ उद्धार करैत पवित्र बना दैछ । हिनकालोकनिसँ सम्पूर्ण पृथ्वी पवित्र भए जाइछ ।[94]

ई भक्ति, अवस्था-भेदसँ दू प्रकारक होइछ - पराभक्ति (निष्काम) तथा गोपी भक्ति (सकाम) । भगवानक प्रतिये सर्वोच्च प्रेम पराभक्ति होइछ । ओकर स्वरूप पूर्णतः अनिर्वचनीय, अवर्णनीय अछि। ई भक्ति साइते कोनो भक्तकेँ प्राप्त होइछ । ई तीनू गुणसँ भिन्न, निष्काम, प्रतिक्षण वर्द्धमान, अविच्छिन्न, अतिसूक्ष्म एवं अनुभवगम्य होइछ ।[95] गोपीसभकेँ भगवान् कृष्णक प्रति यैह भक्ति वा प्रेम प्राप्त छनि, कारण ओलोकनि पूर्णतः

निःस्वार्थ छथि आ आत्मसमर्पणक भावनासँ परिपूर्ण छथि । गोपीभक्ति गुण-भेदसँ तीन प्रकारक होइछ – सात्विकी, राजसी आ तामसी ।[96] भक्त भगवानकेँ अपन भक्तिएक कारण प्रिय छथि । भगवानक प्राप्तिक उपाय सेहो भक्तिए अछि । भक्तिकेँ छोड़ि ईश्वर प्राप्तिक अन्य सभ साधन हास्यास्पद थिक ।[97] भक्तिए परम पुरुषार्थ थिक ।[98]

एहि प्रकारक गुण, लक्षण वा विशेषता अनेक अछि, परंच एकर सारभूत तत्व अछि-निःस्वार्थता, अनन्य विश्वास, एकनिष्ठता आदि । एहि गुणसभक प्रेरणा-स्रोत मात्र यैह अछि जे भक्तकेँ अपन भगवान प्रिय लगैछ। बस ! किएक लगैछ, एकर उत्तर नहि देल जा सकैछ । भगवान महान छथि, अनन्त शक्ति, शील एवं सौन्दर्यसँ सम्पन्न छथि, बड़ बेसी दयालु छथि, दुष्टसभक संहारक छथि आ ओ सृष्टिक पूर्ण नियंता छथि । भक्त दीन अछि, भगवानक दुआरिक भिक्षुक अछि, साधनहीन अछि । ओ अपनाकेँ पातकी बुझैत अछि आ अपन दुष्कर्म तथा अज्ञानता पर पश्चाताप करैत अछि । महाकवि सूर आ तुलसी एही भक्तिक गुणगान कयलन्हि अछि । यैह कारण जे भक्त अन्तमे उद्‌घोष करैत अछि – 'सियाराम मय सब जग जानी । करौ प्रणाम जोरि जुग पानी ।'[99]

भक्तकेँ जन्म-जन्मान्तर धरि मात्र ईश्वरेक भरोस रहैछ, कारण ओ अनन्त क्षमाशील, महिमावान, प्रतापी, दयालु तथा माया आ कलियुगक प्रभावसँ बचेनिहार छथि । भक्तक भ्रांति सेहो हुनका बिनु समाप्त नहि भऽ सकैछ । एहन प्रभु जकरा पर कृपा कय दैछ ओ कुलीन आ सुन्दर भए जाइछ । ओ स्वयं भगवानमय बनि जाइछ ।[100] यैह कारण जे भक्त माया तथा मोहपाशसँ मुक्त होयबाक लेल मात्र अपन प्रभुयेक स्मरण करैछ । ओ प्रभुक अपार शक्तिकेँ देखि बौक भए जाइछ किंवा उल्लासमे बताह जकाँ गबैत आ नचैत रहैछ । आत्म-बोध भेला पर ओ अपनाकेँ अवगुणक खान कहैछ आ ईश्वरक चरणकेँ छाड़ि एक्को पलक लेल अन्यत्र नहि जाइछ। यैह भक्त-हृदयक सामान्य मनोभूमि थिक ।

ओहि परमप्रिय परमात्माक भक्ति वा प्रेम एगारह प्रकारक होइछ-गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कांतासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति, परमविरहासक्ति ।[101] अपन-अपन वृत्तिक अनुरूप भक्त भक्तिक उपर्युक्त पद्धति वा रूप सभमेसँ कोनो एककेँ पकड़ि चलि सकैत अछि । किन्तु एहि

सभमेसँ माधुर्यभावक किंवा विरहभावक भक्तिए उच्चकोटिक भक्ति मानल जाइछ । एहि भक्तिमे भक्त एवं भगवानमे प्रगाढ़ तादात्म्य स्थापित भऽ जाइछ ।

साहित्य वा काव्यक एही भक्तिसँ विशेष सम्बन्ध रहैछ । ई भक्ति श्रृंगार-रसक स्थायीभाव रतिक आधार पर आधारित भए भक्ति-रसक सृष्टि करैछ । मुदा आचार्यलोकनिक अनुसारेँ भक्तिरस साहित्यिक नहि भऽ साम्प्रदायिक रस थिक, कारण काव्यानुभूतिमे मानवमात्रक हृदयधरि व्याप्त होयबाक क्षमता, साहित्यिक प्रसिद्धि, साधारणीकरणक सिद्धान्तक अनुसारेँ, आवश्यक अछि । मुदा भक्ति-रस एक विशेष वर्गहिसँ (राम, कृष्ण, विश्व वा अन्य देश-विदेशक अवतार, महापुरुष आदि) सम्बन्ध रखैछ । एहि मुख्य तर्कक आधार पर भक्तिकेँ एक साम्प्रदायिक रस कहल जाइछ ।[102] दोसर बात ई जे श्रृंगार रसमे तँ आश्रय आ आलम्बन दुनूक स्थिति रहैछ, मुदा भक्तिमे एक पक्ष (भक्त) तँ प्रत्यक्ष रहैछ, परंच दोसर पक्ष मात्र भाव वा कल्पनेमे स्थित रहैछ । पाषाण प्रतिमा आदिमे तँ चेतना नहि रहैछ । ओतय प्रत्युत्तरशीलताक अभाव रहैछ आ तेँ रस सामग्री पूर्ण नहि रहैछ । आचार्यलोकनिक चाहे जे मत होन्हि, मुदा एतवा निश्चित अछि जे भक्ति सम्बन्धी काव्यक, साहित्यमे मर्यादित स्थान अछि आ ओकर अध्ययन, मनन तथा गायन-कीर्त्तन सँ भक्त-हृदय रस-प्लावित होइत रहैछ ।

भक्तिक घनिष्ठतम सम्बन्ध कान्ताविषयक रतिसँ अछि । जाहि हृदयसँ हमरालोकनि कान्ताविषयक रतिमे निमग्न होइत छी, ओही हृदयसँ भगवानक संग निकटतम प्रेम-सम्बन्ध सेहो स्थापित करैत छी । भक्तिक विभिन्न भेदमे माधुर्यभावपूर्ण भक्ति वा मधुराभक्तिक स्थान सर्वोच्च मानल गेल अछि । एहि भक्तिमे भक्त आ भगवानक सम्बन्ध प्रेमी-प्रेमिका वा स्त्री-पुरुषक होइछ, भक्त या तँ परम प्रियतम प्रभुक प्रिया बनैछ[103] अथवा ओ परमात्माकेँ अपन परम प्रेयसीक रूपमे ग्रहण करैछ । भक्त आ भगवानक बीच एहन सम्बन्धक कल्पना किएक कयल गेल ? कारण स्पष्ट अछि । एहि भक्तिक मूलमे परिष्कृत कामभावक सूक्ष्मतम बीजे निहित अछि ।[104] मनोविज्ञान एकर पूर्ण साक्षी अछि ।

प्रणय अथवा दाम्पत्य

वयःप्राप्त एवं संभोगसुखाभिलाषी स्त्री-पुरुषक रूप-गुण-जन्य पारस्परिक आकर्षणसँ अनायास उत्पन्न मादन-भावक नैसर्गिक प्रेमकेँ प्रणय कहल जाइछ । प्रेम मात्र दाम्पत्य-रति किंवा मादन-भावक प्रेमे धरि सीमित नहि

रहैछ, प्रत्युत् हृदयक समस्त भावक्षेत्र तथा ओहिसँ सम्बन्धित वा प्रेरित सभ जीवन, पदार्थ एवं कार्यकेँ सेहो प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूपेँ प्रभावित करैछ । संसारमे जतबा जे पदार्थ अछि, ओहिमे किछु तँ परम सुन्दर, कान्तिवान एवं आनन्दप्रद दृष्टिगोचर होइछ आ किछु कुरूप। हमर अन्तरात्मा सत्-चित् आ आनन्दमय परमात्मेक अंश थिक, तेँ ओ स्वभावतः सृष्टिक सुंदर पदार्थे सभक चयन करैछ आ कुरूपकेँ त्यागि दैछ। मुदा ई सत्य थिक जे बाह्य चक्षुसँ किछु पदार्थ सुन्दर नहि देखाइ दैछ, तथापि हमरा मोनक लेल ओ अवश्य सुन्दर एवं रमणीय होइछ । सृष्टिक सभ प्रिय वा अनुकूल पदार्थसँ हमर मधुर रागात्मक सम्बन्ध स्थापित भऽ जाइछ । हमरालोकनिक मोनक एकटा अत्यन्त गूढ़ वृत्ति अछि - रागात्मिका वृत्ति । एहि वृत्तिक माध्यमसँ हम अपन सम्बन्ध बाह्य जगत्सँ स्थापित करैत छी । एहि प्रकारक सम्बन्ध स्थापित करब आर किछु नहि, प्रत्युत् अपनहि आत्माकेँ विश्वव्यापी बनयबाक अभ्यास आ उद्योग थिक । जकर रागात्मिका वृत्ति जतबहि चराचरव्यापिनी होइछ, ओकर आत्मा ओतबहि उन्नत, व्यापक आ उदार मानल जाइछ। जकरामे अपन-आनक जतबा कम भेद होइछ, ओकरामे ई वृत्ति ओतबहि उच्च होइछ। एतबा भेलो सन्ता हमर हृदय जखन यथासंभव सभ प्रकारक प्रेम-सम्बन्धसभसँ परिपूर्ण भए जाइछ, तखनहि हमर प्रेमानुभूति पूर्ण मानल जाइछ, अन्यथा अपूर्ण । ओना तँ सभ प्रकारक प्रेम-सम्बन्धमे परिस्थिति-भेदसँ प्रेमक तीव्रता एवं स्थायित्व देखना जाइछ, मुदा प्रेमक ई वृत्ति जतबा स्पष्ट, जतबा पूर्ण आ जतबा प्रभावशालिनी परस्पर आकृष्ट दूटा युवा प्रेमीक प्रेम-सम्बन्धमे प्रकट होइछ, ओतबा आओर कतहु नहि बूझल जाइछ ।[105] मनोविज्ञानवेत्ता ई सिद्ध कय देलन्हि अछि जे लौकिक वा अलौकिक, सभप्रकारक प्रेम-सम्बन्धक मूलमे हमर काम-भावनहि (LIBIDO) सूक्ष्म-स्थूल रूपसँ विद्यमान रहैछ ।[106] स्वयं ऋग्वेदमे (नासदीय सूक्त) कामहिकेँ सृष्टिक मूल प्रेरणा बताओलगेल अछि -

कामस्तर्गे समवर्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥

उपनिषद्मे सेहो बेस गंभीरतापूर्वक एहि विषय पर मनीषीलोकनि द्वारा विचार व्यक्त कयल गेल अछि ।

आधुनिक मनोविज्ञानवेत्तासभक धारणा छन्हि जे मानवीय प्रेम आ आध्यात्मिक अनुभव दुनू एक प्रकारक नहि अछि, हँ, दुनूक निर्माण

कयनिहार तत्व, उद्देश्य, भावना अवश्य एक-दोसरासँ बहुतो अंशमे समता रखैछ ।[107] भारतीय विचारक सेहो आइ प्रमाणपूर्वक एही धारणाक समर्थन करैत छथि ।[108] एहिसँ ई स्पष्ट अछि जे प्रेम, मात्र स्थूल भोग वा कामेटा नहि अछि । ई कामक उज्ज्वल आ परिष्कृत रूप थिक। तखन एतबा निश्चित जे जाहि हृदयमे काम-विकार उत्पन्न होइछ ओही हृदयमे उदात्त एवं निर्मल प्रेमक अनुभूतिक संचार सेहो होइछ । मुदा एहि तथ्यकेँ नीक जकाँ नहि बूझि शीघ्रतामे निष्कर्ष बहार करयबला मनोवैज्ञानिकसभ ई कहब प्रारम्भ कऽ देल जे स्त्री-पुरुषक रति तथा ईश्वरक प्रति प्रेम, दुनूमे कोनो अन्तर नहि । एही आधार पर तत्काल भ्रांतिपूर्ण अनुमान लगा लेल जाइछ जे भक्त एवं भगवानक सम्बन्धो, साधारण स्त्री-पुरुष-सुलभ यौन-सम्बन्ध थिक ।[109]

एहि प्रकारेँ पाश्चात्य एवं भारतीय तत्वचिंतक, मनोविज्ञानवेत्ता, दुनूक दृष्टिमे काम आ प्रेमक घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । प्रेमक मूल थिक काम, जे ब्रह्मक अनादि इच्छा 'एकोहं बहुस्यामि'क निर्वाह करबाक हेतु मानव-प्राणीमे सृष्टि-संवर्धन-व्यापारक आदिम प्रेरणाक रूपमे परम्परासँ आबि रहल अछि तथा हमर भावना एवं जीवन-व्यवहारसभक सूक्ष्म-स्नायुजालक पोषक जीवन-रस अछि ।[110] सृष्टि-विकासक मूलमे जे काम निहित अछि, ओ सत्व, रज आ तम, प्रकृतिक एहि तीन गुणक भेदसँ विभिन्न स्तरक होइछ । सात्विक काम उज्ज्वल एवं दिव्य बनि कय जीवनक शक्ति एवं प्रेरणा बनि जाइछ ।[111] राजसिक काम जीवनकेँ चिर गतिशील बना, सुख-दुःखक मिश्रित अनुभूति करबैछ, आ तामसिक काम जीवनकेँ पतनोन्मुखी बना दैछ। एहि तीन रूपमे सँ प्रथम रूपक कामहि मानवकेँ स्वस्थ, बहुमुखी, संतुलित एवं कल्याणकर बनबैत अछि । कला आ साहित्यक अभ्यास आ अनुशीलन द्वारा राजसिक एवं तामसिक कामक सेहो उन्नयन वा उदात्तीकरण (SUBLIMATION) पूर्ण सम्भव मानल जाइछ । हमरा हृदयमे राग-तत्व अछि ओहिसँ सभ प्रकारक प्रेम-सम्बन्ध प्रणय, भक्ति, श्रद्धा आदिमे झंकार एवं गुंजन उत्पन्न होइछ, मुदा ओहि सभसँ अधिक कम्पन वा आन्दोलन युवा स्त्री-पुरुष-सुलभ मादन-प्रेम भावहिमे होइछ ।[112] चैतन्यसँ प्रकाशित भेला उत्तर स्त्री-पुरुषक काम-चेष्टा एवं संभोग-व्यापार सेहो आध्यात्मिक-महत्वसम्पन्न भए जाइछ । संभोग क्रिया पशु-व्यापार नहि भय महानन्दक अनुभूतिक एक परम रहस्यात्मक मुद्रा भऽ जाइछ ।[113] पाश्चात्य मनोविज्ञानवेत्तालोकनि विवाहित जीवनमे अध्यात्मक संभावनाकेँ बेस वैज्ञानिक तटस्थता एवं स्पष्टताक संग परीक्षण

कयलन्हि अछि जे विचारणीय थिक ।[114] अतः चैतन्यक प्रकाशने मुख्य थिक । ई प्रकाशन सभ प्रकारक प्रेम-सम्बन्धकेँ सुन्दर, सार्थक एवं दिव्य बना दैछ ।

कामक प्रकाशन जखन भिन्नलिंगीक (OPPOSITE SEX) संग शारीरिक, मानसिक आ आध्यात्मिक रूपमे होइछ, तँ ओ उच्च अवस्थाकेँ प्राप्त करैछ। वस्तुतः शारीरिक, मानसिक आ आत्मिक - एहि तीनूक संयोगक माध्यमसँ प्रेमक प्रगाढ़ अनुभूति होइछ । एहि पूर्ण अनुभूतिक लेल भौतिक आधार (आश्रय-आलम्बन वा नायक-नायिका)क आवश्यकता होइछ । भक्तिमे आलम्बन सूक्ष्म होइछ, तेँ साहित्यशास्त्रीलोकनि भक्ति-भावनाकेँ मात्र भावक स्थिति मानैत छथि, पूर्ण रस नहि, मुदा भक्तिशास्त्रक आचार्यलोकनि भक्तिकेँ रस-रूपमे मानल जयबाक पक्षपाती छथि ।

एहि प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे लौकिक एवं अलौकिक, दुनूक मूलमे काम निहित अछि । काम भक्ति वा अलौकिक रतिमे आलम्बनक सूक्ष्म वा काल्पनिक रूप होयबाक कारणेँ अत्यंत परिष्कृत एवं निर्मल होइछ । प्रस्तुत काम लौकिक रतिमे अभिव्यक्त कामसँ कएक गुना सूक्ष्म अछि । अतः दुनू रतिमे अपना-अपना ढंगक सात्विकताकेँ मानैत, ओहिमे परिणाम-भेद, मात्रा-भेद एवं धरातल-भेदकेँ अवश्य स्वीकार कयल जायत ।

एवं प्रकारेँ अनुभूत मानव-भावक ई प्रेम, काव्यक मूलभूत प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थिक । साहित्यशास्त्रमे एहि प्रेमपर सभसँ बेसी विचार कएल गेल अछि । श्रृंगार-रसक शास्त्रीय निरूपणक अन्तर्गत एहि विषयपर यथेष्ट प्रकाश देल जायत ।

काव्यमे श्रृंगार, प्रेम-वर्णनक चारि गोट पद्धति प्रचलित अछि । प्रथम पद्धतिक प्रेम ओहि ठाम प्रकट होइछ जाहिठाम प्रेमी एवं प्रिय विवाहित होथि । द्वितीय प्रकारक प्रेम ओहि ठाम प्राप्त होइछ, जतय विवाहमे ओकर पर्यवसान हो । तेसर प्रकारक प्रेम विलासी राजालोकनिक प्रेम-चर्यासभमे प्राप्त होइछ । चारिम प्रकारक प्रेमक रूप ओतय प्राप्त होइछ, जतय प्रेम ककरो गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन एवं स्वप्न-दर्शन आदिसँ अनायासहि उत्पन्न होयब बताओल जाइत हो ।

वात्सल्य

छोट आयुक बालकक प्रति हृदयमे जे रतिभाव उत्पन्न होइछ, ओकरा वात्सल्य प्रेम कहल जाइछ ।[115] ओना साधारणतः ई प्रेम सुन्दर आ

छोट आयुक बालकक प्रतियेँ उत्पन्न बूझल जाइछ, परंच बाहरी दृष्टिसँ कुरूप आ पैघ आयुवलासभक प्रतियेँ सेहो एकरा उत्पन्न होइत देखल जाइछ। कुरूपसँ कुरूप बालक सेहो ओकर मायक लेल अद्भुत सौन्दर्यशाली होइछ तथा पैघ आयुक वृद्ध अपना माय-बापक अथवा कृपालुजनक दृष्टिमे अबोध वा सरल बालके बुझल जाइछ । तथापि वात्सल्य प्रेम प्रायः स्तन-दुग्ध-जीवी, कचबच आ तोतराइत वाणी बाजयवला, लेर टपकाबयवला, माटि खायवला, किलकयवला, ठेहुनिया दइवला तथा पेट भरल रहलापर प्रसन्न तथा भूख लगलापर कनैत-कनैत मुँह लाल कय हल्ला मचबयवला नितान्त अबोध बालकक प्रति प्रकट प्रेमहिकेँ कहल जाइछ । बालकक रूप-सौन्दर्य, अंगसभक सुगढ़ता, स्निग्धता, शुभ्रता, कोमलता, सुकुमारता, सुडौलता आ आह्लादक चेष्टा सभ वात्सल्यरसक वृद्धिमे परम सहायक मानल जाइछ । रहस्य-दृष्टि सम्पन्न भावुक वा कल्पनाशील व्यक्ति बालककेँ देखि ओकर सृष्टिकर्ता ईश्वरक भावनामे मग्न भए जाइछ आ रहस्यक दृष्टिसँ देखलापर ओकरा अलौकिक प्रकाश एवं गुणसँ सम्पन्न देखैछ । सूर आ तुलसी क्रमशः कृष्ण एवं रामक बाल चेष्टासभक वर्णन करैत हुनका सम्बन्धमे अलौकिकता एवं ईश्वरीयताक भावनाकेँ तँ व्यक्त करबे कयलन्हि अछि, संगहि कृष्ण आ रामकेँ साधारण बालक नहि बूझि साक्षात् ब्रह्महिक रूपमे स्वीकारलन्हि अछि । अंगरेजीक कवि वर्ड्सवर्थ तँ स्वाभाविक कौतूहल एवं रहस्यभावनासँ बालककेँ देखि ओकर अलौकिकताक दिग्दर्शन कयलन्हि अछि ।[116] एवं प्रकारेँ भावुक जनक दृष्टिमे बालक सृष्टिक सभसँ निष्पाप, पवित्र एवं ईश्वरीय जीव थिक । टालस्टाय स्वर्गक साम्राज्य पृथ्वी पर बालकेक रूपमे देखलन्हि अछि ।[117]

वात्सल्य प्रेमक महत्व यद्यपि जीवन आ साहित्य दुनूमे अछि, तथापि जीवनमे विशेष आ साहित्यमे कम मानल जाइछ । सूरदास वात्सल्य रसक अमर कवि मानल जाइत छथि । बाल-विषयक रति रस-सामग्रीसँ सम्पुष्ट भए पूर्ण रसक कोटिमे पहुँचि जाइछ । अतः काव्यमे वात्सल्यरसकेँ मान्यता प्रदान कयल गेल अछि । किछु विद्वान एकरा बाल-विषयक रतियेक संज्ञासँ अभिहित करैत छथि । एकर अनुभूतिसँ सहृदयलोकनिकेँ अलौकिक एवं साहित्यिक आनन्द प्राप्त होइत छनि ।

प्रकृति-प्रेम

वस्तुजगत एवं भावजगतसँ अविच्छिन्न रूपेँ प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूपमे

सम्बन्धित जे हमर मूल भाव थिक, ओकरा रति कहल जाइछ। एहि रतिक क्षेत्र जतबे व्यापक होयत, ओतबहि ओ कवि-हृदयक व्यापकताक परिचायक होयत । ई रतिभाव कान्ताविषयक किंवा देवताविषयक नहि होइछ, प्रत्युत् देश-विषयक, मानव प्रेम-विषयक (अपन संतान, देशवासी तथा मानवमात्र, प्रकृति आदि) तथा प्रेम, सौन्दर्य आ कलाक सूक्ष्म भावना एवं आदर्शसभसँ सेहो सम्बन्ध रखैछ । जखन कोनो कवि रतिक सीमित परिधिकेँ तोड़ि अपन भाव-प्रसारक परिचय दैछ तँ हम ओही अनुपातमे ओहि कविक समृद्धि वा विकासक अंकन मे सफल होइत छी । प्रकृति सम्बन्धी रति वा प्रकृति-प्रेम हमरालोकनिक रति-वृत्तिक एक महत्वपूर्ण खण्ड थिक । एहि प्रेमकेँ वाणी प्रदान करब सम्पूर्ण हृदयक पूर्णताकेँ वाणी प्रदान करब थिक ।

मानव-प्रकृति एवं जड़-प्रकृति ब्रह्मक आत्म-प्रसार, स्फुरणक आधारपर मूलतः एक्के अछि ।[118] अतः मानव आ प्रकृतिक बीच घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । एक-दोसरकेँ पृथक् कऽ कए देखब जीवन-समष्टिक वास्तविक सत्ताकेँ अस्वीकार करब थिक । सर्वत्र प्रकृति-प्रसारकेँ देखि मानव-हृदयमे एक अनादि आ चिर-निगूढ़ मुक्तिक तरंगवती प्रेम-भावना उत्पन्न होइछ । यैह प्रकृति-प्रेम काव्यमे भाव-व्यंजना तथा दृश्य-चित्रण दुनूक उपजीव्य थिक । काव्यमे प्रकृतिक जतबा जे उपयोग होइछ, ओ सभ एही प्रकृति-प्रेमसँ सार्थक होइत अछि। परंच आलंबनगत वर्णन वा चित्रणक रूपमे, ई प्रकृति-प्रेम सर्वाधिक प्रकट होइछ । प्रकृति-प्रेम किंवा प्रकृतिक परिस्थितिसभक अवतारणाक अभावमे कवि मानव-जीवनक सरस चित्र अंकित नहि कय सकैछ । वास्तविक प्रकृति-प्रेम कोनो एक रूप, वनस्थली वा भूखंडेक प्रति प्रेम नहि भऽ कए, कृत्रिम भौगोलिक सीमाकेँ तोड़ि, समस्त प्रकृतिक संग तादात्म्यक अनुभूति अछि । ई अनुभूति जतबहि संश्लिष्ट एवं समष्टिगत होइछ, ओहिमे ओतबे प्राण-प्रवेग रहैछ । वस्तुतः प्रकृति-प्रेम मानव-प्रेमक लेल मार्ग प्रशस्त करैछ । संगहि ओ हमरा अपन चरित्रक प्रक्षालनक सेहो प्रेरणा दैछ वा दऽ सकैछ । ओ हमरामे उदात्त भावना भरि कय मनुष्यताक ज्योति जाग्रत करैछ। प्रकृतिक दर्शन करैत-करैत हमरा बहुमूल्य चित्त-वृत्ति एवं अन्तर्दृष्टि प्राप्त भऽ सकैछ ![119] ओहिमे हमरा मानव-जीवनक गम्भीर सँ गम्भीर सन्देश प्राप्त होइछ तथा आनंदक स्वर्गीय हिलकोर आ गम्भीर मुक्ति-तरंग सेहो प्राप्त होइछ जे कदाचित अन्यत्र कतहु सम्भव नहि ।[120] प्रकृतिक एही स्वस्थ, सौम्य तथा गंभीर प्रभावक कारणेँ प्राचीन आर्य ऋषि

आश्रमसभमे जा कऽ प्रकृतिक जीवित सम्पर्कमे निवास करैत छलाह । यूरोपक रूसो, वर्ड्सवर्थ, टाल्सटाय, रास्किन आदि लेखक अपन प्रकृति-प्रेमक कारणेँ अत्यन्त प्रसिद्धि प्राप्त कऽ चुकल छथि ।

प्रकृतिक प्रति हमर वास्तविक प्रेम तखनहि प्रकट होइछ जखन हम ओकर कोमल आ मधुर रूपक संग-संग परुष, रूख, बेडौल एवं भीषण रूपसभक प्रति सेहो आकृष्ट होइछ । मात्र कोमल वा व्यवस्थित रूपसभक प्रति आकर्षण हमर प्रकृति-प्रेमक पूर्ण परिचायक नहि भए सकैछ । एहना अवस्थामे हम मात्र एकटा तमाशा देखौनिहार भए सकैत छी, प्रकृतिक वास्तविक प्रेमी नहि। वास्तविक प्रकृति-प्रेमी कवि प्रकृतिक निसटठ् आ अनगढ़ रूपसभक प्रति सेहो अपन अकाट्य प्रेम प्रकट करैछ।[121] एही प्रकारक कवि वस्तुतः प्रकृतिक वास्तविक पुजारी कहबैछ।

काव्यमे प्रकृतिक स्थायी आ चिरकालिक महत्व एवं स्थान अछि। मानव अनादिकालसँ ओकरहि कोरामे क्रीड़ा करैत आबि रहल अछि । तेँ प्राचीनकाव्यमे प्रकृतिक प्रति आलम्बनगत प्रेमक यथेष्ट व्यंजना भेल अछि। मुदा जेना-जेना सभ्यताक कृत्रिम जाल पसरैत गेल, मानव अपन जननीसँ दूर होइत गेल । ओकर आनन्द सेहो मात्र मानवजगते धरि सीमित भऽ गेलैक । काव्यमे निरूपित प्रकृतिमे मानव हृदयकेँ पूर्ण तृप्त वा रसमग्न करबाक क्षमता छैक । मुदा हमर आचार्यलोकनि ओकरा मात्र श्रृंगार रसक उद्दीपनेक सामग्री बुझैत आयल छथि । प्रसन्नताक विषय थिक जे आधुनिक विचारक आब प्रकृति वर्णन द्वारा रसनिष्पत्तिक पूर्ण संभावना मानय लगलाह अछि जे सर्वथा उचित एवं समीचीन अछि ।

देश-प्रेम

स्वत्व-प्रधान व्यक्ति 'स्व' केर सीमासँ बहार भए विश्वव्यापी होबय चाहैछ । देश-प्रेम, विकासक एहि आकांक्षाक महत्वपूर्ण लक्ष्य थिक । पूर्ण विश्वव्यापी होयबाक लालसा प्रत्येक ऊर्ध्वमुखी एवं प्रबुद्ध व्यक्तिक आत्माक सहज प्रकृति होइछ । मुदा देश-कालक सीमा तथा शारीरिक-मानसिक विवशताक कारणेँ सभ व्यक्ति ओहि दिशामे इच्छानुसार नहि बढ़ि पबैछ । जाहि देशमे एकहिटा भाषा, धर्म आ संस्कृति रहैछ, ओहि देशक संग ओहिठामक कोनो निवासीक तादात्म्य स्थापित करब अपेक्षाकृत सरल होइछ । मुदा जाहि देशमे अनेक भाषा, धर्म आ संस्कृतिक धारा प्रवाहित रहैछ, ओहि देशक संग एकाकार होयब अत्यन्त उच्चकोटिक मानसिक एवं आत्मिक

साधनाक अपेक्षा रखैछ । देश-प्रेमक भावना एक बड़ पैघ उदात्त भावना थिक, मुदा विश्वैक्य किंवा विश्व-प्रेम तँ ओहूसँ उच्च कोटिक वस्तु थिक। देश-प्रेम वस्तुतः अनेक प्रकारक प्रेम (जन्मभूमि-प्रेम, प्रकृति-प्रेम, अतीत-प्रेम, मानव-प्रेम आदि)क एक संश्लिष्ट अनुभूति थिक । विज्ञानक कारणेँ संसार जेना-जेना संक्षिप्त होइत जा रहल अछि, देश-प्रेमक भावना ओतबहि विस्तृत भऽ रहल अछि। भारतमे एहि व्यापक देश-प्रेमक अत्यन्त सुन्दर रूप अथर्ववेदक मंत्रसभमे[122], कालिदासक कृतिसभमे तथा शंकराचार्य द्वारा कयल गेल देशक सांस्कृतिक गठनक प्रयत्नमे प्राप्त होइछ । घर, गाम एवं प्रान्त आदिक प्रति प्रेम सेहो देश-प्रेमक अंग थिक । मैथिलीक आधुनिक कवि सुमन[123], किरण, यात्री आदिक काव्यमे सेहो देश-प्रेमक महती भावना प्राप्त होइछ । एहि प्रेमक हमरालोकनिक रागात्मक हृदयक संग घनिष्ट सम्बन्ध अछि । काव्यमे सेहो एकरा विशेष महत्व प्रदान कयल गेलैक अछि। राष्ट्रीयताक आधुनिक भावनाक संग काव्यमे एकरा उच्च स्थान प्रदान कयल जाय लागल अछि ।

विश्व-मैत्री वा मानव-प्रेम

विश्व-प्रेमक लेल देश-प्रेम अथवा राष्ट्रीयता एक अनिवार्य सीढ़ी थिक । जे व्यक्ति अपना देशसँ प्रेम नहि कऽ सकैछ, ओ भला विश्व-प्रेम की करत ? अतः जे व्यक्ति वास्तविक विश्व-प्रेमी होइछ, ओकर हृदय राष्ट्रीयता, जाति, भाषा, धर्म तथा भौगोलिक सीमाकेँ तोड़ि कय मानवमात्रक प्रेमी बनि जाइछ । प्राणीमात्र अथवा मानवमात्रसँ प्रेमक भावना मात्र आजुक भावना नहि थिक । भारतमे उक्त प्रेम कोन-सीमा धरि बढ़ि चुकल छल, तकर ध्वनन एहि उक्तिमे भऽ रहल अछि-

'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।'

मुदा आइ राष्ट्र-राष्ट्र, धर्म-धर्म तथा भाषा-भाषाक बीच पारस्परिक संघर्ष भऽ रहल अछि, तेँ एहि प्रेमक प्रकाशन कविलोकनिक काव्यमे एकटा नवीने प्रकारक क्रांति धारण कऽ रहल अछि । विश्वशान्ति तथा विश्व-प्रेमक अग्रगण्य महापुरुष (स्वामी-रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द[124], रामकृष्ण परहंस, महात्मा गाँधी, रोम्यांरोला, टॉल्सटॅाय आदि) मानवप्रेमक समस्याकेँ प्रस्तुत कऽ ओकर समाधान प्राप्त करबाक यथाशक्ति प्रयत्नकऽ चुकल छथि । विश्वप्रेम वा मानव-प्रेम आजुक जीवित ज्वलन्त समस्या थिक, अतः साहित्यमे एहि भावनाक महत्व स्वाभाविक अछि । एहि प्रेममे मनुष्यताक

सभसँ पैघ साधना निहित अछि । मुदा प्रश्न अछि, की अन्तःराष्ट्रीयताक लेल हमरा राष्ट्रीयताकेँ त्यागि देबाक चाही ? उत्तर अछि, राष्ट्रीयता यदि आत्म-विकासमे बाधक हो तँ ओ त्याज्य अछि । मुदा ई पहिने कहल गेल अछि जे राष्ट्रीयता, देश-प्रेम आदि एकर सोपान थिक । अतः जे पूर्ण राष्ट्रीय अछि, ओएह अन्तर्राष्ट्रीय भऽ सकैछ । वस्तुतः राष्ट्र-प्रेम, मानव-प्रेम वा विश्व-प्रेमक प्रयोगशाला थिक । अतः राष्ट्रीय होयब हमर व्यक्तित्वक परिचायक थिक । जे घरक नहि, ओ कतहुक नहि । अतः राष्ट्रीय होइत अन्तर्राष्ट्रीयता, विश्व-मानवता दिस संचरण करब मनुष्यक लक्ष्य होयबाक चाही ।

कुटुम्ब-प्रेम

कुटुम्ब-प्रेम साधारणतः सामान्य मानव-प्रेमक अंतिम सीमाक सूचक थिक । मुदा अपनहु घरमे ई प्रेम, प्रेमीक त्याग, सहयोग, सहिष्णुता सेवा-परायणता आदि गुणक परिचायक थिक । मानव-प्रेम जतय कुटुम्बक लघु सीमामे सीमित रहि अपन पूर्ण विकासक संभावनासँ अपरिचित रहि जाइछ, ओतहि ई अपन परिष्कार, तीव्रता एवं गम्भीरताक लेल नित्य नव-नव भूमि, आरोह-अवरोह तथा मोड़क सेहो पता लगबैछ । यैह कारण थिक जे एहि छोट परिधिमे सेहो, त्याग, विसर्जन, सहिष्णुता एवं निःस्वार्थ सेवा आदि गुणक भव्य उदाहरण दृष्टिगोचर होइछ । कुटुम्बमे छोटक श्रेष्ठक प्रति, श्रेष्ठक छोटक प्रति तथा कखनो-कखनो समवयस्कक प्रति पारस्परिक प्रेम-व्यवहारमे हृदयक सभ वृत्तिक विकासक सुयोग एवं अनुकूल वातावरण प्राप्त होइछ । वस्तुतः कुटुम्बे हमर परीक्षाक वास्तविक स्थल अछि । एतहि हमर प्रेम निर्मल एवं विकासोन्मुख होयबाक अभ्यास प्राप्त करैछ । कुटुम्ब अपनामे एकटा छोट-छीन विश्व थिक । कौटुम्बिक प्रेमक अभ्यास कयले सन्ता शनैःशनैः विश्वक प्रति कुटुम्ब भावनाक विकास भऽ सकैछ । अतः कुटुम्ब प्रेम अत्यावश्यक अछि । कुटुम्ब प्रेमहिसँ विश्व-प्रेमक परिकल्पना कयल जा सकैछ । छोटे व्यक्तिमे पैघ होयबाक संभावना निहित रहैछ ।[125] कौटुम्बिक प्रेमक अभावमे व्यक्तिक अस्मिता असमय कुण्ठित भऽ जाइछ । मुदा आइ वैज्ञानिक प्रगति एवं व्यक्तिवादक प्राबल्यक कारणेँ सम्मिलित परिवार प्रथा छिन्न-भिन्न भेल जा रहल अछि । सामाजिक परिस्थितिक कारणेँ आइ सम्मिलित कुटुम्ब व्यावहारिक भले नहि हो, मुदा काव्यमे बरोबरि एहि प्रेमक पूर्ण व्यंजना होइत रहल अछि । रामभक्ति एवं कृष्णभक्ति

सम्बन्धी काव्यसभमे एहि प्रेमक उत्कृष्ट उदाहरण प्राप्त होइछ । काव्यक माध्यमसँ ई प्रेम हमरालोकनिक जीवनकेँ सजीव एवं प्रफुल्लित बना कय रखबामे पूर्ण समर्थ अछि । कतेक सरस आ पवित्र शब्द अछि-बहिन । कतेक आह्लादक आ स्फूर्तिदायक शब्द थिक भैया । माय, पिता शब्दमे कतबा अर्थ-व्यंजना अछि । भौजी शब्दमे कतबा मिठास भरल अछि । एहिना दियोर, ननदि, नानी, पीसी, काकी आदि शब्द की व्यंजित करैछ ? कल्पना कयल जा सकैछ एहि सौन्दर्य आ प्रेममंडित उद्यानक । मुदा आइ कुटुम्बक प्रति घृणा वा उपेक्षाक भाव सर्वत्र परिलक्षित भऽ रहल अछि । कारण एकर जे हो, जाधरि कुटुम्ब प्रेमक विकास नहि होइछ, विश्व प्रेम वा मानव-प्रेमक परिकल्पना मात्र स्वप्न होयत ।

मैत्री

मानसिक एकताक आधार पर प्रायः समवयस्कलोकनिक प्रीतिकेँ मैत्री कहल जाइछ । एकर रूप भक्ति एवं दाम्पत्य प्रेममे सेहो पाओल जाइछ । जतय ईश्वरक सेहो मित्र-भावसँ उपासना कयल जाइछ, ओहि ठाम तँ मैत्रीक रूप स्पष्ट रहैछ, मुदा पति-पत्नीक प्रेम सेंहो वस्तुतः मैत्रीमूलेक प्रेम थिक, कारण हुनकामे शरीर आ मोन दुनूक मिलन होइछ । साधारणतः स्त्री-वर्गमे दूगोट समवइसी (सखी) तथा पुरुषवर्गमे दू समवयस्कक मित्रतेकेँ मैत्री संज्ञासँ अभिहित कयल जाइछ । एहि प्रकारक प्रेममे निःछद्मता, निःसंकोचता, व्यवहार-स्वतंत्रता तथा अनौपचारिकता रहलाक कारणेँ ओहिमे प्रगाढ़ताक पूर्ण संभावना रहैछ । कृष्णभक्ति-मार्गमे सख्य-प्रेमक कतबा महत्व अछि से सर्वविदित अछि । कविवर रवीन्द्र सेहो प्रभुकेँ, आत्मोल्लास आ मुक्तिक क्षणमे, मित्रहिक रूपमे प्राप्त करैत छथि ।[126]

श्रद्धा

अपनासँ आयुमे पैघ वा कोनो विशिष्ट गुणमे वृहत्तर कोनो व्यक्तिक प्रति प्रेमकेँ श्रद्धा कहल जाइछ । श्रद्धामे पूज्य बुद्धिक संचार प्राथमिक तत्व थिक । अपन जीवन-क्रमकेँ जेना-तेना त्यागि कऽ वा ओहिमे कतिपय परिवर्तन करैत, व्यक्तिगत लाभक भावनासँ रहित भऽ कऽ कोनो वास्तविक गुणी व्यक्तिक महत्वकेँ आनन्दपूर्ण स्वीकृतिये प्रदान करब श्रद्धा-भावनाक आधार थिक । श्रद्धामे व्यक्तिगत सम्बन्ध थोड़-बहुत रहियो सकैत अछि, आ नहियो रहि सकैत अछि । श्रद्धाक आधार कर्म अछि, व्यक्ति नहि । जाधरि कोनो विशेष गुणी व्यक्तिक प्रति वा आराध्यक प्रति हमर लगाव हुनक

कार्य-व्यापार वा गुणहिक कारणसँ रहैछ ताधरि तँ हुनका प्रति हमर प्रेम श्रद्धा मात्र कहबैछ, मुदा आगाँ चलि कऽ जँ हमर प्रेम व्यक्तिगत सम्बन्धक रूपमे स्थापित भऽ जाइछ, तँ ओ श्रद्धा, भक्तिक रूपमे परिणत भऽ जाइछ । देवता, ऋषि, मुनि, नेता, आचार्य, गुरु, लोकोपकारी महात्मा आदिक प्रति हमर प्रेम श्रद्धा कहल जाइछ । प्रगाढ़ व्यक्तिगत रागात्मक सम्बन्ध स्थापित भऽ गेला पर हमर प्रेम भक्ति सेहो कहा सकैछ । एहि प्रकारक प्रेम प्राचीन आ नवीन दुनू प्रकारक काव्यमे चित्रित भेल अछि । पूज्य व्यक्ति, श्रेष्ठ ग्रंथ तथा उच्च गुणक प्रति मानव मोनक एकटा अंश सर्वदा सुरक्षित रहैछ, आ भविष्योमे संभवतः रहत । श्रद्धा-भावनामे मोनकेँ शुद्ध एवं संयत करबाक अपार शक्ति विद्यमान रहैछ । यैह कारण थिक जे काव्यमे सेहो एकर पर्याप्त चित्रण भेल अछि ।

सेव्य-सेवक प्रेम

सेवक आ स्वामीक पारस्परिक सम्बन्धमे जे प्रेम प्रकट होइछ, ओ प्रेम सेहो हमर अन्तःकरणक एक महत्वपूर्ण अंग थिक । मुख्यतः ई प्रेम व्यापक सामाजिक धरातलपर दूगोट वर्ग-उच्च वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य) तथा निम्न वर्ण (शूद्र)क बीच सर्वदासँ, समाजक बीच प्रकट होइत आएल अछि । मुदा आइ नवीन राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थिति एवं विश्वव्यापी मानवताक आन्दोलनसभक परिणामस्वरूप सेव्य-सेवक सम्बन्ध-भावना निरन्तर शिथिल भेल जा रहल अछि । वर्ण-व्यवस्थाक प्रारंभिक युगमे भारतमे एहि प्रेमसम्बन्धमे ई धारणा निहित छल जे सेवक प्राणपणसँ सेव्यक सेवा करथि तथा सेव्य अपन सेवककेँ सभ प्रकारसँ संतुष्ट राखथि । ई समाज व्यवस्था समाजक सुचारुताक लेल निर्मित भेल छल । मुदा कालान्तरमे सेव्य वर्गमे सेवक वर्गक प्रति संग्रह, भोग आ शोषण वृत्तिक परिणामस्वरूप घृणा वा उपेक्षाक भाव भरि गेल । परिणामतः सेवक-वर्गक क्षोभ संगठित भऽ कय राजनीतिक रूप ग्रहण कयलक आ समानता तथा मानवीय व्यवहारक मांग प्रस्तुत कयल गेल । जखन सेव्य वर्ग अपन आदर्शसँ च्युत भए जाइछ तँ सेवक वर्ग अपन अधिकारक प्रति सजग भए उठैछ आ यैह प्रक्रिया आइ सर्वत्र परिव्याप्त भऽ गेल अछि । मुदा आइयो सम्भ्रान्त परिवारसभमे स्वामी-सेवकक बीचक प्रेम देखल जाइछ । ओना सेव्य-सेवक-प्रेम अछि तँ उच्च कोटिक, मुदा ई मानवक असमानताक द्योतक थिक । रामभक्त हनुमान तथा भक्त कवि तुलसीदास एहि प्रेमक आदर्श पात्र छथि । मुदा सिद्धान्ततः एहि प्रेमक पोषण नहि कयल जा सकैछ ।

सूक्ष्मक प्रति प्रेम

कोनो प्रकारक प्रेम-सम्बन्धमे दू केर सत्ता आवश्यक होइछ-प्रेमी एवं प्रियाक । प्रेम तँ चेतन मानवेसँ भऽ सकैछ, मुदा प्रिय चेतन शरीरधारी नहि भऽ कय सूक्ष्म, अशरीरी आ जड़ सेहो भए सकैछ । अर्थात् प्रेमी कोनो सूक्ष्मभाव, पशु वा जड़ पदार्थसँ प्रेम कइयो कय ओएह परिणाम प्राप्त करैछ, जे अन्य प्रकारक प्रेम-सम्बन्धसँ प्राप्त होइछ। मुदा एहि स्थितिमे प्रेम शारीरिक नहि भऽ कए पूर्णतः मानसिक रहि जाइछ । स्थूलकेँ छोड़ि सूक्ष्मक प्रति प्रेम-सम्बन्ध स्थापित करब प्रेमक सूक्ष्मता दिस संचरण करब थिक । एहि प्रकारक प्रेममे मोन प्रेमक आदान-प्रदानक स्थूल भावनासँ युक्त भऽ कय शुद्ध एवं निर्मल भऽ जाइछ । सूक्ष्मक प्रति प्रेमहिसँ मानवक उदात्त भावना परितृप्त भऽ पबैछ। यैह कारण थीक जे सूक्ष्मक प्रति प्रेमक सर्वोत्कृष्ट आदर्श ईश्वर-प्रेमकेँ मानल जाइछ । एहि सूक्ष्म प्रेमक अन्तर्गत विद्या-प्रेम, कला-प्रेम (संगीत, चित्र, कला आदि), आदर्श प्रेम, भावना-प्रेम, बुद्धि, गुण, सदाचार आदिक प्रति प्रेमक सूक्ष्म भावनासभकेँ सम्मिलित कयल जा सकैछ । एहि सूक्ष्म प्रेममे हम, मानवीय बन्धनमे रहियोकऽ हृदयक मुक्तिक लेल प्रयत्नशील रहि सकैत छी । प्रेमक सभसँ पैघ लक्षण थिक तृप्ति, मोनक मुक्ति वा संतोष। मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ ई स्थूलक अपेक्षा सूक्ष्महिमे विशेष सरलतासँ प्राप्त कयल जा सकैछ । निर्गुण भक्ति आ सगुण भक्तिकेँ सेहो एही सूक्ष्म प्रेमक अन्तर्गत राखल जा सकैछ । निर्गुणमे जतय प्रतीक वा प्रतिमा आदिक मध्यस्थताक अपेक्षा नहि होइछ ओतय तँ सूक्ष्मक प्रति प्रेम स्पष्टे अछि, मुदा सगुण भक्तिमे सेहो प्रकारान्तरसँ सूक्ष्मेक प्रति प्रेम प्रकट कयल जाइछ । कवि, कलाकार, दार्शनिक आदिक साधनामे एही सूक्ष्मक प्रति प्रेमक अनेकरूपताक दर्शन होइछ ।

स्थूलक प्रति प्रेम

स्थूलक प्रति प्रेम अथवा पदार्थ-प्रेमक अन्तर्गत दृश्यमान जगतक सभ पदार्थ, प्रकृतिजगत आ मानव जगत्क सभ पदार्थ एवं मानवकृत (MANUFACTURED) पदार्थक प्रति प्रेमकेँ ग्रहण कयल जा सकैछ । हम संसारमे एकहि संग, एकहि समयमे सभ पदार्थसँ समान भावेँ प्रेम नहि कय सकैत छी, कारण हमर हृदयक रसात्मकताक सेहो एक सीमा आ शक्ति रहैछ । साधारणतः संकुचित मनोवृत्तिक व्यक्ति अधिकाधिक अपनहि परिवारक व्यक्ति वा वस्तुसँ प्रेम रखैछ, आनक वस्तुसँ ओकरा तेहन सम्बन्ध नहि

रहैछ । मुदा 'स्व' आ 'पर'क सीमाकेँ टुटला संता हमर प्रेम-भाव समस्त पदार्थ-जगत धरि परिव्याप्त भए जाइछ । पदार्थ सभक प्रति ई प्रेम दू प्रकारक प्रेरणासँ जागृत भऽ सकैछ – (क) व्यक्तिगत मादनभावक प्रेमक अनुकूलता, सफलता आ ओकर तीव्र संवेदनासँ, (ख) प्रेम-पथक निराशा आ असहायतासँ। प्रेमक अनुकूलताक उल्लासमे सृष्टिक सभ पदार्थक प्रति एकटा विशेष प्रेम-दृष्टि विकसित भऽ जाइछ। प्रेमक उमंगसँ, सम्बन्ध-भावनाक कारणेँ, अपन प्रियसँ सम्बन्धित वस्तुए नहि, अपितु सृष्टिक अन्य पदार्थ सेहो एक अभिनव शोभासँ मंडित प्रतीत होइछ । दृश्यजगतमे सौन्दर्यानुभव करबाक यैह मूल रहस्य थिक। एहिना, प्रेम-पथमे अनुभूत आशा-निराशा वा असफलतामे ओएह सभ पदार्थ विरक्तिजनक, सौन्दर्यहीन आ निष्प्राण प्रतीत होबऽ लगैछ जे संयोगसुखमे अलौकिक दीप्तिसँ मंडित प्रतीत होइत छल । एहन मानसिक स्थितिमे सुन्दरसँ सुन्दर भोग्य पदार्थसभमे सेहो द्रष्टाकेँ कोनो सौन्दर्य नहि देखाइ दैछ, ओहिसभसँ कोनो प्रकारक रागात्मक सम्बन्ध नहि बुझना जाइछ। सभ पदार्थ जड़, निष्प्राण, निरानन्द सन प्रतीत होबय लगैछ। ई एकटा मनोवैज्ञानिक सत्य थिक । मुदा हमरा सुखायल, ठुठ्ठ, बबूरक गाछ, टूटल कुर्सी, फाटल-वस्त्र, पुरान पत्र, टूटल कलम आदि पदार्थसँ सेहो प्रेम स्थापित भऽ जाइछ, यदि एहि पदार्थसभसँ हमर जीवनक कोनो गँहीर एवं पुरान सम्बन्ध रहल हो । वस्तुतः ई पदार्थ सभ अपनामे प्रिय नहि होइछ । मुदा सम्बन्ध-भावना एवं प्राचीन स्मृतिक मधुरिमासँ संसिक्त भए ई सभ सुन्दर प्रतीत होबय लगैछ । भाव ई जे जगतक स्थूल पदार्थक प्रति सेहो हमरा हृदयमे प्रेम रहैछ जे हमर अन्य विशिष्ट प्रेम-सम्बन्धसभ पर आधारित रहैत अछि ।

एहि रूपसभक अतिरिक्त प्रेमक एकटा आर रूप होइछ जकरा हम अत्यन्त असाधारण मनःस्थितिक कारण स्वतंत्र महत्व नहि प्रदान करैत छी। ई प्रेम थिक स्व-प्रेम (SELF - LOVE)। जटिल मानसिक अवस्थामे मनुष्य प्रेमक सभ उद्गमकेँ सुखा गेला पर अपनहिसँ प्रेम करय लगैछ । अपनाकेँ पोल्हायब, पुचकारब, माथपर हाथ फेरब आदि क्रियासभक स्वाभाविकताकेँ मनोविज्ञानक सेहो समर्थन प्राप्त अछि । एहि प्रेमक अति सूक्ष्म आ प्रत्यक्ष रूप आबाल, वृद्ध, नर-नारीकेँ अयनामे अपन मुँह देखबाक क्रियामे प्राप्त होइछ । एवं प्रकारेँ यैह प्रेमक विविध रूप थिक। परंच देश-कालक बन्धनमे जड़ित नश्वर मानव एहि प्रेमकेँ एकटा निश्चित सीमे धरि विकसित

कऽ पबैछ । सामाजिक रूढ़ि, शिक्षा, वातावरणक प्रतिकूलता, आर्थिक विषमता आदि कारणसँ ओकर ई अनुभूति अपरिपक्वे रहि जाइछ ।

निष्कर्ष

(1) 'प्रेम' शब्दक व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ होइछ - प्रिय होयब वा जे प्रीति दैत हो किंवा अनन्त तृप्ति प्रदान करैत हो । विभिन्न कोषकार, पाश्चात्य एवं पौर्वात्यलोकनिक अनुसारेँ प्रेम शब्द अनेक सूक्ष्म भावनाक वाहक थीक । तेँ प्रेमकेँ 'अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् । मूकास्वादवत् ।' कहल गेल अछि ।

(2) प्रेमक विवेचन आत्माक दृष्टिसँ तथा देह आ चित्तक दृष्टिसँ कयल जा सकैछ । आत्माक दृष्टिसँ प्रेम शाश्वत आत्माक शाश्वत धर्म थीक तथा देह आ चित्तक दृष्टिसँ प्रेम मात्र चित्त वा प्रतिक्रियेक धर्म थीक आ जे परिवर्तित भऽ अस्थिर एवं रूपात्मक भऽ जाइछ ।

(3) प्रेमक पूर्ण विकासक हेतु आत्मा आ देह दुनूक सामंजस्य आवश्यक अछि । आत्मा, चित्त आ देहक भूमिका परस्पर सम्पृक्त रहलो सन्ता अपन पृथक्-पृथक् अस्तित्व रखैछ । मूलतः आत्माकेँ प्रेमक मूलस्रोत, चित्तकेँ संचरणभूमि तथा देहकेँ प्रेम-प्रकाशनक प्रकृत माध्यम मानल जा सकैछ ।

(4) वय-सम्बन्धक आधार पर प्रेमकेँ तीन श्रेणीमे विभाजित कयल जा सकैछ - (अ) छोटक पैघक प्रति अर्थात् श्रद्धा (देवता, ऋषि-मुनि, गुरू, नेता एवं अन्य श्रेष्ठ व्यक्तिक प्रति (आ) दू समवयस्कक प्रति अर्थात् सख्य वा मैत्री (मित्र वा प्रेमी-प्रेमिकाक पारस्परिक प्रेम जाहिमे प्रणय सेहो सम्मिलित अछि) तथा (इ) श्रेष्ठक छोटक प्रीति, अर्थात् वात्सल्य (अपना वा आनक पुत्र, कोनो बालक वा अन्य स्नेह-पात्रक प्रति प्रीति) । एहिमे द्वितीय कोटिक प्रेम सबसँ अधिक गंभीर, व्यापक एवं शक्तिशाली होइछ ।

(5) प्रेम कोनो प्रकारक हो, भक्ति, दाम्पत्य वा वात्सल्य, ओकर मुख्य लक्ष्य थीक आत्माकेँ तृप्त करब एवं ई तृप्ति तखनहि संभव होइछ जखन प्रेम उच्च गुणसँ संयुक्त रहैछ । आत्माक यैह रसमय अनुभव जीवनक पूर्णताक अनुभव थीक जे मनुष्यक लेल आत्यंतिक अछि । एकर अभावमे मानवजीवन निष्प्रयोज्य एवं निष्फल भऽ जाइछ ।

(6) प्रेममे दू व्यक्तिक कल्पना अनिवार्य होइछ-यथा, भक्त आ भगवान, प्रेमी आ प्रेमिका, मित्र आ मित्र आदि । अपन प्रियक प्रति सदा मंगलकामना राखब उच्च कोटिक प्रेमक प्रधान गुण थिक । से तुलसीक

आदर्श प्रेम हो किंवा प्लेटोक भौतिक प्रेम-दुनूमे एहि गुणक निदर्शन भेल अछि । एकमे पपीहा आ बादलक व्याजसँ, दोसरमे प्रेम-देवताक माध्यमसँ ।

(7) मानव जीवनमे भक्ति, प्रणय, वात्सल्य, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम वा मानव-प्रेम, कुटुम्ब-प्रेम, मैत्री, श्रद्धा, सेव्य-सेवक प्रेम, सूक्ष्मक प्रति प्रेम, स्थूलक प्रति प्रेम, आत्म-प्रेम आदि अनेक कोटिक प्रेम पाओल जाइछ, तथापि ओहि सभमे प्रेमक आत्मा समान रूपेँ व्याप्त रहैछ ।

(8) श्रद्धा आ प्रेमक योगसँ जे धर्मक रसात्मक अनुभूति होइछ, ओकरा भक्ति कहल जाइछ । भक्ति दू प्रकारक होइछ - निर्गुण एवं सगुण । निर्गुणे सगुण रूपमेँ प्रकट होइछ, अतः आदि वा मूल सत्ता भारतीय चिंतनक अनुसार निर्गुणेकेँ मानल जाइछ ।

(9) वयःप्राप्त एवं संभोगसुखामिलाषी स्त्री-पुरुषक रूप, गुण जन्य पारस्परिक आकर्षणसँ अनायास उत्पन्न मादन-भावक नैसर्गिक प्रेमकेँ प्रणय कहल जाइछ । मनोविज्ञानवेत्तालोकनिक अनुसारेँ लौकिक अथवा अलौकिक, सभप्रकारक प्रेम-सम्बन्धक मूलमे हमर काम-भावना (LIBIDO) सूक्ष्म-स्थूल रूपसँ विद्यमान रहैछ ।

(10) साहित्यमे उपर्युक्त कथित प्रेमक सभ स्वरूपक चित्रण भेल अछि, मुदा ओहि सभमे सर्वाधिक महत्व प्रणय वा दाम्पत्येकेँ देल जाइछ, कारण ई काव्यक मूलभूत प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थिक ।

(11) पाश्चात्य एवं भारतीय तत्वचिंतक एवं मनोविज्ञानवेत्ता-दुनूक दृष्टियेँ काम आ प्रेमक घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । प्रेमक मूल थीक काम : जे ब्रह्माक अनादि इच्छा 'एकोहं बहुस्यामि'क निर्वाहक हेतु मानव-प्राणीमे सृष्टि-संवर्धन-व्यापारक आदिम प्रेरणाकेर रूपमे परम्परासँ आबि रहल अछि तथा ई हमर भावना एवं जीवन-व्यवहारक सूक्ष्म स्नायुजालक पोषक जीवन-रस थीक।

सौन्दर्य

1. व्युत्पत्ति, शब्दार्थ आ परिभाषा :

व्युत्पत्ति : 'सौन्दर्य' शब्दक सिद्धि संस्कृतक 'सुन्दर' (विशेषण) शब्दसँ भाव अर्थमे 'ष्यञ्' प्रत्यय जोड़ि कऽ होइछ । स्वयं 'सुन्दर' शब्दक व्युत्पत्ति संदेहास्पद अछि । वाचस्पत्य कोषमे 'सुन्दर' शब्दकेँ 'सु' उपसर्गपूर्वक 'उन्द' धातुसँ 'अरन्' प्रत्यय जोड़ि कऽ सिद्ध कयल गेल अछि, अतः धात्वर्थक अनुसारेँ 'सुन्दर' शब्दक अर्थ भेल - 'सु' अर्थात् सुष्ठ अथवा नीक जकाँ आ 'उन्द' अर्थात् आर्द्र करब, आ 'अरन्, कर्तृवाचक प्रत्यय ।

एहि प्रकारेँ एहि शब्दक व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ भेल – नीक जकाँ गील (आर्द्र) वा सरस कयनिहार ।[127]

एहि शब्दक निष्पत्ति भ्वादि गणक 'उनदि समृद्धो' धातुसँ सेहो भऽ सकैछः 'सु' (उपसर्ग) अर्थात् नीक जकाँ आ 'नन्दयति', अर्थात् जे प्रसन्न करैत अछि अर्थात् जे नीक जकाँ प्रसन्न करय, ओ 'सुन्दर' कहबैत अछि ।

एहि प्रकारेँ 'सुन्दर' शब्द 'उन्द्' तथा 'नन्द' एहि दू धातुसँ सिद्ध भऽ सकैछ । 'सु' (उपसर्ग) 'नर' (व्यक्तिवाचक संज्ञा) सुष्ठु नरः अर्थात् सुनरः । एहि दू शब्दक बीचमे भाषाविज्ञानक मुखसुख केर नियमानुसार 'द' वर्णक आगम भऽ कऽ 'वानर'=बन्दरक भ्रामक सादृश्य पर, 'सुनर' सँ 'सुन्दर' बनि गेल अछि । मध्यागमसँ अर्थ विस्तार सेहो भऽ गेल अछि । 'सुनर' सँ मानवीय सौन्दर्यहि प्रायः प्रकट करबाक व्यापकता व्यक्त होइछ । परंच 'सुन्दर' शब्दसँ मानव आ मानवेतर जगतक सौन्दर्यकेँ प्रकट करबाक व्यापकता व्यक्त होइछ । संस्कृतमे प्रायः मूर्त्त वस्तुयेक हेतु सुन्दर शब्दक प्रयोग होएब कहल गेल अछि । यूरोपीय देशसभमे, विशेषतः रूसमेँ, सेहो सुन्दरसँ बाह्य सौन्दर्यहिक अर्थ ग्रहण कयल जाइछ । बुद्धि वा भावनाक सूक्ष्म मानसिक सौन्दर्यक द्योतन करबाक लेल 'सौन्दर्य' शब्दक प्रयोग संस्कृत साहित्यमे प्रायः अल्पे भेल अछि । आधुनिक भारतीय भाषा सभमे एहि शब्दक संग व्यापक एवं गंभीर अर्थ संयुक्त भऽ गेल अछि । सौन्दर्य अर्थमे वस्तुतः नाना भाव-तरंग समाविष्ट अछि, यथा-उदात्त, सौम्य, मनोहर, रमणीय, मनोज्ञ, मनोरम, मधुर, पेशल (VARIEGATED), चारु, मंजुल, शोभन, रुचिर, साधु, कान्त, लावण्यवान, द्युतिवान, छविवान, सुषमावान, अभिराम, मंगलकारी, भल, शुभ आदि । एहिमे सँ प्रत्येक शब्द सौन्दर्यक सामान्य भावनाक अतिरिक्त, एक दोसरासँ पृथक् एवं स्वतंत्र रंग आ छवि (COLOUR AND SHADE) रखैत अछि ।[128] संस्कृतमे मूर्तक हेतु 'सुन्दर' शब्दक अपेक्षा 'शोभन' शब्दहिक प्रयोग अधिक होइछ ।

'सौन्दर्य' शब्दक एक व्युत्पत्ति आर थिक – 'सुन्दराति इति सुन्दरम्, तस्य भावः सौन्दर्यम् ।' 'सुन्द'केँ जे आनैत हो ओ सुन्दर, तथा ओकर भाव जतय हो, ओ 'सौन्दर्य' कहबैत अछि । 'सुन्द'पूर्वक 'रा' (धातु) अर्थात् 'आदाने' (आनब) धातुसँ औणादिक 'अच्' प्रत्ययसँ 'सुन्दर'शब्द तथा गुणवचन "ब्राह्मणादिभ्यः ष्यञ्" एहि पाणिनि सूत्रसँ 'ष्यञ्' प्रत्ययोपरान्त 'सौन्दर्य' शब्द व्युत्पन्न भेल ।

'सुन्द'क अर्थ थिक कर्तनी, अर्थात् जे कैंची जकाँ कटनिहार हो, तकरा जे आनैत हो, ओ 'सुन्दर' भेल । 'सौन्दर्य' हृदय पर, नेत्र द्वारा, कैंचीक काटजकाँ पक्का प्रभाव छोड़ैत अछि, ई सर्वविदित थिक ।

एही प्रकारेँ एक आर व्युत्पत्ति विचारणीय अछि । बोलीमे 'अचानक' शब्दक रूपान्तर 'अचानचक' अछि, मुदा प्रयोगबाहुल्यक कारणेँ 'अचानचक'केर अ लुप्त भेलासँ 'अचानक' केर रूप 'चानचक' भऽ गेल अछि । एही तथ्यानुसारेँ संस्कृत शब्द 'असून' अर्थात् प्राणकेँ तथा 'ददाति' = दैत अछि, अर्थात् जे प्राणकेँ दीअय, से 'सुन्दर' भेल । एहि व्युत्पत्तिक अनुसारेँ 'असु' शब्दक आधारक लोप (अचानक जकाँ) भऽ गेल तथा मुखसुखार्थ ऊकारक स्थानमे ह्रस्व उ-कार भऽ गेल – यथा, संस्कृत 'पुत्र' शब्दक अर्थ जे प्राणकेँ दीअय अर्थात् जे जीवन वा आनन्द दीअय-से भेल ।

शब्दार्थ : 'सुन्दर' शब्दक प्रयोग ऋग्वेदमे अनेक स्थानमे प्राप्त होइछ ।[129] यथा-सूनरः (विशेषण), सूनरम् (कर्मकारक), सूनरि (स्त्रीलिंग सम्बोधन), सूनरी (स्त्रीलिंग प्रथमा विभक्ति) आदि ।

'सौन्दर्य, शब्द एक बड़ व्यापक अर्थ वहन कयनिहार शब्द थिक । सुप्रसिद्ध अंग्रेजी कोषकार सर मौनियर विलियम्ज[130] तथा वेबस्टर दुनू विद्वान एहि शब्दसँ बाह्य एवं आभ्यंतर दुनू प्रकारक सौन्दर्यकेँ समाविष्ट कयनिहार अर्थ ग्रहण कयलन्हि अछि । भारतीय कोषकारसभमे आप्टे[131], अमरकोषकार[132] तथा वाचस्पत्य-कोषकार[133] आदि सेहो एहि शब्दक ओही व्यापक अर्थकेँ ग्रहण कयलन्हि अछि । साहित्यमे सेहो आचार्यलोकनि द्वारा 'सौन्दर्य' शब्द बड़ व्यापक अर्थमे व्यवहृत भेल अछि ।[134] वस्तुतः सौन्दर्य एतेक ने सूक्ष्मभावगर्भित शब्द थिक जे ई अपन शुद्धरूपमे रसानुभूतिसँ घनिष्ठतम रूपेँ सम्बद्ध रहैछ ।

परिभाषा आ अन्य विचार-सूत्र

सौन्दर्यक स्वरूपकेँ बुझबाक लेल संसारक किछु प्रमुख सौन्दर्य-चिंतक लोकनिक तत्सम्बन्धी परिभाषा आ विचारक ज्ञान उपयोगी सिद्ध होयत । सौन्दर्य सम्बन्धी किछु महत्वपूर्ण विचार एहि प्रकारक अछि :-

सौन्दर्य बाहरक कोनो वस्तु नहि थिक, मोनक भीतरक वस्तु थिक ।[135] – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

किछु एहन दृग्विषय अछि जकरा देखि कऽ हृदयमे रसक संचार होइत अछि । हमरालोकनि एहिसभमे जे मनोहारिता प्राप्त करैत छी, ओकरा सौन्दर्य कहल जाइछ ।[136] – सम्पूर्णानन्द

"उज्ज्वल वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं"[137]

– जयशंकर प्रसाद

"अकेली सुन्दरता कल्याणि, सकल ऐश्वर्यों की सन्धान ।"[138]

– सुमित्रानन्दन पंत

"अंग प्रत्यंगकानां यः संनिवेशो यथोचितम् ।
सुश्लिष्ट सन्धिबन्धः स्यात्तत्सौंदर्यभितीर्यते ॥"[139]
"भवेत्सौन्दर्यमंगानां सन्निवेशो यथोचितम् ।"[140]
"प्रियेषु सौभाग्य फला हि चारुता ।"[141] – कालिदास
"अहो सर्वास्ववस्थासु रमणीयत्व मा कृति विशेषाणाम् ।"[142]

– कालिदास

"किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ।" – कालिदास
"क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः ।"[143]

– महाकवि माघ

"रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम् । रमणीयता च लोको-त्तराह्लादजनक ज्ञानगोचरता । लोकोत्तरत्वं चाह्लादगतश्चमत्कारत्वा परपर्यायोऽनुभव साक्षिको जाति विशेषः ।"[144]

"रवीन्द्रनाथ अपन सौन्दर्य-विवेचनामे सत्य एवं सौन्दर्यक एकताकेँ प्रतिपादित कयलन्हि अछि ।[145] डा० आत्रेय सौन्दर्यक अवस्थाकेँ योगक सविकल्प समाधिक दशा कहलन्हि अछि ।[146]

पश्चिममे सौन्दर्यशस्त्रीलोकनि सौन्दर्य पर अपन बहुमूल्य विचार व्यक्त कयने छथि । प्रसिद्ध आदर्शवादी दार्शनिक प्लेटो सौन्दर्यकेँ शिवत्वक प्रकाशनमे सार्थक मानैत छथि ।[147] विक्टर कूजियो सौन्दर्यक बड़ उच्च धारणा व्यक्त कयलन्हि अछि ।[148] ओ चरम सौन्दर्यकेँ ईश्वरहिमे मानैत छथि । लॉक आनन्दायक बाह्य रंग एवं आकारमे सौन्दर्यकेँ मानैत छथि ।[149] नार्टन शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक ऐक्यहिमे सौन्दर्यकेँ देखैत छथि ।[150] हिगेल पदार्थमे आत्माक प्रकाशनकेँ सौन्दर्य कहैत छथि ।[151] हिगेल मानवक माध्यमसँ पूर्ण वा दिव्य सत्ताक अभिव्यक्तिकेँ सौन्दर्य मानैत छथि ।[152] कांट निष्काम आ निरपेक्ष आनन्द देनिहार पदार्थहिकेँ सौन्दर्य-सम्पन्न बतबैत छथि ।[153] शेलिंग ससीममे असीमक प्रकाशनहिकेँ सौन्दर्य बतबैत छथि ।[154] ह्यूम सौन्दर्यकेँ पूर्ण व्यक्तिपरक बताकऽ ओकरा मोनहिमे स्थिर करैत छथि ।[155] अभिव्यंजनावादी, क्रोचे सौन्दर्यकेँ एक अत्यन्त कल्पनामूलक,

निरपेक्ष एवं आत्मपरक काल्पनिक सत्ता मानैत छथि ।[156] सुप्रसिद्ध कवि कीट्स सौन्दर्यकेँ उच्च कोटिक आनन्द एवं सत्यक संग सम्बद्ध करैत छथि ।[157] विल ड्यूरैंट सौन्दर्यक सम्बन्ध शाश्वत चेतनाक स्रोतसँ बतबैत छथि ।[158] समाजवादी विचारधाराक काडवेल तथा प्लेंखोनोव आदि लेखक सौन्दर्यकेँ सामाजिक उपयोगितेक प्रसंगमे देखैत छथि ।[159] एहि प्रकारेँ पाश्चात्य विचारकलोकनिक सौन्दर्य-सम्बन्धी धारणा सेहो विशेष व्यापक एवं गंभीर अछि ।

उपर्युक्त परिभाषासभसँ सौन्दर्यक सम्बन्धमे तीन प्रकारक दृष्टिकोण प्राप्त होइछ । क्यो (कांट, क्रोचे, ह्यूम तथा भारतीय विचारक) तँ ओकरा पूर्णतः आन्तरिक मानैत छथि आ क्यो (काड्वेल तथा प्लेंखोनोव) पूर्णतः बाह्य । अनेक दार्शनिक मध्यममार्गी छथि । वस्तुतः सौन्दर्यक यथार्थ स्वरूपकेँ बुझबाक लेल एहि तीनू दृष्टिकोणक विस्तृत व्याख्या अपेक्षित अछि । ओहि व्याख्याक आधारपर हम सौन्दर्य-सम्बन्धी समन्वयात्मक दृष्टिकोणकेँ स्थिर करबामे समर्थ होयब ।

2. वस्तुपरक किंवा वैज्ञानिक दृष्टिकोण

(क) पाश्चात्य धारणा

पाश्चात्य जगतमे सुकरात, प्लेटो तथा अरस्तूक युग तथा कएक शताब्दीक पश्चात् विगत तीन सय वर्षमे सौन्दर्य-तत्वक चिंतन शास्त्रीय व्यवस्थाक संग एक निश्चित प्रणाली पर करबाक प्रयास कयल गेल अछि ।[160] सौन्दर्यक सम्बन्धमे ओहिठाम अनेक उपपत्ति प्रचलित कयल गेल जे प्रायः पूर्ण व्यक्तिपरक थिक, एक-दोसरासँ बड़ कम मेल खाइत अछि । तथापि पाश्चात्य सौन्दर्य-तत्वक चिंतनकेँ, विचार-साम्यक किछु स्थूल रेखाक आधार पर, तीन स्पष्ट वर्गमे विभाजित कयल जा सकैछ- (1) वस्तुवादी किंवा यथार्थवादी वैज्ञानिक, (2) आत्मवादी किंवा आदर्शवादी दार्शनिक, तथा (3) मध्यमार्गकेँ ग्रहण कयनिहार समन्वयवादी ।

वस्तुवादी किंवा यथार्थवादी वैज्ञानिकसभमे सुकरात, अरस्तू, पीयर बफियर, रेनालड्स, होगार्थ, बर्क, एलिसन, रिचर्ड प्राइस, जेफ्रे, प्रो. बैन, लैसिंग, डा. सली, हर्बर्ट स्पैंसर, स्टूअर्ट, गेरार्ड, डार्विन, हैमिल्टन, केमे, शेन्स्टन, ट्यूकर आदि मुख्य छथि । निम्न चिंतक लोकनि सौन्दर्य विवेचन भौतिकवादी किंवा वस्तुवादी दृष्टिकोणहिसँ कयने छथि ।[161] व्यक्ति वा वस्तुक ओ सबटा गुण वा धर्म, जे हमर पंचेन्द्रिय-आँखि, कान, नाक, जीभ,

आ त्वचाकेँ सुखद आ आनन्दमय प्रतीत होइछ, एहि दार्शनिकसभक सौन्दर्य सम्बन्धी निर्णयकेर स्थायी एवं मूलभूत आधार अछि । अतः ई सभ सौन्दर्यकेँ वस्तु, दृश्य वा कोनहु स्थितिक रूप, आकार, व्यवस्थित क्रम, नियमितता, एकान्विति, स्पष्टता, मसृणता, स्निग्धता, वर्ण-दीप्ति, वैचित्र्य, जटिलता, शुद्धता, उदात्तता, उपयोगिता, सम्मात्रा, प्रतीकमयता, सुकुमारता-कोमलता, सूक्ष्मता-अग्राह्यता, सजीवता, वास्तविकता, व्यंजकता, विरोध, अवयव-अवयवी-सम्बन्ध, माधुर्य, नवता, निश्चित विधान, सामंजस्य, संतुलन, संश्लिष्टता, औचित्य, समन्वय एवं अनुपात आदि आत्मनिरपेक्ष बाह्य गुण-धर्महिमे मानलन्हि अछि । पिथोगोरस आ सुकरात तथा डार्विनकेर पूर्ववर्ती वैज्ञानिकलोकनि संगीत सदृश सूक्ष्मकलाक सौन्दर्यहुकेँ गणितशास्त्रोपयोगी अंकसभ जकाँ नियमितता तथा व्यवस्थामे देखलन्हि ।[162] एही रूपेँ अरस्तू सौन्दर्यकेँ सम्मात्रा वा सुषमा, क्रम व्यवस्था, निश्चित विधान, अनुपात तथा अंगी आ अंगसभक सहज तथा सुष्ठु सामंजस्य अथवा मेलमे देखलन्हि ।[163] विंकलमन तथा लैंसिंग ओकरहि बाह्य विधान तथा रूपमे देखलन्हि ।[164] होगार्थकेँ ओएह सौन्दर्य सम्मात्रा, स्पष्टता, दुरूहता एवं आयतन आ वैचित्र्यमे प्राप्त भेलन्हि ।[165] डिडेरो आ बर्क एहि सौन्दर्यक दर्शन वस्तुक लघुता, स्निग्धता, कोमलता, मसृणता, पवित्रता आ वर्णक दीप्तिमे कयलन्हि ।[166] प्राइस आ क्रूसाजकेँ एहि सौन्दर्यक साक्षत्कार वैचित्र्य, व्यवस्था, अनुपात, सम्मात्रा आदि गुणमे भेलन्हि ।[167] गाल्सवर्दी ओहिकेँ सामंजस्य, लय एवं सजीवतामे देखने छथि ।[168] रस्किन ओकरा अनन्तता, एकता, स्थिरता, सम्मात्रा, शुद्धि एवं संयतिमे देखने छथि, मुदा ओ सौन्दर्यक ईश्वरक संग सेहो सम्बन्ध स्थापित कयने छथि ।[169] लैसिंग सौंदर्यकेँ सामंजस्य, सुडौलपन, क्रम व्यवस्था, विभिन्नता आ अनुपातमे देखने छथि । काडवेल सौन्दर्यक समाजपरक व्याख्या करैत ओकरा मनुष्येमे मानैत छथि । वस्तुतः ओ एक समन्वयवादी सौन्दर्य-चिंतक छथि ।[170] रूसी मार्क्सवादी सौन्दर्य-चिंतक एन.जी. चर्निशेवस्कीक अनुसारेँ जीवन सौन्दर्य थिक, ओ सभ किछु सुन्दर अछि जे जीवनसँ सम्बन्ध रखैत अछि, जे जीवनक स्मृति दियबैत अछि आ जे जीवनकेँ अभिव्यक्ति प्रदान करैत अछि ।[171]

(ख) भारतीय धारणा

भारतीय आचार्यलोकनिमे औचित्यविचार चर्चाकार क्षेमेन्द्र, सेहो उचित स्थान विन्यासमे सौन्दर्यकेँ मानैत छथि ।[172] रूपगोस्वामी सेहो यथोचित

सन्निवेशकेँ सौन्दर्यक आधार बतबैत छथि ।[173] मुदा हिनक दृष्टिकोण अपन मूल-भाव आत्मासँ असम्पृक्त नहि छन्हि । भरतक रस-सूत्रक व्याख्याता भट्टलोल्लट तथा शंकुक सौन्दर्यक विषयमे अधिक मनन कयने छथि । अलंकारवादी, गुणवादी, रीतिवादी तथा वक्रोक्तिवादी आचार्य सौन्दर्यकेँ विशेषतः बाह्यविषयक मानैत छथि । मात्र रस-सम्प्रदायवला (भरत, अभिनव गुप्त, विश्वनाथ महापात्र, पंडितराज जगन्नाथ आदि) सभ ओकरा आत्म-प्रधान मानैत जानि पड़ैत छथि। मुदा, हुनकालोकनिकेँ समन्वयवादी मध्यमार्गीये कहल जा सकैछ, कारण आत्मा एवं बाह्यरूप-दुनूक उचित महत्वकेँ ओ सभ स्वीकार कयने छथि । महाराष्ट्रक आधुनिक आचार्य श्रीमढ़कर इन्द्रिय-संवेदनकेँ पर्याप्त महत्व प्रदान करयवला वस्तुवादी विचारक मानल जा सकैत छथि ।

अन्य अनेक छोट-पैघ भौतिकवादी वैज्ञानिक उपर्युक्त गुणसभमे सँ एक किंवा एकसँ बेसी गुणसभमे सौन्दर्य-सत्ताक अनुभव कयने छथि । ई सभ वस्तुवादी दार्शनिक वस्तु वा व्यक्तिकेँ विशेष महत्व देबयवला छथि, द्रष्टा किंवा ओकर आत्मसत्ताकेँ नहि ।

आत्मपरक दृष्टिकोण

(क) पाश्चात्य धारणा

दोसर वर्ग ओहि आदर्शवादी दार्शनिकलोकनिक अछि जनिक सूक्ष्म चिंतन सौन्दर्यकेँ आध्यात्मक गहन नीलिमामे उठाकऽ लय गेल अछि । एहि वर्गक चिंतकमे प्लेटो, प्लोटिनस, सैंट आगस्टाइन, बामगार्टन, पीयर एण्ड्री, लिवेक, लार्ड शैफ्टसबरी, रीड, शिलर, आडगेन, लोज, हरबर्ट, विशर, मेन्डेल्सोन, काण्ट, हिगेल, शापनहावर, बर्कले, शेलिंग, हचीसन, आस्कर वाइल्ड, क्रोचे, रस्किन, शेली, कीट्स आदि प्रमुख छथि। सौन्दर्य सम्बन्धी हिनकालोकनिक सम्पूर्ण किंवा अधिकांश व्याख्या आत्मपरक छन्हि आ ई सभ वस्तुकेँ स्वल्प वा गौण महत्व देने छथि । एहिमेसँ किछु विचारककेँ समन्वयवादी सेहो कहल जा सकैछ : यथा, रास्किन आ वस्तुपरक सौन्दर्यशास्त्रीलोकनिकमे- स्पैंसर, गाल्सवर्दी आदि । यैह कारण जे हिनकालोकनिक चिंतन अत्यन्त सूक्ष्म एवं धूमिल भऽ गेल छन्हि । हिनकालोकनिक सौन्दर्य सम्बन्धी निर्णयमे व्यक्तिगत अनुभूति, उदात्त भावना एवं सूक्ष्म तथा मौलिक तत्वनिरूपिणी बुद्धि पूर्णतः सहायक सिद्ध भेलनि अछि । संक्षेपमे पाश्चात्य आदर्शवादी सौन्दर्य-सम्बन्धी समस्त विचारधाराकेँ सार-रूपमे निम्न प्रकारे प्रेषित कयल जा सकैछ –

1. समस्त दृश्यजगत् अथवा सृष्टिक मूलमे कोनो-ने-कोनो एक चिर निगूढ़ आध्यात्मिक सत्ता विद्यमान अछि जे प्रति क्षण सक्रिय रूपमे कार्य कऽ रहल अछि । शेलिंग ओकरा निरपेक्ष ज्ञान वा प्रज्ञा (ABSOLUTE) कहैत छथि । ओकरे हिगेल जड़-चेतनामे नित्य प्रकाशित भेनिहार प्रज्ञा वा अद्धव (THOUGHT) कहैत छथि । शापेनहावर ओकरहि इच्छाशक्ति वा संकल्प (WILL) कहैत छथि । प्लाटिनसक लेल ओएह मूल सत्ता बुद्धि किंवा विषयात्मक प्रज्ञा (INTELLIGENCE OR OBJECTIVE REASON) थिक । प्लेटो ओकरहि विचार अथवा आदर्श जगत कहैत छथि । भाव ई जे एहि श्रेणीक मूर्धन्य चिंतक अपन सौन्दर्य विषयक आधारक हेतु एकटा लोकोत्तर एवं आध्यात्मिक सत्ताकेँ स्वीकार करैत छथि । विशरक धारणा छन्हि जे सौन्दर्यक सम्यक् मीमांसा अद्वैतभूमि पर पहुँचियेकऽ भए सकैछ। लोज सेहो एक ईश्वरक कल्पना आवश्यक बुझैत छथि ।

2. सौन्दर्य सम्बन्धी निर्णय व्यक्तिगते होइत अछि । ई कांट आ हरबर्टक धारणा छन्हि । मोनक बाहर सौन्दर्यक सत्ता नहि थिक । सौन्दर्य मात्र एकटा मानसिक वृत्ति थिक । रीडक कथन छनि जे सौन्दर्य वस्तुगत नहि अछि ।

3. सैंट अगस्टाइनक धारणा छन्हि जे भगवान सत्य, शिव एवं अनन्त सौन्दर्यक निधान थिकाह, हुनकहि सौन्दर्य, सृष्टिक समस्त सौन्दर्यक स्रोत किंवा मूल कारण थिक ।

4. प्लेटो तथा जाफ्रायक कहब छन्हि जे सुखकर, प्रिय वा उपयोगी होयब एक बात थिक आ सुन्दर होयब दोसर । दुनू भिन्न-भिन्न वस्तु थिक । प्लेटोक धारणा छन्हि जे उपयोगिता सौन्दर्यमे वृद्धि कऽ सकैछ, मुदा ओ स्वयं सौन्दर्य नहि थिक । जाफ्रायक कथन छन्हि जे सुन्दर वस्तुक स्वार्थभावना-जन्य सामीप्य लाभक कामनासँ वस्तुक सौन्दर्य न्यून भऽ जाइछ ।

5. प्लेटोक सिद्धान्त छन्हि जे सृष्टिक मूल सौन्दर्य सर्वदा अखण्ड एवं एकरस रहैछ तथा सभ सुन्दर पदार्थमे ओएह मूल सौन्दर्य निहित अछि। एही प्रकारेँ कांट तथा जाफ्रायक मान्यता छन्हि जे ओएह पदार्थ सुन्दर होइछ जे हमरा उच्च कोटिक आनन्द प्रदान करय । कांट, मेडेल्सोन, जाफ्राय, हरबर्ट तथा आगस्टाइन सौन्दर्यक आनन्दकेँ निःस्वार्थ, विमल एवं निष्काम मानैत छथि । कांटक सिद्धान्त छन्हि जे सौन्दर्य सार्वदेशिक अछि तथा ओ सभक्योकेँ एक समान आनन्द प्रदान करैछ। मैंडेल्सोनक कहब छनि जे हम सौन्दर्यक आनन्दक उपभोगमे पूर्ण तृप्ति एवं शांतिक अनुभव करैत छी ।

6. लोज, रीड एवं हरबर्टक कथन छनि जे सौन्दर्य-बोध सहज ज्ञान-गम्य थिक, अभ्यास-साध्य नहि । उक्त वृत्ति आत्मिक संस्कारसभक परिणाम थिक । हरबर्ट स्पेंसर कहैत छथि जे सौन्दर्य-भावना व्यक्ति एवं जातीय जीवनमे सर्वदा संस्कार बनि विकसित होइत रहैछ ।

7. बामगार्टनक धारणा अछि जे हमर अन्तःकरणक समस्त वृत्ति-समुदाय स्वाभाविक रूपेँ अपन चरम पूर्णताक आदर्श प्राप्त करबाक निमित्त सतत विकासशील अछि । ज्ञान सत्य दिस, इच्छा मंगल दिस आ ऐन्द्रिय ज्ञान सौन्दर्य दिस बढ़ैत रहैछ । अतः सौन्दर्य हमरालोकनिक वृत्तिसभक एकटा आदर्श लक्ष्य थिक, जकर प्राप्तिमे जे किछु बाधक अछि, ओ कुरूप आ कुत्सित थिक ।

8. विक्टर कूंजाक कथन छनि जे वस्तुक सौन्दर्य, भावकेँ जागृत करबाक शक्ति रखैछ, तेँ सौन्दर्य हमरा प्रिय लगैछ ।

9. जाफ्रायक कथन छनि जे सौन्दर्य आ ईश्वर एक अछि । प्रकृतिक समस्त सौन्दर्य ओही परम प्रिय परमात्माक प्रकाश थिक । रीडक कहब छनि जे सौन्दर्य पूर्ण रूपसँ एक आध्यात्मिक वस्तु थिक। विक्टर कूंजाक धारणा छन्हि जे शारीरिक एवं प्राकृतिक दुनू प्रकारक भौतिक सौन्दर्य आध्यात्मिक वा नैतिक सौन्दर्यक प्रकाश थिक । पुनः ई आध्यात्मिक वा नैतिक सौन्दर्य सेहो मूल रूपमे स्वयं ईश्वरेक सौन्दर्य पर अवलम्बित अछि। अतः ईश्वरक सौन्दर्यसँ बढ़ि कऽ आर कोनो सौन्दर्य नहि । नैतिक जगत तथा भौतिक जगतमे सर्वत्र हुनकहि सौन्दर्य प्रकाशित भऽ रहल अछि ।

(ख) भारतीय धारणा

सौन्दर्यक सम्बन्धमे भारतीय दृष्टि मुख्यतः आध्यात्मिक दृष्टि अछि।[174] शंकराचार्यक उच्च आदर्शवाद जगत्-प्रसिद्ध थिक - 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'। मुदा, जगतकेँ मिथ्या, ब्रह्मक अभावहि मे कहल गेल अछि। ब्रह्म-संयुक्त जगतक रूप स्पृहणीय अछि । भारतक सगुण धारणामे जगतक बाह्य सौन्दर्यकेँ सेहो ब्रह्म स्वीकार कयल गेल अछि। वस्तुतः भारतीय विचारधारामे बाह्य-सौन्दर्य स्वयं क्षुद्र थिक । ओ ब्रह्म-भावनासँ पुष्ट भेला सन्ता रमणीय एवं आकर्षक होइत अछि । निश्चित रूपसँ ई सौन्दर्य मात्र इन्द्रियेसभसँ सम्बन्ध नहि रखैत अछि।[175] प्रमुखता आत्मतत्वेक थिक। पश्चिमक सूक्ष्मतम सौंदर्यचिंतकेँ जकाँ भारतमे सेहो एहन दार्शनिक रहलाह अछि जे पूर्ण अनिरपेक्ष सौन्दर्य मे सौन्दर्य मानैत छथि ।[176] परंच पूर्ण सौन्दर्यकेँ सत्यत्व

तथा शिवत्वसँ पृथक् कखनहु नहि मानैत छथि । ओसभ ईश्वरकेँ सत्य, शिव तथा सुन्दर तीनूक मिश्रित अनुभूतिएमे दर्शन करैत छथि।[177] कविवर रवीन्द्रनाथ सेहो सौन्दर्यक एही उच्च धारणाकेँ व्यक्त कयलन्हि अछि।[178] वस्तुतः प्राचीन एवं नवीन सभ भारतीय चिंतक (शंकर, वल्लभ, कालिदास, भवभूति, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, अरविन्द, सम्पूर्णानन्द आदि) सौन्दर्यक आदर्श रूपहिकेँ वरण कयलन्हि । वस्तुतः सौन्दर्यक प्रति भारतीय दृष्टि आदर्शवादी रहल, परंच ओहिमे यथार्थक सेहो समुचित समन्वय भेल । शंकराचार्य सिद्धान्तरूपमे निरूपाधि ब्रह्महि केँ अखण्ड सत्ता मानलन्हि अछि, मुदा व्यवहारक लेल ओ बाह्य जगतकेँ सेहो स्वीकृति प्रदान कयने छथि। हुनक प्रसिद्ध पुस्तक 'सौन्दर्य लहरी'मे यथार्थ जगतक स्वीकृति सेहो सिद्ध भेल अछि। साहित्याचार्यलोकनिमे सँ रसवादी आचार्यलोकनिक दृष्टि पूर्णतः आदर्शवादी छन्हि, मुदा रस-निष्पतिमे आलम्बनक आधार अनिवार्य भेलाक कारणेँ हुनका समन्वयवादी मानब उपयुक्त होयत। वस्तुतः सौदर्य-स्रष्टा कवि-दृष्टि नञि तँ एकान्त आत्मप्रधाने होइछ, ने वस्तु-प्रधानहि । ओकर दृष्टिकेँ सामंजस्यपूर्ण होयब अनिवार्य अछि । मुख्यतः वस्तुवादी एवं आदर्शवादी सौन्दर्य-चिंतकक विचारधारामे यैह पार्थक्य पाओल जाइछ ।

4. आत्मपरक आ वस्तुपरक दृष्टिकोणक समन्वय

(क) समन्वयक आवश्यकता

सौन्दर्य सम्बन्धी· आत्मपरक एवं वस्तुपरक दृष्टिकोणक अध्ययनसँ ई लक्षित होइछ जे ई दुनू अतिवादी छथि । एक, मात्र वस्तुकेँ महत्व दैछ, तँ दोसर मात्र आत्माकेँ । एहिसँ इतर किछु एहनो सौन्दर्यशास्त्री छथि जिनकामे यत्किंचित समन्वयक भावना परिलक्षित होइछ । भारतीय सौन्दर्यशास्त्रीये जकाँ पश्चिममे सेहो, किछु कट्टरपंथीकेँ छोड़ि, किछु उदारचिंतक भेल छथि जे ने कांट एवं क्रोचे जकाँ सूक्ष्म आदर्शजीविये छथि, आ ने वैज्ञानिक जकाँ शुद्ध यथार्थ प्रेमिये । अधिकांश चिंतकक चिंतना विशेष गंभीर छनि, तथापि दृष्टिकोणक एकांगिता बरोबरि खटकैत अछि । मुदा रस परिपाकक दृष्टिसँ सौन्दर्य सम्बन्धी ओएह दृष्टिकोण साहित्यिक दृष्टिसँ उपयुक्त भऽ सकैछ जे आश्रय भाव आ आलम्बन विभाव, दुनूक पूर्ण महत्व स्वीकार करय, कारण रसानुभूतिक लेल ई दुनू पक्ष अनिवार्य अछि ।[179] कांट (KANT) एवं क्रोचे (CROCE) जकाँ मात्र अन्तःकरणहिमे सौन्दर्यक सत्ता मानब अथवा वस्तुवादी जकाँ मात्र वस्तुएमे सौन्दर्यक दर्शन करब, वास्तविक सौन्दर्य-दर्शनक एकांगी प्रयास मात्र

अछि। सौन्दर्य सम्बन्धी शुद्ध दार्शनिक चिंतन केर क्षेत्रमे एहि एकांगी दृष्टिक भने कोनो महत्व हो, मुदा काव्य-चिंतनक क्षेत्रमे, भारतीय रस-सिद्धान्तक समकक्ष आनबाक लेल, समन्वयक सिद्धान्तकेँ स्वीकार करहि पड़त, कारण ओकरा अभावमे साहित्यिक व्यवस्थाक उपयुक्त मार्ग ताकब संभव नहि । ओना ई ठीक अछि जे शुद्ध सौन्दर्यक अनुभूति एकटा पूर्णतः व्यक्तिगत अनुभूति थिक,[180] परंच जखन ओ अभियुक्तिक क्षेत्रमे अबैछ, ओकरा अनिवार्यतः विभावहिक माध्यमसँ व्यक्त होबय पड़ैछ । ई बात पूर्व एवं पश्चिम दुनू सिद्धान्तक विद्वानलोकनि केँ पूर्णतया मान्य छन्हि ।[181]

वस्तुतः सौन्दर्यक स्वस्थ आ स्वच्छ दृष्टिकेँ एकान्त वैयक्तिक रुचि, धूमिल एवं सूक्ष्म आदर्शवाद तथा कठोर वस्तुवाद रुद्ध कऽ रहल अछि। व्यक्ति-वैचित्र्यसँ तँ ओहि साधारणीकरणक कोनो ज्ञाने नहि होइछ जे काव्यगत सौन्दर्य वा आनन्दक आधार थिक । पश्चिममे टाल्सटाय पाश्चात्य सौन्दर्य-चिंता सबन्धी समस्त उपपत्तिक विश्लेषण कय अन्तमे भाव एवं विभाव दुनू पक्षक मेल कऽ एक प्रकारेँ भारतीय साहित्यिक चिन्तनहिक समर्थन कयने छथि । वस्तुतः शुद्ध दर्शन-जगतक वस्तुवादी वा आदर्शवादी दृष्टिकोणक संगमस्थल ओतहि अछि, जतय ई अपन अति केँ छोड़िकऽ काव्यक सनातन रस-सिद्धांतकेँ आत्म-समर्पण कऽ दैछ । पश्चिममे जे सौन्दर्य-चिंता सम्बन्धी विवाद उठल, तकर कारण यैह छल जे ओहिठाम मात्र इन्द्रियेकेँ, सुख पहुँचौनिहार पदार्थे केँ सुन्दर मानल जाइत छल । मुदा जखन विचारकसभ सुन्दरकेँ भावनानुभूतिक संस्पर्शसँ रमणीय बना देलन्हि आ ओकरा संग पवित्रताक भावनाकेँ सेहो जोड़ि देलनि तखनहि सौन्दर्य-दृष्टिमे परिष्कार आयल। सौन्दर्य मात्र बाहरी रूप नहि थिक। पश्चिममे सौन्दर्यानुभूतिकेँ जीवनसुलभ भाव वा अनुभूतिसँ फराक राखि कऽ मात्र कल्पनाक संग जोड़ि देखल गेल। ओकर चरम विकास क्रोचेक सौदर्यचिंतनमे अपन पराकाष्ठा पर पहुँचि गेल । टाल्सटाय एहि विवादक अन्त कय, स्वच्छ दृष्टिसँ, सौन्दर्यानुभूति केँ रसानुभूतिसँ जोड़ि कय, सौन्दर्यकेँ भावक अधीन प्रतिष्ठित कऽ, पर्याप्त निर्दोष एवं अनुकरणीय चिंतन-पद्धति प्रस्तुत कयलनि । मुदा हुनको सुनिहार ओतय क्यो नहि छल । एहि सभ गड़बड़ीक एकमात्र कारण ई छल जे ओतय कला-जगत एवं व्यवहारमे सौन्दर्यक धारणा मात्र प्रेम वा इन्द्रिय-सौख्यक रूपमे बड़ हल्लुक भऽ कय रहि गेल[182] आ दर्शन-जगत्मे सौन्दर्य-चिंता व्यक्तिगत रुचि वा दार्शनिकक अतिवादक धूमिलतामे भुतिया गेल । मुदा

भारतमे सौन्दर्यक धारणा अपेक्षाकृत पूर्ण एवं व्यापक रहल । एहिठाम प्रेमकेँ मात्र श्रेयक संगहि महत्व देल गेल । भारतमे कोनो वस्तुकेँ सुन्दर कहब सांस्कृतिक, कलात्मक एवं धार्मिक, सभ दृष्टिसँ कोनो वस्तुकेँ सुन्दर सिद्ध करब थिक । मात्र साहित्यिक वा धार्मिक वा सांस्कृतिक दृष्टिसँ कोनो वस्तु एतय खण्डशः सुन्दर नहि । यदि कोनो वस्तु सुन्दर अछि, तँ एक संग एहि सभ दृष्टिसँ सुन्दर अछि । एकर मुख्य कारण भारतक आध्यात्मिक दृष्टि अछि । सभकिछु हमरा दृष्टिमे आत्मेक प्रकाशन थिक । आत्मा सत्, चित् एवं आनन्द, तीनूक सामूहिक स्वरूप थिक, अतः एकर समस्त बाह्य प्रकाशन एकसंग तीनू गुणकेँ समाहित कयने अछि । एहि प्रकारेँ भारतीय सौन्दर्यक धारणा सर्वथा पूर्ण एवं व्यापक थिक ।

काव्यक्षेत्रमे कवि एही समन्वयक प्रयत्न करैछ आ एही समन्वयमे रस-सिद्धि निहित अछि । ई समन्वय भक्तिक्षेत्र एवं काव्य-क्षेत्रमे संभवतः सर्वाधिक सुन्दर रूपमे भेल अछि । मात्र आदर्शवादीए होएब किंवा वैज्ञानिके-दुनू अपूर्ण थिक । वस्तुतः बाहरी रूप आ भीतरी आत्मा एकहि सत्यक दू रूप वा अभिव्यक्ति थिक । रसवादी कवि बाहर वा भीतर, दुनूकेँ देखैत छथि, पूर्णतः देखैत छथि – "यः पश्यति सः पश्यति" (गीता 5, 5) । हुनका अन्तर्बाह्य दुनू प्रिय छनि । वस्तुक बाहरी रूपकेँ सेहो ओ ईश्वरीय प्रकाशसँ आलोकित अनुभव करैत छथि ।[183] जे किछु बाहर अछि, ओहिमे ओ महाभावहिक दिव्य प्रसार केँ देखैत छथि । तेँ आचार्य रामचन्द्र शुक्लक मत छनि जे, जे भीतर अछि से बाहर अछि, आ जे बाहर अछि से भीतर अछि । कवि वस्तुतः अनुभूतिक स्पर्श सँ बाह्य तथा आभ्यान्तर सभकेँ सजीव एवं पुलकित बना दैछ । हुनका लेल बाह्य सेहो ओतबहि सुन्दर थिक, आ आन्तरिक सेहो ओतबहि यथार्थ अथवा सत्य ।[184] ओ बाह्यक निरर्थकता नहि बुझैछ । ओ तँ भक्त बनिकऽ समस्त सृष्टिमे भगवानक मंगल कले केँ दर्शन करैत अछि । बाह्य संसार केँ सेहो ओ आनन्द एवं सौन्दर्यपूर्ण दृष्टि सँ देखैछ, मुदा ओकर बाह्यकेँ देखब, वैज्ञानिकक देखबसँ किछु भिन्न थिकैक, कारण एकटा (वैज्ञानिक) तँ बाह्यक आत्म-निरपेक्ष विश्लेषण कय मौन भऽ ज़ाइछ, आ दोसर (कवि) ओहि बाह्यक रूपाकार पर मुग्ध भऽ ओहिमे स्रष्टाक कृतित्व-शक्तिक भावनाकेँ परिपूर्ण पाबि कय । यैह कारण जे कवि बाह्य सौन्दर्यकेँ सेहो एक अत्यन्त अपरिसीमित रहस्य एवं कुतूहलक दृष्टिसँ देखैत अछि ।[185] फूल, तारा, किरण, रमणीक मुँह, वीरक वक्षस्थल आदि

देखिते भावमग्न भऽ जाइछ । ओ दार्शनिक किंवा धार्मिक जकाँ ब्रह्मक नाम नहि लीअय, मुदा ओकर प्रत्येक दृष्टि-निरपेक्षमे शुद्ध वेदान्तक आनन्दमयी भावनाक मधु छलकैत रहैछ । अतः कवियेक प्रयास पूर्णरूपसँ समन्वयात्मक अछि । संसारक समस्त श्रेष्ठ कवि व्यक्तहि मे अव्यक्तक दर्शन कयलन्हि अछि । जेना मात्र व्यक्तकेँ देखनिहार मे ओ प्राण नहि रहैछ, ओहिना रंग, रूप, रस रहित मात्र अव्यक्तक बखान कयनिहार बस उपदेशक बनिकऽ रहि जाइछ ।

कवि बाह्य-पक्ष (विभाव) क उपेक्षा नहि कय सकैछ, कारण आलंबन रस-निष्पत्तिक अनिवार्य साधन थिक । हँ, ओ साधने थिक, साध्य नहि । गीति-काव्यमे विभावपक्ष हल्लुक अवश्य पड़ि जाइछ, मुदा गीतक मुख्य भावना सेहो अन्ततः विभावहि पर अवलम्बित रहैछ । कविक विभाव-ग्रहण यथार्थवादी दार्शनिक सभसँ भिन्न रहैछ, जे मात्र आत्मासँ असम्पृक्त पदार्थगत सौन्दर्यहिटा केँ ग्रहण करैछ, कारण ओ रस-निष्पत्तिक लेल ओहि परमसत्ता सँ प्रकाशित वस्तु-रूपकेँ सेहो स्वीकार करबाक हेतु बाध्य अछि ।

अतः की सौन्दर्यमात्र द्रष्टेक हृदयमे अछि, वस्तुमे नहि ? अथवा, की सौन्दर्यमात्र वस्तुएमे अछि, द्रष्टामे नहि ? की द्रष्टा एवं वस्तु एक दोसरासँ पूर्णतः निरपेक्ष रहियोकऽ सुन्दर कहा सकैत अछि ?..... गंभीरतासँ विचार कयला सन्ता यैह उत्तर प्राप्त होइछ जे ने तँ कोनो व्यक्ति वा वस्तुक बाहरी गुण-धर्म मात्र द्रष्टाक भावनासँ निरपेक्ष भऽ कय अपन सौन्दर्यमय अस्तित्व रखबामे समर्थ अछि आ ने हृदयक सूक्ष्म एवं निराकार सौदर्य-वृत्ति मात्र कोनो बाहरी वस्तु, व्यक्ति किंवा अन्य सत्ताक आधारक अभावमे अपन अस्तित्व प्रमाणित करबामे सक्षम अछि । वस्तुतः दुनू अपन अस्तित्वक यथार्थताक लेल एक-दोसरापर आश्रित अछि । एहि सत्यकेँ ठोकराकऽ दुनू पक्ष अतिवादसँ काज लेने अछि । हृदयरस वा आत्माक प्रकाशसँ असम्पृक्त सौन्दर्य पूर्ण चामत्कारिक भेलो सन्ता निर्जीव एवं जड़ थिक आ वस्तुक आधारसँ स्वतंत्र तथा मनोजगतहिमे सूक्ष्म, अव्यक्त तथा अचिन्त्य वायवीय-सौन्दर्य भावना सेहो निरर्थक एवं निष्फल थिक । वस्तुतः सौन्दर्यक सत्ता दुनूक समुचित सामंजस्यहिमे अछि । एकरा स्वीकार कयले सन्ता ओ मार्ग प्रशस्त होइत देखना जाइछ जाहिपर चलि कय मनोजगत आ बाह्यजगतक पूर्ण संगति स्थापित भऽ जाइछ । जँ क्यो सहृदय व्यक्ति द्रष्टाक रूपमे उपस्थित नहि

होअय, तँ सुरभियुक्त सुकुमार कुसुमावलीक, उज्ज्वल एवं आह्लादपूर्ण चन्द्रमाक, रमणीक प्रफुल्लित मुखमण्डलक सौन्दर्यक कोन उपयोगिता रहि जायत ? पुनः जँ उपर्युक्त पदार्थ आत्मसत्ताक प्रकाशन कयनिहार माध्यमक रूपमे भासित नहि होअए, तँ एकर-सभक सौन्दर्य कतबा निष्प्राण भऽ जायत ? एहि सँ यैह सिद्ध होइछ जे सौन्दर्यक अस्तित्व-सत्ता द्रष्टा, आ दृश्य केर पारस्परिक सम्बन्धहिमे अछि । दुनू अतिवादी सँ सर्वथा भिन्न, मुक्त यैह आधार, विशेष व्यापक एवं ग्रहणीय भऽ सकैछ ।

अतः दुनू दृष्टिकोणक समन्वय अत्यावश्यक अछि, विशेषतः सौन्दर्य-धारणाकेँ काव्योपयोगी बनयबाक लेल तँ ई आत्यंतिक अछि । एहि समन्वयक अभावक कारणेँ दार्शनिकलोकनिमे एतबा मत-वैभिन्य पसरल अछि । यदि एक दिस कांट आ क्रोचे पूर्ण आत्मपरकताक बात प्रस्तुत करैत छथि, तँ दोसर दिस कॉडवेल आ प्लेखनोव सदृश-सामाजिक विचारक वस्तुपरकताक पक्षधरता करैत छथि । कांटक धारणा अत्यंत सूक्ष्म थिक ।[186] हिनका मतेँ सौन्दर्य चिंतनशील धारणाक आनन्द थिक। एकर अस्तित्व वस्तुनिष्ठ नहि अछि, मुदा, एकर उद्देश्य नैतिक शिवत्वक स्थापन थिक । एहि धारणाकेँ प्लेखनोव बेस सतर्कतापूर्वक खण्डन कयने छथि आ अपन उपयोगितापमूलक नवीन वस्तुपरक स्थापनाकेँ सम्प्रेषित कयने छथि ।[187] क्रोचेक सौन्दर्य-सम्बन्धी आत्यंतिक धारणा, ध्यान देबा योग्य अछि ।[188] हुनक विचार पद्धतिमे भावानुभूति केँ छोड़ि कऽ कल्पनाक एतेक अधिक आग्रह अछि, जकर मात्र भारतीये पंडित नहि, प्रत्युत विदेशक पंडितसभ सेहो हुनक घोर खंडन कयने छथि ।[189] तथ्य ई थिक जे प्रकृति स्वयं कोनो बातक अतिरेककेँ प्रोत्साहित नहि करैछ। ओकरा मानव हृदयकेँ औसत धरातलहि पर स्थिर रखबामे मानव-हितक संपादन बुझना जाइछ । भगवान् बुद्ध सेहो "मज्झिमनिकाय" कहि एही समन्वय भावना दिस संकेत कयने छथि । भारतीय दृष्टि सर्वदासँ समन्वयक दृष्टि रहल अछि । ओ समन्वयेमे जटिल समस्याक समाधान ताकैत रहल अछि। भारतीय साहित्यमे एहि प्रकारक समन्वय सर्वत्र प्राप्त होइछ ।

(ख) समन्वयक दृष्टिकोणक पुष्टि

पश्चिम एवं पूर्वमे सौन्दर्य-चिंता-सम्बन्धी अतिवाद (आदर्श एवं यथार्थ)क समाप्तिमे समन्वयसिद्धान्तक स्थापना अत्यंत सहायक सिद्ध भेल अछि । पाश्चात्य एवं पौर्वात्य-दुनू स्थानक समन्वयवादी दृष्टिकोणक

विद्वानलोकनि अपन स्वस्थ दृष्टिकोण प्रस्तुत कऽ एहि समस्याकेँ एकांगिताक दुराग्रहसँ बचा लेलन्हि अछि । पाश्चात्य दार्शनिक- लोकनि मे प्लेटो[190], बोजांक[191], हिगेल[192] तथा विश्व-कोषकारलोकनि, समन्वयकारक दृष्टिकोणक प्रतिनिधित्व कयलन्हि अछि ।[193] भारतीय विद्वानसभमे डा. कुमारस्वामी[194], कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर[195], डा. आत्रेय[196], आचार्य शुक्ल[197] : श्री हरिवंश सिंह शास्त्री, शिलीमुख आदि विद्वान एही दृष्टिकोणकेँ स्वीकार कयलन्हि अछि तथा ई निर्दिष्ट कयलन्हि अछि जे समन्ववादी दृष्टिकोणक आधार पर सौन्दर्यक सम्यक व्याख्या कयल जा सकैछ । भारतीय उपनिषद् एवं गीता[198] आदि ग्रंथहुमे एही समन्वयकेँ मान्यता प्रदान कयल गेल अछि। वस्तुतः सौन्दर्यक सम्बन्धमे यैह दृष्टिकोण सर्वथा उपयुक्त बुझना जाइछ, संगहि प्रामाणिक सेहो प्रतीत होइछ । सौन्दर्य-चिंतामेँ एहि मूल आधारकेँ त्यागिकऽ आगाँ नहि बढ़ल जा सकैछ। तत्व-चिंतनक बात पृथक् थिक, मुदा काव्यानुशीलनक लेल यैह दृष्टिकोण स्पृहणीय एवं ग्राह्य अछि ।

5. सौन्दर्यक स्वरूप

(क) मनोवैज्ञानिक आधार

सौन्दर्य ने तँ वस्तुगतेँ थिक, आर ने आत्मगतेँ । सौन्दर्य वस्तु तथा दृष्टि-भावनाक संयोगहिमे निहित रहैछ । आब सौन्दर्यक एकटा व्यापक धारणा स्थापित करबाक लेल ओकर कतिपय मुख्य विशेषता सभहिक उल्लेख करब आवश्यक होयत; परंच ओहिसँ पूर्व ईहो जानि लेब आवश्यक जे सौन्दर्य-भावनाक उत्पादनमे कोन-कोन कारण सहायक होइछ तथा ओकर मनोवैज्ञानिक आधार की थिकैक ? एहिसँ सौन्दर्यक स्वरूप तथा ओकर धारणा स्वतः स्पष्ट भऽ जायत ।

वस्तुतः सौन्दर्य-भावनाक निर्धारणमे अनेक विषय सहायक होइछ । प्रत्येक व्यक्तिक सौन्दर्य-निर्धारणक अपन-अपन व्यक्तिगत मानदण्ड होइछ तथापि ओकर किछु मनोवैज्ञानिक आधार स्थापित कयल जा सकैछ । कोनो पदार्थकेँ हमरा मोनमे, सम्बन्ध-भावनाक कारणेँ अनेक मधुर भाव वा सुखद कल्पना जाग्रत होइछ वा जागि सकैछ । वस्तु स्वयं सुन्दर हो, नहि हो, ओ नवोदित भाव वा कल्पने ओहि वस्तुक सौन्दर्यकेँ अभिवृद्ध करबामे सहायक होइछ । दोसर, सौन्दर्यक उत्पत्तिक प्रधान कारण अनेक मनोवैज्ञानिक हमरालोकनिक यौन-भावनेकेँ कहलन्हि अछि ।[199] उदाहरणार्थ, कोनो युवतीक सौन्दर्यानुभव करबामे ओकरा प्रति द्रष्टाक प्रेमक प्रगाढ़ता, ओकर कामवेग,

शारीरिक बल, ओकरा प्राप्त करबाक ओकर आकांक्षाक गहनता एवं तीव्रता, तृप्ति तथा अतृप्ति आदि अनेक बात सहायक होइछ ।[200] डा. आत्रेयक अनुसार यौन-भावनाक क्षीणता वा ओकर समाप्तिक संगहि द्रष्टा विशेषक लेल सौन्दर्यानुभवक क्षमता सेहो क्षीण वा समाप्त भऽ जाइछ ।[201] सजीव मानवक अतिरिक्त ओकरासँ सम्बन्धित-सम्पर्कित अन्य जड़ पदार्थ सभक सौन्दर्य सेहो अपन प्रेम-पात्रसँ प्राप्त प्रेमक अनुपातहिमे घटैत-बढ़ैत रहैत अछि । एकर अतिरिक्त आयु सेहो सौन्दर्य-निर्धारणमे सहायक सिद्ध होइछ । एक विशेष आयु, मानसिक अवस्था वा विकासक दिनहिमे हम सौन्दर्यक सर्वाधिक अनुभव कऽ सकैत छी, बाल्यावस्था वा वृद्धावस्थामे ओतबा नहि । एहू बातसँ सौन्दर्यक काम-सम्बन्धी आधार प्रमाणित होइत अछि। पुनः, सौन्दर्यानुभवक आयु-विशेषमे सेहो हम प्रत्येक क्षण अपन शारीरिक वा मानसिक कारणसभसँ सौन्दर्यानुभवक एकहि प्रकारक क्षमता नहि रखैत छी । व्यक्ति वा वस्तुक अत्यधिक साहचर्य वा समीप्य सेहो कखनहु काल सौन्दर्य-भावनाकेँ क्षीण वा निर्जीव कऽ दैछ, वा कय सकैछ । यैह नहि, ओ ओकरा प्रतियेँ घृणा वा विरक्तिधरि उत्पन्न कऽ सकैत अछि । मुदा विरल, अप्राप्य, अप्राप्त, सुदूर, रहस्यपूर्ण पुरुष-सापेक्ष वस्तुसभ वा व्यक्तिसभक प्रतियेँ हमर मधुर लालसा, हमर वांछित पदार्थ वा व्यक्तिमे अत्यधिक सौन्दर्य संचित कऽ दैछ । शिक्षा आ संस्कार, सामाजिक परम्परा एवं सौन्दर्य सम्बन्धी पूर्व निर्णीत धारणा सेहो हमर सौन्दर्य सम्बन्धी धारणाकेँ स्थिर करबामे सहायक होइत अछि ।

(ख) सौन्दर्यक साहित्यिक आधार

उपर्युक्त विवेचन केँ सौन्दर्य-भावनाक अस्तित्वक एक सामान्य आधार कहल जा सकैछ । प्रस्तुत आधार ई ज्ञापित करैछ जे सौन्दर्य भावना जनसाधारणमे कोन प्रकारेँ काज करैछ, मुदा साहित्यकार वा कवि सामान्यलोकसँ भिन्न एवं विशेष कल्पना आ भावना प्रधान व्यक्ति होइछ। ओ सौन्दर्यापत्तिक मनोवैज्ञानिक स्थितिसभक उल्लेख वा निरूपण मात्रेसँ संतुष्ट नहि होइछ । ओ रसात्मक पद्धतिसँ सौन्दर्य-निरूपण द्वारा जीवनक सर्वोच्च तत्वक दर्शन करबाक आकांक्षी होइछ । अतः कविलोकनि सौन्दर्यकेँ कोन रूपेँ देखलन्हि अछि आ ओ जाहि ढंगसँ ओकर अनुभूति करौलन्हि अछि, से सामान्य मनोवैज्ञानिक स्थापना वा विश्लेषण-विवेचनासँ भिन्न होइछ । काव्य जीवनक विभिन्न क्षेत्रसभक तथ्यकेँ कल्पना-चित्रसभहिक माध्यमसँ ग्रहण कय, पुनः

ओकर रसात्मक निरूपण करैत अछि । अतः धर्म, दर्शन, विज्ञान आदि सभ क्षेत्रक सारभूत ज्ञान-संचयनक[202] ओ सौन्दर्यक माध्यमसँ आत्मसाक्षात्कार करयबाक एवं करबाक प्रयास करैछ । भाव ई जे साहित्य मात्र मनोवैज्ञानिक तथ्यातथ्यक नीरस उल्लेख धरि सीमित नहि रहि सकैछ । ओ एहि धरातलसँ उपर उठिकऽ प्रकृति एवं मानव-जगतक सौन्दर्यकेँ कला-जगतमे आनि कऽ ओकर जीवन्त रसानुभव करबैत अछि ।[203] यैह कविक सौन्दर्य-सम्बन्धी वास्तविक गतिविधि अछि । सौन्दर्यक उच्च एवं वास्तविक अभिव्यक्ति मनोवैज्ञानिक धरातलसँ उपर उठियेकऽ भऽ सकैछ ।

(ग) सौन्दर्यक सामान्य विशेषता

सौन्दर्यक मनोवैज्ञानिक एवं साहित्यिक आधारक सामान्य विश्लेषणक पश्चात् आब ओकर लक्षण वा विशेषता सभपर विचार कयल जा सकैछ । सौन्दर्यक सर्वप्रथम गुण थिक आकर्षण । एतबहि नहि, यदि सौन्दर्य-द्रष्टामे सेहो आकर्षणीयत्व नहि हो, तँ वस्तुक आकर्षण गुण मात्रे पर्याप्त नहि होयत। द्रष्टा एवं दृश्यक एहि पारस्परिक सम्बन्धमे द्रष्टाक इन्द्रिय-व्यापार सेहो निहित अछि । द्रष्टा आँखि, कान एवं त्वचाक माध्यमसँ सौन्दर्यक अनुभूति ग्रहण करैछ । अतः इन्द्रिय-व्यापार सेहो सौन्दर्यानुभूतिक एक अत्यन्त आवश्यक अंग थिक । इन्द्रिय-व्यापारक सहायतासँ द्रष्टा अपन मोनमे सौन्दर्यक परम अनुकूल भावनाक अनुभव करैत अछि । द्रष्टा सौन्दर्यकेँ देखिकऽ जखन भावसभसँ अभिभूत भऽ जाइछ तँ ओ भाव वस्तु-दर्शन, आलिंगन, चुम्बन आदि व्यापारमे अभिव्यक्त होइछ । सौन्दर्यकेँ देखि ओकरा प्रति आदर, पुनः व्याकुलता आ तृप्ति तथा अन्तमे प्राप्तिक भावना, सौन्दर्य-दर्शनक संगहि भावसभक ई क्रम विद्यमान रहैछ । दृश्यक सौन्दर्यसँ अभिभूत भऽ कय द्रष्टाक हृदयमे ओकरा अंगीकृत करबाक इच्छा सेहो उत्पन्न होइछ । मुदा अंगीकृत करबाक ई इच्छेमात्र सौन्दर्यानुभूतिकेँ उच्चता नहि प्रदान कऽ पबैछ । आदर्शवादी दार्शनिकसभक ई धारणा छन्हि जे सौन्दर्यपूर्णकेँ व्यक्तिगत स्थूल सुखोपभोगक हेतु अंगीकृत करबाक इच्छा जतबे न्यून होयत, सौन्दर्यानुभूति ओतबहि उज्ज्वल एवं उदात्त होयत । हुनका लोकनिक दृष्टिमे सौन्दर्य एक ईश्वरीय देन थिक । उपनिषद्मे शारीरिक सौन्दर्यक सम्बन्ध सेहो ईश्वरसँ बताओल गेल अछि ।[204] एही प्रकारेँ प्राकृतिक सौन्दर्य सेहो बाह्यकारणेँ ईश्वरीय थिक । कवि आ दार्शनिककेँ वैज्ञानिक जकाँ सौन्दर्यकेँ बाह्य तथा आध्यात्मवादी जकाँ आत्महिधरि सीमित

रखबामे संतोष नहि होइछ । ओ ओकरा जन्म जन्मान्तरसँ सम्बन्धित कऽ कय, ओकर अमरता-अनन्तताकेँ सेहो प्रतिष्ठापित करैछ । कालिदास सौन्दर्यक अनुभूतिक संग जन्मान्तरक सम्बन्ध मानलन्हि अछि ।[205] एही प्रकारक धारणा अन्यान्य कवि एवं लेखकसभक सेहो छन्हि । भारतीय सौन्दर्य-भावनाक संग पवित्रता तथा निष्पापक नित्य सम्बन्ध अछि ।[206] जे सौन्दर्य पवित्र नहि, ओ आनकेँ सेहो पवित्र नहि कऽ सकैछ । सौन्दर्यक संग गर्व आदि दुर्गुण सेहो नहि रहि सकैछ । भगवान कृष्ण रासलीलाक समय अन्तर्धान भऽ कय रूपगर्विता गोपीसभकेँ यैह उपदेश देलन्हि ।[207] ओना सौन्दर्यक व्यावहारिक उपयोगिता सेहो होइछ, मुदा अपन आदर्श रूपमे ओ प्रयोजनातीत अछि । कालिदास सौन्दर्यक उपयोगिता मानबो कयलन्हि अछि तँ मात्र अपन प्रियकेँ रिझयबामे ।[208] कविलोकनिक दृष्टिमे सौन्दर्यक उपभोग सौभाग्यक एक लक्षण थिक ।[209] सूरदासक मान्यता छन्हि जे सौन्दर्यक वास्तविक स्वरूपक साक्षात्कार कयनिहार व्यक्ति पूर्ण निर्भय भऽ जाइछ । हुनका दृष्टिमे सौन्दर्य अनिर्वचनीय थिक ।[210] कालिदासक दृष्टिमे जे वास्तविक रूपवान अछि, ओकरापर ने क्रोधे भऽ सकैछ, ने ओकर निरादरे कयल जा सकैछ ।[211] वास्तविक सौन्दर्यकेँ कोनो कृत्रिम आवरणक आवश्यकता नहि, कारण ओकरा पर सभ किछु शोभा देबय लगैछ ।[212] मात्र रूप देखा कय, क्यो स्थायी रूपेँ रिझयलो नहि जा सकैछ ।[213] भागवतकारक अनुसारेँ सौन्दर्य द्वारा काम-विकार-रूपी मानसिक रोगकेँ नष्ट कयल जा सकैछ । रासलीलामे गोपीलोकनि यैह अनुभव कयलन्हि ।[214] महाकवि जयशंकर प्रसाद बाह्य सौन्दर्यकेँ सेहो हृदय वा आत्मेक प्रतिबिम्ब मानैत छथि ।[215] आत्माक सौन्दर्य पूर्वजन्मक[216] संस्कारहिसभक परिणाम होइछ, एहि द्वारे बाह्य सौन्दर्य सेहो आत्मेक प्रकाश भेल । तुलसीक सीता जखन रामकेँ देखलन्हि तँ ई बूझि पड़लन्हि मानू जन्म-जन्मान्तरक कोनो हेरायल निधि प्राप्त भऽ गेल होन्हि ।[217] माघ, विद्यापति, सूर, बिहारी आदि ओकरे वास्तविक सौन्दर्य मानैत छथि जे प्रतिक्षण बढ़य, चकित करय तथा नित्य नवीन रहय ।[218] कीट्स सौन्दर्यक कृतिकेँ शाश्वत आनन्दक वस्तु मानैत छथि ।[219] तुलसीक दृष्टिसँ सेहो सौन्दर्य नेत्र एवं मोनक माध्यमसँ आत्माकेँ वास्तविक सुख प्रदान कयनिहार होइछ ।[220] सौन्दर्यक दर्शन करितहि सम्पूर्ण कामना पूर्ण भऽ जाइछ ।[221] दार्शनिकसभक दृष्टिमे सौन्दर्यक अनुभूति एक समाधियेक दशा थिक, जे योगक सविकल्प समाधि तुल्य होइछ ।[222] आश्चर्य आ कौतूहलक

भावना सेहो सौन्दर्यक एक बहुमूल्य उपकरण थिक । अर्जुन कृष्णक रूपकेँ स्मरण कय बारम्बार विस्मयक भावनामे निमग्न भऽ गेल छलाह ।[223] स्वाभाविक एवं अकथनीय रहस्य भावनासँ सेहो सौन्दर्यक अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहैछ । एतबहि नहि, दार्शनिकलोकनिक तँ एतबा धरि कहब छनि जे रहस्यक अभावमे सौन्दर्य, सौन्दर्यहि नहि रहैछ ।[224] वास्तविक सौन्दर्यमे कोनो न्यूनता वा निंद्यता नहि होइछ, तथा ओकर वर्णनमे ब्रह्माण्डक सर्वश्रेष्ठ वस्तु सभक उपयोग होइछ ।

यैह तँ सौन्दर्यक मुख्य विशेषता थिक । भारतीय दृष्टि वा आदर्शात्मक दृष्टिसँ जे सौन्दर्य एहि कसौटी पर पूरा उतरैत अछि, ओएह वास्तविक सौन्दर्य थिक । जे कला वा काव्य जतबहि अनुपातमे एहि सौन्दर्यक अनुभूति करबैत अछि, ओतबहि अनुपातमे ओ सौन्दर्यपूर्ण थिक ।

6. उदात्त एवं कु-रूप

सौन्दर्यक प्रसंगमे उदात्त तथा कुरूपक किछु चर्चा कऽ लेब आवश्यक अछि । उदात्त सौन्दर्यमे मानव एवं प्रकृतिमे व्याप्त आत्माक अनन्तता, विशालता, उदात्तता, तथा विराटताक दर्शन होइछ । उदात्तता वस्तुतः आत्माक महानताक प्रतिबिम्ब थिक ।[225] सौन्दर्यमे कोमलता, नित नवीनता, आह्लादकता, माधुर्य, समता, सुडौलता, रमणीयता आदि तत्वक समावेश होइत अछि । मुदा उदात्तमे दृश्यमान वस्तु वा परिस्थिति केँ देखला सन्ता अनुभूत भेनिहार एक धार्मिक-भाव-मिश्रित भय अथवा आतंकेँ मुख्य तत्व होइछ । उदात्तक दर्शनक समय हमरा लोकनिमे एक आत्म-लघुताक भावना सेहो रहैछ । प्रचंड झंझावात, अभ्रंकष एवं महिमावान विराट् हिमवानक विस्तार, विशाल-विस्तृत नद्, तारिका खचित अनन्त आकाश आ क्षितिज, विस्तृत नील-बैगनी तरंगायित रत्नाकर, दृढ एवं विशाल भवन, शिव-तांडव, शिवक जटापर आकाशसँ कुदैत गंगा आदिक सौन्दर्यकेँ उदात्त सौन्दर्य कहल जाइछ, कारण एकर सभक विस्तार, दृढता एवं शक्ति मोनपर एक एहन विचित्र आ मधुर आतंक पसारि दैछ जे मोन चुपचाप अपन लघुता स्वीकार कय मौन आ विनीत भऽ जाइछ । हमर वृत्ति सभ मानू ओहि सौन्दर्यक प्रभावसँ किछु क्षणक लेल स्थगित भऽ जाइछ ।[226] वस्तुतः सौन्दर्य ओ थिक जे आश्रयकेँ पहिने पराभूत आ तदनन्तर आकर्षित करैछ । यथा गर्जना करैत सागरकेँ देखिकऽ तटस्थ व्यक्ति पहिने भयंकरतासँ आक्रान्त भए वा विस्मय भावसँ ठकुआ जाइत अछि, परंच, पश्चात् ओकर विशालतासँ अभिभूत भऽ कय ओ

चिति-स्फीत भऽ जाइत अछि । अतः उदात्त भावनामे पहिने घात, तदुपरान्त आह्लादन रहैछ । एहि पूर्वावस्थाक कारणहि किछु विचारक उदात्त आ सुन्दरकेँ सकोटिक नहि मानैत छथि।[227] कखनो-कखनो कुरूप सेहो अपन विशालता आ लोकातिशयताक कारणेँ उदात्त बनि जाइत अछि ।[228] सुन्दर आ उदात्तमे दोसर अन्तर ई थिक जे सुन्दर जतय लोक-बोधसँ सम्बन्धित रहैछ, ओतय उदात्त बुद्धि-संवेग सँ । तेसर बात ई थिक जे सुन्दरक हेतु सर्वदा आकृति-विधान आवश्यक होइछ जखन की उदात्तक हेतु आकृतिहीनता आ विकृति समरूप मे श्रेयस्कर अछि । चारिम अन्तर ई अछि जे उदात्त, सुन्दरक अपेक्षा अधिक आत्मनिष्ठ अछि, फलतः ओहिमे आश्रय पक्षक दृष्टिसँ मनःचाप अधिक रहैछ। कखनो-कखनो उदात्त वस्तुविशेषमे पूर्णताक एहन भीमकाय अथवा विराट निदर्शन प्रस्तुत करैछ जे ओकर आस्वादन, चर्वण वा ग्रहणमे आश्रयक इन्द्रिय-समूह असमर्थ सिद्ध होइछ आ यदा-कदा ओ प्रकृतिक शक्ति-सत्ताक एहन विस्फोटक विभ्राट उपस्थित करैछ जे आश्रयक धारण-शक्ति विखण्डित भऽ जाइछ । अतः किछु लोक उदात्तकेँ सौन्दर्यक विस्तार कहैत छथि ।

हिगेलक अनुसार उदात्त सौन्दर्यक दौवारिक थिक, जे प्रतीकात्मक कला-विभागक अन्तर्गत अबैछ । उदात्तक दोसर लक्षण ई थिक जे ओ ससीम-निस्सीमक बोधक होइत अछि । प्रत्यक्षीकरणक उपरान्त, एक दिस मानव-हृदयपर अपन असीमताक प्रभाव छोड़ैत अछि आ दोसर दिस मानव-चित्तकेँ ओकर संकोची ससीमताक बोध करबैत अछि । मुदा, उदात्तताक विशेषता ई थिक जे एहि ससीमता अथवा हीनताक अनुभूतिक क्षणमे सेहो मानव-चित्त पूर्वापरक अपेक्षा महानताक किंचित उच्च धरातलपर पहुँचि जाइछ ।

किछु आत्मनिष्ठ विचारक उत्कृष्ट संवेगक सशक्त अनुभूतिकेँ उदात्त कहैत छथि। एहि दृष्टियेँ उन्मेषपूर्ण संवेदक चूडान्त घनीभूत अवस्था उदात्त थिक । अतः प्रकृतिक विराटता आ आध्यात्मिक शक्तिक पराव्याप्ति उदात्त भावनाक सर्वोत्तम उद्दीपन थिक ।

कलाक सभ निदर्शनमे उदात्तक समावेश नहि भऽ पबैछ । ओएह कला उदात्तक उचित अधिकरण बनि सकैछ जाहिमे पर्याप्त विस्तार वा भावनाक स्तम्भन-शक्ति विद्यमान हो । अतः कलाक उदात्तमे नहि, उदात्त कलामे मैग्निच्युडक आत्यन्तिक आवश्यकता रहैछ । एहि दृष्टियेँ दृश्य

कलाक अपेक्षा कालिक कलासभक-यथा, संगीत आ काव्यमे उदात्तक आराधना सरल रूपेँ भेल करैछ ।

उदात्त ललित कला आ उपयोगी कलाक विशिष्ट विभाजक गुण थिक । उदात्तक आधार पर ललित कलाक अन्तरकेँ स्पष्ट कयल जा सकैछ । उपयोगी कला, विशेषतः औद्योगिक कलामे उदात्तक समावेश वा ओकर आधार कखनहु नहि भऽ सकैछ । उपयोगी कला आ औद्योगिक कला अन्य दृष्टिसँ – पूर्णता, संघटन अथवा सत्यताक दृष्टिसँ-ललित-कलाक संग सम पर अवस्थित भऽ सकैछ, मुदा उदात्तक दृष्टिसँ ओ सर्वथा पंगु अछि।

परिमाण अथवा आकृति-विस्तारसँ सम्बन्धित होयबाक कारणेँ किछु विचारक उदात्तक कैक स्तर निर्धारित करैत छथि । यथा, प्रो. ब्रैड्ले 'द सब्लाइम'[229] शीर्षक निबन्धमे परिमाण, मात्रा अथवा आकृति-विस्तारक भेदसँ सौन्दर्यक पाँच अवस्थाकेँ स्वीकार कयलन्हि अछि आ उदात्तकेँ ओहिमे सर्वोत्तम सिद्ध कयलन्हि अछि । ओ पाँच अवस्था निम्न प्रकारक अछि – रंजक, लावण्यमय, सुन्दर, कमाल तथा उदात्त ।[230] ललित लघु उदात्तक पंक्तिवाद विपरीतान्त थिक जे सुखद आ रंजक भेल करैछ, परंच कोनो उत्कृष्ट आ गंभीर भावकेँ जागृत करबामे अक्षम रहैत अछि । एहि ललित लघुक भावना वा चर्वशामे इन्द्रियसमूह सक्रिय रहैछ । मुदा एकर विपरीत उदात्त इन्द्रियसभसँ फराक अर्थात् अतीन्द्रिय भेल करैत अछि । ई एतेक ने महान होइछ जे इन्द्रिय सभ एकरा ग्रहण नहि कऽ पबैछ । इन्द्रिय-ग्राह्य नहि होयबाक कारणेँ उदात्त क्षणस्थायी होइछ, कारण कोनो भावदशाक स्थिरता इन्द्रियक शक्तियेपर निर्भर करैत अछि। शेष अवस्था-लावण्य, सुन्दर आ कोमल-इन्द्रियसभक संग अपन सम्बन्ध रखैत अछि, अतः इन्द्रियरंजक होइछ, अर्थात् एहि अवस्थासभमे आश्रयक इन्द्रिय तथा आलम्बनक बीच पूर्ण रागात्मक निर्वाह रहैछ ।

किछु विचारक, कलाकारक शैलीमे सेहो उदात्तक विद्यमानताकेँ स्वीकार करैत छथि । अर्थात् सामान्य अभिव्यक्तिक कमाल वा चमत्कार उदात्तक सृजन कऽ सकैछ । जेना, लोंजाइनस माखपूर्ण वाग्मितामे उदात्तक संभावनाकेँ मानैत छथि । हिनका अनुसारेँ कलाकारक शैली उदात्त भऽ सकैछ आ उदात शैलीक साक्षात्कारसँ आत्माक उन्नयन तथा उत्तोलन भऽ सकैछ ।[231] अपन एहि मान्यताकेँ स्थापित करैत ओ उदात्त शैलीक पाँच नियामक तत्वकेँ निर्दिष्ट कयने छथि – 1. चिन्तनक गरिमा, 2. आवेगसभक

स्फूर्त्त आ उत्तेजित निर्वाह, 3. वाक्यालंकारसभक सुष्ठु प्रयोग : 4. शब्द-चयन, सादृश्य-विधान एवं अंलकार-योजना तथा 5. स्थापत्य-कौशलक महिमामंडित प्रयोग । एहि पाँच तत्वमे सँ प्रथम दू लौंजाइनसक अनुसार, उदात्तक अन्तरंग तत्व थिक, शेष तीन बहिरंग। डा. नगेन्द्र एहि दू तत्वक लेल उदात्त विचार आ प्रेरणा-प्रसूत भव्य आवेगक प्रयोग कयलन्हि अछि आ एहि दुनूमे सेहो आवेगक मुख्यताकेँ प्रतिपादित कयलन्हि अछि ।[232]

एहि प्रकारेँ उदात्तताक विचित्रता ई थिक जे ओ विशाल भइयोकऽ सूक्ष्ममे समाहित भऽ सकैछ, अर्थात् ओकर भूमिका वहुवर्णी थिकैक । अतः ओकरा यैह मानल जाइछ : यथा, सूक्ष्मोदात्त, श्रेयोदात्त, परोदात्त, विस्तारोदात्त आदि ।[233]

सौन्दर्य-विवेचनमे कुरूपक चर्च अत्यावश्यक अछि, कारण कला केर कुरूपतामे सेहो सौन्दर्य रहैछ ।[234] वस्तुतः कुरूपताक सम्बन्ध कोनो व्यक्ति, वस्तु, दृश्य वा स्थितिक बाह्य रूपसँ नहि रहैछ जतबा हमरालोकनिक मनोभावसँ । मजनूक लेल लैला कारी करिलुट्ठी होइतहु बहिश्तक परी छलि। भाव ई जे जकर बाह्यरूप सुन्दर हो, मुदा जकरामे आन्तरिक शील नहि हो, तँ ओ कुरूपे कहाओत । एकर विपरीत जखन आत्मा, आत्मेकेँ देखैछ, तँ ओतय रूप-सौन्दर्य स्वतः उत्पन्न भऽ जाइछ। भिखरनिक कोरा महक बच्चा अपना मायक लेल चान थिक । जाहि प्रकारेँ पदार्थ वा व्यक्तिसभक सम्बन्धमे रूप-कुरूपक चर्च होइछ, ओही प्रकारेँ भाव वा आचरणक सम्बन्धमे सेहो । कुरूप व्यक्ति अपन आन्तरिक भावसभक सौन्दर्यसँ सुन्दर भऽ जाइत अछि । नीति, आदर्श वा कोनो उदात्त भावनासँ प्रेरित क्रोध आदि विकार सेहो, ओकरा लक्ष्यकेँ देखैत, सौन्दर्यक मोहकताकेँ धारण कऽ लैत अछि। राम जखन घमण्डी रावण पर टूटि पड़ैत छथि तँ हुनक कृत्य भक्त लोकनिकेँ कतबा मनोहर लगैछ । तीन दिन धरि प्रार्थना कयलो सन्ता मार्ग नहि प्रदान कयनिहार समुद्र पर जखन राम क्रोधित होइत छथि तँ ओ क्रोध कतबा सुन्दर बुझना जाइछ । एहि प्रकारेँ रूप-कुरूपक अन्तिम निर्णायक हमरालोकनिक मनोभावे थीक ।

पाश्चात्य सौन्दर्य-चिंतनमे अरस्तू-कालहिसँ कुरूपक सम्बन्धमे विमर्श होइत रहल अछि आ दिनानुदिन ओकरा विशेष व्यापकता प्रदान कयल जाइत रहलैक अछि । अरस्तू तँ कुरूपमे हास्यास्पदक सेहो गणना कयलन्हि अछि, जकर उदाहरण-स्वरूप ओ कैरिकेचर (विडम्बा)केँ प्रस्तुत कयलन्हि अछि ।

कुरूपक सम्बन्धमे हुनक मुख्य धारणा ई छन्हि जे अनुकरणक माध्यमसँ कलामे प्रवेश पयबाक कारणेँ ओ कुरूप सुन्दर, आ सुखद भऽ जाइछ । मुदा लेंसिंग कुरूपकेँ काव्यमे मात्र कौमिक वा भयानक प्रत्यक्षीकरणक साधन कहलन्हि अछि । हुनका अरस्तूक ई धारणा स्वीकार्य नहि जे दुःख सेहो अनुकरणक द्वारा सहृदयचित्तक लेल सुखद बनि सकैछ। एहि सम्बन्धमे हिगेल, अंशतः स्पष्ट बात बतौने छथि । हुनका अनुसारेँ कुरूपमे किछु-ने-किछु विकृति अवश्य रहैत अछि, जेना कुरूप-चर्चामे कैरिकैचरक उदाहरण दैत ओ चरित्र-चित्रणक विकृतिकेँ निर्दिष्ट कयने छथि। रोजेन्क्रा तँ आओरो स्पष्टताक संग ई मन्तव्य व्यक्त कयने छथि जे कुरूपता सौन्दर्यक भावात्मक निषेध थिक ।

डा. कुमार विमलक दृष्टिमे सौन्दर्यक संग कुरूपताक निरन्तर वैपरीत्य रहलैक अछि । सौन्दर्यक विपरीतार्थक अथवा प्रतीप असौन्दर्य नहि, बल्कि कुरूपता थिक । कुरूपता सेहो हमर सौन्दर्य-चेतनासँ सम्बन्धित अछि।[235] एतबहि नहि, संसर्ग-सम्पर्क अथवा पूज्यभावक आरोपणसँ कुरूप सेहो आकर्षक बनि जाइछ, किंवा ओकर अरुचि न्यून भऽ जाइछ। पुनः विशिष्ट आन्तरिक गुणक कारणेँ कुरूप वर्णनाक भाव बदलि जाइछ। उदाहरण स्वरूप स्वर-लालित्यक कारण कारी कोइली तथा पांडित्यक कारण अष्टावक्र स्मरणीय छथि । तात्पर्य ई जे कुरूपकेँ कला मे अवश्य स्थान भेटबाक चाही कारण पूर्णता अपूर्णतासँ श्रेयस्कर अछि, आ जे कला कुरूपताक प्रति सदा वर्जनाक भाव रखैत अछि, ओकर पूर्णता निश्चित रूपेँ विघटित भऽ जेतैक । दोसर बात ई जे सुन्दर आ कुरूप एक-दोसराक मूल्य एवं सीमाक निर्धारण करैछ । यैह कारण जे वाल्मीकि रामक सौन्दर्यकेँ विशेष प्रभविष्णु एवं शूर्पणखाक कुरुपताकेँ विकर्षक बनयबाक लेल सौन्दर्य आ कुरुपताक समानान्तर वर्णन कयने छथि -

"सुमुखं दुर्मुखी रामं वृतमध्यं महोदरी ।
विशालाक्षं विरूपाक्षी सुकेशं ताम्रमूर्धजा ।
प्रीतिरूपं विरूपा सा सुस्वर भैरवस्वरा ।
तरुणं दारुणं वृद्धा दक्षिणं वामभाषिणी ॥"

– वाल्मीकि रामायण

भाव ई जे कुरूपताक प्रतियेँ शिथिलता हमर सौन्दर्यचेतनाक लेल अशोभन थिक आ कुरूपताक प्रति तीव्र प्रतिक्रिया हमर सौन्दर्य-चेतनाक लेल शुभप्रद थिक ।

7. सौन्दर्यक विविध रूप

सौन्दर्यक मूल स्वरूप बुझबाक पश्चात् आब ओकर विविध रूपसभक ज्ञानो आवश्यक अछि । सौन्दर्यक विस्तार मुख्यतः चारि रूपमे देखल जा सकैछ - (1) मानवीय सौन्दर्य (2) प्राकृतिक सौन्दर्य, (3) वस्तु-गत सौन्दर्य, तथा (4) कला-गत सौन्दर्य । एहि चारू तथा एकरा सभक भेद-विभेदसभमे सौन्दर्यक समस्त सत्ता समाविष्ट अछि । एहि चारू रूपमे सँ प्रथम तीन रूप तँ प्रकृति अथवा जीवनेमे प्राप्त होइछ । मुदा चारिम अर्थात् कला-गत सौंदर्यक आधार मोनक भावना अथवा कल्पना थिक जे उक्त तीनू रूपमे सँ अपन सामग्री ग्रहण करैत रहैछ । अर्थात् जखन प्रथम तीनू रूप कवि-कल्पना केर माध्यमसँ काव्य अथवा कलामे वर्णित होइछ, तँ कलागत सौन्दर्यक सृष्टि होइत अछि।

(क) मानवीय सौन्दर्य

लोक-व्यवहार आ कला, दुनूमे मानवीय सौन्दर्य अत्यन्त महत्व रखैछ, अतः सर्वप्रथम ओकरहि विवेचन न्यायोचित अछि । स्पष्टताक लेल एहि सौन्दर्यक विवेचना कें तीन उपशीर्षकमे विभक्त कयल जा सकैछ - (1) सामान्य, (2) मानवीय सौन्दर्यक विशेषता तथा (3) मानवीय सौन्दर्यक क्षेत्र-विस्तार ।

(1) सामान्य : विषयक दृष्टिसँ मुख्यतः दू प्रकारक काव्य देखबामे अबैछ - (क) मानव-क्षेत्र सम्बन्धी होइछ । एतय ओ अपन भाव-मार्मिकता सँ मनोहारी भऽ सकैछ, मुदा एहन स्थितिक अभावमे ओ नीरस भऽ जाइछ । एही प्रकारें जतय काव्य मानव-निरपेक्ष शुद्ध प्रकृति-क्षेत्र धरि परिसीमित रहैछ, ओतहु ओ एकांगी भऽ जाइछ । वस्तुतः पूर्ण काव्य ओएह अछि, जाहिमे मानव एवं प्रकृति दुनूक मधुर सामंजस्य हो । वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति, विद्यापति, तुलसी, सूर, वर्ड्सवर्थ आदि कविलोकनिक काव्य एही प्रकारक अछि । तथापि काव्य मुख्यतः मानव-क्षेत्रहि दिश विशेष उन्मुख रहैछ । मानव-प्रधान काव्यमे प्रभावशालिताक हेतु मानवीय सौन्दर्यक सेहो चित्रण कयल जाइछ ।

(2) मानवीय सौन्दर्यक विशेषता

मानवीय सौन्दर्य काव्यक मूल प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थिक । कवि मानवीय रूप-सौन्दर्यक माधुरीक रसास्वादन कइयेकऽ चराचर जगतमे सौन्दर्यक दर्शन करय लगैछ । सौन्दर्यानुभूतिक दृष्टिञे प्रकृतिसँ मानव दिस जयबाक

अपेक्षा मानवसँ प्रकृति दिस जायब विशेष स्वाभाविक होइछ । हमर मूल संस्कारक निर्माण मानव-जगतहिमे होइत अछि । मानव-सौन्दर्य कलागत सौन्दर्यक मुख्य आधारसभमे सँ एक अछि । परंच मानव-सौन्दर्य प्रकृतिक चिर ऋणी अछि । प्रकृति हमरा ओ रस प्रदान करैछ जे शरीरकें स्वस्थ, पुष्ट एवं सुन्दर बनबैत अछि ।[236] प्रकृति एक अर्थमे मानवकें दान दइयेकऽ अपनाकें सार्थक सिद्ध करैत अछि, अन्यथा मानवक अभावमे प्रकृतिक अस्तित्वे की रहि जायत ? ओ ककरा लेल फरत ? फुलायत ककरा लेल ? मानव-सौन्दर्य परिवर्त्तनशील अथवा क्षर अछि । प्रकृतिक सौन्दर्य अपेक्षाकृत स्थायी अछि । समय पूर्ण भेला उत्तर मानव-सौन्दर्य मुरझा जाइत अछि । ओकर विकास एकटा सीमे धरि संभव अछि । मानवीय रूप-सौंदर्यक कोनो एक सर्वमान्य कसौटी वा ओकर कोनो मानदंड वा आदर्श निश्चित नहि अछि। ओकर भावना हमर स्वास्थ्य, मनोवृत्ति, जीवनक प्रति दृष्टिकोण आदि बात सभसँ निर्धारित, नियंत्रित तथा परिचालित होइछ । ओ व्यक्ति, जाति, देश एवं कालक अनुरूपें परिवर्तित होइत रहैछ । भौगोलिक परिस्थिति सेहो एकरा विशेषरूपें प्रभावित करैछ ।[237] मुदा से बात प्रकृतिक संग लागू नहि होइछ ।

एकर अतिरिक्त मानव-सौन्दर्यक बहुत किछु अंश उपयोगिता पर निर्भर करैछ । एहि दृष्टियें सुन्दरसँ सुन्दर वस्तु सेहो कुरूप प्रतीत भऽ सकैछ आ कुरूपसँ कुरूप वस्तु सेहो सुन्दर । भाव ई जे मानवीय सौन्दर्यक निर्णय बहुत किछु व्यावहारिक उपयोगितेक विचारसँ कयल जा सकैछ। जतय उपयोगिता पर न्यूनातिन्यून दृष्टि राखल जाइछ, ओतय सौन्दर्य सेहो ओही अनुपातमे उच्चकोटिक आनन्द प्रदान करैछ । जतय उपयोगिता आ शुद्ध आनन्दक दृष्टिकेर मेल भऽ जाइछ ओतय व्यावहारिक दृष्टिसँ बात बहुत अंशमे बनि जाइत अछि । मानव सौन्दर्य भावुकलोकनिक दृष्टिमे ईश्वरीय सौन्दर्यक छाया तथा पूर्वजन्मक पुण्यक परिणाम सेहो मानल जाइछ। ओ आत्मिक उच्चताक सेहो प्रकाश थिक । मानवीय सौन्दर्य ईर्ष्या, द्वेष आदि दुर्वृत्ति सेहो उत्पन्न कऽ सकैछ, जखन कि प्रकृति-सौन्दर्य आनन्द मात्र प्रदान करैछ । हँ, असाधारण मानसिक अथवा मनोवैज्ञानिक स्थितिसभमे सुखद प्रकृति सौन्दर्य सेहो दुःखद रूपें अनुभूत होबय लगैछ जे स्वाभाविक अछि । मानव-सौन्दर्य तँ संसारक महान युद्धसभक जन्मदाता रहल अछि । यूनानी कवि होमर अपन एकटा काव्य-नायिकाक सौन्दर्यक प्रसंग मे लिखलन्हि अछि : "THIS IS THE FACE THAT LAUNCHED A THOUSAND SHIPS".

मानव-सौन्दर्य, प्रकृतिक सौन्दर्यहि जकाँ, कवि अथवा अन्य कल्पनाशील भावुक व्यक्तिकेँ रहस्यक गंभीर भावनामे निमग्न कऽ सकबामे पूर्ण समर्थ होइछ। जाहि प्रकारेँ सूर्य, चन्द्र, समुद्र आदिक प्रतिञे रहस्यमय जिज्ञासा होइछ, ओही प्रकारेँ मानव सौन्दर्यक प्रतिञे सेहो भऽ सकैछ। एकर अतिरिक्त एहि सौन्दर्यक स्पष्ट एवं पूर्ण अभिव्यक्ति कला वा काव्यमे प्रयुक्त सौन्दर्यक अत्यन्त प्रसिद्ध प्रतीक तथा उपमानसभक द्वारा सेहो संभव भऽ सकैछ जे प्रकृतिक क्षेत्रक थिकैक। एहि सन्दर्भमे मानव-सौन्दर्यक प्रकृतिसँ अभिन्न सम्बन्ध अछि। आकर्षणपूर्ण मानवीय सौन्दर्य हृदयमे प्रेम-भावनाक संचार करैछ। ई प्रेम-भावना मात्र सौन्दर्यहि धरि सीमित नहि रहिकऽ समस्त - प्रकृति जगत् धरि परिव्याप्त भऽ जाइछ। भाव ई जे मानव-सौन्दर्य चतुर्दिक परसल वस्तु-जगत (मानव-कृत) केँ सेहो नीक जकाँ प्रभावित करैछ। सौन्दर्य मात्र श्याम वा मात्र गौर-वर्णहिमे नहि, ओकर निर्णय तँ वास्तविक प्रेम-भावनाक तीव्रते करैत अछि।[238] मानव-सौन्दर्यक सन्दर्भमे जखन प्रकृतिमे हमरा आनन्द (मिलनमे) वा दुःख (विरहमे)क अनुभूति होइछ, तखन प्रकृति काव्यमे उद्दीपनगत रूपमे गृहीत बुझल जाइछ। मुदा मानव-सौन्दर्यक भावनासँ सर्वथा निरपेक्ष प्रकृति-सौन्दर्यकेँ ग्रहण कयला उत्तर ओ प्रकृतिक आलंबन-गत सौन्दर्य-चित्रणक अन्तर्गत लेल जाइछ। शारीरिक सौन्दर्य एवं मानसिक सौन्दर्यक सेहो पारस्परिक सम्बन्ध होइछ। व्यक्तिक शारीरिक सौन्दर्य मोनकेँ सेहो सुन्दर बनाबय से आवश्यक नहि, परंच हृदयक सौन्दर्य (शील) बाह्य कुरूपताकेँ सेहो सुन्दर तथा रूपकेँ शतगुणा रमणीय बना दैछ। मानव प्रायः सर्वप्रथम शारीरिक सौन्दर्यहि दिस आकृष्ट होइछ, शील-सौन्दर्य, प्रकृति-सौन्दर्य, वा कला-सौन्दर्य दिस तकर बाद मे। ओना हमरालोकनि बाह्य सौन्दर्य तँ देखिते छी, मुदा जखन ओ काव्यमे वर्णित भऽ अबैत अछि, तँ ओकरामे शतगुणा अभिवृद्धि भऽ जाइछ। प्रकृति-सौन्दर्यक लेल मानव-सौन्दर्यक अपेक्षा नहि। प्रकृति मानवक अभावमे सेहो पल्लवित-पुष्पित होइत रहि सकैछ, मुदा मानव-सौन्दर्य प्रकृतिक अभावमे भने अपन अस्तित्व सुरक्षित रखबाक चेष्टा करय, ओ सजीव वा प्राणवान नहि भऽ सकैछ। यैह कारण जे कालिदास आदि कविलोकनि प्रकृतिकेँ मानवीय-रूप-सौन्दर्य-चित्रणक एक अनिवार्य अंग बनौलन्हि। वस्तुतः प्रकृति-सौन्दर्यक अभावमे मानव-सौन्दर्य अपूर्ण अछि।

ई एक सामान्य तथ्य अछि जे हमरा आँखिक सोझामे जे वस्तु प्रायः अबैत रहैछ, ओ पुनः हमरा ध्यानकेँ ओतबे आकर्षित नहि कऽ पबैछ आ

ओ करबो करैछ तँ हम ओकर प्रभाव इन्द्रिय संवेदन धरि ग्रहणकऽ कए रहि जाइत छी। मानव-सौन्दर्य केँ लेल जाय। नारी वा पुरुषक सौन्दर्यमे जे आकर्षण रहैछ, ओहिसँ स्त्री-पुरुष परस्पर परिचित रहैछ। मुदा विचार कयलासँ एकटा आर विस्तृत एवं उदात्त भूमि हमरा समक्ष दृष्टिगोचर होबय लगैछ। मानव-शरीरक रचना कतबा आश्चर्यमय, रोमांचक एवं रहस्यपूर्ण थिक। पंचतत्वक आनन्दपूर्ण उपभोगक सार शरीरक शुक्र आ ओकर बिन्दु-रूप बीजसँ अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित आ फलित रूप ई नारी आ पुरुषक सुन्दर, बलिष्ठ, भव्य तथा आकर्षक शरीर। नारी आ पुरुष दुनूक रचना कतबा कुशल आ पूर्ण ? शौर्य, प्रकाश आ ओजक केन्द्र पुरुषक मुखमण्डल, नेत्र, वक्षस्थल आ बाहुक शोभा कतबा मोहक ? ई आकार, ई गठन, ई सुडौलता-ओ महान कलाकार कोन छेनीसँ, कतबा एकाग्रताक संग, कतबा प्रसन्न मुद्रामे, वसन्तक कोन भोरहरियामे बैसिकऽ तराशलनि ! आ नारीक ई रूप ! ओकर ई तरंगायित सघन-श्याम कुंतल-राशि, सौभाग्यक गाढ़ लाल चिह्नक प्रतीक्षामे खाली सीउथक पंक्ति, स्निग्ध, सुघर, सरस कपोल, इन्दु-रश्मि युक्त चितवन, जगत्केँ विचलित करयवला नयन, आ वसन्तक समस्त उल्लास आ चन्द्र-ज्योत्सनाक समुद्रक संपूर्ण ज्वार आनयवला यौवनसँ परिपूर्ण, अमृत सदृश पवित्र दुग्ध-धार बहबैत, मातृत्व भारवाही पुष्ट-समुन्नत उरोज, आ स्निग्ध ओष्ठसँ छलछलाइत उतरैत, आत्माक संगीतसँ गुंजरित मधुर वाणी। सम्पूर्ण रचना कतबा कलापूर्ण, गम्भीर आ अबूझ ! आ पुनः एहि अनुपम कलाकृतिमे लहराइत भाव राशि ! शरीरक नस-नसमे दौड़ैत उषाक रंग सन लाल रस-धारा ! आ रक्तमे आकाशकेँ छानि देबाक, पृथ्वीकेँ विदीर्ण कऽ देबाक, समुद्रकेँ बान्हि देबाक, अतीत आ भविष्यकेँ देखि लेबाक आ मोनक सम्पूर्ण गहराइकेँ नापि लेबाक ओकर बलिष्ट आ व्याकुल जिज्ञासा, आ नर-नारीक ई पारस्परिक आकर्षण, प्रकृतिक सनातन मांगकेँ, महान आनंदक अनुभवक लेल, पूर्ण करबाक ई त्याग, समर्पण, विश्वाससँ पूर्ण उद्योग आ आयोजन। प्रकृतिक रस-मन्दाकिनीक अथाह, अकूल, अटूट ऐश्वर्यक बीच, त्रिकालकेँ मुट्ठीमे बान्हिकऽ मृत्युकेँ जीतिकऽ आ अन्धकारक छातीकेँ चीरि कऽ प्रकाशकेँ निचोड़निहार ई जोड़ा - नारी आ पुरुष, वस्तुतः अद्भुत अछि। एकर साज-सिंगार मोहक ! एकर रचना ईश्वरक सभसँ सुन्दर छन्द आ शिल्प अछि।

(3) मानव-सौन्दर्यक क्षेत्र-विस्तार :

मानव-सौन्दर्यकेँ दू भागमे विभाजित कयल जा सकैछ । (1) स्त्री-सौन्दर्य तथा (2) पुरुष-सौन्दर्य । प्रायः स्त्री-सौन्दर्य तथा पुरुष-सौन्दर्यक विस्तृत वर्णन शृंगार रसक व्यंजनेमे होइछ आ कोनो आन रसक व्यंजनामे ओतबा नहि होइछ । दोसर बात ई जे कविलोकनि नायिकाक रूप-सौन्दर्य-वर्णनहिमे विशेष मनोयोग प्रदर्शित कयने छथि, पुरुषक सौन्दर्य-वर्णनमे ओतबा नहि । तेसर, नायिकाक सौन्दर्य-वर्णनमे प्रायः बाह्य सौन्दर्य (रूप)क सबसँ अधिक वर्णन प्राप्त अछि, सौन्दर्य वा शीलक ओतबा नहि । प्राचीन कविलोकनिक लेल बाह्य-सौन्दर्य-वर्णन सेहो कवि-कर्मक एक आवश्यक अंग मानल जाइत छल । ओकरा लेल अनेक रूढ़ि (नख-शिख वर्णन, षड्ऋतु वर्णन, बारहमासा आदि परम्परा, कवि-समय वा विश्वास) केँ सेहो ग्रहण आ पालन कयल गेल अछि ।[239] रूप-सौन्दर्यक वर्णन लेल प्रकृतिसँ लेल गेल उपमान सेहो रूढ़ रूपहिमे ग्रहीत होइत रहल अछि ।[240] अतः एहि ठाम स्त्री-सौन्दर्य एवं पुरुष सौन्दर्य पर संक्षेपमे विचार कऽ लेब आवश्यक ।

(1) स्त्री-सौन्दर्य :

स्पष्टताक लेल स्त्री-सौन्दर्यकेँ दू भागमे विभाजित कयल जा सकैछ - (क) स्थूल, एवं (ख) सूक्ष्म । स्थूलमे बाह्य सौन्दर्य तथा सूक्ष्ममे अन्तः सौन्दर्य वा शील समाविष्ट रहैछ । दुनू मिलिएकऽ पूर्ण सौन्दर्यक अभिव्यक्ति करैछ ।

स्त्रीक स्थूल सौन्दर्यक अन्तर्गत काव्यमे ओकर विभिन्न अंग, आभूषण, अनुलेपन एवं चेष्टासभक वर्णन होइत अछि । अंगसभक वर्णनमे ओकर गठन, स्निग्धता, सुगढरता, सुडौलता, मृदुलता वा सुकुमारता, पुष्टता, तथा आयु, वर्ण, काठी-कद, स्वास्थ्य आदिक वर्णन होइछ ।[241] साहित्याचार्यलोकनि नायिका-सभहिक शरीरक किछु स्वाभाविक गुणसभक (शोभा, कांति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य एवं धैर्य आदि) अनुभाव (अयत्नज) केर अन्तर्गत रखलन्हि अछि ।[242] स्त्रीक परिधानक सेहो साहित्य तथा काव्यमे विस्तृत वर्णन कयल जाइछ । एहिमे वस्त्रसभक रंग आदि पर विशेष ध्यान राखल जाइछ । आभूषणसभक वर्णनमे धातु एवं पुष्पक आभूषणक पर्याप्त वर्णन होइछ । प्राचीन कविसभ हार, मुद्रिका, करघनी, पायल, कर्णफूल तथा स्वर्णवलय आदिक यथेष्ट वर्णन कयने छथि ।[243] कालिदास अपन ऋतुसंहार, रघुवंश, कुमारसंभव तथा मेघदूत आदि काव्यमे अशोक, लोध्र, नीप, शिरीष, कर्णिकार, कदम्ब, चम्पक, बेला, जूही, पारिजात, कमल तथा पाटल आदि फूलसभक तथा ओकर आभूषण-रूपसभक पर्याप्त वर्णन कयने छथि । कस्तूरी, चन्दन, केसर, इत्र, पुष्प-रज, अंजन, अलक्तक तथा सिन्दूर आदि सुगन्धित द्रव्य तथा अनुलेपन आदि स्त्री- शृंगारक प्रमुख उपकरणसभकेँ स्त्री-सौन्दर्य वर्णनक प्रसंगमे समाविष्ट कयल जाइछ । शारीरिक चेष्टा (वाणी, मुस्कान, भ्रू-निक्षेप, अंगसंचालन, पद-क्षेप आदि) सौन्दर्य-वर्द्धनमे विशेष सहायक सिद्ध होइछ । अंगज अलंकार (भाव, हाव, हेला)[244] तथा स्वभावज अलंकार[245] (जकर संख्या 18 अछि : यथा, लीला, विलास, विच्छिति आदि) केर अन्तर्गत अन्य शारीरिक चेष्टा सभक विधान साहित्य-शास्त्रमे स्त्री-सौन्दर्य-वर्णनक अन्तर्गत राखल गेल अछि । एहि प्रकारेँ सौन्दर्यक बाह्य रूपक पूर्ण विवरण काव्यसभमे प्राप्त अछि ।

सूक्ष्म-सौन्दर्यक अन्तर्गत स्त्रीक शील आदिक निरूपण कयल जाइछ । भवभूति, कालिदास, रवीन्द्र, प्रसाद आदि भारतीय कविलोकनि शीलहिकेँ सर्वाधिक महत्व प्रदान कयलन्हि अछि ।[246] विदेशी साहित्यमे सेहो एकर भव्य उदाहरण प्राप्त होइछ (यथा, शैक्सपीयरक डेस्डैमोना आदि) । शीलक[247] अन्तर्गत हम सच्चरित्रता[248], मर्यादा, लज्जा[249], सेवा[250], दया[251], त्याग[252], समर्पण, करुणा, उदारता[253] एवं विनम्रता आदि गुणकेँ राखि सकैत छी । एहि सौन्दर्यक अभावमे भारतीय नारीक सौन्दर्य निस्सार मानल जाइछ । एकर अतिरिक्त ओकर आत्मा वा मोनक सौन्दर्य-विस्तार, ओकर कल्पना एवं भावनाक सौन्दर्य (जे ओकर कला-प्रेम व्यक्त करैछ), कर्म-सौन्दर्य आदि धरि पहुँचि जाइछ । अल्पकालमे देशकेँ शत्रु-सभसँ मुक्त करबाक लेल तलवार हाथमे लेने, अरिदल-मध्य वीर ललनाक सौन्दर्य सेहो नारी-सौन्दर्यक अन्तर्गत अबैछ । ई सौन्दर्य हुनका शोभा आ महिमासँ मंडित कऽ दैछ । निदान यैह कहल जा सकैछ जे नारी-सौन्दर्यक पूर्णता स्थूल एवं सूक्ष्म सौन्दर्यक समन्वयहिमे प्राप्त होइछ ।

(2) पुरुष सौन्दर्य :

स्त्री-सौन्दर्यहि जकाँ पुरुष-सौन्दर्यक सेहो काव्यमे महत्व अछि, परंच ओकर वर्णन अपेक्षाकृत कम भेल अछि । स्त्री जकाँ पुरुषक बाह्य रूप-सौन्दर्यक ओतबा महत्व नहि, जतबा ओकर कर्म-सौन्दर्यक (लोक-कल्याणक हेतु पुरुषार्थपूर्ण कार्य यथा-दुष्ट-दलन, अनाथ-रक्षण, दीन-हीन, अबला, रोगी वा असहायक त्राण) वा शील-सौन्दर्यक । पुरुषक कर्म-सौन्दर्य विदेशी एवं भारतीय काव्यसभमे प्रायः रणक्षेत्रहिमे जाकऽ

प्रदर्शित कयल गेल अछि । ओकर प्रताप, बल एवं ओज आदिक वर्णनक सेहो विशेष महत्व अछि । परंच बाह्य वीरतासँ बढ़ि कऽ आन्तरिक वीरताक उदाहरण देखना जाइछ । रण-क्षेत्रक योद्धालोकनिसँ बढ़िकऽ आत्मजयी वीरक सौन्दर्य हमरा मुग्ध करैछ । इन्द्रिय-संयम, अहिंसा, क्षमा, कष्ट-सहिष्णुता, कर्तव्यपराणता, परदुःखकातरता, आदर्शक लेल जीवनक विसर्जन, सत्याग्रह, सेवापरायणता एवं त्याग आदि गुणमे पुरुषक वास्तविक सौन्दर्य उद्भासित होइछ । आधुनिक युगमे, जखनकि विज्ञानक कारणेँ रणक्षेत्रमे जा कऽ अपन शौर्य-प्रदर्शित करबाक बड़ कम अवसर शेष रहि गेल अछि, एहि अन्तःसौन्दर्यक महत्व विशेषरूपेँ बढ़ैत देखना जाइछ । आत्मकल्याण वा लोक-कल्याणक उच्चतेमे साधु पुरुषक जीवनक सौन्दर्य देखल जाय लागल अछि । मुदा ई सौन्दर्य कोनो नव नहि अछि । सभ युग आ सभ देशमे उक्त सौन्दर्य सर्वदा प्रकट होइत रहल अछि ।

शिशुक रूप-सौन्दर्यकेँ देखि हृदय स्वर्गीय उल्लाससँ भरि जाइछ । अतः साहित्यमे ओकर एक सुनिश्चित स्थान अछि । मुदा वास्तविक कवि वयःप्राप्त नायक-नायिकेक सौन्दर्यक विशेष वर्णन कयलन्हि अछि । ओ अपन रागात्मक हृदयक पूर्णताक परिचय देबाक हेतु एहि मानव-रूपक चित्रणमे पूर्ण भावुकताक परिचय देलन्हि अछि । बाल-सौन्दर्यमे बालकक रूप-लावण्य एवं ओकर चेष्टे सभकेँ महत्वपूर्ण स्थान देल गेल अछि । बच्चाक आन्तरिक सौन्दर्य, निष्कपटता, निश्छलता, सारल्य, निरालापन आदिक वर्णन सेहो वर्ड्सवर्थ, सूर आदि कवि द्वारा कयल गेल अछि । वात्सल्य, हृदयक व्यापक रति भावक एकटा परम महत्वपूर्ण अंग थिक । कवि तथा आचार्यलोकिन एकरा रसकोटि धरि पहुँचयबाक पूर्ण चेष्टा कयलन्हि अछि ।

संक्षेपमे यैह मानव-सौन्दर्यक मुख्य विशेषता एवं ओकर विस्तार थिक । सौन्दर्य-क्षेत्रमे एहि सौन्दर्यक पूरक अन्य सौन्दर्यक सेहो स्थान अछि जे काव्यमे पूर्ण महत्व रखैछ ।

(2) प्राकृतिक सौन्दर्य :

प्रकृति हमरा लेल अत्यधिक उपयोगी अछि । मानवक संग ओकर चिरकालिक सम्बन्ध थिकैक । ओ शुद्ध वा निष्काम आनन्दक सेहो स्रोत थिक । यैह कारण जे जीवन एवं साहित्य दुनूमे एकर महत्वपूर्ण स्थान छैक । ओ कला एवं साहित्यक मूल प्रेरणासभमे सँ एक अत्यन्त बलवती प्रेरणा अछि । प्राकृतिक सौन्दर्य कविक भाव-स्फोटक प्रबल प्रेरक होइछ ।

मानव-हृदयक राग-क्षेत्रक परिधि अत्यन्त विस्तृत एवं विशाल अछि । अन्य प्रकारक प्रेमहि जकाँ प्रकृतिक प्रति मानवक प्रेम सेहो एहि विस्तृत राग-क्षेत्रक एक महत्वपूर्ण अंश अछि । प्रकृतिक प्रति प्रेमकेँ कोने-ने-कोनो रूपमे प्रकाशित नहि कयने मानव जड़वत् भऽ जाइछ । एहि प्रेम-प्रकाशनक मूल प्रेरक प्राकृतिक सौन्दर्य थिक ।

प्रकृति-सौन्दर्यक स्पष्ट विवेचन, ओकरा तीन उपशीर्षकक अन्तर्गत विभाजित कइयेकऽ कयल जा सकैछ – (क) प्राकृतिक सौन्दर्यक विशेषता, (ख) काव्यमे सौन्दर्य-वृद्धिक उद्देश्यसँ सौन्दर्यपूर्ण कृतिक विविध उपयोग तथा (ग) प्रकृति-सौन्दर्यक निरूपण विधा ।

(क) प्राकृतिक सौन्दर्यक विशेषता

प्राकृतिक सौन्दर्यक सभसँ पैघ विशेषता ई थिक जे प्रायः सभ देशक लोक द्वारा एकरा गम्भीर प्रशंसाक स्वरमे सुन्दरे कहल जाइछ, कुरूप नहि । प्राकृतिक सौन्दर्य व्यक्ति तथा राष्ट्रक रुचि-भिन्नता, विवाद, धारणा आदिसँ फराक अछि । प्रकृतिमे हमरालोकनि अपन भावक छाया सेहो देखैत छी – यथा, क्रोध, प्रसन्नता, उमंग, उल्लास आदि । प्रकृतिक मुखमण्डल पर उक्त भावनासभकेँ देखब सहृदयताक परिणामस्वरूपेँ संभव होइछ । एकर अतिरिक्त, प्रकृतिक सौन्दर्य कोमल आ मधुर सेहो होइछ, संगहि भीषण आ परुष सेहो । किछु लोककेँ मात्र ओकर मधुर पक्षहिमे सौन्दर्यक अनुभव होइछ आ किछुकेँ ओकर कठोर पक्षमे । परंच जे व्यक्ति दुनू रूपसँ प्रेम करैछ, ओएह प्रकृतिक वास्तविक प्रेमी कहल जा सकैत छथि । मरण-धर्म्य-मनुक्ख आ प्राकृतिक पदार्थ – दुनू क्षणभंगुर अछि, मात्र ओहिमे निहित सौन्दर्येटा अजर-अमर थिक । प्रकृति अनादिकालसँ पल्लवित-पुष्पित भऽ रहल अछि आ मानवकेँ सेहो प्रफुल्लित रखैत अछि । प्रत्येक क्षण नवताकेँ धारण करब ओकर धर्म छैक, नवीन बनल रहब ओकर प्रमुख लक्षण छैक । चिर-परिचयक कारणेँ मानव-सौन्दर्यमे एक प्रकारक मोनोटानीक आबि जायब स्वाभाविक अछि, मुदा प्रकृतिमे एहन बात नहि होइछ । प्रकृति चिर नवीना बनल रहैछ। प्रकृति-सौन्दर्य उपयोगिता आदिक विचारसँ बिल्कुल भिन्न अछि । उषा, इन्द्रधनुष, नक्षत्र आदिक सौन्दर्य मात्र शुद्ध आनन्द प्रदान करबाक लेल अछि । हँ, ओ हमरा उच्चकोटिक सात्विक वा आत्मिक आनन्द प्रदान करैछ, एहि सूक्ष्म अर्थमे ओकर उपयोगिताकेँ स्वीकारल जा सकैछ। प्रकृति-सौन्दर्य हमरा मोनपर पवित्र प्रभाव छोड़ैत अछि, जकर

परिणाम स्वरूप हमर अन्तःप्रकृति परिष्कृत एवं उदार बनैछ । प्रकृति, विश्वक मूलमे प्रतिष्ठित एक नैतिक सत्तामे हमर विश्वासकेँ दृढ करैछ आ हमरा सदाचार तथा शुद्ध मानवधर्मक नैतिक पाठ पढ़बैत अछि । अनेक कवि प्रकृतिसँ ई नैतिक प्रेरणा प्राप्त कयलन्हि अछि । एकर अतिरिक्त, प्रकृति-सौन्दर्य पर मानवीय जगतक विभीषिका सभक कोनो प्रभाव नहि देखना जाइछ । दुःखक ज्वालामे जरैत संसारक बीच ओ अपनहि आनन्दोल्लासमे थिरकैत रहैछ ।[254] प्रकृति हमरामे आत्म-स्वातंत्र्यक बलवती भावनाकेँ सेहो संचारित करैछ । पवनक प्रवाह, नदीक लहरि, उमड़ैत-घुमड़ैत बादल तथा मुक्त आकाशमे चहकैत चिड़ै हमरा विश्व- जीवनक लौह-पिंजरकेँ तोड़ि-फोड़िकऽ, अनन्त मुक्ति-लोकक पक्षी बनिकऽ उड़ि जयबाक सन्देश दैत अछि । यैह प्रकृतिक मानव पर उद्धारक प्रभाव थिक । प्राकृतिक सौन्दर्य अनादि तत्वक रहस्यमय सत्ताकेँ जानबाक द्वार थिक । सौन्दर्यपूर्ण प्रकृतिकेँ देखिकऽ हमरा मोनमे अनेक प्रकारक स्वाभाविक जिज्ञासा एवं रहस्य-कौतूहल उत्पन्न होइछ – एहि सृष्टिकेँ के बनौलक ? किएक बनौलक ? आदि । एहि प्रकारेँ प्रकृतिक अन्तश्चेतनामे अवगाहन कय, ओहिमे पैसि कय ओकरा संग एकाकार भऽ गेनिहार द्रष्टा जीवनक अमर तत्वक जिज्ञासु भऽ जाइत अछि। अनेक दार्शनिक प्रकृतिकेँ ईश्वरक छाया कहलन्हि अछि । उपनिषद्क प्रतिबिम्बवाद एही भावनाक उद्‌घोष करैछ। ब्रह्म प्रकृतियेक रूपमे निर्गुणसँ सगुण भेल छथि ।[255]

प्राकृतिक प्रेम, व्यक्ति विशेषक दृष्टिसँ, मानवीय प्रेम-व्यापार पर सेहो बहुत किछु निर्भर करैछ । प्रणयक संयोगानुभूतिमे प्रकृति परमसुंदरी एवं आह्लादकारिणी दृष्टिगोचर होइछ, मुदा विरहमे ओएह क्लान्त, नीरस एवं आनन्द-रहित । एतबहि नहि, प्रकृति एहि समयमे दुःखद सेहो भऽ जाइछ आ सुन्दरक स्थान पर विकृत सेहो प्रतीत होबय लगैछ । एहि अर्थमे प्रकृति मानवीय प्रेम-व्यापार पर निर्भर नहि करैछ, प्रत्युत प्रेम-व्यापारक वातावरण-जन्य-अनुभूति प्रकृतियेँ पर निर्भर करैछ। मुदा, ई प्रकृति सौन्दर्यक मानव-सापेक्ष रूप थिक आ एकर विचार काव्यक उद्दीपनक अन्तर्गत कयल जाइछ ।

प्रकृतिकेँ मनुष्य एतबा सुखद आ आनन्दमयी मानैत अछि जे ओ पृथ्वी पर रहियो कय अपन मानसिक स्वर्गक कल्पना कऽ लैत अछि। वैष्णव भक्ति सम्प्रदायमे जे गोलोक आदिक कल्पना कयल गेल अछि से

प्रकृतिक सुन्दर रूप-व्यापारहिक आधार पर । ऋषिलोकनि सेहो प्रभु-महिमाक गान करबाक हेतु प्रकृतियेकेँ आश्रय बनौलन्हि । ऋषि ई कहि-कहि कय स्तवन करैछ जे प्रभु ! ई सूर्य, चन्द्रमा, तारा, समुद्र, पर्वत आदि सब अपनहिक लीलाक विस्तार थिक ।

प्रकृतिक उपर्युक्त विशेषता, ओकर मुख्यगुण सौन्दर्य पर आश्रित अछि । एहि सौन्दर्यक बड़ पैघ अंश ओकर बाह्य रूप-छाया, प्रकाश, रंगसभक चकमकी, शीतलता, उज्ज्वलता, पवित्रता, माधुर्य आदि थिक आ शेष ओहिसँ प्रकाशित भेनिहार अनादि आत्मा । अनादिकालसँ प्रकृति हमरासभकेँ अन्न, जल, पवन, प्रकाश, नाना प्रकारक बहुमूल्य रत्न आदि स्वास्थ्यप्रद एवं जीवनोपयोगी प्रभूत सामग्री प्रदान करैत आयल अछि । एहि उपयोगिताक कारण सेहो, ज्ञात-अज्ञात रूपमे ओ हमरा लेल सुन्दर एवं रमणीय सिद्ध भेल अछि । वस्तुतः मानव-जगत एवं वस्तुसभक सौन्दर्य सेहो प्रकृतियेपर आश्रित अछि ।

(ख) काव्यमे प्रकृतिक विविध उपयोग :

प्रकृति-सौन्दर्यसँ आकृष्ट भऽ कय कवि अपन वर्णनकेँ सजीव एवं काव्य-शैलीकेँ सुन्दर तथा परिपुष्ट बनयबाक लेल प्रकृतिसँ यथेष्ट सामग्री ग्रहण करैछ । काव्यमे प्रकृतिकेँ अनेक रूपमे ग्रहण कयल जाइछ, यथा – (1) आलंबन रूपमेँ : (2) उद्दीपन रूपमेँ (3) मानवीकरणक रूपमेँ (4) अलंकार-विधानमे (5) प्रतीक-विधान मे (6) रहस्य-सत्ताक अभिव्यक्तिक हेतु (7) नैतिक उपदेश-प्रकाशनक लेल आ (8) पृष्ठभूमि तथा वातावरणक सृष्टिक लेल ।

(1) आलंबन : प्रकृति-निरूपणक विभिन्न रूपसभमे ओकर आलंबनगत रूप सर्वाधिक महत्व रखैछ । जखन प्रकृतिक समग्र रूप, पदार्थ एवं प्रकार कविक प्रति भावक स्वतंत्र आलंबन भऽ जाइछ आ ओ हुनकालोकनिक अन्तःसत्तापर व्यापक एवं गम्भीर प्रभाव स्थापित कऽ लैछ, तखनहि ई रूप पूर्णतया प्रतिष्ठित होइत अछि । एही स्थल पर कविक प्रकृति सम्बन्धी चेतनाक सप्राणताकेँ देखल जाइछ । प्रकृतिकेँ आलंबन रूपमे ग्रहण कयला उत्तर दुइये स्थिति भऽ सकैछ – (1) कवि प्रकृतिक प्रति उन्मुक्त प्रेम-भावक व्यंजना करय, (2) अथवा, ओ प्राकृतिक दृश्य-चित्रण, सेहो प्रकृतिक प्रति हृदयमे संचित प्रेमहि द्वारा संभव भऽ सकैछ । एहि दृश्य-चित्रणमे निम्नलिखित रूपमे कविक सूक्ष्मदर्शिता प्रदर्शित होइत अछि –

(क) प्रकृतिक रूप-विस्तार :

कविक हेतु प्रकृतिक रूप-विस्तारक ज्ञान अति आवश्यक अछि। रूप-विस्तारमे ओ सम्पूर्ण दृश्य-प्रसार समाविष्ट अछि, जे पृथ्वी, आकाश, एवं समुद्रमे देखना जाइछ । पर्वत, मैदान, मरुभूमि, कुंज, वृक्ष, पौधा, लता-पत्र, छाया, घास-पात, फल-फूल, पशु-पक्षी, समुद्र-झील, नदी, आकाश, मेघ, बिजली, नक्षत्र, सूर्य-चन्द्रमा, पाला, धुआँ, कुहेस, वर्षा, पवन, चन्द्रमण्डल, आकशगंगा, नीहारिका, उषा-संध्या, इन्द्रधनुष, अन्हर-बिहाड़ि, रौद-इजोरिया, किरण आदि एहि दृश्य-विस्तारक अन्तर्गत अबैछ ।

(ख) गति-विधिक निरीक्षण : एहिमे कवि वस्तु-व्यापारसभक सूक्ष्म गति-विधिक एहन अंकन करैछ जे ओहिसँ ओकर (कविक) दृष्टिक निकटदर्शिता सूचित होइछ । जाधरि प्रकृतिक प्रति राग नहि होयत, ताधरि ई कार्य संभव नहि भऽ पबैछ ।

(ग) वर्ण वा रंग : जाहि प्रकारेँ प्रकृतिक वस्तु-व्यापारसभक गति-विधिक निरीक्षण कयल जाइछ, ओहिना काव्य-चित्रणमे पूर्ण सजीवता अनबाक लेल कवि शब्दक माध्यमसँ रंगक संवदेना सेहो उत्पन्न करैछ। कवि प्रकृति प्रेमी होइछ एकर अनुमान एही बातसँ लगैछ जे ओकर वर्ण-भावना कतबा विस्तृत, सूक्ष्म एवं गँहीर होइछ । जे कवि उपरी दृष्टियेसँ प्राकृतिक रूपसभकेँ देखि अपन काज चला लैछ, ओ कारी, पीयर, हरियर, लाल, नील वा उज्जर - एहि मौलिक वा स्थूल रंगसभक उल्लेख कऽ कय रहि जाइछ । मुदा जनिक सूक्ष्म दृष्टि रंगसभक विभिन्न भेद-प्रभेद, छाया आ मिश्रण सभकेँ ताकि लैछ, ओएह अपेक्षाकृत विशेष सफल कवि कहयबाक अधिकारी छथि । रंगक प्रति रुचि सेहो आयु, लिंग, जाति, मनोदशा आदिक अनुसार सर्वदा बदलैत रहैछ । अतः एहि सम्बन्धमे कोनो नियम नहि बनि सकैछ । लाल तथा नील रंग प्रायः सर्वाधिक प्रिय होइछ तथा नारंगी एवं पीयर सभसँ कम। पुरुषकेँ नील रंग सभसँ बैसी नीक लगैछ आ स्त्रीकेँ लाल । हमरालोकनिक रुचिक क्रम सामान्यतः एहि प्रकारक रहैछ - नील, लाल, बैगनी, हरियर, नारंगी आ पीयर ।[256]

(घ) नाद-व्यंजना : हमरालोकनिक चारूभर नाना प्रकारक ध्वनि सुनाइ दैछ - पक्षीसभक कलकूजन, भ्रमरक गुंजार, लहरक कल-कल ध्वनि, वायु-विकम्पित वृक्षक मंजुल मर्मर-स्वर, झिंगुरक झंकार, मेघ-गर्जन, संगीतक तान आदि । निपुण कवि नादानुयायी शब्दसभक प्रयोग द्वारा दृश्यान्तर्गत अनुभूत ध्वनिसभक चित्रण करैत छथि ।[257]

(ङ) गन्धक संवेदना - दृश्यकेँ सजीव बनयबाक हेतु कविलोकनि गन्धक संवेदना सँ सेहो बेस मार्मिककतापूर्वक परिचय करबैत छथि । अधिकांश कवि आँखिसँ सम्बन्धित विषयसभक तँ वर्णन करैत छथि, मुदा गंध दिस बड़ कम ध्यान दैत छथि । ओ मीठ आ तीव्र गंध दिस तँ आकर्षित होइत छथि, मुदा कड़ू, नुनछड़ाइन वा एहने अन्य प्रकारक गन्ध दिस ध्यान नहि दैत छथि। समुद्र-तट पर, पहिल वर्षाक दिन जोतल धरतीसँ, साओन-भादवक कड़कड़ौआ रौदमे जरैत जंगली लता-पत्रसँ, स्टेशन वा फैक्ट्रीसभमे विशेष प्रकारक गन्धक अनुभव होइछ । पुष्पहार, इत्र, सुवासित वस्त्र, प्रभात-पवन, अनुलेपन आदि द्रव्यसभसँ गन्ध अयबे करैछ । यद्यपि स्पर्श एवं गन्धक संवेदनासभसँ सौन्दर्यक पर्याप्त सम्बन्ध अछि, तथापि सौन्दर्यचिंतनमे एकरासभकेँ विशेष महत्वपूर्ण स्थान नहि देल जाइछ । ओ पदार्थ जे आँखि आ कानसँ सम्बन्ध रखैछ तथा दृष्टिसँ बेसी दूर अछि, ओकरेसभक प्रतियेँ हमर सौन्दर्य-भावना सभसँ अधिक प्रबल होइछ । जे अत्यन्त लगमे रहैछ, ओकरा प्रति जिज्ञासा तथा कौतूहल सेहो न्यून मात्रामे होइछ । स्वाद, स्पर्श तथा गन्धक प्रति सेहो यैह बात मनोवैज्ञानिकलोकनि निश्चित कयलन्हि अछि ।[258]

(च) स्पर्शक संवेदना :

त्वचाक माध्यमसँ प्राप्त मृदु तरल अनुभूति, वाणी प्राप्त करयबाक लेल कवि हृदयकेँ गुदगुदा कय संचालित कऽ दैछ । शरद-शशिक रेशमी रश्मि, जाड़क दुपहरियाक सुखद रौद, प्रातः समीर, श्याम-शीतल छाहरि एवं कनक-किरण आदिक स्पर्श पुलकित कयनिहार होइछ । कवि उपर्युक्त संवेदनासभक अनुभूति करैछ ।

(2) उद्दीपन - प्रकृतिक उद्दीपन रूपमे प्रयोग, एक अत्यन्त व्यापक प्रयोग अछि । एकरा अन्तर्गत प्रकृतिक प्रति कविक स्वतंत्र अनुराग व्यक्त नहि भऽ कय, मानव-सापेक्षेँ रूप प्रकट होइछ । प्रकृति मानवक सुखमे सुखी आ दुःखमे दुःखी दृष्टिगत होइछ । उद्दीपन रूपमे प्रकृति जड़ सेहो भऽ सकैछ आ चेतन सेहो ।

(3) मानवीकरण : मानवीकरणक लेल प्रकृतिकेँ एक चेतन सत्ताक रूपमे कल्पित करब अनिवार्य होइछ । मानवीकरणक अर्थ अछि प्रकृति वा ओकर पदार्थसभकेँ चेतन मानव जकाँ व्यवहार करैत - हँसैत, बजैत, गबैत आ कनैत देखाओल जायब । एहिमे कविक प्रकृतिक संग साहचर्य किंवा मानसिक तादात्म्यक कारण निकटतम सम्बन्ध (माय, प्रिया,

सखी आदि) रूपमे स्थापित भऽ जाइत अछि। कखनो-कखनो तँ कवि मात्र ओकर चेष्टासभक वर्णन कऽ कय रहि जाइछ, मुदा कखनो पारस्परिक काल्पनिक संभाषण आदि अन्य व्यवहारसभक सेहो कल्पना करैछ।

(4) अलंकार-विधान : प्रकृति अलंकरण (उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा अदि)क लेल सेहो पुष्कल सामग्री प्रदान करैछ। मानव-सौन्दर्यक वर्णनमे अलंकारसभहिक माध्यमसँ कवि सौन्दर्य-भावनाकेँ चमत्कारपूर्ण बनबैत छथि। काव्यक प्रसिद्ध उपमान (चन्द्र, सूर्य, कमल, अलि, सागर, नक्षत्र आदि) कविकेँ प्रकृति-क्षेत्रहिसँ प्राप्त होइछ। प्रकृतिक क्षेत्रसँ विभिन्न उपमानसभक चयन करब ई सिद्ध करैछ जे मानवक अपेक्षा प्रकृति अधिक सुंदर अछि। मुदा प्रतीप अथवा व्यतिरेक आदि अलंकारसभक द्वारा प्रकृतिक अपेक्षा मानवेकेँ अधिक सुन्दर देखायब कवि-परिपाटी अछि। ओहुना उपमानकेँ उपमेयक अपेक्षा अधिक सुन्दर होयब आवश्यक अछि।

(5) प्रतीक-विधान : प्रतीक अवचेतन मोनमे पड़ल इच्छा, कुंठा आ दमित वासनाक छद्म अभिव्यक्ति करैछ। प्रतीकक एहि छद्म अभिव्यक्तिमे सम्बद्धता आ अनर्गल बात नहि रहैछ, प्रत्युत् ओकर विश्लेषण कयलापर निश्चित धारणा आ निश्चित विचारक पता चलैत अछि। मनोवैज्ञानिक लोकनिमे फ्रायड, एड्लर, युंग, अर्कोस्ट, जोन्स, मिलर, सिल्वरर, पद्मा अग्रवाल आदि स्वप्न-प्रतीकक मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कयने छथि। फ्रायड, युंग, अर्नेस्ट, जोन्स, मिलर, सिल्वरर आदि स्वप्न-प्रतीक पर विस्तृत विचार व्यक्त कयने छथि।[259] एहिना प्रकृतिक किछु रमणीय पदार्थ उदात्त भावनाक व्यंजना करैछ। ई पदार्थ उपमान सभक रूपेँ मे नहि प्रयुक्त होइछ, बल्कि मानव-हृदयमे परंपरासँ सुप्त अनेक भावनासभकेँ जगबैत सेहो अछि। दीपकक लौ, चातक, किरण, कमल, चन्द्रमा, मीन आदि पदार्थ क्रमशः मूक व्यथा, अतृप्त तृषा, आनन्दक प्रकाश पवित्रता, शीतलता, तड़फड़ाहटि आदि मानसिक स्थितिसभक प्रतीक अछि। एहि प्रतीकसभमे हृदयकेँ वेगपूर्वक आलोकित करबाक पर्याप्त क्षमता रहैछ।

(6) रहस्य सत्ताक अभिव्यक्ति :- प्रकृतिकेँ उपरी दृष्टिसँ देखनिहार व्यक्तिकेँ गंभीर भावनाक अनुभूति नहि भऽ पबैछ। एकरा लेल प्रकृतिक सामीप्य आ अनुशीलन अनिवार्य अछि। जिज्ञासा एवं कौतूहलक वृत्ति मानव-मोनक एक मूल वृत्ति थिक जे प्रायः सभ भावुक व्यक्तिमे न्यूनाधिक रूपमे पाओल जाइछ। मुदा ओही कविमे स्वाभाविक रहस्यभावना

पाओल जाइछ, जे प्रकृतिक सभ रूप, ओकर सभ विविधता तथा सभ मनोदशाक एकाग्र भऽ कऽ अवलोकन कयने रहैछ। जे व्यक्ति प्रकृतिक शांत, सौम्य, मधुर, उदात्त एवं भीषण रूपसभक रोमांच एवं पुलकक संग अनुभव कयने रहैछ, ओकर जिज्ञासा वा रहस्य-भावनामे स्वाभाविकता एवं जीवन्तता पाओल जाइछ। रहस्यक भावना ओना तँ, मानव आ प्रकृति-दुनूक सौन्दर्य सँ उत्पन्न भऽ सकैछ, मुदा कवि द्वारा प्रायः ई प्रकृति-सौन्दर्यसँ उद्भूत देखाओल जाइत अछि।

(7) उपदेशात्मकता :- काव्य-क्षेत्रमे छुच्छ नैतिक उपदेशक कोनो महत्वपूर्ण स्थान नहि। ओकरहि जखन शैलीमे ढारिक व्यक्त कयल जाइछ तँ ओ अवश्य ग्रहणीय भऽ जाइछ। एहि कार्यकेँ प्रभावक रूपमे सम्पादित करबाक हेतु कविलोकनि प्रकृतिकेँ चुनैत छथि। दृष्टान्त रूपमे प्रकृतिक अनेक क्रिया-कलापकेँ प्रस्तुत कयल जा सकैछ।

(8) पृष्ठभूमि आ वातावरणक सृष्टि :- प्रबन्ध-काव्यमे, कोनो गंभीर स्थिति वा प्रसंग-स्वरूप तथा भावोत्कर्षक निमित्त प्रकृति द्वारा पृष्ठभूमि एवं वातावरणक निर्माण कयल जाइत अछि। मात्र वातावरण प्रधान कविता सेहो दृष्टिगत होइछ, जाहिमे मुख्य वर्ण्य-वस्तु तँ निमित्त मात्रे रहैछ, प्रकृति-चित्रणहि ओहिमे प्रधान भऽ जाइत अछि। वस्तुतः पृष्ठभूमि तथा वातावरणनिर्माण सेहो आलंबनगत चरित्र-चित्रणक अन्तर्गत बुझबाक चाही, कारण दुनूमे कवि अपन मौलिक प्रतिभाकेँ प्रदर्शित करैछ जे विशद्-प्रकृति-चित्रणमे अभीष्ट मानल जाइछ। पृष्ठभूमि एवं वातावरण-चित्रणमे सबसँ पैघ साम्य यैह होइछ जे दुनू मुख्यतः प्रबन्ध-काव्यमे मानव-प्रसंगमे व्यवहृत होइछ आ न्यूनाधिक रूपमे काव्य-सौन्दर्य-वर्द्धनमे सहायक होइछ, मुदा वैषम्यक कएक आधार भूमि देखना जाइछ। पृष्ठभूमिक रूपमे वर्णित प्रकृति-चित्रणक मुख्य विषयसँ परोक्ष एवं निष्क्रिय संबंध दृष्टिगोचर होइछ, जखन कि वातावरणक सम्बन्ध निकटतम, मुख्य तथा प्रत्यक्ष होइछ। पृष्ठभूमिक संकेतमात्र कऽ देब पर्याप्त होइछ, मुदा वातावरणक किछु विस्तृत वर्णन अपेक्षित मानल जाइछ। पृष्ठभूमिक चित्रणमे कवि मानवजीवन एवं प्रकृतिक वैषम्य अथवा विरोध वा साम्यक झलक देखाकऽ मार्मिक प्रभाव उत्पन्न करैछ। संक्षेपमे, पृष्ठभूमिक रूपमे चित्रित प्रकृतिदृश्य, चित्रक अलंकरण किंवा कोनो गँहीर संकेतक लेल प्रयुक्त होइछ, मुदा वातावरणक रूपमे चित्रित प्रकृतिक गँहीर प्रभाव पात्रसभक चरित्रपर घटित करबाक लेल

देखाओल जाइछ । काव्यमे प्रकृतिक विभिन्न प्रयोग मूलतः ओकर सौन्दर्यक कारणेसँ होइत अछि ।

(ग) प्रकृति-सौन्दर्य-निरूपणक विधि

प्रकृति-सौन्दर्यक अनुभव कय कविक भावना अपन अभिव्यक्तिक लेल मुख्यतः दुइये मार्गक अनुसरण करैछ, (1) गंभीर भाव-व्यंजना, तथा (2) प्रकृति-चित्रण ।

(1) भाव-व्यंजना :- भाव-व्यंजनामे प्रकृतिक रूप-व्यापारसभक भिन्न-भिन्न सूक्ष्म व्यौरासभ पर ध्यान रखबाक आवश्यकता होइछ । ई भाव-व्यंजना प्रकृतिक प्रति प्रगाढ़ प्रेम रखलासँ उत्पन्न भऽ सकैछ । कवि प्रकृतिक रूप-व्यापारक समष्टिकेँ समग्र रूपमे आत्मसात् कय, अलौकिक एवं बलवती भावनासँ आत्म-स्फूर्त भय जाइछ । ई भावना एतबा प्रबल होइछ जे ओ भोरहरियाक चिड़ै जकाँ भाव-विह्वल भऽ गुनगुनाय लगैछ ।

(2) प्रकृति-चित्रण :- प्रकृति-चित्रण सेहो प्रकृतिक प्रति प्रगाढ़ प्रेमसँ उत्पन्न होइछ । जाधरि कवि तल्लीनतापूर्वक प्रकृतिक सूक्ष्म निरीक्षण नहि करैछ, ओ प्रकृति-चित्रणक हेतु उपयुक्त प्रेरणा नहि प्राप्त कऽ पबैछ । प्रकृतिक यथातथ्य चित्रण वस्तुतः चित्र-कलाक क्षेत्र थिक। काव्यक क्षेत्र गत्यात्मक (DYNAMIC) सौन्दर्यक क्षेत्र अछि ।[260] यद्यपि काव्यमे प्रकृतिक चित्रण वाल्मीकि, कालिदास प्रभृति कविलोकनिक काव्यसभमे पाओल जाइछ, परंच प्रकृति-चित्रणक सम्बन्धमे अनेक विद्वान एकमत नहि प्रतीत होइत छथि । कतहु-कतहु तँ हुनकालोकनिमे पूर्ण विरोध पाओल जाइछ । क्यो काव्यमे प्रकृतिकेँ आलंबन रूपमे चित्रित करबाक पक्षमे छथि, तँ क्यो प्रकृति-चित्रणकेँ काव्य-क्षेत्रक वस्तुए नहि मानैत छथि । विपक्षक विद्वानक धारणा छन्हि जे प्रकृतिक खंडशः अभिव्यक्ति पूर्ण अभिव्यक्ति नहि । हिनकालोकनिक दृष्टिमे वास्तविक कवि कोनो प्राकृतिक वस्तु वा दृश्यक एक-एक अंग अथवा अवयव केँ अलग-अलग नहि देखिकऽ ओकर सामूहिक सौन्दर्यक- प्रभावकेँ धर दऽ देखैछ आ एहि प्रकारेँ देखबासँ हुनका जे किछु प्राप्त होइछ ओकरहि व्यंजना ओकर वास्तविक क्षेत्र थिक । रवीन्द्रनाथ प्रकृतिक समग्र सत्ताकेँ भाव-रूपमेँ अंकित करबहिकेँ श्रेयस्कर बुझैत छथि ।[261] मुदा अबरक्राम्बे प्रभृति समीक्षक दृश्य-चित्रण आ भाव-व्यंजना दुनूक मिश्रित रूपहिमे काव्यक सिद्धि मानिकऽ समन्वयक प्रयत्न करैछ। वस्तुतः दुनू अतिवादक ई मध्य-मार्ग सर्वोत्तम बुझना जाइछ ।[262]

(3) वस्तुगत सौन्दर्य

मानव-सौन्दर्य तथा प्रकृति सौन्दर्यक अतिरिक्त एक प्रकारक सौन्दर्य आओर होइछ जे आविष्कार बुद्धिसँ उत्पन्न मानव-कृत वस्तुसभमे पाओल जाइछ । एहि सौन्दर्यकेँ दू भागमे विभक्त कयल जा सकैछ - (1) मानवकृत उपयोगी वस्तुसभक सौन्दर्य, आ (2) मानवकृत कलाकृति सभक सौन्दर्य । पलंग, मेज, कुर्सी, संदूक, रुमाल एवं अंगूठी आदिसँ पहिल प्रकारक, तथा कोनो सुन्दर नगर, प्रासाद, मंदिर, कपड़ा पर काढ़ल गेल बेलबुट्टी वा डिजाइन आदिमे दोसर प्रकारक सौन्दर्य रहैछ । एहि दुनू प्रकारक सौन्दर्यक बीच एकटा सीमा-रेखा खीचब महा कठिन अछि, कारण उपयोगी पदार्थ, विशेष कला-चातुर्य्यसँ निर्मित कयल गेला पर उच्चकोटिक कलाकृति सदृश सौंदर्य धारण कऽ लैछ, आ कलाकृति मानल जायवला बहुतो वस्तु न्यूनाधिक रूपमे दैनिक उपयोगक तँ होइतहि अछि, यथा, सुंदर भवन आदि । बहुतो वस्तु मात्र शुद्ध कला-क्षेत्रहिक होइत अछि, ओकर कोनो व्यावहारिक उपयोगिता नहि, यथा, ताजमहल, सुन्दर चित्र वा मूर्ति आदि । उपयोगिताक क्षेत्र प्रायः वस्तुक टिकाउपन, इद्रियक तृप्ति तथा अन्य उपादेयतेँ धरि रहैछ। जे पदार्थ एहि व्याहारिक उपयोगितासँ जतबे फराक रहैछ, ओ ओतबहि कलापूर्ण मानल जाइछ ।[263] संगीत आ काव्य आदि सेहो मानवकृत कला थिक, मुदा ओ नेत्रक विषय नहि भऽ कऽ अनुभूतिक विषय अधिक अछि, तेँ एकर विवेचन आगाँ कलागत सौन्दर्यक अन्तर्गत कयल जायत ।[264] संगीत आ काव्य आदिमे बाह्य सौन्दर्यक सेहो अंश रहैछ। संगीतमे स्वर, लय, मूर्च्छना, आ कवितामे अलंकार आदि ओकर बाह्य सौन्दर्य थिक जतय दुनूक संयोग होइछ, भाव-राशि हृदयकेँ आनन्दित करैछ, बाह्य उपकरण कानकेँ मुग्ध करैछ । एहना स्थितिमे मानवकृत पदार्थक सौन्दर्यक दुनू भेदकेँ ध्यानमे राखि कोनो लक्षण निर्धारित करब कठिन होइछ । अतः एहि दुनूक पृथक्-पृथक् विशेषतेँ केँ स्पष्ट करब उपयुक्त होयत ।

साधारणतः उपयोगी वस्तुसभक प्रति हमरालोकनिक हृदयमे सूक्ष्म भावना विशेष रूपेँ नहि रहैछ । ओकर रूप-रंग, आकार-प्रकार आदिक प्रशंसे मात्र रहैछ । मुदा कौखन एहि उपयोगी पदार्थसभमे गँहीर सौन्दर्य समाहित भऽ जाइछ । जकरासँ हमरा प्रेम होइछ, ओकरासँ सम्बन्धित सभ वस्तु हमरा लेल प्रिय वा सुन्दर भऽ जाइछ । विशेष परिस्थिति वा मनोदशा (MOOD) मे हमर सौन्दर्य-भावना जखन अपन प्रेम-पात्रसँ उछलिकऽ समस्त

प्रकृति-जगत वा वस्तुजगत धरि परिव्याप्त भऽ जाइछ, तँ सम्बन्ध-भावनाक कारणसँ उपयोगी-अनुपयोगी, सुन्दर-असुन्दर सभ पदार्थ हमरा लेल अतीव सुंदर सिद्ध होइछ । दोसर, पुरस्कार आदि रूपमे प्राप्त साधारणसँ साधारण वस्तु सेहो आकर्षणसँ पूर्ण भऽ जाइछ। अपन कोनो स्नेही वा आत्मीय व्यक्तिक मृत्युक पश्चात् ओकर प्रत्येक वस्तु-पुरान पत्र, वस्त्र, फोटो, पोथी, आदि - हमरालेल एकटा अनिवार्य सौन्दर्य धारण कऽ लैछ । भाव ई जे उपयोगी वस्तुसभक प्रतिये सौन्दर्य-भावना कोनो विशेष कारणवशे होइत अछि। ओना उपयोगी वस्तुसभमे कला-तत्व वा सौन्दर्य-तत्वक अभावे जकाँ रहैछ । तेँ शुद्ध-कला साहित्य-चिंतनमे सूक्ष्म भावनासभहिक सरस निरूपण होइछ । जाहि पदार्थसभमे सौन्दर्य तत्व अधिकाधिक रहैछ, ओकरसभक आनंददायिनी शक्ति सेहो ओही अनुपातमे बढ़ल रहैछ । मानव-कृत कलाकृतिसभमे स्थापत्य कलासँ लऽ कय काव्य धरि-क्रमशः निर्माणक उपकरणसभक (पत्थर, रंग, स्वर, शब्द आदि) सूक्ष्मताक संग-संग आनन्द प्रदान करबाक क्षमता सेहो उत्तरोत्तर प्रबर्द्धमान होइत चल जाइछ ।[265]

(4) कलागत सौन्दर्य

कलागत सौन्दर्य, मनोजगतक सौन्दर्य थिक, जकर सामग्री बाह्य जगतसँ प्राप्त होइछ । बाह्य जगतक सामग्री जखन अन्तःकरण (बुद्धि, भावना, कला, अनुभूति आदिक केन्द्र) मे जाकऽ आ ओहि ठामक विशिष्ट प्रक्रिया सभमेसँ निकलि कऽ, बाहरी जगतमे चित्र, संगीत, काव्य आदि रूपमे पुनः लौटिकऽ अबैछ, तखन ओ कलागत सौन्दर्यसँ सम्पन्न मानल जाइछ । एहि प्रकारेँ कला अपन मूल सामग्रीसँ पर्याप्त रूपमे परिवर्तित भऽ कऽ उपस्थित होइछ । एहि परिवर्त्तनमे ओ सौन्दर्य उत्पन्न होइछ, जकर सृष्टि उच्च कोटिक आनन्द लेल, कला करैत अछि ।[266]

आकर्षण आ रमणीयता सौन्दर्यक मौलिक आ महत्वपूर्ण उपादान थिक । आकर्षण होइत अछि सुन्दर वस्तुक बाह्य रूपक प्रति, आ रमणीयताक अनुभव होइत अछि ओहि वस्तुक भीतरी भावनाक तर मे पैसला उत्तर । प्रकृति-सौन्दर्य आ वस्तु-सौन्दर्यमे उक्त दुनू उपादान उपस्थित रहैछ । अन्य सौन्दर्य जकाँ कला वा काव्यक सेहो सौन्दर्य होइछ। स्थापत्य, मूर्ति, चित्र आदिसँ सम्बन्धित कला सभ मुख्यतः आँखियेक विषय होइछ । एहिमे उक्त दुनू उपादान रहैछ । परंच संगीत तथा काव्य चाक्षुष-माध्यमसँ नहि, श्रवण ओ भावनेसँ आस्वाद्य होइछ। अतः ओ कलासभक अपेक्षाकृत सूक्ष्म मानल

गेल अछि । काव्यक साधन वा माध्यम शब्द-प्रतीक मात्र भेलासँ ओ सभ ललितकलासभमे सभसँ अधिक सूक्ष्म आ श्रेष्ठ मानल जाइत अछि ।

काव्यगत सौन्दर्य अन्य पदार्थ जकाँ बाह्य चर्म-चक्षुसँ तँ नहि दृष्टिगत होइछ, मुदा ओकर मानसिक अनुभूतिये संभव थिक । शब्दसभमे जे चित्र वा बिम्ब होइछ, ओ पाठक वा श्रोताक भावना-पटल पर प्रतिबिम्बित भऽ कऽ ओकरा भाव-विभोर करबाक क्षमता रखैत अछि । काव्यक एक ई बड़ पैघ विशेषता थिक जे, जे वस्तु-व्यापार प्रत्यक्ष जगतमे हमरा प्रभावित वा द्रवित नहि करैछ, ओ काव्यमे चित्रित वा वर्णित भऽ कय हमरा तुरन्त रसमग्न कऽ दैत अछि वा कऽ सकैत अछि। कलाक ई स्वर्ण-स्पर्श समस्त स्थूल, रूपहीन आ उपेक्षितोकेँ सूक्ष्म, सरस आ रमणीय बना दैछ । कारण ई अछि जे काव्य तथ्य वा सिद्धान्तक परिगणन वा निर्देशमात्र नहि करैछ ।[267] प्रत्युत, पाठकक हृदय पर प्रभाव छोड़बाक लेल अपन चित्र-विधायिनी कल्पनाक बलसँ एहि रूपेँ चित्र अंकित करैछ जे पाठको सक्रिय भऽ कऽ, अथवा ग्राहक-कल्पनाक बलसँ, भावना-पटल पर अंकित ओहि मूर्ति वा प्रतिबिम्बसभकेँ दृढ़तापूर्वक ग्रहण कय, ओहिमे तन्मय भऽ जाइछ । दोसर बात ई अछि जे कवि यदि चित्रक किछु संकेत छोड़ि जाइछ तँ पाठक अपन कल्पनासँ ओकरा पूरा कऽ लैछ । ई काज पाठककेँ सक्रिय मानसिक सहयोगी बनिकऽ करय पड़ैछ । एहि समस्त मानसिक प्रक्रियामे ओकरा एकटा अभिनव आ अनिर्वचनीय आनन्दक प्राप्ति होइछ । यैह मानसिक आनन्द, रस वा कलागत सौन्दर्यक अनुभव अछि। उक्त सौन्दर्यानुभूति, अन्य पदार्थक सौन्दर्यानुभवसँ विशिष्ट अछि।

काव्य-जगतमे जे बिम्ब-विधान होइत अछि, ओकर वास्तविक आधार बाहरी जगतक रूप-व्यापारे थिक । एही रूप-व्यापार सभक जखन काव्यमे वर्णन कयल जाइछ आ ओहि वर्णन सभकेँ पढ़ला उत्तर ओकर मानस-मूर्तिसभ हृदयमे अंकित होइछ, तखन, ओकर सौन्दर्य, अनेक विशिष्ट मनोवैज्ञानिक पदार्थसँ, मिश्रणसँ, प्रत्यक्ष जगत केर पदार्थक सौन्दर्यसँ कइयेक गुणा बढ़ि जाइछ । यैह ओहि रूप-व्यापारक कलागत-सौन्दर्य कहबैत अछि । बाहरी जगतक जे पदार्थ हमरा साधारणतः आकृष्ट नहि करैछ, ओएह, कवि-कल्पनाक माध्यमसँ जखन हमरा भावना-पटलपर पहुँचैत अछि, तँ ओहिमे एक प्रकारक विचित्र मोहिनी उत्पन्न भऽ जाइछ । यैह मोहिनी कला-गत सौन्दर्यक प्राण थिक ।

उक्त कलागत सौन्दर्य भारतीय साहित्य-शास्त्रक सभ सम्प्रदायमे (रस, अलंकार, रीति वा गुण, वक्रोक्ति, ध्वनि तथा औचित्य सम्प्रदाय) समानभावे स्वीकृत अछि। रसवादी एकरा तँ काव्यक आत्मे मानैत छथि।[268] अलंकारवादी एहि सूक्ष्म सौन्दर्यकेँ मात्र अलंकारहिमे मानैत छथि।[269] गुण वा रीति सम्प्रदायक आचार्य सौन्दर्यक सत्ता काव्यगुण वा रीतिमे मानैत छथि। वामनक स्पष्ट मत यैह छन्हि।[270] वक्रोक्ति- जीवितकार कुन्तक एहि काव्य-सौन्दर्य केँ वक्रोक्तिमे मानैत छथि।[271] आनन्दवर्धन, मम्मट तथा पंडितराज जगन्नाथ आदि आचार्य ओकरा ध्वनिमे मानैत छथि। आनन्दवर्धनक धारणा छन्हि जे जाहि प्रकारेँ रमणीक वास्तविक सौन्दर्य वा लावण्य ओकर अंगक सौन्दर्यसँ अलग रहैछ, ओही प्रकारेँ काव्यक सौन्दर्य वाच्यार्थसँ दूर, प्रतीयमान अर्थ वा ध्वनिमे निहित रहैछ।[272] काव्यक आत्मा ध्वनिये अछि।[273] लोचन, टीकाकार अभिनवगुप्त सेहो गुण, अलंकार आ औचित्यसँ समन्वित सुन्दर ध्वनिपूर्ण शब्दार्थेमे एहि सौन्दर्यक अनुभव करैत छथि।[274] औचित्य विचार चर्चाकार आचार्य क्षेमेन्द्र, ओहिँ सौन्दर्यक अनुभव समस्त काव्य-गुणक उचित सामंजस्यमे तकैत छथि।[275] अभिप्राय ई जे सौन्दर्यक एहि सूक्ष्म सत्ताक अस्तित्वकेँ तँ प्रायः सभ आचार्य एक स्वरमे स्वीकार करैत छथि, मुदा ओकरा एकहि काव्य-धर्ममे नहि मानि, विभिन्न काव्यधर्म सभमे मानैत छथि।

(ग) प्रेम आ सौन्दर्यक पारस्परिक सम्बन्ध

प्रेम आ सौन्दर्य प्रायः दुनू शब्द सहगामी थिक। जतय प्रेम अछि, ओतय सौन्दर्य रहैछ आ जतय सौन्दर्य अछि, ओतय प्रेम। मुदा कखनो काल एकर विपरीत स्थिति सेहो दृष्टिगोचर होइछ, जतय सौन्दर्य हो (बाह्य सौन्दर्य) ओतय प्रेम नहियो भऽ सकैछ, वा प्रेम, ईर्ष्या आदिक रूप धारण कऽ लैछ। जतय हार्दिक प्रेम रहैछ, ओतय कुरुपतामे सेहो सौन्दर्य निहित रहैछ (यथा, लैला-मजनूक प्रेम)। प्रेम आ सौन्दर्यक सम्बन्ध व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध अछि अर्थात् सौन्दर्य प्रेमहिमे निहित रहैछ। सौन्दर्य आलम्बन (वस्तु, व्यक्ति आदि)क धर्म थिक आ प्रेम आश्रयक भावना। वस्तुतः दुनूक अस्तित्व एक-दोसरा पर पूर्णतः आश्रित अछि। सौन्दर्य आश्रयक भावनाक अभावमे कोना उत्पन्न भऽ सकैछ ?[276] ओना ई कहल जा सकैछ जे आश्रयक हृदयमे प्रेम-भावना आलम्बनक रूप-सौन्दर्यसँ स्फुरित होइछ, मुदा एहि सत्यकेँ स्वीकारब स्थूल वासनाकेँ स्वीकारब होयत। मूल अछि

आलम्बनक नीक वा प्रिय लागब। मुदा सुसंस्कृत होयबाक कारणेँ, हम बाह्य सँ आन्तरिक दिशामे गमन करैछ। यैह कारण जे सौन्दर्यक सम्बन्ध हमर आत्मासँ स्थापित भऽ जाइछ। एहि दृष्टियेँ प्रेमक श्रेष्ठता सिद्ध होइछ। मुदा प्रश्न अछि जे प्रेम आत्मिक होइछ, ओहो रूपक आकर्षणसँ प्रारम्भ होइछ। अतः प्रधानता-अप्रधानताक प्रश्न असंगत प्रतीत होइछ। दुनूक अपन-अपन स्थान पर अलग-अलग महत्व छैक। यदि प्रेम वस्तु वा व्यक्तिमे नवीनता एवं सौन्दर्यक सृष्टि करैछ, तँ सौन्दर्य सेहो प्रेमक मूल तथा समग्र जीवन-स्पन्दन अछि। प्रेम, सौन्दर्यहिसँ जीवन-रस ग्रहण कय पुनः सौन्दर्यमे पर्यवसित भऽ जाइछ, कारण प्रेम स्वयं आन्तरिक सौन्दर्यक चरम निदर्शन होइछ। एतेक तादात्म्य सम्बन्ध रहलो सन्ता अधिकांश विद्वान प्रेमसँ सौन्दर्यक उत्पत्ति मानबाक पक्षमे बुझना जाइत छथि।

आदर्श अथवा वास्तविक सौन्दर्यक अनुभूतिमे प्रेमे सहायक होइछ।[277] हमरालोकनि वास्तविक प्रेमेक कारण कोनो वस्तुकेँ पूर्ण सुन्दर रूपमे देखबामे समर्थ होइत छी।[278] वस्तुतः प्रेमे सौन्दर्यक जनक थिक।[279] प्रेमहिसँ सर्वत्र सौन्दर्यक पूर्ण विकास देखना जाइछ। प्रेम सौन्दर्य पर आश्रित नहि रहि, सौन्दर्यक निर्माता सेहो अछि। सभ उच्च भावना प्रेमहिक ज्वालाकेँ ज्वलन्त बनौने अछि।[280] प्रेमसँ जतय चाही, ओतहि सौन्दर्यक पूर्ण विकास देखि सकैत छी। सौन्दर्य चेतना अमर प्रेमक छाया थिक। दिव्य प्रेमहि सौन्दर्यक कायामे निवास करयवला आत्मा थिक।

एही प्रकारेँ सौन्दर्यसँ सेहो प्रेम उत्पन्न होइछ। सन्तानोत्पति सँ पूर्व कोनो बच्चा नहि चाहनिहार युवती जखन पुत्रवती भऽ जाइछ, तँ ओ अपन पुत्रक मुँहकेँ देखि प्रेममयी बनि जाइछ। शील आ सौन्दर्य रूप-गुणसँ सम्पन्न सीताक प्रतिये रामक प्रीति आरो अधिक प्रगाढ़ भऽ गेलनि।[281] मोनमे सुषमाक भावने प्रेमक संचार करैछ। सौन्दर्यहि शनैः शनैः विकसित भऽ कऽ प्रेम बनि जाइछ। मुदा वस्तुमे ओ सौन्दर्य सेहो तँ अन्ततः हमर आत्महि उत्पन्न करैछ।[282]

गम्भीरतापूर्वक देखलापर दुनू दृष्टिकोणमे आत्म-भावनेक प्राधान्य सिद्ध होइछ। ककरोमे आत्म-सम्पर्क-शून्य क्षुद्र भौतिक दृष्टि नहि। वस्तुतः सभ स्वच्छ चिंतक जीवनमे प्रेमहिक महिमाक गान करैत छथि। संयत विचारक प्रेम आ सौन्दर्य, एहि दुनूकेँ अन्योन्याश्रित बुझि, ओहिमे आदर्श सामंजस्य स्थापित कऽ दैत छथि। सुतरां, प्रेम आ सौन्दर्यक यैह सम्बन्ध थिक।

(घ) कविताक प्रेम आ सौन्दर्यसँ सम्बन्ध

संसारक सभ देश आ सभ कालक साहित्यक शाश्वत तत्व थिक-प्रेम आ सौन्दर्य । साहित्यक उक्त विषय सनातन होइतहु चिर नवीन अछि । आदि कविसँ लऽ कय आधुनिक कवि धरिक काव्यमे यैह स्थायी तत्व अछि । वस्तुतः प्रेम आ सौन्दर्यक विषय छोट नहि, एकर आयाम विस्तृत आ विशाल अछि । एहिमे मानव हृदयक समस्त वृत्ति तथा जगतक सभ रूप समाविष्ट अछि । साहित्य-शास्त्रमे निर्धारित स्थायीभाव एवं संचारीभावक निरूपण, श्रृंगार रसक संयोग आ वियोग-एहि दुनू पक्षमे समाहित भऽ जाइछ। श्रृंगार रसक स्थायी भाव रति पर आधारित अन्य प्रकारक प्रेम तँ एहिसँ घनिष्ठ रूपेँ सम्बद्ध अछिये, अन्य रस सेहो एकरा संग प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूपेँ सम्बद्ध अछि । भाव ई जे प्रस्तुत विषय जाहि रूपेँ जीवनसँ सम्बद्ध अछि, ओही रूपेँ साहित्य वा काव्यसँ सेहो । प्रेम आ सौन्दर्य - यैह कविताक आदि विषय थिक। हजारो पुनरावृत्तिक अतिरिक्त यैह विषय कविताक शाश्वत उपजीव्य रहल अछि । प्रेम पर लाखो कविता अद्यावधि लिखल जा चुकल होएत, मुदा ओ कहियो बासि नहि होयत । ब्रह्मक तीनटा विभूति-शक्ति, शील एवं सौन्दर्यमे सँ कवि मुख्यतः सौन्दर्यहिसँ सम्बन्धित रहैछ । मुदा ई सौन्दर्य बड़ व्यापक थिक । ई ब्रह्मक आनन्दरूपसँ सम्बद्ध अछि । अतः साहित्यमनीषी, विषय आ वस्तु दुनू दृष्टिसँ प्रेम आ सौन्दर्यकेँ काव्यक मुख्य विषय सिद्ध करैत छथि । सौन्दर्यानुभवे सँ प्रेमक आत्मा रस वा आनन्दक उद्घाटन होइछ ।

निष्कर्ष

(1) 'सौन्दर्य' शब्दक व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ कएक प्रकारक होइछ, यथा-जे आर्द्र वा सरस करय, जे नीक जकाँ प्रसन्न करय, जे कैंची जकाँ काटय, जे जीवन वा आनन्द दिअय, आदि ।

(2) संस्कृतमे प्रायः मूर्त्त वस्तुयेक हेतु 'सुन्दर' शब्दक प्रयोग होइत अछि । रूसमे सेहो सुन्दरसँ बाह्य-सौन्दर्यहिक अर्थ ग्रहण कयल जाइछ । परंच आधुनिक भारतीय भाषासभमे एहि शब्दक संग व्यापक एवं गंभीर अर्थ संयुक्त भऽ गेल अछि । 'सौन्दर्य' शब्दक अर्थमे वस्तुतः नाना भाव-तरंग समाविष्ट अछि - यथा, उदात्त, सौम्य, मनोहर, रमणीय, मनोज्ञ, मनोरम, मधुर, पेशल, चारु, मंजुल, रुचिर, साधु, कान्त, लावण्यवान, द्युतिवान, छविवान, सुषमावान, अभिराम, मंगलकारी, भल, शुभ आदि ।

(3) पौर्वात्य एवं पाश्चात्य-दुनू कोषकारलोकनिक अनुसारेँ 'सौन्दर्य' शब्द बड़ व्यापक अर्थ वहन कयनिहार शब्द थीक । हिनकालोकनिक अनुसारेँ सौन्दर्य शब्दमे बाह्य एवं आभ्यंतर-दुनू प्रकारक सौन्दर्य समाविष्ट रहैछ ।

(4) भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वान लोकनिक सौन्दर्य सम्बन्धी परिभाषा वा विचार-सूत्रक आधार पर निष्कर्षतः ई विदित होइछ जे कतिपय विद्वान (कांट, क्रोचे, ह्यूम तथा भारतीय विचारक) सौन्दर्यकेँ आन्तरिक मानैत छथि आ कतिपय विद्वान (कॉडवेल, प्लैंखोनोव आदि) एकरा पूर्णतः बाह्य मानैत छथि । अनेक दार्शनिक मध्यमार्गी छथि ।

(5) पाश्चात्य सौन्दर्य-तत्व-चिंतक वस्तुपरक दृष्टिकोणक आधार पर सौन्दर्य-सम्बन्धी धारणाकेँ क्रमशः (क) वस्तुवादी किंवा यथार्थवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण, (ख) आत्मवादी किंवा आदर्शवादी दार्शनिक दृष्टिकोण, तथा (ग) मध्यमार्गी समन्वयवादी दृष्टिकोण-प्रभृति तीन श्रेणीमे विभक्त कयल जा सकैछ । मार्क्सवादी सौन्दर्य-चिंतक एन.जी. चर्निशेवस्कीक अनुसार जीवन सौन्दर्य थिक । ओ सभ किछु सुंदर अछि जे जीवनसँ सम्बन्ध रखैछ, जे जीवनक स्मृति दियबैछ आ जे जीवनकेँ अभिव्यक्ति प्रदान करैछ ।

(6) भारतीय आचार्यलोकनिमे अलंकारवादी, गुणवादी, रीतिवादी तथा वक्रोक्तिवादी आचार्यलोकनि सौन्दर्यकेँ विशेषतः बाह्य-विषयक मानैत छथि । मात्र रस-सम्प्रदायवादी (भरत, अभिनवगुप्त, विश्वनाथ, पंडितराज जगन्नाथ आदि) ओकरा आत्मप्रधान मानैत छथि, मुदा हिनको लोकनिकेँ समन्वयवादी मध्यमार्गी कहल जा सकैछ, कारण आत्म एवं बाह्य रूप - दुनूक उचित महत्वकेँ ओ सभ स्वीकार कयने छथि ।

(7) पाश्चात्य आदर्शवादी दार्शनिक लोकनि (प्लेटो, प्लोटिनस, सेन्ट आगस्टाइन, शिलर, काण्ट, हिगेल, क्रोचे आदि) क सम्पूर्ण किंवा अधिकांश व्याख्या आत्मपरक छन्हि आ ई सभ वस्तुकेँ स्वल्प वा गौण महत्व प्रदान कयने छथि ।

(8) सौन्दर्यक सम्बन्धमे भारतीय दृष्टि मुख्यतः आध्यात्मिक थीक । प्राचीन एवं नवीन सभ भारतीय सौन्दर्य-चिंतक (शंकर, वल्लभ, कालिदास, भवभूति, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, अरविन्द आदि) सौन्दर्यक आदर्श रूपहिकेँ वरण कयने छथि ।

(9) पाश्चात्य एवं पौर्वात्य - दुनू स्थानक सौन्दर्य चिंतकलोकनि समन्वय सिद्धान्तक स्थापना द्वारा अतिवादकेँ समाप्त कय अपन स्वस्थ दृष्टिकोण प्रस्तुत कयने छथि। एहि कोटिक पाश्चात्य दार्शनिकलोकनिमे प्लेटो, बोजांके, हिगेल तथा भारतीय विद्वान सभमे डा. कुमार स्वामी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, डा. आत्रेय, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदिक नाम प्रमुख अछि जे समन्वयवादी दृष्टिकोणक आधार पर सौन्दर्यक सम्यक् व्याख्या कयने छथि।

(10) मनोवैज्ञानिक आधार पर ई कहल जा सकैछ जे कोनो पदार्थकेँ देखि हमरा मोनमे अनेक मधुर भाव वा सुखद कल्पना जाग्रत होइछ वा भऽ सकैछ। वस्तु स्वयं सुन्दर हो वा नहि हो, ओ नवोदित भाव वा कल्पने ओहि वस्तुक सौन्दर्यकेँ अभिवृद्ध करबामे सहायक होइछ। तेँ अनेक मनोवैज्ञानिक सौन्दर्यक उत्पत्तिक प्रधान कारण हमरालोकनिक यौन-भावनहिकेँ कहलन्हि अछि।

(11) साहित्य मात्र मनोवैज्ञानिक तथ्यातथ्यक नीरस उल्लेख धरि सीमित नहि रहि एहि धरातलसँ उपर उठि कय प्रकृति एवं मानव-जगतक सौन्दर्यकेँ कला-जगतमे आनि ओकर जीवन्त रसानुभव करबैत अछि।

(12) सौन्दर्यक सर्वप्रथम गुण थीक आकर्षण। यदि सौन्दर्य-द्रष्टामे आकर्षणीयत्व नहि हो तँ वस्तुतः आकर्ष-गुण मात्रे पर्याप्त नहि होयत। द्रष्टा एवं दृश्यक एहि पारस्परिक सम्बन्धमे इन्द्रिय-व्यापार सेहो अत्यावश्यक अंग होइछ।

(13) कवि एवं दार्शनिक, वैज्ञानिक जकाँ सौन्दर्यकेँ बाह्य तथा आध्यात्मवादी जकाँ आत्महि धरि सीमित नहि राखि, जन्मजन्मान्तरसँ सम्बद्ध कय ओकर अमरता-अनन्ताकेँ सेहो प्रतिष्ठित करैछ। कालिदास सौन्दर्यानुभूतिक संग जन्मजन्मान्तरक सम्बन्धकेँ मानलन्हि अछि।

(14) भारतीय सौन्दर्य भावनाक संग पवित्रता तथा निष्पापक नित्य सम्बन्ध अछि। जे सौन्दर्य पवित्र नहि, ओ आनहुँकेँ पवित्र नहि कऽ सकैछ। महाकवि माघ, विद्यापति, सूरदास, बिहारी आदि ओकरे वास्तविक सौन्दर्य मानलन्हि अछि जे प्रतिक्षण बढ़य, चकित करय तथा नित्य नवीन रहय।

(15) उदात्त सौन्दर्यमे मानव एवं प्रकृतिमे व्याप्त आत्माक अनन्तता, विशालता, उदात्तता तथा विराटताक दर्शन होइछ। धार्मिक भाव-मिश्रित भय

अथवा आतंक एकर मुख्य तत्व होइछ। वस्तुतः उदात्त ओ सौन्दर्य थीक जे आश्रयकेँ पहिने पराभूत आ तदनन्तर आकर्षित करैछ। एहिमे पहिने घात, तदुपरान्त आह्लादन रहैछ।

(16) लौंजाइनस पाटवपूर्ण वाग्मितामे उदात्तक संभावनाकेँ मानलन्हि अछि तथा चिन्तनक गरिमा; आवेगक स्फूर्ति आ उत्तेजनाक निर्वाह; वाक्यालंकारक सुष्ठु प्रयोग, शब्द-चयन; दृश्य-विधान एवं अलंकार-योजना तथा स्थापत्य कौशलक महिमामंडित प्रयोगकेँ उदात्त शैलीक पाँच नियामक तत्व निर्धारित कयलन्हि अछि।

(17) कलाक कुरूपमे सेहो सौन्दर्य रहैछ। कुरूपताक सम्बन्ध कोनो व्यक्ति, वस्तु, दृश्य वा स्थितिक बाह्य रूपसँ ओतबा नहि रहैछ, जतबा हमरालोकनिक मनोभावसँ। सौन्दर्यक विपरीतार्थक अथवा प्रतीप असौन्दर्य नहि, बल्कि कुरूपता थीक। कुरूपता सेहो हमर सौन्दर्य-चेतना सँ सम्बन्धित अछि।

(18) मानवीय सौन्दर्य, प्राकृतिक सौन्दर्य, वस्तुगत सौन्दर्य तथा कलागत सौन्दर्य - ई चारि सौन्दर्यक प्रमुख स्वरूप थीक। मानवीय सौन्दर्य काव्यक मूल प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थीक। एकर कोनो सर्वमान्य कसौटी वा मानदण्ड वा आदर्श निश्चित नहि अछि। ओ व्यक्ति, जाति, देश एवं कलाक अनुरूपेँ परिवर्तित होइत रहैछ तथा ओ हमर स्वास्थ्य, मनोवृत्ति, जीवनक प्रति दृष्टिकोण आदि बातसभसँ निर्धारित, नियंत्रित तथा परिचालित होइछ। भौगोलिक परिस्थिति सेहो एकरा विशेष रूपेँ प्रभावित करैछ। मानव-सौन्दर्यक दू भेद होइछ - स्त्री-सौन्दर्य तथा पुरुष-सौन्दर्य।

(19) प्रकृति-सौन्दर्य शुद्ध वा निष्काम आनन्दक स्रोत थीक। एकरा सभ देशक लोक द्वारा गंभीर प्रशंसाक स्वरमे सुन्दरे कहल जाइछ। प्रकृति-सौन्दर्य कोमल आ मधुर सेहो होइछ, संगहि भीषण आ परुष सेहो। एकरा उपर मानवीय जगतक विभीषिकाक कोनो प्रभाव नहि पड़ैछ। ई मानवमे आत्म-स्वातंत्र्यक बलवती भावनाक संचारक तथा अनादि तत्वक रहस्यमय सत्ताकेँ जानबाक राज-द्वार थीक।

(20) वस्तुगत सौन्दर्य ओ सौन्दर्य थीक जे आविष्कार बुद्धि सँ उत्पन्न मानव-कृत वस्तुसभमे पाओल जाइछ। ई दू प्रकारक होइछ - मानवकृत उपयोगी वस्तुसभक सौन्दर्य तथा मानवकृत कलाकृतिक सौन्दर्य।

(21) कलागत सौन्दर्य मनोजगतक सौन्दर्य थीक जकर सामग्री बाह्य

जगतक सामग्रीसँ जखन अन्तःकरणमे जा कय ओहिठामक विशिष्ट प्रक्रियासँ निकलि बाहरी जगतमे चित्र, संगीत, काव्य आदि रूपमे पुनः लौटि अबैछ तखन ओ कलागत सौन्दर्यसँ सम्पन्न मानल जाइछ ।

(22) प्रेम आ सौन्दर्य दुनूमे पारस्परिक सम्बन्ध अछि । दुनू शब्द सहगामी थीक । यदि प्रेम वस्तु वा व्यक्तिमे नवीनता एवं सौन्दर्यक सृष्टि करैछ तँ सौन्दर्य प्रेमक मूल आ समग्र जीवन-स्पन्दन थीक । प्रेम सौन्दर्यसँ जीवन-रस ग्रहण कय पुनः सौन्दर्यहिमे पर्यवसित भऽ जाइछ, कारण प्रेम स्वयं आन्तरिक सौन्दर्यक चरम निदर्शक होइछ । दुनूमे एतबा तादात्म्य रहलो सन्ता अधिकांश विद्वान प्रेमहिसँ सौन्दर्यक उत्पत्ति मानैत छथि ।

(23) प्रेम आ सौन्दर्य संसारक सभ देश आ सभ कालक साहित्यक शाश्वत तत्व थीक । ई सनातन होइतहुँ चिर नवीन अछि । प्रेम आ सौन्दर्य कविताक आदि विषय थीक । यैह कारण जे साहित्यमनीषी विषय आ वस्तु दुनू दृष्टिञे प्रेम आ सौन्दर्यकेँ काव्यक मुख्य विषय सिद्ध करैत छथि ।

●

संदर्भ

1. ऋग्वेद संहिता (वैदिक संशोधन मंडल, पूना), सूची खण्ड (जिल्द 5), पृ. 397-398
2. वाचस्पत्यकोष, पृ. 4540
3. "Love, affection, favour, kindness, kind or tender regard, sport, pastime, joy, delight, gladness."
   - Apte (Sanskrit English Dictionary - 1922, Page 380).
4. "Love, affection, kindness, tender regard, favour, predilection, fondness." - Sir Monier-Williams, Sanskrit English Dictionary, Second Edition (Oxford, 1899), page 711." A feeling of strong personal attachment induced by that which delights or commands admiration, by sympathetic understanding, or by ties of kinship or ardent affection. Manifestation of desire for, and earnest effort to promote the welfare of a person, esp. as seen in God's solicitude for men and men's due gratitude and reverence to God. Strong liking, fondness, good will, the object of ideal regard, as love of learning, love of freedom, love of country, love of money, tender and passionate affection for one of the opposite sex, as to marry without love, also an istance of love, a love affair, Sexual passion or, rare, its gratification.

The object of affection, often employed in endearing address; Cupid, or Eros, as God of love, etc.
   - Webster's New International Dictionary of English Language (Page 1279).
5. नारदभक्तिसूत्र, 51म सँ 55म सूत्र
6. श्रीहरिभक्तिरसामृतसिन्धुः (अच्युतग्रंथमाला, काशी), पृ. 115
7. कामार्त्ता हि प्रकृति कृपनाश्चेतनाचेतनेषु - मेघदूत, श्लोक-5
8. गुणाः खलु अनुरागस्य कारणम् न पुनर्बलात्कारः । - मृच्छकटिक अंक-1, पृ.- 44
9. व्यतिषजति पदार्थान्तरः कोऽपि हेतु, न खलु बहिरूपाधीन प्रीयतः संश्रयन्ते ।
   अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगतं सर्वास्ववथासु यद्
   विश्रामौ हृदयस्य यत्र जरया यस्मिन्नहार्यो रसः ॥
   - तत्रैव
10. दशकुमारचरित : पृ. 292
11. कर्पूरमंजरी : 3/10
12. तामिलवेद (अजमेर) पृ. 83-84
13. He whom love touches not, walks in darkness- Plato
14. "Only from love springs the profoundest insight." - Neitzsche
    Oswald Schwarz, The Psychology of Sex (1951) Page - 104.
15. "Only through loving, one becomes one with the object." - Hegel.
16. "Ideas are born in the arms of a wise friend." - Muller.
17. "Love looks not with the eyes, but with the mind
    And therefore is winged cupid painted blind."
    -Shakespeare : A Mid-summer Nights Dream.
18. "Love is the noblest frailty of the mind."
    - Dryden : Indian Emperor.
19. "Whoever loved that loved not at first sight."
    -Marlowe : Hero and Leader.
20. "Who does not know how to love has but a faithless heart." - Voltaire.
21. "Love betters what is best" - Wordsworth.
22. "All love is sweet, given or returned."
    - Shelley : Prometheus Unbound.
23. "Ask not of me love, what is love "
    Ask what is good of God above." - P.J. Balley.
24. "Knowledge is strong but love is sweet."
    -Christina Rossette : Convent Threshold.
25. "It is not until lust is expanded and eredicated that it develops into the exquisite and enthralling flower of love."
    - Havelock Ellis, Philosophy of Sex.

26. "It is better to have loved and lost
than never to have loved at all." - Tennyson.

27. "Not to love is not to live or it is a living death." - R. W. Twine.

28. "Both popular and philosophic thought has recognised these deep foundation of love. Pouplar thought has given the same name to the effective tie that blinds man and woman sexually, man and man in friendship, and parents and child in family relationship. A king's love for his people, a disciple's love for his teacher, an animal's love for its young and its master have all been included in the one catagory inspite of various differences."
- Christopher caudwell' : Studies in a Dying Culture (1949).

29. "All things must die, but love alone eludes mortality.
It overleaps the tombs, and bridges the chasm of death with generation. Our wealth is a weariness, and our wisdom is a little light that chills, but love warms the heart with unspeakable solace, even more when it is given than when it is received. All other things are futile; let us cherish it."
-Will Durant : The Pleasures of Philosphy (1953) page : 114.

30. "The meaning of love speaking generally, is the justification and deliverance of indivisuality through sacrifice of egoism."
- Vladimir Solovyer : quoted from 'Psychology of sex by Oswald Schwarz, Page : 98-99.

31. "True love like the sun, expands the self. Love makes perception of beauty. A man who has never loved can never realise God; that is a fact."
- Swami Ram Tirtha; Heart of Rama; Page : 130, 131 & 133.

32. For love is the ultimate meaning of everything around us. It is not a mere sentiment, it is truth; it is the joy that is at the root of all creation. It is the white light of pure consciousness that enamates from Brahma. It is through the heightening of our consciousness into love, and extending it all over the world, that we can attain Brahma Vihar, communion with this infinite joy. He who has no love in him values the gifts of his lover only according to their usefulness. But utility is temporary and partial. It can never occupy our whole being.
- Tagore : Sadhana (1977). Page : 107

33. "To achieve this contact or communion (love) is the final aim and purpose of human existence."
- Radhakrishnan : From preface to Dilip Kumar Roy's "Among the Great" (1950.)

34. एहि संसार सार बथु एक । तिल एक संगम जाब जिब नेह । -विद्यापति

35. प्रेमक गति दुरवार..........ओएह

36. सुजनक प्रेम हेम समतूल । दहइत कनक दिगुन होय मूल ।। -ओएह

37. राखय चाहिअ गुपुत सनेह । एहि सनेह कर सोत ।। - ओएह

38. नारद भक्तिसूत्र, 58

39. हंस : शुचिषद् वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
नृषद वरसद्दतसद् व्योमसदव्जा गोजा ऋतजा अद्रिजाऋतं बृहत् ।।
- कठोपनिषद्, अध्याय 2, वल्ली 2 मंत्र 2

40. द्वा सुपर्णा सयुजा सरवाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तपोरन्य: पिप्लं स्वाद्वत्यनशन्नन्यो अभिचाकशीति ।।
- श्वेताश्वेतरोपनिषद्, अध्याय 4, मंत्र 6

41. नारद भक्तिसूत्र, सूत्र 46, 47, एवं 50

42. नारद भक्तिसूत्र, सूत्र 60, 68, एवं 71

43. सर्वोहि आत्मस्तित्वं प्रत्येति, न नाहमस्मीति । यदि हि नात्मत्व प्रसिद्धि: स्यात् सर्वे लोको नाहमस्तीति । - ब्रह्मसूत्र, 1/1/1 पर शांकर भाष्य ।

44. केनोपनिषद्, मंत्र 5, 6 तथा 7

45. "And lastly, Kama, the enjoyment of appropriate objects by the five senses of hearing, tasting, feeling and smelling assisted by the mind together with the soul."
- Kamsutra of Vatsyayan - an article by S. T.
Alexander in the Illustrted weekly of India
(Dated. April 25, 1954) page - 33.

46. "Love is the condition of soul".
- Plato : Phacdrus, Page 5 (Also Plato's Symposium, Page 88-89)

47. "Love must be implicit in matter". - Christopher Caudwell:
"Studies in a Dying Culture." - page 131

48. यथादर्शे तथात्मनि यथा स्वप्ने तथा पितृलोके ।
यथाप्सु परीव ददृशे तथा गन्धर्वलोके छायातपयोरिव ब्रह्मलोके ।।
- कठोपनिषद् 2/3/5

49. सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुर्न लिप्यते चाक्षुषेबाह्यदोषे: ।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा न लिप्यते लोक दु:खेन बाह्य: ।।
-कठोपनिषद्/अध्याय 2, वल्ली 2, मंत्र 11

50. श्रीचैतन्यचरितामृत, (प्रेम दर्शन, पृष्ठ 55, गीताप्रेस, गोरखपुर)

51. बृहदारण्यकोपनिषद, 4/3/21 तथा -
कामस्तग्रे, समवर्तताधि मनसोरेत: प्रथमं यदासीत ।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन हृदि प्रतीव्या कवयो मनीषा ।।
- ऋग्वेद, नासदीय सूक्त - 10/129/4

52. पातंजल योगसूत्र, समाधिपाद, 46

53. पातंजल योगसूत्र, कैवल्यपाद, 32, 34

54. श्वेताश्वेतरोपनिषद्, 4, मंत्र 6
55. यथा नद्यः स्पन्दमानाः समुद्रेस्तंगच्छन्ति नामरूपे विहाय ।
तथा विद्वान नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुष मुपैतिदिव्यम् ।।
- मुण्डकोपनिषद्, 3/8
56. गीता : 3/4 : पातंजल योगसूत्र 4/34/
- तैतरीयोपनिषद्, वल्ली 3, अनुवाक 6
57. "To achieve this contact or communion is the final aim. and purpose of human existence."
Dr. Radhakrishnan; From Preface to Dilip Kumar Roy's "Among the Great" (1950)
58. ओऽम् भद्रं, कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं, पश्यैमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टवां सस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ।। - उपनिषद्, शांतिपाठ ।
59. "Are they not first that love exists only in relation to some object, and second that object must be something of which he is at present in want ?" -Plato : Symposium, Page 77-78.
60. पं. परशुराम चतुर्वेदी : हिन्दी काव्य-धारा में प्रेम-प्रवाह, पृष्ठ-6
61. तत्रैव
62. तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एक मन मोरा ।।
सो मन रहत सदा तोहि पाहीं । जानु प्रीति रसु एतनहि माहीं ।।
- रामचरितमानस : सुन्दरकाण्ड
63. श्रीमद्भागवत, 10/32/16-22 तथा 10/33/16
64. Will Durant : The Pleasure of Philosophy, Page - 170-171.
65. उत्तर रामचरित : 6/5
66. तत्रैव : 1/40
67. तत्रैव : 1/40 तथा प्रियंवदाक उक्ति-सहि दिट्ठिआ अनुरूवो दे अहिरिवेसो ।
-अभिज्ञानशाकुन्तलम्, तृतीय अंकम्
68. कुमार सम्भव 3/2, 5/2, 5/24, 5/53 । रघुवंश 14/66
69. मेघदूत, उत्तरमेघ, 55
70. मैथिलीशरण गुप्त : विरह प्रेम की जाग्रत गति है, और सुषुप्ति मिलन है ।
71. कुमारसम्भव, 3/52, 5/36 :
72. ....ऋतुरसु : कामोवश इति सर्वाण्नेवेतानि प्रज्ञानस्य नामधेयानि भवन्ति । ऐतरेयोपनिषद्, तृतीय अध्याय, प्रथम खण्ड, 2 :
73. अंग्रेजी कवि ब्राउनिंग (BROWNING) क अपन प्रियाक प्रति ई प्रेम केहन अमर एवं आलौकिक अछि - Then a light, then thy breast,
O thou soul of my soul shall clasp thee again And with God be the rest
- quoted from Browing's poem 'Prospice'.

74. उत्तर रामचरित, 1/40, श्रृंगारशतक, 39, 86/6 योगसूत्र 1/5, 7
75. योगसूत्र : 1/5, 7
76. रवीन्द्रनाथ विरचित 'साधना' मे उपनिषद् वाक्यक व्याख्या
77. TAGORE : GITANJALI, SONG 32.
78. कुमारसम्भव : 5/79
79. कुमारसम्भव : 5/82
80. अभिज्ञानशाकुन्तलम् : अंक 3
81. तत्रैव : अंक 3
82. तत्रैव : अंक 4
83. तत्रैव : अंक 5
84. छिनहि चढ़ै छिन उतरै, सो तो प्रेम न होय ।
अधर प्रेम पिंजर बसै, प्रेम कहावै सोय ।।
85. प्रीति जो लागी धुल गई, पैठि गई मन माँहि ।
रोम-रोम पिउ-पिउ करे, मुख की सुरधा नाहि ।।
तुलसीदास : दोहावली, दोहा 277 सँ लऽ कऽ 298 धरि ।
86. Plato : 'Symposium' (Translated by W. Hamilton), Page 70-72.
87. श्रद्धा एवं प्रेमक योगक नाम भक्ति थिक तथा धर्मक रसात्मक अनुभूतिक नाम भक्ति थिक - पं. रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि, भाग-1
88. सात्वस्मिन् परमप्रेमरूपा - (नारदभक्तिसूत्र, 2) सा परानुरक्तिरीश्वरै (शांडिल्य भक्तिसूत्र, 2)
89. नारद भक्तिसूत्र, 3-7
90. तत्रैव, 24
91. तत्रैव, 51-52
92. तत्रैव, 54
93. नारदभक्ति सूत्र, 60, 16,
94. तत्रैव 68
95. तत्रैव, 51, 52, 54
96. तत्रैव, 55 : तथा, गीता, अध्याय 7, श्लोक 16, श्रीमद्भागवत्, 11/14/20
97. नारदभक्तिसूत्र, 7/7/51-52
98. पेमो पुमानो महान - चैतन्य
99. तुलसीदास, रामचरितमानस ।
100. सोई जाने जेहि देहु जनाई, जानत तुमहि, तुमहि होइ जाई ।
- तुलसीदास : रामचरितमानस
101. नारद भक्तिसूत्र, 82

102. V. Raghawan : The Number of Rasa', Page 129-137 (Bhakti and Madhura Rasa)

103. राम मोरे पिउ, मैं रामकी बहुरिया - कबीर

104. पं. चन्द्रबली पाण्डेय : तवस्सुफ अथवा सूफी मत, पृष्ठ-116-117

105. ".........Only false spirituality and an impotant moralism could wish to replace sex love by any other kind of love, because only sex love creates the homogeniety, equality and reciprocity between two persons which alone exclude egoism. The authentic man in the fulness of his ideal personality can only exist in complete fusion of man and woman."
-Vladimir Solovye : Quoted from "Psychology of Sex."
PP. 98-99, by Oswald Schwarz.

106. "To those for whom sex is impure, there are no flowers in the nature."
- Sir Pattrick Gaddes.
"If complete abstention makes a man perfect the ideal saint would be an enunch." - Nietzsche.

107. C. Caudwell : Studies in a Dying Culture, pp. 131-132, and Oswald Schwarz : The Psychology of Sex, pp. 94-95.
"In fact, motions have just as much or as little to do with the religious experience as they have with experience of love between man and woman."

108. पं. चन्द्रबली पाण्डेय : साहित्य संदीपनी : पृ. - 9

109. Oswald schwarz : Psychology of Sex, p. 95.

110. Will Durant : The Mansion of Philosophy, pp. 151-160

111. जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी'क श्रद्धा सर्ग ।

112. Will Durant : The Mansion of Philosophy; pp. 162-163.

113. एहि सम्बन्धमे निम्नलिखित कथन द्रष्टव्य अछि.......
"And that position is symbolic of coming together of the two meet gladly." - Marie Stopes; Married Love, p-70.

114. "Many cases of marriage failures come to the psychologist for adjustment cases in which inspite of the real attatchment of husband and wife, and the desires of both to realise a spiritual union, the union is not attained and the family has begun to disintegrate."
- Knight Dunlap : quoted from the Sexual side of Marriage, M.J. Exner, M.D. pp. 49-50.
"Truly human sex relationships mean not merely a union of bodies but a union of two personalities." -Ibid; p. 66.

115. V. Raghawan : 'The Number of Rasa', pp. 108-112.

116. Wordsworth : 'Immortality Ode."

117. "Be Ye like children, because there is kingdom of heaven.-Tolstoy.

118. एतरेय उपनिषद् : 1/1, 1/3; गीता : 7/7-8, 10/41

119. Wordsworth : Teituen Abbey

120. Ibid

121. अंगरेजीक कविलोकनिमे शेली (Shelley) क प्रकृति-प्रेम द्रष्टव्य अछि :-

"I love snow and all the forms
of the radiant frost;
I love waves, and winds, and storms,
Everything almost
Which is Nature's and may be
Untainted by man's misery." - Shelley.

122. अथर्ववेदमे भारतक माताक रूपमे विशद एवं गंभीर भावनाक निदर्शन भेल अछि -

सा नौ भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः - (12, 1, 10)
माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः - (12, 1, 12)
तस्यै हिरण्यवक्षे पृथिव्या अकरं नमः - (12, 1, 26)
यस्यान्नूं व्रीहियवौ यस्या इमाः पंचकृष्टयः
भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोस्तु वर्षभेदसे - (12, 1, 42)
ये ग्रामा उदरण्य या सभा अधिमम्याम्
य संग्रामा समितयस्तेषु चारु वेदम ते - (12, 1, 56)

विशेषरूपें द्रष्टव्य - Dr. R. B. Pandey : "Athervedic Conception of the Motherland". an article in B.H.U. Journal, Silver Jubilee Number. 1942.

123. सुमन, किरण, यात्रीक कविता द्रष्टव्य ।

124. "Man is higher than all animals, than all angels, none is greater than man."
"Look upon every man, woman and everyone as God."
"The only God to worship is the human soul in the human body".
"If you want any good to come, you must throw your ceremonials over board and worship the living God, the man-God- every being that wears a human Form - God in his universal as well as individual aspect."
- Quoted from 'Thus spake Vivekanand."

125. "Little drops of Water, Little grains of sand,
Make a mighty ocean and the pleansant land." - Shelley.

126. "........Drink with the joy of singing I foreget
myself and call thee friend who act my lord."
- Rabindranath : Gitanjali, p. 2.

127. वाचस्पत्यकोष, पृष्ठ-5314

128. समालोचक (आगरा)क सौन्दर्यशास्त्र विशेषांक, सम्पादकीय, पृष्ठ-3, 4

129. ऋग्वेदसंहिता, सूचीखंड (जिल्द-5), वैदिक संशोधन मंडल, पूना

130. "Beauty, loveliness, gracefulness, elegance, noble conduct, generosity" (p. 1253); Splendour, Brilliance, lustre, beauty, grace, loveliness (p.

1092) exquisite beauty, splendour (p. 1273) - Sir Monier Wiliams : Sanskrit English Dictionary x Edition, (Oindford - 1899)/
4. "An assemblage of graces or properties or someone of them satis-
fying the eye, the ear, the intellect, the aesthetic faculty, or the moral
sense, also the abstract quality characteristic of such properties, the
beautiful. In aesthetics, Beauty broadly comprises the sublime, tragic,
comic etc. as well as the sensuous qualities which characterise Beauty
in the narrower sense." - "Webster's New International Dictionary of
the English Language." p. 199.

131. "Beauty, loveliness, gracefulness, elegance." - V.S. Apte : Sanskrit Eng. Dictionary (1922), p. 616.

132. सुषमा परमा शोभा कान्ति द्युतिच्छविः (अमरकोष, 1/2/18)
सुन्दरं रुचिरं चारु सुषमं साधु शोभनम्
कान्तं मनोहर रुच्यं मनोज्ञं मंजु मंजुलम्
रम्यं मनोहरं सौम्यं (अमरकोष, 3/1/52-53)

133. वाचस्पत्यकोष, पृष्ठ - 5338

134. विश्वनाथ : 'साहित्यदर्पण', तृतीय परिच्छेद (हिन्दी विमला टीका, पृ.-108)

135. चिंतामणि, भाग 1, पृष्ठ-224

136. चिद्विलास, पृष्ठ-209

137. कामायनी, कामसर्ग :

138. पल्लव, पृष्ठ-54

139. उज्ज्वलनीलमणिः (बम्बई, काव्यमाला, 95) पृ.-274

140. श्रीहरिभक्ति रसामृतसिन्धुः (अच्युत ग्रंथमाला कार्यालय, काशी)

141. कालिदासकृत कुमारसम्भव ।

142. कालिदासकृत अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/18

143. माघकृत शिशुपालवधम्,

144. रसगंगाधर,

145. "This is the ultimate object of our existence that we must ever know that 'beauty is truth, truth beauty'. - Tagore : Sadhana, p. 141.

146. "It is a state of complete repose and is very much akin to ecstacy or 'Savikalpaka samadhi' of Indian Yoga." - B.H.U. Journal, Silver Jubilee Number (1942) p. 44.

147. "The principle of goodness has reduced itself to the law of beauty. For
measure and proportion always pass into beauty and excellence." -Quoted
from 'A History of Aesthetics (by Bernard Bosanquet), 1934, p. -33.

148. "Thus the absolute being, which is at one the same time absolute
unity and infinite variety, God, is necessarily the final cause, the ulti-
mate basis, the realized ideal of all beauty." - Quoted from 'The Priciples
of Criticism' (by W. Basil Worsfoed), p. 125.

149. "Beauty consists of a certain composition of colour and figure causing delight in the beholder." -Quoted from Webster's New International Dictionary."

150. "Beauty results from adaption to our faculties and perfect state of health, physical, moral and intellectual." -Quoted from Webster's New International Dictionary."

151. "Beauty is the shining of the Idea through matter." -Quoted from - Tolstoy's 'What is Art', p.- 100

152. "Beauty is the spiritual making itself known sensuously."
Beauty is the idea as it shows to sense." - Hegel.
"Beauty is supreme expression of the absolute of devine reality as uttering itself through man." - Schelling.

153. "That is beautiful which pleases, which pleases all, which pleases without interest and without a concept. and pleases necessarily. - "Kant. See also 'History of Aesthetics (by B. Bosanquet) p. 45, and 'What is Art' (by Tolstoy), p. 97.

154. "Beauty is the infinite represented in the form of finite." - Schelling.

155. "Beauty is not quality in things themselves, if exists merely in the mind which contemplates them." - Hume.

156. ....it seems now both permissible and advisible to define beauty as successful expression, or rather, as expression and nothing more because expression when it is not successful is not expression." -Douglas Aislie : 'Aesthetic (1922) P. 79.
"The beautiful is not a physical fact, beauty does not belong to things, it belongs to the human aesthetic activity, and this is a mental or spiritual fact." - Wildon Car : Philosphy of Croce'. P.-164

157. "Beauty is truth, truth beauty, - that is all ye know on earth, and all ye need to know." - Keats, Quoted from Mathew Arnold's Essay in criticism' Second series, p. 83.
"A thing of beauty is a joy for ever; Its loveliness inereases, it will never pass into nothingness." - Keats : Edymion.

158. "All genius, like all beauty and all art, derive its power ultimately from
that same reservoir of creative energy which renews the rays perpetu-
ally, and achieves the immortality of life. -Will Durant : The Pleasures of
Philosophy.

159. "If those acts of the individual are moral which he performs irrespective
of all considerations of self interest, this still does not mean that moral-
ity has no relation to social interest. Quite the contrary : self ebnogation
on the individual has a meaning only in so far as it is useful to the kind.
For this reason the kantian thesis, that the beautiful is that which pleases
us independently of all interest is worng........Consequently the enjoy-
ment of a work of art is enjoyment of the depiction advantageous to the
kind, independently of any conscious consideration whathsoever of such
advantage. - G. V. Plenkhanov : Art ad Social Life (1953). p. - 11

160. "History of Aesthetics "By Barnard Bosanquet, 'What is Art' by Tolstoy, 'The philosophy of Beautiful' by W. Kinght, 'A Modern Book of Aesthetics' by Melvin M. Rader.

161. The Pleasures of Philosophy' by Will Durant, 'What is Art', by Tolstoy, 'Indian Aesthetics' by K. S. Ramawwami.

162. विल डूरेन्ट : द प्लेजर्स ऑफ फिलासफी;

163. ओएह,

164. ओएह,

165. श्री हरिवंश सिंह शास्त्री : सौन्दर्य विज्ञान; पृष्ठ-21

166. ओएह, पृष्ठ- 19, 22

167. ओएह, पृष्ठ-27, 30-31

168. आ. विनयमोहन शर्मा : साहित्यावलोकन, पृ. - 122-125

169. डा. फतह सिंह : साहित्य और सौन्दर्य, पृ.-107

170. डा. रामविलास शर्मा : समालोचक का सौन्दर्यशास्त्र अंक, पृ.-190

171. राजेन्द्र प्रताप सिंह : सौन्दर्यशास्त्र की पाश्चात्य परम्परा, पृ.-182

172. औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम् ।
उचितस्थानविन्यासादलंकृतिरलंकृतिः ।
औचित्यादच्युतानित्यं भवन्त्येव गुणा गुणाः ॥
– क्षेमेन्द्र, औचित्यविचार चर्च, पृष्ठ-5, 6

173. श्री हरिभक्तिरसामृतसिन्धुः – दक्षिण विभागे, 1 लहरी
(भवैत्सौंदर्य्यमंगानां सन्निवेशो यथोचितम् ।)

174. The Indian mind draws a distinction between beauty of spirit and beauty of nature. Nature in her apparent nakedness has no beauty, but it is beautiful in so far as it is the expression of spirit.......The figure may be harmonious in all parts but it is beautiful when it is such as is distinctive of the underlying meaning of the soul."
- Mahendranath Sircar. 'Eastern Lights' (1935) p. 123.

175. "At first we detatch beauty from its surroundings, we hold it apart from the rest, but at the end we realise its harmony with all......... when we have the power to see things detatched from self interest and from the insistent claims of the lust of the senses, then alone can we have the true vision of the beauty that is everywhere.
- Tagore : Sadhana (1947) p. 139-140.

176. "And yet there remain philosphers firmly convinced that an absolute Beauty (Rasa) exists, just as others maintain the conceptions of absolute Goodness and absolute Truth.
- Anand Coomar Swami 'The Dance of Shiva. p-62.

177. "The lovers of God identify these absolutes with Him (or It) and maintain that He can only be known a perfect Beauty, love and Truth." - Ibid, p. 63.

178. Rabindranath Tagore : Sahitya, p. 35.

179. डा. रमानन्द तिवारी : 'कला और सौन्दर्य' नामक लेख ('समालोचक' सौन्दर्यशास्त्र अंक, पृष्ठ-39)

180. "Everyone choses his love out of the objects of beauty according to his own" - Plato : Symposium, quoted from A. Coomarswami's Dance of shiva', p. - 60
" I have no right to consider anything a work of art to which I cannot react emotionally, The critic can affect my aesthetic theories only by affecting my aesthetic experience. All systems of aesthetics must be basedon personal experience that is to say, they must be subjective."
- Clive Bell, Art, p.- 9.

181. "In the pure disinterested pleausre which comes to us as extra, whithout the element of desire, we say that this beauty which gives us a pure disinterested pleausre, ought to please others also, we bring both in a rational and an objective element. We could not universalise the pleasant thing merely because it was pleasant. Recognising something in us, however, that is common to the race, and something in each member of the race that is not his own, but is universal property, we are freed from our former confindiness and limitation."
-W. Kinght, Philosophy of Beautiful p..-59

182. एहि ठाम कठोपनिषदक यम-नचिकेता-संवादमे प्राप्त प्रेमक श्रेय सम्बन्धी भारतीय विचारधारा द्रष्टव्य थिक ।

183. "Apparalled in celestial light." - Wordsworth (Immortality Ode).

184. "A primorse by a river's brim.
A Yellow primorse was to him,
And it was nothing more." - John Keats.

185. "To me the meanenst flower that blows can give
Thoughts that do often lie too deep for tears." - Wordsworth.

186. कान्ट सौंन्दर्यानुभूतिमे सेहो बहिर्वस्तु वा गोचर प्रत्यक्षकेँ आंशिक महत्व देने छथि । एहि सम्बन्धमे कान्टक सूक्ष्म धारणाक सार-मर्म उपस्थित करैत डा. दासगुप्त लिखने छथि : "कान्टेर मतेर सारमर्म्म एई जे जेखाने अमादेर अन्तर्जगत कोनो बहिर्वस्तुर मध्ये अन्तर्जगतेर नियमेर साम्येर परिचय पाय ओ सेई वस्तुटिके निजेर अनुभूतिधारार सहित एकान्वये युक्त बलिया परिचय लाभ करे सेई परिचयेर आनन्द ई सौन्दर्येर आनन्द ।" – दासगुप्त, सौन्दर्य तत्व, पृ.-132

187. देखलजाय, पृ.-सात पर संख्या पाद-टिप्पणी । (तत्रैव)

188. देखल जाय, क्रोचेक सौन्दर्य सम्बन्धी धारणा, पृष्ठ-1 (तत्रैव)

189. "Here, I cannot but think, we are obliged to part company, with some regret, from Benedetto Croce. He is possessed, as so often in the case with him, by a fundamental truth, so intensely that he seems incapable of apprehending what more is absolutely to its realization, Beauty, he sees, is for the mind. A physical thing, supposed unper-

ceived and unfelt, can not be said in the full sense of possess beauty. But he forgets throughout I must think, also the embodiment is necessary to feeling. To so that because beauty implies a mind, therefore it is a integral state and, its physical embodiment is something secondary and incidental and merely bought into bring for the sake of permanance and communication - this seems to me a profound error of principle, a false idealism." - Bernard Bosanquet : Three Lecturers on Aesthetics (1915) Quted from M. Rader's 'A modern Book of Aesthetics', p.-196.

"But confusion arises because when he speaks about art, he means something different from what the rest of the world means...... what others call a work of art and a 'thing of beauty, is for him not art, and not beautiful, it is only a physical stimulant to induce a beautiful intuition in the beholder."

- R.A. Scott. James, The Making of Literature, p. 326-327

"Croce has almost forgotten communication, as he has almost forgotten beauty." - Ibid, p.-329.

"And I said that Croce had forgotten or almost forgotten beauty. It is exiomatic, is it not, that a work of art is beautiful. Not, let me repeat, the beauty is an embelishment, an added quality, it penetrates the vision of reality to the very core, and it belongs to whatever joy or satisfaction we derive from it.

- Ibid. p. 334-335

190. "This beauty is first of all eternal, it neither comes into being nor passes away, neither waxes nor wanes, next, it is not beautiful in part and ugly in part, nor beautiful at one time and ugly at another, nor beautiful in this relation and ugly in that, nor beautiful here and ugly there, as varying acording to its beholders, nor again this beauty appears to him like the beauty of a face or hands or anything else corporeal, or like the beauty of a thought, or like beauty which has its seat in something other than itself, be it a living thing or the earth or the sky or anything else whatever, he will see it as absolute, existing alone with itself, unique eternal, all to other beautiful things as partaking of it, yet in such a manner that while they come into being and pass away, it neither undergoes any increase or diminution. nor suffers any change." Plato, "The Symposium" p. 93-94.

191. "...........Though feeling is necessary to its embodiment, yet also the embodiment is necessary to feeling." - Bosanquet. 'Three Lectures on Aesthetics (1915) quoted from M. Modern Book of Aesthetics, p. - 196.

192. Acording to Hegel, God manifests Himself in nature and in art in the form of beauty. God expresses Himself in two ways - in the objects and in the subjects - in nature and in spirit. Beauty is the shining of the Idea through matter. Only the soul and what pertains to it is trully beautiful, and therefore the beauty of nature is only a spiritual content. But the spiritual must appear in sensuous form." - Tolstoy : 'What is Art, p. 10.

193. "But is it sufficient to regard merely the impression produced ? Are we in the study of Beautiful to lose all interest in the Aesthetic factors springing from the object ? Survey not contemporary philosophy is worng in obstracing metaphysics and adorming metaphysics with its spoils. On the question whether the Beautiful possess an objective reality we agree with the Greeks. Beauty is an atribute of things. But we complete to the Greek point of view by adding the modern : Beauty is not an absolute but a relative conception. It exists neither as a physical fact nor as a psychic fact, it is the result of a close connection between an object and a subject, for the attributes of the one form the appropriate origin of the perceptive enjoyment of other."

- Encyclopeadia of Religion and Ethics. p. 449.

194. "It will be seen in what sense we are justified in the speaking of Absolute Beauty, and in identifying this beauty with God............. but that very natural object is an immediate realization of His being......but there is always perfect identity of institution, expression, soul and body." - A. Coomar swami. : The Dance of Shiva, p.- 70

195. Tagore : Sadhana, (1947) p. 137-144.

196. "Beauty is a unique, suigeneris in nature, which inherits neither in a pure object nor in a pure subject, but in a particular relation between a subject and an object." - Dr. B.L. Atreya. Psychology of Beauty (an article in B.H.U. Journal, Silver Jubilee Number, (1942), p. 44.

197. "There would seem, on the whole, to be a tendency at present towards an amalgamation of what hitherto been considered an essential beauty in the harmony of forms and in the combination of colours, and that the keen delight we experience in beholding them is incapable of being experienced by any number of association, while it is admitted, on the other hand, that many things are made beautiful by association, that all things have their beauty enriched by it, and that something even have their intrinsic beauty called forth by it operating in the form of suggestion:

- Chamber's Encyclopeadia, Revised Edition, Vol.- I (London, 1967), p. 62.

198. "तेजो यो रूपं कल्याणयुतं तत्रे पश्यामि यो सावसौ पुरुषः सोऽ हमस्मि ।"

- ईशोपनिषद्, 16

"ओउम् ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ।।"

- ईशोपनिषद् ।

"इद्यद्विभूति मत्सत्वं श्रीमद्रर्जितमेव वा ।
ततदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसंभवम् ।।"

- श्रीमद्भगवद्गीता-10/41

"रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वानि कायसंपत् ।"

- पातंजल योगसूत्र-3/46

सियाराममय सब जग जानी । करौं प्रणाम जोरि जुग पानी ।।

- रामचरितमानस (तुलसीदास)

199. "The Psychology of Beauty" an article by Dr. B.L. Atreya, in B.H.U. Journal (Golden silver Jubilee Number 1942), and chapter on "Beauty" in Will Durant's 'The pleasures of Philosophy,

200. Dr. B.L. Atreya's article mentioned above.

201. Ebid.

202. (Wordsworth) "The fiver spirit of all knowledge."

203. "Emotions are feelings which have risen or been raised from the studies of sensations to what we may call a higher level, higher not morally but in the sense that they presuppose the 'lower' and or not presuposed by them. We are often apt to think that they are only possible for being rational as well as sensous, and it may be observed that we also think only such beings capable of aesthetic expression." - E.F. Carrit : 'An Introduction to Aesthetics' : p.66.

204. "ताभ्यः पुरुषमानयता अब्रुवन् सुकृतं बतेति । पुरुषो वावसुक्तम्....।"
ऐतरेय उपनिषद्, 1/2/3
ऋषि पतंजलि चारि गुण - रूप, लावण्य, बल आ वज्रक समान संगठनसँ युक्त शरीरकेँ कायसंपत् मानैत छथि -
"रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वानिकायसंपत् ।।"
पातंजल योगदर्शन, विभूति पाद, 46

205. "रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्पर्युत्सुकीभवति यत्सुखितोपि जन्तुः तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्व भावास्थिराणि जननान्तरसौहृदानि"
- अभिज्ञान शाकुन्तलम्, पंचम अंक, श्लोक 2

206. "प्रमामहत्या शिखयैव दीपस्त्रिमार्गयैव त्रिदिवस्य भोगः ।
संस्कारवत्येव गिरा मनीषी तया स पूतश्च विभूषितश्च ।।"
- कालिदास : कुमारसंभवम्, 1/28
"सिय सुन्दरता बरनि न जाइ । लघु मति बहुत मनोहरताई ।।
आबत देखि बरातिन्ह सीता । रूपरासि सब भांति पुनीता ।।"
- तुलसी : रामचरितमानस, बालकाण्ड ।

207. श्रीभद्भागवत : 10/29/48

208. "निनिन्द रूपं हृदयेन पार्वती प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता !"
- कुमारसंभव, 5/1

209. भर्तृहरिः श्रृंगार शतक, 35

210. "सूर स्याम के रूप महारस गोपी काहू ते न डरे ।" - सूरदास
"सोभा कहत कहै नहि आबै ।" - सूरदास

211. कुमारसम्भव, 5/43

212. अभिज्ञानशाकुन्तल, प्रथम अंक

213. कुमारसंभव, 5/53

214. श्रीमद्भागवत, 10/30/40

215. "हृदय की अनुकृति बाह्य उदार एक लम्बी काया उन्मुक्त
मधु पवन क्रीड़ित ज्यों शिशु साल सुशोभित हो सौरभ संयुक्त ।"
- कामायनी, श्रद्धासर्ग

216. श्रीमद्भगवतगीता : 6/45; पातंजलयोगदर्शन; 3/18

217. "देखि रूप लोचन ललचाने । हरषे जनु निज निधि पहिचाने ।"
- तुलसी; रामचरितमानस; बालकाण्ड

218. (क) "क्षणे क्षणे यन्नवतामुपेति तदेव रूपं रमणीयतायाः।"-माघ
(ख) "सेहे स्वरूप अनुरूप बखानिअ, तिल-तिल नूतन होय ।"-विद्यापति
(ग) "स्याम सौं काहे को पहिचान ।
निमिष निमिष वह रूप न वह छबि रति कीजै जेहि जानि।"
- सूर
(घ) "लिखन बैठि जाकी सखी गहि गहि गरब गरूर ।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ।।" - बिहारी
(ङ) "न च परिचितो न चाप्यगम्यः चकितमुपैमि तथापि पार्श्वमस्य।
सलिलनिधिरिव प्रतिक्षणं मे भवति स एव नवौ नवोऽ यमक्ष्णोः।
(कालिदासक मालविकाग्निमित्रमे नाट्याचार्य गणदासक महाराज अग्निमित्रक प्रति भाव) ।

219. "A thing of beauty is a joy for ever
Its loveliness increases but
But it will never pass into nothingness." - Keats. Endymion.

220. "देखि राम छवि नयन जुड़ाने । सादर निज आस्रम पहि आने ।"
- तुलसी : रामचरित मानस

221. "सबहि मनहि मन किए प्रनामा । देखि राममय पूरनकामा ।"
- तुलसी : रामचरितमानस

222. Will Durant : The Pleasures of Philosophy

223. "तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ।
विस्मयो मे महान्राजन्हृष्यामि च पुनः पुनः ।।" - गीता, 18/77

224. "Beauty reveals itself to us in a series of steps, but at the last it remains a mystery, and without mystery there would be no beauty. There must be in every work of art, as in every material object that is beautiful, sometimes that we feel but do not know, sometimes apprehend but do not comprehend.
- W. Knight : 'The Philosophy of Beauty' (1891) p.-82

225. "Sublimity is, so to say, the image of greatness of soul" - quoted from 'History of Aesthetics, (1940) by Bernard Bosanquet, p. 105.

226. "When a passage is pregnant in suggestion, when it is hard, may impossible to distract the attention from it, and, when it takes a strong

and lasting hold on the memory, then we may be sure that we have lighted on the true sublime" - Longinus.

227. डॉ. कुमार विमल : सौन्दर्यशास्त्र के तत्व : पृष्ठ-98
228. उदारदणार्थ, शिलर एही मतक समर्थक छलाह ।
229. Oxford Lectures on Poetry by A.C. Bradley : Macmillan & Co., London, 1950.
230. 'सब्लाइम'क लेल महिम सौन्दर्य, भव्य वा भावोत्कर्षक सेहो प्रयोग कयल जाइछ । आनन्दशंकर बापू भाई ध्रुव 'सब्लाइम'क लेल गीताक 'ऊर्जित' शब्दकेँ प्रयुक्त कयलन्हि अछि । ओ गुर्जर भाषाक कवि श्री अरदेशर फरामजी खबरदारक अभिनन्दन ग्रंथमे 'सुन्दर आ भव्य' शीर्षक एक लेख लिखने छथि, जाहिमे ओ ऊर्जित शब्दक चर्चा कयने छथि । एहि लेखकेँ हिन्दी भाषान्तर 'जागरण' पत्रिकाक मधुसंचय शीर्षक स्तम्भमे उपस्थित कयल गेल अछि । - 'जागरण' (साहित्यिक पाक्षिक पत्र) वर्ष, अंक 1, 11 फरवरी, 1932, पुस्तक मन्दिर, काशी, पृष्ठ - 21
231. "When a passage is pregnant in suggestion, when it is hard, may impossible, to distract attention from it, and when it takes a strong and lasting hold on the memory, then we may be sure that we have lighted on the true sublime."
- Longinus, 'On the sublime' trastated by H.L. Havel, Every Mons Library, No. 901.
232. डॉ. नगेन्द्र, काव्य मे उदात्त तत्व: भूमिका-भाग, पृष्ठ-10-11
233. उदात्तक सैद्धान्ति पक्षपर रस-दृष्टिसँ विचारक लेल द्रष्टव्य - उदात्त सिद्धान्त और शिल्पन : जगदीश पाण्डेय, अर्चना प्रकाशन, आरा, 1964, पृष्ठ-13-18
234. सौन्दर्य शास्त्रीय दृष्टिसँ कुरूप सेहो सौन्दर्यक एकटा अंग वा प्रकार थिक । जखन सामान्य-लौकिक दृष्टिसँ घोषित कुरूप केँ कलाकार कला-जगतमे प्रतिष्ठित कऽ सौन्दर्यक अंग बना दैछ तँ ओकर गणना, जेना A.C. Bradley आ S. Alexander कहलन्हि अछि, 'Difficult Beauty' मे होबय लगैछ । द्रष्टव्य - Beauty and other Forms of Value, S. Alexander, 1933, P. 164.
235. सौन्दर्यशास्त्र के तत्व : डा. कुमार विमल, पृष्ठ, 97
236. प्राचीन यूनानी जातिमे शरीरिक बलिष्टता तथा कला-प्रेमपर अत्यधिक बल देल जाइत छल ।
237. "Beauty, like morals, tends to vary with geography. The natives of Tahiti admired flat noses and compressed the nostrils and foreheads of their children, as they said, for beauty's sake".
- Darwin : quoted from 'The pleasures of Philosophy" by Will Durant, p. 201.
238. कालिदास : अभिज्ञानशाकुंतल, 5/2; भवभूति : उत्तररामचरित 6/12
239. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य की भूमिका, (1950), प्रकरण 7, कवि-प्रसिद्धियाँ (परिशिष्ट भाग) ।

240. ओएह : परिशिष्टक आठम प्रकरण, स्त्री-पुरुष ।
241. डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य की भूमिका: परिशिष्टमे स्त्री-रूप तथा, Sushil Kumar De', 'Traeatment of Love in sanskrit Literature (1929), P. 39 मे एहि विषयक विशद् विवेचन भेल अछि ।
242. विश्वनाथ : साहित्यदर्पण : 3/90
243. Sushil Kumar De, 'Treatmet of Love in Sanskrit, Literature' P. 38-41.
244. विश्वनाथ : साहित्यदर्पण 3/39
245. ओएह : 3/91-92
346. भवभूति : माधवमालती, 6/18, उत्तररामचरित् 3/13 आदि ।
247. शीलं प्रधानं पुरुषे तद्यस्येह प्रणश्यति ।
न तस्य जीवितैर्नाथ न धनेन न बंधुभि: ।। - वेदव्यास, महाभारत
248. "There is no substitute for beauty of mind and strength of character." - J. Allien.
249. "A blush is sign that nature hangs to show where chestity and honour dwell." - Gauthold
250. यथा खनन् खनित्रेण भूतले वारि विन्दति ।
तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति ।। - चाणक्य
- जेना कोदारिसँ कोरि कऽ मनुक्ख पतालसँ जल प्राप्त करैछ, तहिना गुरुगत विद्या सेवासँ प्राप्त होइछ ।
251. "Mercy is twice blessed, it blesseth him that gives, and him that takesl" - Shakespeare.
252. त्यागक समान कोनो सुख नहि । - महाभारत (शांतिपर्व)
253. "Generosity is the accompaniment of high birth, pity and gratitude are its atendants." - Carnel.
254. "For men may come and men may go,
But I go on for ever." - The Brook (Lord Tennyson).
255. किं कारणं ब्रह्म कुत: स्म जाता जीवाम केन कवचे सम्प्रतिष्ठा ।
अधिष्ठता: केन सुखेतरेषु वर्तामहे ब्रह्मविदो व्यवस्थाम् ।
- श्वेताश्वरोपनिषद् ।
256. Encyclopaedia Brittanica (1977) p. 272.
257. उदाहरणार्थ जलपूर्ण गोदावरीक ई ध्वन्यात्मक वर्णन कतबा सुन्दर अछि - "एते ते
कुरुरेषु गद्गद्नद गोदावरीवारयो
मेघालम्बिनमौलिनील शिखरा: क्षोणीधृतो दक्षिणा: ।"
अन्योन्य प्रतिघात संकुल चलत्कललोल कोलाहले''
- भवभूति, उत्तररामचरितम्
"Then thou shall hear the surly sullen bell." - Shakespeare.
"The murmurous haunt of flies on summer eve. - Keats.
"And drowsy tinklings lull the distant folds" - Gray.

258. 'Treatment of Love in sanskrit Literature (p. 40) by S.K. De, Chapter on 'Beauty' in Will Durant's The Pleasures of Philosophy and the Psychology of Beauty, an article by B.L. Atreya in B.H.U. Journal, Golden Jubilee Number, 1942.

259. A General Introduction to Psycho Analysis, by Sigmund Freud, P. 156. 'Freud : His Dream and Sex Theories' by Joseph Jastrow, P. 47, 65, 'Dreams and Nightmares' Penguin Books (1954), by J.A. Hadfeild, p. 38, 39, and symbolism' A Psychological study, Banaras Hindu University : by Dr. Padma Agrawal, (1955).

260. 'Broadly put, poetry represents what is in progression, painting, what is in juxtaposition. - Basil Worsfold : The Principles of Criticism, p. 107.
"Bodies with their visible properties are the peculiar subjects of painting.............actions are the peculiar subjects of poetry and this is because painting can only represent a single moment of time, while poetry in describing bodies, must give in temporal sequence what has been received as a single impression........Art has nothing to do with sequence in time or juxtaposition in place. Painter and poet express not the material detail of the practical world, but their own single states of mind. If the painter represents an action he does not petrify one instant, as does the photo graph of a moving person. He gives the whole movement Unifying in his representation, a multitude of impressions. He gives, in fact, himself as impressed by the action, his own mental representation of it....." - R. A. Soctt James : 'The Making of Lieterature'.

261. 'If you ask me to draw some particular true, and I am not artist, I try to copy every detail, lest I should otherwise lose the peculiarity of the true, forgetting that the peculiarity is not the personality. But when the true artist comes, he overlooks all details and gets into the essential characterization." - Tagore : 'Personality' p. 23.

262. 'The experience.......must be whole and entire, both I saw what I felt." - L. Abercrombie : Principles of Criticism.

263. 'But when our heart is fully awakened in love, or in other great emotions our personality is in its flood tide. Then it feels the laughing to express itself for the very sake of expression. Then comes art, and we forget the claims of necessity, the thrift of usefulness, -the spires of our temples try to kiss the stars and the notes of our music to fathom the depth of the ineffable." -Tagore : Personality' p. 17

264. "Works of Art therefore, from a cathedral to a sonnet are symbolic; that is to say they have a quality which is addressed to and perceived by, the mind over and above the quality or qualities which are perceived by the senses." - W. Basil Worsfold : Judgement in Literature, p. 5

265. Poetry, then of all the arts has the least material basis.......But the mental aspects of the life and the scenes of external nature, which are thus presented by the ideas, or combination of ideas of which these words are the symbols, is all important. Poetry speaks directly to the mind, for ideas, or material pictures are the rough materials of the poet. and no medicine

is so powerful to affect the imagination as language." - W. Basil Worsfold : Judgement in Literature, P. 10.

266. "There is a beauty which is never found in Nature but which requires a working of human thought to elecit it from Nautre, a beauty not of parts and single person, but of complex totalities, a beauty not of flesh and blood, but of mind, imagination and feeling. It is this sysnthetic, intelectural spirit, penetrated beauty, to which the acts aspire." - R. K. Ramaswami : Indian Aesthetics, p. 20-21.

267. "But when an artist has to say, he can not express by merely informing and explaining.......In poetry we have to use words which have got the properties - which do not merely talk, but conjure up pictures and sing." - Tagore : 'Personality' p. 16

268. वाक्यं रसात्मकं काव्यं : विश्वनाथ : साहित्यदर्पण, 1/3
सौंदर्यमलंकारः - वामन : काव्यालंकार, 1/1/2

269. काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते । - दंडी : काव्यादर्श : 2/1

270. काव्यशोभायाः कर्तरिधर्माः गुणाः । तदतिशय हेतवोलंकाराः ।
-वामन : पं. बलदेव उपाध्यायकृत संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ.-363 सँ उद्धृत ।

271. "वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यभंगीभणितिरुच्यते ।
वक्रोक्तिः प्रसिद्धाभिधान व्यतिरैकिणी विचित्रैवाभिधा
वैदग्ध्य कविकोशलं तस्य भंगी विच्छितिः ।" - ओएह, पृ.-364सँ उद्धृत ।

272. "प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम् ।
यत्तत्प्रसिद्धावयवाति रिक्तं विभाति लावण्यमिवांगनासु ।।"
-ध्वन्यालोक : प्रथम उद्योत, कारिका, 4
आचार्य विश्वेश्वरकृत हिन्दी ध्वन्यालोक -1952/, प्र. 23सं. उद्धृत ।

273. "काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति" - ध्वन्यालोक, 1

274. "गुणालंकारौचित्य सुंदरशब्दार्थशरीरस्य सतिध्वननात्मनि आत्मनि काव्य-रूपताव्यवहारः ।" - लोचन : पं. बलदेव उपाध्याय कृत भारतीय साहित्य शास्त्र भाग-1, पृ.-8क पाद-टिप्पणीसँ उद्धृत।

275. "औचित्यस्य चमत्कारकरिणश्चारुचर्वणे ।
रसजीवितभूतस्य विचार कुरुतेधुना ।।" औचित्यविचार चर्चा, कारिका 3
"उचितं प्राहुराचार्याः सदृशं किल तस्य यत् ।
उचितस्य च यो भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते ।।"
- हरिदास संस्कृत-ग्रन्थमाला (24-25-26), बनारस, 1933 ।

276. "In the acquisition of this blessing (Ideal Beauty) human nature can find no better helper than love."
- Plato : 'Symposium', p. 95.

277. "A thing is beautiful first of all because it is desired. As we desire nothing because it is good, but call it good because we desire it; so we desire nothing originally because it is beautiful, but we consider it beautiful because we desire it." - Spinoza, quoted from Will Durant's

'The Pleasures of Philosophy (1952), p. 192-193.
"The lovely is primerily that which is loved." - Ebid, P. 197.

278. "Beauty, therefore, whether a persons, of things, of nature, of art is the child of love wich originates in sexual impulse." -Dr. B.L. Atreya : B.H.U. Silver Jubilee Number, p. 51.
"Love, then, is the mother of beauty, and not its child, it is the sole origin of that primary beauty which is a person's and not of things."
- Will Durant : The Pleasures of Philosophy, p. 195.

279. "All thoughts, all passions, all delights,
Whatever stirs this mortal flame.
All are but ministers of love,
And feed his sacred flame." -Coleridge.

280. "प्रिया तु सीता रामस्य दाराः पितृकृता इति ।
गुणे रूपगुणेश्चापि प्रीतिर्भूयोप्यवर्धत ।।"
भवभूति : उत्तररामचरितम्, 6/31

●

द्वितीय अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्यक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

द्वितीय अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्यक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

(क) मानवक प्रेमक प्रति आकर्षणः काम, सेक्स आ प्रेम

प्रेम ओ अनुकूलवेदनीय मनोवृत्ति थिक जे कोनो व्यक्ति, जीव वा पदार्थक सौन्दर्य, गुण, शील, सामीप्य आदिक कारण उत्पन्न होइछ । व्यापक अर्थमे मनोवृत्तिक दू भेद होइत अछि – अनुकूलवेदनीय आ प्रतिकूलवेदनीय । अनुकूलवेदनीय मनोवृत्तिक अन्तर्गत सुखद अनुभूतिसभक गणना कयल जाइछ आ प्रतिकूल वेदनीय मनोवृत्तिक अन्तर्गत जीवनक दुःखद अनुभूतिकेँ लेल जाइछ । अनुकूलवेदनीय मनोवृत्ति आकर्षणक केन्द्र होइछ तथा प्रतिकूलवेदनीय मनोवृत्ति विकर्षणक ।

मनुष्यक अतिरिक्त अन्य जीव वा पदार्थसँ प्राप्त अनुकूलवेदनीय मनोवृत्तिकेँ प्रेमहि कहल जाएत । मनुष्यमे अपन पोसुआ कुकुर, घोड़ा, बिलाड़ि आदि जीव तथा प्राकृतिक सौन्दर्य, स्वदेश, अपन कलम, पुस्तक आदि पदार्थक प्रति अपार स्नेह एवं अगाध ममत्व पाओल जाइछ। कुकुर, घोड़ा, बिलाड़ि आदि अपना मालिकक प्रति अनेक प्रकारसँ अपन प्रेम-प्रदर्शन करैत अछि आ आवश्यकता पड़ला पर अपना स्वामीक लेल अपन प्राणहुक बाजी लगा दैत अछि । प्रकृतिक अनन्त सुषमा पर मन्त्र-मुग्ध भेनिहार सहृदय तथा स्वदेशक बलिवेदी पर अपन प्राण-न्योछावर कयनिहार देशभक्तक कोनो कमी नहि । पंरच मनुष्य तथा ओकरासँ इतर पदार्थक बीच ओ रागात्मक सम्बन्ध स्थापित नहि भऽ पबैछ, जे मनुष्य आ मनुष्यक बीच होइछ। घोड़ा, कुकुर आदि जीवमे तँ यत्किंचित संवेदनशीलता रहबो करैछ, मुदा पदार्थसभमे तँ एकर एकान्त अभाव रहैछ । यैह कारण अछि जे वास्तविक प्रेमक प्रतिष्ठा मनुष्य आ मनुष्यक बीचहि संभव भऽ सकैछ ।

आलम्बनभेदसँ मनुष्य-मनुष्यक बीच स्थापित प्रेमक कैकटा भेद भऽ सकैछ – यथा, पिता पुत्रक प्रेम, गुरु-शिष्यक प्रेम, मित्र-मित्रक प्रेम, स्त्री-पुरुषक प्रेम आदि । एहि सभ प्रकारक वर्णन पूर्व अध्यायमे विस्तारपूर्वक कयल गेल अछि । एतय एतबे कहबाक अछि जे स्त्री-पुरुषक प्रेम अन्य प्रकारक

प्रेम-सम्बन्धसँ भिन्न होइत अछि । स्त्री आ पुरुषक प्रेमक मूलाधार काम वा सेक्स अछि । काम वा सेक्समे आकर्षणक जे गुरुत्व होइछ, ओ अन्यत्र नहि पाओल जाइछ । दोसर प्रकारक प्रेमसम्बन्धमे आश्रय आ आलंबन अपन स्वतंत्र अस्तित्व बनौने रहैत अछि, मुदा स्त्री-पुरुषक प्रेममे ओकर व्यक्तित्वक पृथक् सत्ता नष्ट भऽ जाइछ, दुनू व्यक्तित्वक नीर-क्षीर-मिश्रण भऽ जाइछ । एकेकेर शरीर, मोन आ आत्मा, दोसराक शरीर, मोन आ आत्मासँ मिलिकऽ एक भऽ जाइछ । एहि प्रकारक तादात्म्य-मूलक प्रेम दृढ़ एवं स्थायी होइत अछि।

भारतवर्ष एकटा धर्मप्राण देश थिक । एहिठाम कामकेँ धर्मसँ सम्बद्ध मानल गेल अछि । ऋग्वेदमे 'काम' कामनाक अर्थमे प्रयुक्त भेल अछि ।[1] 'एकोऽहं बहुस्यामि' क मूलमे सेहो यैह भावना निहित अछि । सृष्टिक आधार, वेदसभमे वर्णित 'विश्वरेतस' यैह 'काम' थिक। अथर्ववेदक 'कामसूक्त'मे 'काम'केँ विस्तृत अर्थमे ग्रहण कयल गेल अछि । एहिठाम 'काम'क अर्थ 'संकल्पमय' थिक ।[2] 'काम ज्येष्ठां'क अर्थ संकल्पसभक कारणसँ काम श्रेष्ठ मानल गेल अछि । बृहदारण्यकोपनिषद्क चतुर्थ ब्राह्मणमे कहल गेल अछि जे प्रजननक विषयकेँ घृणास्पद नहि बुझबाक चाही । एहि प्रकरणमे संतानोत्पत्तिक सांगोपांग चर्च कयल गेल अछि । वैदिक साहित्यमे तँ स्थान-स्थान पर काम-क्रियाक स्पष्ट रूपेँ उल्लेख कयल गेल अछि ।[3] नव-विवाहित दम्पतिकेँ संभोगविधि बुझयबाक समय वैदिक ऋषि कोनो प्रकारक संकोच नहि कयने छथि ।[4] संभोग कार्यमे स्त्रीक कामोत्तेजनाक लेल ईश्वरसँ सहायताक हेतु प्रार्थना कयल गेल अछि तथा संभोगकर्त्ता पर सवितादेवीक प्रसन्न होयबाक कल्पना सेहो कयल गेल अछि। ऋग्वेदक 'यम-यमी-संवाद'[5] कामुकतासँ ओत-प्रोत अछि, परंच ओहिमे अनुभूतिक एतेक स्वाभाविक अभिव्यंजना भेल अछि जे ओकरा काव्यत्वसँ शून्य नहि कहल जा सकैछ । यौवन-विभोर बालिका यमी, यमसँ शारीरिक मिलनक प्रस्ताव अत्यन्त उत्तेजित शब्दमे करैत कहैछ - "आउ, रथक दूटा पहिया जकाँ हम दुनू एक-दोसरासँ मिलि जाइ[6] - जाहि प्रकारेँ लता वृक्षक चारूभर लेपटा जाइछ, ओही प्रकारेँ हमहुँ....[7]" यमीक उक्तिमे विभिन्न प्रकारक संचारीभावसभ सेहो अनुभूतिपूर्ण अछि। ओ दैन्यपूर्ण शब्दमे उपालम्भ दैत छैक- 'ओ युवक (भाइ) की भेल जकरा रहैत हम अनाथिनी जकाँ छिछिया रहल छी ? आह ! हम केहन बहिन छी जे भायकेँ रहलो सन्ता सन्ताप भोगि रहल छी ।[8]' अन्तमे ओ निराश भऽ कय अपन क्षोभ व्यक्त करैत अछि - 'ओह! यम, अहाँ बड़ डरपोक छी, हमरा नहि बुझल छल जे अहाँ एतेक कठोर हृदयक लोक छी ।[9]'

उपर्युक्त प्रसंगक किछु बात विशेषरूपसँ उल्लेखनीय अछि - पहिल ई जे काम-क्रियाक कोनो एक शब्दक प्रयोग नहि कऽ दुनू-यम-यमी द्वारा पैघ वाक्यक प्रयोग कयल गेल अछि जाहिसँ ई प्रतीत होइछ जे एहिकालधरि एहि क्रियाक नामकरण नहि भऽ सकल छल । दोसर, एहिमे आलिंगन आदि चेष्टासभक दुनू निःसंकोच भावसँ प्रयोग कयलन्हि अछि। संभवतः एकरा तखन अश्लील नहि बुझल जाइत छल। तेसर, एहि समयमे भाय-बहिनक संसर्ग पर प्रतिबन्ध लागि चुकल छलैक, मुदा एकर ततेक गँहीर प्रभाव नहि पड़ल छलैक जाहिसँ यमीकेँ एहन प्रस्ताव करबामे संकोच होइक । चारिम, ई प्रतिबन्ध सामाजिक नहि भऽ कय धार्मिक दृष्टिकोणसँ लगाओल गेल छल, कारण यम, यमीक प्रस्ताव स्वीकार करबामे यैह आपत्ति प्रकट करैछ जे देवतालोकनिक दूत सर्वत्र विचरण कऽ रहल अछि, ओ सभ देखि लेत ।[10] किछु विद्वान यम-यमी-संवादकेँ आर्य जातिक लेल कलंक बूझि यम-यमीकेँ पति-पत्नी सिद्ध करबाक प्रयत्न कयने छथि ।[11] मुदा एहिमे 'भ्राता' आ 'स्वसा' शब्दक प्रयोग एतबा स्पष्ट रूपमे भेल अछि जे एकरा पति-पत्नी नहि मानल जा सकैत अछि ।[12] एकर अतिरिक्त ऋग्वेद आ अथर्ववेदक किछु आरो एहन अंश अछि जाहिमे कामुकताक चित्रण तँ अछि, मुदा ओ शुष्क अछि, आ काव्यक दृष्टिसँ एकर कोनो महत्व नहि अछि । एकर अतिरिक्त, तैत्तरीय ब्राह्मणमे कामक तुलना समुद्रसँ कयल गेल अछि।[13] तैत्तरीय आरण्यकमे प्रजाक उत्पादनकेँ प्रतिष्ठाक कार्य बुझल गेल अछि। लोकमे उत्तम प्रजाक हेतुकेँ निरन्तर कायम रखलेसँ पुरुष पितृ-ऋण सँ मुक्त होइत अछि । यैह कारण जे प्रजाक उत्पादनकेँ सेहो परम तप कहल गेल अछि ।[14] श्रीकृष्ण गीतामे अपनाकेँ धर्मक अविरूद्ध काम कहलन्हि अछि ।[15]

भारतीय धर्मशास्त्रसभमे कामक गणना चारि पुरुषार्थमे कयल गेल अछि। परंच अर्थ आ कामकेँ सतति धर्मसँ नियंत्रित राखल गेल अछि। स्वयं वात्स्यायन लिखने छथि जे सय वर्षधरि आयुक भोग कयनिहार मनुक्ख अपन जीवनकेँ विभिन्न आश्रममे विभक्त कऽ धर्म, अर्थ, काम उक्त तीनूक एहि प्रकारेँ उपभोग करथि जे ई तीनू एक दोसरासँ सम्बद्ध सेहो रहय आ परस्पर विधाकारी सेहो नहि होअय ।[16] धर्मसँ च्युत भऽ काम अपन उच्च पदसँ स्खलित भऽ जाइत अछि ।

कालिदासक 'कुमरसंभव'क आध्यात्मिक अर्थ यैह अछि जे धर्म-विरूद्ध काम फलदायक नहि भऽ कय अमंगलकारी होइत अछि । काम मात्र

बाह्य सौन्दर्यसँ शिव (कल्याण) केँ वशमे करए चाहैत छल। मुदा मात्र शारीरिक सौन्दर्योपासना कल्याणप्रद नहि होइछ । यैह कारण जे कामकेँ शंकरक कोपाग्निमे भस्म होबय पड़लैक । शिवक प्राप्तिक लेल तपस्याक अग्निमे जरब अनिवार्य । तपःपूत पार्वतीयेँ शिवक वरण कऽ सकलीह । धर्म, अर्थ आ काममे कालिदास धर्मक श्रेष्ठता सिद्ध करैत पार्वतीक तपस्याक प्रति कहबौलन्हि अछि – 'हे देवि, अपनेक एहि आचरणसँ बूझि रहलहुँ अछि जे धर्म, अर्थ आ काम-एहि तीनूमे धर्म सभसँ बढ़िकऽ अछि, कारण अहाँ अर्थ आ कामसँ अपन मोनकेँ हटाकऽ मात्र धर्मकेँ ग्रहण कऽ ओकर सेवा कय रहल छी ।[17]'

वात्स्यायन कामक परिभाषा लिखैत कहने छथि जे आत्मासँ संयुक्त, मोनसँ अधिष्ठित काम, त्वचा, आँखि, जिह्वा आ नाक (एहि पाँचो इन्द्रिय)क इच्छानुकूल (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) अपन-अपन विषयमे प्रवृत्त होयब काम थिक ।[18] कामक एहि परिभाषामे आत्मासँ संयुक्त तथा मोनसँ अधिष्ठित शब्द विशेष महत्वपूर्ण अछि । यदि मोनसँ अधिष्ठित इन्द्रियसभ पर आत्माक नियंत्रण नहि हो तँ ओ इच्छित दिशामे बहकि जायत । एहिसँ व्यक्ति आ समाज दुनूक अहित होयत। यैह कारण जे काम पर धर्मक नियंत्रणकेँ वात्स्यायन सेहो स्वीकार कयलन्हि अछि ।

उपर्युक्त परिभाषासँ काम आ सेक्सक अन्तर सेहो स्पष्ट भऽ जाइछ। वात्स्यायन, कालिदास आदि कामकेँ धर्मसँ नियंत्रित कहि एहि पर वृहत्तर सामाजिक दृष्टिसँ विचार कयने छथि । भिन्न-भिन्न युगमे कामक चाहे जे अर्थ रहल होउक, मुदा लोकजीवनमे ई बहुत किछु धर्म निरपेक्ष अछि आ सेक्सक समान अर्थमे व्यवहृत होइत रहल अछि । मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ धर्म नियंत्रित कामक कोनो महत्व नहि होइछ ।

मनोविज्ञानक क्षेत्रमे सेक्स (SEX) सर्वप्रमुख मूल प्रवृत्ति अछि। फ्रायड तँ सेक्स लिबिडो (SEX LIBIDO)- केँ अपन मनोविज्ञानक मूल आधार मानैत छथि । हुनक ई सिद्धान्त तीन शब्दमे व्यक्त भेल अछि – 'शैशवीय दमित कामवृत्ति' । यैह कारण जे मनोविज्ञानक अर्थमे प्रयुक्त हेबाक लेल कामक धार्मिक – आध्यात्मिक खोलकेँ उघाड़ि कऽ फेकि देबय पड़त । वस्तुतः काम वा सेक्स एकटा स्थूल शारीरिक भूख थिक, ओ पुरुष-स्त्रीक प्रेमक आधारो थिक, मुदा ओकरा प्रेमक समानार्थो नहि कहल जा सकैछ । काम तृप्तिक अपेक्षा प्रेममे आत्यंतिक ऐन्द्रिय आनन्दक मात्रा

अधिक रहैछ । काम-जन्य सम्बन्ध मात्र अतृप्ति काले धरि सीमित रहैछ, जखन कि प्रेमजनित सम्बन्ध चिरस्थायी होइछ । फ्रीडलेण्डरक मतानुसार जखन विभिन्न इन्द्रियसभ केन्द्रीय स्नायु प्रणालीकेँ एक विशेष आकर्षक पदार्थ (FETISH [19]) क प्रचुरमात्रामे उपस्थितिक सूचना दैछ, तखन दू प्राणीमे मात्र यौन सम्बन्ध नहि प्रत्युत् एकटा स्थायी प्रेम सम्बन्धक सृष्टि सेहो होइछ ।[20]

एहि विशेष पदार्थ, अर्थात् फेटिसेक उत्पत्तिक हेतु ओ रूप, शब्द, गंध, रस, स्पर्श आ चुंबनक अनिवार्यता पर जोर देलन्हि अछि। वात्स्यायन सेहो एहि बात सभ पर विचार कयने छथि, परंच चुम्बनक एहि प्रसंगमे ओ फराकसँ उल्लेख नहि कयने छथि जे एक प्रकारेँ ठीके अछि, कारण पाश्चात्य काम-क्रीड़ामे चुम्बनक विशेष महत्व अछि, तथापि एकर एक फराक कोटि निर्धारित करब अवैज्ञानिक अछि । वस्तुतः चुम्बनमे रस आ स्पर्शक समन्वित अनुभूति होइछ । भरतक नाट्यशास्त्रमे सेहो कामोत्पादनक प्रसंगमे श्रवण आ दर्शन आदिक महत्वकेँ स्वीकार कयल गेल अछि ।[21]

रूपक सोझ सम्बन्ध आँखिसँ होइछ । ककरहु रूप-वर्णन सुनि कऽ हमरापर ओकर ओतबा प्रभाव नहि पड़त, जतबा ओकर प्रत्यक्ष दर्शन कयलासँ (LOVE AT FIRST SIGHT) वा चक्षुप्रीति रूपक पहिल प्रभावे थिक । दांतेक कथन छन्हि जे रूपदर्शनसँ नारीक प्रेमकेँ पुनर्जीवित कयल जा सकैछ ।[22] रूप-दर्शनक पश्चात् प्रेमी, प्रियक मधुर वाणी केँ सुनबाक लेल व्यग्र भऽ जाइछ । एक बेर ओकर वाणीसँ परिचित भऽ गेला सन्ता ओ ओकरा बेर-बेर सुनियो कऽ आतृप्त बनल रहैछ ।

प्रत्येक व्यक्तिक शरीरसँ एक प्रकारक गन्ध बहराइत अछि । हेवलाक एलिस (HAVLOCK ELLIS) नीग्रो, जापानी, अंग्रेज आदि जातिक गंधक विस्तृत वर्णन कयने छथि । एमाइल जोला तथा नित्शेक घ्राणशक्ति सेहो बड़ तीव्र छलन्हि । ई दुनू व्यक्ति विभिन्न जाति आ सम्प्रदायक व्यक्तिक गंधक यथार्थ चित्रण प्रस्तुत कयने छथि । वात्स्यायनक कामसूत्र मे गन्ध-सम्बन्धी चर्च सेहो द्रष्टव्य थिक । पद्मिनी नायिका सभक शरीरक उल्लेख तँ साहित्यसभमे भेले अछि ।

स्पर्शक ओतबहि महत्व अछि जतबा रूपदर्शनक । स्त्री-पुरुषक स्पर्शमे विद्युत-तरंग उठैछ । एहि तरंगक उत्पत्ति शरीरक रासायनिक प्रक्रिया (CHEMICAL REACTION) द्वारा होइछ । एहिमे ऐन्द्रिय कुंठासभकेँ बहिर्गत

होयबाक मार्ग भेटैछ । फ्रीडलैंडरे जकाँ वात्स्यायन सेहो स्पर्शक महत्वकेँ स्वीकार करैत लिखने छथि - 'चुम्बनादि प्रासंगिक सुख-सहित विशेष अंगसभक स्पर्श भेला पर जे फलवती आनन्दक प्रतीति होइछ, ओ प्रधानतः काम थिक । ई स्पष्ट अछि जे वात्स्यायन सर्वत्र धर्मसापेक्ष कामे दिस हमर ध्यान आकृष्ट कयने छथि । हमरालोकनिक देशमे यद्यपि कामभावनाकेँ धर्मसँ संयुक्त कय देखल गेल अछि तथापि ओकर सर्वतोभावेन निंदा कखनहु नहि कयल गेलैक अछि । अन्य देशक अपेक्षा कामभावनाक पवित्रताक व्याख्या सेहो एहि देशमे बेस भेल अछि । मात्र शारीरिक बुभुक्षाक रूपमे एहिठाम कामकेँ नहि देखल गेल अछि । एहिमे मोन आ आत्माक संयोगकेँ सेहो अपेक्षित बुझल गेल अछि । मनोविज्ञानक्ताक मतेँ सेक्स वा काममे जतय मोन आ आत्माक संश्लेषण होइछ, ओतहि प्रेम होइछ । काम मूल प्रवृत्ति अछि आ प्रेम भाव । भाव एक मानसिक स्थिति अछि, स्थूल संभोग-प्रवृत्ति नहि ।

प्रेमक अनौपचारिकता

कार्ल मेनिंगर प्रेमक लेल मैत्रीक अनिवार्यते नहि स्वीकार कयलन्हि अछि, प्रत्युत मैत्रीकेँ स्थायीत्व प्रदान करबाक लेल कतिपय विशिष्ट आयोजनक उल्लेख सेहो कयलन्हि अछि । मित्रताकेँ स्थिर बनाकऽ रखबाक लेल ओ एक संग भोजन करब, उपहार लेब, उपहार देब, परस्पर वार्तालाप करब आ एक संग कार्य करब - ई पाँच गोट उपादान निर्धारित कयलन्हि अछि।[23] पंचतंत्रमे जे मित्र-लक्षणक उल्लेख कयल गेल अछि, ताहिमे तथा कार्ल मैनिंगर (KARL MENNINGAR) क उपर्युक्त आयोजनमे लक्षणसाम्य देखना जाइछ -

'भुङ्क्ते भोजयते चैव ह्यम् वक्ति ऋणोति च ।
ददाति प्रतिगृह्णाति षड्विधं मित्र लक्षणम् ॥'

मुदा एहि प्रकारसँ पोषित मित्रता-जन्य प्रेम कखनो स्थायित्व नहि प्राप्त कऽ सकैछ, कारण एहि व्यापार सभकेँ अवरूद्ध भऽ गेला पर ओ दुर्बल भए जाइत अछि । वस्तुतः वास्तविक प्रेम, उपचारनिरपेक्ष प्रेममे आदानक भावना कखनो रहबे नहि करैछ, एहिमे तँ मात्र प्रदाने-प्रदान देखना जाइछ ।[24] नारद भक्तिसूत्रमे लिखल गेल अछि जे प्रेममे कामना नहि होइछ, ओ तँ निरोध (त्याग) स्वरूप अछि ।[25] एकर पोषणपरक बाह्य उपचार दिस लक्ष्य कय एकटा अन्य स्थान पर कहल गेल अछि "मैत्री चाप्रणयात

समृद्धि-रनयात स्नेह प्रवासाश्चयत्" अर्थात् प्रवासमे रहलासँ स्नेह नष्ट भऽ जाइछ । परंच कालिदास एवं भवभूति सदृश द्रष्टा कवि उपचारसापेक्ष प्रेमक समर्थन कखनो नहि कयलन्हि । हिनकालोकनि प्रेमकेँ दोसरे दृष्टिसँ देखलन्हि । कालिदासक कथन छन्हि -

'स्नेहानहुः किमपि विरहे ध्वंसिनस्ते त्वभोगात् ॥
इष्टे वस्तुन्युपचितरसाः प्रेमराशी भवन्ति ॥'

कहल जाइछ जे विरहमे प्रेम मौला जाइत अछि, मुदा वस्तुतः वियोगमे प्रेमक प्रयोग नहि भेला सन्ता ओ संचित भए कय राशिभूत भऽ जाइछ । जे प्रेम वियोगमे मौला जाइत अछि जो उपचारसापेक्ष प्रेम थिक । वास्तविक प्रेम एकनिष्ठ आ एकांतिक होइछ ।[26] भवभूति सेहो प्रेमक बड़ स्पष्ट एवं मार्मिक व्याख्या कयलन्हि अछि -

'अद्वैत सुख दुःखयोरनुगतं, सर्वास्ववस्थासु यत्
विश्रामो हृदयस्य यत्र, जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः
कालेनावरणत्ययात्परिणाति यत्स्नेहसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्राप्यते ।'

वास्तविक प्रेम सुख-दुःख - दुनू अवस्थामे अद्वैत रहैछ - जँ प्रेमी सुखी होइत अछि तँ प्रिय सेहो सुखी होइछ । जँ प्रेमी दुःखी होइत अछि तँ प्रिय सेहो दुःखी होइछ - प्रियहृदयकेँ ओहिठाम प्रत्येक अवस्थामे विश्राम प्राप्त होइछ । वृद्धावस्थाक अयलो उत्तर ओकरामे रसक कमी नहि रहैछ । समय व्यतीत भेलापर बाह्य आवरणकेँ हटि गेलासँ जे परिपक्व स्नेहक सार रहि जाइछ, ओएह वास्तविक प्रेम थिक ।

औपचारिकताक व्यर्थता सिद्ध करैत भवभूति एक अन्य स्थान पर लिखने छथि -

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोपि हेतुः
र्न खलु बहि रूपाधीन प्रीतयः संचयन्ते ।
विकसति हि पतंगस्योदये पुण्डरीकं
द्रवति च हिमरश्याबुद्गते चन्द्रकान्तः ।[27]

प्रीति कोनो बाहरी कारणसँ उत्पन्न नहि होइछ, अपितु कोनो आन्तरिक कारण आपसमे मिलबैत अछि । कतय पोखरिमे संकुचित कमल आ कतय आकाशमे उदित सूर्य । मुदा सूर्य केँ उदित होइते कमल विकसित भऽ जाइछ आ चन्द्ररश्मिसँ चन्द्रकान्त मणि पिघलय लगैछ ।

बाह्य कारणसँ तँ मात्र वासानाजन्य प्रीति उत्पन्न होइछ । जाहि

आन्तरिक कारण दिस भवभूति संकेत कयलन्हि अछि, ओ मोन आ आत्माक, मोन आ आत्मासँ मिलन थिक । 'प्रेम रसायनमे' स्नेहक परिभाषा देल गेल अछि –

दर्शने स्पर्शने वापि श्रवणे भाषणेपि वा ।
यत्र द्रवत्यन्तरंगः स स्नेह इति कथ्यते ॥

जतय प्रियक दर्शन, स्पर्श, श्रवण, भाषण आदिसँ अन्तःकरण द्रवित भऽ जाय, ओकरे स्नेह कहल जाइछ । स्नेहक उक्त परिभाषा अपूर्ण अछि । स्नेहमे प्रियकेर स्मृतिसँ सेहो अंतरंग द्रवित भऽ जाइत अछि ।

भवभूति प्रेमक उदात्त स्वरूपक जे व्याख्या कयने छथि, ताहि पर विचार कऽ लेब उचित होयत । ओ प्रेमक सम्बन्धमे मुख्यतः चारि बात कहने छथि –

1. वास्तविक प्रेम सुख वा दुःखमे अद्वैत रहैछ ।
2. प्रत्येक अवस्थामे ओतय हृदयकेँ विश्राम भेटैछ ।
3. वृद्धावस्था अयलोपर ओहिमे रसक कमी नहि रहैछ ।
4. प्रेम कोनो अनिर्वचनीय कारणसँ प्रादुर्भूत होइछ ।

यद्यपि ई सत्य थिक जे प्रिय आ प्रेमीक द्वैतभावनाकेँ समाप्त भेलो सन्ता वास्तविक प्रेमक आविर्भाव होइछ आ तेँ एककेर दुःख दोसराक दुःख तथा एककेर सुख दोसराक सुख भऽ जाइछ । मुदा की प्रत्येक अवस्थामे प्रेममे हृदयकेँ विश्राम प्राप्त होइछ ? हृदयक विश्राम बड़ पैघ वस्तु थीक । तुलसीदास लिखने छथि – 'मन कबहुँ न विश्राम मान्यो [28]।' मोनक विश्रामक एकमात्र मार्ग ओ भक्तिकेँ कहलन्हि अछि। भक्ति आ प्रेममे बड़ अन्तर नहि मानल जा सकैछ । भक्त आ प्रेमीक तन्मयता एकहि कोटिक होइछ । भगवानक वियोगसे भक्तक जे दशा होइछ, सैह दृश्य वियोगजन्य प्रेमीक भावविह्वलतामे होइछ । तन्मयताक यैह अवस्था हृदयकेँ विश्राम प्रदान करैछ। आब प्रश्न अछि : वियोगमे प्रेमीक हृदयकेँ विश्राम कोना प्राप्त होइछ ? यद्यपि वास्तविक प्रेमीक क्रन्दने ओकर जीवनाधार होइछ, मुदा ओ जीवनसँ घबड़ाकऽ ओकर अन्त नहि कऽ दैछ । चौदह वर्षक वनवासक समय जखन सीताक हरण होइछ, तँ प्रिय (राम)क सुखद स्मृतिक आधारहि पर ओ अपन कालक्षेप करैत छथि । ओ ओहीमे विश्रांति प्राप्त करैत छथि। राधिका कृष्णक वियोगमे तप्त होइत रहैत छथि, मुदा ई तापहि हुनका शांति प्रदान करैछ । जान बर्न वे प्रेमक सम्बन्धमे लिखैत छथि जे ई संघर्षमे शांति

थिक, कार्यव्यस्ततामे एकाग्रता थिक । प्रेमक माध्यमसँ मनुष्य स्वर्गीय ज्योतिकेँ उपलब्ध करैछ ।कार्य व्यस्ततामे सेहो प्रियक ध्यान कोन प्रकारेँ एकाग्रचित्तताक अनुभूति करबैछ, तकर मार्मिक वर्णन श्रीमद्भागवतमे भेल अछि । गोदोहनक समय, अंगना बहारैत काल, गोपीलोकनि साश्रुकंठसँ श्रीकृष्णक गुणानुवाद करैत ओहिमे अपनाकेँ लय कए दैत छलीह ।[29] प्रत्येक अवस्थामे विश्रामक अनुभव नहि कयनिहार प्रेमी विपरीत अवस्थामे एक-दोसरासँ सम्बन्ध-विच्छेद कऽ लैछ ।

प्रेमक उद्भव आ विकासक लेल यौवनक वसंत बड़ अनुकूल होइछ । मुदा एहि अवस्थाक समाप्त भेलोपर प्रेमक कोइली अपन काकलीकेँ बन्द नहि करैछ । जेना-जेना समय बीतल जाइछ, ओकर कुहुकमे नवीनता अबैछ । ओ सोचलक, संभवतः मुंज ओकरासँ प्रेम नहि करतैक । ओकर मोनक अवस्थाकेँ बुझि मुंज कहने छलैक –

मुंज भराइ मुणालिव जुव्वण रायु न झूरि ।
जइ सक्कर सय खंड थिय तो इस मीठी चूरि ॥

भाव ई जे जेना-जेना समय व्यतीत होइत जाइछ, प्रेम सेहो परिपक्व भेल जाइत अछि, कारण साहचर्यक कारणसँ प्रेमक प्रगाढ़ता आरो बढ़िते जाइत छैक ।

आब विचारणीय विषय ई थिक जे की प्रेमक उत्पति कोनो अनिर्वचनीय कारणसँ होइछ ? भवभूतिक दृष्टिमे चक्षु, श्रवण आ अनुमित प्रीतिसँ वास्तविक प्रेमक कोनो सम्बन्ध नहि । अर्थात् प्रेमक लेल बाह्य निमित्तक कोनो प्रयोजन नहि । भवभूतिक एहि कथनमे जन्मान्तर अनुभवजन्य ओहि संस्कारक ध्वनि बहराइत अछि, जे वास्तविक प्रेमक मूल कारण मानल जाइछ । एही भारतीय विश्वासक उल्लेख तुलसीदास मानस मे "प्रीति पुरातन लखै न कोई" कयने छथि । कालिदास सेहो अभिज्ञान शाकुंतलम् मे जन्मान्तर सम्बन्ध दिस संकेत करैत लिखनै छथि –

रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्
पर्युत्सकी भवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः ।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वम्
भावास्थिराणि जन्मांतर सौहृदानि ॥

– अभिज्ञान शाकुंतलम्, 5/2

मुदा आजुक ई बौद्धिक युग जन्मान्तरमे विश्वास नहि करैछ । प्रेमक कारणकेँ अनिर्वचनीय वा जन्मान्तरक सौहार्दसँ उद्भूत कहब एक आदर्शवादी

सिद्धान्त कहल जा सकैछ । अतः निश्चित रूपें स्त्री-पुरूषक प्रेमोत्पादनमे शारीरिक सौन्दर्यक प्रमुखताकें स्वीकार करय पड़त, मुदा प्रेमक परिपक्वताक लेल, प्रेमीजनक बीच मोन आ आत्माक तादात्म्य अनिवार्य अछि । एना भेले सन्ता प्रेम उपचारनिरपेक्ष भऽ सकैछ ।

प्रेमक मनोवैज्ञानिक व्याख्या

मनोविज्ञानक दृष्टिमे प्रेमक व्याख्याक कार्य बड़ कठिन एवं विवादास्पद अछि । अनेक भाव आ मनोवृत्तिक सम्बन्धमे स्वयं मनोवैज्ञानिकलोकनि मे मतैक्य नहि छन्हि । एहिसँ कार्यक जटिलता आओर बेसी बढ़ि जाइछ । मनोवैज्ञानिकलोकनि प्रेमकें प्रायः संवेग (EMOTION)क अन्तर्गत रखलन्हि अछि । मैकडूगल (Mc DOUGALL) प्रेमकें आनन्द (JOY)क अन्तर्गत मानैत छथि आ एकरा 'डिराइव्ड इमोशन'क संज्ञा दैत छथि ।[30] डा. भगवानदास प्रेम, घृणा आदिकें प्राथमिक संवेगक नामसँ अभिहित करैत छथि ।[31] डेक्सकार्टीज (DEXCARTES), स्पिनोजा (SPINOZA) आदि प्रेमकें संवेगक श्रेणीमे रखैत छथि । उडवर्थ (WOOD WORTH) अपन प्रसिद्ध ग्रन्थ साइकोलाजीमे स्नेह, प्रेम, आनन्द आदिपर विहंगम दृष्टिसँ विचार कय प्रेमकें संवेगक संज्ञा प्रदान कयने छथि । गिल्मर तथा हुनक अन्य अमेरीकी संगीक कथन छनि जे मनोवैज्ञानिक अर्थमे स्नेह आ प्रेमकें संवेग कहब सर्वथा संदिग्ध अछि, मुदा परंपरासँ ओ संवेगक अर्थमे प्रयुक्त होइत आबि रहल अछि । बहुतो परिस्थितिमे एहिमे संवेगात्मक आवेग नहि रहैछ । कखनो-कखनो उत्तेजनात्मक होयबाक स्थान पर ओ शांत दृष्टिगोचर होइछ ।[32]

ओसवाल्ड (OSWALD SCHWARZ) तँ स्पष्ट शब्दमे कहने छथि जे सामान्यतया प्रेमकें भाव कहल जाइछ, मुदा ई कथन ठीक नहि । ई ठीक अछि जे एहिमे भावात्मक तत्व प्रचुर मात्रामे विद्यमान रहैछ, मुदा ई तत्व प्रेमक एक अंश मात्र थिक आ सेहो अनिवार्य अंश नहि ।[33]

उपर्युक्त विरोधी सम्मतिक संगतिक अनुसंधानक लेल संवेगक विस्तृत विवेचनक अपेक्षा अछि । मेकडूगल प्राथमिक संवेगसभक चर्च करैत लिखने छथि जे प्राथमिक भाव सहज प्रवृत्तिक संकेत चिह्न थिक। ई प्रवृत्ति आन व्यक्तिमे सेहो तद्वत् संवेग उत्पन्न करबाक उत्तेजना उत्पन्न करैछ । ई संवेगात्मक गुण आश्रयेक संवेगात्मक चेष्टासभक संकेत करैत इहो निर्दिष्ट करैछ जे ओ कोन प्रकारक कार्य करबाक लेल विवश भऽ रहल अछि ।[34] दोसर प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक उडवर्थ संवेगक परिभाषा लिखैत कहने छथि -

'संवेग अनुभूतिक उत्तेजनापूर्ण अवस्था अछि । व्यक्ति विशेषमे ई एही प्रकारें उत्पन्न होइछ । ई मांसपेशी आ गिल्टीसभक आन्दोलित (DISTURBED) क्रियाशीलता थिक । तटस्थ प्रेक्षककें संवेगक यैह बाह्य रूप देखबामे अबैछ ।[35] मुन्न, पी.टी. युंग आदि मनोवैज्ञानिकलोकनि सेहो संवेगक सम्बन्ध मे एही प्रकारक विचार व्यक्त कयने छथि ।

उपर्युक्त परिभाषासभक आधार पर संवेगात्मक स्थितिक सम्बन्ध मे निम्नलिखित निष्कर्ष बहार होइछ -

1- ओ आश्रयक प्राकृतिक मानसिक अवस्थाकें एकटा विशेष दिशा दिस उत्तेजित करैछ ।

2- आश्रयक मोनमे एकटा क्रियाशील अनुभूति उत्पन्न होइछ ।

3- शारीरिक अवयव सभमे सेहो एकटा विशेष परिवर्तन होइछ ।

एहि प्रकारें संवेगक विशेषता सभकें देखैत प्रेमकें एहि कोटिमे नहि राखल जा सकैछ । संवेग प्रत्येक स्थितिमे एकहि प्रकारक परिवर्तन उपस्थित करैछ, मुदा प्रेम विभिन्न परिस्थितिमे भिन्न-भिन्न शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन प्रस्तुत करैत अछि । यैह कारण जे शेंड प्रेमकें संवेग नहि मानलन्हि अछि । प्रेमकें ओ स्थायीभाव (SENTIMENT) क श्रेणीमे रखलन्हि अछि । स्थायीभाव (SENTIMENT) सँ शेंडक तात्पर्य छन्हि संवेगात्मक प्रकृतिक एकटा पद्धति (A SYSTEM OF EMOTIONAL DISPOSITION) । संवेग वास्तविक अनुभूति अछि आ स्थायीभाव (SENTIMENT) ओ प्रकृति थिक, जाहिसँ अनुभूतिसभक आविर्भाव होइछ । रिबट वासना (FASHION) कें शेन्डक स्थायीभाव (SENTIMENT) क अर्थमे प्रयुक्त कयलन्हि अछि, मुदा दुनू व्यक्तिक परिभाषामे पर्याप्त अन्तर अछि । रिबट वासनाकें एकटा सघन आ दीर्घ संवेग मानैत छथि । साधारणतः रिबटक उक्त पारिभाषिक शब्द मनोवैज्ञानिकलोकनिकें मान्य नहि छन्हि ।

मनोवैज्ञानिक आ दार्शनिकलोकनिक बौद्धिक परिभाषा आ विश्लेषणकें छोड़ि शेन्ड साहित्यकारलोकनिक कृतिसभमे उल्लिखित प्रेम प्रसंगसभक आधारपर प्रेमक स्वरूप स्पष्ट करबाक प्रयास कयने छथि । हुनक कथन छन्हि जे साहित्यकार जे एहि अर्थमे पैघ मनोवैज्ञानिक छथि, ओ मनोवैज्ञानिक आ दार्शनिक सभक तर्कक समर्थन नहि करैछ। हुनक वर्णनक आधार पर ई निष्कर्ष बहराइछ जे प्रेम विभिन्न समयमे विभिन्न संवेगात्मक क्रियासँ निष्क्रमण करैत अछि । एकर अतिरिक्त ओहिमे आओर अनेक एहन

उपादानसभक संनिवेश देखल गेल अछि जकर अनुसंधान एखन धरि नहि भऽ सकल अछि।[36] शेन्ड अपना सिद्धान्तकेँ पुष्ट करबाक लेल चासर, कालरिज आ स्विप्टक रचनासभसँ किछु अंश उद्धृत कयने छथि। स्विप्टक उद्धरणक अभिप्राय अछि जे हमरालोकनि प्रेमकेँ एकटा वासना किएक कहैत छी जखन कि एहिमे अनेक वासनाक मिश्रण अछि। एहिमे दुःख-सुख, आशा-निराशा आनन्द-क्लेश सभ प्रकारक अनुभूति सम्मिलित अछि।[37] दोसर शब्दमे कहल जा सकैछ जे स्विप्ट प्रेमकेँ मात्र एकेटा संवेग (SINGLE EMOTION) नहि मानैत छथि। ओ प्रेममे सुख, दुःख, आशा आ भय ई चारिटा संवेगकेँ सन्निविष्ट कयने छथि।

स्पेन्सर अन्य मनोवैज्ञानिकलोकनिक अपेक्षा प्रेमक अधिक संगत व्याख्या प्रस्तुत कयलन्हि अछि। ओ प्रेमकेँ संपृक्त भावानुभूति (COMPOUND FEELING) क संज्ञा प्रदान कयलन्हि अछि आ यैह कारण जे ओ एकरा सभ भावसँ सर्वाधिक शक्तिशाली मानलन्हि अछि।[38] हुनका अनुसारेँ एहिमे नौ तत्व सम्मिलित अछि - यौन-प्रवृत्ति, स्नेह (AFFECTION), प्रशंसा, आदर, आत्मस्वीकृति, आत्मसम्मान, अपन बना लेबाक आनन्द (PLEASURE OF POSSESSION), स्वच्छन्दताक भावना आ गँहीर सहानुभूति। शेन्ड, यद्यपि स्पेन्सर द्वारा निर्दिष्ट तत्वक प्रशंसा करैत छथि, मुदा हुनक उपपत्तिकेँ सिद्धान्ततः स्वीकार नहि करैत छथि। हुनक कहब छन्हि जे सम्पृक्त भावक सिद्धान्त सेहो एक्के भाव (SINGLE EMOTION)क सिद्धान्त थिक। शेन्डक अनुसार स्पेन्सर एकरा संवेगसभक एकटा पद्धति नहि मानैत छथि आ एतहि हुनक सिद्धान्त त्रुटिपूर्ण भऽ जाइछ। संपृक्त संवेग सभ स्थान, परिस्थिति आ समयमे एकहि प्रकारेँ क्रियाशील होइत अछि। मुदा प्रेम विभिन्न परिस्थितिमे भिन्न-भिन्न प्रकृति ग्रहण करैछ। परिस्थितिक अनुरूप ओकर संवेगात्मक क्रियासभमे सेहो परिवर्तन होइछ। एकटा विशेष परिस्थितिमे, प्रेममे कैकटा संवेग सम्पृक्त देखना जाइछ, मुदा परिस्थितिक भिन्नताक कारणेँ ओहिमे भिन्न-भिन्न संवेगसभक संनिविष्टि प्रतीत होइछ मुदा प्रियकेर उपस्थितिमे कतबा वेदनापूर्ण एवं विषादमय।[39] स्मृति, गुणकथन आदि मानसिक दशासभमे प्रेम कौखन आशा आ कौखन भीषण निराशासँ आच्छन्न रहैछ। तेँ शेन्ड एकरा ओ पद्धति मानलन्हि अछि जाहिमे अनेक प्रकारक संवेग गुंफित रहैछ।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायड मूलवृत्ति काम (SEX INSTINCT) केँ जीवनक मूल वृत्ति मानलन्हि अछि। हुनक मतानुसार काम-वासना सेहो

प्रेमक विविध रूप धारण करैत अछि। ई दमित काम अनेक प्रकारक कुंठाक जनक थिक आ साहित्य एही कुंठासभक अभिव्यक्ति। फ्रायड प्रेमकेँ एही दृष्टिकोणसँ देखलन्हि अछि। मुदा फ्रायडक सिद्धान्त आंशिके रूपमे सत्य अछि।

उपर्युक्त समस्त विश्लेषणक आधार पर ई कहल जा सकैछ जे शेन्डक विचार सर्वाधिक तर्कपूर्ण एवं गंभीर अछि। हुनक विवेचनमे ओसवाल्ड, गिल्मर अदि सभ मनोवैज्ञानिक सभक शंकाक समाधान भेटि जाइछ।

प्रेमक सामाजिक व्याख्या

समाजमे प्रेमक समस्या कोनो ने कोनो रूपमे सर्वदा बनल रहैछ। धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितिसभक परिवर्तनसँ प्रेमक स्वरूपमे सेहो परिवर्तन भेल आ ओकरा सम्बन्धमे नव समस्या सभ जन्म लेलक। यैह कारण जे एक देश-कालक साहित्यमे प्रेमक विशेष रूपसभक चित्रण भेल अछि। समाज आ प्रेमक सम्बन्धकेँ देखैत प्रेमक सम्बन्धमे मुख्यरूपसँ तीन प्रकारक विचारधारा प्रचलित अछि-

1 - शाश्वतवादी विचारधारा
2 - विकासवादी विचारधारा
3 - साम्यवादी विचारधारा

(1) शाश्वतवादी विचारधारा :- शाश्वतवादी विचारधाराक समर्थकलोकनिक कथन छन्हि जे प्रेमक स्वरूप चिरंतन, सनातन आ शाश्वत अछि। कोनो प्रकारक सामाजिक उथल-पुथलक प्रभाव प्रेम पर नहि पड़ैछ। सृष्टिक आदिम युगमे मनुष्यक मोनमे जाहि ममत्वक उदय भेल छल, ओ एखनहुँ ओही रूपमे विद्यमान अछि। क्रोध, उत्साह, हास आदि मनोविकार वा भावक आलंबनक परिवर्तनक बात तँ एहि विचारधाराक लोकसभ स्वीकार कऽ लैछ, मुदा प्रेममे कोनो प्रकारक परिवर्त्तनक बात हुनका मान्य नहि।

(2) विकासवादी विचारधारा :- विकासवादी विचारधाराक अनुयायीलोकनिक मान्यता छन्हि जे सृष्टिक आदिम युगमे मात्र मिथनत्वक सहज वृत्तिये वर्तमान छल। एहि विकासवादक समर्थन करैत वाल्टेयर अपन ग्रंथ 'फिलासाफिकल डिक्शन' (Philosophical Diction) मे कहने छथि जे मनुष्यमे, कोनो वस्तुमे पूर्णता लऽ अनबाक प्रवृत्ति प्रकृतिप्रदत्त अछि। ओकर

यैह प्रवृत्ति प्रेममे पूर्णता लऽ अनबाक दृष्टिसँ, ओकरा एक गोट आदर्शवादी भूमिपर प्रतिष्ठित कयलक । फोरेल 'सेक्स क्वेश्चन' (Sex Ouestion) मे लिखने छथि जे प्रेम आदिम अर्थमे यौन प्रवृतिये थिक । जखन एहि यौन प्रवृत्तिक मार्गनिदर्शन मोन आ आत्मा द्वारा होबय लगैछ, तखन एकरा प्रेमक संज्ञा प्रदान कयल जाइछ । आदिम युगमे मनुष्य पशुये जकाँ समुदायमे रहैत छल । ओकरहुमे पशुये जकाँ आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदिक सहज प्रवृत्ति वर्तमान छलैक । जखन मनुष्य आखेटक आदिम अवस्थाकेँ पार कय कृषि-युगमे प्रवेश कयलक आ ओकरा लग व्यक्तिगत संपत्ति सेहो भऽ गेलैक, तँ वैयक्तिक प्रेमक आविर्भाव भेल । एहि युगमे यद्यपि प्रेम-सम्बन्ध स्थापित करबामे भाव आ बुद्धि सेहो थोड़-बहुत संग देलकैक तथापि ओहि समयमे यौन भावनेक प्रधानता छलैक । बाइबिलमे जेकबक प्रेमकथामे यौन भावनाक उत्कर्षकेँ देखाओल गेल अछि । राजा ययातिक वैदिक कथामे सेहो यौन भावनेक प्राधान्य अछि ।

(3) साम्यवादी विचारधारा :- साम्यवादी विचारधाराक अनुसार प्रेम अन्य वस्तु जकाँ सेहो परिवर्तनशील अछि । काडवेल एकरा सामाजिक सम्बन्धसभसँ सम्बद्ध भावात्मक तत्व कहलन्हि अछि । प्रायः सभ भाषामे ई शब्द द्वैत अर्थमे प्रयुक्त भेल अछि । एहिसँ काम आ सामाजिक आवेग-दुनू अर्थ निःसृत होइछ । दू शरीरधारी प्राणी प्रेमक बन्धनमे बन्हाइत अछि, दुनू एक संग रहय चाहैत अछि । एकर अनन्तर ओ दुनू गोटे समाजक आर्थिक एकाइक रूपमे क्रियाशील होइत अछि। सामान्यतः ई कहल जाइछ जे सामाजिक आ आर्थिक उत्पादनक पूर्वहि यौन-प्रेमक आविर्भाव भऽ गेल छल। मुदा भोजनकेँ जीवित पदार्थसभमे परिवर्तित कयनिहार प्रक्रिया (Metabolism), जे आर्थिक उत्पादनक प्रारंभिक रूप थिक, प्रेमक पहिने प्रादुर्भूत होइछ । एहि प्रकारेँ प्राणिशास्त्रीय आधार पर ओसभ आर्थिक उत्पादनकेँ प्रेमसँ पूर्व उद्भूत वस्तु मानैत छथि आ प्रेमकेँ एहि प्रक्रियासँ आविर्भूत तत्व स्वीकार करैत छथि । यैह प्रक्रिया स्त्री-पुरुषकेँ यौन-सम्बन्ध मे व्यक्ति-व्यक्तिकेँ मैत्रीमे, पिता-पुत्रकेँ वात्सल्यमे अनुबद्ध करैछ । अतः हिनकालोकनिक दृष्टिमे यौन प्रेम परिष्कृत आर्थिक सम्बन्धक अतिरिक्त आओर किछु नहि अछि।

फ्रायड यौन प्रेमकेँ मूलतः संकीर्ण आ आत्मकेन्द्रित कहैत छथि । हुनका विचारेँ एकर उन्नयन, आत्मबलिदान, त्याग, परोपकार, देशप्रेममे

परिणत होइछ । मुदा काडवेलकेँ उक्त सिद्धान्त मान्य नहि । हुनक कथन छनि जे त्याग, अपन आदिम आ मूलरूपमे भोजनकेँ जीवित पदार्थसभमे परिवर्तित कयनिहार वस्तु (Metabolism) क आर्थिक प्रक्रियाक अंग थिक आ ई काम भावनासँ सम्बद्ध नहि अछि तथा स्वयं काम-भावना सामाजिक-आर्थिक सबन्धसभक परवर्ती विकास थिक । सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धसभसँ उत्पन्न भऽ कालान्तरमे ई भावना वृहत् सामाजिक आर्थिक सम्बन्ध दिस गमन करैत अछि ।[40]

प्रेमक व्याख्याक लेल काडवेल मुख्यतः प्राणिशास्त्र तथा नृशास्त्रकेँ आधार मानलन्हि अछि । मुदा भोजनकेँ जीवित पदार्थसभमे परिवर्तित कयनिहार प्रक्रियाकेँ आर्थिक उत्पादनक मूल स्वीकार करब युक्तियुक्त नहि बुझना जाइछ । प्रेमसम्बन्धी साम्यवादी व्याख्याकेँ मात्र एही रूपमे स्वीकार कयल जा सकैछ जे सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धक कारणेँ प्रेमक बाह्य रूपमे बरोबरि परिवर्तन होइत रहैछ आ कालविशेषमे अर्थप्रभुलोकनिक अनुकूलहि प्रेमक मूल्यक आ स्वरूपक सेहो बहुत किछु निर्धारण होइछ ।

निष्कर्ष

1. यद्यपि शारीरिक सौन्दर्य प्रेमक मूलाधार थिक, तैयो वास्तविक प्रेममे प्रिय आ प्रेमीक मोन, शरीर आ आत्माक बीच पूर्ण तादात्म्य होइछ ।
2. वास्तविक प्रेमकेँ बाह्य उपचारक आवश्यकता नहि ।
3. मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ प्रेम संवेगक एकटा एहन पद्धति अछि जाहिमे कएक प्रकारक संवेग सन्निविष्ट होइछ । एकरा ने तँ एक संवेग (Single Emotion) कहल जा सकैछ आ ने संपृक्त संवेग (Compound Emotion) ।
4. सामाजिक दृष्टिसँ विचार कयला पर सामाजिक परिवेशमे प्रेम सम्बन्धी दृष्टिकोणमे बरोबरि परिवर्तन देखल गेल अछि ।

प्रेमक आदर्श-शरीर, मोन आ आत्माक तादात्म्य

प्लेटो (PLATO) अपन 'सिम्पोजियम' (Symposium) मे प्रेमक जे आदर्शवादी कल्पना कयलन्हि अछि से मानवीय प्रेमक सीमाक अन्तर्गत नहि अबैछ । हिनक आध्यात्मिक प्रेम 'सत्यं शिवं सुन्दरं'क प्रेम थिक । हुनक प्रेमकल्पना मांसल व्यक्तित्वकेँ स्पर्श नहि करैछ प्रत्युत ओ सूक्ष्म अतींद्रिय विचार सभक नींव पर अपन महल ठाढ़ करैत अछि ।

वास्तविक प्रेम ने तँ यौनसंभोग थिक, ने मात्र शारीरिक आकर्षण। एहिमे प्रिय आ प्रेमीक शरीर, मोन आ आत्मामे पूर्ण तादात्म्य स्थापित होइछ। भगवान् शंकरकेँ अर्धनारीश्वर एहि लेल कहल गेल अछि जे हुनकामे ओ पार्वतीमे प्रत्येक दृष्टिसँ तादात्म्य स्थापित भऽ गेल छल। हुनक अर्धनारीश्वर चित्रक यैह आध्यात्मिक रहस्य थिक। कतिपय पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक ई निर्दिष्ट कयलन्हि अछि जे अर्धनारीश्वरक भावना प्रायः प्रत्येक पुरुषमे जन्महिसँ निहित रहैछ।[41] मुदा मात्र शारीरिक आकर्षणक आधार पर उद्भूत प्रेम प्राणिशास्त्रीय स्तरक वस्तु थिक।

डॉ. भगवानदास प्रियसँ प्रेमीक मिलनेच्छाकेँ प्रेम कहलन्हि अछि। ई प्रेम दू प्रेमी केँ एक स्तर पर आनिकऽ ठाढ़ करैछ, जाहिसँ ओ परस्पर संबद्ध भऽ कय एकात्म भऽ सकय।[42] कार्ल मैनिंगर सेहो व्यक्तित्वक संमिश्रणसँ प्राप्त अनुभूत्यात्मक आनन्दकेँ प्रेम कहलन्हि अछि।[43] हेवलाक एलिस सेहो प्रेमी-प्रेमिकाक शरीर, मोन आ आत्माक तादात्म्येमे प्रेमक सत्ता स्वीकार करैत लिखलन्हि अछि जे साधारणतः भोगवृति (LUST) आ मैत्रीक संश्लेषणोकेँ प्रेम बुझबाक चाही, मुदा ने तँ सामान्य आ अगूढ़ यौन आकांक्षासभकेँ प्रेम कहल जा सकैछ, ने विविध प्रकारक मैत्री-सम्बन्धेसभकेँ। ई सत्य अछि जे भोग विरहित यौन-प्रेमक कल्पना नहि कयल जा सकैछ, मुदा जाधरि ई मनस्संघटनसभकेँ प्रभावित नहि करैछ, ताधरि एकरा यौन प्रेमक नामसँ नहि अभिहित कयल जा सकैछ।[44] भर्तृहरि प्रेममे स्थायीत्व लऽ अनबाक लेल स्त्री-पुरुषक चित्तक एकताकेँ आवश्यक मानलन्हि अछि -

एतत्काम फलं लोके यद् द्वयोरेकचित्तता।
अन्यचित्तकृते कामे शवयोरपि संगमः॥

यदि दुनू चित्तमे एकत्व अछि तँ लोकमे यैह कामक फल थिक। चित्त वा मोनक मेलक अभावमे शारीरिक संयोग शवतुल्य अछि।

उपर्युक्त परिभाषासभमे प्रकारान्तरसँ प्रेमी आ प्रियक व्यक्तित्वक तादात्म्यकेँ स्वीकार कयल गेल अछि। एलिस जाहि उत्कट लालसाक बात उठौलन्हि अछि, ओ स्त्री-पुरुषक मूलाधार थिक। ई उत्कट लालसा शारीरिक मिलन धरि सीमित अछि। ई लालसा जखन परिष्कृत आ विकसित भऽ मनोविकारक (EMOTION) रूप धारण कऽ लैछ तँ ओकरा प्रेमक संज्ञासँ अलंकृत कयल जाइछ। प्रेमी आ प्रियकेँ तादात्म्य स्थितिमे पहुँचबाक लेल अपन अहम्केँ पूर्णतः विसर्जित करय पड़ैछ। ई मैत्रीसँ बहुतो आगाक वस्तु

थिक। मैत्री उपचारक चौहद्दीक बाहर नहि जा सकैछ। शारीरिक सौन्दर्यकेँ सेहो अनुक्रम आ अनुपातक चौहद्दीमे नहि बान्हल जा सकैछ। ई एकटा मानसिक अनुभूति थिक, लालित्यबोधक ऐन्द्रिय चेतना। काम वा सैक्स जँ एहि सौन्दर्यक जड़ि थिक, तँ तत्सम्बन्धी स्वयंप्रकाश ज्ञान (INTUTION) एकर कोमल किसलय। स्वयं सौन्दर्य, भाव-समुच्चयक परागसँ श्लथ एवं कामनासभक सुरभिसँ सुरभित रंगमय पुष्प थिक। कोनहु पौधामे पुष्प आ पराग एकटा विशेष अवस्थामे अबैछ। षोडशीक सौन्दर्यक गुणगान तथा अधिकांश काव्य-नाटककेँ ओकर प्रेरक होयबाक मूल रहस्य ई थिक जे एहि अवस्थामे ओकर आँखिक कोआ तथा कर्णफूलक ईषत् गुलाबी लालीमे कामक जे प्रथम स्निग्ध स्पर्श देखना जाइछ, ओ अत्यधिक मादक आ कामोत्तेजक होइछ।

जखन प्रेमीक शरीर, मोन आ आत्मासँ प्रेमिकाक शरीर, मोन आ आत्माक तादात्म्य भऽ जाइछ, तँ ओ प्रेमक कोमल तंतुमे सर्वदाक लेल बन्हा जाइछ। ई सम्बन्ध एतबा प्रभावशाली, दृढ एवं गँहीर होइछ जे एक सम्बन्ध क पश्चात् मनुष्य दोसर सम्बन्धक कल्पनो नहि कय सकैछ। पार्वतीक प्रेम एहने छलन्हि। 'पद्मावत'क नायक रत्नसेनकेँ सेहो एही कोटिमे राखल जा सकैछ। भाव ई जे शरीर, मोन आ आत्माक तादात्म्येकेँ आदर्श प्रेमक अभिधा प्रदान कयल जा सकैछ।

(ख) मानवक सौन्दर्यप्रियता

प्रथम दर्शनमे जे प्रेमानुभूति होइछ, ओकर मूलमे सशक्त शारीरिक आकर्षण निहित रहैछ। ई शारीरिक आकर्षण मुख्यतः व्यक्तिक सौन्दर्य पर निर्भर करैछ। पुष्पवाटिकामे सीताक अलौकिक सौन्दर्यकेँ देखिकऽ राम कहने छलाह - 'जासु बिलोकि अलौकिक सोभा। सहज पुनीत मोर मन छोभा।' जाहि रामक अन्तःकरण सहजहि पवित्र अछि, ओहो शोभा सँ प्रभावित भऽ जाइत छथि तँ साधारण लोकक कथे की ?

सौन्दर्यानुभूति जतबहि स्वाभाविक अछि, ओकर विवेचन ओतबहि दुरूह। सौन्दर्यक सम्बन्धमे भिन्न-भिन्न व्यक्तिक भिन्न-भिन्न विचार अछि। किछु लोक एकरा विषयनिष्ठ कहैत छथि तँ किछु लोक विषयीनिष्ठ। जार्ज जेफ्रेक कथन छन्हि जे सौन्दर्य हमर भीतरी इन्द्रियानुभूतिक प्रतिबिम्ब थिक (BEAUTY IS THE REFLECTION OF OUR OWN INWARD SENSATION) तँ किछु अन्य समीक्षकक कथन छन्हि जे नवते सौन्दर्य थिक। मारमौंटेल सौन्दर्यक मूलमे उपयोगिता बतबैत छथि। शोफ्टसबरी आ हचेशन

विविधतामे एकताकेँ सौन्दर्यक संज्ञा दैत छथि । अरस्तू आ आगस्टाइन क्रमबद्धता तथा आनुपातिकतामे सौन्दर्य मानैत छथि ।

सौन्दर्यानुभूति ककरो प्रत्यक्ष दर्शनहिसँ उत्पन्न होइछ । जँ ई विषयनिष्ठ होइछ तँ एकरा लेल आलम्बन विशेषक आवश्यकता नहि रहैछ। निराकार परमात्मासँ प्रेमसम्बन्ध स्थापित करबाक लेल ओकर रूपक सेहो कल्पना करय पड़ैछ । मात्र नवीनतेमे सौन्दर्य नहि रहैछ । सौन्दर्य नित्य नवीन देखना जाइछ, ई अन्य बात थीक । नवीनता सौन्दर्यक गुण भऽ सकैछ, ओ स्वयं सौन्दर्य नहि अछि । कखनहुँ अपरिचित नवीन वस्तु भयानक होइत अछि । सब उपयोगी वस्तु सुन्दर हेबे करत, से आवश्यक नहि । अंगसभक क्रमबद्ध आनुपातिक संस्थान सेहो सुन्दर नहि अछि । बहुतो व्यक्तिक अंग-संघटन क्रमबद्ध आ आनुपातिक होइछ, मुदा ओकरा हम निश्चयात्मक रूपसँ सुन्दर कहबे करी, से आवश्यक नहि ।

वस्तुतः सौन्दर्यमे उपर्युक्त सभ तत्वक न्यूनाधिक समावेश रहैछ। एकर अतिरिक्त रूपमे एकटा असाधारण दीप्ति, कांति वा शोभा सेहो रहैछ। ई शोभे आकर्षणक मूल कारण थिक । एही ठाम एक दोसर प्रश्न ठाढ़ होइछ जे की उपर्युक्त सभ तत्वसँ शोभित ककरहु बाह्य व्यक्तित्व, समान रूपेँ सभक आकर्षणक विषय भऽ सकैछ ? एकर उत्तर स्पष्ट रूपेँ नकारात्मक होइछ । सौन्दर्यक कोनो सर्वमान्य आदर्श नहि निर्धारित कयल जा सकैछ, कारण विभिन्न देश-कालमे एकर रूप भिन्न-भिन्न होइछ । अतः एहिठाम कहल जा सकैछ जे रूपलावण्यसँ समन्वित शरीर प्रेमोत्पादनक मुख्य आधार होइछ जे मानवक सौन्दर्यप्रियताकेँ लक्षित करैछ ।

रूप वा सौन्दर्यकेँ निश्चित परिभाषामे नहि बान्हल जा सकैछ। सौन्दर्यक सम्बन्धमे केरिट, बोसांकेँ आ क्रोचे सदृश दार्शनिकलोकनिक विचार पर मनन कयलाक पश्चात् सामान्यतः लोक एहि निष्कर्ष पर पहुँचैत अछि जे सौन्दर्यक विश्लेषण अत्यन्त दुरूह कार्य अछि । ओकर दुर्बोध विचारसभपर उद्धरण प्रस्तुत करब एहिठाम उचित नहि बुझना जाइछ, तथापि सौन्दर्यक स्वरूप पर विचार करब तँ आवश्यक अछिये। कोनो वस्तुक प्रत्यक्षीकरण, स्मृति वा कल्पनासँ अनुभूत्यात्मक आनंदक प्रतीति होइछ । वस्तुतः जाहि गुणसँ ई प्रादुर्भूत होइछ, ओकरहि सौन्दर्य कहल जाइछ ।

उपर्युक्त कथनसँ ई भ्रम उत्पन्न भऽ सकैछ जे सौन्दर्य एक वस्तुनिष्ठ सत्ता थिक । मुदा एकहि वस्तु एक व्यक्तिक दृष्टिमे सुन्दर आ

दोसराक दृष्टिमे असुन्दर प्रतीत होइछ । एहि आधार पर ई स्पष्ट होइछ जे सौन्दर्य वस्तुमे नहि, दृष्टिमे निहित होइछ । एहि प्रकारक तर्क उपस्थित कयनिहार ई मानैत छथि जे सौन्दर्य वस्तुनिष्ठ नहि, व्यक्तिनिष्ठ होइछ । एहि दुनू दृष्टिकेँ नहि मानि, सौन्दर्यक सम्बन्धमे एक तेसर विचार ई अछि जे सौन्दर्य वस्तु आ द्रष्टाक एक विशिष्ट सम्बन्धमे होइछ। वस्तुतः उक्त दृष्टिकोण पूर्वक दुनू प्रकारक विचारक समन्वित रूप थिक । वस्तुमे अनुकूल वेदनीय आकर्षणक कारण द्रष्टाक झुकाव ओहि दिस रहैछ । ई झुकाव अंशतः विषयनिष्ठ थिक, मुदा जाधरि हृदयस्थ भावनासभकेँ जागृत कयनिहार कोनो अनुकूल पदार्थ नहि देखना जाइछ, ताधरि द्रष्टाक मोनमे सौन्दर्य चेतना नहि उत्पन्न होइछ। हृदयस्थ भावनसभक अनुकूलता पदार्थ विशेषमे पाओल जाइछ । अतः आंशिकरूपमे सौन्दर्यक वस्तुनिष्ठ सत्ताकेँ स्वीकार करय पड़ैछ । यैह कारण अछि जे पूर्व आ पश्चिमक अनेक विद्वान अंगसभक समुचित संस्थापन सौन्दर्य कहलन्हि अछि ।[45]

आब प्रश्न अछि जे कोनो सुन्दर वस्तुक प्रत्यक्षीकरणसँ ओ कोन मूलभूत भावना अछि जे आन्दोलित होइछ । एहि मूलभावकेँ अनेक विचारक कामक संज्ञा देलन्हि अछि । सौन्दर्यक सौन्दर्यशास्त्रीय (AES-THETIC) ढंगसँ विवेचन कयनिहार दार्शनिकलोकनि सेहो कामक महत्वकेँ स्वीकार कयलन्हि अछि । सांतायन (SANTAYAN) क कथन छन्हि जे सौन्दर्यबोधक भावुकतापरक पक्षक मूलमे यौन संघटकनकेँ अत्यधिक आन्दोलित होयब स्वाभाविक थिक । एकर अभावमे सौन्दर्यबोध मात्र बोधात्मक आ गणितात्मक रूपे धरि सीमित रहि जाइछ ।[46] विल डूरंट (WILL DURANT) क कथन छन्हि जे यौनभावनाक दृष्टिसँ आकांक्षित वस्तुये प्राथमिक रूपमे सुन्दर अछि । जँ एहिसँ इतर कोनो वस्तु सुन्दर प्रतीत होइछ तँ ओकर कोनो-ने-कोनो प्रकारसँ यौन भावनासँ सम्बन्ध बुझबाक चाही ।[47] मानवीय कामभावनाकेँ सर्वाधिक आन्दोलित कयनिहार विशेषता, विरोधी लिंग (OPPOSIT SEX) मे पाओल जाइछ । गौर मांट नारीकेँ सौन्दर्यक साकार रूप मानलन्हि अछि । संतायनक अनुसार नारीक लेल पुरुष सर्वाधिक सुन्दर वस्तु अछि आ पुरुषक लेल नारी सुन्दरतम कृति ।

संतायनक मतसँ सहमत नहियो भऽ कय कोलिन स्टक नव स्थापना कयलन्हि अछि । हुनक कथन छन्हि जे नारीमूर्ति, पुरुष मूर्तिक अपेक्षा, स्त्री-पुरुष दुनू पर अधिक उत्तेजना मूलक प्रभाव छोड़ैछ । हेवलाक एलिस दोसर शब्दमे

स्टाकक बातक समर्थन करैत कहैत छथि जे, जे स्त्री कलाक कनिञो शिक्षा नहि प्राप्त कयलन्हि अछि, हुनका द्वारा पुरुषक सौन्दर्यशास्त्रविहित प्रशंसा कम देखल गेल अछि, ओ निष्क्रिय रूपसँ पुरुषक सौन्दर्य सम्बन्धी आदर्शसभकेँ स्वीकार कय लेलन्हि अछि। हिनक विचारक ठीक विपरीत तुलसीदास रामचरितमानसमे लिखलन्हि अछि – 'मोह न नारि नारि के रूपा।' एहि मत सभक विवेचना किछु विस्तारक अपेक्षा रखैछ जे एतय संभव नहि ।

कोलिन स्लाक आ हेवलाक एलिस पुरुषक दृष्टिकोणकेँ जाहि रूपेँ स्त्रीलोकनिपर लादलन्हि अछि, ओकरा प्राणिशास्त्रीय आ मनोवैज्ञानिक दुनू दृष्टिसँ औचित्यपूर्ण नहि कहल जा सकैछ । नारी आ पुरुषक शरीर संघटनमे पर्याप्त मात्रामे भिन्नता पाओल जाइछ । एहना स्थितिमे एकके‌र मानसिक संघटन आ सौन्दर्य-बोध दोसरासँ भिन्न होइछ। नारी आ पुरुष एक-दोसराक पूरक अछि । नारी अपन अभावक पूर्ति पुरुषमे आ पुरुष अपन अभावक पूर्ति नारीमे करैछ। अतः स्टाकक कथन जे नारी-सौन्दर्य, स्त्री-पुरुष दुनू पर अपेक्षाकृत अधिक उत्तेजक प्रभाव छोड़ैछ, मनोवैज्ञानिक सत्यक विपरीत बुझना जाइछ ।

हेवलाक एलिसक मान्यताक सम्बन्धमे कोनो निष्कर्ष पर पहुँचबाक पूर्व नारीक सीमापर विचार कऽ लेब अत्यावश्यक अछि । समाजमे पुरुषक भाँति नारीकेँ विकास करबाक अवसर नहि प्राप्त भेलैक । पुरुषक अपेक्षा ओसभ बड़ कम ग्रंथक निर्माण कयलन्हि, जखन कि पुरुष-वर्ग अनेक ग्रंथमे अपन बुद्धि, भाव, कल्पना आदिक माध्यमसँ नारीक रूप-विन्यास ठाढ़ कयलन्हि । एकर विपरीत नारीकेँ पुरुष जकाँ अपन भावनाकेँ व्यक्त करबाक बड़ कम अवसर भेटलन्हि । नारीक प्रकृत शालीनता सेहो हुनका मार्गमे कम बाधक नहि सिद्ध भेल। यद्यपि प्रकाश्य रूपमे ओ अपना प्रेमीक सम्बन्धमे बड़ कम कहलन्हि वा लिखलन्हि अछि, तथापि पुरुष सौन्दर्य पर मोहित होयबाक अगणित कथा प्रचलित अछि। एलिस अपन पोथी 'साइकोलाजी आफ सेक्स'क तृतीय खण्डमे अपन मान्यताक पुष्टिमे परिशिष्ट जोड़लन्हि अछि। ओहिमे उल्लिखित तत्व सामान्य मनोविज्ञानक विषय नहि भऽ, असामान्य मनोविज्ञानक विषय अछि। एहना स्थितिमे हुनक कहब जे स्त्रीगण पुरुषक सौन्दर्य सम्बन्धी आदर्शसभकेँ स्वीकार कऽ लेने छथि, असामान्य (ABNORMAL) व्यक्तिसभक सम्बन्धमे ठीक भऽ सकैछ, सामान्य (GENERAL) नियमक रूपमे स्वीकार नहि कयल जा सकैछ ।

वस्तुतः रूपक वास्तविक मापक थिक 'वीर्य विक्षोभन शक्ति'। जाहि व्यक्तिमे कामभावनाक जतबा आतिशय्य होयत, ओकरा दृष्टिमे कोनो विशेष नारी ओतबहि अधिक सुन्दर प्रतीत होयतैक । कामोत्तेजनाक परिसमाप्तिक पश्चात् ओही नारीक सौन्दर्य ओहि व्यक्तिक दृष्टिमे अपेक्षाकृत कम भऽ जाइछ । मनोवैज्ञानिकलोकनिक एहि विचारकेँ अभिनवगुप्तपदाचार्य विशेष क्रमबद्ध आ तर्कपूर्ण ढंगसँ उपस्थित कयलन्हि अछि । हुनक कथन छन्हि जे हमरा आँखिकेँ रमणीय लागयवला रूप वीर्यविक्षोभजन्य सुखक प्रतीक अछि । संगीतसँ प्राप्त सुखक सम्बन्धमे सेहो यैह बात कहल गेल अछि । 'वीर्यविक्षोभ'क मापदंडसँ एक दिस विषयसौन्दर्यक माप होइछ आ दोसर दिस सहृदयताक । सुन्दर रूपकेँ देखिकऽ जकर मोन रसार्द्र नहि होइछ, ओ मनुष्यक रूपमे जड़ अछि । वीर्य विक्षोभक न्यूनता वा तँ विषय-सौन्दर्यक अपूर्णताक द्योतन करैछ अथवा विषयीक क्षुद्र वीर्यताक । विशेष चमत्कारावेश (आनन्दानुभूति वा रसानुभूति) मे निमग्न होबयवलाक जे वीर्य विक्षोभनता, सैह सहृदयता थिक ।[49]

एक देशक नारी-सौन्दर्यमे ओहि देशक निवासीकेँ जे वीर्य विक्षोभन शक्ति देखाइ पड़ैछ ओ दोसर देशक निवासीमे नहि । कारण एक देशक सौन्दर्य-कल्पना दोसर देशक सौन्दर्य कल्पनासँ भिन्न होइछ। सौन्दर्य-कल्पनाक ई भिन्नता मुख्यतः जलवायु आ सांस्कृतिक भिन्नते पर निर्भर नहि होइछ, अपितु रुचियोमे भिन्नता देखल जाइछ । सामाजिक परिस्थितिमे परिवर्तन अयलासँ परम्परागत सौन्दर्य- कल्पनामे थोड़-बहुत परिवर्तन आबि जाइछ । ई परिवर्तन सौन्दर्यक कम, सज्जापरक अधिक होइछ । कोनो जातिक प्रतिनिधि सौन्दर्य ओहि जातिक सौन्दर्य-कल्पनाक पूर्णतम विकसित स्वरूप उपस्थित करैछ । यैह कारण अछि जे सौन्दर्य सम्बन्धी धारणासभमे बड़ कमे परिवर्तन होइत अछि । कोनो विशेष जलवायुमे मनुष्यक शरीर विशेष ढंगे संघटित होइछ । ओहि जलवायुमे रहनिहार मनुष्य, रूपविशेषसँ दीर्घकालीन घनिष्ठ परिचयक कारणेँ, ओकरहि सौन्दर्यक उच्चतम आदर्श मानैछ । प्राच्य स्त्रीलोकनिकेँ प्रकृति विशाल नेत्रक वरदान देने अछि । आँखिक कालिमा हुनक शोभा-विधायक गुण थिक । एकर विपरीत योरपमे नीलवर्णी आँखि कविलोकनिक कल्पनाकेँ उत्तेजना प्रदान करैत रहल अछि। एहि देशमे कारी केश सौन्दर्यवर्धक मानल गेल अछि तँ पश्चिममे सोनहरा केश । पीन आ कठोर वक्ष-प्रदेश नारीसौन्दर्यक अमूल्य निधि

थिक। मुदा अफ्रिकाक किछु जातिमे शिथिल आ प्रलंब वक्ष सौन्दर्यक चिह्न मानल जाइछ।

कला आ सौन्दर्य

विश्वकवि रवीन्द्रनाथक कथन छन्हि जे, जे सत्य अछि, जे सुन्दर अछि, ओएह कला थिक। सृष्टिक चारू भर अभिनव सौन्दर्य व्याप्त अछि, एकटा चिरंतन सत्यक आभास अहर्निश बुझना जाइछ, एकरहि व्यक्तीकरण, एकरहि कल्पनाक उन्मुक्त पाँखिसँ प्रकट करब कला थिक। प्रत्येक वस्तु अपूर्णता सँ पूर्णता दिस अग्रसर होइछ, प्रत्येक क्षण हमर चेतन अथवा अवचेतन मोन विकासक दिशामे जाय चाहैछ। एही पूर्णता, एही विकासक चिर अभिलाषासँ कलाक जन्म भेल अछि। वस्तुतः जीवनमे अनुभूत अथवा अनुभूत्याभासक आह्लादमयी चमत्कारपूर्ण, जन-मानस-हारिणी अभिव्यक्तियेक नाम कला थिक। कोनो वस्तुक यथातथ्य निरूपण अथवा ओकर अनुकरण कला नहि भऽ सकैछ। सौन्दर्यकेँ बुद्धिगम्य आ व्यापक बनयबाक श्रेय कलेकेँ छैक। मुदा स्वयं कला सेहो, सौन्दर्यक प्रेरणा सँ प्रकट होइछ। प्रकृतिक एहि उन्मुक्त सौन्दर्य-सीमामे मानव-हृदय जखन मुग्ध भऽ लेटाय लागल आ सौन्दर्य-भारकेँ संचित कऽ स्वयं अभिव्यक्तिक लेल आकुल-व्याकुल भऽ उठल, सौन्दर्यक सुधा-प्रवाह जखन ओकर रोम-रोम मे व्याप्त भऽ फूटि जयबाक लेल आकुल होमय लगलैक, तखन कलाकारक हृदय सौन्दर्य-विभूतिकेँ विश्व-मानवक सम्मुख छिड़िया देबाक लेल चंचल भऽ उठल। अपन अन्तस्थलक सुषमाक मोहन छवि-मदिरा विश्वकेँ पान करयबाक लेल पुलक भारसँ नत ओकर रोम-रोम व्याकुल होमय लगलैक, ओकर स्वान्तक मोहन-मकरन्द विश्वकेँ सुरभिसँ आपूरित कऽ देबाक लेल नाचि उठलैक आ तखन ओकर हृदय सभ किछुकेँ बिसरि अपन हृदय-निधिकेँ विश्वक समक्ष उड़ेलि देलक। यैह भेल कलाक पावन अवतार जकर बहुमुखी दीप्तिसँ स्वार्थ-तिमिर-कलुषित विश्व-मानवक हृदय गह्वर तन्मय भऽ कय प्रदीप्त भऽ उठल। निश्छल, निष्कपट सौन्दर्योपासकक सरल, उदात्त हृदयक यैह अभिव्यक्ति-विवशता कला थिक।

कलाकार स्वयं सौन्दर्य-स्रष्टा नहि होइछ, प्रत्युत गूढ़-अगूढ़, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्षसँ विश्वमे छिड़िआयल सौन्दर्य-कणकेँ एकत्र कय, मोहक ढंगसँ ओकरा सजा कय प्रकट कय दैछ। ई कलाकार वा शिल्पीक कोनो नूतन सृष्टि नहि होइछ। कलाविद् विश्व-व्याप्त प्रकृतिक अक्षय सौन्दर्य-कोशकेँ संसारक समक्ष चिर नूतन, अभिनव रूपमे प्रकाशित मात्र करैछ। विशेषता

यैह थिकैक जे ओहि अभिव्यक्तिमे, ओहि सौन्दर्यमे अपन अनुभूति, अपन कल्पनाक रंग चढ़ा दैछ – यैह कला थिक। अनुभूति ओएह, मुदा प्रदर्शनक ढंग अनेकानेक।

कलाक अन्त नहि होइछ, कारण कला पूर्णता प्राप्त करबामे नहि, प्रत्युत संधानमे अछि। ओहिमे अनन्त चिरन्तनक जे आभास अछि, ओएह कला थिक। कलामे रहस्यात्मकता, जीवनमे रहस्यात्मकता ताकि लेबहि कविक ध्येय थिक।[50] वस्तुतः कलाकारक आभ्यान्तरिक अनुभूतिक सम्मिश्रणसँ बाह्य जगत्‌क परिवर्तनशील वस्तुसभमे सेहो एक पृथक् सत्ता स्थापित भऽ जाइछ। कवि जाहि भावकेँ रखैछ, ओहिमे निश्चयता आबि जाइछ।[51] अतः सहृदयता कलाक लेल वांछनीय अछि, सौन्दर्य-शास्त्रक दोसर नाम कला थिक। सौन्दर्य कलाक सहयोग प्राप्त कय निखरि उठैछ। जे व्यक्ति अपन कृतिमे सौन्दर्यक सुष्ठु अभिव्यक्ति करैछ, ओएह कलाकार अछि, आ जे कलामे सौन्दर्यक अनुभव करैछ, ओ कलाविद्।

साहित्य आ सौन्दर्य

साहित्य आ सौन्दर्यक सम्बन्ध चिरपुरातन अछि। साहित्यक मूलाधार – 'सत्यं, शिवं, सुन्दरं' मे एकर स्पष्ट लक्षण प्राप्त होइछ। सत्य शाश्वत अछि, शिव मंगलमय आ जाहि ठाम सत्य आ शिवक मणि-कांचन-संयोग होइछ, ओतय सौन्दर्य स्वतः प्रादुर्भूत भऽ जाइछ। पाश्चात्य लेखक हेगल (HEGEL) क मत छन्हि जे मानव सौन्दर्य-बोध द्वारा ईश्वरक सत्ताक अनुभव करैछ। पुनः धर्मशास्त्र, आध्यात्मविद्याक द्वारा ओकर साक्षात्कार प्राप्त करैछ, पुनः शुद्ध तर्कज्ञानसँ ओकरा अपनामे एकीभूत कय लैछ। मुदा भारतीय विचारक एहि सम्बन्धमे किछु अन्य दृष्टिकोण रखैत छथि। उपनिषद्सभमे "तदैतत् सत्यम् मंत्रेषु कर्माणि कवयोयान्यपश्यंस्तानि त्रैतायाम् बहुधा सन्ततानि" आयल अछि। अन्यत्र "ऋषयो मंत्र द्रष्टारः" – ऋषिलोकनि वा मंत्रकवि हुनका देखैछ। "कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः" मे ऋषि आ कविमे पर्याय सादृश अछि। प्राचीन कवि होइत छलाह – महर्षि, मनीषी आ दार्शनिक, हुनक लक्ष्य होइत छलन्हि सर्वभूतहित साधन आ हुनक कृतिमे होइत छल श्रेय-समन्वित प्रेम। वस्तुतः ऋषिक लक्ष्य होइछ आनन्द। आइ आनन्दहि सौन्दर्यक पर्याय थिक। कविक लक्ष्य होइछ सौन्दर्यपूर्ण संगीतमय हृदयानन्द रूपक छन्दोबद्ध रूप-सृष्टि। अतः ई स्पष्ट अछि जे साहित्य आ सौन्दर्यमे अटूट सम्बन्ध अछि। पाश्चात्य विद्वान जौनसन (JOHNSON) क कथन छन्हि

जे कविता ओ कला थिक जे बुद्धिक सहायताक लेल कल्पनाक सहारा लऽ कय आनन्दकेँ सत्यसँ समन्वित कऽ दैछ ।[52] एकटा अन्य विद्वान कविताकेँ सौन्दर्यक लयात्मक अथवा संगीतात्मक रचना कहैत छथि ।[53] यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ देखल जाय तँ कहि सकैत छी जे मनुष्यक सौन्दर्योपासिका प्रवृत्ति अभिव्यक्तिमे सेहो सुन्दरताकेँ समावेश करबाक हेतु व्याकुल भऽ गेल । ओकर इच्छा भेलैक जे ओ किछु मनुष्यक समक्ष राखय, अभिव्यक्त करय, जे आकर्षक होइक, प्रभावशाली होइक, रमणीय होइक आ होइक सुन्दर सेहो । एतहिसँ बाह्य शरीरक जन्म भेल । शब्दसभकेँ नग्नरूपमेँ नहि राखि, ओकरा वस्त्राभूषणसँ अलंकृत कय लोकक समक्ष प्रस्तुत कयल गेल । एकर सिद्धिक लेल मानवक अन्तःकरण ओकर कोमल कल्पना, ओकर भावुकता, भावना आदि सभ गतिशील भऽ उठलैक । प्रभावोत्पादकता आ रमणीयताक अभिवृद्धिक विचारसँ मनुष्य साहित्यिक अभिव्यक्तिमे संगीत तत्वक सम्मिश्रण कय ओकरा कविताक संज्ञा प्रदान कयलक ।

अभिव्यक्ति शैलीमे सौन्दर्यक उद्भावना

एहि प्रकारेँ साहित्य क्षेत्रमे मनोरम अभिव्यंजना प्रणालीसँ अलंकृत, भावुक कल्पना सँ अनुप्राणित, सौन्दर्यसँ उत्प्रेरित तथा संगीत तत्वसँ संमिश्रित पद्य-काव्यक प्रणयन भेल । ई अलौकिक विभूति मानव-मानसक कल्पना, भावना, अनुभूति, चेतना आ रमणीयताकेर लोकोत्तर प्रतिनिधित्व करैत, शब्द आ अर्थक सहयोगसँ लोक-विचित्र सृष्टिक सर्जन कऽ मानवजगतक जे संस्कार आ परिष्करण कऽ लेलक अछि, ओ मानवकेँ मानव कहयबामे बहुत किछु समर्थ भऽ सकल अछि । मानव-समाजक जे कार्य धर्म-सूत्र एवं स्मृति नहि कय सकल छल, तकर सम्पादन साहित्य सुगमतापूर्वक कयलक । यैह कारण जे आचार्यलोकनि द्वारा साहित्यकेँ कान्तासम्मित उपदेश कहल गेल अछि । यैह कारण जे मम्मटक उक्ति "सद्यः परनिवृतयेकान्तासंमितयोपदेशयुजे" केर अनुसरण करैत अलंकारमहोदधिकार लिखलन्हि -

अमन्दोदगतिरान्दस्त्रिवर्गश्च निरर्गलः ।
कीर्तिश्च कान्तातुल्यत्वेनोपदेशश्च तत्फलम् ॥

एहि दृष्टिसँ साहित्य आ काव्यक महत्व-प्रतिपादित करैत राजशेखर[54] एकर विस्तृत विवेचना प्रस्तुत कयने छथि । भाव ई जे परमानन्ददायक साहित्य, अपन रमणीयतेसँ मानव-हृदयकेँ विमुग्ध कय, ओकर संस्कार आ परिष्कार कऽ सकैछ ।

कविताक सौन्दर्य-सृष्टिमे प्रधानता होइछ शब्द आ अर्थक । मुदा शब्द आ अर्थक सोझ-सरल प्रयोग काव्यक अभिधा नहि ग्रहण कय सकैछ । शब्द आ अर्थ तखनहि साहित्य अथवा कविताक प्रतिष्ठा प्राप्त कय सकैछ, जखन ओ 'जगच्चेतश्चमत्कारि' हो, सहृदयआह्लादाकारी निष्यन्द-सुन्दर हो । उपर्युक्त गुणसम्पन्न काव्यक सर्जना कविक क्रांतिदर्शिता, नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा, लोकविचक्षण कल्पना आ सहृदय भावुकतहिसँ संभव होइछ । वक्रोक्तिजीवितकार एकरहि वक्रोक्ति, शब्दार्थक वैदग्धपूर्ण विच्छितियुक्त भणिति कहलन्हि अछि । शब्द आ अर्थक सौन्दर्यपूर्ण रमणीय उक्तिमे कविक अभिव्यक्ति अपन चरम सफलताकेँ प्रकट करैछ । अभिव्यक्तिक एही सौन्दर्य-योजनामे कविक निपुणता, कवि-कर्मक कुशलता चिरकालसँ मानल जाइत अछि ।

एवं प्रकारेँ अलंकारशास्त्रक लक्ष्य, व्यंग्यादि अर्थ, रीति, गुण, ध्वनि आदि सब अपन-अपन सौन्दर्यभावनाक लेल काव्यमे अपन-अपन उपयोगिता सिद्ध करैछ । कवि जखन कखनहुँ अपना रचनामे समान ध्वनिक योजनासँ एक प्रकारक स्वर-सौन्दर्यक निर्माण करय चाहैछ, जखन अपन शब्द-चमत्कृतिक द्वारा अपन काव्यमे सौन्दर्याभिव्यञ्जना करय चाहैछ तँ भाव आ अभिव्यक्तिकेँ अनुकूल भेला पर यैह शब्द-चमत्कार चारुता उत्पन्न करैछ आ भावकेँ प्रतिकूल रहलापर मात्र शब्दक्रीड़ा । कहबाक अर्थ ई जे जीवन्त कलाकार अपन कविताक प्रभावमे अनुप्रास, यमक आदि द्वारा तीव्रता उत्पन्न करबामे समर्थ होइछ, तखनहि ओकर साहित्य, सौन्दर्यक दीप्तिसँ चमत्कृत भऽ उठैछ ।

जाहि प्रकारेँ कलाकार अपन काव्यकृतिमे अनुकूल आ उचित छवि-योजना द्वारा अपन काव्यक शब्दांशमे चारुताक सर्जन करय चाहैछ, तहिना उपमा, उत्प्रेक्षादि अलंकारक योजना द्वारा कविं अपन अभिव्यंजनाक सौन्दर्यमे अप्रस्तुत योजनाक आश्रय लैछ आ कखनहुँ लक्षणा, व्यंजना आदि शक्तिक आश्रय ग्रहण कऽ अपन वर्ण्य-विषयकेँ विशेष तीव्रता प्रदान करैछ । यैह अप्रस्तुतक द्वारा प्रस्तुतक सौन्दर्यपूर्ण रमणीय आ प्रभावशाली अभिव्यक्ति अर्थालंकारक योजना थिक । तात्पर्य ई जे अलंकार योजना काव्यक अभिव्यक्तिमे एक प्रकारक सौन्दर्यक सृष्टि करैछ ।

एही प्रकारेँ शब्दशक्तिक द्वारा सेहो काव्य-सौन्दर्यक सृष्टि होइछ । अभिधा, लक्षणा आ व्यंजना शक्तिमे - लक्षणा आ व्यंजना द्वारा विशेष सौन्दर्य आ रमणीयताक सृष्टि होइछ ।

ध्वनि एक प्रकारक व्यंग्यार्थ थिक । जतय वाच्यार्थ आ लक्ष्यार्थक अपेक्षा व्यंग्यार्थ अधिक चमत्कारपूर्ण, रमणीय आ मर्मस्पर्शी होइछ, ओकरहि ध्वनि कहल जाइछ । संस्कृतक अलंकारशास्त्रक प्रमुख आचार्यलोकनि ध्वनिकेँ, कवितामे ध्वनिकेँ सर्वप्रमुख स्थान देने छथि। ध्वनियोमे रस-ध्वनिकेँ सर्व सुन्दर मानल गेल अछि । एहूमे वासना आ अनुभूति काव्यक सर्वश्रेष्ठ तत्व अछि । एकरहि माध्यमसँ कविताक सौन्दर्यक अभिव्यंजना सभसँ अधिक रमणीय आ कलात्मक होइछ । एहि प्रकारेँ विवेचनासँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे रसक माध्यमसँ अभिव्यक्ति सबसँ अधिक अभिराम आ रुचिर होइछ । सुतरां, कहल जा सकैछ जे गुण-रीति, शब्दालंकार-अर्थालंकार, शब्दशक्ति आ रसभावादिक माध्यमसँ शब्द आ अर्थसौन्दर्यक सृष्टि होइछ जाहिसँ साहित्यकेँ प्रतिष्ठा आ सम्मान प्राप्त होइछ ।

विद्यापति रससिद्ध कवि छथि। यैह कारण जे ओहो एही सौन्दर्यदायक कलाक सर्जना द्वारा अपन काव्यकेँ रमणीय एवं प्रभावशाली बनयबामे समर्थ भेल छथि । मूलत: विद्यापतिक समस्त गीति-पद ओही सौन्दर्य-प्राप्तिक साधन थिक, जे कोनहु कलाकारक चरम लक्ष्य होइछ।

मानव आ प्रकृति

विश्व प्रांगणक अनुपम सुन्दरी प्रकृति सर्वप्रथम अपन मादक-मधुर नेत्रसँ चुपचाप चारू भर दृष्टिपात कयलक आ सर्वत्र स्वर्ण-राशिकेँ छिड़िया देलक । जलप्लावनक पश्चात् जखन शनै: शनै: जल तिरोहित भय कोनो-कोनो स्थानमे आंशिक रूपमे बाँचल रहि गेल, ओहि समय शेषभाग हरित, कोमल, मृदु पादपसमूहसँ, लता-गुल्मसँ लहलहा उठल। प्राचीमे उषाक अरुणाभा प्रकाशित भेल आ कनक-रश्मिसँ आलोकित विश्व-श्री मुस्का देलक । पुरुष असहाय अवस्थासँ अद्यपर्यन्त प्रकृतिक विकृत, अद्भुत, भयानक एवं रौद्र रूपकेँ देखने छल, ओकर हृदय काँपि गेलैक, मुदा सहसा एहि अभिनव, सुन्दर रूपकेँ देखि ओकरा संतोष भेलैक । ओकर चेतना पुन: जागृत भेलैक आ ओ विश्वसुन्दरीक चरणमे श्रद्धांजलि अर्पित कयलक । प्रत्युत्तरमे प्रकृति मुस्का उठल । ओ मानवक मूल समर्पणकेँ स्वीकार कयलक आ आजन्म साहचर्यक वरदान प्रदान कयलक। ओही समयसँ अद्यपर्यन्त मानव प्रकृतिक उपासक अछि आ ओ मानवक सहचरी। सुखक सहृदय सखी, दु:खक करुण प्रतिमूर्ति, मुस्कान सन मधुर, रोदनसन करुण आ टीस सन कटु- सभ भावक समन्वयक संग ओ सर्वदासँ मानवक अनुगता बनल रहल अछि आ प्राय: बनल रहत ।

प्रकृतिक प्रति आत्मीयता

प्रकृति आ मानवमे रागात्मक सम्बन्ध अछि । ओ मानवजीवन मे एतेक ने घुलि-मिलि गेल अछि जे ओकरा भिन्न देखब कठिन अछि। यदि भावुकताक दृष्टिसँ देखल जाय तँ प्रकृतिक प्रति जे हमर अनुराग अछि तकर कारण सुखभोग नहि, चिर साहचर्य द्वारा प्रतिष्ठित वासना अछि । चेतन सौन्दर्यक दीप्ति हमरा आकृष्ट करैछ, कौतूहल जागृत करैछ आ अभिलाषाक जन्म दैछ । मुदा अचेतन सौन्दर्यक निरीह अनुभूति एक दिस जँ मुग्ध करैछ तँ दोसर दिस तन्मयता प्रदान करैछ आ तृप्तिसँ भरि दैछ । विद्यापति चेतन आ अचेतन दुनू पक्षक चित्र अपन काव्य-कृतिमे प्रस्तुत कयलन्हि अछि । मुदा हुनक दृष्टि मुख्यत: चेतनहि धरि केन्द्रित रहलन्हि अछि, अचेतन दिस ओतबा नहि । तथापि वसन्तक सौन्दर्य-श्री, चन्द्रमाक चन्द्र-ज्योत्सना, अलिक गुंजार, कोइलीक कुहुक, आदि प्राकृतिक व्यापारमे कवि चेतनाक दीप्ति, मानवताक माधुर्य आ जागरणक स्फूर्ति भरबाक प्रयास कयने छथि । एकर जीवन्त चित्र हुनक षडऋतुवर्णनमे स्पष्टत: अभिव्यक्त भेल अछि ।

प्रकृतिक संवेदनशीलता

चित्रात्मक वर्णनक संग-संग विद्यापतिक वर्णनमे संवेदनशीलताक छाप स्पष्टत: प्रतिबिम्बित भेल अछि । संवेदनात्मक शैलीमे काव्य-रचना कयनिहार कवि विशेषत: प्रकृतिक विषयमे सूक्ष्म तथा आवश्यक संकेत प्रस्तुत करैछ । ओकर प्रकृति संबंधी उद्‌गार किंचित व्यक्तिगत होइछ । भावक अत्यधिक संवेदनशीलताक कारणे कविकेँ समस्त प्रकृतिमे अपनहि हृत्‌तंत्रीक तारक झंकार मुखरित होइत प्रतीत होबय लगैछ । कविक भावना प्रकृतिक रूपकेँ अपनहि रंगसँ रंजित कय दैछ ।

अपन संवेदनशील भावप्रवणतेक कारण कवि प्रकृतिसँ नित नवीन सन्देश प्राप्त करैत रहैछ आ अपन सुख-दु:खक संकेत ओकरहि सँ प्राप्त करैछ । ओ यदि प्रसन्न रहैछ, तँ प्रकृति ओकरा आह्लाददायिनी प्रतीत होइछ, अन्यथा ओकरा प्रकृतिमे सेहो रोदनक स्वर सुनाई दैछ, विषाद आ सन्ताप, विरह आ व्यथेक गीत अनुश्रुत होइछ ।

निष्कर्ष

(1) प्रेम ओ अनुकूलवेदनीय मनोवृत्ति थिक जे कोनो व्यक्ति, अन्य जीव वा पदार्थक सौन्दर्य, गुण, शील, सामीप्य आदिक कारण उत्पन्न होइछ । व्यापक अर्थमे मनोवृत्ति दू प्रकारक होइछ - अनुकूलवेदनीय आ प्रतिकूलवेदनीय ।

अनुकूलवेदनीय मनोवृत्तिक अन्तर्गत सुखद अनुभूतिसभक गणना कयल जाइछ आ प्रतिकूलवेदनीय मनोवृत्तिक अन्तर्गत जीवनक दुःखद अनुभूतिकेँ लेल जाइछ । पहिल आकर्षण तथा दोसर विकर्षणक केन्द्र होइछ ।

(2) मनुष्य आ ओकरासँ इतर पदार्थक बीच ओ रागात्मक सम्बन्ध स्थापित नहि भऽ पबैछ, जे मनुष्य आ मनुष्यक बीच होइछ । यैह कारण अछि जे वास्तविक प्रेमक प्रतिष्ठा मनुष्य आ मनुष्यक बीचहि संभव भऽ सकैछ ।

(3) स्त्री आ पुरुषक प्रेमक मूलाधार काम वा सेक्स थीक । काम वा सेक्समे आकर्षणक जे गुरुत्व होइछ से अन्यत्र नहि पाओल जाइछ । स्त्री-पुरुषक प्रेममे व्यक्तित्वक पृथक् सत्ता नष्ट भऽ जाइछ । एकक शरीर, मोन आ आत्मा दोसराक शरीर, मोन आ आत्मा सँ मिलि एकाकार भऽ जाइछ आ एहि प्रकारक तादात्म्यमूलक प्रेम दृढ एवं स्थायी होइछ ।

(4) भारतवर्ष एक धर्मप्रधान देश थीक । एहि ठाम कामकेँ धर्मसँ सम्बद्ध मानल गेल अछि । 'एकोऽहं बहुस्याम'क मूलमे सेहो यैह भावना निहित अछि । ऋग्वेद, अथर्ववेद, बृहदारण्यकोपनिषद, तैत्तरीय ब्राह्मण, तैत्तरीय आरण्यक, गीता आदि ग्रंथमे कामक विस्तृत विवेचन कयल गेल अछि । भारतीय धर्मशास्त्रसभमे कामक गणना चारि-पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम आ मोक्ष) मे कयल गेल अछि आ कहल गेल अछि जे धर्मसँ च्युत भऽ काम अपन उच्च पदसँ स्खलित भए जाइछ ।

(5) वात्स्यायन, कालिदास आदि कामकेँ धर्मसँ नियंत्रित कहि ओहिपर वृहत्तर सामाजिक दृष्टिसँ विचार कयने छथि । भिन्न-भिन्न युगमे कामक चाहे जे अर्थ रहल हो, मुदा लोकजीवनमे ई बहुत-किछु धर्म-निरपेक्ष अछि आ सेक्सक समान अर्थमे व्यवहृत होइत रहल अछि। मनोविज्ञानक दृष्टिसँ धर्म-नियंत्रित कामक कोनो महत्व नहि होइछ ।

(6) वस्तुतः काम वा सेक्स एकटा स्थूल शारीरिक भूख थिक, ओ पुरुष-स्त्रीक प्रेमक आधारो अछि, मुदा ओकरा प्रेमक समानार्थी नहि कहल जा सकैछ । काम-तृप्तिक अपेक्षा प्रेममे आत्यंतिक ऐन्द्रिय आनन्दक मात्रा निहित रहैछ । कामजन्य सम्बन्ध मात्र तृप्तिकाले धरि सीमित रहैछ, जखन कि प्रेमजनित सम्बन्ध चिरस्थायी होइछ ।

(7) मनोवैज्ञानिक लोकनिक अनुसार सेक्स वा काममे जतय मोन आ आत्माक संश्लेषण होइछ, ओतहि प्रेम होइछ । काम मूल प्रवृत्ति अछि आ प्रेम भाव थिक । भाव एक मानसिक स्थिति अछि, स्थूल संभोगक प्रवृत्ति नहि ।

(8) वास्तविक प्रेम उपचारनिरपेक्ष होइछ । उपचारनिरपेक्ष प्रेम मे आदानक भावना कखनो रहबे नहि करैछ, एहिमे तँ मात्र प्रदाने-प्रदान देखना जाइछ ।

(9) कहल जाइछ जे विरहमे प्रेम मौला जाइत अछि, मुदा वस्तुतः वियोगमे प्रेमक प्रयोग नहि भेला सन्ता ओ संचित भऽ कय राशिभूत भऽ जाइछ । जे प्रेम वियोगमे मौला जाइत अछि, ओ उपचारसापेक्ष प्रेम थीक । वास्तविक प्रेम एकनिष्ठ आ एकांतिक होइछ ।

(10) वास्तविक प्रेम सुख-दुःख दुनू अवस्थामे अद्वैत रहैछ - प्रेमी सुखी होइत अछि तँ प्रिया सेहो सुखी होइछ, जँ प्रेमी दुःखी होइत अछि तँ प्रिया सेहो दुःखी होइछ । प्रत्येक अवस्थामे ओतए हृदयकेँ विश्राम भेटैछ । वृद्धावस्था अयलापर ओहिमे रसक कमी नहि होइछ । प्रेम कोनो अनिर्वचनीय कारणसँ प्रादुर्भूत होइछ ।

(11) आजुक बौद्धिक युग जन्म-जन्मान्तरमे विश्वास नहि करैछ। वस्तुतः स्त्री-पुरुषक प्रेमोत्पादनमे शारीरिक सौन्दर्य प्रमुख रहैछ, मुदा प्रेमक परिपक्वताक लेल प्रेमीजनक बीच मोन आ आत्माक तादात्म्य अनिवार्य अछि। एही अवस्थामे प्रेम उपचारनिरपेक्ष भऽ सकैछ।

(12) मनोवैज्ञानिकलोकनि प्रेमकेँ प्रायः संवेगक अन्तर्गत रखलन्हि अछि । एहि सम्बन्धमे हिनकालोकनिमे मत-वैभिन्य छन्हि, तथापि विभिन्न मनोविज्ञानवेत्ता द्वारा संवेगजन्य प्रेमक सम्बन्धमे देल गेल व्याख्यामे शैन्डक विचार सर्वाधिक तर्कपूर्ण एवं गंभीर अछि । हुनका मतानुसारेँ प्रेम एकटा एहन पद्धति अछि जाहिमे अनेक प्रकारक संवेग गुंफित रहैछ ।

(13) समाज आ प्रेमकेँ सम्बन्धक आधार पर शाश्वतावादी विचारधारा, विकासवादी विचारधारा तथा साम्यवादी विचारधारा-एहि तीन वर्गमे विभाजित कयल जा सकैछ । शाश्वतावादी विचारधाराक अनुसारेँ प्रेमक स्वरूप चिरंतन, सनातन तथा शाश्वत अछि । कोनो प्रकारक सामाजिक उथल-पुथलक प्रभाव प्रेम पर नहि पड़ैछ । विकासवादी विचारधाराक अनुसारेँ प्रेम आदिम अर्थमे यौन प्रवृत्तिये थीक । जखन एहि यौन-प्रवृत्तिक मार्ग-निर्देशन मोन आ आत्मा द्वारा होमय लगैछ, तखन एकरा प्रेमक संज्ञा प्रदान कयल जाइछ । समाजवादी विचारधाराक अनुसारेँ प्रेमो अन्य वस्तु जकाँ परिवर्तनशील अछि । काडवेल एकरा सामाजिक सम्बन्धसँ भावात्मक तत्व मानैत छथि ।

(14) निष्कर्षतः ई कहल जा सकैछ जे (क) यद्यपि शारीरिक सौन्दर्य प्रेमक मूलाधार थिक, तथापि वास्तविक प्रेममे प्रिया आ प्रेमीक मोन, शरीर आ आत्माक बीच पूर्ण तादात्म्य रहैछ; (ख) वास्तविक प्रेमकेँ बाह्य उपचारक आवश्यकता नहि रहैछ; (ग) मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ प्रेम संवेगक एकटा एहन पद्धति अछि जाहिमे कएक प्रकारक संवेग सन्निविष्ट रहैछ । एकरा ने तँ एकल संवेग कहल जा सकैछ आ ने संपृक्त संवेगहि । (घ) सामाजिक दृष्टिजे नव सामाजिक परिवेशमे प्रेम सम्बन्धी दृष्टिकोणमे बरोबरि परिवर्त्तन देखल जाइछ ।

(15) शरीर, मोन आ आत्माक तादात्म्येकेँ आदर्श प्रेम कहल जा सकैछ । ई एतेक प्रभावशाली, दृढ एवं गँहीर होइछ जे एक सम्बन्धक पश्चात् मनुष्य दोसर सम्बन्धक कल्पनो नहि कऽ सकैछ ।

(16) सौन्दर्यक कोनो सर्वमान्य आदर्श नहि निर्धारित कयल जा सकैछ, कारण भिन्न-भिन्न देश-कालमे एकर स्वरूप परिवर्तित होइत रहैछ। अतः यैह कहल जा सकैछ जे रूप-लावण्यसँ समन्वित शरीर प्रेमोत्पादनक मुख्य आधार थीक जे मानवक सौन्दर्य-प्रियताकेँ लक्षित करैछ ।

(17) सौन्दर्यक वास्तविक मापक थीक - 'वीर्य विक्षोभन शक्ति'। कामभावनाक जाहि व्यक्तिमे जतबा आतिशय्य रहैछ, ओकरा दृष्टिमे कोनो विशेष नारी ओतबहि अधिक सुन्दर प्रतीत होइछ, मुदा कामोत्तेजनाक परिसमाप्तिक बाद ओही नारीक सौन्दर्य ओहि व्यंक्तिक दृष्टिमे अपेक्षाकृत कम भऽ जाइछ ।

(18) जे सत्य अछि, सुन्दर अछि, ओएह कला थीक । कोनो वस्तुक यथातथ्य निरूपण अथवा अनुकरण कला नहि भऽ सकैछ । सौन्दर्यकेँ बुद्धिगम्य आ व्यापक बनयबाक श्रेय कले केँ थीक । मुदा स्वयं कलो सौन्दर्यक प्रेरणेसँ प्रकट होइछ ।

(19) सौन्दर्यशास्त्रक दोसर नाम कला थीक । सौन्दर्य कलाक सहयोग प्राप्त कय निखरि जाइछ । जे व्यक्ति अपन कृतिमे सौन्दर्यक सुष्ठु अभिव्यक्ति करैछ, ओएह कलाकार छथि आ जे कलामे सौन्दर्यक अनुभव करैछ, से कलाविद् ।

(20) साहित्य आ सौन्दर्यक सम्बन्ध चिर पुरातन अछि । साहित्यक मूलाधार - 'सत्यं, शिवं, सुन्दरं' मे एकर स्पष्ट लक्षण प्राप्त होइछ ।

(21) गुण-रीति, शब्दालंकार-अर्थालंकार, शब्दशक्ति आ रसभावादिक माध्यमसँ शब्द आ अर्थ-सौन्दर्यक सृष्टि होइछ जाहिसँ साहित्यकेँ प्रतिष्ठा आ सम्मान प्राप्त होइछ ।

(22) मानव आ प्रकृतिमे चिरकालिक सम्बन्ध अछि । सुखक सहृदय सखी, दुःखक करुण प्रतिमूर्ति, मुस्कान सन मधुर, रूदन सन करुण आ टीस सन कटु प्रकृति सर्वदासँ मानवक अनुगता बनल रहल अछि ।

(23) अपन संवेदनशील भाव-प्रवणतेक कारण कवि प्रकृतिसँ नित नवीन संदेश तथा अपन सुख-दुःखक संकेत प्राप्त करैछ ।

●

संदर्भ

1. 'ऊर्व इव प्रथते कामो अस्य' - ऋग्वेद, 3/30/19
2. 'सपत्नहनभृषभं घृतेन कामं शिक्षामि हविषा ज्येन ।
   नीचैः सपत्नान मम पादपत्वमभिष्टुतो महतो वीर्येण ।।'
   अथर्ववेद, 9/2/11
3. 'देवाअग्रे, न्यपतन्त पत्न समस्पृश्न्त तन्वस्तनूभिः
   सूर्येक नारि विश्वरूपा महिला प्रजावती प्रत्या सं भवैह । 32
   तां पूषे छिवतमामरेयस्व यस्यां बीजं मनुष्या वपन्ति ।
   यान उरु उशति विश्रयति यस्यामुशंतः प्रहरेम शैपः ।।" 38
   - अथर्ववेद 14/2/32, 38
4. 'आरोहोरुभुय धत्स्व हस्त परिष्यजस्व जायां सुमनस्यभावः ।
   प्राजां कृण्वा थामिह मोदमानौ दीर्घ वामायु सविना कृणोतु ।।' - अथर्ववेद 14/2/36
5. ऋग्वेद, मण्डल 10 : सूक्त 10
6. 'जायेव पत्ये, तन्वंरिरिच्यां विचिहहेवरश्येव चक्रा ।' ऋ.वे. 10/10/7
7. 'परिष्वजाते लिबुजेववृक्षम्' । ओएह, 10/10/13
8. 'किन्तु भ्राता सद्यदनाथं भवति किमुस्वसायं निकृति निंगच्छात् ।'
   - ओएह, 10/10/11
9. 'बतोबतासि कम नेव ते मनोत्हृदयं चा विदाम ।' - ओएह, 10/10/13
10. 'देवानां स्पर्श इह ये चरन्ति ।' (ओएह, 10/10/8)
11. स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत वैदिक भाष्य ।
12. 'किन्तु भ्राता सद्यदनाथं भवति किमु स्वसायं निकृति निंगच्छात् ।'
    - ऋ. वे. 10/10/11
13. 'समुद्र इव हि कामौ । नैव हि कामस्यान्तोऽस्ति न समुद्रस्य ।'
    - तैत्तरीय ब्राह्मण, 2/2/5/6
14. 'प्रजनन वै प्रतिष्ठा । लोके साधु प्रजायास्तन्तत्त्वा नः पितृणाम
    नृणो भवति तदैव तस्यानृणं तस्मान् प्रजननं परमं वदंति ।'
    - तैत्तरीय आरण्यक, 12/62/23

15. 'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोस्मि भरतवर्षम ।' - गीता, 7/11
16. 'शतायुर्वै पुरुषो विभज्य काल मन्योऽन्यानुबद्धं परस्परस्यानुपयातं
त्रिवर्ग सेवेत ।' - वात्स्यायन, कामसूत्र 1/2/1
17. 'अनेन धर्मः सविशेषमय मे त्रिवर्ग सारः प्रतिभाति भाविनि ।
त्वया मनोनिर्विषयार्थकामया यदेक एव प्रतिगृह्य सेव्यते ।।' - कुमारसंभव; 5/38
18. 'श्रोत्रत्व व चक्षुर्जिह्वा घ्राणानामात्मसंयुक्तेन मनसाधिष्ठितानां स्वेषु
विषयेष्वानुकूल्यतः प्रवृत्तिः कामः ।' - वात्स्यायन : कामसूत्र 1/211
19. "Fetish - Originally an object regarded by the natures of West Africa as having magical power, and used as an amaulet or for inchantment purposes, or regarded as an object of dread, by extintion an object regarded irrationally with peculiar reverence or affection or fear, the name festishism is given to this kind of superstition and has also come to be used of a more or less patheological and sexually determined attachment to object associated with a sexual object."
– Diener James : A dicitionary of Psychology (1952)
20. "Friedlander has wisely remarked that there is more sensuality than sexuality in love, which after all means that sex is only small part of love. it is only after the various senses have reported to the central nervous system the presence of numerous fetishes symbolising peace and safety, that the sex union is not only possible, but extremely attractive and creates a durable bond between two human beings."
- Quoted from 'The Erotic Motive in Literature."
21. श्रवणाद् दर्शणाद् रूपाद् अंगलीला-विचेष्टितैः
मधुरैः संप्रलापैश्च कामः समुपजायते । - भरतःनाट्यशास्त्र, 24/49
22. DANTE; PURGATORIA, Viii, 76.
23. KARL MENNINGAR; Love Against Hate, pp. 273-75
24. 'पागल रे वह मिलता है कब,
उसको तो देते ही हैं सब' - जयशंकर प्रसाद; प्रेम पथिक
25. 'प्रेम बढ़े जो दुइ मन, दोऊ एके होय ।
बिछुरे ते बाढ़त अधिक, बुझे प्रेमी होय ।' - सभा, इन्द्रावत, पृ.-6
'नेकु न झुरसी विरह झर, नेह लता कुम्हिलात ।'
'नित-नित होति हरी हरी, खरी झालरति जानि ।' - बिहारी-बोधिनी,
'मिलन प्रेम की शाश्वत गति है, और विरह जीवन है ।'
- मैथिलीशरणगुप्त
26. 'एक भरोसो एक बल, एक आस विश्वास,
तैसे पहि श्रीराम मह, चातक तुलसीदास ।' - तुलसी ।

27. भवभूति : मालतीमाधव, बांबे संस्कृत सीरिज, 1876, पृ.-45-46
28. गोस्वामी तुलसीदास : विनयपत्रिका
29. या दोहनेऽ वहनने मथनोपलेप -
प्रेङ्खेनार्मरूदितोक्षणमार्जनादौ ।
गायन्ति चेनमनुरक्तधियो श्रुकराठ्यो
धन्याब्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः ।। - श्रीभद्भागवत 10/44/15
30. Mc. Dougall : Out line of Psychology, 13th ed. pp. 344
31. Bhagwan Das : Science of Emotion, pp. 32
32. "It is doutful whether affecton and love are emotional states in the psychological sense, but they have the support of long standing literary usage as emotions. Most conditions of affections lack the violent nature of other emotional habits......described thus for, and are claiming rather than exciting psychologically.
- Shaffer, Oilmer. B. & Schoen. M. Psychology, 1940 ed. pp. 153-154.
33. "Commonly shared as this notion is, it is incorrect. It would be foolish to deny of course, that there is a strong emotional element in love, but it is only a part of it and not even an essential one !"
- Oswald Schwarz : The Psychology of Sex. pp. 98
34. Mc Dougall : Outline of Psychology 13rd ed. pp. 325-326.
35. Woodworth R.S. Psychology, 4th ed. pp. 417.
36. "Hence it is that the great dramatic poets, who are always great psychologists in this sense, lend no support to the theory of the philosophers that love and hate are single emotions. They are not indeed concerned to formulate theories of love themselves, they merely describe its manifestations. But from their descriptions alone we can infer that love includes at different times a great variety of emotions, as well as many other constituants that we have not yet been able to notice." -A.F. Shand : The Foundation of characters, 2nd Edition, 1920, pp. 52.
37. Love when do me one passion call
When it's a compound of them all ?
Where hot and cold, where sharp and sweet,
In all their equipage meet,
Where pleasures mix'd with Pain appear,
Sorrow with joy, and Hope with Fear.
-A.F. Shand : The Foundation of Characters, 2nd ed. pp.45.
38. Spancer : Principles of Psychology, Vol. I, Part IV, Chapt. VIII, pp. 487.
39. Several of these emotions may indeed blend into one where the situation is such as to evoke them together; but how often do different situations evoke different emotions ? For the situations of pres-

ence contrasts with that of absence and prcspoerity with adversity, and love responds to the one with joy and with sorrow and longing to the other. Love, therefore, cannot be reduced to a single compound feeling, it must organise a number of different emotional dispositions capable of evoking in different situations the appropriate behaviour.

- A. F. Shand : Foundation of Characters, IInd ed. 1920. p.-56

40. Christopher Caudwell : Studies in A Dying Culture.
41. 'There was a time when the two (sexes) were one, but because of the wickedness of men God......cut men into two, like a sorb-apple which is halved for pickling, or as you might devide an egg with a hair......each of us when seperated is but the endenture of a man.......and he is always looking for his other half.......The desire and pursuit of the whole is called love." - Plato : Symposium, pp. 189 - 192.
42. "Love is the desire for union with the object loved, and therefore even tends to bring subject and object to one level in order that they may unite and become one."

    - Dr. Bhagwandas : Science of Emotion, pp. 30
43. "Love is experienced as a pleasure in proximity of a desire for fuller knowledge of one another, a yearning of mutual personality fusion."

    - Karl Menninger : Love and Hate; p. 271.
44. "Love, in the sexual sense, is summarily considered a synthesis of lust (in the primitive and uncoloured sense of sexual desire) and friendship. It is incorrect to apply the term love in the sexual sense to elementary and uncomplicated sexual desire, it is equally incorrect to apply it to any variety or combination of varieties of friendship there can be no sexual love without lust on the other hand, until the currents of lust in the orgaism have been so irradiated as to affect other parts the physic organism - at the least the affection, and the feelings - its only yet sexual love, lust, the specific sexual impulse, is indeed the primary and essential element in this synthesis."

    -Havlock Ellis : Sex in Relation to Society, p. 86
45. अंग प्रत्यंगकानां यः सन्निवेशो यथोचितम् ।

    सुश्लिष्टः संधिभेदः स्यात् तत् सौंदर्यमुदीर्यते ॥ - रसार्णवसुधाकर 1/182
46. "The whole sentimental side of our aesthetic sentimentality without which it would be percepture and mathermatical rather than aestheic - is due to our sexual organisation remotely stirred."

    - G Santayan : The sense of Beauty, p. 59.
47. J.B.H.U. Silver Jubilee Number - p. 50.
48. "It is certainly rare to find any aesthetic admiration of men among women, except in the case of women who have had some training in art. In this matter it would seem that women passively accept the ideal of men."

    - Havlock Ellis : History of Psychology of Sex, Part III, - 159.

49. नयनोरपि हि रूपं तद् वीर्यविक्षोभात्मकमहाविसर्गविश्लेषयुक्त्या एव सुखदायि भवति । श्रवणयोश्च मधुरं गीतादि । - सर्वतो हि अचमत्कारे जड़तैव । अधिकचमत्कारावेश एव वीर्यविक्षोभात्मा सहृदयता उच्यते ।

    - अभिनवगुप्त, परात्रिंशिका, पृ.-47-49 ।
50. "The light which was never on land and Sea.
    The conscersation and poets dream. - Wordsworth.
51. "The mystical in art, the mystical in (Poetry) life, the mystical in nature, this is what I am looking for." - Ascarwilde.
52. "The poetry is the art of uniting pleasure with truth by calling imagination to the help of reason." - Johnson
53. "Poetry is the rhythmic creation of Beauty" - Edgar Elan Poe.
54. सकलविधास्थानैकायतनं पंचदश काव्यं विद्यास्थानम् इति

    यायावरीयः तथा पंचमी साहित्यविद्या इति या यावरीयैः ।

    - राजशेखर : काव्य मीमांसा

●

तृतीय अध्याय

राधाकृष्णवाद आ विद्यापतिक राधाकृष्णमे प्रेम-सौन्दर्यक उद्भावना

तृतीय अध्याय

राधाकृष्णवाद आ विद्यापतिक राधाकृष्णमे प्रेम-सौन्दर्यक उद्‌भावना

कृष्णाक स्वरूप-विकास

कृष्णक विकास आ स्वरूप-संघटनक विवेचन करबाक पूर्व वैदिक देवता विष्णुक स्वरूपकेँ निर्धारित कऽ लेब आवश्यक । पुराण, कृष्णकेँ विष्णुक अवतार तथा वृष्णि-कुल-सम्भूत मानैत अछि । ऋग्वेद मे यत्र-तत्र विष्णुक उल्लेख भेल अछि । विष्णु 'विश' धातु सँ बनल अछि, जकर अर्थ होइछ व्याप्त होयब । विष्णु कतहु देवताक रूपमे अयलाह अछि, तँ कतहु सामान्यार्थकरूपमे । शक्तिक अर्थमे सेहो विष्णुक उल्लेख भेल अछि । विष्णु वामनावतार सेहो भेल छलाह, जे तीनू लोककेँ तीन पैर मे नापि गेल छलाह । 'त्रिदिपदा विचक्रमे' तथा 'त्रेधानिदद्येपदम्' सदृश वाक्य सेहो विष्णुक सम्बन्ध मे वेदमे आयल अछि। एतय विष्णु सूर्य वाचक छथि । ई तीन गोट पैर अछि -अग्नि, विद्युत एवं सूर्यक उद्‌गम, उत्कर्ष एवं अस्त । शाक्यपूणिक अनुसारेँ ई तीन पैर पृथ्वी पर अग्नि, वायुमंडलमे इन्द्र वा वायु तथा आकशमे सूर्य छथि । ओर्णवाम्क अनुसारेँ उदय, मध्याह्न तथा अस्त, यैह तीन पैर थिक । अमरकोष मे विष्णु केँ 'उपेन्द्र, इन्द्रावरजः चक्रपाणिश्चतुर्भजः' कहल गेल अछि । एहि सँ प्रकट होइछ जे विष्णुक श्रेणी इन्द्र सँ निम्न अछि ।

वैदिक स्तुतिसभमे विष्णुक नाम अनेक स्थल पर इन्द्रक बाद अबैत अछि ।[1] मुदा अनेक स्थल पर स्वतंत्र रूपसँ सेहो विष्णुक स्तुति कयल गेल अछि । विष्णुकेँ जगतक रक्षक, आघाततातीत कहल गेल अछि । मित्र सदृश सुखप्रदान कयनिहार, घृताहुति भाजन, प्रकृत अन्नवान, रक्षाशील पृथुव्यापी बनबाक लेल हुनकासँ प्रार्थना कयल गेल अछि -

ता वां वास्तुन्युष्मसि गमध्ये ।
तत्र गावो भूरि श्रृंगा अयासः ।

अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः ।
परमं पदमवमाति भूरि । – ऋग्वेद, 1/154/6

हरिवंशपुराणमे गोवर्धनपूजाक कथा आयल अछि । कृष्ण अपन पिता नन्दसँ गोवर्धनक पूजाक प्रार्थना करैछ । ओ कहैत छथि जे हम पशुपालक छी । गोधने हमर वैभव अछि । ब्रज आ वृन्दावन हमर निवास अछि । एहि कथाक सम्बन्धमे डा. रामकुमार वर्माक कथन छन्हि जे ब्रज आ वृन्दावनमे 200-300 ईस्वीमे आभीर जाति रहैत छल । उत्तर महाराष्ट्र मे आभीर अपन राज्य स्थापित कऽ लेने छल । नासिकमे प्राप्त शिलालेख सँ ई ज्ञात होइछ जे ईश्वरसेन एहि राज- श्रृंखलामे एक प्रभावशाली राजा भेल छलाह । गोपालकृष्ण हिनक इष्टदेव छलथिन्ह । हिनका ओ ईश्वर जकाँ पूजैत छलाह । महाभारत आ उपनिषद मे जाहि कृष्णक वर्णन अछि, ओहीमे हिनक कृष्ण सेहो अन्तर्भूत भऽ गेलाह आ कृष्णक गोपालरूप भऽ गेल ।[2] डा. वर्माक एहि उक्ति सँ ई निष्कर्ष निकलैछ जे महाभारतक सात्वतधर्मावलम्बी कृष्ण आ हरिवंश पुराणमे वर्णित कृष्णमे तात्विक रूपेँ कोनो भेद नहि । कारण सात्वतधर्म प्रवृत्तिमार्गीये धर्म छल । ओहिमे पशुहिंसाक विरोधक जे भावना छल, ओएह कृष्णक गोपाल रूपक पुष्टि करैछ । कृष्णक गोपाल रूपकेँ सेहो समयक देन कहल जा सकैछ ।

कृष्णक देवत्वक आदि रूपक विषयमे चर्चा करैत डा. वर्मा लिखने छथि जे कृष्णक ईश्वरीय सृष्टिक प्रथम रूप वनदेवक रूपमे स्वीकार करबाक चाही । एहि सम्बन्धमे ओ तीन कारण प्रस्तुत कयने छथि जाहिसँ ई सिद्ध होइछ जे विष्णुक अवतार कृष्ण आ आभीरक वनदेव मिलिकय गोपालकृष्णक रूप धारण कऽ लेलनि ।

कृष्णक देवत्वक सबसँ अधिक विकास पुराणसभमे भेल अछि। सर्वप्रथम कृष्णक प्रेमरूप देवत्व हरिवंश पुराणमे प्राप्त होइछ । महाभारतक पश्चात् सोति अग्रश्रवा एकरा शौनक ऋषिकेँ सुनौने छलाह। सर्वप्रथम एहि पुराणमे कृष्णचरित्र केँ गोपीसभक संग जोड़ल गेल अछि। एहिमे पूतनावध, शकटभंजन, यमलार्जुनपात, माखन-चोरी, कालिय-दमन, धेनुकवध, प्रलम्बवध, गोवर्धनधारण आदि कथाक विस्तृत वर्णन अछि । कृष्ण विष्णुक अवतारक रूपमे चित्रित कयल गेल छथि । भासक नाटक मे सेहो, जकर समय 400 ईस्वीपूर्व अछि, कृष्ण-चरितक उल्लेख अछि । हुनक बालचरित नाटकमे पूतनावध, शकटवध, कालियदमन, तथा माखनचोरीक लीलासभक वर्णन कयल गेल अछि । स्पष्ट अछि, जे ईसासँ 500 वर्ष पूर्वहि कृष्णचरित

देवतत्वकेँ प्राप्त कऽ लेने छल । ब्रह्म आ विष्णुपुराणमे कृष्ण केँ परब्रह्म स्वरूप प्राप्त भऽ गेल छनि ।[3]

वायुपुराणमे श्रीकृष्णक जन्मक विषयमे लिखल गेल अछि :-

देव देवो महातेजाः पूर्व कृष्णः प्रजापतिः ।
विहारार्थ मनुष्येषु यज्ञे नारायणः प्रभुः । 192 ।
देवक्यां वसुदेवेन तपसा पुष्करेक्षणः
चर्तुबाहुः स विज्ञेयो दिव्य रूपः श्रियान्वितः । 193।
प्रकाशो भगवान योगी कृष्णो मानुषमागतः ।
अव्यक्तो व्यक्त लिंगस्थः स एव भगवान् प्रभुः । 194।
अव्यक्तः शाश्वतः कृष्णो हरिर्नारायणः प्रभुः ।
जायते संभव भगवान्यनैर्मोहयन् प्रजाः । 202

– वायुपुराण, खण्ड 2 : अध्याय 34

वायुपुराणक 42म अध्यायक 45 सँ 53 धरिक श्लोकमे गोलोक वासी भगवान कृष्णक वर्णन अछि । एतय हिनका लीला-विलास-रसिक, वल्लभीयूथ-मध्यम, शिखि-पक्ष-किरीट-शोभी, खंजरीटक समान सरल कर्णावलम्बी नेत्रवला, कुंजविहारी, पीताम्बरधारी, वेणुवादक, राधाविलासी, गायकपाछाँ दौड़निहार तथा गोलोकमे क्रीड़ा कयनिहार कहल गेल अछि ।[4] भागवत्कार कृष्णकेँ साक्षात् ब्रह्मक रूपमे चित्रित कयने छथि। स्थान-स्थान पर हुनक स्तुति कयल गेल अछि । अन्य देवतालोकनि सेहो हुनका परब्रह्मक संज्ञा प्रदान कयने छथि । गोवत्स एवं गोपसभक अपहरण भेला उत्तर कृष्ण जखन स्वयं अपना शरीर सँ हुनक निर्माण कऽ लैत छथि, तँ ब्रह्माक मोह-भंग भऽ जाइछ आ ओ कृष्णक स्तुति करैत छथि – "भगवान, अहाँक भक्ति समस्त कल्याणक मूल उद्गम थिक,जे लोकनि ज्ञानक क्षेत्रमे परिश्रम करैछ, हुनका कष्टे-कष्ट प्राप्त होइछ ।[5]"

ब्रह्मवैवर्तपुराणमे कृष्णलीलाक सर्वाधिक वर्णन भेल अछि । ओ अनेक पुराणसभक बादक रचना थिक, अतः एहिमे श्रीकृष्णक ओ समस्त स्वरूप आबि गेल अछि, जे पूर्ववर्ती रचनासभमे आबि गेल छल । एहिमे राधा, श्रीदामा, वसुदेव (कश्यप), देवकी (अदिति), नन्द (वसु) आ यशोदा (वसुकामिनी) सभकेँ अवतार रूपमे चित्रित कयल गेलनि अछि ।[6]

जाहि स्थानसभमे उन्मत्त श्रृंगावली एवं शीघ्रगामी गायसभ अछि, ओहीं स्थानसभमे अहाँ दुनू गोटयकेँ जयबाक लेल हम विष्णुसँ प्रार्थना करैत

छी । एहि स्थानसभमे अनेक लोकक स्तवनीय एवं अभीष्ट-वर्षक विष्णुक परम पद, यथेष्ट स्फूर्ति प्राप्त करैछ ।[7]

उपर्युक्त मंत्र तथा ओकर अर्थसँ विष्णुक सम्बन्ध गायसभसँ स्थापित कयल गेल अछि । ऋग्वेदक सप्तम अध्यायक उन्नैसम सूक्त, गाय, गोपाल, गोचारण आदि सँ सम्बन्ध रखैछ । ऋग्वेदक अन्यान्य मंत्रसभमे कृष्णकेँ गोपाल कहल गेल अछि । ओ गाय चरबैत छथि । कृष्ण विष्णुक अवतार मानल गेलाह अछि । विष्णु आ गायक सम्बन्धे प्राय: कृष्णक गोरोचन-लीलाक मूल प्रेरणा-स्रोत रहल हो ।

शतपथ ब्राह्मणमे सेहो विष्णुक वामनाकारक उल्लेख अछि । यज्ञपुरुष बनि ओ असुरसँ पृथ्वीकेँ प्राप्त करैछ । ऐतरेय ब्राह्मणमे विष्णुकेँ सबसँ श्रेष्ठ देवता कहल गेल अछि । ओहिमे ब्रह्मक संज्ञा नारायण थिक, परंच नारायण विष्णुक द्योतक नहि । वाल्मीकि रामायणमे जे देवता पुत्रेष्टि यज्ञ मे भाग वा प्रसाद प्राप्त करबाक लेल अयलाह, ओहिमे विष्णुक नाम नहि अछि। ओना अनेक प्रसंगमे विष्णु, ब्रह्मक वाचक बनि कऽ आयल छथि, जकरा अनेक विद्वान प्रक्षिप्त अंश मानैत छथि । महाभारत एवं पुराणसभमे ब्रह्मा, विष्णु आ महेश तीन देवताक विशेष वर्णन प्राप्त होइछ । विष्णुकेँ व्यापक, पोषक, स्वयंभू (अजन्मा) दयालु एवं सत्वगुणी बताओल गेल अछि। ब्रह्मक उत्पादक, रक्षक, पोषक एवं संहारक शक्तिकेर देवता यैह तीनू मानल गेल छथि । विष्णु, ब्रह्मक रक्षावतार छथि तथा हिनक नाभिसँ ब्रह्मा एवं मस्तकसँ रुद्रक उत्पति बताओल जाइछ । एवं प्रकारेँ एहिठाम विष्णु तीनूमे श्रेष्ठ भऽ जाइत छथि ।

विष्णुपुराण, भागवतपुराण तथा ब्रह्मवैवर्तपुराणमे विष्णुकेँ सर्वोच्च कहल गेलनि अछि । सम्पत्ति एवं वैभवक देवी श्री (लक्ष्मी) हिनक पत्नी छथिन्ह ।[8] वैकुण्ठ हिनक निवास तथा गरुड़ हिनक वाहन । श्यामवर्ण, कोमल स्वभाव, सौन्दर्य-राशि, चारि भुजा : जाहिमे शंख, चक्र, गदा, पद्म, वक्षपर कौस्तुभमणि तथा श्रीवत्सक चिह्न, बाँहिमे स्यमंतक मणि पहिरने, आसन कमल एवं शेषनाग हिनक शैया छनि । महाभारतक नारायणी अध्यायमे विष्णुकेँ श्वेत द्वीपक निवासी कहल गेलनि अछि । नारायणक निवास सेहो जले थिक ।[9] नारायणक संग लक्ष्मी सेहो रहैत छथि । यजुर्वेदक पुरुषसूक्तमे यज्ञ-पुरुष विष्णुक दू पत्नीक संकेत अछि : "श्रीश्चतेलक्ष्मीश्चपत्नयो" (31-22) । एहि सभ तथ्यक आधार पर ई निष्कर्ष बहार होइछ जे विष्णु आ नारायण एके छथि ।

कृष्ण, विष्णु आ नारायणक अवतार छथि । कृष्ण-जन्मक प्रसंग ब्रह्मवैवर्तपुराण एवं भागवतकार कृष्णक जे सौन्दर्य-वर्णन कयने छथि, ओ विष्णुपुराणमे वर्णित विष्णुक रूपसँ पूर्ण सादृश्य रखैत अछि । नेत्रकमल सदृश कोमल आ विशाल, वक्षस्थल अति सुन्दर, सुवर्णमय रेखा (श्रीवत्सक चिह्न), वर्षाकालीन मेघ सनक परम सुन्दर श्यामल शरीर, चारिटा भुजा, जाहिमे शंख, चक्र, गदा आ पद्म, ग्रीवामे कौस्तुभ मणि। दुनू ग्रन्थमे समान स्वरूप-चित्रण पुराणकारलोकनिक उद्देश्यकेँ सिद्ध करैछ । एहिसँ विष्णु आ कृष्णमे कोनो भेद नहि रहि जाइछ आ पाठक केँ ई विश्वास भऽ जाइछ जे कृष्ण, विष्णुक अवतार छथि । वैदिक विष्णु, जे वेदमे प्रथम कोटिक देवता नहि, सहजहि देवत्वक सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठित भऽ जाइत छथि । आइ बहुसंख्यक हिन्दूक दृष्टिमे विष्णुए ब्रह्म - वा ईश्वरक बोधक छथि । पुराणक अनुसार विष्णुए मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, नारायण, राम, कृष्ण, बुद्ध आदिक अवतार धारण कऽ विश्वक रक्षा कयने छलाह ।

कृष्ण नाम सर्वप्रथम ऋग्वेदमे प्राप्त होइछ । आठम मण्डलक 85, 86, 87 तथा दसम मण्डलक 42, 43, 44 सूक्तसभक ऋषिक नाम कृष्ण अछि । वैदिक ऋषि कृष्णक नाम पर कार्षणायन गोत्र चलल। ई वैदिक ऋषि कृष्ण, निश्चितरूपेँ महाभारतक ऐतिहासिक पार्थसारथी कृष्ण नहि । ईहो भऽ सकैछ जे एही ऋषिक नाम पर वसुदेव अपन प्रभुक नाम कृष्ण रखने होथि । कृष्ण वसुदेव-देवकीक पुत्र छथि। वसुदेवपुत्र भेलाक कारणेँ ओ वासुदेव कहयलाह । पाणिनी 'वासुदेव' शब्दक प्रयोग अर्जुन केर संग कयने छथि ।[10] महाभाष्यकार पतंजलि लिखने छथि जे वासुदेव कंसक वध कयलनि । दोसर स्थान पर लिखल अछि जे कृष्ण कंसक वध कयलनि । छान्दोग्य उपनिषदमे कृष्णकेँ देवकी-पुत्र आ घोर आंगिरस ऋषिक शिष्य कहल गेल अछि ।[11] आंगिरस ऋषि देवकी-पुत्र कृष्ण केँ शिक्षा दैत कहलनि- तप, दान, सरलता, अहिंसा, सत्यवचन सैह यज्ञक दक्षिणा थिक ।[12] गीता मे सेहो श्रीकृष्ण द्वारा यैह बात दोहराओल गेल अछि । घोर आंगि ऋषिक नाम कौशिकिती ब्राह्मण (आनन्द आश्रम, पूनासँ प्रकाशित, हिनक नाम शांखायन ब्राह्मण सेहो अछि ।) मे कृष्णक संग आयल अछि । एतय कृष्णकेँ आंगिरस कहल गेलनि अछि ।[13]

एहि विवेचनसँ ई निष्कर्ष बहार होइछ जे कृष्ण वसुदेव-देवकीक पुत्र आ आंगिरस ऋषिक शिष्य, अर्जुनक सखा आ महाभारत युद्धक

संचालक छलाह । महाभारतमे अनेक स्थलपर कृष्णक जीवन आ व्यक्तित्वक चित्रण भेल अछि । कृष्ण अपन युगक प्रधान राजनीतिज्ञ, अत्यन्त प्रभावशाली समाज-नेता, महान पराक्रमी, योद्धा, अप्रतिम वेद-वेदांग-पंडित, धर्मोपदेष्टा आ सर्वोच्च दार्शनिक छथि । महाभारत हिनका सात्वत धर्मक उपदेष्टा आ आचार्य घोषित कयने अछि । कृष्ण सात्वत धर्मक स्थापना कयने छलाह । ओ यज्ञसभमे पशु-हिंसाक विरोध कयलन्हि आ निवृत्ति मार्गक स्थान पर प्रवृत्ति मार्गक प्रचार कयलन्हि । गीता हिनकहि द्वारा उद्भूत कर्मयोग-दर्शन थिक । गीता सँ स्पष्ट अछि जे निष्काम कर्महि प्रवृत्तिमार्गक आदर्श रूप थिक । एहन अलौकिक, सर्वगुण-सम्पन्न व्यक्तित्वे भगवानक सर्वोत्कृष्ट अभिव्यंजनाक रूप धारण करैछ । एही मानव-दुर्लभ विशेषता, शारीरिक, आत्मिक आ बौद्धिक चरम विकासक कारणेँ, संभवतः कृष्णमे देवत्वक स्थापना कऽ देल गेल होयत। भीष्म द्वारा कयल गेल कृष्णक स्तुति सँ स्पष्ट होइछ जे अपन जीवन-कालहिमे कृष्णकेँ देवत्व सँ विभूषित कयल गेल छल ।[14]

डा. सर भंडारकर एहि विषयमे लिखैत छथि जे सात्वत एक क्षत्रिय वंश छल । एकरा वृष्णि कहल जाइछ । 600 ई. पूर्व वासुदेव एही वंश मे उत्पन्न भेल छलाह । गीता वासुदेव द्वारा रचित ग्रंथ अछि। वासुदेव जाहि धर्मक उपदेश देलनि, ओकरा सात्वतवंश मे होयबाक कारणेँ, सात्वत धर्म कहल गेलैक । कालान्तरमे वासुदेवक वंशज हिनकहि ब्रह्म मानिकऽ हिनक उपासना आरम्भ कयल।[15] डा. भंडारकरक कथनक अनुसारेँ गीताक कृष्ण आ महाभारतक कृष्ण दू व्यक्ति छलाह। कालान्तरमे दुनूक एकीकरण कऽ देल गेलैक; परंच महाभारतमे कृष्णकेँ सेहो सात्वत धर्मक उपदेष्टा कहल गेल अछि । अतः एहिसँ यैह निष्कर्ष बहार होइछ जे कृष्ण आ वासुदेव एकहि व्यक्ति छलाह ।

हापकिन्सक कथन छनि जे महाभारतमे पहिने कृष्ण मनुष्य रूपमे वर्णित छथि, पश्चात् कृष्ण देवत्वसँ युक्त कऽ देल गेलाह । कीथ सेहो महाभारतक कृष्णमे देवत्वक भावनाकेँ स्वीकार करैत छथि । ईसा सँ 400 वर्ष पूर्व कृष्णक देव-रूपक बेस प्रचार भऽ गेल छल । ईसा सँ 300 वर्ष पूर्व मेगास्थनीज भारत अएलाह । ओ लिखने छथि जे मथुरा आ कृष्णपुरमे कृष्णक पूजा कयल जाइत छल। 200 वर्ष पूर्व सँ 200 वर्ष ईस्वीधरि कृष्ण पूर्ण देतत्वकेँ प्राप्त कऽ लेने छलाह । महानारायणी उपनिषद्मे विष्णुक पर्याय वासुदेव बनि गेलाह । वासुदेवे कृष्ण छथि । यैह कारण जे कृष्णकेँ विष्णुक अवताररूप प्राप्त भेलनि । एही ग्रंथमे ईहो कहल गेल अछि जे

कंस-वधक लेल वासुदेवक अवतार भेल।[16] कृष्णक गोपाल रूपक उल्लेख नहि भेल अछि ।

हरिवंशपुराण (रचनाकाल, 300 ई.) मे कृष्णक गोपाल रूपक चित्रण भेल अछि । महानारायणी उपनिषदमे विष्णुक 6 अवतारक उल्लेख अछि : वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, दाशरथी राम आ वासुदेव कृष्ण । हरिवंश पुराण मे यैह स्थिति रहल । वायुपुराणमे एहि 6 केर संग आर 6 मिला देल गेल जाहि सँ 12 अवतार भऽ गेल । वाराहपुराण मे एहि 6 केर संग मत्स्य, कूर्म, बुद्ध, कल्कि मिलाकऽ एकरा 10 बना देल गेल । अग्निपुराण तथा नृसिंहपुराणमे यैह 10 रहल । भागवतमे पहिल स्कन्धक तेसर अध्यायमे 16 अवतारक उल्लेख अछि। मुदा महानारायणी क 6, सभमे अछि । 'कृष्ण' शब्दक व्याख्या सेहो ब्रह्मवैवर्त-पुराणमे एहिप्रकारे देल गेल अछि –

'क' अक्षर ब्रह्मवाचक, 'ऋ' अनन्तवाचक, 'ष' शिववाचक, 'न' धर्मवाचक 'अ' विष्णु वाचक तथा 'विसर्ग' नर-नारायणक अर्थ-वाचक थिक । सर्वाधार, सर्व बीज तथा सर्वमूर्ति होयबाक कारणेँ ओ कृष्ण कहबैत छथि ।

'कृष्ण' शब्दक अन्य व्याख्या एहि प्रकारेँ अछि : कृषि निश्चेष्ट वा निर्वाणवाचक, नकार भक्तिवाचक वा मोक्षवाचक, अकार प्राप्तिवाचक वा दानवाचक होयबासँ कृष्ण नाम पड़ल । ककार मुँह सँ बहराइत देरी भक्त जन्म-मरणक बन्धनसँ मुक्त भए कैवल्य प्राप्त करैछ। अकार सँ भगवानक प्रतिये दास्यभावक उदय होइछ । सकार अभिलषित भक्तिक दाता एवं बकार भगवानक सान्निध्य तथा सारूप्य देनिहार अछि । ककारक उच्चारण सँ यमदूत काँपय लगैछ आ अकार कहैत मात्र पड़ा जाइछ । षकारक उच्चारण सँ पाप, नकार बजैतमात्र रोग एवं अकार सँ मृत्यु भागि जाइछ ।[17]

पुराणसभमे एक तँ कृष्णक ईश्वरीय रूपक चित्रण भेल अछि, दोसर हुनक लीला पुरुषोत्तमरूपक । लीला पुरुषोत्तमरूप मे ओ असुरसभक संहार कयलन्हि एवं ब्रजमे गोपीसभक संग विहार कयलनि । कृष्णक गोपीवल्लभ वा राधावल्लभ रूपहि पुराणकेँ विशेषप्रिय रहलैक । कृष्णलीलासभमे सबसँ अधिक विस्तार देल गेल अछि रासलीलाकेँ । हरिवंशपुराण, विष्णुपुराण, भागवतपुराण तथा ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमे रासकेर मनोमुग्धकारी श्रृंगारिके नहि, कामोत्तेजक विस्तृत चित्रण कयल गेल अछि। स्पष्ट अछि, रासलीला पुराणकारक सर्वोच्च

उद्देश्य छल ।[18] यद्यपि रास मे शृंगारचेष्टा एवं अनुभाव एतबा प्रकट आ कतहु-कतहु एतेक ने मांसल रूप मे आयल अछि जे सभकाम-प्रेरित प्रतीत होइछ, मुदा पुराणकार निरंतर अपन पाठक केँ सचेत करैत रहैछ आ शीघ्र आध्यात्म पक्ष केँ सोझा मे आनि उपस्थित कऽ दैछ ।[19] दक्षिण भारतक आलवार साधकलोकनिक भक्तिसुधा-सिंचित वैष्णवधर्मक पारिजात-कानन लहलहा कय जागि उठल । एही आलवार भक्त-परम्परामे आचार्य रामानुजाचार्यक आविर्भाव भेल । वैष्णवधर्ममे चारि आचार्य भेलाह, जे अपन भिन्न-भिन्न मतक प्रतिपादन कयलन्हि, ओ थिक रामानुजाचार्यक विशिष्टाद्वैतवाद, निम्बार्काचार्यक द्वैताद्वैतवाद, मध्वाचार्यक द्वैतवाद तथा विष्णुस्वामीक शुद्धाद्वैतवाद । एहिमे रामानुजाचार्य केँ छोड़ि शेष तीनू कृष्णकेँ ब्रह्म रूपमे स्वीकार कयलनि । ई सभ मत शंकराचार्यक मायावादक विरोधी छल ।

वल्लभाचार्य पुष्टिमार्गी भक्ति-पद्धतिक प्रतिपादन कयलनि । कृष्णक अनुग्रहे पुष्टि थिक ।[20] वल्लभाचार्य कृष्णकेँ पूर्णानन्द स्वरूप, पूर्ण पुरुषोत्तम, रसरूप परब्रह्मक रूपमे स्वीकार कयलनि ।[21] वसुदेव- देवकी-पुत्र वासुदेव हुनक धर्मरक्षक मर्यादा पुरुषोत्तम रूप थिक तथा नन्द-यशोदा नन्दन हुनक लीला पुरुषोत्तम रसरूप । पुष्टिभक्तिक ध्येय भगवानक गोलोक लीलामे पहुँचि आनन्द प्राप्त करब थिक । बैकुंठो सँ बढ़िकऽ गोकुलक महत्व अछि ।[22] वल्लभ-सम्प्रदायक भक्तिक लेल गोपीलोकनि रसात्मकता सिद्ध करयवाली शक्तिक प्रतीक छथि आ राधा रसात्मक सिद्धिक प्रतीक । गोपीलोकनि ओहि भक्त सदृश छथि, जे आनन्दक साधनावस्थामे छथि - आनन्द प्राप्त करबाक यत्नमे निमग्न ।[23]

एवं प्रकारेँ कृष्णक स्वरूप-विकासक अध्ययनसँ हम एहि निष्कर्ष पर पहुँचैत छी जे वल्लभाचार्यक कृष्ण, कृष्णक चरम विकसित रूप थिक । ओहिमे देवत्वक पूर्ण स्वरूप ब्रह्म साकार भऽ उठल अछि । दार्शनिक रूपमे सेहो तथा भक्तक इष्ट उपास्यरूपमे, एतबा सम्पन्न स्वरूप पुराण सेहो नहि उपस्थित कऽ पौलक । कृष्णक देवत्वक एवं ईश्वरत्वक जे कल्पना पूर्ववर्ती आचार्य, भक्त एवं धर्मग्रंथ कयने छल, ओ वल्लभाचार्यमे पूर्णत्वकेँ प्राप्त कयलक ।

सम्यक सचेत कल्पना, सजग मस्तिष्क तथा सरस सुकुमार भावना, आवश्यकता आ अवसरक मांग-कृष्णचरित्रमे नवीन, अभूतपूर्व एवं चिरस्थायी रंग भरलक अछि । महाभारतक वीरयोद्धा, राजनीतिक नेता, धर्मोपदेष्टा एवं

दार्शनिक कृष्णकेँ, हुनक अतिमानवीय, पुरुषोत्तम सुलभ अनुपम गुणक कारणेँ, देवत्वसँ अभिसिक्त कयल गेल । समय पाबि आभीरक राधावल्लभ कृष्ण सेहो आबि मिललाह आ सुषमा-राशि राधाकेँ सेहो संग लेने अयलाह । धर्मक स्थिति रखबाक लेल, जखन अवतारसभक आवश्यकता पड़लैलक तँ विष्णुक अवतार कृष्णमे कल्पित कऽ लेल गेल । हुनका विष्णुक सम्पूर्ण शक्तिसँ पूर्ण बना देल गेल । 'गाथा सप्तसती' मे वर्णित कृष्णराधाक शृंगारिक रूपक विकास जन-साहित्य आ पुराण साहित्यमे उत्कर्ष केँ प्राप्त कयलक आ भक्तक आदर्श बनल । कृष्णक शृंगारिक रूप एवं हुनक प्रेम-क्रीड़ा केँ आध्यात्मिक रूप प्राप्त भेलैक । कृष्णक दार्शनिक स्वरूप परब्रह्म बनि साकार भऽ उठल ।

कृष्णक स्वरूप-निर्माणमे दक्षिण भारतकेँ अत्यधिक श्रेय प्राप्त छैक । वैष्णव धर्मक आविर्भाव ओतहि भेल । आलवार भक्तलोकनि भक्तिक बीड़ा उठौलनि । श्यामल वर्ण, अरुण कमल सदृश आरक्त नयन, क्षीरसागरमे शेष-पर्यंकशयन आदिसँ स्पष्टतः भासित होइछ जे वैदिक विष्णुक दैहिक-स्वरूप-कल्पना द्रविड़क थिक, आर्यलोकनिक नहि । यैह बात कृष्णोक विषयमे अछि । वैष्णव-धर्मपर बहुत अंशधरि शाक्तक प्रभाव दृष्टिगत होइछ । कृष्णक रूप सेहो शक्ति सँ सादृश्य रखैछ । सजल घनश्याम रंग, मुक्त केश, मस्तकपर मयूर-पंखी किरीट आ कदम्ब गाछतर वंशी-वादन । ई रूप शक्तिये सँ लेल गेल बुझना जाइछ । शक्ति वा दुर्गा तिमिरवर्णा, मुक्तकेशी, मस्तकपर त्रिनेत्र आ कदम्ब गाछतर ठाढ़ कल्पित कयल गेलीह अछि । हमरा सम्मतिमे शक्तिक स्वरूप सेहो द्रविड़कल्पना पर आधारित अछि । निष्कर्षतः यैह कहल जा सकैछ जे जखन आर्य आ द्रविड़ संस्कृति घुलिकऽ एक भऽ गेल, तँ दुनूक कल्पना एवं भावना मिलिकय विष्णु, शिव, दुर्गा, कृष्ण आदि देवतालोकनिक प्रतिष्ठा मानस-मंदिरमे कयल गेल ।

निष्कर्ष

(1) पुराणक अनुसार कृष्ण विष्णुक अवतार तथा वृष्णि-कुल-सम्भूत थिकाह ।

(2) ब्रज एवं वृन्दावनमे 200-300 ई. मे आभीर जाति रहैत छल जकर एक प्रभावशाली राजा छलाह-ईश्वरसेन । गोपालकृष्ण हिनक इष्टदेव छलथिन्ह जनिक पूजा ईश्वरक रूपमे कयल जाइत छल । महाभारत आ उपनिषदक कृष्ण एहीमे अन्तर्भुक्त भऽ गेलाह आ कृष्णक गोपाल रूप स्थापित भेल ।

(3) कृष्णक देवत्वरूप सर्वप्रथम आभीरक वनदेवता गोपालकृष्णहि मे प्राप्त होइछ । कृष्णक देवत्वरूपमे सभसँ विस्तृत वर्णन हरिवंशपुराणमे कयल गेल अछि । मुदा कतिपय तथ्यक आधार पर ई प्रमाणित होइछ जे ईसा सँ 500 वर्ष पूर्वहि कृष्णचरित देवत्वकेँ प्राप्त कऽ लेने छल ।

(4) ब्रह्म पुराण आ विष्णुपुराणमे कृष्णकेँ परब्रह्म स्वरूप प्राप्त भेल छनि। भागवतकार तथा अन्य देवतालोकनि सेहो हुनका ब्रह्मक संज्ञा प्रदान कयने छथि ।

(5) परवर्ती रचना ब्रह्मपुराणमे आबिकऽ कृष्णलीलाक सर्वाधिक वर्णन भेल अछि । एहिमे राधा, कृष्ण, श्रीदामा, देवकी, नन्द तथा यशोदाकेँ अवतार रूपें चित्रित कयल गेलनि अछि ।

(6) महाभारत एवं पुराणसभमे ब्रह्मा, विष्णु आ महेश तीन देवताक विशेष वर्णन प्राप्त होइछ जाहिमे विष्णु सर्वश्रेष्ठ प्रमाणित होइत छथि । एकर अतिरिक्त विष्णुपुराण, भागवतपुराण एवं ब्रह्मवैवर्तपुराणमे सेहो विष्णुकेँ सर्वोच्च कहल गेलनि अछि ।

(7) पुराण, महाभारत, यजुर्वेद (पुरुषसूक्त) क आधार पर ई प्रमाणित होइछ जे विष्णु आ नारायण दू नहि, एके छथि । एहि आधार पर कृष्ण, विष्णु आं नारायणक अवतार प्रमाणित होइत छथि ।

(8) कृष्ण नाम सर्वप्रथम ऋग्वेदमे प्राप्त अछि । वैदिक ऋषि कृष्णक नामपर कार्षणायन गोत्र चलल । मुदा ई कृष्ण महाभारतक ऐतिहासिक पार्थसारथी नहि छथि ।

(9) पाणिनी, पतंजलि, छान्दोग्य उपनिषद आदिक आधार पर कृष्ण वासुदेव-देवकीक पुत्र, आंगिरस ऋषिक शिष्य, अर्जुनक सखा तथा महाभारत युद्धक संचालक सिद्ध होइत छथि ।

(10) 200 वर्ष ईस्वीपूर्वसँ 200 वर्ष ईस्वीधरि कृष्ण पूर्ण देवत्वकेँ प्राप्त कऽ लेने छलाह । महानारायणी उपनिषदमे वर्णित विष्णुक छः अवतार (वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, दाशरथीराम, आ वासुदेव कृष्ण) मे कृष्णहुक नाम अछि जे पुराणसभमे सेहो पाओल जाइछ ।

(11) पुराणक सभसँ प्रिय विषय रहल अछि कृष्णक गोपीवल्लभ एवं राधावल्लभ रूप । लीला पुरूषोत्तम रूपमे ओ असुरक संहारक तथा ब्रजमे गोपीसभक संग बिहार कयनिहारक रूपमे चित्रित छथि । कृष्णलीला सभमे सभ सँ विस्तार देल गेल अछि रासलीला केँ ।

(12) वैष्णवधर्म मे रामानुजाचार्यक विशिष्टाद्वैतवाद, निम्बाकार्यचार्यक द्वैताद्वैतवाद, मध्वाचार्यक द्वैतवाद तथा विष्णु स्वामीक शुद्धाद्वैतवाद प्रभृति चारि सम्प्रदायमे अंतिम तीनू शाखा द्वारा कृष्णकेँ ब्रह्म रूपमे स्वीकार कयल गेल । ई सभ शंकरक मायावादक विरोधी छलाह ।

(13) वल्लभाचार्यक पुष्टिमार्गमे कृष्णकेँ पूर्णानन्द स्वरूप, पूर्ण पुरुषोत्तम रसरूप परब्रह्मक रूपमे स्वीकार कयल गेल ।

(14) कृष्णक स्वरूप-विकासक अध्ययन सँ ई निष्कर्ष बहराइछ जे वल्लभाचार्यक कृष्ण, कृष्णक चरम विकसित रूप थिक । कृष्णक देवत्वक एवं ईश्वरत्वक जे कल्पना पूर्ववर्ती आचार्य, भक्त एवं धर्मग्रंथ द्वारा कयल गेल छल, से वल्लभाचार्यमे पूर्णत्वकेँ प्राप्त कयलक ।

(15) निष्कर्षतः ई कहल जा सकैछ, जे महाभारतक वीरयोद्धा, राजनीतिज्ञ, धर्मोपदेष्टा एवं दार्शनिक कृष्णकेँ हुनक विभिन्न गुणक कारणेँ देवत्व सँ अभिमंडित कयल गेल । आभीरक राधावल्लभ कृष्णक अवतारणाक पश्चात् कृष्णमे विष्णुक अवतारक कल्पना कयल गेल । पुराणमे आबि कऽ ओ उत्कर्ष केँ प्राप्त कयलनि । हुनक रूप आ प्रेमक्रीड़ा आध्यात्मकेँ प्राप्त कयलक आ हुनक दार्शनिक स्वरूप परब्रह्म बनि साकार भऽ उठल आ वैष्णब धर्ममे आबिकऽ ओ चरमोत्कर्ष केँ प्राप्त कयलनि ।

राधाक स्वरूप विकास

'राधा' शब्दक सबसँ पहिने प्रयोग कोन समयमे भेल, ई प्रश्न प्रायः साहित्यक जिज्ञासु अनुसंधायकलोकनिक चित्तकेँ उद्वेलित करैत रहैत छनि । ओना मध्यकालीन साहित्यकेँ जँ एक शब्दमे अभिव्यक्त करबाक हो तँ निःसंकोचभावेँ कहल जा सकैछ जे ओ शब्द थिक – 'राधा'। राधा मध्यकालीन साहित्यक प्रेरणा-स्रोत छथि, अधिष्ठात्री छथि, संगहि ओ नारीक एहन मांसल रूप छथि जिनक शरीरक प्रत्येक अणुमे माटिक गन्ध छनि आ आत्माक प्रत्येक चेतन परमाणुमे दिव्यप्रेमक अलौकिक छटा । छठम शताब्दी सँ 17म शताब्दीधरिक सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय एहि अनुपम नारी-रत्नक छाया व्यतिरेकक सौन्दर्य-सृष्टि सँ अनुप्राणित भेल अछि ।

उल्लासक थिरकन, मुस्कानक सुकुमार स्वर्ण-रश्मि, गदरायल यौवनक अम्लान प्रतीक, शरद पूर्णिमाक शीतल रजत-पुलक आ संयोगक अनन्त तृप्ति तथा वियोगक कातर मूर्च्छनासँ निर्मित राधा, आइ भक्तलोकनिक लेल आत्म-विस्मृतिक आलम्बन आ आराध्यदेवी बनलि छथि । राधा कला आ

भक्ति दुनूक आदर्श छथि । हमरा-लोकनिक रोम-रोम मे ओ सिहरन बनिकऽ बजैत छथि ।

राधाक एहि अप्रतिम रूपक निर्माण युग-युगक एकनिष्ठ आस्था, निष्कलंक भावुकता, सचेत कल्पना एवं सूक्ष्म चिंतनसँ भेल अछि । वैष्णवधर्मक सर्वमान्य ग्रंथ श्रीमद्भागवतमे राधाक उल्लेख नहि भेटैछ । दसम स्कंधक तीसम अध्यायमे एक गोपीक उल्लेख अवश्य भेल अछि। गोपीक गर्व चूर्ण करबाक लेल श्रीकृष्ण रासक बिच्चहिमे अन्तर्धान भऽ जाइत छथि । विलाप करैत गोपीसभ हुनका तकैत फिरैत छथिन तँ हुनक चरण-चिह्नक संग हुनकालोकनिकेँ कोनो नारीक चरण-चिह्न सेहो दृष्टिगत होइछ । ओ परस्पर गप्प करैत कहैत छथि जे भगवान श्रीकृष्णक कान्ह पर हाथ राखि घुमनिहार कोन सौभाग्यशालिनीक ई चरण-चिह्न अछि । अवश्य ओ श्रीकृष्णक आराधना केने होयति । तेँ तँ हमरालोकनि केँ छोड़ि, ओ एकरा एकान्त मे लऽ गेलाह अछि ।[24] कालान्तरमे 'आराधित' शब्द सँ राधा नामक कल्पना कऽ लेल गेल ।[25]

विष्णुपुराणमे कृष्णक प्रियतमा कोनो गोपीक उल्लेख अछि, मुदा राधाक नाम ओतहु नहि अछि ।[26] पद्मपुराण, मत्स्यपुराण, वायुपुराण तथा नारदपंचरात्रमे राधाक उल्लेख भेल अछि । महाभारत, हरिवंशपुराण, ब्रह्मपुराणमे राधाक उल्लेख नहि भेल अछि । अथर्ववेदक गोपालतापनी उपनिषद् मे कृष्णक प्रियतमा गोपीक नाम गांधर्वी देल गेल अछि, राधा नहि ।[27]

ऋग्वेदमे राधाकृष्ण

ऋग्वेदक किछु मंत्र पदमे कृष्णक ब्रजलीला सम्बन्धी सभ नाम आबि गेल अछि । एहि मंत्र पदसभमे राधा, गो, ब्रज, अहि, काली, वृषभानु, रोहिणी, कृष्ण एवं अर्जुन सभ नाम कृष्णलीलासँ सम्बंधित अछि ।[28] एतय गो केर अर्थ गाय नहि, किरण अछि । राधाक अर्थ गोपी विशेष नहि, धन, अन्न आ नक्षत्र अछि । ब्रजक अर्थ स्थान विशेष नहि, आकाश अछि । कृष्णक अर्थ राति आ अर्जुनक अर्थ दिन अछि । कृष्णक अर्थ वृष्णवंश नहि, जतय कृष्ण आविर्भूत भेल छलाह, अपितु बलवान अछि ।[29] ई संभव अछि जे एही आधार पर ऐतिहासिक व्यक्तिसभक नाम पड़ल हो ।

अथर्ववेदमे राधा आ विशाखा एक नक्षत्रक दू नाम आयल अछि। विशाखाक नाम अनुराधा सेहो अछि । किछु काल पश्चात् देवसभमे एकरा दू टा पृथक् नक्षत्र मानि लेल गेल आ विशाखाकेँ राधाक सखी कहल गेल ।

सूर्य कृष्ण छथि । कृष्णकेँ विष्णुक अवतार मानल गेल अछि अर्थात् कृष्ण सूर्यक रश्मिस्थानीय वा प्रतिबिम्ब छथि। ज्योतिषक अनुसारेँ सूर्य कौखन राधाक घरमे प्रवेश करैत छथि, कौखन विशाखाक घरमे । पं. योगेशचन्द्र राय राधा-कृष्णक रास-लीलाक वर्णन एहिप्रकारेँ कयने छथि :-

कार्तिकी पूर्णिमाक सूर्य विशाखा गृहमे रहैछ । राधाक संग हुनक अदृश्य रूपेँ मिलन होइछ । तारा आ सूर्य एक संग देखल नहि जा सकैछ। प्राचीन विद्वानलोकनिक मत छलन्हि जे सूर्य-रश्मिये सँ तारा आ चन्द्रमा मे ज्योति जागृत होइछ । गौ (रश्मि), गोप (कृष्ण) आ गोपी (राधा) ऋग्वेदसँ उद्धृत मंत्रसँ ई पूर्ण स्पष्ट अछि । कृष्ण (सूर्य) केँ रास (ग्रह-नक्षत्रक गति) केर मध्य आ गोपी (तारा समूह) केँ मंडलाकार सजाओल जाइछ । अमावस्याक चन्द्रमा सँ सूर्यक अदृश्य मिलन होइछ । चन्द्रमा यद्यपि पुलिंग अछि तथापि ओकरा चन्द्रावली नाम दय एक विशेष गोपीक कल्पना कयल गेल, जिनका सँ कृष्णक गुप्त मिलन बंगला वैष्णवकाव्यमे बेस देखाओल गेल अछि ।[30]

ज्योतिष-सिद्धान्तक प्रत्यक्ष प्रभाव राधाकृष्ण लीलाक मूलमे नहि रहल हो, मुदा प्रस्तुत व्याख्या राधाकृष्ण लीलाक सफल आ पूर्ण रूपक निश्चय प्रस्तुत करैछ ।

राधाकृष्णक उल्लेख सर्वप्रथम हाल वा सातवाहन द्वारा रचित गाथा सप्तशती मे भेल छथि ।[31] गाथासप्तशतीक अवतरण सँ ई स्पष्ट होइछ जे राधाकृष्णक प्रेमकथा लोकजीवनमे, ईसापूर्व दोसरेशती मे प्रवेश कऽ चुकल छल । लोकभाषा जन-जीवनक यथार्थ दर्पण थिक । लोक-भाषा (प्राकृत) मे अयबा सँ पूर्व राधा, लोकगीतसभमे शृंगारक आलंबन बनि गेल छलीह । गाथा-सप्तशतीमे आभीरसभक उन्मुक्त प्रेम, उच्छलित यौवन आ निर्मल प्राकृतिक सौन्दर्यक जगमगाइत चित्र अछि । सप्तशती मे राधा एक यौवन-उन्मत्त परकीया नायिकाक रूपमे अवतरित भेल अछि । स्व. डा. भंडारकरक कहब छनि जे राधा आभीरसभक आराध्या छलीह । भंडारकर आभीरसभकेँ सीरियासँ आयल मानैत छथि, जकर खण्डन अनेक विद्वानलोकनि द्वारा कयल गेल अछि । महाभारतमे आभीर आ यदुवंशीक घनिष्ट सम्बन्ध कहल गेल अछि । तखन आभीर विदेशी कोना भेलाह ?[32]

सप्तशतीक पश्चात् राधाक नाम पंचतंत्रमे सेहो प्राप्त होइछ (300 सँ 500 ईस्वी धरि एकर रचनाकाल मानल जाइछ) । भागवतक रचनाक पूर्व

राधा जन-गीत सभमे तथा लोक कथासभमे प्रतिष्ठित भऽ चुकल छलीह । शक्ति दर्शनक प्रभाव सेहो समस्त भारत पर तीव्रता सँ पड़ल छल । एकरहिसँ प्रभावित भऽ विष्णु आ श्री (लक्ष्मी)क उपासना प्रारम्भ भेल । एही लक्ष्मी केँ निम्बाकाचार्य एक सय सखीसभक संग सुशोभित वृषभानुजा राधा कहि, कृष्णक पत्नी कहने छथि । शाक्तधर्मक अनैतिक प्रभाव केँ रोकबाक लेल, संभवत: गाथा-सप्तशती एवं आभीरक उपास्य देवी राधाकेँ कृष्णक संग जोड़ि देल गेल हो ।

दक्षिणक आलवर (समय ईसाक पांचम सँ नवम शती धरि) लोकनि अपन गीतसभमे विष्णुकेँ नायक आ अपनाकेँ नायिका रूपमे चित्रित कयने छथि । एहि गीतसभमे विष्णुक अवतार कृष्णक सेहो उल्लेख अछि । गोपी-कृष्णक प्रेमलीला सेहो एहिमे वर्णित अछि । कृष्णक प्रियतमा प्रधान गोपीक उल्लेख सेहो एहि गीतसभमे भेल अछि। एहि कृष्ण-प्रेयसीक नाम नाधिन्नाइ देल गेल अछि । ई एक फूलक नाम थिक, जकरा लक्ष्मीक अवतार मानल गेल अछि । आलवर भक्तलोकनिक एहि गीतसभसँ सेहो राधाकेँ कृष्णसँ संयुक्त करबा मे प्रेरणा भेटल अछि ।

देवगिरि आ पहाड़पुरक मंदिरसभक अवशेषक उत्खननमे जे युगल-मूर्तिसभ प्राप्त भेल अछि, पुरातत्ववेत्तालोकनि ओकरा राधाकृष्णक मूर्ति बतौलन्हि अछि । वृन्दावनक अन्य दृश्य सेहो मंदिरमे अंकित अछि। एहि मंदिरसभक निर्माण-काल पांचमसँ आठम ईस्वी धरि मानल जाइछ । आनन्दवर्धनक ध्वन्यालोक तथा कुन्तकक वक्रोक्ति मे राधा-विरहक एक श्लोक उद्धृत कयल गेल अछि । धनंजयक 'दशरूपक'क चारिम परिच्छेदमे, भोजक 'सरस्वती-कंठाभरण' आ क्षेमेन्द्रक 'दशावचरित' मे सेहो राधाक उल्लेख भेटैछ । त्रिविक्रम भट्टक 'नलचम्पू' मे राधाकृष्णक उल्लेख कयल गेल अछि । माघ कृत 'शिशुपालवध' क टीकाकार वल्लभदेव एक श्लोक उद्धृत कयने छथि, जाहिमे राधाकृष्णक परकीय प्रेमक वर्णन अछि । 'कवीन्द्र वचन सम्मुच्चय' मे राधाकृष्ण सम्बन्धी चारि श्लोक देल गेल अछि ।

धाराकेर अमोघवर्षक शिलालेखमे राधाकेँ कृष्णक प्रिया कहल गेल अछि । मालवेश भुंज क 974 तथा 979 ताम्रपत्रसभमे राधा सम्बन्धी मंगलाचरणक श्लोकसभ अछि ।[33] शारदातनयक 'भावप्रकाश' मे रमा-राधा नाटकक उल्लेख अछि । कर्णपूरक 'अलंकार कौस्तुभ' मे राधा सम्बन्धी 'कंदर्प मंजरी' नाटिकाक उल्लेख भेल अछि । लीला शुक विल्वमंगल ठाकुर

द्वारा लिखित 'कृष्ण कर्णामृत' आ श्रीधर दास द्वारा संकलित 'सदुक्तिकर्णामृत' मे कृष्णलीलाक अनेक कविता संग्रहीत अछि । बारहम शताब्दीक पूर्वार्द्धमे कृष्ण सम्बन्धी दास्य, वात्सल्य आ प्रेमक अनेक कविता रचल गेल छल । 'कृष्ण कर्णामृत' भक्ति काव्य पर बेस अपन प्रभाव जमौने छल । राधाक प्रेमरूप एहि पोथी द्वारा बेस स्पष्टभावेँ व्यंजित भेल अछि । ई सभ रचना आठमसँ बारहम शताब्दी धरिक अछि। एहिसँ ई स्पष्ट होइछ जे राधाक स्वरूप 400 वर्षमे बहुत-किछु संगठित आ निर्मित भऽ चुकल छल ।

लोक-गीत, संस्कृत साहित्य, धर्म-भावना आ दार्शनिक चिंतनमे राधाक जे स्वरूप छिड़िआयल छल, जयदेव ओकरा एक जीवन्त व्यक्तित्व एवं प्राणवन्त आकार प्रदान कयलनि ।[34] 'गीतगोविन्द' सैह एहन प्रथम रचना अछि, जाहिमे राधा अपन परमोज्ज्वल सम्पूर्ण यौवन, अनुपम माधुर्य आ सशक्त विलास-आकांक्षाक संग उपस्थित भेल छथि । एहिसँ पूर्व हम राधाकेँ एतबा पूर्णरूपेँ नहि पबैत छी । राधा कौखन मानिनी, कौखन वासकसज्जा, कौखन विप्रलब्धा, कखनो खण्डिता, कखनो अभिसारिकाक रूपमे प्रस्फुटित भऽ उठैत छथि ।[35] राधा भक्ति आ श्रृंगारक उल्लसित प्रतीक छथि । 'गीतगोविन्द'क राधाक विलास-आकुल, काम-कातर, विरह-विदग्ध, मिलनोत्कंठित रूप गौड़देशीय भक्त लोकनिक आदर्श बनल ।[36] जयदेवक राधा, चण्डीदासक राधा बनलीह । बंगालक भावुक धरतीकेँ राधाक ई रूप, माधुर्य भावक भक्ति-रससँ अभिसिंचित कऽ देलक । परकीया राधाक आकुल-उत्कंठित रूप बंगभूमिकेँ विशेष रुचिकर लगलैक । चम्पाकली जकाँ मदगंधमे सानल राधा वन-कुंजमे कृष्णकेँ तकैत छथि । जखन हुनका ज्ञात होइत छनि जे हुनक इष्ट वृन्दाविपिनमे अन्य ब्रजरमणीसभक संग विहार कऽ रहल छथिन्ह, तँ हुनक वेदनाक सीमा नहि रहैछ । हुनक यौवन-सौन्दर्य कोन काजक, जखन ओ प्रियतमकेँ नहि प्राप्त होन्हि ।[37] अन्तमे राधा आ कृष्णक मिलन होइछ । राधाक आकांक्षाक आपूर्ति होइछ । ओ कृष्णक सुषमा-सौन्दर्यक उपभोग करैछ ।

राधाक स्वरूपक दोसर पक्ष थिक दार्शनिक । सर्वप्रथम निम्बार्काचार्य राधाकेँ दार्शनिक पक्ष प्रदान कयलनि । निम्बार्क-सम्प्रदायमे कृष्णकेँ ब्रह्मस्वरूप मानल गेल अछि । हुनका रमापति, श्रीपति, रमा-मानस-हंस कहि सम्बोधित कयल गेलनि अछि । श्रीकृष्णकसंग राधाक उपासनाकेँ सेहो अनिवार्य मानल गेल अछि । वृन्दावनमे श्रीकृष्ण अनेक गोपीसंग बिहार करैत छथि, परंच

राधाक स्थान सर्वोपरि अछि । निम्बार्काचार्य रचित 'दशश्लोकी' मे राधाक श्रेष्ठता पूर्णरूपेण स्थापित कयल गेल अछि ।[38]

राधा भगवान कृष्णक आह्लादिनी शक्ति छथि । सत्, चित आ आनन्द स्वरूप परब्रह्मक ह्लादिनी शक्तिये हुनक विशेषता । सत्, चित (सत्ता आ चैतन्य) तँ जीवनमे सेहो पाओल जाइछ, ब्रह्मक विशेषता हुनक आनन्दमय रूप अछि । राधा ओही आनन्दमयताकेँ आकार प्रदान करयवाली ह्लादिनी शक्ति छथि । यैह कारण अछि जे श्रीराधा, अन्य गोपींसँ श्रेष्ठ मानल जाइत छथि ।[39]

विष्णु स्वामीक शुद्धाद्वैतवादी रससम्प्रदायमे राधाकृष्णक दार्शनिक प्रतिष्ठा कयल गेल अछि । कृष्णक शक्तिकेँ अनन्त आ अचिन्त्य मानल गेल अछि । ओ ऐश्वर्य आ माधुर्य दुनूक आलम्बन छथि - आश्रय छथि । हुनक ऐश्वर्यक रूप-अधिष्ठात्री छथि रमा, लक्ष्मी आ भू। हुनक प्रेमक अधिष्ठात्री छथि, गोपीलोकनि आ राधा । प्रेम आ माधुर्यक अधिष्ठात्री शक्ति राधा आ अन्य ह्लादिनी शक्ति (गोपी) सँ परिवेष्ठित ब्रजबिहारी कृष्णे निम्बार्क मतावलम्बीक उपास्यदेव छथि । स्वयं निम्बार्काचार्य राधाकृष्णक युगल मूर्तिक उपासनाक प्रचार कयलनि, भगवानक माधुर्य आ प्रेमशक्ति-स्वरूपा राधाक उपासना पर विशेष जोर देलनि । राधा सकल कामनाकेँ पूर्ण कयनिहारि छथि ।

ब्रह्मवैवर्तपुराणमे राधाक सम्पूर्ण स्वरूपक प्रतिष्ठा भेल अछि । शाक्तधर्ममे जे स्वरूप शक्ति-शिवक अछि, ओएह एहिमे राधा-कृष्णक । एकर मूल सांख्य शास्त्रक पुरुष प्रकृतिवाद मे अछि । ब्रह्मवैवर्तपुराणक श्रीकृष्णक जन्मखण्डक पन्द्रहम अध्यायमे राधाकेँ श्रीकृष्ण अपन अर्द्धांश आ मूलप्रकृति कहने छथि । बिनु माटिक घैल आ बिनु सोनक कुंडल नहि बनाओल जा सकैछ, तहिना श्रीकृष्ण राधाक बिना सृष्टि नहि कऽ सकैछ ।[40] विष्णुपुराणमे सेहो श्री आ विष्णुकेँ एकहि मानल गेल अछि ।[41] नारदपंचरात्र मे राधाक व्युत्पत्ति देल गेल अछि - 'रा' सँ भक्त बनब आ 'धा' सँ ईश्वरक चरणमे धावित होयब । ब्रह्मवैवर्तकार एही प्रकारक दूटा व्युत्पत्ति देने छथि । रास सँ 'रा' तथा 'धा' धातु सँ 'धो'केँ लऽ कय 'राधा' नाम सिद्ध कयल गेल अछि। दोसर व्युत्पत्तिमे 'रा'केँ दानवाचक तथा 'धा' केँ मोक्षवाचक कहल गेल अछि। स्पष्ट अछि जे ब्रह्मवैवर्तपुराणपर नारदपंचरात्रक प्रभाव अछि । दुनू राधामे निर्वाण, भक्ति, आनन्दक समस्त शक्तिक स्थापना कऽ देल गेल अछि ।[42]

ब्रह्मवैवर्तपुराणमे राधाकृष्ण-लीलाक अत्यंत विस्तृत वर्णन अछि। एहि पर निम्बार्काचार्य एवं जयदेवक प्रभाव सेहो स्पष्टतः देखल जा सकैछ। राधाक स्वरूपकेँ बुझबाक लेल आर तथ्य प्रस्तुत कयल जा रहल अछि ।

ब्रह्मवैवर्तपुराणक तेरहम अध्यायमे 105 सँ 109 श्लोकधरि राधा शब्दक व्याख्यामे कहल गेल अछि जे 'रकार' सँ कोटि जन्मक पाप, 'आकार' सँ मृत्यु, 'धकार' सँ आयुक्षय तथा 'आकार' सँ भवबन्धन नष्ट होइछ । दोसर व्याख्या-'रकार'सँ अविचल दास्य भक्ति, 'धकार'सँ सान्निध्य-सहवास आ 'आकार' सँ तेज प्राप्त होइछ । ईहो कहल गेल अछि जे 'रा' शब्दक उच्चारणक संगहि भगवान श्रीकृष्ण काम-भावसँ आकुल भऽ जाइत छथि आ 'धा' कहैत देरी राधाक पाछाँ दौड़य लगैत छथि । राधा शब्द कृष्णमे कमोत्तेजनाकेँ जगौनिहार अछि।[43] अतएव भक्त केँ पहिने राधाक उपासना करबाक चाही, पश्चात् कृष्णक ।

ब्रह्मवैवर्तपुराणक अध्याय 15 मे 122 सँ लऽ कय 128 श्लोकधरि राधा-कृष्णक विवाहक वर्णन अछि। मांडीरवनमे सुसज्जित मंडपक तरमे ब्रह्मा पूर्ण शास्त्रीय रीतिसँ राधा-कृष्णक विवाह करौने छथि । हवन, यज्ञ, पाणिग्रहण, अग्निक सात प्रदक्षिणा, देवमंत्र-पाठ, परस्पर गरदनि मे पारिजातक माला पहिरायब, ई सभ अनुष्ठान एहिमे कयल गेल अछि । एना कऽ कय पुराणकार हुनका परकीया प्रेमक लांछन सँ बचौलन्हि अछि ।

अध्याय सोलहमक 85 सँ 87 श्लोकधरि ब्रह्मवैवर्तकार हुनका रासेश्वरी, रम्यरासोल्लासरसोत्सुक, रासमंडल-मध्यस्त, रासाधिष्ठातृ, देवता, रासेश्वर:स्थलस्थ, रासिका, रसिकप्रिया, रमा, रमणोत्सुका, शरदराजीव राजिप्रभाभंजनलोचनाक नामसभ सँ स्मरण कयने छथि । ई सभ नाम श्रृंगारभावनाक वाचक थिक । एकर यैह अर्थ जे ब्रह्मवैवर्तकारकेँ राधाक यैह रूप विशेषप्रिय छलनि, जकरा गीतगोविन्दकार तथा विद्यापति स्वीकृत कयने छलाह ।

अध्याय 28, 52 एवं 53 मे रासलीलाक उद्दाम श्रृंगारिक एवं कामशास्त्र प्रेरित वर्णन अछि ।

एवं प्रकारेँ दार्शनिकरूपमे राधा, विकास प्राप्त कय, कृष्ण (ब्रह्म)क शक्तिरूप बनि गेलीह । कृष्ण हुनका बिना सृष्टि नहि कऽ सकैछ । ओ श्रीकृष्णक पूरक छथि, हुनका बिनु श्रीकृष्ण असमर्थ वा शक्तिहीन शिव सदृश छथि । विरहिणी राधा केँ प्रबोधैत उद्धव हुनका कृष्णेक रूपमे स्वीकार कयने छथि ।[44] शाक्तधर्म मे जाहिप्रकारेँ शक्ति साधक छथि आ

शिव साधन, किंवा शक्ति प्रधान कारण छथि, शिव उपादान कारण, सैह रूप राधाक बनि गेल । राधा साध्य बनली आ कृष्ण साधन । कृष्णक अस्तित्व सेहो राधाक कारणेँ मानल जाय लागल । जाहि प्रकारेँ ब्रह्म अपन शक्तिक द्वारा आकार प्राप्त करैत छथि, ओही प्रकारेँ कृष्ण सेहो राधाक द्वारा लीला पुरुषोत्तम बनैत छथि । स्वामी हितहरवंशक राधावल्लभ सम्प्रदाय आ स्वामी हरिदासक सम्प्रदायमे राधाक उपासनाकेँ प्रमुख स्थान देल गेल अछि । अनेक भारतीय भाषाक कवि सेहो राधाक एही रूपकेँ प्रश्रय देलनि ।[45]

विद्यापतिक काव्यमे गीतगोविन्दक राधाक रूप आर स्पष्ट भऽ कय आयल । ओहिमे सौन्दर्य-सुषमा, यौवन-माधुरी, काम-कातरता, विरहमूर्च्छना, समर्पण-निष्ठा आर अधिक मूर्त्तमान भऽ उठल । जयदेवक राधामे विरह करुणा बनि कऽ विश्वव्यापी प्रभाव उत्पन्न नहि करैछ, हुनक राधाक विरह, काम-पीड़ेक एक रूप अछि । विद्यापतिक राधाक विरह, मानव-हृदयकेँ मसोड़ि दैत अछि । राधा अतीत-विलासक एक गंध-लहरि बनि, मोनक श्यामलशून्य मे समाइत प्रतीत होइछ । सूर आदि भक्तमे राधाक ओ रूप स्वीकृत भेल, जाहिमे गीतगोविन्द, विद्यापति, निम्बार्क, गौड़ीय साधक, चैतन्य, जीवगोस्वामी, चंडीदास आदि सभक राधाक समन्वय अछि । रीतिकालीन हिन्दी कविलोकनि द्वारा चित्रित एवं स्वीकृत राधा, ने भक्तक प्रेम-प्रतिमा, माधुर्य रसक आलम्बन, ह्लादिनी शक्ति राधा छथि, ने ब्रह्मक पूरक शक्ति राधा, ओ मात्र वासनाक पियास सँ पागल, तृप्ति-उत्कंठित साधारण नायिका छथि ।

निष्कर्षतः राधाक स्वरूप विकासक अध्ययन कयला सन्ता ई कहल जा सकैछ जे राधाक स्वरूप भक्ति-क्षेत्रमे माधुर्यरूपकेँ लऽ कय चलल आ चिन्तन-ब्रह्मक परा-प्रकृतिक रूपमे । गौड़ीय साधकलोकनि एकर दुनू रूपकेँ अपना रचनामेँ मूर्तिमान कयलनि । महाप्रभु चैतन्यक शिष्य जीवगोस्वामी माधुर्यरसक विवेचन शास्त्रीय पद्धति पर कय, राधा- कृष्णक श्रृंगारलीलासभक आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत कयलनि ।

निष्कर्ष :

(1) 'राधा' शब्दक सर्वप्रथम प्रयोग कोन समयमे भेल से कहब कठिन, मुदा 6म शताब्दी सँ 17 म शताब्दी धरिक सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय अनुपम नारी-रत्न राधाक छाया व्यतिरेकक सौन्दर्य-सृष्टि सँ अनुप्राणित भेल अछि । राधा शब्द मे सम्पूर्ण मध्यकालीन साहित्य व्यंजित अछि ।

(2) श्रीमद्भागवत मे राधाक उल्लेख नहि अछि, मुदा कालान्तरमे 'आराधित' शब्द सँ राधा नामक कल्पना कऽ लेल गेल ।

(3) विष्णुपुराणमे कृष्ण-प्रियतमा कोनो गोपीक उल्लेख अछि, मुदा राधाक नहि । पद्मपुराण, मत्स्यपुराण, वायुपुराण तथा नारदपंचपात्रमे राधाक उल्लेख भेल अछि ।

(4) ऋग्वेद मे राधा शब्दक उल्लेख भेल अछि, मुदा एहि ठाम राधाक अर्थ गोपी विशेष नहि, धन, अन्न आ नक्षत्र अछि । अथर्ववेदमे राधा आ विशाखा एक नक्षत्रक दू नाम आयल अछि, जकरा आगाँ चलिकय दू पृथक् नक्षत्र मानि लेल गेल अछि ।

(5) राधाकृष्णक उल्लेख सर्वप्रथम हाल वा सातवाहनक गाथा सप्तशतीमे भेल अछि । गाथा सप्तशतीक अवतारणा सँ ई स्पष्ट होइछ जे राधाकृष्णक प्रेमकथा लोकजीवनमे ईसापूर्व दोसरे शतीमे प्रवेश कऽ चुकल छल ।

(6) डा. भंडारकरक अनुसारेँ राधा आभीरसभक आराध्या छलीह । पंचतंत्र (300 सँ 400 ई.) मे सेहो राधा नामक उल्लेख भेल अछि । पश्चात् शाक्तधर्मक अनैतिक प्रभावकेँ रोकबाक लेल, संभवतः गाथासप्तशती एवं आभीरक उपास्यदेवी राधाकेँ कृष्णक संग जोड़ि देल गेल हो ।

(7) आलवर भक्तलोकनिक गीतसभ सँ सेहो राधाकेँ कृष्णक संग संयुक्त करबामे प्रेरणा भेटल अछि । देविगिरि तथा पहाड़पुरक मंदिर सभक अवशेषक उत्खननमे जे युगलमूर्तिसभ प्राप्त भेल अछि, पुरातत्ववेत्तालोकनिक अनुसारेँ ओ राधाकृष्णक मूर्ति थीक ।

(8) आनन्दवर्द्धनक ध्वन्यालोक, कुन्तकक वक्रोक्ति, भोजक सरस्वती-कंठाभरण आ क्षेमेन्द्रक दशावचरित मे सेहो राधाक उल्लेख भेल अछि । एकर अतिरिक्त त्रिविक्रम भट्टक नलचम्पू मे, माघक शिशुपालवध मे तथा कवीन्द्र वचन समुच्चय मे सेहो राधाकृष्णक उल्लेख भेल अछि ।

(9) धाराक अमोघवर्षक शिला-लेखमे, मालवेश भुंजक ताम्रपत्रसभमे, शारदातनयक भावप्रकाश मे, कर्णपूरक अलंकार कौस्तुभ मे, विल्वमंगल ठाकुरक कृष्ण कर्णामृत मे, श्रीधरदासक सदुक्तिकर्णामृत मे, (800-1200 शती) राधाक उल्लेख कयल गेल अछि ।

(10) लोकगीत, संस्कृत साहित्य, धर्मभावना आ दार्शनिक चिंतनमे राधाक जे स्वरूप छिड़िआयल छल, जयदेव ओकरा एक जीवन्त व्यक्तित्व

आ प्राणवंत आकार प्रदान कयलनि । गीतगोविन्दे एहन प्रथम रचना अछि जाहिमे राधा अपन परमोज्ज्वल सम्पूर्ण यौवन, अनुपम माधुर्य आ सशक्त विलास-आकांक्षाक संग चित्रित भेल छथि ।

(11) जयदेवक राधा आगाँ आबि कऽ चंडीदासक राधा बनि जाइछ जे माधुर्य भावक भक्ति-रस सँ निमज्जित छथि ।

(12) राधाक दार्शनिक स्वरूपक प्रतिष्ठा निम्बार्काचार्य द्वारा कयल जाइछ जाहिठाम राधा भगवानक ह्लादिनी शक्तिक रूपमे प्रतिष्ठा प्राप्त करैछ। राधा कृष्णक पूरक छथि, हुनका बिनु कृष्ण असमर्थ वा शक्तिहीन शिव सदृश बनि गेल छथि ।

(13) एवंविधि गीतगोविन्दक राधा बंगभूमिकें अपन माधुर्य-भक्ति सँ अभिसिंचित करैत विद्यापतिक राधामे पर्यवसित भऽ जाइत छथि । विद्यापतिक राधामे सौन्दर्य-सुषमा, यौवन-माधुरी, काम-कातुरता, विरह-मूर्च्छना आ समर्पणनिष्ठा आर अधिक मूर्त्तमान भऽ उठैछ ।

(14) अन्तमे राधाक स्वरूप-विकासक अध्ययन कयला सन्ता ई कहल जा सकैछ जे राधाक स्वरूप भक्ति-क्षेत्रमे माधुर्य कें लऽ कय चलल आ चिन्तनक्षेत्रमे ब्रह्मक परा-प्रकृतिक रूप मे । गौड़ीय साधकलोकनि एकर दुनू रूपकें अपना रचनामे मूर्त्तमान कयलनि । महाप्रभु चैतन्यक शिष्य जीवगोस्वामी माधुर्य रसक विवेचन शास्त्रीय पद्धति पर कय, राधा-कृष्णक श्रृंगार लीलासभक आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत कयलनि ।

विद्यापतिक कृष्ण :

कृष्णक पालन-पोषण नन्द-यशोदाक ओहिठाम भेल छलनि । तें ओ नन्दनन्दन छथि । एकबेर यशोदा हुनका ऊखड़िसँ बान्हि देने छलथिन्ह । ओकरा बीचमे फँसाकऽ ओ यमलार्जुन वृक्षकें उखाड़ि कय खसा देने छलाह। उदर (पेट) पर दाम (रस्सा) बान्हि देबाक कारणें ओ दामोदर नामसँ अभिहित कयल जाय लगलाह । कृष्ण चानूर, मधु, मुर आदि राक्षससभक संहार कयने छलाह । तें चानूरमर्दन, मधुसूदन आ मुरारीनाम सँ ओ विख्यात भेलाह । ओ गाय चरबैत छलाह । गोप वा अहीर (गुआर) हुनक जाति छलनि । ओ विष्णुक अवतार छलाह, जाहि विष्णु कें चारि हाथ छनि । राधा-प्रेमी होयबाक कारणें राधारमण सेहो हुनक नाम छल । माधव, कान्ह, श्यामू, श्याम, हरि, मोहन, गोविन्द, वनमाली आदि सब हुनकहि विविध नाम अछि । बासुरी बजायब आ राधाकें रिझायब हुनक विशेष

अनुरंजनकारी लीला थिक । पूर्णिमाक रातिमे ओ रास रचाकय गोपी आ राधाकें रसमग्न कऽ दैत छलाह । कंसक वध करबाक लेल ओ मथुरा गमन कयलनि आ ओतय कुब्जानामक कंसक दासीकें अपन प्रेमिका बनाकऽ राखि लेलनि । उद्धव हुनक संदेश लय गोकुल अयलाह आ गोपीलोकनि हुनका सँ कृष्णकें गोकुल पठा देबाक अनुनय-विनय कयलन्हि ।

विद्यापति श्रीकृष्णक पुराण-प्रतिष्ठित-स्वरूपसँ परिचित छलाह, तें उपर्युक्त कृष्ण-स्वरूपक रूप-रेखा विद्यापतिक पदमे भेटैत अछि, मुदा विद्यापति कृष्णक एहि रूपक गान नहि कयलनि । विविध पदसभमे एहि नामसँ हुनका सम्बोधित कयल गेल अछि, किंवा विविध प्रसंगमे एहिनामसभक मात्र उल्लेख कयल गेल अछि । विद्यापतिमे ने तँ वात्सल्यक आलम्बन यशोदानन्दे कें प्राप्त होइछ, ने हुनक दुष्ट-दमन वा अवतारीएरूप कतहुँ देखबामे अबैछ । विद्यापति हुनक राधारमण आ गोपीवल्लभ रूपें कें प्रश्रय देलन्हि अछि । माधुर्यभावक भक्तिक आलम्बन (श्रृंगारी) कृष्ण, जे गौड़ीय भक्ति आ ब्रजभक्तिमे सेहो ब्रह्मक सर्वोत्तम एवं सम्पूर्ण लीलारूप घोषित भेल छलाह, विद्यापतिक रचनामे स्वीकृत भेलाह । एहू रूपमे हुनक विभिन्न नाम मात्र एहि लेल आयल अछि जे पाठककें स्मरण रहनि जेश्रृंगारक आलम्बन, कृष्णक अवतार छथि । विद्यापतिक पदसभमे माधव 175, कान्ह 137, हरि 106, मुरारी 45 आ दामोदर, वनमाली, मधुसूदन, गोप 5-6 बेर तथा अन्य नाम 1-2 बेर आयल अछि । माधव-नामक प्रयोग-बाहुल्यसँ ई ज्ञात होइछ जे विद्यापतिकें कृष्णक मधु-सम्पन्न रूपें सर्वाधिक प्रिय छलनि । मधुर रसे भक्तिक क्षेत्रमे माधुर्य भावक संज्ञा प्राप्त करैछ । यैह माधुर्यभाव (राधा-गोपी भेलापर कान्ताभाव) भक्तिक सर्वोच्च दशा थिक ।

नन्दनन्दनक उल्लेख दू-तीन पदमे भेल अछि, मुदा वात्सल्यरूपमे नहि, रूपाश्रय एवं मिलनोत्कंठित प्रेमीक रूपमे । पथपर चल अबैत श्यामसुन्दरक मदिर नयन सँ गोपीक नयन मिलैछ आ ओकरा पर हुनक रूपक एहन जादू चलैछ जे ओ कृष्णक दर्शनक लेल इन्द्र सँ शत-शत आँखिक कामना करय लगैत छथि आ गरुड़ सँ पाँखि माँगि क्षणभरिमे उड़ि कऽ ओतय जयबाक लेल तथा हजारो आँखिसँ कृष्णक मादक रूप-रसक पान करबाक लेल व्याकुल भऽ जाइछ –

सुरपति पाए लोचन मागओं गरुड़ मागओं पांखी ।
नन्देरि नन्दन मैं देखि आवओं मन मनोरथ राखी ।

नन्दनन्दन जमुना-तट पर धीरे-धीरे बाँसुरी बजा रहल छथि। गोधूलिक समय, अयनिहार-गेनिहार लोकसभसँ पूछैत छथिन्ह जे राधा नहि आयल ? राधाक लेल हुनक आतुरता द्रष्टव्य थिक :

नन्दक नन्दन कदम्बक तरुतर, धिरे-धिरे मुरलि बजाब ।
समय संकेत निकेतन बइसल, बेरि-बेरि बोल पठाब ।
सामरि, तोरा लागि अनुखन बिकल मुरारि ।
जमुना तिर उपवन उदबेगल, फिर फिर ततहि निहारि ।
गोरस बेचय अबइत जाइत, जनि जनि पुछ बनमारि ।[46]

एतय 'बेरि-बेरि बोल पठाब', 'फिरि फिरि ततहि निहारि' तथा 'जनि जनि पुछ बनमारि' सदृश वाक्य-खण्डमे एकदिस कृष्णक अनन्त सौन्दर्य-सुषमा-पूर्ण रूपक अंकन भेल अछि, तँ दोसरदिस कृष्णक वास्तविक प्रेम एवं राधाक आह्लादकारी रूपक प्रतिष्ठा सेहो भेल अछि। एतय विद्यापति, जयदेवक कृष्णकेर अनुरूपेँ अपन कृष्णक चित्र अंकित कयलन्हि अछि :

नामसमेतं कृतसंकेतं वादयते मृदुवेणुम् ।
बहुमनुते तनु ते तनुसंगतपवनचलितमपि रेणुम् ॥
पतति पतत्रे विचलति पत्रे शंकित भवदुपयानम् ।
रचयति शयनं सचकितनयनं पश्यति तव पन्थानम् ॥

कंसक वध करबाक हेतु कृष्ण गोकुलसँ मथुरा गेलाह। राधा आ गोपीलोकनिकेँ ओ बिसारि देलन्हि। विरहमे गोपीलोकनि कृष्ण आ कुब्जाकेँ उपालम्भ दैछ – केहन ओ निष्ठुर छथि, हमरालोकनिक प्रेमकेँ ओ बिसरि गेलाह आ ओतय जाय कुब्जा सँ प्रेम करय लगलाह। हम कहबे की करू, हम तँ ग्लानिमे डूबल जाइत छी –

कत कहबो कत सुमिरब रे, हम गरिए गरानि ।
आनक धन सो धनवन्ती रे, कुबजा भल नारि ॥

निश्चत ई लाजसँ मरि जयबाक बात थिक; रूपक राशि गोपीगण आ अनन्त सुषमा, यौवन आ प्रेमक प्रतिमा राधाकेँ छाड़ि कृष्ण एक कुबड़ीक प्रेममे आसक्त। एतय हिनकालोकनिक सौन्दर्य एवं प्रेमक व्यर्थता तथा एक पैघ व्यक्तिक पतनक भाव व्यंजित अछि, तेँ ग्लानि सँ मरल जा रहल छथि गोपीसभ। कएकटा प्रसंगमे तँ कृष्णकेँ गोपगँवार कहि कऽ उपालम्भ देल गेल अछि। एक-दू पदमे उद्धवक प्रसंग सेहो आयल अछि, जतय गोपीसभ कृष्णक प्रति विरह-निवेदन तथा कृष्ण-मिलनक याचना कयने छथि।[47]

चानुरमर्दन विशेषणक रूपमे प्रयोग कय, राधा कृष्णक शारीरिक बल एवं अपन कोमलता-मंजुलताक अभिव्यंजना कयने छथि।[48]

श्रृंगार किंवा माधुर्य-भावक आलम्बनरूप कृष्णकेँ विद्यापतिक काव्यमे चित्रण भेल अछि। भागवतक रसियाकृष्ण, आर साकार रूपमे विद्यापतिक गीतमे आयल छथि। बाट मे अबैत-जाइत राधाकेँ देखि कृष्ण विमोहित भऽ जाइत छथि। राधा रूपक राशि, यौवनक प्रतीक तथा रतिक उद्दीपक छथि। राधाकेँ प्राप्त करबाक लेल हुनक प्राण आकुल-व्याकुल भऽ छटपटाय लगैछ –

पथ-गति पेखनु मो राधा ।
तखनुक भाव परान परिपीड़लि रहल कुमुदनिधि साधा ।

कृष्ण तँ राधाक प्रथम दर्शने पर आसक्त भऽ उठैत छथि –

पथ-गहि नयन मिलल राधाकान, दुहु मनसिज पूरल संधान ।
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर, समय न बूझ अचतुर चोर ।

मार्गमे अकस्मात राधाकेँ देखि कृष्णक हृदयमे कामक संचार भऽ उठैछ। रूपलावण्यक अप्रतिम प्रतिमा राधाक रूपक एक झलक कृष्णक हृदयकेँ बर्छी जकाँ सालय लगैछ। जेना मेघमालामे तड़ितलता एक पलक लेल लौकि कऽ अदृश्य भऽ जाइछ, तहिना राधा कृष्णक प्रथम-दर्शनसँ उत्पन्न ई प्रेम कृष्णकेँ अपन प्रेयसी सँ भेंट करबाक लेल आतुर बना दैछ। कृष्णक आँखि ओम्हरे दौड़ैत रहैछ, जेम्हर सँ हुनक प्रेयसी जाइत छथिन –

ततहि धावल दुइ लोचन रे, जतहि गेल बर नारि ।
आसा लुबुधल न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ।

कृष्णक रूपासक्ति एवं आतुरताक एतय मार्मिक चित्र अंकित अछि। प्रथम मिलनक अवसरपर कृष्णक हृदयक उथल-पुथल, औत्सुक्य, रूपासक्ति आ प्रेमविह्वलताक मार्मिक चित्र पदावली मे दृष्टिगोचर होइछ। नायिकाराधाक मादक स्वरूपकेँ देखि, कृष्णक हृदय प्रेमरंग सँ रंजित भऽ जाइछ –

ससन-परस खसु अम्बर रे, देखल धनि देह ।
नव जलधर तर संचर रे, जनि बिजुरी-रेह ।
आज देखल धनि जाइत रे, मोहि उपजल रंग ।
कनकलता जनि संचर रे, महि निर अबलंब ।[49]

कृष्ण स्वयं सेहो एतेक ने आकर्षक, मनमोहक एवं यौवन-सम्पन्न छथि जे गोकुलक जे कोनो ग्रामवधू हुनका देखैत अछि, हुनका पाछाँ बताहि भऽ

जाइछ। देखैत मात्र पंचशरक प्रहार ओहि मुग्धाक उपर होइछ । आब ने ओकरा दूध-दही बेचबाक सुधि रहैछ, ने गुरुजनक लाज-मर्यादाक ठेकान-

बिके गेलिहुँ माधुर मधुरिपु भेटल साथे ।
तहि खने पंचसर लागल विधिबसे के करू बाधे ।
कतने जतने घर अएलहु के कर दधि दूध काजे ।
मनहु न मधुरिपु विसरिअ तेजल गुरुजन लाजे ।[50]

मोनमे गुदगुदी, हृदयमे मधुर धड़कन आ सम्पूर्ण शरीरमे आनन्द-कंपन एवं रोमांच-सिहरन होमय लगैछ, जकरा गोपी कोनो प्रकारेँ नहि दबा पबैछ । ओ अपन सखीसँ कहबो करैछ, आ ओकरा नुकयबोक प्रयास करैछ -

नील कलेबर पीत-वसनधर, चन्दन तिलक धवला ।
सामर मेघ सौदामिनी मंडित तथिहि उदित ससिकला ।
हरि हरि अनतए जनु परचार ।
सपने मोए देखल नन्दकुमार ।[51]

गोपी मोहित आ कृष्ण भेला रसिया । अवसर भेटल नहि कि छेड़छाड़ प्रारंभ भऽ गेल । गोपीक संग हास-परिहास करैत कृष्ण एक विलासी नायकक रूपमे हमरासभक समक्ष उपस्थित होइछ -

कुंज-भवन सँय निकसलिरे, रोकल गिरधारी ।
एकहि नगर बसु माधव हे, जनि कर बटमारी ।
छोडु कन्हैया मोर आँचर रे, फाटत नब सारी ।
अपजस होएत जगत भरि रे, जनि करिय उघारी ।[52]

विद्यापतिक कृष्ण कुंजभवन सँ निकलि राधाकेँ बाटमे रोकि लैछ आ हुनक साड़ी झीकय लगैछ । कृष्णक वासनापूर्ण ई चेष्टा हुनक कामुक रूपहिकेँ प्रकाशित करैछ । जयदेवक कामकेलिप्रवीण विलासी कृष्णे जकाँ विद्यापतिक रसिकशिरोमणि कृष्ण सेहो युवतीगणक संग विहार करैत देखल जाइछ -

जयदेव - ललितलवंगलतापरिशीलन कोमलमलय समीरे ।
मधुकरनिकरकरम्बित कोकिल कूजित कुंजकुटीरे।
विहरति हरिरिह सरसवसन्ते ।
नृत्यति युवतिजनेन समं सखि विरहिजनस्य दुरन्ते ।

विद्यापति- नबल रसाल-मुकुल-मधु-मातल नव कोकिल कुल गाय ।
नवयुवतीगन चित उमताअई, नव रस कानन धाय ।
नव जुबराज नवल वर नागरि मीलए नब-नब भाँति ।[53]

कौखन, ब्रजबाला स्वयं सेहो कृष्णक सान्निध्यक आनन्दकेर लाभ संवरण नहि कऽ पबैछ । हाथ धऽ हुनका सँ जमुनाक ओहि पार पहुँचा देबाक अनुरोध करैछ, हुनका हृदयक हार देबाक प्रलोभन सेहो दैछ ।[54] हृदयपर झुलैत हार दिस जखन ओसभ संकेत करैत रहल हेथिन्ह, तँ हुनक अमर्दित, अनाघ्रात कलिकासदृश उजोर दिस कृष्णक ध्यान अवश्य आकृष्ट भऽ जाइत रहल हेतनि । एहि नोक-झोंकक प्रसंगमे कृष्णक रसलोलुप स्वरूप आर पुष्ट भऽ जाइछ । एक दिस तँ कृष्ण गोपीवल्लभ छथि, प्रत्येक युवती हुनकापर आसक्त अछि, आ प्रत्येक सुन्दरी पर ओ छथि आसक्त । दोसर दिस राधाक प्रति हुनक प्रेम आर गहनतम भेल जाइछ । दूती दुनूक हृदयमे एक-दोसराक रूप-यौवनक प्रति आकर्षणक सृष्टि कऽ दैछ । एक-दोसराक प्रति तँ दुनू गोटय आसक्त छलाहे, तेँ दुनूक प्रेम अटूट कड़ी बनि कऽ रहि जाइछ । कृष्ण राधाक लेल मिलनोत्कंठित छथि, आ राधाकृष्णकेँ प्राप्त करबाक लेल काम-विह्वला ।

कृष्ण एक स्वच्छन्द प्रेमी छथि । लोक-लाज एवं समाजक मर्यादाक हुनका कोनो परबाहि नहि । राधाक प्रति हुनका हृदयमे उद्दाम वासना एवं तीव्र आसक्ति छनि । कौखन ओ राधाकेँ देखि कऽ चल जाइछ, तँ कौखन राधाक नाम लऽ कय वंशी बजाबय लगैछ । कखनो ओ राधाक लगमे जाकऽ हास-परिहास करय लगैछ, तँ कखनो हुनका आलिंगन-पाश मे बान्हिकऽ आनन्दविभोर भऽ उठैछ -

एकदिन हेरि हेरि हँसि-हँसि जाय, अरु दिन नाम धए मुरली बजाय।
आजु अति नियरे करल परिहास, न जानिए गोकुल ककर विलास।
साजनि ओ नागर सामराज, मूल बिनु परधन माँग बेयाज ।
अपन निहारि निहरि तन मोर, देइ आलिंगन भए बिभोर ।[55]

विद्यापतिक कृष्ण कामकेलि विशारद छथि । विद्यापति राधाक संग कृष्णक जे प्रेमक्रीड़ाक मादक चित्र पदावलीमे अंकित कयने छथि, ओहिमे कृष्णक यैह रूप प्रतिच्छायित भेल अछि । यथा -

निबि-बंधन हरि किए कर दूर, ऐहो पए तोहर मनोरथ पूर ।
हेरने कओन सुख न बुझ विचारि, बड़ तुहु ढीठ बुझल बनमारि।
हमर सपथ जौं हेरह मुरारि, लहु लहु तब हम पारब गारि ।[56]

विद्यापतिक कृष्ण एवं ब्रजबालालोकनि स्वच्छन्द विहंग जकाँ प्रेम करैछ; ने हुनका लोकलाजकेँ पिंजरे बन्दी बना सकैछ, ने हुनका मर्यादाक श्रृंखले बान्हि सकैछ । ओ शून्याकाशमे प्रेमक गीत गबैत शून्यकेँ अपन सुधासंगीत

सँ आपूरित कऽ दैछ । जनिका ने पापक आशंके छूबि सकैछ, ने कलुषक कैंचिये काटि सकैछ । नव आम्र-मंजरित गाछीमे कोकिल बताहि जकाँ टेरि रहल अछि आ ब्रजवालासभक संग नवलकिशोर कृष्ण राधा-प्रेम-विभोर भय, हुनक गरमे बांहि धय विहार कऽ रहल छथि -

नव वृन्दावन नव नव तरुगन नव नव विकसित फूल ।
नवल वसंत नवल मलयानिल मातल नव अलि-कूल ।
विहरत नवलकिशोर ।
कालिन्दी-पुलिन-कुंजवन सोभन नव-नव प्रेम-विभोर ।
नवल रसाल-मुकुल-मधु-मातल नव कोकिल कुल गाय।
नवजुवतीगन चित उमताअइ नव रस कानन धाय ।[57]

विद्यापतिक कृष्ण कन्दुक-क्रीड़ा करैछ तँ समस्त ब्रजवाला अपन-अपन पति केँ छाड़ि कृष्ण-कृष्ण शोर पाड़ैत दौड़ि अबैछ ।[58] जमुना-तटक रसक्रीड़ा, राधा-कृष्णक कुंज-विहार, गोपी-कृष्णक प्रेमलीला सभ भागवत आ ब्रह्मवैवर्तपुराण द्वारा प्रतिष्ठित भक्तिक उद्दीपक रूप थिक । कृष्णक एहि स्वरूपमे ने अश्लीलताक गंध अछि, ने अपावन आसक्ति किंवा वासनाजन्य इन्द्रिय-सुखक झलक । वैष्णव भक्तिसाहित्यमे कृष्णक एही रूपकेँ परब्रह्मक लीला पुरुषोत्तम रूप कहल गेल अछि ।

विद्यापतिक पदमे जे कृष्णक दोसर रूप प्राप्त होइछ, ओ अछि आसक्ति आ वासना जन्य-भोगवादी । कृष्ण जखन राधाक यौवनसँ गदरायल अंगसभक अपन चारू हाथ सँ मर्दन कयलो सन्ता तृप्ति नहि प्राप्त कऽ पबैछ, तँ पाँचम हाथक कामना करैछ -

निबिबंध फोएक नहिं अवकास ।
पानि पचम के बाढ़लि आस ।

राधा-कृष्णक रति-सम्बन्धक वर्णन करैत विद्यापति ब्रह्मवैवर्तकार जकाँ राधा-कृष्णक विवाहो करा दैत छथि । सुगंधित निकुंज-वेदी बनाओल जाइछ, हृदयक एकरूपताक गठबन्धन होइछ । कामदेव कन्यादान करैछ-

सुरभि निकुंज वेदि भलि भेलि ।
जनम गेठि दुहु मानस मेलि ।
कामदेव करू कनेआदान ।
विधि मधुपरक अधर मधुपान ।

भल भेल राधे भेल निरवाह ।
पानि गहन विधि बोध विआह ।[59]

एवं प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे विद्यापति राधाकृष्णक जे प्रेमचित्रण कयने छथि ओ अत्यन्त असंयत एवं उद्दाम वर्णन अछि । यैह कारण जे विद्यापतिक कृष्णक कामासक्तिक विरुद्ध आक्षेप एवं तीव्र आलोचना कएल जाइत रहल अछि । मुदा सत्यता तँ ई अछि जे एहि सँ हिन्दीक भक्तिकालीन कवि जायसी एवं सूरदास सेहो अपनाकेँ नहि बचा पौलन्हि अछि । जायसी सदृश संत एवं सूर सदृश भक्त सेहो अवसर पाओला उत्तर एहिप्रकारक वर्णन करबामे कनियोँ कोताहि नहि कयलनि अछि ।

प्रथम मिलने धरि लाज एवं संकोच रहैछ, तकर बाद तँ प्रायः लोक वासनाक प्रवाहमे विवश भऽ बहय लगैछ । वासनाक ने कोनो ओर छैक ने छोर । यैह स्थिति कृष्णोक देखल जाइछ । कृष्णकेँ गोपीबल्लभ कहल जाइछ । हुनक संग काम-सम्बन्धक वर्णन सेहो कयल गेल अछि। एकरा भक्ति साहित्यमे लीला पुरुषोत्तम परब्रह्मक अनुरंजनी लीला कहल गेल अछि। भोगवादी कृष्ण गोपीसभक संग सेहो रमण करैत छथि । भोगवादी कृष्णक दू रूप देखल जाइछ - एक तँ राधाक संग हुनक स्वकीया प्रेमक रूप आ दोसर अन्य गोपीसभक संग हुनक परकीया प्रेमक रूप ।

रसिकशिरोमणि कृष्ण चुपचाप निद्रामग्न राधा लग पहुँचैत छथि आ हुनक हार केँ पकड़ि लैत छथि । राधाक हार टूटि जाइछ, आधा हार कृष्णक हाथमे रहि जाइछ आ आधा राधाक गरमे । कृष्ण राधाक मुँहकेँ चुम्बित कऽ हुनक कुच पर हाथ रखैत, हुनक अधरामृतक पान करैत छथि । एहि प्रकारेँ ओ अपन काम-कला-प्रवीणताक परिचय दैछ -

हरि धरि हार चऔकि परु राधा, आध माधव कर गिम रहु आधा।
कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी, हरि हँसि रहल बदन-विधु हेरी।
मधुरिम हास गुपुत नहि भेला, तखने सुमुखि-मुख चुंबन देला।
कर धरू कुच, आकुल भेलि नारि, निरखि अधर-मधु पिबए मुरारि।[60]

कृष्णक हृदय उद्दाम कामवासना स्वरूप संभोगक पश्चात् शांत होयबाक अपेक्षा आर बेसी प्रबल रूप धारण कऽ लैछ । जेना भूख लगलापर स्वल्प भोजन कयला-उत्तर तृप्तिक स्थानपर मोन आर बेसी तड़पय लगैछ, तहिना एक बेरक स्वल्प रति-क्रीड़ा सँ कृष्णक हृदयक अतृप्त लालसा आर उद्दीप्त भऽ जाइछ -

कह कविशेखर गरूअ भूखपर करू जल थोर अहार ।
अइसन दुहुमन तलफइ पुन-पुन उपजल अधिक विकार।

मानिनी नायिकाकेँ मनयबाक हेतु कृष्ण अपना लेल स्वयं दण्डक विधान करैत छथि तथा अपन विदग्धता एवं रसिकताक परिचय दैत छथि –

ए धनि माननि करह संजात ।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि, ताक उपर धर हात ।
तोहे छोड़ि जदि हम परसब कोय, तुअ हार-नागिनि काटब मोय।
हमर वचन जदि नहि परतीत, बूझि करह साति जे होय उचीत।
भुज-पास बाँध जघन तर सारि, पयोधर-पाथर हिय देह मारि ।
उरकारा बाँधि राख दिन-राति, विद्यापति कह उचित इह साति।[61]

कृष्ण कहैत छथि जे 'जँ हमरा दण्ड देबाक हो तँ हमरा अपन भुजपाशमे बान्हिकऽ अपन जाँघक नीचा दबाकऽ राखू। अपन स्तनरूपी भारी पाथरकेँ हमरा छाती पर राखि, अपन हृदयरूपी कारामे बन्दी बनाउ।' अपन अपराधक लेल एहन दण्ड-विधान कृष्णकेँ एक चतुर, रसिक नायकक रूपमे प्रस्तुत करैत अछि ।

काव्य-शास्त्रमे प्रतिपादित नायकक विभिन्न भेदमेसँ विद्यापतिक कृष्ण धीरललित, धृष्ट एवं शठ नायकक रूपमे हमरासभक समक्ष उपस्थित होइत छथि । निश्चिन्त कोमल स्वभाव, नृत्य-गीतमे अनुरक्त, हास-परिहास-कुशल, कामिनी-प्रेमी आ कामिनी-प्रिय पुरुषकेँ धीरललित नायक कहल जाइछ । विद्यापतिक कृष्णमे धीरललित नायकक सभगुणक सन्निवेश भेल अछि । धीरललित नायकक रूपमे वेणुवादक, रासक्रीड़ा- निरत, गोपीवल्लभ कृष्णक अनेक चित्र पदावलीमे अंकित अछि। धृष्ट एवं शठ नायकक रूपमे विद्यापति कृष्णक चित्रण कतिपय पदसभमे कयलनि अछि । पर-स्त्रीगणक संग रमण कयनिहार कृष्ण बेस चातुर्य्यक संग अपन अपराधकेँ बुझबैत धृष्ट एवं शठनायकक रूप धारण करैत छथि ।

विद्यापति कृष्णकेँ अत्यधिक कामी, वासनाविकल, रूपासक्त, संभोगलोलुप-प्रेमीक रूपमे अंकित कयने छथि । सामाजिक शील, शालीनता एवं लोक-मर्यादाक उपेक्षा कय, कृष्ण अपन प्रेयसीक संग संभोग-सुख उपभोगक लेल विकल देखना जाइछ । कामातुर कृष्ण सासुक लगमे सुतल नायिकाक पीठक आलिंगन करैछ । अपन मुँहघुमाकऽ हुनक अधरामृतक पान करैछ तथा बिनु कोनो प्रकारक शब्द कयने हुनक पयोधरकेँ हाथसँ

पकड़ि लैछ । एतबहिमे सासु जागि जाइछ आ छलिया कृष्ण चुपचाप ओतय सँ पड़ा जाइछ –

"सासु सुतल छलि कोर अगोर, ताहि अति ढीठ पीठ रहु चोर ।
कत कर आखर कहब बुझाई, आजुक चातुरि कहल कि जाई।
नहि कर आरति ए अबुझ नाह, अब नहि होयत वचन निरबाह।
पीठ आलिंगन कत सुख पाव, पानिक पियास दूध किए जाब।
कत मुख मोरि अधर रस लेल, कत निसबद कए कुच कर देल।"

एवं प्रकारेँ कृष्णक प्रेम वासना-जन्य अछि, ओ बाह्य सौन्दर्य एवं यौवन पर आधारित अछि । एहि प्रेममे एकनिष्ठता, स्थिरता एवं गंभीरता नहि। नायिकाक सौन्दर्य एवं यौवनकेँ तिरोहित भेलाक बाद कृष्ण हुनक उपेक्षा करय लगैछ । कृष्णक एहि मनोवृत्तिक परिचय निम्न शब्दमे व्यक्त भेल अछि –

जौबन रूप अछल दिन चारि, से देखि आदर कएल मुरारि ।
अबै भेल झाल कुसुम रस छूछ, बारि बिहुन सर केओ नहि पूछ।

कृष्णक तेसर रूप अछि विद्यापतिक आराध्यक । शिव एवं शक्ति सँ उच्च स्थान ओ कृष्णकेँ प्रदान कयने छथि ।

विद्यापति नायक-नायिकाक शृंगारक अनेक स्थानपर अश्लील वर्णन कयने छथि । कृष्णक सेहोशृंगारी रूपे कें ओ अपना काव्यमे विशेष महत्व प्रदान कयने छथि । यैह कारण जे वृद्धावस्थामे हुनका अनुताप भेल होनि आ 'माधव हम परिनाम-निरासा' कहि ओ अपना 'केँ श्रीकृष्णक चरणमे आत्मसमर्पित कयने होथि ।[62] हुनका तँ अन्त मे माधवकेँ छोड़ि पाप-समुद्र केँ पार करबाक कोनो आन उपायो नहि सुझैत छनि ।[63] ओ जन्म-जन्म धरि अपन इष्टदेव श्रीकृष्णक गुण-गान करैत रहथि, तकरहु कामना व्यक्त करैत छथि –

माधव, बहुत मिनती करि तोय ।
देइ तुलसी तिल देह समर्पिलु दया जनि छाड़बि मोय ।
किए मानुस पसु पाखिये जनमिये अथवा कीट पतंग ।
करम विपाक गतागत पुनपुन मन रहु तुअ परसंग ।[64]

निष्कर्ष

(1) कृष्ण दामोदर, चानूमर्दन, मधुसूदन, मुरारी, राधारमण, माधव, कान्ह, श्याम, हरि, मोहन, गोविन्द, वनमाली आदि विभिन्न नाम सँ अभिहित कयल जाइत छथि । विद्यापतिक गीतसभमे माधव 175, हरि 106,

मुरारी 45, दामोदर, वनमाली, गोप 5-6 बेर तथा अन्य नाम 1-2 बेर आयल अछि। जेँ कि माधव नामक प्रयोग कयक बेर भेल अछि, तेँ ई प्रतीत होइछ जे विद्यापतिकेँ कृष्णक मधु-सम्पन्न रूपे सर्वाधिक प्रिय छलन्हि ।

(2) विद्यापतिक पदसभमे पुराणकालीन कृष्ण-स्वरूपक रूपरेखाक प्रभाव देखना जाइछ, मुदा विद्यापतिक कृष्ण एहिप्रकारक गान नहि कयने छथि । विभिन्न नाम प्रसंगवश आयल अछि । विद्यापतिमे ने तँ वात्सल्यक आलम्बन यशोदानन्दने प्राप्त होइछ, ने हुनक दुष्ट-दमन वा अवतारी रूपे कतहु देखबामे अबैत अछि । ओ राधारमण आ गोपीवल्लभ रूपहि केँ प्रश्रय देने छथि ।

(3) नन्द नन्दकक उल्लेख दु-तीन पदमे भेल अछि, मुदा वात्सल्यक रूपमे नहि, रूपाश्रय एवं मिलनोत्कंठित प्रेमीक रूपहिमे ।

(4) विद्यापतिक काव्यमे श्रृंगार किंवा माधुर्य भावक आलम्बनरूप कृष्णहिक चित्रण कयल गेल अछि । भागवतक रसिया कृष्ण विद्यापतिक पदमे आर साकार भऽ उठलाह अछि ।

(5) प्रथम मिलनक अवसर पर कृष्णक हृदयक उथल-पुथल, औत्सुक्य, रूपासक्ति आ प्रेम-विह्वलताक मार्मिक चित्रण पदावली मे भेल अछि ।

(6) विद्यापतिक कृष्ण-सौन्दर्य अत्याकर्षक, मनमोहक एवं यौवनसम्पन्न अछि, तेँ गोकुलक जे कोनो ग्रामवधू हुनका देखैछ, ओ हुनका पाछाँ बताहि भऽ जाइछ ।

(7) गोपीसभक संग हास-विलास करबाकाल कृष्णक विलासी रूपकेँ प्रतिष्ठित कयल गेल अछि । एकरा संगहि विद्यापतिक कतिपय पदमे कृष्णकेँ रसिक-शिरोमणि रूपमे प्रस्तुत कयल गेल अछि ।

(8) विद्यापतिक कृष्ण काम-केलि-विशारद छथि । राधाक संग कृष्णक जे प्रेम-क्रीड़ाक मादक चित्र पदावलीमे प्रस्तुत कयल गेल अछि, ओहिमे कृष्णक यैह रूप प्रतिच्छायित भेल अछि ।

(9) विद्यापतिक कृष्ण स्वच्छन्द प्रेमी छथि जनिका ने लोक-लाजक पिंजरे बन्दी बना सकैछ, ने मर्यादाक श्रृंखले बान्हि सकैछ; जनिका ने पापक अंशे छूबि सकैछ, ने कालुष्यक कैँचिये काटि सकैछ । वस्तुतः ओ नील गगनक उन्मुक्त विहग सदृश उन्मुक्त प्रेमी छथि।

(10) विद्यापतिक राधाकृष्णक कुंज-विहार, गोपी-कृष्णक प्रेम-लीला भागवत आ ब्रह्मवैवर्त पुराण द्वारा प्रतिष्ठित भक्तिक उद्दीपक रूप थीक ।

(11) विद्यापतिक पदमे कृष्णक जे दोसर रूप प्राप्त होइछ, ओ थीक आसक्ति आ वासनाजन्य भोगवादी रूप ।

(12) विद्यापतिक भोगवादी कृष्णक दू गोट रूप प्राप्त होइछ - एक राधाक संग स्वकीया प्रेमक रूप, दोसर अन्य गोपीसभक संग हुनक परकीया प्रेम-रूप ।

(13) काव्य-शास्त्रीय पद्धति पर विद्यापतिक कृष्ण धीरललित, धृष्ट एवं शठ नायकक रूपमे प्रतिष्ठित भेल छथि । ओ अत्यधिक कामी, वासनाविकल, रूपासक्त एवं संभोगलोलुप प्रेमीक रूपमे चित्रित छथि ।

(14) विद्यापतिक कृष्णक अन्य रूप अछि - आराध्यक रूप। शिव एवं शक्ति सँ उच्च स्थान ओ कृष्णकेँ देने छथि ।

विद्यापतिक राधा

श्रीराधारानी कृष्णक ह्लादिनी शक्ति छथि । ओ अपन पीयूष-मधुर शरद पूर्णिमाक ज्योत्स्ना - शीतल मुस्कान सँ भक्तसभकेँ आत्म-विस्मृत कय, भावलोकमे लऽ जाइत छथि । ओ कान्ता-भावक दुग्ध-धवल प्रतिमा छथि । शाक्तमतमे जे स्वरूप शक्ति आ शिवक थिक, राधाकृष्णक वैह स्वरूप ब्रह्मवैवर्तपुराण एवं कृष्णभक्तिक प्रतिष्ठापक - रूपगोस्वामी, विष्णु स्वामी, निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य आदिमे विकसित भेल अछि । विद्यापतिक राधा कृष्णक चरम आह्लाद-प्रदायिनी शक्ति छथि । परंच राधामे देवत्वक प्रतिष्ठा विद्यापति नहि कयलनि अछि । विद्यापतिमे मूलतः राधाकेँ ओ अवतारी रूप नहि प्राप्त भेलन्हि, जे कृष्णकेँ भेटल छनि; तथापि राधा कोनो एक साधारण नारी नहि छथि ।

पदावलीक राधा अपार सुषमाक अखण्ड एवं विपुल राशि छथि। हुनक अपार सौन्दर्यमे अलौकिकताक किंचित संकेत प्राप्त होमय लगैछ । 'भनहि विद्यापति, अपरूब मूरति राधा रूप अपार' कहि कय विद्यापति, ओही रूप दिस संकेत कयने छथि । नहि जानि एहि रूपकेँ गढ़बामे विधाताकेँ कतबा यत्न करय पड़ल हेतनि । हुनक उरोज कनक-शंभुसदृश छनि आ ओहिपर लहराइत गजमुक्ताक माला सुरसरि-धारसदृश । एहि अपार रूप-राशिक अधिष्ठात्री राधाकेँ, प्रयागमे कयल गेल शत-शत यज्ञक पुण्यक भागी कृष्णहि भऽ सकैछ, एहि प्रकारक संकेत सेहो कवि द्वारा स्पष्ट रूपेँ देल गेल अछि ।[65]

अलौकिक लावण्यमयी आ अम्लान पारिजात कुसुम सदृश सुकुमार यौवनश्री-सम्पन्ना राधा जेम्हर-केम्हरो गोकुलक गलीमे बहार होइत छथि, ओम्हर रूप-सुषमा आ मुस्कान-इजोड़ियाक वर्षाकालीन सरिता प्रवाहित होमय लगैछ । जाहि अंग पर दृष्टि जाइछ, ओतहि थमकि जाइछ । संसारमे क्यो एहन कला पारखी आ सौन्दर्य समीक्षक नहि जे ओहि लोकातीत आ कल्पनातीत रूपक वर्णन कऽ सकथि । अत: कवि कमलवदनी श्रीराधाक ओहि अप्रतिम रूपक प्रशंसा बेरि-बेरि कऽ कय रहि जाइछ, जनिक प्रशंसा विश्वव्यापक अछि ।[66]

विद्यापति राधाक शारीरिक सौन्दर्यक सेहो वर्णन कयने छथि । हुनक यौवन-प्रफुल्लित मांसल अंगसभक कारणहि सँ कृष्णक हृदयमे रूपलिप्सा जाग्रत होइछ । राधाक पीनपयोधर, दूबर शरीर पर एहन लगैछ, जेना कनक लता पर मेरू पर्वत उगि गेल हो । हुनक रूप-यौवनकेँ देखि, दूती सेहो विस्मय-विमुग्ध भऽ जाइछ । ओ आश्चर्य-चकित भऽ राधाक जगमगाइत रूपकेँ देखबाक लेल श्रीकृष्ण सँ आग्रह करैछ ।

आराध्य किंवा श्रद्धाभाजनक श्रृंगार वा रूप-वर्णन करबामे रहस्यात्मक, प्रतीकात्मक किंवा कूटशैली परम्पराक कविलोकनि द्वारा निर्वाह कयल जाइत रहल अछि । राधाक रूप-वर्णन करैत विद्यापति सेहो कूट-पद्धतिक अनुसरण कयने छथि । मुदा एहि प्रकारक वर्णनमे कतहु अश्लीलताक संकेत नहि प्राप्त होइछ । एहि प्रकारक पदक वर्णन जे कयल गेल अछि ओहिमे एक प्रकारक लोकातीत भावहिक संकेत प्राप्त होइछ । एहि प्रकारक एक पदक अर्थ एहि प्रकारक अछि :-

माधव, हम अहाँक प्रेम ठीकेँ देखल । ओ पृथ्वीक राधा, बलिक बालक वाणासुरक कन्या उषाक पति अनिरूद्धक पिता कृष्ण (विष्णु) केर पत्नी लक्ष्मी सदृश रूपवती छथि । ओहि (लक्ष्मी) केर पिता समुद्रक बालक चन्द्रमा केर सदृश सुन्नर छथि । दिशा (दस) आ वेद (चारि) तथा ओहिमे ब्रह्मक आधा (10+4+2) मिलाकय अर्थात् सोलह श्रृंगार ओ कयने छथि । ओ अहाँक रमणी राधा, अहाँसँ प्रेमक याचना करैत छथि ।[67] हमरा विचारेँ राधाक लोकातीत रूपक वर्णन करहेक लेल संभवत: विद्यापति सामान्य जनातीत पद्धतिकेँ अपनौने छल होयताह ।

एहि सभ सम्भावनासभकेँ रहलो उत्तर ई स्पष्ट अछि जे राधा एक अद्वितीय रूप-यौवन-सौन्दर्य-सम्पन्न रमणी छथि । ओ हृदयक बेस भावुक

तथा मुग्धमति छथि । दूतीक मुँह सँ माधवक रूप-गुणक प्रशंसा सुनि, हुनकामे पूर्वानुरागक उदय होइत अछि । ओ माधव केँ प्राप्त करबाक लेल आकुल भऽ उठैछ । हुनक अकुलाहटि काम-पीड़ाक दशाधरि पहुँचि जाइछ ।[68] मुदा राधाक रूपमे सेहो एहन जादू अछि, हुनक सौन्दर्यमे एहन मादकता अछि जे कृष्ण सेहो हुनकालेल काम-प्रेरित पूर्वानुरागक दशा मे छटपटाय लगैत छथि ।

एम्हर राधाक दशा ई छनि जे क्यो सखी हुनक साँसकेँ देखैत छथिन जे कतहु प्राणान्त तँ नहि भऽ गेलनि, क्यो कमल-पत्र सँ होंकैत छथिन । क्यो हुनका होशमे अनबाक लेल कहैछ जे कृष्ण आबि गेलाह आ ओ कृष्ण-कृष्ण कहैत झट दऽ उठि बैसति छथि । दोसर दिश कृष्णक अवस्था आर शोचनीय । वैद्य सेहो निराश भऽ जबाब दऽ दैत छथिन ।[69] एहि प्रकारेँ दुनूक समान आकुलता तथा मिलनोत्कंठा देखि हिनका लोकनिक अलौकिक प्रेम-स्वरूपक सहजहि अनुमान कयल जा सकैछ ।

राधा निष्काम आत्मसमर्पणक प्रतिमूर्ति छथि । हुनक रोम-रोम कृष्ण केँ समर्पित छनि । ओ अपन जीवन, यौवन एवं बुद्धि-वैभव सभसँ कृष्णकेँ सुखप्रदान करय चाहैछ । जँ ओ कृष्णकेँ प्रसन्न नहि कऽ सकलीह, तँ हुनक जीवन व्यर्थ । मुग्धा एवं सहज बालिका राधा आब प्रेमक मूल्य केँ बूझय लगलीह अछि । आब ने हुनका लेल लोक-लाजे बाधक तत्व सिद्ध भऽ सकैछ, ने मान-पर्यादा सैह । ओ कृष्णक भऽ गेल छथि । कृष्णानुगामिनी राधा विध्न-बाधाकेँ दूर करैत कृष्ण लग पहुँचि जाइछ । आब ओ मुग्धा नहि, प्रेम-मार्गक साहसिक पथिक बनि जाइछ ।[70]

राधा अपन साधना, आत्मसमर्पण, रूपसुषमा, विनय-कातरता, तन-मोनक आकुलता व्याकुलता सँ कृष्णकेँ प्राप्त कऽ लैछ । दुनूक मिलन होइछ । दुनू मिलिकय एक भऽ जाइछ । ने मान रहैछ, ने मनुहारक आवश्यकते पड़ैछ । राधा-कृष्णक ई रति-रूप भक्तजनकेँ आध्यात्मिक आनन्द प्रदान करयवला अछि । एहि रति-स्वरूप पर राधाक सखी-बहिनपा तथा स्वयं विद्यापति आनन्द-विभोर भऽ जाइत छथि ।[71] एहि रूपमे आबिकऽ राधा मात्र गौड़ीय भक्तिक साधकेक नहि, अपितु ब्रजभक्त लोकनिक तथा कान्ता वा माधुर्य-भावक आलम्बन बनि जाइछ । एतय आबिकऽ ओ असाधारण नारी बनि जाइत छथि ।

ब्रह्मवैवर्त पुराणमे राधाकेँ रासेश्वरी कहल गेल अछि । विद्यापतिक राधा सेहो रास-प्रेरिका तथा रास-मध्यस्था छथि । जमुना-तट पर राधाक संग

कृष्ण रास रचबैत छथि । सैकड़ो ब्रज-बनिता ओहि रासमे सम्मिलित होइत छथि । एतय राधा, मानवी सँ कृष्णक ह्लादिनी शक्तिक रूपमे परिवर्तित भऽ जाइछ । ओ आनन्दक ज्योतिपिंड छथि आ अन्य गोपीलोकनि ओहि आनन्द-ज्योतिकेँ विकीर्ण करयवाली किरण-पुंज ।

सहसा राधाक जीवनमे परिवर्त्तन अबैछ । कृष्ण मथुरा-गमन करैत छथि । उल्लासक पारिजात-कलिका मुरझा जाइछ । यौवनक बसन्त-श्री असमय म्लान पड़ि जाइछ । हुनक संगीतपूर्ण, उन्माद-आवेष्ठित तथा जादूसँभरल रूपक अवसान अत्यन्त करुण, अश्रुप्लावित तथा हृदयविदारक कथाक रूप धारण कऽ लैछ । राधाक विरह-जर्जरित रूपहि राधाक सबसँ पैघ विजय छनि । विद्यापतिक सबसँ पैघ विजय छनि ।

विरह-वाणक प्रहारसँ राधाक सब अंग जर्जर भेल अछि । विरहावस्थाक वार्द्धक्यक कारणेँ राधा निरन्तर माधव-माधवक रटना लगाबय लगैत छथि । माधव-माधव रटैत-रटैत ओ बिसरि जाइछ जे ओ राधा छथि वा माधव । 'अनुखन् माधव-माधव सुमरित सुन्दरि भेलि मधाई ।' अपन अस्तित्व केँ बिसरि ओ माधव बनि जाइछ - 'ओ निज भाव सुभावहि बिसरल आपन गुन लुबधाई' ! उन्माद, तन्मयता, एकरूपता किंवा अद्वैत केर एहन चित्र अन्यत्र दुर्लभ अछि ।

एहि प्रकारेँ विद्यापतिक राधा मानवीय रूपमे गोकुल मे जन्म लैछ । ओ अवतार लऽ कऽ स्वर्ग सँ धरती पर नहि आएल छथि, प्रत्युत ओ धरतीसँ अवतारक रूप ग्रहण कय स्वर्गारोहण करैछ ।

एतावता विद्यापतिक राधाक विभिन्न स्वरूप, जकर उपर विश्लेषण कयल गेल अछि, ओहिमे विद्यापतिक सम्पूर्ण मानस-सौन्दर्यक घन-विग्रह निहित अछि, एहि मूर्तिक निर्माणमे कवि अपन सम्पूर्ण निजत्व, हृदयक सम्पूर्ण भाव-संसार केँ अर्पित कऽ देने छथि । हुनक राधा देवी, उपास्य किंवा इष्टदेव कृष्णक प्रेयसी रूपमे सम्मान्य नहि, मात्र एकटा काम-क्रीड़ा-विशारदा, विलासिनी, रूप-यौवन-सम्पन्न प्रतिमा छथि । हुनक सम्बन्ध कोनो मत, पथ, सम्प्रदाय किंवा संस्था सँ नहि । ओ तँ मात्र एक नारी छथि, सुन्दर, आकर्षक, प्रेमापेक्षी आ संयोगातुर ! हुनक प्रेम घोर मांसल, श्रृंगारिक एवं लौकिक अछि । एकर कारण स्पष्ट अछि । विद्यापति जयदेवक अनुसरण करैत राधाकेँ वैष्णव भक्त जकाँ श्रद्धाक दृष्टि सँ नहि देखि, एक विशुद्ध श्रृंगारी कविक रूपमे ग्रहण कयलनि । ओ जयदेवक गीतगोविन्द केँ आदर्श मानि, संस्कृत तथा प्राकृतक श्रृंगार-काव्य परम्परा सँ प्रभावित भऽ आ

जन-परंपरामे प्रचलित राधाकृष्णक प्रेम-कथाकेँ आधार मानि, राधाकेँ एक निश्चित रूप प्रदान कयलनि । जयदेव सँ प्रभावित भेलो सन्ता, कृष्ण-काव्यक आदि मैथिली कवि विद्यापति, जयदेवक राधाकेँ परिष्कृत कय नव वैज्ञानिकता प्रदान कयलनि । जतय 'जयदेवक राधा प्रारम्भहि सँ विलासवती, पूर्णयौवना एवं कन्दर्प-ज्वरसँ पीड़ित छथि, ओतय विद्यापतिक नायिका आरम्भमे किशोरी, पुनः प्रेममयी तरुणी तथा अन्तमे प्रौढ़ा-उपेक्षिता छथि। नारीक ई चित्रण अधिक पूर्ण, सर्वांगीण तथा यथार्थ[72] थिक ।

बालिकाक रूपमे राधाक चित्तक प्रस्फुटन कविक लेल आकर्षणक केन्द्र नहि । विद्यापतिक राधा सर्वप्रथम किशोरावस्था तथा तारुण्यमध्य द्वन्द्व मचबैत देखल जाइछ । ओ सर्वप्रथम राधाकेँ वयः सान्धिक एक एहन अवस्थामे चित्रित कयने छथि, जतय ओ यौवनक आकस्मिक आगमन पर कुतूहल-चालित भए अपन अंगक उभार देखैत आनन्द-विभोर भऽ जाइछ -

सैसव जौबन दुहु मिलि गेल । स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल ।
बचनक चातुरि लहु-लहु हास । धरनिये चाँद कएल परगास।
मुकुर लई अब करई सिंगार। सखि पूछइ कइसे सुरत-विहार।
निरजन उरज हेरए कत बेरि । हँसइ से अपन पयोधरि हेरि ।[73]

यौवनक बाल-सुलभ अल्हड़ चेष्टा अचानक रुकि जाइछ, हँसब, चलब, बाजब एवं साधारण व्यवहारमे सेहो भिन्नता आबि जाइछ -

प्रकट हास आब गोपित भेल । वरन प्रकट फिर उन्हके नेल ।
चरन चपलगति लोचन पाव । लोचन के धीरज पद तले जाव।
नव कवि सेखर की कहित पार । भिनभिन राज भिन्न वेवहार।

यौवनक ई प्रथम चरणनिक्षेप राधाक हृदयमे चित्रित भाव-भंगिमाक सृजन करैछ । राधाक शरीरक विभिन्न अंगसभमे यौवनजनित विकासक संग-संग हाव-भाव तथा चेष्टासभमे सेहो परिवर्तन आबय लगैछ -

खने-खने नयन कोन अनुसरई। खने खन बसन धूलि तनु भरई।
खने-खन दसन छटा छुट हास । खने खन अधर आगे गहु वास।
चँउकि चलए खने खन चलु मन्द । मनमथु-पाठ पहिलअनुवन्ध।
हृदय-मुकुल हेरि-हेरि थोर । खन आँचर दय खन होय भोर ।
बाला सैसव तारुन भेट । लखए न पारिय जेठ कनेठ ।[74]

क्षण-क्षण मे राधाक नेत्र चक्षु-कोरक अनुसरण करैछ । क्षण-क्षणमे ओकर अस्त-व्यस्त वस्त्र, गर्दामे लोटाय लगैछ आ ओकर शरीरकेँ गर्दा सँ भरि

दैछ । क्षण-क्षण ओकर मधुर हास सँ दंतावलि चमकय लगैछ आ लज्जावश ओ अपन आँचरकेँ ठोरतर दबा लैछ । कौखन ओ चौंकिकऽ जोर-जोर सँ चलय लगैछ, तँ कौखन ओकर चालि मन्द पड़ि जाइछ । कौखन ओ अपन कुचक विकासकेँ निहारय लगैछ, तँ कौखन लजा कऽ ओकरा आँचर सँ झाँपि लैछ । कौखन ओहिपर आँचर देब सेहो बिसरि जाइछ । एहन प्रतीत होइछ मानू राधा कामदेवक पाठशालामे अपन पहिल पाठ पढ़ब आरम्भ कऽ देने होथि ।

विद्यापति किशोरी राधाक बढ़ैत अंग, मांसल सुदृढ होइत शरीरक ध्यान सँ निरीक्षण करैछ आ अन्ततः मुँहक ज्योति, सुन्दर केश-पाश, मुग्धा हिरणी-सदृश नेत्र, स्वर्ण-कन्दुक सनक उरोज, क्षीण कटि, नयनाभिराम त्रिबली, पुष्ट नितम्ब, गोर दप-दप पिंडली, चरण-सरसिज आदिकेँ अपन ध्यानाकर्षणक केन्द्र बना लैत छथि । एहि अंगसभमे कतहु-ने-कतहु पंचशरक सेहो निवास थिक, तेँ नायक राधाक एक झलक मात्र सँ बेधित भऽ जाइछ । विद्यापति किशोरी राधाक एहि वयःसन्धिक दशाक सूचना माधव केँ दैत छथि –

कि कहब माधव, वयसक संधि । हेरइत मनसिज मन रहु बंधि।
तरअ ओ काम हृदय अनुपाम । रोपल घट ऊचल कए ठाम ।
सुनइत रस-कथा कापए चीत । जइसे कुरंगिनी सुनए संगीत ।
सैसब जौबन उपजल बाद । केओ न मानए जय अवसाद ।

राधाक चित्रणमे कवि अपन सम्पूर्ण काव्य-प्रतिभाकेँ उड़ेलि देने छथि। ओ वस्तुतः अपरूब, किंवा अपरूपक कवि छथि । राधाक भुवन मोहिनी छविक अत्यन्त हृदयग्राही मादक चित्र पदावलीमे अंकित कएल गेल अछि । राधाक एहि प्रभावशाली अद्भुत सौन्दर्यक उद्घाटनमे कविक विलक्षण कौशल दृष्टिगत होइछ –

देख-देख राधा रूप अपार ।
अपरूब केँ विहि आनि मिलाओल, खितितल लावनि-सार ।
अंगहि अंग अनंग मुरछायत हेरय पड़ए अधीर ।
मनमथ कोटि मथन करु जे जन से हेरि महि मधि गीर ।
कत कत लखिमी चरणतल नेओछय रंगिनि हेरि बिभोरि ।[75]

राधाक ई अद्भुत रूप पृथ्वी पर लावण्यक सार थिक । करोड़ो कामदेवक मथन करयवला व्यक्ति सेहो एहि रूपकेँ देखिकय मूर्छित भऽ पृथ्वीपर खसि पड़ैछ । रूपलावण्यक कतेको लक्ष्मी, राधाक चरणपर न्यौछावर कयल जा सकैछ ।

अनिंद्य सुन्दरी राधिकाक मौग्ध जखन पूर्ण यौवनकेँ प्राप्त करैछ, तँ हुनक अनुपम उल्लास कविकेँ आश्चर्य-चकित कऽ दैछ । हुनका प्रतीत होइछ मानू राधामे मृगक नयन, चन्द्रमा सन मुख, कमल सन मादकता, गज सन गति, स्वर्ण सदृश शरीर आ कोकिल सन मधुर वाणी, छओ एकसंग एकत्र भऽ गेल अछि । राधाक एहि पूर्ण विकसित यौवनकेँ देखि कविहृदय आश्चर्य सँ फूटि पड़ैछ –

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ, छओ अनुपम एक ठामा ।
हरिन इन्दु अरविन्द किरिन हेम, पिक बूझल अनुमानी ।
नयन बदन परिमल गति तन-रुचि, अओ अति सुललित वानी ।[76]

राधाक एहि विलक्षण सौन्दर्य एवं यौवनक वर्णन करबामे कविक वाणी असमर्थ प्रतीत होमय लगैछ ।

विद्यापतिक राधा सौन्दर्य आ लावण्यक प्रतिमा छथि । हुनक अंग-अंग सँ सौन्दर्यक राशि उमड़ि पड़ैत अछि । हुनक मुँह चन्द्रमाक सारभाग सँ निर्मित भेल अछि । हुनका देखि, कृष्णक आँखि चकोर जकाँ चकित भऽ जाइछ । अमृत सँ धोकय जखन राधा अपन आँचर सँ ओकरा पोछलनि तँ दशो दिशामे प्रकाश विकीर्ण भऽ गेल –

चाँद सार लय मुख घटना करु लोचन चकित चकोरे ।
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि दह दिसि भेल उंजोरे ।[77]

राधा रूपक पराकाष्ठा छथि । हुनक सब किछु मधुर । मधुरसक अधिष्ठात्री देवी सदृश भक्तलोकनिक चित्तकेँ उद्वेलित कयनिहार राधाक ई मूर्ति कृष्णक चित्तकेँ प्रेम-वैचित्र्यक नानाभावसँ मथित कऽ दैछ। राधा, कृष्ण केँ सोझा ठाढ़ देखि अपन मुँह फेरि लेलनि । हुनका हृदय मे ई सौन्दर्य-चित्र एना ने सन्हिया गेलनि जे –

मन मोर चंचल लोचन विकल भेल, ओनहि अनहित जाई ।
आड़ वदन कए मधुर हास दए, सुन्दरि रहु सिर नाई ।

यौवनागमनक संग-संग विद्यापतिक राधामे विलासप्रियताक समावेश होइछ । आब राधा मुग्धा नहि, मध्या भऽ गेल छथि । यौवनक प्रस्फुटित चिह्नसभकेँ देखि ओ चकिते नहि होइछ, प्रत्युत शारीरिक अंगसभक विकाससँ ओ अपन प्रवर्धित होइत रूपक प्रति सचेत सेहो भऽ जाइत छथि। शरीरक मधुर आवश्यकताकेँ बुझैत छथि । मध्या राधा कृष्ण पर जान-जी सँ आसक्त भऽ

जाइछ । आब तँ ओ स्वयं कृष्णलग जयबाक किंवा हुनका सँ बतियेबाक चेष्टा करैछ – 'करधरि करू मोहि पारे, देव मए हारे, कन्हैया' किन्तु मिलन सहज भऽ गेला पर तथा प्रायः संभोग प्राप्त कऽ लेला पर हुनक हृदयक सम्पूर्ण भय, त्रास, प्रकम्प, लज्जा आ उत्कण्ठाक भाव क्षीण होमय लगैछ । आब आलिंगनमे आयब, चुमब-चुम्बित होयब, कृष्ण द्वारा नीबी-बंधकें खोलब, कुच-स्पर्श आदिमे हुनका रस प्राप्त होमय लगैछ । आब एहि विषयमे ओ अपन सखी सँ किछु पुछबाक वा सिखबाक प्रयोजन नहि बुझैछ। ओ आब स्वयं कामदेवक शिष्य बनि गेल छथि आ निरन्तर मिलन-रसक कामना करैत छथि । कृष्ण-मिलनक भय आब समाप्त भऽ जाइछ, प्रगल्भ विलासिनी नायिकाक भाँति ओ बेरि-बेरि संयोगक कामना करैछ –

मदन-सिंहासन कएल अरोहन मोहन रसिक सुजान ।
भय-गढ़ तोड़ल अलप समाधल राखल सकल समान।
करु कविशेखर गरुअ मुखपर कए जत थोर अहार ।
अइसन दुनू तन तलफइ पुन-पुन उपजल अधिक विकार।

एतबहि नहि, आब ओ कृष्णक अभिसारक लेल नाना प्रकारक बहन्ना बनबैछ, गुरुजन-परिजन कें मूर्ख बनयबाक प्रयास करैछ । अपन पयरक पायल कें उपर सरका लैछ, शरीरकें कारीवस्त्र सँ नीक जकाँ झाँपि लैछ आ कृष्णमिलनक लेल घर सँ बहार भऽ जाइछ –

चरण नुपूर उपर सारि – मुख मेखल करे निबारि ।[78]
अम्बर सामर देह झपाई । चलहि तिमिरपथ समाई ।४।

गुरुजनक आँखिमे धूलि झोंकि तथा बन्धुजनकें छलक अन्हारमे राखि विद्यापतिक मध्या राधा प्रियक निकट जयबाक लेल उताहुल भऽ उठैछ–

गुरुजन नयन अन्धकरि आओल बांधव तिमिर बिसेस ।
तुअ उर फुरत बान कुच लोचन महुमंगल करि लेख ।

आब क्रमशः विद्यापतिक राधामे प्रौढ़ता आबय लगैछ । आब ओ मुग्धाक भाँति लज्जा नहि करैछ, ने मुग्धाक भाँति कृष्णकें सोझामे पाबिकऽ असंयमित भऽ उठैछ । हुनका आब ई नीक जकाँ ज्ञात भऽ गेल छनि जे रूप-यौवनक लोभी हुनक प्रिय, चारि दिन हुनक रस लऽ कय हुनका निष्प्रयोज्य बुझय लगथिन्ह–

जोबन रतन अछल दिन चारि । ताबे से आदरकएल मुरारि ।२।
आबे भेल झाल कुसुम रस छूछ। वारि बिहिन सर केओ नहि पूछ ।४।

आब राधा श्रीकृष्णक शरीर पर अन्य नारीक रति-चिह्न देखिकऽ तामसे भेर भऽ जाइछ आ मान कऽ बैसइत छथि । प्रमाद-वश नीक बेजाय सेहो कहैछ, परंच प्रौढ़ा भऽ गेलाक कारणें आन ककरो सँ कोना सम्बन्ध स्थापित करथि, तें हारिकऽ प्रियकेर अपराध कें क्षमा कऽ दैछ आ अपन मनोरथ पूर्ण करैछ –

कुंकुमे लओलह नख-खत गोइ । अधरक काजर आनलह धोइ।२।
तइयो न छपल कपट बुधि तोरि । लोचन अरुन बेकत भेल चोरि।४।
अपथहु सपथ बुझाबह राधे । कोन परि खेमओं सठ अपराधे ।[79]
भनइ विद्यापति पिय अपराध। उदघट न कर मनोरथ साध ।१४।

एहना स्थितिमे कविक राधा कहिया धरि नायक कें रिझा सकैछ । एक तँ प्रौढ़ा, दोसर परकीया, भला रस-लोलुप कृष्ण हुनका लग किएक रहथिन्ह ? ओ निश्चय कोनो आर युवतीक संग रस-रमण करय लागल हेताह, रात्रि-जारणक कारण सँ रक्तिम भेल हुनक नेत्र एहि रहस्यक उद्घाटन कऽ दैछ । खंडिता राधा ईर्ष्या, खौंझाहटि, क्षोभ आ कोप प्रकट करबाक अतिरिक्त आर कइये की सकैछ –

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद । रयनि उजागर गरुअ निबेद ।
ततहि जाह हरि न करह लाथ । रयनि गमओलह जइन्हिके साथ[80] **।४।**

अस्तु, स्पष्ट अछि जे विद्यापति-पदावली मे राधाक मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा आ खंडिता-सभ रूप विद्यमान अछि । एकर अतिरिक्त विद्यापति नायिका-भेदक आर कतिपय रूपक चित्रण कयने छथि ।

निष्कर्ष

(1) शाक्त मत मे जे स्वरूप शक्ति आ शिवक थीक, राधाकृष्णक ओएह स्वरूप ब्रह्मवैवर्तपुराण एवं कृष्णभक्तिक प्रतिष्ठापक- रूपगोस्वामी, विष्णु-स्वामी, निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य आदि मे विकसित भेल अछि । विद्यापतिक राधा कृष्णक चरम आह्लाद-प्रदायिनी शक्ति छथि, परंच राधामे देवत्वक प्रतिष्ठा विद्यापति नहि कय, हुनका मानवी रूपमे चित्रित कयने छथि।

(2) पदावलीक असाधारण नारी राधा अपार सुषमाक अखण्ड एवं अक्षय राशि छथि । 'अपरूव मूरति राधा रूप अपार' कहि विद्यापति राधाक सौन्दर्यक वर्णन कयने छथि ।

(3) संसारमे क्यो एहन कलापारखी आ सौन्दर्य-समीक्षक नहि जे विद्यापतिक ओहि लोकातीत, कल्पनातीत राधाक रूप-वर्णन करबामे समर्थ भऽ सकैछ ।

(4) विद्यापतिक राधाक रूप-सौन्दर्यकेँ देखि मात्र कृष्णे नहि, प्रत्युत दूती सेहो विस्मय-विमुग्ध भऽ जाइछ । राधाक अनिंद्य रूप-सौन्दर्यक वर्णनमे यद्यपि विद्यापति पारम्परिक कूट-पद्धति केँ अपनौने छथि, मुदा एहिमे कतहु अश्लीलताक संकेत नहि प्राप्त होइछ ।

(5) अद्वितीय रूप-यौवन-सम्पन्ना रमणी राधा हृदयक बेस भावुक आ मुग्धमति छथि । यैह कारण अछि जे ओ माधवकेँ प्राप्त करबाक लेल आकुल-व्याकुल भऽ उठैछ ।

(6) विद्यापतिक राधा निष्काम आत्मसमर्पणक प्रतिमूर्ति छथि । हुनक रोम-रोम कृष्णकेँ समर्पित अछि । हुनक जीवन, यौवन एवं बुद्धि-वैभव सभ कृष्णक सुखक लेल समर्पित अछि । तेँ अन्ततः ओ अपन साधना, आत्मसमर्पण, रूप-सुषमा, विनय, कातरता, तन-मनक आकुलता सँ कृष्णकेँ प्राप्त कऽ लैछ ।

(7) विद्यापतिक राधा रास-प्रेरिका तथा रास-मध्यस्था छथि । एहि रास-लीलामे राधा मानवी सँ कृष्णक अह्लादिनी शक्तिक रूपमे परिवर्तित भऽ जाइछ । राधा आनन्दक ज्योतिपिंड छथि तथा अन्य गोपीलोकनि ओहि आनन्द-ज्योतिकेँ विकीर्ण कयनिहारि किरणपुंज ।

(8) अपन अस्तित्व केँ बिसारि माधव बनि जयबाक क्षमता विद्यापतिक राधाकेँ प्राप्त छनि । 'अनुखन माधव-माधव सुमरित सुन्दरि भेलि मधाई' द्वारा जे उन्माद, तन्मयता, एकरूपता किंवा अद्वैतक चित्र प्राप्त होइछ, से अन्यत्र दुर्लभ अछि ।

(9) जतय जयदेवक राधा प्रारंभहि सँ विलासवती, पूर्ण यौवना एवं कंदर्प-ज्वर सँ पीड़ित छथि, ओतय विद्यापतिक राधा प्रारम्भ मे किशोरी, पुनः प्रेममयी तरुणी तथा अन्तमे प्रौढ़ा-उपेक्षिता छथि । विद्यापति द्वारा अंकित नारीक ई चित्र अधिक पूर्ण, सर्वांगीण तथा सत्यसापेक्ष थीक ।

(10) निष्कर्षत : यैह कहल जा सकैछ जे विद्यापतिक राधा देवी, उपास्य किंवा इष्टदेव कृष्णक प्रेयसी रूपमे सम्मान्य नहि, मात्र एक काम-क्रीड़ा-विशारदा, विलासिनी, रूप-यौवन-सम्पन्न प्रतिमेक रूपमे प्रतिष्ठित छथि ।

(11) विद्यापतिक राधाक सम्बन्ध कोनो मत, पथ, सम्प्रदाय किंवा संस्था सँ नहि, ओ तँ मात्र एक नारी छथि - सुन्दर, आकर्षक, प्रेमापेक्षी आ संयोगातुर ! हुनक प्रेम घोर मांसल, श्रृंगारिक एवं लौकिक अछि ।

●

संदर्भ

1. अध्वर्युगण, अहाँ स्तुतिप्रिय एवं महावीर इन्द्र तथा विष्णुक लेल पीबायोग्य सोमरस बनाउ । -हिन्दी ऋग्वेद, पृष्ठ 231
2. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : डा. रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-497
3. आत्मस्वरूप रूपोऽसो व्याप्त सर्वभवास्थितः । ब्रह्मपुराण : 81/42
4. भारतीय साधना और सूर साहित्य : मुंशीराम शर्मा : पृष्ठ - 161
5. भारतीय साधना और सूरसाहित्य : मुंशीराम शर्मा : पृष्ठ-191
6. ब्रह्मवैवर्त पुराण : अध्याय 6, श्लोक 183
7. हिन्दी ऋग्वेद पृष्ठ - 231
8. आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नर सूनवः ।
   ता यदस्यायनं प्रोक्तं तेन नारायणः स्मृतः । - मनुस्मृति, 1-10
9. नित्यैव सा जगन्माता विष्णोः श्री रनपायिनी ।
   - विष्णुपुराण : प्रथम अंश, अध्याय 8, श्लोक 15
10. वासुदेवार्जुनाभ्यां जुअं । 4/3/98
11. तद्वैतद घोर आंगिरसः कृष्णाय देवकी पुत्राय उक्त्वा उवाच । - छान्दोग्य उपनिषद: 3/17/6
12. अथ या तपो दान मार्यवमहिंसा सत्य वचनमिति ता अस्य दक्षिणाः ।
    - छान्दोग्य उपनिषद: 3/17/4
13. कृष्णो हि तदांगिरसो, ब्रह्मणांन्छन्सीयः तृतीयं सर्वनं ददर्श ।
    - कौशीतकी ब्राह्मण ।
14. एक प्रकृतिरव्यक्ता कर्ताचैवसनातनः
    परश्च सर्वभूतेभ्यः तस्मात्पूज्यः तमोऽच्युतः । 28/25
    एतत्परमकं ब्रह्म एतत्परमकं यशः ।
    एतदतरमव्यक्त एतत् वैशाश्वतंमहः । 66-6
    - महाभारत, सभापर्व
15. वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रिलीजस् सिस्टम्स, पृष्ठ-35-36
    - डा. सर भण्डारकर ।
16. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-492
    - डा. राम कुमार वर्मा ।
17. भारतीय साधना और सूरसाहित्य : मुंशीराम शर्मा, पृ.-182
18. कथा पुराण साराणां रास यात्रा हरेरहो ।
    हरि लीलाः पृथिव्यां तु सर्वाः श्रुतिमनोहरः ।
    - ब्रह्मवैवर्तपुराण, अध्याय 28, श्लोक 284

19. प्रभु सत्काम छथि। ई लीला, प्रेम भाव, हुनका भीतर अवरुद्ध छनि। हुनक वशमे छनि।
- भागवत, स्कन्ध 10, अध्याय-33, श्लोक-26
20. कृष्णानुग्रहरूपहि पुष्टिः। - तत्वदीपानिबंध, भागवतार्थ प्रकरण, 395
21. नमो भगवते तस्मै कृष्णापाद्भुत कर्मणे।
रूपनामविभेदेन जगत क्रीड़तिभोयतः। - तत्रैव,
22. प्रकृतिकालाधतीते बैकुंठाद्प्युत्कृष्ठे श्रीगोकुल एवं सन्तीति शेषः
-अणाभाष्य, अध्याय 4, पाद 2, सूत्र 15
23. अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय - डा. दीनदयाल गुप्त, पृष्ठ-506
24. अनायाऽङाराधितो नूनं भगवान हरीश्वरः।
यन्नौ विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद् रहः। श्रीमद्भागवत् 10/30/8
25. त्वया चाऽऽराधिता यस्मादहंकुजं महोत्सवे।
राधेति नाम विख्याता रासलीला विधायिका॥ वृहद ब्रह्मसंहिता,
द्वितीयपाद, चतुर्थ अध्याय, श्लोक 147
26. कृष्णाप्रियतमाजनैका कृतपुण्यामदालसा।
अन्य जन्मनि सर्वात्मा विष्णुरम्यर्चितोमया॥ -विष्णुपुराण
27. भारतीय साधना और सूर साहित्य : मुंशीराम शर्मा, पृष्ठ-172
28. (क) स्तोत्रं राधानां पते। ऋग्वेद : 1, 30, 29
(ख) गवामपब्रजं वृधि। ,, : 1, 10, 7
(ग) दासपत्नी अहि गोपा अतिष्ठतां। तत्रैव 1, 32, 11
(घ) त्वं व नृचक्षा वृषभानुपूर्वी कृष्णास्वाम्नै।
अरूषो विभाहि। अथर्ववेद : 3, 15, 3
(ङ) तमेतदाधार यः कृष्णासु रोहिणीषु। 8, 93, 13 तत्रैव।
(च) कृष्णा रूपाणि अर्जुना विवौ मदे। 10, 21, 3 तत्रैव।
29. भारतीय साधना और सूरसाहित्य : मुंशीराम शर्मा, पृष्ठ - 167
30. राधावाद (डा. शशिभूषण दास गुप्त) : भारतीय-साहित्य, पृष्ठ-2
31. मुह मारूएणतं कणह गोरूअ राहिआएँ अवणेन्तोँ।
एताणं वल्लभीणं अणाणवि गौरअं हरसि। - हाल : गाथासप्तशती, 1, 89
32. भारतीय साधना और सूरसाहित्य : मुंशीराम शर्मा, पृष्ठ-165
33. यत्लक्ष्मी वदनेन्दुना न सुखितं, यन्नाद्रितं वारिधैः।
वारायन्न निजैन नाभि सरसा पद्मेन शान्तिं गतम्।
यच्छैषाहिफणा सहस्र, मधुर श्वासैनै चाश्वासितम्।
तद्राधा विरहातुरं मुररिपौर्वल्लद्वपुः पातु वः। -प्राचीन लेखमाला, प्रथमभाग, सं.1
34. जयदेवक समय 1100 क आस-पास मानल जाइछ।
35. प्रो. विनयमोहन शर्मा द्वारा अनुवादित 'गीतगोविन्द'क भूमिका।

36. निन्दति चन्दनमिन्दुकिरण मनुवन्दितिरवैद्मधीरम्।
व्याल-निलय मिलनेन गरलमिव कलयति मलय समीरम्।
माधव, मनसिजविशि रवम्यादिव भावनया त्वयि लीना।
साविरहे तब दीना।
37. कथितसमयेऽपि हरिरहह न यवौवनं।
मम विफलमिदम मलरूपमपि यौवनम्।
38. अंगेसु वामे वृषभांनुजां मुदा
विराजमानामनुरूप सौभगाम्।
सखी सहसेः, परिवेषितां सदा
स्मरमे देवीं सक्लेष्टकामदाम्। -निम्बार्क : दशश्लोकी
39. मध्यकालीन धर्म-साधना, पृष्ठ-145
निम्बार्काचार्यक समय, 1100 वि० के आसपास।
विष्णु स्वामीक समय, 1377 वि० के आसपास।
40. ममाद्धंश स्वरूपा त्वं मूल प्रकृतिरीश्वरी। 66
विना मृदा घटं कुतं बिना स्वर्णेन कुंडलम्।
कुलालः स्वर्णकारश्न न हि शक्तः कदाचना। 60
तथा त्वया बिना सृष्टिं न च कर्त्तुमहं क्षमः।
सृष्टेराधारभूता त्वं बीजरूपोऽहमच्युतः। 61
41. विष्णुपुराण, प्रथम अंश, अध्याय आठ, श्लोक 16-21
42. ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्मखंड, अध्याय 5, श्लोक 26
ब्रह्मवैवर्तपुराण, श्रीकृष्ण जन्मखण्ड, अध्याय 17, श्लोक 223
43. राशब्दोच्चारणादेव स्फीतो भवन्ति माधवः।
धा शब्दोच्चारतः पश्चात् धावत्येव न संशयः।
- ब्रह्मवैवर्तपुराण, अध्याय 52, श्लोक 38
44. त्वमेव राधा त्वं कृष्णस्त्वं पुमान् प्रकृतिः परा।
राधा माधवयौर्मदो न पुराणे श्रुतौ तथा॥
- ब्रह्मवैवर्तपुराण, अध्याय 94, श्लोक-7
45. मेरो भवबाधा हरो राधा नागरि सोइ।
जा तन की झांई परै, स्याम हरित दुति होइ। - बिहारीलाल
46. मि.म., पद - 258, पृष्ठ-191
47. जाह-जाह तोहे ऊद्धव रे, तोहेँ मधुपुर जाहे।
चन्द्रवदनि नहि जीउति रे, वध लागत काहे। -मि.म.
48. चानुर मरदन तुहँ बनमारि।
सिरिस कुसुम हम कमलिनी नारि। मि.म.प. 619 पृष्ठ- 152

49. मि.म., पद-5, पृष्ठ-5
50. मि.म., पद-246, पृ.-183
51. ओएह, पद-35, पृ.-32
52. ओएह, पद-347, पृ.-245
53. मि.म., पद-718, पृष्ठ-468
54. कर धरू करू मोहि पारे, देब मे अपरूब हारे कन्हैया ।
हम न आएब तुअ पासे, जाएब उघट घाटे, कन्हैया ।
-मि.म., पद-349, पृष्ट-246
55. मि.म.,
56. ओएह, पद - 61, पृष्ठ-52
57. ओएह, पद-718, पृ.-468
58. निअ वल्लभ परिहरि जुबति धाव ।
मझे पओले कारन किछु न भाव ।
सब बोलेहि पुछए कान्ह कान्ह ।
गाहकि मझेँ जोहल कि नतमान । मि.म.प.
59. मि.म., पद-301, पृ.-216
60. मि.म., पद-861, पृ.-550
61. ओएह, पद-653, पृ.-431
62. माधव हम परिनाम निरासा ।
तुहु जगतारन दीन दयामय अतए तोहरि विश्वासा । -मि.म.
63. हे हरि, बन्दो तुअ पद नाय ।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि परिहर कोन उपाय । -मि.म.
64. मि.म. पद-771, पृ.- 503
65. जकर नयन जतहि लागल, ततहि सिथिल गेला ।
तकर रूप सरूप निरूपय, काह देखि नहि भेला ।
-मि.म., : 309, पृष्ठ-220
66. पीन पयोधर दूबरि गाता, मेरू उपजल कनक लता ।
ए कान्हु ए कान्हु, तोरि दोहाई, अति अपूरब देखलि राई ।
मुख मनोहर अधर रंगे, फुललि मधुरी कमल संगे ।
लोचन जुगल भृंग अकारे, मधुक मातल उड़य न पारे ।
भउँहेरि कथा पूछह जनू, मदन जोड़ल काजर धनू । -मि.प. : 237, पृष्ठ-177
67. माधव देखलहुँ तुअ धनि आजे ।
भुतल नृपति सुत तसु तनया पति तातक तातक रामा ।
तसु तातक सुत तमिकर उपमेय सेहो थिक ओहि ठामा ।

दीस निगम दुइ आनि मिलाविय ताहि दिस विधि मुख आधो ।
से ले आदि आधि रस मँगैअछ एहन रमनि तुअ माधो ।
-मि.म. : पद-239, पृ.-179
68. मि.म. : पद-270, पृष्ठ-198
69. ओएह,
70. नव अनुरागिनी राधा ।
किछु नहि मानय बाधा ।
एकलि कएल पयान ।
पथ विपथ नहि मान । - मि.म., पद-642, पृ.-424
71. सखिजन आनन्दे निमगन भेल ।
दुहुँ जन मन चाहा मनसिज भेल ।
दुहुँ जन आकुल दुहुँ करू कोर ।
दुहुँ दरसने विद्यापति भोर । - मि. म. विद्या. पद.,
72. विद्यापति : युग और साहित्य - डा. अरविन्द नारायण सिन्हा, पृष्ठ-43-44
73. मि.म. : पद-620, पृ.-410
74. ओएह : पद-616, पृ.-407
75. विद्यापति पदावली : वसन्त कुमार माथुर : पृष्ठ-2
76. मि.म. : पद-216 : पृ.-161
77. ओएह, पद-21 : पृ.-19
78. मि.म., पद-115, पृ.-89
79. ओएह, पद-376, पृ.-264

चतुर्थ अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्य-विधायक विद्यापति

चतुर्थ अध्याय

प्रेम आ सौन्दर्य-विधायक विद्यापति

(क) भारतीय साहित्यमे प्रेम-भावनाक परम्परा आ विद्यापति

मानवीय भावना मूलरूपमे सदा अपरिवर्तित रहैछ, परंच देश-कालक प्रभाव सँ ओकर बाह्यस्वरूपमे परिवर्तन होइत रहैछ। विभिन्न युगक दार्शनिकक मान्यता, धार्मिक विश्वास, नैतिक आदर्श, सामाजिक रीति-रेवाज आ साहित्यिक रूढ़िवादक फलस्वरूप प्रणय-भावनाक बाह्यरूप, ओकर आचारक पद्धति तथा ओकर साहित्यिक अभिव्यंजना-शैली मे यथेष्ट अन्तर आबि जाइछ। प्रेमक शारीरिक एवं मानसिक अनुभूतिक मूलरूप प्रायः एकहि रंगक रहैछ, मुदा ओकर व्यावहारिक विधिसभमे एहि प्रकारेँ अन्तर आबि जाइछ, जेना एक्कहि थान सँ तैयार कयल गेल पोशाक मे होइछ।[1] भारतीय-प्रेमभावनाक परंपरामे सेहो वैदिक युगसँ लऽ कय अद्यपर्यन्त प्रेमक विभिन्न प्रवृत्तिकसभक दर्शन होइछ, ओकर विभिन्न स्वरूपक विकासक स्पष्ट संकेत प्राप्त होइछ।

भारतीय साहित्यमे प्रेमक प्राचीनतम रूप ऋग्वेद[2] क यम-यमी सम्वादमे प्राप्त होइछ। उक्त संवाद कामुकता सँ ओतप्रोत अछि एवं स्वाभाविक अनुभूतिक कारणेँ ओहिमे काव्यक संस्पर्श सेहो आबि गेल अछि। एकर सभसँ पैघ विशेषता ई थिक जे यमी अपन भाइये सँ प्रणय-याचना कऽ रहलि अछि। एहिमे यौवनविभोर यमी, यम सँ शारीरिक मिलनक प्रस्ताव अत्यन्त उत्तेजित शब्द मे करैछ।[3] ऋग्वेदक एही मंडल मे उर्वशी-पुरुरवा सम्वाद[4] सेहो अछि जाहिमे विवाहेतर प्रणय-सम्बन्धक मार्मिक चित्रण कयल गेल अछि। अपन प्रेयसी उर्वशीकेँ अपन सखीसभक संग आमोद-प्रमोदमे व्यस्त देखि, विरह-व्याकुल पुरुरवा ओकरा निष्ठुर कहि सम्बोधित करैछ तथा अपन विरह व्यथित हृदयक दशाकेँ अत्यन्त कारुणिक शब्दमे व्यक्त करैछ।[5] मुदा उर्वशीपर एकर कोनो प्रभाव नहि पड़ैछ। ओ पुरुरवाकेँ ओहीठाम कनैत छोड़ि आगाँ बढ़ि जाइछ। मुदा जयबा सँ पूर्व अपन प्रेमक वास्तविकता प्रकट करैत कहैछ जे स्त्रीगणक प्रेम वास्तविक नहि होइछ, ओकरसभक हृदय जंगली भेड़ियाक हृदय-तुल्य होइछ।[6]

दाम्पत्य प्रेमक प्रतिष्ठाक स्थापना वाल्मीकीय रामायणमे भेल अछि। नारी-पुरुषक एक-दोसरामे अनुरक्त होयबामे मात्र रूपयौवनेकेँ नहि, प्रत्युत् एक-दोसराक प्रति प्रभावित होयबाक सेहो हाथ रहैछ। राम आ सीताक प्रेम एकर अकाट्य प्रमाण थिक।[7] एही प्रसंगमे कवि आगाँ कहैछ जे प्रेम कहबा-सुनबाक वस्तु नहि, ओ तँ हृदयसम्वेद्य थिक, प्रणयी-युग्मे एकर अनुभव करैछ, सेहो मोने-मोन, शब्दमे कहला पर तँ मात्र ओकर विवृति होइछ। रामायणमे नारी-सौन्दर्यक चित्रण अवश्य भेल अछि, मुदा अत्यन्त संक्षिप्त एवं संयतरूपमे। ओहिमे संयोग श्रृंगारक उत्तेजक-मादक चित्रणक सर्वथा अभाव अछि, कारण रामायणमे प्रेमपर कर्तव्यक विजय देखायब कविक उद्देश्य रहल अछि। सीताक प्रति रामक उक्ति एहि बातक अकाट्य प्रमाण अछि।[8] रामायणमे वर्णित राम आ सीताक प्रेमकेँ मर्यादाबद्धे दाम्पत्य प्रेमक संज्ञा देल जा सकैछ।

शौर्य प्रधान प्रेमक चित्रण सर्वप्रथम महाभारत मे उपलब्ध होइछं। महाभारत कालमे आबिकऽ परिस्थिति एकदम बदलि जाइछ। एतय छोट-छोट राज्यमे विभक्त एक नागरिक सभ्यताक चित्र प्रस्तुत अछि। महाभारतक दुनिया घोर अहमन्यता, क्षुद्र स्वार्थक संघर्ष, नैतिक पतन, द्वेष, स्पर्द्धा, प्रतिस्पर्द्धा, असहिष्णुता, उच्छृंखल विलास तथा जर्जर ह्रासोन्मुख संस्कृतिक दुनिया छल।[9] एहि काल मे नारीक कतबा हीन अवस्था छल, तकर किछु आभास भेटैछ अम्बा, अम्बालिकाक अपहरणमे, द्रौपदीकेँ भरल सभामे निर्वस्त्र कयल जयबाक प्रयत्नमे, धर्मराज कहोनिहार व्यक्ति द्वारा जुआमे अपन पत्नीकेँ हारि जयबामे आ कृष्णक संकेतपर अर्जुन द्वारा सुभद्राहरण कयल जयबामे। वस्तुतः महाभारतमे चित्रित समाज सामन्ती समाजक मूर्तरूप थिक। दैहिक रूप-लावण्येटा महाभारतक नायिकासभक एकमात्र पूंजी अछि। पुरुषक लेल ओ विलासक एकटा सजीव उपकरण थिक। सत्यवती, दमयन्ती, शकुन्तला, लोपामुद्रा, देवयानी, मेनका, उषा आदि महाभारतक प्रमुख नायिका छथि। कुन्ती[10], द्रौपदी आदि एकर प्रमुख स्त्रीपात्र छथि। नल-दमयंतीक प्रसंग सभसँ मनोहर तथा दाम्पत्य प्रणयक उज्ज्वल दृष्टान्त थिक।[11] भाव ई जे महाभारतमे वर्णित प्रेमगाथा सभ कोनो आदर्श प्रतिष्ठापित नहि करैछ तथापि रामायणक मर्यादावादी प्रेम-चित्रणक अपेक्षा ओ अधिक विस्तृत आ रसमय थिक। महाभारतक प्रेमलोक मे त्याग, कष्ट, सहिष्णुता तथा साधनाक उच्च भूमि नहि प्राप्त होइछ, मुदा नारी-सौन्दर्य, संयोग श्रृंगार एवं विप्रलम्भक सजीव चित्रसभक अभाव नहि।

प्रेमक तेसर रूप कालिदासक मेघदूत, मालविकाग्निमित्र, ऋतुसंहार तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् मे प्राप्त होइछ जकरा कामजन्य प्रेम कहल जा सकैछ। वर्ण्य-वस्तुक वैभव, भावनाक अतुल गाम्भीर्य, कल्पनाक उड़ान तथा मानव-प्रकृतिक ज्ञान आदिक दृष्टि सँ कालिदासक रचनासभ अन्यतम अछि। उपमामे तँ ओ बेजोड़ छथिए।[12] कालिदास द्वारा वर्णित प्रेम सामन्तयुगीन आभिजात्य वर्गीय सभ्यलोकनिक प्रेम थिक। एहिमे नायक हो वा नायिका, दुनू मे वासनाक सुगन्धित धूपक धूम भरल अछि। मेघदूतक यक्ष अपन कामार्त होयबाक चित्रण विह्वलतापूर्वक करैछ।[13] ओकरा पर्वतश्रृंग उन्नत स्तन जकाँ बुझना जाइछ[14], नदीमे विवृत जांघक छाया देखाइ दैछ।[15] स्वयं कवि "ज्ञातास्वादो विवृत जघनां को विहातुं समर्थः[16]" (विवृत जांघक स्वाद सँ परिचित भऽ कय केँ ओकरा छोड़ि सकैछ) कहिकऽ अपन काम-लोलुपताकेँ स्वीकार कऽ लेने छथि। मेघदूत मे थोड़-बहुत वेदना, पीड़ा आ अश्रुक आर्द्रता अछि, मुदा ओहो काम-क्षुधा सँ पीड़ित हृदयक प्रतिक्रिया स्वरूप अछि।

ऋतुसंहार मे कवि छः ऋतुक वर्णन मे नायक-नायिकाक विलासक चित्रण कयने छथि।

कुमारसंभवक प्रेम केँ आलोचकगण आदर्श प्रेमक उदाहरण बतौलन्हि अछि, मुदा ओहूमे कामुकता एवं रसिकतापूर्ण प्रेमहिक चित्रण कयल गेल अछि। कुमारसंभव मे आदि सँ अन्तधरि-चाहे ओ हिमालय पर्वत पर यक्ष आ किन्नरीसभक संभोग-क्रीड़ाक दृश्य हो, खाहे काम-प्रभाव सँ रति-क्रीड़ामे मग्न वृक्ष लता सँ युक्त शिवक आश्रम हो, खाहे पार्वतीक यौवनागमन, तपस्या एवं नववधूक रूप-वर्णन सम्बन्धी प्रसंग हो वा शिवक बरियातिक ओ दृश्य हो जतय आतुर कामिनीसभक कटिबन्ध फुजि जाइछ - सर्वत्र कामुकतापूर्ण दृष्टियेक चमत्कार देखना जाइछ।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् मे वर्णित प्रेम सेहो वासनाजन्य थिक। कयक गोट रानीक पति दुष्यन्त कण्व ऋषिक अनुपस्थितिमे हुनक आश्रम मे प्रवेश करैछ सेहो ठीक ओही समयमे, जखन वाटिका मे शकुन्तला अपन कसायल वल्कलक गीरहकेँ अपन सखी सँ फोलाय रहल अछि।[17] दुष्यन्त केँ ओकर अनावृत उरोज केँ देखबाक सुयोग भेटि जाइछ आ ओ ओही विषयमे कामातुर भऽ सोचय लगैछ।[18] ओ ओहि अनाघ्रात कुसुम[19] क रस-पान करबाक लेल आतुर भऽ जाइछ। एवं प्रकारेँ अभिज्ञान शाकुन्तलक प्रेम सेहो

कामुकता एवं रसिकता सँ ओतप्रोत अछि । ओहिमे स्वच्छ प्रेमक विकास नहि भऽ सकल अछि।

मालविकाग्निमित्रक नायक-नायिकाक जाहि पारस्परिक सम्बन्ध केँ प्रेमक संज्ञा देल गेल अछि, ओहो कामुकता सँ विशेष आर किछु नहि अछि। दू रानीक पति अग्निमित्र अपन रानीक एक सखी पर अनुरक्त भऽ जाइछ। एहि अनुरक्तिक मूलमे वासनाक प्रेरणा कतबा अधिक अछि, से अग्निमित्रक एहि उक्ति सँ स्पष्ट भऽ जाइछ- 'अहा ! ई स्थूल नितम्ब, कृश कटि, पीन पयोधर एवं विशालाक्षी हमर प्राण एम्हर आबि रहल अछि ।[20]'

कालिदासक समस्त रचना मे विक्रमोर्वशीए एहन रचना अछि जे प्रेमक उत्कृष्ट स्वरूपकेँ उपस्थित करैछ। एहिमे कविक दृष्टि स्थूल-वर्णनक अपेक्षा प्रेमी-प्रेमिकाक हृदयस्थ भावनाक उद्घाटन दिस विशेष अछि। एहिमे प्रेमक आरंभ, विकास, मिलन, वियोग एवं पुनर्मिलन आदिसभ परिस्थितिक चित्रण एतबा स्वच्छता सँ कयल गेल अछि जे ओहिमे कामुकताक गन्ध नहि प्राप्त होइछ। वेदनाक आंचसँ पिघलिकऽ पुरुषक हृदय एतेक ने कोमल भऽ गेलैक अछि जे ओ पशु-पक्षीयो लेल सहानुभूतिशील भऽ जाइछ ।

कालिदासक विभिन्न काव्य-कृतिक अनुशीलन सँ ई तँ स्पष्ट अछि जे विक्रमोर्वशीय केँ छाड़ि अन्य कोनो रचनामे प्रेमक उच्चादर्शक स्थापना नहि भऽ सकल अछि, मुदा ई निःसन्देह कहल जा सकैछ जे ओ प्रेमकाव्यक महान कलाकार छलाह । नारी-सौन्दर्यक चित्रांकन मे ओ अद्वितीय छथि । रसानुभूतिक दृष्टि सँ कालिदासक प्रेम-चित्रण अप्रतिम अछि । प्रेम-जगतक प्रायः सभ क्रिया-व्यापार, स्थूल चेष्टा आ भाव-संस्पर्श हुनक काव्यमे चित्रित भेल अछि । कालिदासक प्रेम-चित्रण सजीव अछि, सौन्दर्य, यौवन, प्रणय एवं विलासक अभिनव चिरवासन्ती लोकक गुलाबी आभा सँ प्रदीप्त अछि। कालिदासक प्रेम-चित्रणक द्वितीय विशेषता अछि- प्रकृतिक उद्दीपक रूपमे विस्तृत वर्णन । एकर ज्वलन्त प्रमाण हुनक ऋतुसंहार थीक । ऋतुसंहारक वर्ण्य विषय यैह थिक । हुनक प्रेम-चित्रणमे जे कामुकता प्रधान रूप-छविक दिग्दर्शन होइछ तकरा पाछाँ सामन्तयुगीन सामजिक परिवेशक सुदृढ श्रृंखला निहित अछि।

भारतीय काव्यमे कालिदासक पश्चात् प्रेमचित्रणक एक अन्य रसमय स्वरूप प्राकृत मुक्तक काव्य मे उपलब्ध होइछ । एहि वर्गक रचनामे गाथासप्तशती तथा वज्जालग्न दुइए गोट काव्य-ग्रंथ उपलब्ध अछि । एकर

अतिरिक्त किछु रचनासभक उद्धरण श्रृंगार प्रकाश, सरस्वती-कंठाभरण, काव्य-प्रकाश आदि शास्त्रीय ग्रंथसभमे प्राप्त होइछ ।

प्राकृत मुक्तक गाथा साहित्यमे हालक सतसई वा गाथासप्तशती एक प्रतिनिधि संकलन थिक । एकर सभसँ पैघ विशेषता ई थिक जे एहिमे राजा-रानी, देवी-देवता वा सामन्तकुमारसभक प्रेम वर्णित नहि भऽ कय सर्व-साधारणक जीवनक यथार्थ अनुभूतिक चित्रण कयल गेल अछि । एहिमे खेत-खरिहानमे काज कयनिहार, गाम मे रहनिहार- सर्वसाधारणक दाम्पत्य जीवनकेँ चित्रित कयल गेल अछि । गाथासप्तशतीमे परकीया प्रेमक चित्रसभक सुन्दर प्रदर्शनी लागाओल गेल अछि । वस्तुतः ओहि युगमे परकीया प्रेमक कतबा प्रचलन छल, तकर प्रमाण एक नायिकाक उक्तिये सँ स्पष्ट भऽ जाइछ -

अण्णमहिलापसङ्ग दे देव करेसु अम्ह दइअस्स ।
पुरिसा एकन्तरसा णहु दोषगुणे विश्राणन्ति ॥[21]

गाथासप्तशतीक एकाधिक गाथासभमे जीवनक दुःख-दैन्यक मध्य विकसित प्रगाढ़ दाम्पत्य-प्रेमहुक मार्मिक व्यंजना भेल अछि ।[22] ओहि नैतिकता-विहीन एवं उच्छृंखल यौनाचारक युगहुमे दाम्पत्यप्रेमक पवित्रता, मर्यादा आदि पूर्णतया लुप्त नहि भऽ पाओल छल, तकर संकेत सेहो एहि ग्रंथमे प्राप्त होइछ । खाहे राजप्रासाद हो वा किसानक मड़ैया, ओहि युगक प्रेमक स्वरूप निम्न गाथामे व्यक्त भेल अछि -

अत्थबकरुसणं रवणपसिज्जणं अलिअवअणणि बन्धो ।
उम्मच्छरसंता वो पुतअ पअबो सिणेहस्य ॥[23]

(अचानक बिनु कारणेँ रूसब, पुनः मानि जायब, झूठमूठक बात बनायब तथा ईर्ष्या सँ दग्ध होयब - स्नेह एकरे नाम थिक ।)

गाथासप्तशती सँ ई तँ स्पष्ट होइछ जे ओहि युगक प्रेमलोकमे वैवाहिक नैतिकता नामक कोनो वस्तु नहि रहि गेल छल ।[24]

उपर्युक्त विवेचन सँ गाथासप्तशती मे वर्णित प्रेमक मर्यादा स्पष्ट भऽ जाइछ । वस्तुतः एहि युगमे परकीया प्रेमक प्राबल्य छल । एहू ग्रंथमे प्रेमक उच्च धरातल अनुपलब्ध अछि । एहि प्रेमक प्रेरक मात्र काम थिक, एकर अतिरिक्त आर किछु नहि ।[25]

गाथासप्तशतीक पश्चात् भवभूतिक उत्तर रामचरितम् तथा मालती माधव एवं शूद्रकक मृच्छकटिकम् मे संघर्षपूर्ण प्रेमक उदात्त स्वरूप उपलब्ध

होइछ । शूद्रक कृत मृच्छकटिकम् मे चित्रित वेश्यापुत्री वसन्तसेना एवं चारुदत्तक प्रेम उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित अछि । उपर्युक्त ग्रंथसभमे त्रिकोणात्मक प्रेमक चित्रण कयल गेल अछि - नायक-नायिकाक अतिरिक्त एक खलनायक अछि जे प्रेमी-प्रेमिकाक मिलनमे अनेक प्रकारक विघ्न-बाधा उपस्थित करैछ । मृच्छकटिकम्क खलनायक अछि राजश्यालक आ मालती-माधवक राजा । एहि रचना सभमे प्रेमक उदात्त स्वरूप प्रस्तुत कयल गेल अछि। चारुदत्तक प्रतिए वसन्तसेनाक प्रेम कतबा उच्च स्तरीय अछि, तकर प्रमाण वसन्तसेनाक निम्न उक्तिमे प्राप्त होइछ - 'खाहे मेघ गरजे वा बरसे, खाहे बज्रे किएक ने खसय लागय, परंच प्रियतम-मिलनक लेल उत्कंठित प्रेमिकासभ एकरा किछुओ नहि बुझैछ ।[26]' एवं प्रकारेँ एहि रचनासभमे वर्णित प्रेममे ने वासनाक विकृत विवृति अछि, ने कामुकताक उत्कट गन्ध अछि, ने नारीअंगक नग्न चित्रण । वस्तुतः प्रेमक जे उच्च स्वरूप हमरा कालिदासक देवी-देवता, यक्ष, अप्सरा, कुलीन राजपुत्र एवं आश्रमवासिनी सभमे तकलो सँ नहि प्राप्त होइछ, भावनाक जाहि गंभीरताक लेल पाठक कालिदासक व्यापक काव्य-सागरमे अन्तधरि बौआइत रहैछ, तकर प्राप्ति शूद्रकक एहि छोट सनक काव्य-वापिकामे सहजहि भऽ जाइछ ।[27]

प्रेमक जे उच्चादर्श उपर्युक्त रचनासभमे स्थापित भेल छल से सिद्ध-साहित्यमे आबिकऽ विलुप्त भऽ गेल । वज्रयानी सिद्ध सभक रचनामे धर्मक आवरणमे कामाचारक वर्णन होबय लागल ।[28] एवं प्रकारेँ भक्तिमूलक श्रृंगारिक पृष्ठभूमि सिद्धलोकनि द्वारा प्रस्तुत कयल गेल तथा ओकरा पूर्णता प्रदान कयलक श्रीमद्भागवत । अनेक विवाद रहलो सन्ता श्रीमद्भागवतकेँ नवम शताब्दीक ग्रंथ स्वीकार कयल जाइछ । एहि ग्रन्थक दशम स्कन्धमे कृष्ण आ गोपीसभक प्रेमक विस्तृत वर्णन कयल गेल अछि। ओना एहि सँ पूर्व गाथासप्तशती मे कृष्ण एवं गोपीक वर्णन भऽ चुकल छल, मुदा गोपीसभक संग कृष्णक प्रेमलीलासभक वर्णन सर्वप्रथम एही ग्रंथमे विस्तारपूर्वक कयल गेल । एहि लीलासभपर भक्तिक प्रलेप चढ़यबाक कार्य सेहो सर्वप्रथम भागवतकारहि द्वारा कयल गेल ।

प्रेमचित्रणक दृष्टि सँ भागवतक सभसँ पहिल विशेषता ई अछि जे एहिमे श्रृंगारकेँ आध्यात्मिकताक आवरणमे लपेटि कऽ प्रस्तुत कयल गेल अछि । लौकिक नायकक स्थान पर कृष्णकेँ आबि गेला सँ सभकिछु कहबा-सुनबाक स्वाधीनता प्राप्त भऽ जाइछ । एकर अतिरिक्त पूर्व ग्रंथसभमे

प्रायः नायक-नायिकेक प्रेम-व्यापारक चित्रण कयल गेल अछि, मुदा भागवतमे कृष्णकेँ अयला सँ अनेक रमणीक संग कृष्णक विहार करबाक परम्परा प्रारम्भ होइछ । भागवतमे गोपीसभक प्रेम विशुद्ध सौन्दर्य लालसा सँ प्रेरित अछि । गोपीसभक प्रणयानुभूतिक व्यंजनामे भागवतकार एक वास्तविक कवि हृदयक परिचय देने छथि । प्रणयजन्य विह्वलता, आकुलता, विकलता, विवशता एवं छटपटाहटिक वर्णन अत्यन्त भाव भीजल शब्द मे कयल गेल अछि । दशम् स्कंधक अन्तमे व्यथाकुल गोपीलोकनिक विरहानुभूतिक मार्मिक चित्रण कयल गेल अछि, जे प्रेम-काव्यक अनमोल रत्न थिक । वस्तुतः भागवतकारक प्रणय-चित्रण स्वाभाविकता, मनोवैज्ञानिकता, काव्यात्मकता एवं रसात्मकताक दृष्टि सँ अपूर्व अछि-अद्वितीय अछि । मुदा दुर्भाग्यवश परवर्ती कविलोकनि भागवतक स्नेहपूर्ण दीप सँ विशुद्ध प्रकाशक स्थान पर ओकर कामुकताक काजरे केँ विशेष प्रश्रय देलनि । भागवतक कृष्णमे जे किछु उदात्त वा आदर्श छल, तकरा बिसरि हुनक विलास-लीलाक चित्रणे केँ अपन अभीष्ट बनौलनि आ एहि धाराक अग्रणी भेलाह जयदेव ।

जयदेवक गीत गोविन्द मे रूढ़िबद्ध मिश्रित प्रेमक चित्रण कयल गेल अछि । एकर रचना 12म शतीक प्रथम चरणमे भेल । एकरा भारतीय गीतक गीत कहल गेल अछि । एहिमे राधा-कृष्णक प्रेम-विहारक चित्रण एतबा ने मांसलताक संग कयल गेल अछि जे एकर बराबरी संसारक साइते कोनो दोसर रचना कऽ सकैछ । गीतगोविन्द द्वारा भारतीय भाषा-साहित्य मे प्रेम-चित्रणक एक नव परम्पराक सूत्रपात भेल आ कोमलकान्त पदावली जयदेवक अवदान अछि । वस्तुतः गीतगोविन्दक रचना एक आत्म-विश्वास सँ ओत-प्रोत, अनुभूति सँ अनुप्राणित संस्कृत कविक सहज स्वाभाविक उद्गारक रूपमे नहि भेल अछि, प्रत्युत ओकर संगठन विभिन्न क्षेत्र सँ उधार लेल सामग्रीक आधार पर यत्नपूर्वक भेल अछि । ओ भागवत सँ कथानक, साहित्य-शास्त्र सँ नायिका-भेद, काम-शास्त्र सँ रति-कलाक विभिन्न अंगक ज्ञान, संगीत-शास्त्र सँ राग-रागिनी एवं अपभ्रंश काव्यसँ गीतिशैली ग्रहण कयने छथि । गीतगोविन्दक राधा हो वा कृष्ण, कामोन्माद सँ दुनू एकसमान पीड़ित छथि । एखनधरि जे उन्मुक्त कामुकताक चित्रण श्रृंगारक नामपर होइत आबि रहल छल, गीतगोविन्दकार ओकरा हरि स्मरणक आवरण सँ आच्छादित कऽ अपन नग्न कामुकता पर धार्मिकताक चादरि पसारि देलनि[29], संगहि ईहो कामना व्यक्त कयलनि जे विलासकलाक ज्ञान चाहनिहार सेहो हुनक

काव्यक रसास्वादन करय।[30] गीतगोविन्दमे कृष्ण आ गोपीसभक काम-क्रीड़ाक चित्रण अत्यन्त स्थूल रूपमे प्राप्त होइछ । रासलीलाक समयक एक दृश्य द्रष्टव्य थिक –

शिलष्यति कामपि, चुम्बति कामपि,
रमयति कामपि रामाम् ।
पश्यति सस्मित चारुतराम-
- परामनुगच्छति वामाम् ॥

कृष्ण ककरो आलिंगन करैछ, ककरो चुम्बन लैछ, आ ककरहु संग रमण कऽ रहलाह अछि । एक सँ मुस्काकऽ आँखि मिला रहलाह अछि, तँ दोसराक पाछाँ जा रहलाह अछि । काम-वासनाक ई प्रज्वलित रूप कृष्ण आ गोपी दुनूमे प्राप्त होइछ । राधाक पुनरागमन पर कृष्ण जाहि शब्दमे प्रणय-निवेदन करैछ, ओहो हुनक हृदयक वास्तविक प्रकृतिक परिचायक अछि – "हमरा लगमे आउ, अहाँक चरण मर्दन कऽ बाटक सभ ठेही दूरकऽ दी । आर देखू - ई अहाँक दुकूल हमरा दुहूक हृदयमे अन्तर आनि देलक अछि, तेँ एकरा उतारि दियौक । हमरा हृदयमे कामक ज्वाला धधकि रहल अछि, अपन कुच-कलश केँ उझिलि कए ओकरा मिझा दियौक । मृतवत् भए रहलहुँ अछि हम, अपन अधरक अमृत पान कराय एहि दासकेँ जीवन प्रदान करू ।[31]

एवं प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे जयदेवक कृष्ण होथि वा गोपीलोकनि-दुहूमे काम-वासनाक प्रज्वलित रूप दृष्टिगत होइछ । वस्तुतः जयदेवक महत्व श्रृंगार-वर्णनक एक नव रूप, नव पद्धतिक आविष्कार करबाक दृष्टिये सँ विशेष अछि, भावनाक विकासक दृष्टि सँ नहि । जे हो, जयदेवक गीतिलहरी सँ लोकमन एहि प्रकारेँ मंत्रमुग्ध भऽ उठल जे लोक भाषासभमे सेहो एहि परम्पराक कड़ी जोड़य जाए लागल । जयदेवक ई रूढ़िबद्ध मिश्रित श्रृंगार परवर्ती कविलोकनि मे एतबा लोकप्रिय भेल जे प्रायः छःसात शताब्दीधरि ओसभ एकर अनुकरण करैत रहलाह । बंगलामे चण्डीदास कृष्ण कीर्त्तन लिखलन्हि, मैथिलीमे विद्यापति सरस गीतिपदक रचना कए अभिनव जयदेवक उपाधि सँ विभूषित भेलाह ।

(ख) विद्यापतिक काव्यमे प्रेमक विविध रूप

(1) मानवीय प्रेम

पारस्परिक साहचर्य सँ उपलब्ध आनन्दानुभूतिकेँ प्रेम कहल जाइछ । वस्तुतः प्रेम एक एहन भावात्मक अनुभूति अछि जकरा शब्दक माध्यम सँ

नहि व्यक्त कयल जा सकैछ । देवर्षि नारद एही तथ्यकेँ स्वीकार करैत लिखलन्हि अछि – 'प्रेमक स्वरूप अनिर्वचनीय थिक- बौकक स्वादक भाँति ।[32] तथापि विश्व-साहित्यक प्रधान विषय प्रेमहि रहल अछि आ विश्वक प्रायः अनेक दार्शनिक, चिंतक, तथा कवि प्रेमक भिन्न-भिन्न परिभाषा प्रस्तुत कयने छथि । एहि विषय पर प्रथम एवं द्वितीय अध्यायमे विषद् विश्लेषण प्रस्तुत कयल गेल अछि, अतः एकर व्याख्याक एहिठाम प्रयोजन नहि बुझना जाइछ । जाहि प्रकारेँ पृथ्वी कोनो सूक्ष्म आकर्षण शक्तिक वशीभूत भऽ सूर्यक चारू भर परिक्रमा करैछ, तहिना ओकर आन्तरिक कार्य-व्यापार सभक व्यवस्था सेहो आकर्षण शक्तियेक बल पर होइछ । शारीरिक आकर्षण, शक्तियेक बल पर होइछ । शारीरिक आकर्षण प्राणिमात्रक जन्मक कारण थिक, मानसिक आकर्षणक वशीभूत भऽ नाना प्राणी अपन शिशुक लालन-पालनक भार उठबैछ आ जाहि व्यक्ति, पदार्थ वा वस्तुक प्रति हमर आकर्षण होइछ, ओहि सँ वियुक्त कयनिहार व्यक्ति वा पदार्थ केँ हम नष्ट करबाक प्रयत्न करैत छी । सृष्टिक सृजन, विकास एवं संहारक मूलमे जड़-चेतनक ई पारस्परिक आकर्षणे कार्य करैछ । हमर विभिन्न वृत्तिसभसँ मिलिकय आलंबन भेद सँ यैह आकर्षण अनेक रूप धारण करैछ । यैह कारण जे एकरा भक्ति, मित्रता, प्रणय, स्नेह, वात्सल्य, करुणा, लोभ, मोह आदि अनेक वर्गमे विभाजित कयल जाइछ ।

यद्यपि 'प्रेम' शब्द व्यापक अर्थमे आकर्षणक उपर्युक्त भेद-भक्ति, मित्रता, स्नेह आदिक लेल प्रयुक्त होछ, मुदा संकुचित अर्थमे भिन्न लैगिंक व्यक्तिसभक समन्वित प्रणय वा दाम्पत्य भावहिकेँ प्रेम कहल जाइछ, जे श्रृंगार रस सँ सम्बन्धित अछि । अतः एहिठाम प्रेमकेँ एही संकुचित अर्थमे ग्रहण कयल गेल अछि जे श्रृंगारक लेल अपेक्षित अछि।

विद्यापति प्रेम एवं सौन्दर्यक कवि छथि । यैह कारण जे ओ श्रृंगार रसकेँ त्रिभुवनसार, सगर संसारक सार आदि कहि ओकर महत्ताक परिचय देलन्हि अछि । विद्यापतिक विभिन्न रचनामे प्रेमक विभिन्न स्वरूपक चित्रण भेल अछि । एकमे विवाहित जीवनक मर्यादा सँ परिपूरित दाम्पत्य प्रेमक चित्रण भेल अछि तँ दोसर मे एक नायकक अनेक रमणीक संग विलासक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । कतहु वेश्या आ नागरिकालोकनिक प्रेम-सौन्दर्यक वर्णन कयल गेल अछि, तँ कतहु उपेक्षिता पत्नीक मर्मव्यथाक गीत मुखरित भेल अछि ।

विद्यापतिक गीतिपद मध्यकालीन प्रेमकाव्य-परम्पराक एक गोट अमूल्य श्रृंखला थिक । विद्यापतिक संस्कृत रचनासभमे पुरुषपरीक्षा तथा गोरक्षविजय मे एकाधिक स्थलपर प्रेम-चित्रण उपलब्ध होइछ । पुरुष परीक्षाक काम-प्रकरणमे दाम्पत्य प्रेम सम्बन्धी तीन गोट कथा प्रस्तुत अछि - अनुकूल-कथा, दक्षिणकथा तथा घस्मर कथा ।[33] अनुकूल कथाक प्रारंभहि मे श्रृंगार रसक व्याख्या करैत कहल गेल अछि - जकर स्थायीभाव रति अछि, तथा जे पुरुषक लेल परम मोददायी अछि, ओकरा श्रृंगार रस कहल जाइछ । श्रृंगार रस सँ प्राप्त सुख काम थिक । कामक महत्वकेँ स्वीकार करैत कवि लिखने छथि -

'त्रिवर्गेष्वपरः कामः फलंधर्मार्थयोरपि ।' [34]

अनुकूलकथा मे दाम्पत्य जीवनक चरम आदर्शक उदाहरण प्रस्तुत कयल गेल अछि । कवि दाम्पत्य प्रेमक अनन्यता, पवित्रता तथा महत्ताक प्रशंसा करैत लिखने छथि -

भूयादनश्वरं प्रेम यूनोर्जन्मनि जन्मनि ।
धर्म श्रृंगार संपृक्त सीताराघवयौरिव ॥ [35]

दक्षिण कथामे सेहो प्रेमक सुन्दर एवं आदर्श रूप प्रस्तुत कयल गेल अछि । एही प्रकारेँ घस्मर कथामे घस्मर नायकक लक्षण बतबैत कवि कहैत छथि -

अपि शूरः सविधोऽपि सुबुद्धिरपि पुरुषः ।
भ्रूभंग श्रृंखलाबद्ध स्त्रीवश्यौ घस्मरो भवेत् । [36]

एही प्रकारेँ घस्मर कथा मे स्त्रीक वशीभूत भेनिहार घस्मर नायकक दुर्गतिक वर्णन कएल गेल अछि, संगहि विश्वासघातिनी नारीक दुर्दशा सेहो वर्णित अछि । एकटा श्लोकमे नारी-प्रकृतिक अद्‌भुत् परिचय देल गेल अछि-

चमत्कारिषु चित्रैषु भूषणेष्वंबरेषु च ।
लोभो भवति नारीणां फलेषु कुसुमेषु च ॥ [37]

कथाक अन्त निम्नलिखित श्लोकक संग कयल गेल अछि -

सुखोपकरणं नारी प्रेम तस्यां प्रियोचितम् ।
वश्यता च निषिद्वैव स्त्रीश्वयो याति दुर्गतिम् ॥ [38]

अवहट्ठमे रचित कीर्त्तिलता मे श्रृंगारक चित्र नगरवर्णनक प्रसंगमे कयल गेल अछि । जौनपुर नगरक अट्टालिका, उपवन, सड़क आदिक सौन्दर्य वर्णन तँ कयले गेल अछि, संगहि शिवालय एवं कमलाक्षी स्त्रीक वर्णन सेहो अपूर्व अछि । ओहिठामक नारी-सौन्दर्यक चित्र द्रष्टव्य अछि -

थलकमल पत्त समान नैत्तहिं मत्तकुंजर गामिनी ।
चौहट्ट वट्ट पलट्टि हेरहिं साछ साछहि कामिनी ॥ [39]

एहि पुस्तकमे चोरीक प्रेम, वेश्याक-प्रेमकेर वर्णन करैत प्रथमक प्रशंसा आ द्वितीयक निन्दा कएल गेल अछि । एकरा संगहि वेश्याक सौन्दर्य, केशविन्यास, वेशभूषा, हाव-भाव तथा अंगसौष्ठवक चित्रण विस्तारपूर्वक कयल गेल अछि ।

कीर्त्तिपताका मे कविक प्रेम-भावनाक अभिनव स्वरूपक चित्रण उपलब्ध अछि । एहि मे नग्न एवं मर्यादारहित कामाचारक चित्रण भेल अछि । एहिमे प्रेम-गीतक नहि, प्रेम-क्रीड़ेसभक वर्णनमे विशेष रूचि प्रदर्शित कयल गेल अछि । रचनाक प्रारंभहि मे कवि द्वारा पंडितलोकनि पर व्यंग्य कयल गेल अछि -

पण्डिअ मण्डइ वद्धगुणे भीषम कीर मुहेन ।
वाणी महुर महग्धरस पिअउ सुअन सवनेन । [40]

अन्य रचने जकाँ गोरक्षविजय नाटिकामे सेहो विद्यापतिक श्रृंगार-भावना तथा प्रेमक विशेषताक अनेक मूल्यवान सामग्री उपलब्ध अछि । एहूठाम श्रृंगार रसक महत्ताकेँ निर्दिष्ट कयल गेल अछि ।[41] एहि रचनामे सांसारिक सुखकेँ सारहीन बताओल गेल अछि जे गोरक्ष-विजयक सन्देश अछि । ओ नारीकेँ नरकक द्वारि नहि कहि, ओकरा सुकृतिक बाट कहलन्हि अछि -

सुकृतिक वाट विचित्रञो नारि ।[42]

एवं प्रकारेँ पुरुषपरीक्षा, कीर्तिलता, तथा गोरक्षविजय मे वर्णित प्रेमप्रसंगक परिप्रेक्ष्यमे पदावलीमे वर्णित प्रेमप्रसंगक विश्लेषण कयला सन्ता कविक प्रेम सम्बन्धी मान्यता स्पष्ट भऽ जाइछ । पदावलीक प्रेमचित्रणमे मुख्यतः तीन पद्धतिकेँ अपनाओल गेल अछि - (1) राधा-कृष्णकेँ नायक-नायिका मानि कऽ प्रेम-चित्रण, (2) सामान्य नायक-नायिकाक प्रेम-गीत तथा, (3) शंकर-पार्वतीक दाम्पत्य जीवनक भक्ति सँ रंजित चित्र । यद्यपि विद्यापतिक अधिकांश पदमे राधा-कृष्णक नाम औपचारिक रूपमे आयल अछि, एहिमे प्रेमक विप्रलंभ एवं संयोग पक्षक चित्रण करब कविक अभीष्ट अछि, तथापि किछु पद मे (वैष्णव पदावलीमे वर्णित) राधा-कृष्णक प्रेमक संकेत सेहो प्राप्त होइछ ।

रति वा कामकेँ दाम्पत्य प्रेमक आधार मानिकऽ प्रेमक तीन भेद मानल जा सकैछ-पूर्वराग, वैवाहिक प्रेम आ परकीया प्रेम । पारस्परिक

रूप-गुण-श्रवण वा दर्शन सँ जे प्रेम उत्पन्न होइछ, तकरा पूर्वराग कहल जाइछ। एकर परिणाम विवाह भइयो सकैछ, आ नहियोँ भऽ सकैछ। विवाहक पश्चात् जे प्रेम विकसित होइछ, ओ वैवाहिक प्रेम कहबैछ। विवाहित व्यक्तिक अपन सहचरक अतिरिक्त अन्य सँ कयल गेल प्रेम, परकीया प्रेम कहबैत अछि। विद्यापतिक काव्यमे प्रेमक तीनू रूप प्राप्त अछि।

प्रेम-विकास

शैशवक सुकुमार झूला पर झूलैत राधा एक दिन यौवनक देहरि पर पदार्पण करैछ। ओकर सौन्दर्य-श्री सँ गोकुलक घाट, बाट, गली आ कुंजमे वासन्ती सुषमा लहरा उठैछ। ओकर रूपज्योत्स्ना सँ जमुना-पुलिन जगमगा उठैछ। प्रथम दर्शनहिमे कृष्ण ओकरा पर विमुग्ध भऽ जाइछ। कृष्णक रूप आ माधुर्य सँ गोकुलक धरती सुधा-सिंचित भऽ जाइछ। हुनक बासुरीक स्वर-माधुरी सभकेँ मूर्छित कऽ दैछ। राधा सेहो कृष्णक रूप, गुण एवं माधुर्य पर लट्टू बनि नाचय लगैछ। दुनूकेँ नैकट्य प्रदान करबामे दूती रामवाणक काज करैछ।

राधा-कृष्णक प्रथम दर्शनक प्रेम उत्तरोत्तर विकास केँ प्राप्त करैछ। घाट-बाट पर कृष्ण-राधाक साक्षात्कार होइछ, दुनूक हृदयमे एक दोसराक प्रतियेँ आकर्षण उत्पन्न होइछ। ई आकर्षण अनुरागमे आ अनुराग अन्ततः प्रेममे परिवर्तित भऽ जाइछ। दुनूक रूप-यौवन, दुनूकेँ परस्पंरानुरक्त कऽ दैछ। कृष्ण कखनो आँचर सरकि जयबाकाल राधाकेँ अपना हाथसँ कुच केँ झाँपैत देखैछ, तँ कखनो ओकर वक्र कटाक्ष सँ मर्माहत होइछ। कखनो ओकर रूप-लावण्य पर मर्माहत होइछ, कखनो स्वर्ण-कटोरा- सदृश झिलमिलाइत उरोजक झाँकी पर विस्मय-विमुग्ध होइछ। कखनो ओकर मृदु-मधुर वार्तालाप सुनि तृषित भऽ जाइछ तँ कखनो नाभि विवर सँ रेंगइत लोम-लता केँ कुच-गिरि-सन्धिमे नुकाइत देखि काम-कातर भऽ उठैछ। बाटमे सौन्दर्यक वर्षा करैत नायिका जेम्हर जाइछ, नायकक आँखि ओम्हरहि दौड़य लगैछ, जेना कृपणक पछोर धयने आशालुब्ध भिखारि जाइत अछि -

ततहि धावल दुहू लोचन रे जतहि गेलि वर नारि।
आशा लुबुध न तेजए रे कृपनक पाछु भिखारि॥

आब नायिकाक चरणक जाबक नायक-हृदय केँ दग्ध कयनिहार पावक बनि जाइछ। कखन पुनः दर्शन हो, जाहि सँ विरहक अवसान हो आ प्राणक रक्षा, एही चिंतामे नायक व्याकुल भऽ उठैछ -

पुनहि दरसन जीव जुड़ाएब टुटब विरहक ओर।
चरन जावक हृदय पावक दहइ सबअंग मोर॥

कृष्णक रूप-लावण्यपर राधा सेहो प्रथमदर्शनहि मे विमुग्ध भऽ जाइछ। प्रियततमक आनन-सौन्दर्यक पान करबाक लेल बढ़ल चकोर नेत्र केँ नियंत्रित कऽ ओकर चरण पर केन्द्रित करैछ, मुदा ओ मुग्ध-प्रमत्त-भ्रमर जकाँ उड़बाक लेल पाँखि फड़फड़बय लगैछ। माधवक मादक वाणी सुनि राधा अपन कान बन्द कऽ लैछ, मुदा प्रेम अन्ततः प्रकट भऽ जाइछ। राधा रोमांचित भऽ उठैछ, शरीर सँ घाम चूबय लगैछ, कंचुकी चटकिकऽ फाटि जाइछ आ मुग्धा बालिका अपन प्रेम केँ नुकाकऽ रखबामे असमर्थ भऽ जाइछ -

अवनत आनन कए हम रहलिहु वारल लोचन चोर।
पिया मुख रूचि पिवए धाओल जनि से चाँद चकोर॥
ततहु सयेँ हठे हटि मोयेँ आनन धएल चरन राखि।
मधुप मातल उड़ए न पारए तइयो पसारए पाँखि॥[43]

कृष्णक रूपक जादू राधाकेँ लागि जाइछ। आब ओकरा हृदयमे मिलन-कामना बलवती भऽ उठैछ। आब ओ सखी सँ पूछि कऽ कृष्णक निवास-स्थान जयबाक निश्चय करैछ, ओकरा सँ भेंट करबाक लेल आकुल-व्याकुल भऽ जाइछ। कृष्ण सँ भेंट करबाक लेल ओ इन्द्र सँ हजारो आँखि आ गरुड़ सँ पाँखि माँगबाक लालसा व्यक्त करैछ। गरुड़ सँ पाँखिक याचना नायिकाक हृदयक आकुलता आ एकनिष्ठ उत्कट अभिलाषा केँ व्यक्त करैछ तथा इन्द्र सँ लोचनक कामना ओकर अतृप्ति एवं नायकक रूप-माधुर्यक अनन्तताकेँ प्रकट करैछ। नायिका एहिठाम आबिकऽ प्रेमक सर्वोच्च शिखर पर देखना जाइछ -

सुरपति पाए लोचन मागओँ गरुड़ मागओँ पांखी।
नन्देरि नन्दन मैँ देखि आबओँ मन मनोरथ राखी।

रूप-लिप्सा :

विद्यापतिक कृष्ण राधाकेँ पथमेँ, जमुना कछेरमे, कुंज-भवन अबैत-जाइत देखैछ आ ओकरा रूप-माधुर्यपर आसक्त भऽ जाइछ। यैह दशा राधाक सेहो भऽ जाइछ। दुनू एक-दोसराक रूप-लोभी बनि जाइछ। आलम्बनमे विशेष प्रकारक हाव, अनुभाव, चेष्टाक कारण आश्रयमे रूप-लिप्साक आगि आर भड़कि जाइछ। रससिक्त नयन, चपल कटाक्ष, मादक चालि, श्यामल कुन्तल-राशि, विद्युत सदृश दन्तावलि, मुस्काइत गुलाबी गाल, उन्नत

मांसल उरोज आदि रूपलिप्साक उद्दीपक थिक । पुरुषक अनेक मुग्धकारी व्यापार आ अवयवक चेष्टा नारी-हृदयमे सौन्दर्य-दर्शनक लालसा जागृत करैछ । एही रूप-लिप्साकेँ देखयबाक लेल कवि नारीमे विस्तृत आ फूजल क्षेत्र प्राप्त करैछ । नारी-अंगक विशेष गढ़नि एकरा लेल अधिक सामग्री एकत्र करैछ । कृष्ण-चरित्रमे विद्यापति द्वारा निरूपित रूप-लिप्साक अनुकरण आ प्रभाव परवर्ती कविसभमे स्पष्टतः देखल जाइछ । विद्यापतिक कृष्ण स्नान करैत राधाकेँ देखि कऽ मुग्ध भऽ जाइछ ।[44] कृष्ण आ राधा दुनूक रूप-लिप्साक अतृप्ति एतेक ने बढ़ि जाइछ जे दुनू पारस्परिक यौवन-उपभोगक लेल छटपटाए लगैछ । जखन एक व्यक्ति कामप्रेरित आसक्तिक वशीभूत भऽ दोसराक उपभोगक लालसा करैछ, तँ पूर्वरागक उदय होइछ । एहि सँ पूर्व दुनू मे रूप-लिप्साक लालसा चरमोत्कर्ष पर पहुँचि जाइछ । मुग्धा नायिका अपन सुधि-बुधि बिसरि जाइछ । दूध-दही बेचबाक होश नहि, गुरुजनक लाजक चिन्ता नहि । एकहु क्षणक लेल कृष्ण विस्मृत नहि भऽ पबैछ । कृष्णक अयबाक समाचार सुनितहि ओ बताहि भऽ जाइछ –

कानन कान्ह कान हम सुनल भइ गेल आनक आने ।
हेरइत संकररिपु मोहि हरलन्हि कि कहब तनिक गेयाने ॥

राधाकृष्ण समानरूपेँ परस्पर आसक्त छथि । दुनूक मिलन होइछ तँ उन्मादक लहरि नस-नसमे दौड़य लगैछ, दुनू एक-दोसरा सँ अलग होइछ तँ आशा-दीप मिझा जाइछ । दुनू विरह-वेदनामे छटपटा उठैछ –

जखने दुहुक दीठि विछुड़लि दुहु मने दुख लागू ।
दुहुक आसादीप मिझाएल मदन आँकुर माँगू ॥

विप्रलंभ श्रृंगारक चरि भेद मानल गेल अछि – पूर्वराग, मान, प्रवास आ करुण-विरह । पूर्वरागक तीन भेद अछि – नीली, कुसुम्भ आ मंजिष्ठा ।[45] विद्यापति पूर्व रागक अत्यन्त सजीव, कलात्मक तथा रसपूर्ण चित्रण कयने छथि । हुनक पूर्वानुरागक अधिकांश पद वैष्णव पदावलीमे संकलित अछि । एहि पदसभमे मुग्धा नायिकाक सौन्दर्य-चित्रणक अवसर सेहो कविकेँ प्राप्त होइछ, संगहि काव्य-शिल्पक वैशिष्ट्य प्रदर्शित करबाक सेहो स्वतंत्रता रहैछ आ तेँ रसिकजनमे पूर्वरागक पदसभ विशेष लोकप्रिय होइछ ।

पूर्व राग :

रूप-लावण्य आ गुण-श्रवण वा चित्रदर्शन सँ सेहो प्रेमक उदय होइछ । एहनो स्थिति अबैछ जखन मिलन-कामना वशमे नहि रहैछ ।

रूप-लिप्सा आसक्तिक रूप धारण कऽ लैछ आ सौन्दर्य-वृत्ति यौवन-उपभोगक । प्रिय आ प्रेयसी दुनू काम-पीड़ा सँ छटपटाय लगैछ । ई अवस्था पूर्वराग कहबैछ ।*

पूर्वरागक अन्तर्गत नबो (दशम मरण केँ छाड़ि) काम दशाक चित्रण स्वीकृत छल । विद्यापतिक पद सभमे रूप रस सभक चित्रण बेस कलात्मकताक संग कयल गेल अछि । रूप-लिप्सा आ यौवन-भोग-कामना सँ राधाकृष्णक हृदयमे पूर्वराग जागृत भऽ जाइछ । पूर्वरागमे मात्र काम-वासनाक प्राधान्य रहैछ, ओहिमे मिलन आ सहवासक उल्लास नहि, मात्र अतृप्तिक बेचैनी रहैछ । एकर एकगोट उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

मलिन कुसुम तनु चीरे । करतल कमल नयन ढर नीरे ॥
कि कहब माधव ताही । तुअ गुने लुबुधि मुगुधि भेलि राही ॥[46]

राधाक पूर्वानुरागी विरह-दशा आर भयंकर भऽ जाइछ । राधा उन्मादक अवस्था मे घर सँ बाहर भए जाइछ । सखीसभ ओकर विभिन्न प्रकारेँ उपचार करैछ आ कृष्णकेँ बजा कऽ लऽ अबैछ –

अकामिक मन्दिर भेलि बहार
चहुँदिस सुनलक भमर गुंजार ।
मुरछि खसल महि न रहलि थीर ।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ।
केओ सखि गावए केओ कर चार ।
केओ आनन गहे करए संभार ।
केओ बोल मंत्र कान तर जोलि ।
केओ कोकिल खेद डाकिनी बोलि ।
अरे अरे अरे कान्हु कि रभसि बोरि ।
मदन-भुजंग डसु बालहि तोरि ।
भनइ विद्यापति एहो रस भान ।
एहि बिस गारुड़ एक पए कान ।[47]

कृष्णक यैह अवस्था ! ओहो राधाक विरहमे पागल । राधाक विरहमे छटपटाइत कृष्णक व्याधिक एकमात्र औषध भऽ जाइछ राधाक 'अधर अमिय धार' –

सजल नलिनीदल सेज ओछाइअ परसे जा असिलाए ।
चान्दने नहि हित चाँद विपरीत करब कओन उपाए ।

कारनि वैदे निरसि तेजलि आन नहि उपचार ।
एहि बेआधि औषध तोहर अधर अमिय धार ।[48]

कृष्णक प्रेम उन्मादक रूप धारण कऽ लैछ । ओ बताह-सनकाह जकाँ पहाड़, नदी, तरु, कोकिल, भ्रमर, मृग, गज आ चन्द्रिका सँ राधाक विषयमे पूछए लगैछ -

गिरिनरि, तरुअर कोकिल भ्रमरवर हरिन हाथि हिमधामा ।
समझ परओ पय सबे भेल निरदय केओ न कहै तसु नामा ।[49]

पूर्वानुरागक एक आर स्थिति अछि - प्रियक काल्पनिक मिलन। स्वप्नदशामे प्रायः ई संभव भेल करैछ । पूर्वरागक काल्पनिक वा स्वप्निल मिलन-दशाक चित्रण सेहो विद्यापति द्वारा कयल गेल अछि । किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) नील कलेवर पीत वसन धर चन्दन तिलक धवला ।
सामर मेघ सौदामिनी मंडित तथिहि उदित ससिकला ।
हरि-हरि अनतए जनु परचार सपने मोए देखल नन्दकुमार ।[50]

(2) सरसवसन्त समय भल पाओलि दखिन पवन बहु धीरे।
सपनहुँ रूप वचन एक भाखिए मुख सो दूर करू चीरे ।[51]

एहि प्रकारेँ पदावलीमे मान सम्बन्धी सेहो अनेक पद उपलब्ध अछि, मुदा ओहूमे कवि स्थूल कारणकेँ परखि कऽ ओकरा काम प्राधान्य बनौलन्हि अछि । राधा, कृष्ण केँ रातिभरि नहि अयलापर तथा प्रायः मेल भेलापर कोन प्रकारेँ नेहोरा करैछ -

लोचन अरुन बुझलि बड़ भेद । रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ। रयनि गमओलह जहिन्हके साथ।[52]

कृष्णो कोनो कम नहि-अपन सफाई देबाक, शपथ खयबाक लेल सतत प्रस्तुत । कृष्णक शपथ खयबामे विद्यापतिक व्यंजना मुखरित भऽ उठल अछि -

ए धनि माननि करह संजात ।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि, ताक उपर धरू हात ।
तोहे छाड़ि जदि हम परसब कोए, तुअ हार नागिन काटब मोए ॥[53]

राधिकाक प्रवास-विरह आर उत्पीड़क भऽ जाइछ, जखन ओकर अंगक बढ़ैत मांसलता, प्रस्फुटित होइत यौवन सालय लगैछ । जखन ओ बालिका छल, रस-रभस सँ अपरिचिता, तखन आर बात छलैक, मुदा आब

तँ ओकर शरीर सेहो प्रियक मांग करैछ, कामोत्तेजना सँ काम-ज्वर-सेहो पीड़ित करैछ । आगि लागए ओहि यौवनतारूण्य मे, जे प्रियक अनुपस्थितिमे विकसय, फुलाय । काम-कातर राधाक उक्ति श्रुति-मधुर अछि -

सरसिज बिनु सर, सर बिनु सरसिज, की सरसिज बिनु सूरे ।
जौबन बिनु तन, तन बिनु जौवन, की जौवन पिय दूरे ॥[54]

एहि प्रकारेँ प्रिय सँ भेंट करबाक उत्कट अभिलाषिणी, काम-पीड़िता विरहिणी राधाक अभिलाष-दशा निम्न पदसभमे व्यक्त भेल अछि -

कत दिन पिय मोर पूछब बात, कबहुँ पयोधर देहब हाथ ।
कत दिन लइ बैठाइब कोर, कत दिन मनोरथ पूरब मोर ॥

परकीया प्रेम :

भारतीय विचार परम्परामे परकीया प्रेमकेँ कखनहुँ मान्यता नहि प्रदान कयल गेल अछि । जाहि देशमे पातिव्रत्यकेँ उच्च स्थान देल गेल होइक, ओहि देशमे परकीया प्रेमक भर्त्सना स्वाभाविक । 'मातृवत्परदारेषु' एहि देशक मूल स्वर रहल अछि । ओना कुमारि कन्यासभक प्रेम-कथा सभ भारतीय साहित्यमे उपलब्ध अछि, मुदा परकीया प्रेमक उभयनिष्ठ रतिक वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्यमे प्रायः नहिजे भेल अछि । साहित्यशास्त्रक निर्मातालोकनि एहि प्रकारक प्रेमवर्णन केँ श्रृंगाराभासक अन्तर्गत मानलन्हि अछि । विश्वनाथ उपनायकनिष्ठ रति, मुनि-गुरुपत्नीगत रति, बहुनायक विषयक रति, अनुभयनिष्ठ रति, प्रतिनायकनिष्ठ रति, अधमपात्र तिर्यगादिविषयक रतिकेँ अनौचित्यक कारणेँ रसाभास मानलन्हि अछि।[55]
नायक सँ विश्वनाथक तात्पर्य विवाहित पुरुषहि सँ ज्ञात होइछ । श्रृंगार रसक निष्पत्ति सेहो तँ विवाहित प्रेम सँ संभव अछि । श्रृंगारक आलम्बनक निर्देश करैत विश्वनाथ स्पष्ट रूपेँ लिखलन्हि अछि - 'परस्त्री तथा अनुराग शून्य वेश्याकेँ छोड़ि अन्य नायिका तथा दक्षिण नायक एहि रसक आलम्बन विभाव मानल जाइत छथि ।'[56]

वात्स्यायन 'कामसूत्र' मे शरीर-रक्षाक दृष्टि सँ एहि प्रसंगक समावेश कयने छथि । रति रहस्य मे स्पष्टतः कहल गेल अछि - 'पुनर्दारा पुनर्वित्तं क्षेत्रं पुनः सुतः पुनः श्रेयस्करं कर्म न शरीरं पुनः पुनः ।'[57] संस्कृत साहित्यमे जाहि काम ज्वरक बेर-बेर उल्लेख भेल अछि, ओ वैद्यकशास्त्रक दृष्टि सँ सर्वथा उपयुक्त अछि । कामज्वरक लक्षण लिखैत वंगसेनक कथन छन्हि जे जखन स्त्रीकेँ कोनो विशेष पुरुषक अथवा पुरुष केँ कोनो विशेष स्त्रीक

इच्छा उत्पन्न होइछ तँ कामज्वर उत्पन्न होइछ । एहिसँ चित्त विभ्रंश, तंद्रा, आलस्य, भोजनमे अरुचि, हृदयमे वेदना, आ शरीर शोष भऽ जाइछ ।[58] वैद्यकशास्त्रमे एकर जे औषधि बताओल गेल अछि, ओकरा लोकाचारमे कहियो मान्यता नहि प्राप्त भेलैक । जे हो, परकीया प्रेम कहियो धर्म आ लोकविहित आचार द्वारा मान्य नहि भेल ।

किछु मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक विद्वान प्रेमकेँ स्वकीया आ परकीया सीमामे बान्हिकऽ रखबाक प्रति आपत्ति उठौलन्हि अछि । हिनकालोकनिक अनुसारेँ जीवनक सम्पूर्ण असंगति प्रकृतिक अनुकूल जीवन व्यतीत नहि कयले पर उत्पन्न होइछ । फ्रायड मनुष्यक मूल प्रवृत्तिसभकेँ दमन करबाक कारण अनेक प्रकारक ग्रंथि एवं रोगसभक उत्पत्ति मानैछ । हुनक कथन छन्हि जे मनुष्यक मूल प्रवृत्ति आ वातावरणमे निरंतर संघर्ष होइत रहैछ । फ्रायड व्यक्तित्वक तीन पक्ष निर्धारित कयलन्हि अछि – अहं, चेतन मन आ इदम् । इदम् हमर मोनक अचेतन वृत्ति थिक । साधारणतः जे हमर चेतन प्रवृत्ति अछि, ओ अहं कहबैछ । मनुष्यक उपर संस्कृति आ सभ्यताक जे बोझ होइछ, ओएह ओकर नैतिक मोन थिकैक । सभ्यतानुरूप आचरण करबाक कारणेँ मनुष्यक जे संस्कार आ परिष्कार होइछ, से ओकर अहंकेर नैतिक मोन मे परिवर्तन थिक । अहं जखन नैतिक मोन द्वारा परिवर्तित होबय लगैछ, तखन ओ आदिम प्रकृति 'इदम्' सँ बरोबरि बाधित होइछ। एना करबाक लेल इदमक प्राकृतिक इच्छासभकेँ बरोबरि दमित होमय पड़ैछ। सभ्यता जेना-जेना ओझड़ाएल जाइछ, ताही अनुरूपेँ दमन गम्भीर होइत जाइछ । एकर परिणाम स्वरूप अनेक भयानक रोगसभक उत्पत्ति होइछ । नैतिकता 'इदम'क उपचारक रूपमे जन्म लैछ । जखन एकदिस इदम् आ दोसर दिस सभ्यता, नैतिकता, कला, संस्कृति आदिक संघर्ष चरम सीमापर पहुँचि जाइछ, तँ सभ्यताक प्रारूप बहुत किछु ध्वस्त भऽ जाइछ आ इदम् केँ ध्यानमे रखैत ओकर पुनर्निर्माण करय पड़ैछ।

'प्रकृति दिस घुरि चलू' मे विश्वास रखनिहार रूसोक कथन छन्हि जे मनुष्य स्वतः नीक प्राणी अछि, मुदा ओकरा समाज अधलाह बना दैछ । जेना-जेना समाज बढ़ैत जाइछ, मनुष्य अपन दैवी विभूतिसभकेँ नष्ट करैत ओकर दास बनल चल जाइछ । मानवीय सभ्यताक विकासक लेल एहि मूल प्रवृत्तिसभ पर प्रतिबन्ध लगायब आवश्यक होइछ । एना भेला सन्ता मनुष्य आ पशुमे कोनो अन्तर नहि रहि जाएत। महाभारतमे सेहो कहल गेल अछि –

आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानः॥[59]

रूसो तथा फ्रायडक अतिवादी विचारधाराकेँ छोड़ियो देल जाए, तैयो एतबा तँ स्पष्ट अछि जे काव्यमे स्वकीया आ परकीया भेद विवाहेक आधार पर कयल गेल अछि । मानव-प्रकृतिक विश्लेषण कयला पर प्रेम-तत्व अत्यधिक गूढ़ एवं जटिल पाओल गेल अछि । भारतवर्षमे प्रेम पर नैतिकताक बन्धन लागल रहल अछि । स्वकीया प्रेम एही नैतिकता-आग्रहक समय सँ विशेष सम्प्रदायमे धर्मक रूपमे चलल छल । एकर अस्तित्व ऋग्वेद आ छांदोग्य उपनिषदमे भेटैत अछि । बुद्धक समयमे सेहो ई प्रथा प्रचलित छल आ ओ एकर निंदा कयलनि।[60] राधा आभीरक प्रेम देवी छथि। यद्यपि संस्कृत साहित्यमे एकर वर्णन नहि प्राप्त होइछ, मुदा अन्य भाषा साहित्यमे ओकर प्रेमक वर्णन अछि । आभीर जाति भारतमे ईसाक प्रथम शताब्दी सँ पूर्व आयल, अतः ओकर सभक प्रेम-विकासमे भारतीय परम्पराक परकीया-प्रेमकेँ विशेष उत्तेजना भेटलैक। मध्यकालीन साहित्यक दू महान कवि विद्यापति आ चण्डीदास दुनूमे राधाक परकीये रूपमे प्रेम-वर्णन कयल गेल अछि । अन्तर एतबहि जे विद्यापतिक राधाक प्रेम उच्छ्वसित अछि बरसाती नदीक फेनिल प्रवाह जकाँ आ चण्डीदासक राधाक प्रेम संकोचशील आ भयत्रस्त अछि । जे हो, 'स्वकीया प्रेम घर लग बहैत धार थिक जकर जल सदिखन उपलब्ध अछि । अतः प्यासक आधिक्यक कोनो कारण नहि, मिलनोत्कंठामे ओ आबेग नहि । परकीयाक प्रेम संरक्षित जल थिक जकर प्राप्ति संभव नहि । अतः ओहिमे मिलनक उच्छ्वसित उत्कंठा आ प्रबल आग्रह अछि।[61] यैह कारण जे विद्यापति अपन गीतसभमे परकीया प्रेमहिक अजस्र धारा प्रवाहित कयलनि ।

विद्यापतिक गीतिपदमे परकीया प्रेमक दू रूप प्राप्त होइछ – एक गोपीकृष्ण सम्बन्धी आ दोसर सामान्य समाज-सम्बन्धी । गोपीकृष्ण-सम्बन्धी परकीय प्रेम केँ बंगला-वैष्णव उपासनामे माधुर्यभावक भक्तिक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मानल गेल । चण्डीदास आदि भक्त कविलोकनि सेहो राधाक परकीय रूपहिकेँ स्वीकार कएल । ब्रजक भक्त राधाकेँ स्वकीया मानलन्हि, मुदा कृष्ण, ब्रज-भक्तिमे सेहो बहुवल्लभ तथा अनेक ब्रजांगनाक भोक्ता रहलाह । विद्यापति राधा आ कृष्णक एही रूप आ परकीया प्रेम केँ गीतगोविन्द सँ उत्तराधिकारमे प्राप्त कयलन्हि। गीतगोविन्द मे कृष्णक

बहुवल्लभ वा अनेक रमणीक संग रमण करयवलाक रूपक संकेत-मात्र अछि, जखनकि विद्यापतिमे कृष्णक बहुवल्लभ रूपक क्रियाशील वा प्रत्यक्ष चित्रण उपलब्ध अछि ।

कृष्णक मादक-मदिर रूपपर विवाहित-अविवाहित सभ ब्रजांगना मोहित अछि, ओकरा पाछाँ बताहि अछि । जखन ओकर बांसुरीक स्वर निःसृत होइछ, रमणीसभ अपन-अपन घर-द्वार छोड़ि बताहि जकाँ ओकरा सँ भेट करबाक लेल विदा भऽ जाइछ । ने तनक सुधि, न मोन पर नियंत्रण । गुरुजनक लाज आ वेद-मर्यादा सभ धयलक धयले रहि जाइछ । एम्हर कृष्ण भेलाह बहुरमणा, राधाक अतिरिक्त अनेक ब्रजांगनाक संग हुनक काम-सम्बन्ध छन्हि । कृष्णक ई परकीय प्रेमी रूप ककरहु सँ नुकायल नहि । राधा सेहो जनैछ आ ओकर सखीसभ सेहो । ओकर चरित्रक एहि प्रवृत्तिसँ राधाकेँ बड़ दुःख होइछ । ओकर सखीसभ एहिलेल ओकर भर्त्सना सेहो करैछ -

माधव ई नहि उचित विचारे ।
जनिक एहन धनि काम-कला सनि,
से किअ करु व्यभिचारे ॥ (266)

मुदा जकरा पर-स्त्री-रमणक चस्का लागि जाइछ, ओ किन्नहु नहि एकरा छोड़ैछ । ने परकीय प्रेमी केँ भय होइछ, ने परकीया नायिका केँ लाज लगैछ । दुनू लाज-मर्यादा केँ बिसरि भरि राति विलासमे मग्न रहैछ । बेचारी दूतीकेँ आफत । ओ बुझबैछ जे पर स्त्रीकेँ आनि कऽ अहाँकेँ दऽ देल, आब तँ ओकरा जाय दियौक ।

परक पेयसी आनले चोरी ।
साँति अंगिरलि आरति तोरी ।
तोहि नहि डर ओहि न लाज ।
चाहसि सगरी निसि समाज । (216)

राधा प्रतीक्षामे राति बिता दैछ, अपनाकेँ सजि-धजिकऽ कृष्णक प्रतीक्षा करैत रहैछ आ राति प्रतीक्षामे बीति जाइछ । भरि राति अन्य कामिनीक संग रमण कयलाक बाद भिनसरमे जखन कृष्ण अबैछ तँ राधाक व्यथा क्रोधाग्निक रूपमे फूटि फड़ैछ -

सहस रमनि सौं भरल तोहर हिय करु तनि परसि न त्यागे ।
सकल गोकुल जनि से पुनमति धनि कि कहब तन्हिक भागे ।
पदजावक हृदय भिन अछ अरु करज खत ताहे ।

जाहि जुवति संगे रअनि गमोलह ततहि पलटि बरू जाहे ।
नयनक काजर अधरे चोराओल नयन अधर कहु रागे ।
बदलल वसन नुकाओब कतखन तिल एक कैतव लागे ।[62]

कृष्णक ई परकीयरूप भक्तलोकनि केँ बड़ नीक लगलन्हि । यैह कारण जे विद्यापतिक पश्चात् हिन्दीक अष्टछापक सभ कवि कृष्णक एहि रूपक रसमग्न भऽ चित्रण कयलन्हि । कृष्णानुरक्त नायिका भेट करबाक लेल छटपटा रहलि अछि । परकीय प्रेममे जे व्यग्रता होइछ, से ओकरा घर पर रहय नहि दैछ । ने सासु-ससुरक चिन्ता, ने पहरुआक कोनो भय । ओ सभ बाधा-बन्धनकेँ तोड़ि कृष्ण सँ भेंट करबाक लेल बहार भऽ जाइछ -

लाज जनिक जन चउदिस गरज घन सासु नहि तेजए गेहा रे ।
तइओ से चलल बुधि बले कउसल एत बड़ तोहर सिनेहा रे ।

परकीय नायिकाक कथनमे पश्चाताप आ अनुनय दुनूक स्वर गुंजित होइछ -

कुल कामिनी भए कुलटा भेलिहु किछु नहि गुनले आगु ।
सबे परिहरि तुअ आधीनि भेलिहु आवे आइति लागु ।
माधव, जनु होअ प्रेम पुराने ।
नव अनुराग ओल धरि राखब जे न विघट मोर माने ।[63]

परकीय प्रेम मे एक प्रकारक विशेष उत्तेजना होइछ, छटपटाहटि रहैछ । परपुरुष सँ मिलबामे सामाजिक, नैतिक एवं धार्मिक अनेक प्रकारक बाधा उपस्थित होइछ । जेना बाधा उत्पन्न भेला पर शैल-झरनाक प्रवाह आर तीव्र भऽ उठैछ, तहिना प्रेम सेहो तीव्र सँ तीव्रतर भऽ उठैछ । अपन पति सँ मिलबाक अवसर तँ स्त्रीकेँ नित्तोदिन प्राप्त रहैछ, तेँ स्वकीयाक मिलन-कामना मे ओ आकुलता-व्याकुलता नहि रहैछ, जे परकीयाक प्रेम मे । एही प्रकारेँ विछोहमे ओ कातरता नहि रहैछ, जे परकीया प्रेम मे । आकुल उत्कंठा आ अनधैर्यताक कारणेँ परकीया प्रेमकेँ भक्तिक आदर्श स्वीकार कऽ लेल गेल । एकरा आध्यात्मिकताक आवरणमे आवृत कऽ एहन स्वरूप प्रदान कयल गेल जे समाज विरोधी होइतहुँ भक्तिकाव्यमे अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान अर्जित कऽ लेलक ।

विद्यापतिक गीति-पदसभमे सामान्यतः सामाजिक परकीय प्रेमक चित्रांकन भेल अछि । बौआसिन घरमे एकसरि अछि । पति परदेशमे, सासु आन्हर आ ननदि रूसल । सन्ध्याकाल घर लग दऽ कऽ एकटा पथिक केँ

ओ जाइत देखैछ । कनेकाल चारू भर देखैछ - कतहु क्यो नहि । मोन अनियंत्रित भऽ जाइछ परकीयाक आ पथिक केँ प्रबोधबामे ओ लागि जाइछ -

कमल मिललदल मधुप चलल घर, विहग गइल निज ठामे ।
ओ रे पथिक जन थिर रे करिअ मन, बढ़ पांतर दुर गामे ।
ननदि रूसिए रहु परदेस बस पहु, सासुहि न सुझ समाजे ।
निठुर समाज पुछार उदासीन आओर की कहब बेआजे ।
चन्दन चारु चम्प घन चामर अगर कुंकुम घरवासे ।
परिमल लोभे पथिक नित संचर तेह नहि बोलय उदासे ।[64]

एकटा अन्य पदमे एही प्रकारक परकीया प्रेमक अत्यन्त मार्मिक व्यंजना भेल अछि । ओ स्वयं युवती आ पति परदेश मे । पास-पड़ोस मे सेहो क्यो रहनिहार नहि, उपर सँ सासुकेँ रतौंधी भेल। नायिका पथिक सँ कहैछ, हे पथिक, कने जागल रहिअह, एतय चोर बड़ छैक -

हम जुवति पति गेलाह विदेस । लगु नहि बसए पड़ोसियाक लेस।
सासु दोसरि किछुओ नहि जान । आंख रतौंधि सुनये नहि कान।
जागह पथिक जाह जनु भोर । राति अंधार गाम बड़ चोर ।[65]

अन्यपदमे अपन भाउजक रूपकेँ देखि ननदिकेँ ओकरा पर सन्देह होइछ । ओ प्रश्न पर प्रश्न कयने चल जाइछ, आ भाउज एक-एक प्रश्नक उत्तर तर्कपूर्ण ढंग सँ दैछ । यद्यपि रूप-परिवर्तनक कारण रति-क्रीड़ा थिक, मुदा तकरा ओ फूसि सिद्ध कऽ दैछ । एही प्रकारेँ एक अन्य पदमे नायिका अपन दूती केँ नायकक पास सन्देश दऽ कय पठबैत अछि । ओतय पहुँचिकऽ ओकर स्वयं अस्त-व्यस्त वस्त्राभूषणकेँ देखि नायिका केँ सन्देह होइछ आ तकर समाधान दूती जाहि पटुताक संग दैछ से दर्शनीय अछि -

विनहि छरमे उर धकधक धकिर उससि उससि मे शासा ।
तोहारि वचन देह उनक वचन लेइ तुरिते आयलुं तुया पाशा ॥
अपन बसन देह उनक बसन लैइ आयलि कोन चरीते ।
गेलि न गेलि जबहि उपजांयब आनलूं तुआ परतीते ॥

एवं प्रकारेँ परकीया एवं सामान्य परकीया प्रेमक मार्मिक चित्र प्रस्तुत कऽ विद्यापति अपन युग-यथार्थक अभिव्यंजना कयलन्हि अछि ।

निष्कर्ष :

(1) विद्यापतिक पूर्व, भारत मे प्रेमक एक सुदीर्घ परम्परा बनि गेल छल । भारतीय साहित्य मे प्रेमक प्राचीनतम रूप ऋग्वेदक यम- यमी-सम्वाद

मे प्राप्त होइछ । उक्त संवाद कामुकता सँ ओतप्रोत अछि एवं स्वाभाविक अनुभूतिक कारणेँ ओ काव्य-संस्पर्श सँ आपूरित अछि । ऋग्वेदक एही मंडल मे उर्वशी-पुरूरवा संवाद अछि जाहि मे विवाहेतर प्रणय-सम्बन्धक मार्मिक चित्रण भेल अछि ।

(2) ऋग्वेदक पश्चात् वाल्मीकीय रामायण मे दाम्पत्य प्रेमक प्रतिष्ठापन भेल अछि । नारी-पुरूषक एक-दोसरा मे अनुरक्त होयबा मे मात्र रूप-यौवनेक नहि, प्रत्युत् एक-दोसराक प्रति प्रभावित होएबाक सेहो हाथ रहैछ । राम-सीताक प्रेम एकर अकाट्य प्रमाण थीक ।

(3) शौर्य-प्रधान प्रेमक चित्रण सर्वप्रथम 'महाभारत' मे उपलब्ध होइछ । एहि काल मे नारी, पुरुषक लेल विलासक एक सजीव उपकरण मात्र बनिकऽ रहि गेल छलीह, तथापि नलदमयंतीक प्रेम-प्रसंग अत्यंत मनोहर तथा दाम्पत्य-प्रणयक उज्ज्वल दृष्टांत थीक । महाभारत मे वर्णित प्रेम गाथा सभ यद्यपि कोनो आदर्शक प्रतिष्ठापन नहि करैछ, तथापि रामायणक मर्यादावादी प्रेमक अपेक्षा ओ अधिक विस्तृत आ रसमय थीक ।

(4) प्रेमक तेसर रूप कालिदासक मेघदूत, मालविकाग्निमित्र, ऋतुसंहार तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् मे प्राप्त होइछ जकरा कामजन्य प्रेम कहल जा सकैछ । कालिदास द्वारा वर्णित प्रेम सामन्त-युगीन अभिजात्य वर्गीय सभ्यलोकनिक प्रेम थीक । एहि मे नायक हो वा नायिका, दुनू मे वासनाक सुगन्धित धूपक धूम भरल अछि । स्वयं कवि 'ज्ञातास्वादो विवृत जघनां को विहातुं समर्थः' कहि कय अपन काम-लोलुपता केँ स्वीकार कयने छथि । कालिदासक समस्त रचना मे 'विक्रमोर्वशीय' एक एहन रचना थीक जे प्रेमक उत्कृष्ट स्वरूपकेँ प्रस्तुत करैछ । एहि मे कविदृष्टि स्थूल-वर्णनक अपेक्षा प्रेमी-प्रेमिकाक हृदयस्थ भावनाक उद्घाटन दिस केन्द्रित अछि ।

(5) यद्यपि कालिदास 'विक्रमोर्वशीय' केँ छाड़िकय अन्य कोनहु रचना मे प्रेमक उच्चादर्शक स्थापना नहि कयलन्हि अछि, तथापि ई निःसंदेह कहल जा सकैछ जे ओ प्रेम काव्यक एक महान कलाकार छथि । प्रेम-जगतक प्रायः सभ क्रिया-व्यापार, स्थूल चेष्टा एवं भाव-संस्पर्श हुनक काव्य मे चित्रित अछि । कालिदासक प्रेम-चित्रण सजीव अछि, सौन्दर्य, यौवन, प्रणय एवं विलासक अभिनव चिरवासन्ती लौकिक गुलाबी आभा सँ प्रदीप्त अछि।

(6) कालिदासक पश्चात् भारतीय काव्य मे प्रेमक-चित्रणक अन्य रसमय स्वरूप प्राकृत मुक्तक काव्य 'गाथा सप्तशती' तथा 'वज्जालग्ग' मे

उपलब्ध होइछ । प्राकृत काव्य मे 'गाथा सप्तशती' अथवा 'सतसई' प्रतिनिधि संकलन मानल जाइछ जकर रचयिता हाल छथि । एहि मे राजा-रानी, देवी-देवता वा सामन्त कुमार सभक प्रेम-चित्रण नहि भऽ कय, साधारण खेतिहर-बोनिहारक दाम्पत्य जीवन कें चित्रित कयल गेल अछि जे एकर प्रमुख विशेषता अछि ।

(7) मुक्तक काव्य मे जे प्रेमक उच्चादर्शक उपस्थिति भेल छल से सिद्ध-साहित्य मे आबिकऽ विलुप्त भऽ गेल । श्रीमद्‌भागवत मे भक्तिमूलक श्रृंगारक स्थापना भेल । वस्तुत: भागवतक प्रणय-चित्रण स्वाभाविकता, मनोवैज्ञानिकता, काव्यात्मकता तथा रसात्मकताक दृष्टि सँ अपूर्व अछि । एकर पश्चात जयदेवक 'गीत गोविन्दे' मे रूढ़िवद्ध मिश्रित प्रेमक चित्रण कयल गेल अछि । तात्पर्य ई जे विद्यापतिक पूर्वक प्रेमकाव्यमे कयकटा धारा-उपधारा संस्कृत-प्राकृत एवं अपभ्रंशमे विकसित भऽ चुकल छल ।

(8) विद्यापति प्राधानत: प्रेम एवं सौन्दर्यक कवि छथि । हुनका लेल प्रेम 'त्रिभुवनसार' तथा 'सगर संसारक सारे' थीक । विद्यापतिक प्रेमकाव्य मे कतहु विवाहित जीवनक मर्यादा-सम्पन्न दाम्पत्य प्रेमक चित्रण अछि, तँ कतहु बहुवल्लभ कान्तक विलासक चित्रण अछि, कतहु वेश्या आ नागरिका लोकनिक प्रेमक वर्णन अछि, तँ कतहु उपेक्षिता पत्नीक मर्म-व्यथाक गीत मुखरित अछि । वस्तुत: विद्यापतिक गीतिपद मध्यकालीन प्रेमकाव्य-परम्पराक एक गोट अमूल्य श्रृंखला थीक ।

(9) कीर्तिलता मे चोरीक प्रेमक प्रशंसा एवं वेश्याक प्रेमक निन्दा कयल गेल अछि । कीर्तिपताका एवं गोरक्षविजय मे नग्न एवं अमर्यादित कामाचारक चित्रण भेल अछि । पुरूष-परीक्षामे एकाधिक स्थल पर प्रेमक मनोरम चित्र अंकित कयल गेल अछि ।

(10) पदावली प्रेमकाव्यक मधुकलश थीक । एहि मे प्रेम-चित्रणक हेतु मुख्यत: तीन पद्धति कें अपनाओल गेल अछि - नायक-नायिका रूप मे कृष्ण एवं राधाक प्रेम-चित्रण, सामान्य नायक-नायिकाक प्रेम गीत तथा शंकर-पार्वतीक दाम्पत्य जीवनक भक्ति-रस -रंजित चित्र । विद्यापतिक काव्य मे पूर्व राग, वैवाहिक एवं परकीय प्रेमक अनेकानेक अनुपम चित्र उपलब्ध अछि ।

(ग) भारतीय काव्यमे सौन्दर्य भावनाक परम्परा आ विद्यापति

भारतक शस्य-श्यामल भूमि सौन्दर्यक भण्डार थिक । प्राकृतिक

श्री-सुषमासँ सम्पन्न एहि देशक कण-कण सौन्दर्य माधुरी सँ आ प्लावित अछि। प्रकृतिक अक्षय-भण्डार-वन, पक्षी, लता, सुमन, सरिता, तड़ाग, समुद्र, झरना, बादल-बिजली, चन्द्र-तारिका, उषा, निशा सभ अनादिकालसँ मानवक आत्मीय रहल अछि । यैह कारण जे तपोवनवासी ऋषि-मुनिक निर्लिप्तता सेहो एहि मोहक वस्तुसभसँ अपनाकें नहि बचा सकल आ ओ सभ एकरा रमणीय, चारु आ सुन्दर कहि कय संज्ञायित कयलन्हि । उषाक अरुणिमा सँ आलोकित प्राचीक शोभा, भ्रमरक गुंजार आ कमलवनक मुस्कान हुनकासभकें उल्लास सँ भरि देलक । पक्षीक सुमधुर गान, वृक्षक पंक्तिवद्ध श्रेणी-सभ भिन्न-भिन्न भावकें उद्दीप्त करबामे तत्पर। जाहिप्रकारें आदिक आदि अरुणोदयमे जखन मानवक अलसायल दृष्टि प्रकृतिक विस्तृत प्रांगण पर पड़लैक, तहिना साहित्य सेहो प्रकृतिक सम्मोहक वातावरणमे नेत्र-निक्षेप कयलक । ओहियुगमे, जखन मानवधर्म कठिन कर्तव्य, दया, स्नेह, उदारता आदि गुण सँ पूरित, तपोवनक धूम-भरित छल, धर्मग्रन्थ सभक प्रणयन भेल छल, ओहू समयमे सौन्दर्य-प्रतिमा आवृत नहि भऽ सकल । धूम सँ लाल भेल नेत्रमे सेहो सौन्दर्यपारखी प्रतिमा निहित छल जे ऋग्वेदमे उषा सूक्तसभक रूपमे प्रस्फुटित भेल । यैह छल रमणीयताक, सौन्दर्यक प्रथम साहित्यिक अभिव्यक्ति -

उषो मद्रेमिरा गहि दिवाश्चिद्रोचनादधि ।
वहन्त्वणप्सव उपत्वा सोमिनो गृहम् ॥[66]
उदयप्रसन्नरुणा भावनो वृक्षा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत।
अक्रन्नुषासो वयुनानि पूर्वथा रूशन्तं भानुमरूषीरशिश्रयुः ॥
अधि पेशांसि वपने नृतूरिवापोर्णुते वक्ष उसैव्र वर्जहम् ।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्व ही गावौ न ब्रजं व्युषा आर्वतमः ॥[67]

द्वितीय प्रमुख ग्रंथ अछि प्राचेत्सक रामायण । एकर प्रादुर्भाव एक रमणीय भूमिकाक संग भेल । आदि कविक कलकंठ ओहि मादक अलस वातावरणमे क्रीड़ा करैत क्रौंच-युगलमे सँ एककें तड़पैत देखि फूटि पड़ल छलैक ।[68] एहि ग्रंथमे सुन्दरता आ करुणा दुहूक सामंजस्य भेल अछि । सौन्दर्य-क्षेत्रमे वृद्धि भेल, सौन्दर्य करुणाक साहाय्यसँ अन्तस्मे उतरि गेल । प्रकृतिक मादकता-आह्लादकता, शोक आ पीड़ामे बदलि गेल। ई प्रकृतिक दोसर रूप छल - करुणाक रूप । एहिसँ मानव विलग नहि भऽ सकल । तात्पर्य ई जे प्राचीनकाव्यमे सौन्दर्य-भावनापर सभसँ अधिक प्रभाव सुषमाशालिनी

प्रकृतियेक पड़ल । आदि कवि वाल्मीकि-काव्यमे जाहि प्रकृतिक नैसर्गिक शोभाक विस्तृत एवं भव्य वर्णन उपलब्ध अछि, तकरा देखि कऽ आदि कविक निसर्ग-प्रेमक सहजहि अनुमान कयल जा सकैछ । जाहि अहमन्यताक संग ओ वर्षा, शरत्, हेमन्त, गंगा, पर्वत आदिक चित्रात्मक वर्णन कयने छथि, ओ उपर्युक्त उक्तिक साक्षी अछि । उदारणार्थ –

व्यामिश्रितं सर्जकदम्बपुष्पैर्नवं जलं पर्वतधातुताम्रम् ।
मयूरकेकाभिरनुप्रयातं शैलापगाः शीघ्रतरं वहन्ति ॥
रसाकुलं षट्पदसन्निकाशं प्रभुज्यते जम्बुफलं प्रकामम् ।
अनेकवर्णं पवनावधूतं भूमो पतत्याम्रफलं विपक्वम् ॥
मुक्तासकाशं सलिलं पतद्वै सुनिर्मलं पत्रपुटेषु लग्नम् ॥
द्रष्टा विवर्णच्छदना विहंगाः सुरेन्द्रदत्तं तृषिताः पिबन्ति ॥

पहाड़ी धातु (गेउर सँ) सँ ताम्रवर्ण, सर्ज आ कदम्बक फूल सँ व्यामिश्रित, पिहकैत मोरक केका सँ गुंजित जलप्लावित पहाड़ी नदीसभ द्रुतगतिये बहि रहल अछि । रस सँ भरल, भ्रमर सन देखाइ पड़य वला जामुनक फल बेस खायल जा रहल अछि । पवन द्वारा आलोड़ित रंग-विरंगक आम्रफल पृथ्वीपर खसि रहल अछि । पत्रपुट सँ मोतीसन सुडौल निर्मल जल-विन्दु खसि रहल अछि, जाहि सुरेन्द्र-प्रदत्त जल-कणकेँ प्यासल पक्षी पाँखि पसारिकऽ प्रसन्नतापूर्वक पीबि रहल अछि । कवि कैकटा व्यापारकेँ एकहि माला मे गूथि देने छथि । पंचवटीमे हेमन्तक अनुपम दृश्यक सुन्दर वर्णन सेहो कयल गेल अछि । आदि काव्यमे अनेक एहन स्थल अछि जे ओहि कालक प्रकृति एवं मानवेतर बाह्य प्रकृतिमे रमल कवि-हृदयक द्योतन करैछ। मानव सौन्दर्यक चित्रण एक तँ भेल नहि अछि, जँ भेलो अछि तँ आवश्यकतानुसार। वीर, धीर, निर्भीक, आदर्श राम मे ओही रूपसभक आरोपन भेल अछि, जे एकटा वीर क्षत्रियमे आवश्यक होइछ । हुनका मुँहपर शौर्यक दीप्ति आ तेजक कांति छन्हि । विशाल वक्षस्थल आ भुजा जानु धरि पहुँचल –

बुद्धिमान्वीतिमान् वाग्मी श्रीमान् शत्रुनिबर्हणः ।
विपलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः ॥
समः समविभक्तांगः स्निग्धवर्णः प्रतापवान्
पीनवक्षा विशालाक्षो लक्ष्मीवान् शुभलक्षणः ॥[68]

प्राचीन संस्कृतक प्रमुख कविमे वाल्मीकिक पश्चात् कालिदासक स्थान अबैछ । कालिदासक कल्पना-प्रसूत रचनासभमे श्रृंगारक समस्त

अवयवक वर्णन बेस तल्लीनतापूर्वक कयल गेल अछि । ओ प्रकृति आ मानव-सौन्दर्यक यथार्थ, नैसर्गिक आ सफल चित्रांकन कयलन्हि अछि । मेघ जखन सन्देश लऽ कऽ जायत तँ मुग्धा कृषक बालिकासभ कोन सरल दृष्टि सँ ओहिदिस देखति, से कविकुल कलाधर कालिदासक तूलिका सँ चित्रित भऽ जागि उठल अछि –

त्वय्यायतं कृषिफमिति भ्रू, विलासानभिज्ञैः
प्रीतिस्निग्धर्जनपदवधूलोचनैः पीयमानः ।
सद्यः सीरोत्कर्षणसुराभिक्षेत्रमारुह्यमालं-
किंचित्पश्चातब्रज लघुगतिर्भूय एवोतरेण ॥[69]

एतबहि नहि, चपलाक चमक सँ भयभीत कातरचकित नयन केँ बिनु देखने, नयनक होयब व्यर्थ थिक –

विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौरांगनानां
लोलापांगर्यदि न रमसै लोचनैर्वंचितोसि ।

कालिदासक नारी-सौन्दर्यक आदर्श-कल्पना विरहिणी यक्षिणीक वर्णनमे मात्र एकहि श्लोकमे निहित अछि –

तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी,
मध्ये क्षामा चकितहरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः ।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां,
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः ।[70]

वर्ण्य विषयक कारणेँ आदि कविक रचनामे प्रकृतिक अपेक्षा श्रद्धेय नायक-नायिका (सीताराम)क वर्णनमे रूपचर्चा कम भेल अछि, से नहि कहल जा सकैछ । कालिदासक कुमारसंभवमे नायक-नायिका शंकर-पार्वती सेहो दिव्य पात्र छथि, मुदा मातृतुल्य पार्वतीक नख-शिख- वर्णनमे सेहो पूर्ण एक सर्ग लिखने छथि । मुदा हुनक काव्यमे प्रकृति-सौन्दर्य- प्रेम आ मानव-सौन्दर्य-प्रेमक अत्यंत रमणीय सामंजस्य भेल अछि । निसर्ग-कन्या शकुन्तला जतय एकदिस अपूर्व सुन्दर किशोरी अछि, ओतहि दोसर दिस ओ प्रकृति-पालिता बालिका सेहो आ ओकर सौन्दर्यक सम्पन्नता प्रकृति सँ परिपुष्ट अछि । तपोवनक तरुलताक ममता, पुनीत प्रसूनसभक प्रति अनुराग, पादपसमूहकेँ बिनु जल पिअयने स्वयं जल नहि ग्रहण करब शकुन्तलाक अगाध स्नेहक परिचायक थिक । उक्त चित्रण कालिदासक प्रकृति-प्रेमहिक प्रतिच्छाया थिक । प्रियमंडल (श्रृंगारक अनुरागिणी) होइतहु प्रकृति-बाला

शकुंतला पुष्प आ पल्लवकें नहि तोड़ैछ, 'नादत्ते प्रियमण्डनपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्' आ यैह कारण जे शकुन्तलाक अभूतपूर्व यौवन तथा शारीरिक-सौन्दर्यक आलंकारिक वर्णन करैत कविक कंठ फूटि पड़ैछ -

मलूनं अनाघ्रातं पुष्पं किसलय करुरु'हे' तथा
सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम् ॥ इत्यादि

आगाँ भवभूति मे प्रकृतिक परम मनोरम वर्णन प्राप्त होइछ, कादम्बरी मे सेहो आलंकारिक रीतिएँ दृश्यक प्राकृतिक वर्णन कयल गेल अछि । मुदा ओ वर्णन सेहो कविक अविचल प्रकृति-प्रेम आ सूक्ष्म निरीक्षण शक्तियेक परिचायक थिक । दोसर दिस भारवि, माघ, भट्ट, आदि कवि मे आलंकारिक रूढ़ि-वर्णनक प्राबल्य लक्षित होइछ । एही प्रवृत्तिक वृद्धिक कारणें नैषध मे नलक उद्यानस्थ वृक्षमे फड़ल बेलक वर्णन करैत कवि कहि उठैछ -

स वारनारीकचर्साचितोपमं
ददर्श मालूरफलं पचैलिमम् ।[71]

वृहत्रयीक सर्वश्रेष्ठ, प्रौढ़ आ प्रगल्भ कल्पनाक आगम नैषध महाकाव्यमे जाहि तन्मयता आ अनुरुक्ति सँ मानव-सौन्दर्यक, नल आ दमयन्तीक शारीरिक वासनात्मक रूपज्वालाक प्रदीप्ति उद्‌भाषित होइत देखना जाइछ, से प्रकृति-वर्णन मे नहि । नैषधक चन्द्रोपालभ्य यद्यपि संस्कृत साहित्यक एकटा अपूर्व रत्न थिक, तथापि ओहि मे प्रकृति-सौन्दर्यक अपेक्षा श्रृंगारांग-वर्णन दिस विशेष अनुरक्ति बुझल जाइछ । निम्नांकित श्लोक उपर्युक्त कथनक पुष्टिक प्रमाण थिक -

अपि, विधुं परिपृच्छ गुरोः कुतः स्फुटमशिक्ष्यत दाहवदान्यता ।
ग्लपितशम्भुगुगलाद् गरलत्वया किमुदधो जड़ वा बड़वानलात् ॥[72]

एवं प्रकारें संस्कृत साहित्यक किछु अमर कलाकारक प्रकृति एवं मानव सौन्दर्य-चित्रणक पश्चात् मैथिली साहित्यक कविशेखराचार्य ज्येतिरीश्वर कृत 'वर्णरत्नाकर' मे कतिपय स्थल पर मानवीय सौन्दर्य तथा प्रकृति-सौन्दर्यक अनुपम वर्णन उपलब्ध होइछ ।

एकर पश्चात् विद्यापतिक रचना मे आबिकऽ सौन्दर्य भावना अधिक सुकोमल भऽ गेल अछि । विद्यापति जाहि युग मे आविर्भूत भेल छलाह, ओ श्रृंगारिक भावक युग छल । जाहि श्रृंगार सरस्वती कें वेदव्यास श्रीमद्‌भागवत तथा ब्रह्मवैवर्त आदि पुराण सभ मे प्रवाहित कयने छलाह, ओकरहि एक नूतन स्रोत जयदेव अपन गीत गोविन्द मे बहौलन्हि, कारण लोक रुचि ओहि

दिस उन्मुख छलैक । मैथिल कोकिल ओहि प्रवाहक सिंहावलोकन कयलनि आ अभिनव जयदेव बनि ओकरा आर तीव्र कऽ देलन्हि । यैह कारण अछि जे विद्यापति मे मानव-सौन्दर्य मुखर भऽ उठल । हुनक सौन्दर्य भावना प्रकृति सँ विमुख देखना जाइछ । यदि प्रकृति-सौन्दर्यक किंचित आभास भेटबो करैछ तँ उद्दीपनक रूप मे किंवा अप्रस्तुतक रूप मे । वियोगक भावना कें उद्दीप्त करबाक लेल आकाश मे उठल बादल वा निर्मल नीलाम्बर मे झिलमिलाइत तारा कें आँचर मे लऽ कय चारू भर पसरल इजोरियाक निर्देश कऽ हुनक प्रकृति-प्रेम परिश्रान्त भऽ जाइछ । मुदा जखन नारी आ नारीक नख-शिख, अनुभाव आदिक वर्णन एवं नायिका-भेद तथा अनुभावादिक शास्त्र-वर्णित रूढ़-वर्णनक अपेक्षा अनेक मौलिक तथा नव व्यक्तिगत अनुभव सँ प्राप्त सौन्दर्यक वर्णन करैछ, राधाक रूप-वर्णन करैत-करैत प्रकृतिक उल्लेख प्राप्त भऽ जाइछ । ओहो मात्र एहि लेल जे समस्त प्राकृतिक उपकरण ओहि रूपहि सँ उद्‌भासित अछि, समस्त मंजुल प्राकृतिक पदार्थक सार ओएह अछि -

चाँद सार लए मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे ।
अमिय घोय आँचर धनि पोछलि
दह दिस भेल इँजोरे ॥ ।14।

विद्यापतिक रूप-सौन्दर्य प्रायः जयदेव एवं संस्कृतक अन्य कविलोकनि सँ प्रभावित अछि, मुदा विद्यापतिक सौन्दर्य-निरूपाणक अपनहि मौलिक आ आकर्षक पद्धति अछि -

सजनी अपरूप पेखल रामा
कनकलता अवलम्बन ऊअल
हरिन-हीन हिम धामा ।

सौन्दर्य कोनो उपकरणक अपेक्षा नहि करैछ, ओकरा बाह्य कृत्रिम उपादानक आवश्यकता नहि, भावुक कलाकार कें अपन राधा मे सेहो ओएह सहज छवि दृष्टिगत होइछ -

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि ।

कतहु-कतहु सौन्दर्यक सर्वव्यापिनी ज्योति कवि कें मानव-जगत सँ उपर उठा दैछ, ओ अलौकिक भऽ जाइछ । जाहि-जाहि ठाम राधाक चरण

युग पड़ैछ ओतय सरोरूह उत्पन्न भऽ जाइछ, जतय ओकर गतिक चम्पकद्युति चमकि उठैछ, ओतय विद्युत उत्पन्न भऽ जाइछ -

जँह-जँह नयन विकास, तँहि-तँहिकमले प्रकास ।
जँह-जँह लहु लहु हास, तँहि-तँहि अमिय विकास ।

कविताक सौन्दर्य ओतहि होइछ, जतए ओ संसारक अव्यक्त सौन्दर्य कें व्यक्त कऽ दैछ ।[73] विद्यापतिक कला ओही सौन्दर्य कें व्यक्त करबा मे समर्थ भेल अछि । कविक सौन्दर्य निखरल अछि, अंग-प्रत्यंग मे उद्भासित भऽ रहल अछि -

गुरुजन समुखहि भाव-तरंग ।
जतनहि बसन झाँपि सब अंग ॥

एवं प्रकारें विद्यापतिक अधिकांश गीतिपद प्रेम एवं सौन्दर्यक अमिय-धारा सँ अभिसिंचित अछि । विद्यापतिक सौन्दर्य-भावनाक विशद् विश्लेषण एही अध्याय मे आगाँ कयल गेल अछि, अतः एहि ठाम विस्तार मे जयबाक आवश्यकता नहि ।

निष्कर्ष

(1) भारतक शस्य-श्यामल भूमि सौन्दर्यक अक्षय भण्डार थीक । प्राकृतिक श्री-सुषमा सँ सम्पन्न एहि देशक कण-कण सौन्दर्य-माधुरी सँ परिप्लावित अछि । यैह कारण जे विद्यापति सँ पूर्व भारतीय साहित्यमे सौन्दर्य-चित्रणक एक सुदीर्घ एवं वैभवशाली परम्परा उपलब्ध अछि ।

(2) भारतीय साहित्यमे सर्वप्रथम ऋग्वेदक उषासूक्त मे रमणीयताक, सौन्दर्यक प्रथम साहित्यिक अभिव्यक्ति उपलब्ध होइछ । तपोवनक धूम्रभरित वातावरणहुँ मे सौन्दर्य-प्रतिमा आवृत नहि भऽ सकल। धूम सँ आरक्त नेत्रहुमे सौन्दर्य पारखी प्रतिभा निहित छल जे ऋग्वेद मे उषा-सूक्तक रूप मे प्रस्फुटित भेल ।

(3) ऋग्वेदक पश्चात् वाल्मीकीय रामायण मे प्रकृतिक एक सँ एक भावक सौन्दर्य चित्रण उपलब्ध अछि । एहि ग्रंथमे सौन्दर्य आ करुणा दुनूक सामंजस्य भेल अछि, मुदा सौंदर्य भावना पर सभ सँ अधिक प्रभाव सुषमाशालिनी प्रकृतियेक पड़ल अछि । एकर अतिरिक्त एहि ग्रंथ मे मानवीय सौन्दर्यक सेहो अनुपम चित्र अंकित अछि ।

(4) वाल्मीकिकेर पश्चात् महाकवि कालिदासक कल्पना-प्रसूत रचना सभमे प्रकृति आ मानव-सौन्दर्यक यथार्थ, नैसर्गिक एवं सफल

चित्रांकन भेल अछि । शकुन्तलाक अभुक्तपूर्व यौवन तथा शारीरिक सौन्दर्यक आलंकारिक वर्णन 'अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहे' तथा 'सरसिज मनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्' मे देखल जा सकैछ ।

(5) कालिदासक नारी-सौन्दर्यक आदर्श-कल्पना विरहिणी यक्षिणीक सौन्दर्य-वर्णन मे तँ भेले अछि, निसर्ग-कन्या शकुन्तलाक प्रकृति-परिपुष्ट सौन्दर्य-सम्पन्नताक चित्रण अद्वितीय एवं अप्रतिम अछि। 'कुमार संभव' मे नायक-नायिका शंकर-पार्वती दिव्य पात्र छथि, तथापि मातृतुल्य पार्वतीक नख-शिख-वर्णन अपूर्वहि अछि । हुनक काव्यमे प्रकृति-सौन्दर्य-प्रेम तथा मानव-सौन्दर्य-प्रेमक अत्यंत रमणीय सामंजस्य भेल अछि ।

(6) भवभूतिक रचनामे प्रकृतिक परम मनोरम रूप उपलब्ध अछि। 'कादम्बरी' मे सेहो आलंकारिक रीतियें प्रकृतिक दृश्य-वर्णन कयल गेल अछि, तैयो ओ वर्णन कविक अविचल प्रकृति-सौन्दर्य-प्रेम एवं सूक्ष्म निरीक्षण शक्तिक परिचायक थीक ।

(7) भवभूतिक अतिरिक्त भारवि, माघ, भट्ट आदि कविक काव्य मे सौन्दर्य चित्रण तँ भेल अछि, परंच ओहि मे आलंकारिक रूढ़ि-वर्णनक प्राबल्य लक्षित होइछ ।

(8) वृहत्रयीक सर्वश्रेष्ठ, प्रौढ एवं प्रगल्भ कल्पनाक आगम 'नैषध' महाकाव्य मे जाहि तन्मयता एवं अनुरक्ति सँ मानव-सौन्दर्यक, नल आ दमयन्तीक शारीरिक वासनात्मक रूपज्वालाक प्रदीप्ति उद्भाषित होइत देखना जाइछ, से अन्यत्र दुर्लभ अछि । नैषधक चन्द्रोपालंभ यद्यपि संस्कृत साहित्यक एक अपूर्व रत्न थीक, तथापि ओहि मे प्रकृति-सौन्दर्यक अपेक्षा श्रृंगारांगे दिस विशेष अनुरक्ति देखना जाइछ ।

(9) संस्कृत साहित्यक पश्चात मैथिली साहित्यक कविशेखराचार्य ज्योतिरीश्वरक 'वर्णरत्नाकर' मे कतिपय स्थल पर मानव सौन्दर्य एवं प्रकृति सौन्दर्यक अनुपम वर्णन उपलब्ध अछि। भाव ई जे विद्यापतिक सौन्दर्य-भावनाक पाछाँ एक सुदीर्घ सौन्दर्य-चित्रणक परम्परा उपलब्ध अछि जाहि केर भित्ति पर विद्यापतिक अभिनव सौन्दर्य-चित्र सभ अंकित भेल अछि ।

विद्यापतिक सौन्दर्य-भावना

मानव स्वभावतः सौन्दर्य-प्रेमी अछि । ओ अनादिकालसँ सौन्दर्यक उपासना करैत रहल अछि । ओ जीवनसँ सम्बद्ध प्रत्येक पदार्थमे सौन्दर्यकें देखय चाहैछ, सौन्दर्य सँ ओ आनन्द प्राप्त करैछ । मानवक यैह सौन्दर्यप्रियता

विभिन्न कलाक जन्मदात्री अछि । सौन्दर्यक रमणीय अभिव्यक्ति काव्य-कलाक साध्य रहल अछि । सौन्दर्यक अनुभूतिसँ सौन्दर्यक अभिव्यक्तिक लेल आकुल कवि-हृदय शतधा स्वरमे फूटि पड़ैछ - कविताक शब्द-शब्द सँ सौन्दर्य-मंदाकिनी प्रवाहित होमय लगैछ, पंक्ति-पंक्ति सँ सौन्दर्य निर्झनी बहय लगैछ आ चहुधा रूपक वितान पसरि जाइछ आ मानव-हृदय सौन्दर्य-लहरीक अनुगुंज सँ आप्यायित भऽ जाइछ । कवि अपन प्रतिभा द्वारा जाहि सौन्दर्यक साक्षात्कार करैछ, ओकरा अपना कविता द्वारा दर्शक वा श्रोताधरि सम्प्रेषित करैछ । अतः कवि-प्रतिभाक वरेण्यते पर सौन्दर्य-श्रेष्ठता आश्रित रहैछ ।

विद्यापति मुख्यतः सौन्दर्य आ प्रेमक, यौवन आ श्रृंगारक कवि छथि । प्रेम आ सौन्दर्यक पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । विद्यापतिक प्रेम, सौन्दर्य पर आश्रित अछि । सौन्दर्य आलम्बनक धर्म थिक आ प्रेम आश्रयक भावना । आश्रयक हृदयमे प्रेम-भावना आलम्बनक सौन्दर्यसँ प्रस्फुटित होइछ । विद्यापतिक सौन्दर्य-प्रेम पदावलीक पदसभमे मार्मिक ढंग सँ प्रस्फुटित भेल अछि । ओ पार्थिव, इन्द्रियग्राह्य सौन्दर्यक उपासक छथि । हुनक सौन्दर्य, अतीन्द्रिय वायवीय सौन्दर्य नहि, कोनो अज्ञात लोकक रहस्यमय वस्तु नहि, प्रत्युत पार्थिव जगतक सुखद विभूति थिक । ओ सौन्दर्यकेँ वास्तविक पृष्ठभूमिये पर परखबाक प्रयास कयने छथि । सौन्दर्यक विभिन्न अंग पर प्रथम एवं द्वितीय अध्यायमे विस्तारपूर्वक चर्च कयल गेल अछि । अतः एहिठाम विद्यापतिक सौन्दर्य-भावना पर विचार करब हमर अभिप्रेत अछि ।

विद्यापतिक सौन्दर्य-भावनाकेँ मुख्यतः दू श्रेणीमे विभक्त कयल जा सकैछ - (1) मानवीय सौन्दर्य तथा (2) प्रकृति सौन्दर्य । मानवीय सौन्दर्यक अन्तर्गत स्त्री-सौन्दर्य तथा पुरुष-सौन्दर्यक चित्रण भेल अछि । एकरहि अन्तर्गत, अध्ययनक सुविधाक लेल वैज्ञानिक आधार पर अपरूपक सौन्दर्य, चिरनूतन-सौन्दर्य, शारीरिक सौन्दर्य (बाह्य एवं आन्तरिक), सहज सौन्दर्य, पारस सौन्दर्य आदिकेँ लेल जा सकैछ तथा प्रकृति सौन्दर्यक अन्तर्गत वर्ण्य-विषयक सौन्दर्य तथा उद्दीपनगत सौन्दर्यकेँ समाहित कयल जा सकैछ ।

विद्यापतिक सौन्दर्यक व्यापक रूप

विद्यापति वस्तुतः सौन्दर्यक कवि छथि । सौन्दर्य हुनक दर्शन छन्हि, सौन्दर्ये हुनक जीवन-दृष्टि । एहि सौन्दर्यकेँ ओ नाना रूपमे देखने छलाह,

एकरा कुशल मणिकार जकाँ ओ चुनलन्हि, सजौलन्हि, सँवारलन्हि आ आलोकित कयलन्हि । सौन्दर्य मोनकेँ कतबा भाव-विह्वल बना दैछ, से विद्यापति जनैत छलाह । यैह कारण जे ओ अपरूप वा सौन्दर्यक अतिशयताकेँ एक सजीव पदार्थक रूपमे ग्रहण कयने छथि ।

कवि वा कलाकारक लेल सौन्दर्यक दोबर महत्व होइछ । एक तँ ई जे ओ वस्तुक सौन्दर्यक प्रति वा अपन सौन्दर्य-प्रिय रुचिक कारणेँ कोनो विशेष वस्तुक प्रति अधिक जागरूक होइछ । ओ वस्तुक विषयमे विशेष रूपसँ सोचैछ । दोसर एहि अनुभूत सौन्दर्यकेँ अभिव्यक्ति देबाक लेल ओकरा ई ध्यान राखय पड़ैछ जे ओहि वस्तुक सौन्दर्यकेँ सही-सही व्यक्त कऽ सकय । एही कारण सँ कविक उत्तरदायित्व दोबर भऽ जाइछ । संसार जतबा देखबामे सोझ लगैछ, ओतबा ने ओ सोझ अछि, ने सरल । एच.एच. परखूरष्ट लिखने छथि जे कलाक मुख्य ध्येय अपन शब्दक माध्यमसँ विश्वजनित संघर्षकेँ प्रतिध्वनित करब थिक । ओ प्रत्येक वस्तु सुन्दर थिक जे कोनो सफल माध्यमक सही प्रयोग सँ उत्पन्न होइछ, जे ओकरा व्यक्त करैछ ।[74] एहिठाम लेखक सौन्दर्यकेँ अभिव्यक्तिमे निहित कहलन्हि अछि ।

एहि प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे कोनो कविक सौन्दर्य-भावनाक मूल्यांकन कविक विषय-निर्धारणक रुचि तथा प्रेषणीयताक विधिक आधार पर संभव भऽ सकैछ । अर्थात् कवि कोन विषयकेँ कतबा सूक्ष्मताक संग चुनैछ तथा ओ वक्तव्य वस्तुकेँ कोन प्रकारेँ प्रेषणीय बनबैछ, ओकर शैली, उपमान, आशय सभ मिलि ओकर सौन्दर्यबोधक परिचय दैछ ।

विद्यापतिक सौन्दर्य-बोधक परीक्षण एहि दुनू धरातलकेँ स्पर्श करैछ । ओ मुख्यतः सुन्दरम्क कवि छथि, मुदा हुनक सुन्दर मात्र सुन्दरे नहि 'अपरुप' छन्हि । अपरुप अर्थात् अपूर्व । ई अपरुप अलौकिक थिक । सौन्दर्य सम्बन्धी हुनक सम्पूर्ण दृष्टिकोण एहि अपरुप (सौन्दर्य) शब्दमे समाहित भऽ गेल अछि । अपरुप ओ रूप वा सौन्दर्य थिक जे विद्यापतियेक शब्दमे 'तिल-तिल नूतन होय' अर्थात् जे अनुपम आ नित नवीन अछि । हुनक चित्त एहन चित्रकेँ प्रस्तुत करैछ, जे अलौकिक वा ओहूसँ उपर पारलौकिक कोटिक अछि । ओकर चित्रकारी कठिनहि नहि, असंभव सेहो अछि । वर्णनक असंभावना तुलसीक भाषामे 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी'क कारण सेहो भऽ सकैछ तथा बिहारीक अनुसार चित्रकारक असमर्थताक कारण सेहो -

लिखन बैठ जाकी छबी, गहि गहि गरब गरूर ।
भए न केते जगत के, चतुर चितेरे कूर ॥

एहि अपूर्व सुन्दरतहिकेँ यथा-सामर्थ्य चित्रित करबाक प्रयास विद्यापति द्वारा कयल गेल अछि । जखन ओ राधा वा कृष्णक रूप-वर्णन करय लगैछ तँ ई कहब नहि बिसरैछ जे ई 'अपरुप' सम्पूर्ण त्रिभुवनकेँ विजित कऽ लेने अछि, ई 'अपरुप' ककरहु चित्त के चंचल कऽ सकैछ, कोनो ज्ञानीकेँ क्षुब्ध कऽ सकैछ -

सुधामुखि को विधि निरमिल बाला ।
अपरुप रूप मनोभव - मंगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥[75]

'माधव की कहब सुन्दरि रूपेँ, सजनी अपरुप पेखल रामा, ए सखि पेखलि एक अपरुप' आदि पंक्ति सँ आरम्भ भेनिहार बीस सँ अधिक गीतमे एहि अपरुप-सौन्दर्यक माया-संकुल प्रभावक निगूढ़ व्यंजना कयल गेल अछि । विद्यापतिक सौन्दर्यक प्रभाव विश्वव्यापी अछि । एकरा सम्पर्कमे सभ वस्तु सौन्दर्यकेँ धारण कऽ लैछ । एहि अपरुपक समक्ष समर्पण नहि कऽ एकरा जानबाक निरन्तर अतृप्त इच्छे हुनका चालित बनौने रहैछ आ यैह हुनक सौन्दर्य-बोधक अद्वितीयता अछि, यैह हुनक सौन्दर्यपारखी नेत्रक वैशिष्ट्य अछि -

जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल ।

(क) मानवीय सौन्दर्य :

विद्यापति श्रृंगारी कवि छथि । एहि श्रृंगारक आलम्बन छथि राधा आ कृष्ण । हुनक सौन्दर्य-वर्णन वा रूप-चित्रण उद्दीपन विभावक कोटिमे अबैछ । राधाक सौन्दर्य, अम्लान यौवन, सुषमाशाली अछि । पदावलीक अधिकांश पदमे कविक दृष्टि विशेष रमल अछि । राधाक भुवनमोहिनी छविक अत्यन्त हृदय-ग्राही, मादक चित्र पदावलीमे अंकित भेल अछि । राधाक एहि प्रभावशाली, मनोरम आ अपरिमेय सौन्दर्य-अंकनमे विद्यापतिक अद्भुत कौशल उद्भासित भेल अछि -

देख देख राधा-रूप अपार ।
अपरुवके विहि आनि मिलाओल खितितल लावनि-सार ॥
अंगहि अंग अनंग मुरछाएत हेरए पड़ए अधीर ।

मनमथ कोटि मथन करु जे जन से हेरि महि मधि गीर ॥
कत-कत लखिमी चरणतल नेओछए रंगिनि हेरि विभोरि ।[76]

राधाक अद्भुत रूप पृथ्वीपर लावण्यक सार थिक । करोड़हु कामदेवक मथन कयनिहार जितेन्द्रिय ऋषि-मुनि एवं योगी सेहो एहि रूपकेँ देखि पृथ्वी पर पछड़ि कय खसि पड़ैछ । रूप-लावण्यक प्रतिमा-कतेकहु लक्ष्मीकेँ राधाक चरणपर न्योछावर कयल जा सकैछ ।

विद्यापतिक राधाक सौन्दर्य स्थूल, मांसल एवं मादक भइयोकऽ सम्पूर्ण जगत्केँ प्रभावित कयनिहार अछि । विद्यापति अपन काव्यमे राधाक आन्तरिक एवं बाह्य दुनू रूपक सौन्दर्यांकन कयने छथि । मुदा एहि मे बाह्य सौन्दर्यहिकेँ प्रमुखता भेटल अछि । सम्पूर्ण भारतीय साहित्यमे नख-शिख-श्रृंगार-वर्णन नारीक बाह्य-रूप-कल्पने केँ प्रकट करैछ । अन्य देशक साहित्यमे एकर एहि प्रकारक क्रमबद्ध वर्णन प्रायः नहि प्राप्त अछि । मुदा कोनो-ने-कोनो रूपमे एकर चित्रण प्रायः सभ देशक साहित्यमे उपलब्ध अछि। भारतीय नख-शिख-वर्णन सँ बहुत-अधिक साम्य रखनिहार नख-शिख-वर्णन 'सांग आफ सांग' पुस्तक मे देखल जाइछ । एहिमे हिब्रू नारी-सौन्दर्यक कल्पना कयल गेल अछि।[77] मुदा-नख-शिख-वर्णनक रूढ़ परिपाटी प्रेमोत्पादनमे कोनो प्रकारेँ सहायक सिद्ध नहि होइछ । नख-शिख-वर्णनक रूढ़ परिपाटीक अर्थ अछि फराक सँ नख-शिख-वर्णन केँ स्वतंत्र विषय मानिकऽ बहुतो ग्रंथक रचना कयल गेल । एहि प्रकारक नख-शिख-वर्णन सँ प्रेमक कोनो प्रत्यक्ष वा परोक्ष सम्बन्ध नहि देखना जाइछ । हँ, नख-शिखक अन्तर्गत वर्णित अवयवमे किछु अंग एहन अवश्य अछि जे अन्य प्रसंगमे वर्णित भेलहुँ उत्तर पर्याप्त कामोद्दीपक होइछ । एकरा मनोवैज्ञानिक शब्दावलीमे अप्रधान यौन उत्पादन कहल जाइछ ।

यौन सम्बन्धी प्राथमिक उपादानक अपेक्षा ई अप्रधान यौन उत्पादन आकर्षणक अधिक महत्वपूर्ण केन्द्र अछि । स्ट्रट्ज अप्रधान यौन उत्पादनक पैघ सूची प्रस्तुत कयने छथि । हेवलाक एलिस एहिमेसँ दू प्रमुख उपादान स्तन आ नितम्बकेँ सर्वाधिक महत्व प्रदान कयने छथि। विकसित यौवनक चिह्नसभमे ओ पाँच वस्तुक नामांकन कयने छथि - लावण्य, विस्फारित नयन, वक्ष, त्रिबलीसँ युक्त क्षीण कटि आ नितम्ब ।[78] नायिकाभेदक ग्रंथसभमे प्रायः नायिकाक एही अंगसभक विशेष वर्णन भेल अछि । वयः सन्धिकालक चित्रसभमे एकरसभक रेखा अत्यधिक स्पष्ट आ महत्वपूर्ण अछि । एही सूची

मे मुखमंडल आ केशकेँ सेहो परिगृहीत कयल जाइछ । विद्यापतिक पदावलीमे नायिकाक प्राय: सभ परम्परित अवयवक सुन्दर चित्रण भेल अछि। अत: आब एक-एक केर सम्बन्धमे विस्तारपूर्वक विचार करब आवश्यक बुझना जाइछ ।

शारीरिक सौन्दर्य (बाह्य सौन्दर्य)

नेत्र : नेत्र वर्णन कविलोकनिक अत्यन्त प्रिय विषय रहल अछि। पूर्वमे कहल जा चुकल अछि जे आँखिक रूपमे सौन्दर्यक वस्तुनिष्ठ सत्ताकेँ स्वीकार कयल गेल अछि । प्रत्येक अंग आ उपांगक सम्बन्धमे देश-विदेशक अपन आदर्श होइछ । काव्यमे यैह आदर्श कालान्तरमे रूढ़िक रूप धारण कऽ लैछ । मैथिली साहित्यक विद्यापति-युगक काव्यमे एहि रूढ़िसभक यथेष्ट रूपमे प्रयोग भेल अछि । संस्कृतक आचार्यलोकनि नखशिखक प्रत्येक अंगक पृथक्-पृथक् उपमान निश्चित कऽ देने छथि । केशवमिश्रक 'अलंकार शेखर' मे मृग, मृग-नेत्र, कमल, कमलपत्र, मत्स्य, खंजन, चकोर, केतकी, भ्रमर, कामवाण आदि केँ नेत्रक उपमान कहल गेल अछि ।[79] काव्यकल्पलतावृत्तिकार 'दृशोश्चकोर हरिण मदिरा: खंजनोम्बुजम्' मे नेत्रक उपमा सभक उल्लेख कयने छथि।[80] एही प्रकारेँ अन्य आचार्यगण सेहो नेत्रक उपमानकेँ परम्पराक रूपमे ग्रहण कयने छथि ।[81]

उपर्युक्त उपमानसभक विश्लेषण कयलासन्ता ई ज्ञात होइछ जे एहि उपमानसभक कल्पनाक मूलमे आँखिक रूप, गुण आ व्यापार निहित अछि। दोसर शब्दमे एकरा एहि रूपेँ कहल जा सकैछ जे उपरि उद्धृत उपमानसभमे नेत्रक रूपसाम्य अछि, किछुमे धर्मसाम्य अछि आ किछुमे प्रभाव साम्य । आँखिक लेल मात्र रूप वा आकारसाम्यवला उपमान सभक प्रयोग बड़ थोड़ भेल अछि । सारूप्यमूलक उपमान मे सेहो गुणेक समावेश सर्वत्र प्राप्त होइछ। मृगक आँखिकेँ मात्र दीर्घताक कारण सुन्दर नहि मानल गेल अछि, प्रत्युत ओकरामे एक प्रकारक निश्छलता आ चांचल्य सेहो पाओल जाइछ । कमलदलमे आकारक संग ओकर शीतलताक गुण सेहो निहित रहैछ । एहिप्रकारेँ प्रभावसाम्यमूलक उपमानसभमे गुण आ आकारक सेहो समावेश होयबाक चाही । आँखिक मारिक हेतु प्राय: वाणक उपमान ग्रहीत भेल अछि। वाणक नोक नयनक कोर सँ बहुत अंशमे साम्य रखैछ । प्राय: प्रेम व्यापारक स्थापनामे आँखिक रूप, गुण आ क्रिया-विवेचन मात्र ओकर संदर्भ आ प्रयोगहिक आधार पर कयल जा सकैछ । कुशल कवि एहि घसल

उपमानक विशिष्ट प्रयोग कए एक नवीन सौन्दर्यक सृष्टि कऽ दैछ । कालिदास 'चकित हरिणी प्रेक्षणा'[82] कहि कऽ जे चित्र अंकित कयने छथि, से हुनकहि प्रतिभाक अनुकूल अछि । नेत्र-व्यापारमे कटाक्षक प्रभावोत्पादकता निर्विवाद अछि । एकर निर्धारित उपमान यमुनातरंग, भृंगावली, विषामृत, हलाहल, सुधा आदि थिक ।[83] आँखि क श्वेत, श्यामल आ रतनार[84] रंगक वर्णनकेँ कवि रूढ़ियेमे परिगणित कयल जाइछ । विद्यापति प्रेम व्यापारक उत्पादनमे आँखिक रूप, रंग, गुण आ व्यापारक वर्णन करबाक लेल जाहि उपमानसभक सहायता लेने छथि, ओहिमे अधिकांश यद्यपि परम्परा सँ गृहीत अछि, मुदा किछु हुनक अपनहु देन छन्हि । आँखिक रूप, रंग आ व्यापारक क्रमिक निरूपणक पूर्व रूढ़ तथा नवीन उपमानक प्रयोगक विवेचना आवश्यक अछि ।

रूढ़ उपमानक प्रयोग :

संस्कृतक अलंकार ग्रंथसभमे आँखिक उपमान भ्रमर, मृगनेत्र, कमल-पत्र, मत्स्य, खंजन, मेघ, चकोर आदि सँ देबाक परिपाटी रहल अछि। विद्यापति आँखिक उपमा प्राय: उपर्युक्त सभ उपमानसभसँ देने छथि, मुदा एकर प्रयोग चमत्कारक लेल वा उपमानसभकेँ एक स्थानपर एकत्र करबाक लेल नहि, प्रत्युत् सौन्दर्यकेँ प्रभावोत्पादक एवं भावोद्रेकपूर्ण करबाक लेल कयने छथि । उदाहरण द्रष्टव्य अछि :-

(1) कुटिल कटाख लाट पड़ि गेल
मधुकर डम्बर अम्बर लेल (पद 30)

(2) लोचन तूल कमल नहि ।

(3) ता पर चंचल खंजन जोर (पद 36)

(4) बादल लोचन चोर
पिया मुख रुचि पिबए धाओल
जनि के चांद चकोर (पद 38)

(5) सावन घन सम झर दू नयन (पद 40)

(6) नीर निरंजन लोचन राता
सिंदुर मंडित जनु पंकज पाता (पद 25)

(7) हरिन नयन-भय, सर भय कोकिल ।

(8) लोचन जुगल भृंग अकारे ।
मधुक मातल उड़य न पारे ।[85]

उपर्युक्त उदाहरणसभमे आँखिक उपमा क्रमशः मधुकर, कमल, खंजन, चकोर, कमल-पत्र, हिरण आदि सँ देल गेल अछि जाहि सँ आँखिक सौन्दर्य-वर्द्धन एवं प्रेमव्यापारमे उत्तेजनाक सृजन भेल अछि । वस्तुतः रूढ़ उपमानक प्रयोगहु सँ विद्यापति जाहि सौन्दर्य आ प्रेमक व्यंजना कयलन्हि अछि, ओ अन्यत्र प्रायः दुर्लभ अछि ।

किछु नव उपमानक प्रयोग :

विद्यापतिक गीतिपदमे तँ रूढ़ उपमानसभक सुष्ठु प्रयोग भेले अछि, संगहि किछु नव उपमानक प्रयोग द्वारा ओ अपन मौलिकताक परिचय देलन्हि अछि । वस्तुतः नव उपमानक प्रयोग सँ आँखिक सौन्दर्य-वर्द्धन मे साहाय्य प्राप्त भेल अछि । यथा -

सहजहि आनन सुन्दर रे भौह सुरेखल आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे उड़ए पसारल पाँखि ।

'भौंह सुरेखल आँखि' कहि कऽ तथा 'पंकज मधु पिबि मधुकर' सँ सादृश्य देखाकऽ कवि नेत्र-सुषमा केँ चमत्कृत कऽ देलन्हि अछि । मुख-कमलक मधुपानकऽ भ्रमर सदृश कारी आँखि, पाँखि पसारिकऽ उड़बाक उपक्रम कऽ रहल अछि । पपनीक झलफलयबाक आ नेत्र-भ्रमरक उड़बाक अपूर्व सादृश्य विद्यापतिक अप्रतिम प्रतिभाक प्रमाण थिक । भ्रमर सँ तँ उपमा प्रायः सभ कवि द्वारा देल गेल अछि, मुदा विद्यापतिक सूक्ष्म दृष्टि ओहि भ्रमर द्वय के नहि उड़ि पयबाक कारण रूप-कामदेव द्वारा काजरक धनुष सँ बान्हि लेबाक कार्य धरि सेहो गेलन्हि अछि । एकरहि एक सौन्दर्य-वर्णन द्वारा इतर सौन्दर्य-सर्जन करब कहल जाइछ -

1. लोचन जुगल भृंग अकारे । मधुक मातल उड़ए न पारे ।
भउँहक कथा पूछह जनू । मदन जोड़ल काजर धनू ।
2. सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचन तरल तरंग । (24)
3. नयन नलिनि दओ अंजने रंजई भौंह विभंग विलासा ।
चकित चकोर जोर विधि बाँधल केवल काजर पासा ।। (629)
4. नयन देखिअ जनि असन कमलदल
मधु लोभे बैसल भमरे । (2)
5. भमर मधु पिबि पिबि मातल शिशिरे भीजल पाँखी ।
अलप काजरे नयन आँजल ननूमि देखिअ आँखि । (न.ग्र. 78)

6. चाँद सार लय मुखघटना करु लोचन चकित चकोरे । (21)
7. सारंग नयन वयन पुन सारंग । (25)
8. चहकि चहकि दुह खंजन खेल । (27)
9. दुअओ नयन तोर विसम मदन सर
शालय हृदय हमार । (40)
10. हटिए हलिय निअ नयन-चकोर ।
पीवि हलत धसि ससिमुख मोर ।। (53)
11. नीन्द भरल छल लोचन तोर ।
अमिय भरमे जनि लुबुध चकोर ।। (68)
12. नलिनि चकोर सफरि वर मधुकर
मृगि खंजन जिनि आँखी । (89)
13. उजर नयन नलिना ।
काजरे न कर मलिना ।। (97)

काजरक कारी डोरी जतय नेत्रक शोभा बढ़यबा तथा नयन-भ्रमरकेँ बान्हि सकबामे समर्थ अछि, ओतय आलक्तक लोचन सेहो प्रेमीकेँ वाण-विद्ध करबामे समर्थ अछि । स्नानक बाद लाल भेल आँखिक उपमा मात्र कमल-पत्रहि सँ नहि देल गेल, ओना कमलपत्रो लाल भऽ सकैछ । मुदा एहि ठाम श्वेत कमल-पत्र जे सिन्दुरता सँ मंडित हो - से कहल गेल अछि। कारण आँखि निरन्तर लाले नहि रहैछ । श्वेत आँखि सद्यः स्नानक पश्चात् लाल अछि । ई लाली सिन्दूर सदृश अछि । 'सिन्दूर' शब्दक प्रयोग द्वारा नायिकाक सौभाग्य आ सौन्दर्यक सेहो संकेत देल गेल अछि ।

नेत्र-रंग (वर्ण) :- काव्यमे अनेक रंगक आँखिक वर्णन कयल जाइछ-कखनहुँ श्याम, कखनहुँ श्वेत, कखनहुँ लाल आ कखनहु मिश्रित रंग।[86] मुदा आँखि केँ विशेष प्रभावशाली बनयबाक लेल प्रायः ओकर मिश्र रंगक-श्वेत, श्याम आ रतनारक वर्णन अधिक भेल अछि। हिन्दीक कवि रसलीन अपन एक अत्यंत प्रसिद्ध दोहामे आँखिक प्रमुख वर्ण एवं ओकर प्रभावक चमत्कारपूर्ण चित्र प्रस्तुत कयने छथि -

अमी हलाहल मद भरे, स्वेत स्याम रतनार ।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ।।

श्वेत, श्याम आ रतनार रंगक अलग-अलग वर्णनमे एहि बातक ध्यान राखल गेल अछि जे ओ आँखिकेँ कतबा शोभन, गुणसम्पन्न आ

प्रभावोत्पादक बनबैछ । विद्यापति अपन गीति-पदमे नायिका-नायकक नेत्रक वर्णन करैत ओकर सौन्दर्य-छविक तँ चित्रण कयने छथिये, संगहि विभिन्न रंगक नेत्रक चित्र सेहो प्रस्तुत कयलन्हि अछि । नेत्रक रंगमे हुनका सभसँ प्रिय रतनार, श्याम आ श्वेत छन्हि ।[87] विद्यापति एहि तीनू वर्णक नेत्रक चित्र प्रस्तुत कयने छथि । उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) अरुन लोचन घुमि घुमाएल ।
जनि रतोपल पवने पाओल ॥ (66)

(2) धवल नयन तोर काजर कार ।
तीख तरल तँहि कटाख धार ॥ (310)

(3) स्यामा सुलोचनि सुरति रति ।
अपरुप भूषन भार ॥ (305)

उपर्युक्त पदसभमे विभिन्न नेत्रसभक जे वर्णन कएल गेल अछि ओहिमे नायिकाक नेत्र-व्यापारमे विभिन्न वर्णी आँखिक सहयोग सेहो स्यूत अछि । नायिका अपन लाल आँखि केँ एहि प्रकारेँ घुमौलनि मानू रक्तकमल हेबाक स्पर्श पाबि झूमि उठल हो । एहिठाम रक्तकमल द्वारा कवि अरुण लोचनक स्पष्ट बिम्ब प्रस्तुत कयलन्हि अछि जे हुनक सूक्ष्म सौन्दर्यावलोकन शक्तिक परिचायक थिक । दोसर पदमे श्वेत आँखिमे काजरक रेखासँ ओकर सौन्दर्यकेँ द्विगणित कयल गेल अछि । श्वेत आ श्यामक अनुपम मिश्रण सँ नायिकाक सौन्दर्य सहजहि प्रवर्द्धित भऽ गेल अछि । तेसर पदमे सुरति रति निपुणा नायिकाक सुन्दर श्याम-वर्णी आँखिक अभिनव चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि ।

नेत्र-रूप (दीर्घता) :

पूर्वी देशक लोक केँ पैघ-पैघ आँखि प्रकृति-प्रदत्त थिक । सौन्दर्यक आदर्श कल्पनामे आँखिक पैघ होयब आवश्यक मानल गेल अछि । कालिदास पार्वती केँ 'आयताक्षी' कहने छथि । विद्यापति जाहि मिथिलामे उद्भूत भेल छलाह, ओ अद्यपर्यन्त दीर्घनेत्री किशोरी-ललनाक लेल विख्यात अछि । अतः स्वभावतः विद्यापति दीर्घनेत्रहिक वर्णनमे अपन काव्य-प्रतिभाक द्योतन कयलन्हि अछि । विस्तारभय सँ एहिठाम मात्र एक उदाहरण देल जा रहल अछि -

(1) इन्दु वदनि धनि नयन विसाला । (308)

नेत्र व्यापार (कटाक्षोत्क्षेप, कटाक्षपात, कटाक्षक्षेप आदि)

प्रेमकेँ मादक बनयबाक लेल नेत्रक पैघ होयब ओतेक महत्वपूर्ण नहि, जतबा ओकर अपांगवीक्षण । कटाक्षोत्पेक्ष आँखिक संकेत व्यापार थिक । कटाक्षक्षेप द्वारा हृदय प्रेमभावनाक सूचना प्रेमी धरि प्रेषित करैछ । आँखिक ई सांकेतिक व्यापार अपनामे बेस प्रभावोत्पादक होइछ । एहिठाम ई प्रश्न उठैछ जे की अल्हड़ आँखिक अल्हड़पन स्वयं एतबा सामर्थ्य नहि रखैछ जे प्रेमीकेँ ओ मार्मिक ढंगसँ प्रभावित कऽ सकय ? जाहि प्रकारेँ अनलंकृत सहज सौन्दर्य अलंकरणयुक्त सौन्दर्यक अपेक्षा विशेष प्रभावशाली होइछ, तहिना कटाक्षोत्क्षेपविहीन आँखिक निश्छलता अधिक आकर्षक होइछ । संभवतः कटाक्षपातक माध्यम सँ जाहि प्रेमक प्रदर्शन कयल जाइछ, ओकरा अपेक्षा मौन नेत्र प्रेमकेँ विशेष आन्तरिकताक संग व्यक्त करबामे समर्थ होइछ । तखन कोन कारण अछि जे प्राचीन कवि सँ लऽ कय आधुनिक कविधरि कटाक्षपातक वर्णन कयने छथि ? निश्छल आँखि शुभ्र आ शीतल प्रेमक अभिव्यंजना करैछ, किन्तु कटाक्षपात सँ प्रेमक मादकता बढ़ैछ, ओ प्रेमक बतहपनीकेँ बढ़बयवला होइछ । कटाक्षोत्क्षेप वा कटाक्षपात भावक अन्तर्गत अबैछ । भावकेँ उद्दीप्त करबाक कारणेँ एकरा विभावक अंतर्गत सेहो परिगणित कयल गेल अछि ।

प्रेमव्यापारमे कटाक्षोत्क्षेपक महत्व परंपरा सँ स्वीकृत अछि । पैघ-पैघ आँखि प्रेमोत्पादनमे ओ स्थान नहि रखैछ, जे स्थान विलक्षण चितवनक आँखि रखैछ । एही अनुभूतिकेँ व्यक्त करैत विद्यापति लिखने छथि -

चंचल लोचन बांक निहारय अंजन सोभा पाय ।
जनि इन्दीवर पवन पेलल अलि भरे उलटाय ॥

सुन्दरीक नेत्र सहजहि सुन्दर अछि, उपर सँ कामदेव ओकरा कटाक्ष-वाण उपहारमे दऽ देलन्हि अछि - नायकक लेल जीवित रहब तँ अर्ध कटाक्षे सँ कठिन भऽ जाइछ -

तिनबाने मदन जेतल तिनभुवने, अवधि रहल दउ बाने ।
विधि बड़ दारुण बँधिते रसिक जन, सोंपल तोहर नयाने ॥

अर्द्ध कटाक्षक कथा सेहो श्रुति - मधुर अछि -

बड़ कौसल तुअ राधे, किन्हल कन्हाइ लोचन आधे ।

कटाक्षोत्क्षेपक उपमा संस्कृतक कविलोकनि वाणसँ देलन्हि अछि । हेमचंद्र कटाक्ष केँ वाण नहि कहिकऽ तीनफलवला भाला सँ ओकर उपमा दय ओहिमे एकटा नवीनता आ तीव्रता अनलन्हि अछि -

बिद्दीए भइ भणिय तुहं भा कुरु बंकी दिट्ठि ।
पुत्ति सक्कणी भल्लि जिवं मारइ हिअइ पविट्ठि ॥

एक वृद्धा कुट्टिनी नायिका अपना बेटीकेँ बुझबैत कहैछ जे हे बेटी, तोरा बुझाकऽ कहैत छियौक जे तो आँखिकेँ टेढ़ कऽ नहि देखल कर। हे पुत्री, ई ओहि बर्छी जकाँ मारि करैछ जकरा दुनू दिसक नोक टेढ़ होइछ आ जे शरीरक भीतर पैसि गेला पर माँसु केँ निकालिएक बहराइछ । तीरक मारि सँ क्यो भने जीवित रहि जाय, मुदा एहि वर्छीक मारि सँ जीयब संभव नहि।

वाणकेँ धसलापर जाहि प्रकारेँ पीड़ाक अनुभव होइछ, तहिना कोनो कटाक्षदर्शन सँ सेहो मार्मिक पीड़ा होइछ । कटाक्षशरक सम्बन्धमे कविलोकनि ओकर बेधकतत्व तथा ओकरा द्वारा पहुँचाओल पीड़ाक विशेष वर्णन कयलन्हि अछि । एही प्रकारेँ विभिन्न कवि द्वारा नयनबाण, बरछी, तलवार, तेगा, छुरी, कटारी, बंदूक, कुही आदि उपमान कटाक्षक लेल प्रयुक्त कयल गेल अछि । विद्यापति एहन कटाक्षक वर्णन प्रस्तुत कयने छथि जे बड़ तेज अछि। एहि मे प्रेमी हृदयकेँ काटिकऽ पीड़ा पहुँचेबाक अद्भुत सामर्थ अछि –

सायक तीख कटाख अति चोख । (344)

एक अन्य उदाहरणमे विद्यापतिक नायिकाक कटाक्ष-धार अत्यन्त तेज बताओल गेल अछि –

तीख तरल तँहि कटाख धार ।

कटाक्षक किछु अन्य उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

(1) कुटिल कटाख वान कनियारा । (308)
(2) खने खने नयन कोन अनुसरइ । (616)
(3) कुटिल कटाख लाख पड़ि गेल । (30)
(4) भउँह धनु गुन काजर-रेख ।
भार नयन सर पुंख अवशेख । (17)
(5) लाजे वेयाकुलि सामुन हेरए आउल नयन तरंगे । (18)
(6) लघु लघु संचर कुटिल कटाख ।
दुअओ नयन लइ एक होक लाख ॥ (37)

पयोधर :

संस्कृत ग्रंथमे स्तनक रूप-रेखा निश्चित कऽ देल गेल अछि । एकर आकार-प्रकारसँ सम्बद्ध जे रुढ़िसभ स्थापित भऽ गेल अछि, ओहि मेहक प्राय: सभ नहि तँ अधिकांश विद्यापति द्वारा गृहीत भेल अछि । ओ किछु नव

रुढ़िकेँ सेहो स्थापित कयलन्हि अछि । एकर आकृतिक लेल पूंगफल, कमल, कमलकोरक, विल्ब, ताल, गुच्छ, हाथीक कुंभ, पहाड़, घट, शिव, चक्रवाक, सौवीर, जंबीर, बीजपूर, समुद्र, छोलंग आदि उपमान रूढ़ भऽ चुकल अछि ।[88] प्रकृतिक दृष्टि सँ एकरा उन्नत, विस्तृत, दृढ़, पांडु आदि कहल गेल अछि ।[89] विद्यापति एहि रूढ़िसभकेँ गनबैत बेल, ताल, हेम-कलस, गिरि, कटोरि, मेरुशिखर, अरविन्द, चकेव, कनकांचल आदि नाम लेलन्हि अछि ।[90] जतय स्तनक निरपेक्ष सौन्दर्य (नख-शिख-वर्णनक प्रसंगमे) अंकित नहि भेल अछि, ओहू ठाम एकर रूप प्रस्तुत करबाक लेल ओ उपमानक सहारा लेलन्हि अछि। विद्यापति अधिकांश स्थल पर स्तन केँ कनकसंभु वा संभुशेखर कहलन्हि अछि । वराहमिहिर वर्तुलाकार, घन, अविषम आ कठोर उरोज़क प्रशंसा कयलन्हि अछि ।[91] पदावलीमे नायिकाक पयोधरक प्रभावोत्पादक शक्तिक वर्णन प्राय: सर्वत्र कएल गेल़ अछि । कुचक उपमा देबामे विद्यापतिक शक्तिक कौशल दृष्टिगत होइछ । यथा –

(1) पीन पयोधर दुबरि गता, मेरु उपजल कनक लता ।
(2) कुचजुग परसि चिकुर फूजि परसल ता अरुझायल हारा।
जनि सुमेरु, ऊपर मिलि ऊगल चाँद बिहिन सब तारा ॥
(3) सजल चीर पयोधर सीमा । कनक बेल जनि पड़ि गेल हीमा॥
(4) गिरिवर गरूअ पयोधर परसित गिम गजमोतिक हारा ।
काम कम्बु भरि कनक सम्भुपरि ढारत सुरसरि धारा ॥
(5) मेरु उपर दुइ कमल फुलाइल (12)
(6) जुगल सैल सम हिमकर देखल (13)
(7) कुच उग कमलकोरक जल रहु (20)
(8) कुच जुग चारु चकेवा (23)
(9) माजि धएल जनु कनक मुकूरे
तेइ उदसल कुच जोर ।
पलटि बैठाओल कनक कटोर (24)
(10) सजल चीर रह पयोधर सीमा
कनक वेल जनि पड़ गेल हीमा । (25)
(11) कुचजुग अरविन्द (29)
(12) कनक कमल हेरि काहे न लोभि (30)
(13) कुच कुम्भे कहि गेल अप्पन आस (30)

(14) अम्बर विघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक संभु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस चन्दा ।। (31)

(15) कुच कंचन कोरी फल कांच । (59)

(16) सुरति समापि सुतलवर नागर, पानि पयोधर आपी ।
कनक सम्भु जनि पूजि पुजारी, धरए सरोरुह झाँपी ।।

(17) पीन पयोधर अपरूब सुन्दर उपर मोतिम हार ।
जनि कनकाचल उपर विमल जल दुइ बह सुरसरि धार ।। (40)

नख-शिख-वर्णनक अतिरिक्त अन्य स्थानसभ पर ई नारीक शोभन अवयव तथा यौवनक आगमनक प्रतीक रूपमे वर्णित भेल अछि। एकरा अंकुरित आ विकसित होयबा पर काम आ प्रेमक विकार सेहो उत्पन्न होइछ। एतबहि नहि, विद्यापति कुचक विकासकेँ संलक्ष्य कय सेहो अपन उपमाक वैशिष्ट्य-प्रदर्शित कयलन्हि अछि। एहन स्थलसभ पर ओ आकारक दृष्टि सँ रूढ़ उपमानक द्वारा विकास-सूचक स्थितिक कल्पना कयलन्हि अछि –

पहिल बदरि कुच पुन नवरंग
दिन दिन बाढ़ए पिड़ए अनंग
से पुन भए गेल वीजक पोर
अब कुच बाढ़ल सिरफल जोर

बइर, नारंगी, वीजपूर तथा श्रीफल सँ एहि क्रमिक विकासक सूचना देल गेल अछि। फड़फड़ाइत श्वेत आँचर सँ आच्छादित कुचक लेल प्रस्तुत उपमा कतबा सुंदर अछि। जेना शरदक श्वेत घन पवनसँ पराभूत भऽ कय पर्वतकेँ व्यक्त करबाक लेल विवश भऽ गेल हो –

उरहि अंचल झांपि चंचल
आध पयोधर हेरु ।
पीन पराभव सरद घन जनि
वेकत कएल सुमेरु ।।

अप्रधान यौन उपादानमे पयोधर सर्वाधिक आकर्षक, महत्वपूर्ण आ अनुभूतिशील केन्द्र थिक। प्राणिशास्त्रीय दृष्टि सँ विचार कयला सन्ता बच्चाक लालन-पालन सँ एकर प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित कयल जाइछ।

बच्चाकेँ दुग्धपान सँ जाहि स्पर्श-सुखक अनुभव प्राप्त होइछ, तकर अनुभूति बहुत किछु प्रेमीक स्पर्शहि जकाँ सुखद एवं रोमांचकारी होइछ। जतय धरि प्रेम व्यापारमे एकर योगक सम्बन्ध अछि, पयोधरकेँ मुख्यत: दू रूपमे चित्रित कयल गेल अछि। प्रेमोत्तेजक व्यापारक प्रवर्तकक रूपमे तथा प्रेमक अनुभावसभकेँ अभिव्यक्त कयनिहार अवयवक रूपमे। पहिलक सम्बन्धमे नायक पक्ष सँ विचार कयल जायत, तँ दोसराक सम्बन्धमे नायिका-पक्ष सँ। एहिठाम प्रथम पक्षहिक वर्णन अभिप्रेत अछि, कारण ई शारीरिक आकर्षणक परिधिमे अबैछ। द्वितीय पक्षक वर्णन मानसिक आकर्षणक प्रसंगमे कयल जायत, कारण अन्य अनुभाव सभहिक भाँति कुच सँ सम्बन्धित अनुभावसभक संचालनसूत्र कोनो विशेष मनोदशाक हाथमे रहैछ।

प्रेमोत्तेजक व्यापारक प्रवर्तक-रूपमे :

कामशास्त्रमे स्पर्श आ 'नखच्छत' क पैघ व्याख्या कयल गेल अछि परंच एकर दर्शन मात्रे सँ प्राय: भावुकजनक मोनमे एक प्रकारक उत्तेजना उत्पन्न भऽ जाइछ। मनोवैज्ञानिक लोकनि अंशत: जीवनक आदिम सम्बन्ध केँ एहि उत्तेजनाक आधार मानलन्हि अछि, जकर विवेचना माए आ नवजात शिशुक सम्बन्धविश्लेषण द्वारा कयल जा चुकल अछि। जे हो, वासना सँ एकर गँहीर सम्बन्ध अछि। विश्व- साहित्यमे एकर दर्शनजन्य आकर्षणक वर्णन भेल अछि। प्राकृत-संस्कृत अपभ्रंशक कविलोकनि एहि दिशामे अनेक एहन सूक्ति लिखलन्हि अछि, जाहिमे पुरुषवर्गक मनोभाव स्पष्ट रूपेँ प्रतिबिम्बित होइछ। गाथासप्तशतीकार पयोधरभारसँ नत ग्रामतरुणीजनक उल्लेख करैत एक स्थान पर लिखलन्हि अछि –

ग्रामतरुण्यो हृदयं हरन्ति विदग्धानां स्तनभारवत्य: ।[92]

(संस्कृत रूपान्तर)

कालिदासक आदर्शसुन्दरी सेहो 'स्तोकनम्रा स्तानाभ्याम्' सैह अछि। पंडितराज जगन्नाथ कहलन्हि अछि जे 'सदैव सेव्यं स्तनभारवत्य:'। कुचक भारसँ झुकल नायिकामे शालीनताक पूर्ण सामंजस्य रहैछ। संस्कृत साहित्यमे उन्नत स्तनक वर्णन कम नहि भेल अछि। अपभ्रंशमे एकर अतितुंगत्व[93] पर कविलोकनिक ध्यान गेल छन्हि, मुदा एकरा अपभ्रंश कविलोकनिक सामान्य प्रवृत्ति नहि कहल जा सकैछ। विद्यापति सेहो उरोजक औन्नत्यक वर्णनमे विशेष उल्लासक अनुभव करैछ। कुचक अन्य प्रकृतिसभक अपेक्षा औन्नत्य अधिक मादक हेबो करैछ। विद्यापति सेहो अनेक स्थल पर

उरोजक औन्नत्यक अभिनव चित्र प्रस्तुत कय अपन तीक्ष्ण दृष्टि एवं परिष्कृत रुचिक परिचय देलन्हि अछि । किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) उनत उरोज चिरे झपावए पुनपुन दरसाय ।

(2) पीन पयोधर अपरुब सुन्दर उपर मोतिम हार ।

(3) पीन पयोधर भार, कामदेव भण्डार ।

(4) पीन पयोधर नखरेखसुन्दर करे बांधह का गोरि ।

(5) पीन पयोधर दूबरि गता, मेरु उपजल कनक लता ।

विद्यापतिकेँ अपन नायिकाक अंग गढ़बाक मसाला रूपमे स्वर्ण सभसँ अधिक प्रिय छन्हि । मुँह, उरोज, युगल चरण, नितम्ब आदि सभकेँ विद्यापति स्वर्णहि सँ गढ़ने छथि । नहि जानि राजदरबारक स्वर्णिम वातावरण हुनका स्वर्ण-प्रिय बना देने छलन्हि किंवा राजादिक प्रसन्नताक उपक्रममे अधिक स्वर्ण-प्राप्ति हुनकामे ई वृत्ति भरने छल, मुदा ई सत्य थिक जे विद्यापतिक नायिकाक शारीरिक अवयव शुद्ध स्वर्णक ठोस निर्माण अछि । हुनक नायिकाक पयोधर सेहो विशुद्ध स्वर्णहि सँ निर्मित भेल अछि । एकर अतिरिक्त उरोजक लेल ओ किछु सर्वथा नव उपमानक रूपमे कनक कटोर, कोरीफलक प्रयोग कयने छथि । उदाहरण द्रष्टव्य -

(1) कुच कोरीफल नख-खत रेह । (302)

(2) कुच कंचन कोरीफल कांच । (59)

(3) रंग पयोधर अति भेल गोर ।
माजि धरल जनु कनय कटोर । (69)

(4) मदन भंडार पयोधर गोरा ।
जनि उलटाओल कनक कटोरा ।। (308)

एहि चित्रसभमे ऐंद्रीय उत्तेजना देखना जाइछ, जे विद्यापतिक अपन वैशिष्ट्य थिक । विद्यापतिक दृष्टिमे नारीक उरोज शोभाक भंडार थिक, कामदेवक एकमात्र निधि आ शुद्ध स्वर्ण-निर्मित । गोर शरीरमे स्वर्णाभा लेने गोर उरोज, जेना शरीरक स्वर्णवल्लरीमे उगल दू लाल कमल । वल्लरीमे कमल उगयबाक शक्ति यदि विद्यापतिमे छन्हि तँ ओहि वल्लरीमे पर्वत किएक नहि उगाओल जा सकैछ । जनसाधारण पर्वतमे लते केँ देखने होएत, विद्यापति लतामे मेरु केँ अभिव्यंजित करैछ-

(1) गोर शरीर पयोधर कोरी परसे अरुन भेल ।
कनक बलरि जनि रतोपले मुकुले उदय देल ।

(2) पीन पयोधर दूबरि गता ।
मेरु उपजल कनक लता ।।

विद्यापतिक अधिकांश पदमे आत्मव्यंजक तत्व प्रायः देखना जाइछ आ ई हुनक कविताकेँ आर रसार्द्र बना दैछ । एतबहि नहि, विद्यापति अवस्थानुसार कुच-विकासक चित्र तँ प्रस्तुत कयने छथिये, वृद्धावस्थामे नायिकाक कुचक की हाल होइछ, तकर सजीव चित्र दर्शनीय अछि -

(1) थोथर थैया थन दुओ भेल । (6)

उपर्युक्त पदमे 'थोथर थैया थन' सँ आनुप्रासिक छटा एवं थन सँ शब्द-शक्तिक, अंभिव्यंजना कयल गेल अछि । वस्तुतः कुचक उपमा देबामे विद्यापति बेजोड़ छथि । स्त्रीक वक्षोदेश प्राचीन आ मध्ययुगक कविलोकनिक विशेष रुचिकर अंग रहल अछि । एहि अंगक औन्नत्य, विस्तृति, दृढता, पाण्डुता आदि गुण काव्यशास्त्रमे वर्णनीय मानल गेल अछि । कुचक प्रसंग अबितहि विद्यापतिक उत्प्रेक्षा आ उपमाक पेटार फुजि जाइछ । ई हुनक नख-शिख-वर्णनक सभसँ आकर्षक पक्ष थिक । एकर वर्णनमे कवि द्वारा दर्जनहुँ सँ उपर पद रचल गेल अछि जे भावोल्लास सँ परिपूर्ण आ माधुर्य सँ मातल अछि ।[94]

स्पर्श : संयोग श्रृंगारक अवसर पर कामशास्त्रीय परम्पराक अनुसार नखच्छतक वर्णन संस्कृत - काव्य-परिपाटीक देन थीक । मिलनक विशेष प्रसंगमे आँगीक मसकि जायब कम उल्लेखनीय नहि । हँसी, विनोद, चोरा-नुक्की सँ आगाँ बढ़िक स्तनक स्पर्श नायक-नायिकाक प्रेमक अंतिम स्वीकृति थिक । परिणत आ विहित प्रेमक अवस्थामे सेहो स्त्रीजनोचित शालीनताक कारण नायिका एकर प्रकाश्य नहि दऽ पबैछ, तथापि विद्यापतिक नायक एहि लेल अनेक उपाय सोचि लैछ । एक स्थल पर मिलन प्रसंगमे नायिका कहैछ जे हे हरि, हमर कुचक स्पर्श जुनि करी, पर्वत सदृश सोनक कटोरा टूटि जाएत -

परसि न हत वे पयोधर मोर ।
भांगि जाएत गिरि कनक कटोर ।। ।53।

एक स्थल पर सुरति-सुखक पश्चात् नायिकाक मलिन गात एवं पयोधरकेँ देखि सखिक उक्ति द्रष्टव्य थिक -

बाल पयोधर बदन सहोदर अनुमानिए अनुरागे ।
कओन पुरुष करेँ परसए पाओल जे तनु जिनल परागे ।। ।18।

ई स्पर्श प्रेमानुभूति सँ अनुप्रेरित तथा प्रेमोद्दीपन सँ अनुप्राणित अछि। एहिमे कोनो सन्देह नहि जे नारी सौन्दर्यक सर्वप्रमुख अंग आ यौवनक महत्वपूर्ण स्मारक होएबाक कारणेँ स्तन, प्रेमीक लेल अत्यन्त आकर्षक वस्तु होइछ। प्रेमीक हृदयमे ई अंग आकुलतापूर्ण भावोद्वेलन उत्पन्न करैछ। ओकर स्पर्श सँ प्रेमी अपन संवेगक तृप्तिक संग अपन मनोभाव केँ सांकेतिक रूपमे नायिका धरि प्रेषित करैछ। स्पर्शक किछु आर उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) गोर सरीर पयोधर कोरी, परसे अरुन भेल। ।73।

(2) पुन-पुन मोरा परस कुच भोरा।
निधने पाओल जनि कनय कटोरा ॥ ।76।

मुँह, केश, नितम्ब

मानवीय सौन्दर्यमे मुँहक गढ़नि, सुकुमारता, प्रसन्नता आदिक महत्व निर्विवाद रूपेँ स्वीकार कयल गेल अछि। ककरो सँ साक्षात्कारक समय सर्वप्रथम मुख-सौन्दर्यहिक प्रभाव पड़ैछ। हमरालोकनिक चित्तवृत्तिसभ अनेक टेढ़-मेढ़ रेखामे मुँहपर व्यक्त होइत रहैछ। स्त्री आ पुरुषक मुँहक असमानता एक-दोसराक लेल स्वाभाविक आकर्षण उत्पन्न करैछ। मुदा काव्य परिपाटीक अनुसारेँ दुहूक मुँहक लेल चन्द्रमा, कमल आदि उपमानक रूपमे ग्रहण कयल जाइछ। स्वतः मुँहक सौन्दर्य पर्याप्त प्रभावोत्पादक होइछ, परंच हाव-भाव, हेला, सात्विक अनुभाव आदिक दृष्टिएँ मुखमण्डलकेँ महत्वपूर्ण नहि कहल जा सकैछ। भोगेच्छा सूचक प्रेमव्यापारसभकेँ व्यक्त करबाक लेल प्रमुख रूपेँ आँखिक प्रेमोद्दीपक क्रियाक यथेष्ट वर्णन भेल अछि। एहि हेतु नाक आ भोउहुक चेष्टासभक सेहो उपयोग कयल गेल अछि।[95] तथापि मुँहक मधुरता आ ओकर अमृतत्व दिस विद्यापतिक ध्यान अवश्य गेल छन्हि। ओ नायिकाक मुँहक अमृतत्व दिस संकेत करैत लिखने छथि-

सुधामुखि के बिहि निरमल बाला।
अपरुब रूप मनोभव मंगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥

विद्यापतिक राधा सौन्दर्य आ लावण्यक प्रतिमा अछि। ओकरा अंग-अंग सँ सौन्दर्य-राशि उमड़ि रहल छैक। ओकर मुँह चन्द्रमाक सार भाग सँ निर्मित भेल अछि। ओकरा देखिकऽ नायकक आँखि चकोर जकाँ

चकित भऽ जाइछ। अमृत सँ ओकरा धो कय जखन राधा आँचर सँ ओकरा पोछलनि तँ दशहु दिशामे इजोत छिड़िया गेल :-

चाँद सार लए मुख घटना करू लोचन चकित चकोरे।
अमिय धोए आँचल धनि पोछलि दह दिसि भेल उजोरे॥

मुखमण्डलक कोमलता मे विद्यापति माधुर्यक नियोजन कयने छथि। विद्यापतिक मुँह-सौन्दर्यक किछु उदाहरण प्रस्तुत अछि -

(1) सहज प्रसन्न मुख दरस हृदय सुख
लोचन तरल तरंग।
आकास-पाताल बस सेओ कइसे भेल अस,
चाँद सरोरुह संग॥ ।24।

(2) ए सखि पिआ मोरा बड़ अगेआन
बोलथि बदन तोर चाँद समान। ।28।

(3) कनक मुकुर ससि कमल जिनिया मुख। ।89।

(4) लोलुअ वदन-सिरी अछि धनि तोरि। ।706।

(5) वदन चाँद तोर नयन चकोर। ।121।

(6) आनि पुनिम ससि कनक धोए कसि सिरिजल तुअमुख सारा।
जे सबे उबरल काटि नड़ाओल से सबे उपजल तारा॥ ।34।

(7) आनन देखि भान मोहि लागल
जिनि सरसिज जिनि चन्दा। ।811।

(8) आनन लोलुअ बचन बोलए हँसि।

(9) अवनत आनन कए हम रखलहुँ
बारल लोचन चोर।
पिया मुखरुचि पिवए धाओल
जनि से चाँद चकोर॥ ।34।

(10) आँचरे बदन झपावह गोरि।
राज सुनै छिए चांदक चोरि॥ ।29।

गोवर्धन केशक उल्लेख करैत लिखने छथि जे ओहिमे दीर्घता, कौटिल्य, मार्दव, नैविड्य आ नालता होयबाक चाही। केशक हेतु उपमानसभक तालिका प्रस्तुत करैत अलंकारशेखरकार तम, शैवाल, मेह, वर्ह, भ्रमर, चामर, यमुना बीचि, नीलकमल, नीलमणि, आकाश, धूप, धूपक धुआँक उल्लेख कयलन्हि अछि।

कोमल, चिक्कन, कारी आ नम्हर केश भारतीय नारीक लेल आदर्श मानल गेल अछि । यूरोपमे सूर्यकिरणक भाँति सोनहरा केश नारी-सौन्दर्यमे अभिवृद्धि कयनिहार मानल गेल अछि । कारी नागिन जकाँ पाछाँ लटकल भारतीय नारीक वेणी, सौन्दर्य पारखीलोकनिक लेल प्रशंसापात्र रहल अछि । वेणीक अतिरिक्त ओझड़ाएल केशक सौन्दर्य आरहु मादक होइछ । विद्यापति ओझड़ाएल केशक वर्णन मे विशेष रुचि प्रदर्शित कयलन्हि अछि -

आकुल चिकुर बढ़लि मुखसोभ
राहु कएल ससिमण्डल लोभ । (502)

नायिकाक केश सहजहि चिक्कन, कारी, चमकदार, पवित्र, सुंगधित आ कोमल अछि । एहन केश-राशिकें देखि नायकक मोन बाट-कुबाट नहि देखैछ । ओकर केश स्वभावहि सँ कारी छैक -

चिकुर निकट तम सम । (32)
जलधर तिमिर चामर जनि कुन्तल
अलका-भृंग सैवाले । (89)

यूरपमे केशक कारी होएब सौन्दर्यक कुरूप-तत्व मानल जाइछ । फ्रांसीसी लेखक हाड्वाय (HOYDOY) 'एकटा सैंक्टौरम' मे लिखलन्हि अछि जे सेंट गोडलिव एक सुन्दर व्यक्ति छल, मुदा कारी केश होयबाक कारण लोक ओकरा कागे कहिकऽ खौंझबैत छलैक । जे हो, सौन्दर्य शास्त्रीय मान्यतामे, देशकालक भिन्नताक कारण सँ, वैभिन्य अनिवार्य अछि । विद्यापतिक चिकुर-सौन्दर्यक वर्णन देखबा योग्य अछि -

(1) सुन्दर वदन सिन्दुर बिन्दु सामर चिकुर भार ।
जनि रवि ससि संगहि उगल पाछु कए अन्धकार ।। (23)
(2) आकुल चिकुरे वदन झाँपल ।
जनि तमाचत्रें चाँद चापल ।। (66)
(3) चिकुर सेमार हार अरुझाएल,
राहु कएल ससिमण्डल लोभ । (502)
(4) कुसुमवान विलास कानन केस सुन्दर रेह ।
विविल नीरद रुचिर दरसए अरुण जनि निअ देह ।। (30)
(5) धवला केस कुसुम कर वास । (6)
(6) चिकुर गरए जलधारा
जनि मुख ससि डर रोवए अँधारा (23)

(7) केस निगारइत बह जल धारा,
चामर गरए जनि मोतिम हारा । (25)
(8) चिकुर गरए जल धारा,
मेह वरिस जनु मोतिम हारा । (25)
(9) अलकहिं तीतल तें अति शोभा,
अलिकुल कमल बेढ़ल मधुलोभा । (25)
(10) तापर सापिन झापल मोर (36)

पीन नितम्ब आर्य-स्त्री-सौन्दर्यक प्रमुख विशेषतामे सँ एक अछि । पैघ काठीक आर्यजातिक स्त्रीक लेल ई प्रकृतिक देन थिक । अनार्य जातिसभमे, विशेषतः कारी जातिसभमे, नितम्बक पीनता नहि पाओल जाइछ। संस्कृत साहित्यमे सुंदरीक नितम्बकें 'गुर्वी नितम्बस्थली' आदि कहल गेल अछि । मुदा विद्यापति नायिकाक वयः-संधि सँ लऽ कय वृद्धावास्थाधरिक नख-शिख-वर्णन-प्रसंगमे नितम्बक पुष्टता एवं गुरुताक प्रशंसा कयलन्हि अछि । कविकुलगुरु कालिदास यक्ष - प्रियाक नितम्बक लेल 'श्रोणीमाराद्लसतगमना'क प्रयोग कयलन्हि अछि, तँ राजशेखरक कर्पूरमंजरी मे नायक राजाचन्द्रपाल, नायिका कुन्तलदेशपुत्री कर्पूरमंजरीक यौवनकें आकर्षणक प्रधान विषय बताओल गेल अछि... "अंगलावण्यपुण्णं स्सवण परिसरे लोअण हारतारा" । शौरसेनी प्राकृतमे रचित एहि पदमे राजशेखर (900ई.) कहलन्हि अछि जे युवावस्थामे सुन्दरीक शरीर लावण्य सँ भरि जाइछ, आँखि आकर्षक आ पैघ प्रतीत होबय लगैछ । वक्षस्थल पर स्तन नीक जकाँ उभरि जाइछ, डाँर पातर आ ताहि पर सँ त्रिवली । नितम्ब बेस पुष्ट आ गोल भऽ जाइछ । एहि पाँच (कांति, नेत्र, वक्ष, कटि, नितम्ब) अंगहि सभसँ बाला, कामदेवक संसार-विजयमे पताकाक काज लैछ । भाव ई जे विद्यापति सेहो परम्परानुसार नितम्बक पुष्टता आ गुरुता कें विशेष प्रश्रय देलन्हि अछि । किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) गरुअ नितम्ब कहाँ चल गेल । (6)
(2) गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझ खीनिम् माइ ।
(3) गुरु नितम्ब भरे

शरीर :

यद्यपि नख-शिख-वर्णनमे विद्यापति सर्वत्र प्राचीन परिपाटीकें अपनौलन्हि अछि, तथापि रूढ़ उपमानसभकें ओ नवरूप मे प्रस्तुत कयलन्हि अछि । ओ

दृश्यक रूप, गुण आ वर्ण तीनू दृष्टिएँ अप्रस्तुतक निर्वाचन मे अपन सहज प्रतिभाक परिचय देलन्हि अछि। उदाहरणस्वरूप शरीरक वर्णक लेल चन्द्रकला, शिरीषमाला, विद्युल्लता, तारा, कनकलता, दीपशिखा आदिक प्रयोग साहित्य-शास्त्रमे रूढ़ मानल गेल अछि।[96] विद्यापति सेहो शरीरक लेल एही उपमानसभक प्रयोग कयलन्हि अछि, मुदा हुनक प्रस्तुतीकरणमे छवि-छटा किछु भिन्ने अछि –

(1) मेघमाल सँय तड़ित लता जनि। (28)[97]
(2) जनि बिजुरी रेह (29)
(3) कनकलता अरविन्दा (19)
(4) कनकलता अवलम्बन ऊअल (18)
(5) जँह जँह झलकत अंग,
तँहि तँहि बिजुरि, तरंग।
(6) पीन पयोधर दूबरि गता। (10)

अधर-दाँत-हास :

अधरक विषयमे विद्यापति कम जागरूक नहि छथि। अधर-वर्णनमे ओ सुधा-सिंचित अधरकेँ विशेष प्रश्रय देलन्हि अछि –

(1) अधर सुधा मिठि दुधे घवरि डिठि
मधुसय मधुरिम वानी रे। (137)
(2) अधर मगइते अऔंध कर माथ
सहय न पार पयोधर हाथ। (282)
(3) अधर सुशोभित वदन सुछन्द।
मधुरी फूले पूजु अरविन्द ॥ (20)
(4) खण्डित दशन अधरे। (2)
(5) अधर रूप अनुपम सुन्दर
चान्दे पहीरलि मोती। (54)[98]
(6) अधर विम्ब सन दसन दाड़िम-विजु। (25)
(7) अधर नव पल्लव मनोहर। (30)
(8) जिनि विन्दु अधर पवारे। (89)[99]

एही प्रकारेँ नायिकाक बाह्य-सौन्दर्य-वर्द्धन मे दाँतक सेहो अपन विशिष्ट स्थान अछि। दाँतहुक वर्णनमे विद्यापति प्राचीन परिपाटीकेँ अपनौलन्हि अछि –

(1) हास विलासिनि दसन देखि जनि तरलित जोती।
(2) दसन दालिम जोति। (30)

(3) दसन मुकुता जिनि कुन्द कर-बीज। (89)
(4) खने-खने दसन छटा छुट हास
खने खने अधर आगे गरु वास।
(5) दसमुकुता

एवं प्रकारेँ विद्यापतिक नायिकाक शारीरिक-सौन्दर्य-वर्णनमे अधर, दसन आ हासक त्रिवेणी-संगम भेल अछि। हासक कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

(1) हास कला से हरए सांचीत (27)
(2) इसत हासिनि सने,
मुझ हानल नयन वाने। (31)
(3) आड़ वदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर लाइ। (39)

कटि-नाभि-रोमावलि-त्रिवली

संस्कृतक आलंकारिक लोकनि नाभि आ कटिक सौन्दर्यक विषयमे बतौलन्हि अछि जे दक्षिणावर्त नाभि प्रशस्त होइछ। एकरा लेल रसातल, कूप, आवर्त, झील वा ह्रदक उपमान देल जाइछ।[100] नाभिक निकटक हल्लुक श्यामल रोमावलीक वर्णन कवि-परिपाटी रहल अछि। एकर मृदुता, श्यामलता, सूक्ष्मता आ नाभिनामिताकेँ सुन्दर कहल गेल अछि। नाभिक नीचाक भागकेँ बलि कहल जाइछ, त्रिवलीक वर्णन कविलोकनि करैछ। एकर उपमा लता, नदी-तरंग, श्रोणी आदि सँ देल जाइछ। कटिक वर्णन मे सूक्ष्म नोक, शून्य, अणु, सिंहक कटि आदि उपमान गृहीत होइछ। विद्यापतिक किछु प्रमुख प्रयोग नीचा देल जाइछ –

(1) कनक कदलि पर सिंह समारल। (12)
(2) गरु नितम्ब भर चलए न पारए
माझ खीनि खीनि निमाई।
भागि जाइत मनसिज धरि राखल
त्रिवली लता अरुझाई ॥ (13)
(3) नाभि विवर सँय लोम लतावलि (14)
(4) केहरि सम कटि गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ॥ (16)

(5) रोमावलि जनुसुण्ड अनुरूप
पानि पिअए चल नाभी कूप । (19)
(6) नील पटोर आनि अति से सुदृढ जानि
जतने सिरुज रोमराजि । (24)
(7) कूप गभीर तरंगिनी तीर ।
जमुना सेमार लता बिनु नीर ॥
(8) हार रोमावलि जमुना-गंगा । (65)
(9) लोम लतावलि सैवल कंजल । (89)

जघन-चरण तल-नख :

कनक-कदली जांघक लेल प्रसिद्ध उपमान रहल अछि, परन्तु विद्यापति ओकरा "विपरीत कदलि" कहिकऽ अधिक सूक्ष्मदर्शिताक परिचय देलन्हि अछि। चरणतलक लेल कमल, पल्लव, किसलय, स्थल-पद्म कें उपमानक रूपमे ग्रहण कयलन्हि अछि । नहक उपमा लालिमाक दृष्टियें प्रबाल सँ देलन्हि अछि । गतिक लेल गजराज आ हंस, चरणक महावर वा नखक-वर्णनक लेल अग्नि-उषाक लालिमा, पलाशादि लेल जाइछ । विद्यापतिक नायकक हृदयमे नायिकाक चरणक महावर (मेहदी) पावक तुल्य जलन उत्पन्न करैछ ।[101]

यौवनावस्था :

प्रेमोत्पादनमे यौवनावस्थाक अत्यधिक महत्व अछि । यौवनावस्थामे देह विकासशील तथा ओकर कांति, शोभा आ दीप्ति उत्कर्षोन्मुख रहैछ। जीवनमे प्रेमचिंतन आ साहित्यमे प्रेमवर्णनक लेल कैशोर सर्वाधिक उपयुक्त आ मनोवैज्ञानिक अछि । नायिकाक लेल यौवन सँ विभूषित होयब अनिवार्य होइछ । कालिदास कुमारसंभव मे यौवनमे अतिरिक्त आकर्षणकें स्वीकार कयलन्हि अछि । पार्वतीक वर्णन करैत ओ लिखने छथि -

उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम् ।
बभूत तस्याश्चतुरस्र, शोभि वपुर्विवक्तं नवयौवनेन ॥[102]

तूलिका सँ रंग भरला पर जेना चित्र उन्मीलित भऽ जाइछ, सूर्यक किरणक स्पर्श पाबि जेना कमल पुष्प हँसि उठैछ, तहिना पार्वतीक शरीर यौवन पाबिकऽ फुला उठल । काव्यक नायिकासभ सर्वदा युवतीये रहैछ। ओकर सभ भेद-उपभेद ओकर यौवनावस्थे पर आधारित रहैछ । शिंगभूपाल आलंबनगत जाहि चारि उद्दीपक केर उल्लेख कयने छथि- गुण, चेष्टा, अलंकृति आ तटस्थता - ओहिमे गुणक अन्तर्गत यौवन, रूप-लावण्य,

अभिरूपता, मार्दव आ सौकुमार्यक गणना कयल जाइछ । यौवनक चारि भेद मे प्रथम तीन मुग्ध, मध्य आ प्रौढ़ थिक । यौवनक निर्माता स्त्री कें कविलोकनि अपन वर्ण्य-विषय बनौलन्हि । सभ मिलाकऽ प्रौढ़ाक वर्णन थोड़बहि कयल गेल अछि कारण श्रृंगारक योग्यता प्रथम दुइयेमे रहैछ -

तत्र श्रृंगार योग्यत्वं रताह्लाद न कारणम् ।
आद्य द्वितीययौवन तृतीय चतुरेर्थयोः ।[103]

यौवनोचित गुणसभमे सौकुमार्यक वर्णन संख्यामे अधिक भेल अछि । सौकुमार्य नायिकाक रूपलावण्यक अभिवृद्धिक संग ओकर आभिजात्यक सूचक सेहो होइछ । रसार्णवसुधाकरक अनुसार स्पर्शकें नहि सहबा योग्य कोमलते सौकुमार्य कहबैछ । एहिठाम एकर तीन भेद कएल गेल अछि - उत्तम, मध्यम आ यौवनावस्थाक अधम । एकर उदाहरण विद्यापतिक गीतिपदमे यथेष्ट मात्रामे उपलब्ध होइछ -

(1) कि आरे नव जौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा । (216)
(2) सैसव यौवन दुहु मिलि गेल ।
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल ॥ (620)
(3) सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु दल-बले दन्द परि गेल ॥
कबहु बांधय कच कबहु बिथारि ।
कबहु झाँपय अंग कबहु उघारि ॥ (618)
(4) खने खने नयन कोन अनुसरई। खने खन वसन धूलि तनु भरई।
खने खन दसन छटा छुट हास। खने खन अधर आगे गहु बास।
हिरदय मुकुल हेरि-हेरि थोर। खन आँचर दय खन होए भोर।।

यौवनक प्रथम चरणनिक्षेप राधाक हृदयमे विचित्र-भाव-भंगिमा उत्पन्न करैछ । राधाक शरीरक विभिन्न अंगमे यौवनजनित विकासक संग-संग ओकर हाव-भाव आ चेष्टासभमे सेहो परिवर्तन परिलक्षित होइछ । यौवनागमन सँ मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करबामे विद्यापति अद्वितीय छथि । उत्तम सौकुमार्यक एक उदाहरण द्रष्टव्य थिक -

छुबइत बालि मलिन भइ गेलि ।
विधु-कर मलिन कमलनी भेल ॥

यौवनावस्थाक अलंकार :

यौवनावस्थामे मात्र शारीरिक विशेषते नहि अबैछ, अपितु मानसिक स्थितिमे सेहो परिवर्तन होइछ । ई शारीरिक आ मानसिक परिवर्तन नायिका केँ अत्यधिक मोहक आ आकर्षक बना दैछ । मुख्यत: ई परिवर्तन कामज होइछ । संस्कृतक आचार्यलोकनि एकरा अलंकारक संज्ञा प्रदान कयलन्हि अछि । साहित्यदर्पणकार विश्वनाथक अनुसारेँ एकर संख्या अट्ठाइस बताओल गेल अछि ।[104] दशरूपककार धनंजय स्त्रीमे मात्र बीसहि अलंकारकेँ स्वीकार कयलन्हि अछि ।[105] शेष आठ अलंकारकेँ ओ नायकगत स्वीकारलन्हि अछि । पुन: एहि अलंकारसभकेँ तीन वर्गमे विभाजित कयल गेल अछि । अंगज, अयत्नज आ स्वभावज । शरीर सँ सम्बन्ध रखबाक कारणेँ हाव, भाव आ हेलाकेँ अंगज अलंकार कहल जाइछ । शोभा, कांति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य आ धैर्य-ई सात अयत्नज अलंकारमे परिगणित होइछ । ई यत्नसाध्य नहि थिक, ई स्वभावहि सँ स्त्रीमे समाविष्ट रहैछ । तेँ एकरा अयत्नज अलंकार कहल जाइछ । लीला, विलास, विच्छिति, विव्वोक, किलकिंचित, विनम्र, ललित, मद, विहृत, तपन, मोग्ध्य, विक्षेप, मोट्टाइत, कुट्टमिति, कुतूहल, हसित, चकित, आ केलि - ई अठारह अलंकार स्वभावज कहल जाइछ । ई स्वभावसिद्ध होइत कृतिसाध्य होइछ अर्थात् ई अर्जित विशेषता अछि, जे कालान्तरमे स्वभावक अंग बनि जाइछ । धनंजय मद, तपन, मौग्ध्य, विक्षेप, कुतूहल, हसित, चकित आ केलिक गणना अलंकारमे नहि कयलन्हि अछि । आधारभूत अंगसभकेँ दृष्टिमे रखबाक कारणेँ हाव, भाव आ हेलाकेँ अंगज अलंकारक संज्ञा प्रदान करब मनोवैज्ञानिक नहि प्रतीत होइछ । शरीरक कोनो-ने-कोनो अंग प्रत्येक अलंकारक आधार होयबे करत । हावमे शारीरिक व्यापारक प्रधानता स्वीकार कऽ लेल जा सकैछ, मुदा भावमे चित्तहिक प्रधानता अछि । किछु आचार्य अंगज आ अयत्नज अलंकारकेँ चित्तज कहलन्हि अछि । स्वभावज अलंकारमे शरीरक प्रधानता होयबाक कारणेँ ओकरा गात्रज कहल गेल अछि ।[106]

भानुदत्त कृत रसतरंगिणी मे अंगज आ अयत्नज अलंकारक उल्लेख नहि कयल गेल अछि । ओतय सभ गात्रज अलंकार हावक अन्तर्गत राखल गेल अछि ।[107] विद्यापतिक गीतिपदमे तीनू प्रकारक अलंकार सभक प्रयोग कयल गेल अछि । किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि :-

(1) आड़ वदन कए मधुर हास दए,
सुन्दरि रहु सिर नाई ।

(2) मन मोर चंचल लोचन विकल भेल
ओ नहि अनइत जाई ।

(3) खने खन नयन कोन अनुसरई,
खने खन बसन धूलि तनु भरई ।
खने खन दसन-छटा छुट हास,
खने खन अधर आगे गहु बास ।

(4) चंचल चरन चित चंचल भान,
जागल मनसिज मुदित नयान ।

हाव : भौँह तथा नेत्रादिक विलक्षण व्यापार सँ संभोगेच्छा प्रकाशक भाव केँ हाव कहल जाइछ । ई नायिकाक सचेत व्यापार थिक । एहिसँ नायिका एक संग दू कार्य लैछ - एक तँ ओ अपन अनुकूलत्वक सूचना दैछ, दोसर नायकक मोनमे प्रेमोत्पादन करैछ । भंगिमाक ई वैशिष्ट्य नायकक प्रेमकेँ उद्दीप्त करबामे पर्याप्त योग दैछ । अत: एकरा अनुभावक अन्तर्गत नहिँ राखि उद्दीपन विभावक अन्तर्गत राखब विशेष संगत प्रतीत होइछ । विद्यापतिक नायिकाभेदक चित्रणमे हावयोजना पूर्ण सफल भेल अछि । हुनक नायिका नायककेँ आकर्षित करबाक लेल भ्रू तथा नेत्रभंगिमाक उपयोग करबामे विशेष स्वच्छंद देखना जाइछ । विद्यापतिक हाव-योजनामे कल्पनाक जे कौशल आ माधुर्य दृष्टिगोचर होइछ, ओ नायिकाक प्रेममूलक मनोवृत्तिक सजीव मूर्ति प्रस्तुत करबाक संग-संग नायकक प्रेमकेँ सेहो उद्दीप्त करैछ -

(1) कबहुँ बाँधय कच कबहुँ बिथारि,
कबहुँ झाँपए अंग कबहुँ उघारि ।
अति थिर नयन अथिर कछु भेल,
उरज-उदल थल लालिम देल ।।

(2) आध आँचर खसि, आध बदन हँसि
आधहि नयन तरंग ।
आध उरज हरि, आध आँचर भरि,
तब धरि दगधे अनंग ।।

(3) जहाँ-जहाँ कुटिल कटाख,
ततहि मदन-सर लाख ।

उपर्युक्त प्रत्येक उदाहरण मे संश्लिष्ट चित्र उपस्थित कयल गेल अछि । एहि चित्रसभमे हावक चित्रविधायिनी सुशृंखल योजना प्रस्तुत कयल

गेल अछि जे विद्यापतिक अपन वैशिष्ट्य छन्हि । वस्तुतः हुनक हाव-योजना अत्यन्त सूक्ष्म, मादक एवं प्रभावोत्पादक अछि । एकर अतिरिक्त मुँह फेरिकऽ हँसब, देखब आ मुस्कायब एकटा सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक हाव योजना थिक ।[108] विद्यापति सेहो एही प्रकारक हाव-योजना प्रस्तुत कय लिखलन्हि अछि -

(1) विदगधि संगिनि सब रस जान ।
कुटिल नयन कयलन्हि समधान ।।
(2) चंचल लोचन बांक निहारय अंजन सोभा पाय ।
जनि इन्दीवर पवन-पेलल अलि भरे उलटाय ।।

अयत्नज अलंकार :

अयत्नज अलंकारक अन्तर्गत विद्यापतिक नायिकासभमे शोभा, कांति आ दीप्तिक वर्णन अधिक भेल अछि । एकरा संगहि प्रगल्भता, धैर्य आदिक वर्णन सेहो प्राप्त होइछ । शोभा, कान्ति आदि नायिकाक शरीरगत शोभन धर्म थिक आ प्रगल्भता आदि मानस धर्म । विद्यापतिक दृष्टि मुख्यतः नायिकाक शारीरिक सौन्दर्यहि पर केन्द्रित अछि, तथापि मानसिक सौन्दर्यहुक चित्र यत्र-तत्र प्राप्त होइछ । जखन रूप, यौवन, लालित्य तथा विलासक उपकरणसँ विभूषित नायिकाक अंग प्रस्फुटित होइछ, तँ ओ शोभा सँ अलंकृत भऽ जाइछ। शोभा धर्म सँ अलंकृत नायिकाक अनुपम चित्र विद्यापति प्रस्तुत कयने छथि -

देख-देख राधा रूप अपार ।
अपरुब के विधि आनि मिलाओल, खिति-तल लावनि-सार ।
अंगहि अंग अनंग मुरछायत, हेरए पड़ए अथीर ।
मनमथ कोटि-मथन करु जे जन, से हेरि महि माह गीर ।

राधाक शोभाक सीमा नहि । धरतीक सम्पूर्ण लावण्य राधाक अंगमे समायल छैक । स्वयं कामदेव ओकर अंगसभकेँ देखिकऽ मूर्च्छित भऽ जाइछ । जे स्वयं अनेक कामदेवकेँ लज्जित करैछ, (कृष्णदिस संकेत) ओहो एहि शोभा-श्रीकेँ देखि एतेक विकल भऽ जाइछ जे ठाढ़ो रहब असंभव भऽ जाइछ । शोभा-वर्णनमे नायिकाक सहज-सौन्दर्य पर विद्यापतिक आँखि लुब्ध भेल छन्हि -

(1) सहजहि आनन सुन्दर रे, भौँह सुरेखलि आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे, उड़ए पसारल पाँखि ।।

ततहि धाओल दुहु लोचन रे, जतहि गेल वर नारि ।
आसा लुबुधल न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ।।
(2) सहज सुन्दर गोर कलेवर पीन पयोधर सिरी ।
कनकलता अति विपरीत फरल युगल गिरी ।।

मन्मथ सँ आप्यायित द्युतिक नाम कांति थिक, ई स्मर विलास सँ वर्द्धित शोभा थिक । शोभामे कामविकार नहि होइछ, मुदा कांतिमे एहि विकारक आविर्भाव भऽ जाइछ । एहि सँ शोभामे एक नवीनता आबि जाइछ । विद्यापतिक राधाक द्युति एही प्रकारक अछि - चन्द्रमाक सार तत्व सँ नायिकाक वदनक निर्माण भेल अछि । पुनः जखन ओकरा अमृत सँ धोकऽ आँचर सँ पोछि देल जाइछ तँ सभ दिशा आलोकित भऽ उठैछ । एहि सँ नायिकाक शारीरिक द्युतिक अनुमान सहजहि लगाओल जा सकैछ -

चाँद सार लय मुख घटना करु लोचन चकित चकोरे ।
अमिय धोए आँचरघनि पोछलि दह दिस भेल उँजोरे ।।

गात्रज वा स्वभावज अलंकार :

रसतरंगिणीकार, एहि समस्त अलंकारसभकेँ हावक अन्तर्गत रखलन्हि अछि । भानुदत्तक अनुसार लीला, विलास, विच्छिति, विभ्रम आ ललित शरीरी व्यापार थिक तथा मोट्टाइत, कुट्टमित, बिव्बोक, विहृत आभ्यांतरिक । किलकिंचितकेँ ओ उभय संकीर्णता सँ अभिहित कयलन्हि अछि । एहि अलंकारसभक अतिरिक्त चेष्टासभक आधार पर अन्य बहुतो अलंकारक गणना कयल जा सकैछ । विद्यापतिक गीतिपदसभमे प्रायः एहिमे सँ अधिकांश अलंकारक वर्णन भेल अछि, मुदा प्रधानता विलास आ ललितक अछि । प्रियकेर दर्शन, स्मरण आदि सँ गमन, नयन, वदन, भ्रू आदि मे जे तात्कालिक वैलक्षण्य पाओल जाइछ, ओ विलास कहबैछ । एहिमे प्रिय-दर्शन आदि विभाव थिक तथा अभिलाषा, वैदग्ध्य प्रकाशन आदि अनुभाव । नेत्र आ भ्रू भंगिमा मे विशेष अनुराग रखबाक कारणेँ विद्यापतिमे विलासक प्रधानता स्वाभाविक अछि । किछु उदाहरण द्रष्टव्य -

(1) सायक तीख कटाख अति चोख । (344)
(2) नयने निवेदब वन्दने वार ।
(3) बड़ कोसलि तुअ राधे,
किनल कन्हाइ लोचन आधे ।
(4) आनि पुनिम ससि कनक थोए कसि,
सिरजल तुअ मुख सारा ।

जे सबे उबरल काटि नड़ाओल,
से सबे उपजल तारा । (234)

विद्यापति अपन पदावलीमे लक्षण-उदाहरणक आयास-प्रधान शैलीमे एकर सभक चित्रण नहि कयलन्हि, तथापि काव्यपरम्परा-मर्मज्ञ आ सौन्दर्योपासक होयबाक कारणेँ पदसभमे हाव, भाव, हेलाक जे सहज विधान अछि, ओ बेस हृदयाग्राह्य एवं अकृत्रिम अछि आ प्राय: सभक उदाहरण पदावलीमे देखल जा सकैछ । सौन्दर्य-विधान-विषयक किछु अपरिहार्य हावदृश्य निम्न प्रकारक अछि -

लीला - नायक अपन प्रियाकेँ आ नायिका अपन प्रियकेँ वस्त्राभूषण आदि केँ जखन धारण करैछ तँ कविलोकनि ओहिमे जाहि चेष्टाकेँ बखान करैछ, ओकरा लीला हाव कहल जाइछ ।[109] विद्यापतिक चतुर नागर कृष्ण जखन नागरिकाक मुग्धकर वेष-विन्यास करैछ तँ सचमुच ओ बेस चामत्कारिक भऽ जाइछ -

वरनागर साजह नागरि - वेसा,
मुकुट उतारि सीमंत संवारल
बेनी विरचित केसा । (बे. पद 163)

एहिपदमे कृष्ण नागरिकाक वेष-विन्यास आ कुशल अभिनय द्वारा मानिनी राधाक मान-भंजनमे पूर्ण सफल भऽ जाइछ । अन्तत: राधा मोहनकेँ चिन्हि जाइछ आ प्रसन्नता तथा लज्जा सँ मुँह फेरि लैछ । कृष्ण राधाकेँ अपना कोरामे बैसा लैछ आ एहि प्रकारेँ मान-भंग भऽ गेलापर रस-रीतिक विकास होइछ ।

विलास - नायिकाक गमन, नयन, वचन आदिमे जे किछु विशेष कथनीय रहैछ, ओकर बखान विलास-हावक अन्तर्गत कयल जाइछ ।[110]
पदावलीमे उपलब्ध विलासक चित्र दर्शनीय अछि -

नहाइ उठल तोर राइ कमल मुखि, समुख हेरल वर कान ।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि, कइसन हेरब बयान ॥
- (बेनी. पद 26)

सद्य:स्नाता राधा जखन तीर पर अयलीह तँ सोझामे कृष्ण ठाढ़ छलथिन्ह । गुरुजनक कारणेँ राधा लज्जावश अपन मुँह केँ नीचा कऽ लैछ, मुदा कृष्ण-दर्शनक लेल ओ शीघ्रहि एक युक्ति ताकि लैछ । आगाँ बढ़िकऽ ओ मोतीक हार तोड़िकऽ ओतऽ फेकि दैछ आ कहय लगैछ जे हार टूटि

गेल । सखीसभ मोती बिछबामे बाझि जाइछ आ एहि आभ्यन्तर ओकरा कृष्णक दर्शन-लाभ भऽ जाइछ । विद्यापतिक अनुसार राधाक नेत्ररूपी चकोर कृष्णक मुँहरूपी चन्द्रमाक अमृत-रसक पान तँ करबे कयलक, दुनू गोटए परस्पर दर्शन-रसकेँ पसारबो कयलन्हि ।

विच्छिति - अत्यल्प साज-श्रृंगारहि सँ जाहि नायिकामे महाछविक दर्शन होइछ, ओकरा विच्छिति हाव कहल जाइछ ।[111] पदावलीमे प्राप्त विच्छिति हावक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

चाँद सार लए मुख घटना करू, लोचन चकित चकोरे ।
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि, दह दिसि भेल उँजोरे ॥
- (बेनी. पद 14)

एतय साज-श्रृंगारकेँ वर्णनक विषय बिनु बनौनहि विद्यापति नायिकाक अनुपम एवं सहज सौन्दर्यक वर्णन कयलन्हि अछि । हुनका अनुसारेँ चन्द्रमाक सारभाग लऽ कय विधाता नायिका राधाक मुँहक रचना कयने छथि । एहि अनुपम रूपकेँ देखिनिहार नेत्र एहि दिस चकोरवत् आकृष्ट भऽ जाइछ । चकोर चन्द्रमाकेँ अपलक देखैत रहैछ । ओकरो अपलक देखैत रहबाक अभिलाषा जागृत होइछ नेत्र मे । ओ अपन मुख-चन्द्र केँ आँचरसँ पोछिकऽ जे अमृत बहौलन्हि, ओएह इजोरियाक रूपमे दसो दिशामे उद्भाषित भऽ रहल अछि । एहि पदमे विद्यापति ऊहा एवं अतिशयोक्तिक सहारा लेलन्हि अछि, तथापि ओहिमे सजीवता विशेष अछि, तेँ थोड़-बहुत ऊहा सँ हुनक सौन्दर्य-विधानमे एक प्रकारक चटक आबि गेल अछि ।

किलकिंचित - नायिकामे जखन हर्ष, गर्व, अभिलाषा, श्रम, हास, रोष आ भीति एक संग प्रतीत हो तँ किलकिंचित हावक उपस्थिति होइछ ।[112] एकर एक उदाहरण निम्न पंक्तिमे व्यक्त अछि -

थरथरि काँपलि लहुलहु भास, लाजे वचन न करए प्रकास ।
आजु धनि पेखलि बड़ विपरीत, छने अनुमति छने मानइ भीत ॥
(मि.म. पद 212)

मिलन-प्रसंगमे नायिकामे हर्ष, भीति, अभिलाषा आदिक एकत्र समावेश कय कवि किलकिंचित हाव-पूर्णाकक समग्रत: चित्रांकन प्रस्तुत कयलन्हि अछि ।

ललित :- नायिकाक सरस अंग-छविक संग जतय ओकर विशिष्ट गमन आ चितवनक उल्लेख होइछ, ओकरा ललित हाव कहल जाइछ ।[113] उदाहरण -

देखल कमलमुखि वरनि न जाइ, मन मोर हरलक मदन जगाइ।
तनु सुकुमार पयोधर गोरा, कनक लता जनि सिरिफल जोरा ॥

(ब्रज. स. पृ.-30-31)

एहिठाम नायिकाक गति, चितवन आ अंग-छविक मोहक आ मदनोत्तेजक होयबाक वर्णन तँ अछिये, विशेष बात ई अछि जे ओकर गति, चितवन आ अंग-छविक विषयमे एहन रीति सुनल जाइछ जे चतुर (रसिक) ओहि सँ मारल जाइछ आ मूर्ख (अरसिक) बाँचि जाइछ ।

मोट्टाइत :-

दयित आ भावतेक नाम सुनला उत्तर जतय भावोदय हृदगत होइछ, ओतय मोट्टाइत हाव होइछ ।[114]

कि कहब माधव पुनफल तोर । तोहर मुरलि रव राइ विभोर ॥
ते पुन सुनल नाम तोहार । से सब भाव हम कहहि न पार ॥

(ब्रज. स. पृ. 116)

सखीक मुँह सँ विद्यापति ई कहबौलन्हि अछि जे माधव, अहाँक मुरली-रव केँ सुनिकऽ राधा विभोर भऽ जाइछ आ अहाँक नाम सुनितहि ओकरा हृदयमे जाहि भावक उदय होइछ, ओकरा हम शब्द द्वारा प्रकट नहि कय सकैत छी । ओकर अंग स्ववशमे नहि रहैछ, कम्प आ अबोधता सँ ओ ग्रसित भऽ जाइछ । ओ मूर्च्छित भऽ जाइछ, ओकर रीति बुझबामे नहि अबैछ । नीक की थिक - तकरो ओकरा ज्ञान नहि रहैछ । साइत ओ काल्हि अहाँ लग आओति । अन्तमे सखीक अनुमोदन करैत विद्यापति कहैछ जे एतय अयले पर ओकर कार्य सिद्ध हेतैक ।

विव्वोक :- अभिमानवश जखन नायिका नायककेँ अपमानित करैत प्रतीत हो, तँ ओकरा विव्वोक हाव कहल जाइछ ।[115]

माधव दुर्ज्जय मानिनि-मानि ।
विपरित चरित पेखि चकरित भेल, न पुछल आधहु बानि ।

(बेनी. पद-145)

एहि पदमे दूती द्वारा मानिनी नायिकाक परिवर्तित मनोवृत्तिक विशद चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । अनुरक्ता राधिकाक परिवर्तित ई मनोवृत्ति कृष्णक प्रति अनादर एवं अरुचिक सूचक थिक । वस्तुतः रमणी-हृदयक लेल ई आघात असह्य होइछ जे ओकर दयित (प्रिय) कोनो अन्य स्त्रीक प्रति अनुरक्त हो । कन्हैयाक एहन आचरणकेँ राधा भला कोना सहन कऽ सकैछ ?

पर-रति विषयक पैघ अपराधी कृष्णक प्रति यदि राधाक मनोवृत्ति बदलि गेलैक तँ एहिमे कोन आश्चर्य ? एही सँ दूती चकित भऽ कृष्ण सँ बाजलि जे हे माधव, ओ दुर्जय मानिनीक रूप धारण कऽ लेलक अछि । अहाँक तँ आब ओ अधो बात नहि पूछैत अछि ।

विहित :- दयित सँ भेट भेलो उत्तर जँ नायिका लज्जावश ओकरा आगाँ मे अपन हृदय फोलिकऽ नहि राखि पबैछ, तँ ओतय विहित हाव होइछ ।[116]

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ, बारल लोचन चोर ।
पिया-मुख रुचि पिबए धाओल, जनि से चाँद चकोर ।

(बेनी. पद 38)

नायिका सखी सँ निवेदन करैछ जे हे सखी ! श्यामसुन्दर सँ भेट भेलापर लज्जावश हम मुँह नीचा कयने रहलहुँ, अपन नेत्र रूपी चकोरकेँ ओम्हर जयबा सँ रोकलहुँ, मुदा प्रिय-मुख शोभाक पान करबाक लेल ओ ओहिना दौड़य लागल, जेना चकोर अधीर भय चन्द्रमा दिस टकटकी लगौने रहैछ ।

कुट्टमित :- प्रिय द्वारा तन-मर्दित भेलापर यदि नायिका कृत्रिम रोषकेँ प्रदर्शित करैछ, अथवा अधर, उरोज, केश आदिकेँ गृहीत भेला पर बाहर सँ प्रकटरूपेँ रुक्षताक भाव धारण करैछ, तँ ओहिठाम कुट्टमित हाव होइछ ।[117]

जतने आएलि धनि सयनक सीम, पांगुर लिखि खितिनत रहु गीम ।
सखि हे, पियापास बैठलि राहि, कुटिल भौंह करि हेरइछि काहि ॥

- (बेनी. पद-78)

एहिठाम सखी द्वारा नायिकाक, नायकक संग प्रथम मिलनक दृश्य अंकित कयल गेल अछि । अनेक प्रयत्नक बाद बिछाओन लग नायिका पहुँचलि, मुदा ओहूठाम माथ झुका कय पयरक आँगुरसँ माटि केँ खोधैत रहलि । पुनः राधा प्रियक निकट बैसि तँ गेलि, मुदा नहि जानि किएक कुटिल भौंह सँ देखय लागलि ?

हेला :- बेस ढिठपनीक संग प्रिय सँ जखन नायिका विविध विलास-क्रीड़ासभकेँ प्रकट करैछ, तँ ओकरा हेला कहल जाइछ ।[118]

मदन मदालस स्याम विभोर, सखि मुखि हाँसि-हाँसि करकोर ।
नयन ढुलाढुलि लहु-लहु हास, अंग हेला हेलि गद् गद् भास ॥

- (ब्रज, पृ. 422)

विद्यापतिक मदनमदालस श्याम स्वयं भाव-विभोर छथि । हुनका चन्द्रमुखी राधा अपना कोरामे लऽ लैछ । आँखि निढ़ाल भऽ हास्य विकीर्ण

करय लगैछ। शरीर मे कम्प होइछ। वाणी गद्गद् भऽ जाइछ। कृष्ण भेलाह रसिक आ राधिका रसवंती। हृदयसँ हृदय आ मुँह सँ मुँह मिलि जाइछ। प्रियतम पुनः मदनोन्मत्त भऽ उठैछ आ दुनू कामशर-विद्ध भऽ जाइछ। ओ जाहि रसमे निमग्न भेलाह, तकरहि गायन विद्यापति कयलन्हि अछि। हेलाक किछु आर उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

(1) हमे हँसि हेरलनि थोरा हे, सफल भेल सखि कौतुक मोरा रे।
हेरतहि हरि भेल आन रे, जनि मनमथ मन बेधल वान रे॥[119]

(2) पथगति नयन मिलल राधा कान। दुहुमन मनसिज पुरल संधान।
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर। समय न बूझल अचतुर चोर॥
– (बेनी. पद-27)

(3) वामा वयन नयन बह नोर, काँप कुरंगिनि केसरि कोर।
एक गह चिकुर दोसर गह गीम, तेसर चिबुक चउठे कुच सीम॥
– (ब्रज. स. पृ. 167-168)

(4) सुन सुन ए सखि कह न होए, रहि-रहि कए तन मन खोए।
कहइत नाम पेम भए भोर, पुलक कम्प तनु धरमहि नोर॥
– (बेनी. पद-46)

संक्षेप मे विद्यापति नायिकाक शारीरिक सौन्दर्यकेँ अतिशय रमणीय, वैभवपूर्ण आ आकर्षक बनौलन्हि अछि। नायकक हृदयमे प्रेम-भाव अंकुरित करबाक लेल तथा नायकक हृदयस्थ प्रेमकेँ उन्मादक बनयबाक लेल ओ सौन्दर्यकेँ विभिन्न प्रकारक हाव सँ अभिमंडित कऽ अपन पूर्ण रसिकताक परिचय देलन्हि अछि।

(ख) मानसिक सौन्दर्य :

मानसिक सौन्दर्यकेँ शारीरिक सौन्दर्य सँ सर्वथा पृथक् मानब अमनोवैज्ञानिक आ भ्रांतिपूर्ण थिक। हर्ष, पुलक, आह्लाद आदि मानसिक स्थिति तथा शारीरिक सौन्दर्य मे जन्य-जनक-सम्बन्ध अछि। अमूर्त विचारसभक प्रति सेहो उपर्युक्त मानसिक स्थिति उत्पन्न होइछ आ एहूठाम आधार-आधेय केर होयब आवश्यक अछि। वियोग श्रृंगारमे प्रियक कोनो आदर्श, विचार आदिक स्मृति सँ मानसिक विकार उत्पन्न होइछ। पुनः शारीरिक सौन्दर्य अपनामे स्वयं महत्वपूर्ण नहि। अतः शारीरिक आ मानसिक सौन्दर्य केँ एक-दोसरासँ पृथक् कऽ कय नहि देखल जा सकैछ। एककेर विवेचन दोसर सँ निरपेक्ष भऽ कय नहि कयल जा सकैछ। मुदा एतवा सत्य थिक जे कोनो

आकर्षण मे शरीरक प्रधानता रहैछ तँ कोनो मे मोनक। एहि प्रधानते केँ ध्यानमे राखि एतय मानसिक सौन्दर्यक पृथक् सँ विवेचन कयल जा रहल अछि।

संयोग :

संयोग आ वियोगक अवसर पर मानसिक सौन्दर्य अनेक प्रकारक रूप, भंगिमा, चेष्टा, वाचिक आ शारीरिक विकार, मानसिक दशा आदिमे प्रस्फुटित होइछ। वियोगक क्षणमे आह्लादजन्य शारीरिक सौन्दर्य जाहि मानसिक विकारक सृष्टि करैछ, ओ ओतबा अनुभूतिशील, सूक्ष्म, हृदयस्पर्शी आ प्रभावोत्पादक नहि होइछ जतबा वियोगक क्षणमे प्रकट भेनिहार मानसिक व्यापार। सम्पूर्ण चराचरमे दुःखक व्यापार जतबा व्यापक आ मर्मस्पर्शी होइछ, ओतबा सुखक नहि।

संयोग श्रृंगारक अवसर पर कवि-परम्परा सँ चलि अबैत रूढ़ वर्णनक माध्यम सँ, जाहिमे सुरति, षडऋतुवर्णन, विहार, क्रीड़ा, मद्यपान, अष्टयाम आदि सम्मिलित अछि, विद्यापति अपन प्रेमचित्रक अंकन कयलन्हि अछि। संयोगमे बाह्यइन्द्रियक सन्निकर्ष अत्यन्त आवश्यक होइछ। दर्शन, श्रवण, स्पर्श, आ संलाप आदिक नीवे पर संयोग श्रृंगारक महल स्थापित रहैछ। विद्यापतिक पदावलीमे मोनक सूक्ष्मातिसूक्ष्म वृत्तिक विवृति पाओल जाइछ। संयोग-श्रृंगारक विविध अवस्थानुसार सुन्दर भावात्मक चित्र अंकित भेल अछि। जीवन आ काव्य-सत्यकेँ अंगीकार करैत विद्यापति राधा आ कृष्णक प्रेमोदयक अभिनव रूप प्रस्तुत करैछ–

पथ-गति नयन मिलल राधा कान,
दुहु मन मनसिज पुरल संधान।
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर,
समय न बूझय अचतुर चोर॥

मार्गमे राधा-कृष्णक नयन-निक्षेप भेल। आँखिकेँ मिलितहि कामदेव दुनूक हृदय केँ अपन वाण सँ विद्ध कऽ देल। दुनू प्रेम- विभोर भऽ परस्पर एक-दोसराकेँ देखैत रहि गेलाह। अन्यत्र राधा-कृष्णक एकान्त साक्षात्कार सँ उद्भूत मानसिक पीड़ाक उल्लेख दर्शनीय अछि–

पथ-गति पेखल मो राधा।
तखनुक भाव परान पए पीड़लि,
रहल कुमुद-निधि साधा॥

मार्ग मे जाइत राधाक भाव-भंगिमा कृष्णक अन्तरकेँ प्रेमक पीड़ा सँ पीड़ित कऽ देलक । कृष्णकेँ ओहि चन्द्रमुखीकेँ देखबाक इच्छा बनले रहलन्हि । राधा सुन्दर कमलिनी सनक आँखिकेँ कने टेढ़कय थोड़ेक काल धरि कृष्ण दिस देखैत रहलीह । हुनक आँखिक वक्र मुद्राकेँ देखि कविकेँ एहन प्रतीत भेलन्हि जेना खंजन पक्षीकेँ जिंजिर सँ बान्हि देल गेल होइक आ कृष्णक दृष्टि पड़ितहि ओ अचानक भागि गेल हो । प्रेमक पीड़ाक संग-संग कवि राधाक मोहक मुद्राक समावेश सेहो कयलन्हि अछि । विद्यापति अपन पदावली मे मानसिक वृत्तिसभकेँ स्पष्ट करबाक लेल हाव-भाव, मुद्रा आदि बाह्य चेष्टाक सेहो संयोजन कयलन्हि अछि । एहि सँ हुनक काव्यक बाह्य एवं आन्तरिक दुनू पक्ष विभूषित भेल अछि ।

नायकक दर्शन किंवा साक्षात्कारक समय नायिकाक उपर प्रायः दू प्रकारक मानसिक प्रक्रिया देखल जाइछ - (1) नायिका नायक केँ कोनो प्रकारेँ मुग्ध करबाक चेष्टा करैछ । (2) नायिका पुलकायमान, प्रसन्न, लज्जित वा स्तब्ध आदि भऽ जाइछ । पहिल प्रकारक मानसिक प्रतिक्रियाक भूरिशः वर्णन विद्यापतिक पदावली मे भेल अछि, जकर वर्णन शारीरिक सौन्दर्यक अन्तर्गत कयल गेल अछि । प्रतिक्रियाक दोसर रूप मानसिक अवस्था किंवा सहज व्यापार सँ सम्बन्धित अछि । एकरहि हम शास्त्रीय भाषामे सात्विक अनुभाव कहैत छी । यदि अनुभाव संवेगात्मक उत्तेजनाक स्वाभाविक परिणाम थिक तँ सात्विक अनुभावक निर्धारित संख्यामे आर वृद्धि कयल जा सकैछ । उदाहरणक लेल शालीनता केँ लेल जा सकैछ । एकरहु गणना अनुभावहिक अन्तर्गत कयल जा सकैछ । शालीनताक नारी-व्यक्तित्वक संग जे सम्बन्ध अछि, ओ एक पृथक् विवेचनक मांग करैछ । दर्शनक अतिरिक्त स्पर्श, स्मृति, श्रवण आदि सँ सेहो स्वेद, रोमांच आदिक प्रादुर्भाव होइछ । मिलनक समय नायक-नायिकाक पारस्परिक हास-परिहास सेहो मानसिक सौन्दर्यकेँ विशिष्ट रूपेँ अभिव्यक्त करैछ । हास-परिहासमे जाहि प्रत्युत्पन्नमतित्व आ विदग्धताक आवश्यकता होइछ, ओ हृदयस्थ प्रेम-भावकेँ अत्यधिक उल्लासपूर्ण आ प्रगाढ़ बना दैछ । अतः प्रेमक प्रसंगमे एकर विश्लेषणक अपन महत्व अछि । एहिठाम शालीनता, स्पर्श, स्मृति, श्रवण आ विनोदजन्य मानसिक सौन्दर्य आ हास-परिहासक स्वरूप आदिक क्रमशः विवेचन प्रस्तुत कयल जायत ।

शालीनता :

नारीक जाहि अप्रधान शारीरिक अंगसभक उल्लेख पाछाँ कयल गेल अछि, ओ स्थूल आ पार्थिव सौन्दर्यक मूलाधार अछि । मुदा प्रेम व्यापारमे मानसिक स्थितिक विशेष महत्व अछि । शालीनता कतेक प्रकारक मानसिक स्थितिक सम्पृक्त मिश्रण थिक । ई प्रेममे मधुर कल्पनाक सन्निवेश करैत ओहि मे जीवनक संचार करैछ ।[120]

मनोवैज्ञानिक लोकनि शालीनताकेँ आंशिकरूपमे प्रवृत्तिजन्य डर मानलन्हि अछि । डर सँ नुकयबाक जे प्रवृत्ति उत्पन्न होइछ, ओ यौन-प्रक्रियाक चारूभर केन्द्रित रहैछ । जेना-जेना यौन भावनाक विकास होइत जाइछ, शालीनताक रूप सेहो परिवर्तित होइत जाइछ । बेल केंर कथन छन्हि जे नौ वर्षक अवस्थाधरि बालकक अपेक्षा बालिकासभ अधिक आक्रमणात्मक होइछ । एहि अवस्थामे ओ सभ शालीन होयब प्रारम्भ करैछ । शालीनताक पूर्ण विकास वयःसन्धिकालमे होइछ । अतः परेज कहलन्हि अछि जे यौन भावनाकेँ अपना समय सँ पूर्व जागृत भेला पर शालीनता सेहो ओही समयमे आविर्भूत भऽ जाइछ । यौवनावस्थाक आगमनक पूर्व ई शालीनता नायकक आकांक्षाक प्रति वास्तविक निषेधात्मक भाव सूचक भऽ सकैछ, मुदा यौन भावनाक आगमनक समय यैह अस्वीकृति, स्वीकृतिक द्योतक भऽ जाइछ । शालीनताक ई स्वरूप मानव जाति सँ इतर प्राणीमे सेहो पाओल जाइछ । भाव ई जे शालीनताक ई यौवनरूप मानव- जातिक विकासक पूर्वहिसँ दृष्टिगत होबय लगैछ आ ई मूल प्रवृत्तिसभसँ परिचालित होइछ ।

शालीनताक विकासक मूलमे मात्र प्रवृत्तिजन्य डर आ यौन भावने नहि अछि, एकर विकासक बहुत किछु दायित्व सामाजिक विधि -निषेध सभपर सेहो निर्भर करैछ । मनोवैज्ञानिकक एक वर्गक मत छन्हि जे मानवीय वेश-भूषाक आविर्भाव आंशिकरूप सँ शालीनताक रक्षा निमित्त भेल छल । जेहो, एकर पूर्ण दायित्व वंशपरम्परागत सम्पत्तिक उत्तराधिकार पर निर्भर करैछ। किछु अन्य प्रकारक परम्परासभक बोझ सेहो शालीनता पर आरोपित भेल अछि । यद्यपि ई परंपरासभ बड़ अस्पष्ट अछि, तथापि जे लोकनि तर्क करबामे असमर्थ छथि, हुनकासभपर ओकर विशेष प्रभाव अछि । मुदा मुख्यतः ओकर जड़ि मूल प्रवृत्तियेमे अनुस्यूत अछि, जे सभ्यताक विकासक संग-संग शनैः शनैः सुरुचि सम्पन्नतामे परिवर्तित भऽ गेल अछि । आइ सामाजिक राजनीति सँ एकर गँहीर सम्बन्धकेँ अस्वीकार नहि कयल जा सकैछ ।[121]

शालीनतामे प्रवृत्तिजन्य डर थोड़समयक लेल रहिते अछि, मुदा एकर आधार एक प्रकारक शरीर यंत्र थिक, जकर बाह्य प्रतिफलन लज्जा वा व्रीड़ा थिक । लज्जा शालीनताक स्पष्ट स्वीकृति अछि । लज्जा आ रतिक घनिष्ठ सम्बन्ध अछि । हिन्दीक महान कवि जयशंकर प्रसाद कामायानीक लज्जा सर्गमे, लिखने छथि – 'चंचल किशोर-सुन्दरता की, मैं करती रहती हूँ रखवाली ।' रतिमूलक लज्जा प्रधानतः स्त्रीगणहिमे उत्पन्न होइछ । ई स्त्रीक वय:सन्धि अवस्थामे, विशेषकऽ ऋतुकालमे, घनीभूत होइत देखना जाइछ । श्रृंगारक संचारीभाव, लज्जा भाव सँ भिन्न नहि अछि । अतः शालीनताकेँ नारीक महत्वपूर्ण आवयविक तत्व मानब मनोवैज्ञानिक आ बुद्धिसंगत अछि ।

मुग्धा नायिकाक सारल्य एवं अबोधता अपनामे शालीनताक प्रतीक अछि । ओकरा शरीरमे जाहि अभिनव यौवनक आगमन होइछ, ओ ओकरा अत्यधिक लज्जाशील बना दैछ । मुख्यरूपेँ ओ एही अर्थमे शालीन कहबैछ । ओकर सारल्यसँ ओकर मोनक अज्ञात आकुलता, आँखिक चंचलता, रोमहर्ष, प्रस्वेद आदिक माध्यमसँ प्रकट होइछ । सौन्दर्यमे एकटा अपूर्व आकर्षण उत्पन्न भऽ जाइछ । लज्जाक व्यापक अर्थ ग्रहण कयले उत्तर ओतय शालीनता दृष्टिगत होइछ । पार्टिरिज लज्जाक सामान्य लक्षणमे कंपन, हृदयक धड़कन, आंगुर आ औँठाक सनसनाहटि, आँखिक चंचलता, चेहराक अनुभूतिशीलता आदिक गणना कयलन्हि अछि ।[122]

विद्यापतिक सद्यः स्नाता नायिकाक चित्रणमे लज्जा मिश्रित किंवा शालीनतायुक्त रूप-सौन्दर्यक अनुपम चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । एकर किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

(1) कामिनि करए सनाने ।
हेरइत हृदय हनए पंचवाने ।।
चिकुर गरए जलधारा ।
जनि मुख-ससि डर रोअए अंधारा ।।

(2) नहाय उठल तोर राइ कमलमुखि
समुख हेरल बर कान ।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरब बयान ।।

यमुना तीरपर नहाकय आबितहि कमलमुखी राधाक दृष्टि श्रेष्ठ कृष्णपर पड़ैछ । गुरुजनक संग कृष्णकेँ देखि राधाक मुँह लज्जावश नत भऽ

जाइछ । एहि स्थलमे राधाक लज्जामिश्रित सौन्दर्यक स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत कएल गेल अछि । एही प्रकारेँ शालीनताक अत्यधिक मनोरम आ आकर्षक रूप वय:सन्धिक चित्रणमे रूपायित कयल गेल अछि –

(1) सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु दल-बले दन्द परि गेल ।।
कबहु बाँधय कुच कबहु बिथारि ।
कबहुँ झाँपय अंग कबहुँ उघारि ।।
अति थिर नयन अथिर किछु भेल
उरज उदय थल लालिमा देल ।।

(2) अब सब खन रह आँचर-हात ।
लाजे सखिगन न पुछए बात ।।
कि कहब माधव वयसक संधि ।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ।।
तइयो काम हृदय अनुपाम ।
रोपल घट ऊचल कए ठाम ।।
सुनइत रस-कथा थापए चीत ।
जइसे कुरंगिनी सुनए संगीत ।।

यौवनक आगमन सँ नायिकाक गति-विधिमे अन्तर आबि गेलैक अछि । नव विकसित कुच केँ झाँपि कय रखबाक हेतु आब ओकरा हाथमे प्रतिक्षण आँचर देखल जाइछ । लज्जाक पूर्वाभासक कारणेँ ओकरा अपना सखियोसभसँ वार्तालाप करबामे लज्जा प्रतीत होइछ । वस्तुतः एहिप्रकारक लज्जामिश्रित सौन्दर्य-वर्णनमे विद्यापतिक काव्य-कौशल अप्रतिम अछि । बालिकाक अवस्थानुसार क्रम-विकास सँ उत्पन्न शारीरिक एवं मानसिक वृत्तिक सूक्ष्म अंकन हुनकहि सँ संभव अछि । एहि प्रकारक सौन्दर्य-चित्रणमे हुनक मनोवैज्ञानिकताक आभास सहजहि उपलब्ध भऽ जाइछ जे हुनक बहु-विद्या-पांडित्यक प्रतीक अछि ।

शालीनता आनन्दपूर्ण अनुभूति अछि – नायक आ नायिका दुनूक दृष्टिमे । एहि अवसर पर वाणी मौन भऽ जाइछ आ मोन संकुचित मुदा आह्लादित । परंच आँखिमे एहि कारणेँ एकटा विचित्र आ रहस्यपूर्ण सांकेतिकता उद्भासित होइछ । नायिका स्वयं अपन लज्जाक प्रतिए कने-कने सचेत भऽ जाइछ । कृष्णक मुँहक मादक एवं मनोमुग्धकारी सौन्दर्य सँ

उत्पन्न नायिकाक शालीनता-सम्पन्न सौन्दर्यक चित्र निम्न पंक्तिमे व्यक्त भेल अछि ।

अवनत आनन कए हम रहलहुँ बारल लोचन चोर ।
पिया मुख-रुचि पिबए धाओल जनि से चाँद चकोर ॥
ततहुँ सयँ हठ हरि मो आनल धएल चरनन राखि ।
मधुप मातल उड़ए न पाइए तइअओ पसारल पाँखि ॥
माधव बोलल मधुर बानी से सुनि मुदु मोयँ कान ।

प्रियक मुँहक सौन्दर्य-पान करबाक लेल नायिका अपन आँखिकेँ नियंत्रित करबाक प्रयास कयलोपर असमर्थ भऽ जाइछ आ एहिसँ ओकर मानसिक दशाक सजीव चित्र अंकित भऽ जाइछ ।

विद्यापतिक पदावलीमे नायिकाक लज्जा केँ स्वीकृति, गर्व, निषेध वा 'नहि मे हँ' द्वारा बेस वैदग्ध्यपूर्ण ढंग सँ चित्रित कयल गेल अछि । एहि अवस्थामे वाणी जड़ भऽ जाइछ । 'केलिन पाल'क कथन छन्हि जे स्त्रीलोकनि कोनो आशालीन कार्यकेँ करबामे ओतेक हिचकिचयबाक अनुभव नहि करैछ, जतबा ओकरा कहबामे ।[123] ज्यॉ पॉल सार्त्रक कथन छन्हि जे स्त्रीगणकेँ 'हँ' कहबामे जतबा लज्जाक अनुभव होइछ, ओतबा आर कोनो बात मे नहि । "Women are shy of nothing so much as the little word 'yes'." स्त्रीक ई नकारात्मक स्वीकृति माधुर्यक कारण मानल जाइछ । नीलकंठ दीक्षित लिखने छथि – 'प्रायोनेति श्रुतिविषयता विश्वमाधुर्यहेतुः ।' भर्तृहरि सेहो संयोग-श्रृंगारक चर्च करैत स्त्रीक एहि 'नहि' केर पश्चातहि अभिलाषा व्यक्त करबाक उल्लेख कयलन्हि अछि। विद्यापतिक पदावलीमे सेहो एही प्रकारक कतिपय चित्र उपलब्ध अछि –

(1) न न न न कर सखि परिनत ससिमुखि,
सकल चरित तोर बुझल बिसेखी ।
(2) नहि – नहि – नहि पए भाखे ।
तइअओ कोटि जतन कर लाखे ॥

हास-परिहास :

मिलनक प्रसंगमे हास-परिहास प्रेमकेँ सघनता प्रदान करैछ, ओहिमे एक नवीन ज्योति आ नवसौन्दर्यक सृष्टि करैछ । रहः केलिक अवसर पर ई आनन्दकेँ कतेको गुणा अभिवृद्ध कऽ दैछ । वस्तुतः ई रहः केलियेक एक अंग थिक । हास-परिहासक द्वारा वाणी मे जे वक्रता अबैछ ओहिसँ

माधुर्यपूर्ण अर्थक व्यंजना होइछ जे परिहासकर्त्ताक कोनो अव्यक्त अभिप्राय केँ व्यक्त कऽ ओकर मानसिक सौन्दर्यकेँ प्रकट करैछ । एहि सँ कौखन प्रेमजनित आत्मसमर्पण, गर्व, प्रेमातिशय आदि अनेक प्रकारक भावना व्यक्त होइछ ।

विद्यापतिक गीतिपदमे कतेको एहन स्थल अछि जतय मिलनक प्रसंगमे हास-परिहासक पुट उपलब्ध होइछ –

'नाव डोलाव अहीरे, जिबइत न पाओब तीरे, खर नीरे लो ।
खेबा न लअए भोले, हँसि हँसि की दहु बोले, जिब डोले लो ।

× × × × × × ×

न बूझसि अबुझ गोआरी, भजि रहु देव मुरारी, नहि गारी लो ।

बेर-बेर मिलला सन्ता परिचय बढ़ैछ । धाख छुटि जाइछ । संकोच सेहो कम भऽ जाइछ । एहना स्थितिमे अनुरागी नायक-नायिकामे थोड़-बहुत नोक-झोंक आ हास-परिहास होबय लगैछ । नायिका फूल तोड़य जाइत अछि तँ नायक ओकरा सँ हँसी-ठट्ठा प्रारम्भ कऽ दैछ ।[124] कखनो नायिका कौतूहलवश नायक सँ अनुनय क़रैछ जे ओकर हाथ पकड़ि कय नदी पार कय दौक । एहन जन-मन-रंजक स्थल अनेक अछि –

कर धरु करु मोहि पारे, देव मे अपरुब हारे, कन्हैया ।
सखिसभ तेजि चलि गेली, न जानु कोन पथ भेली, कन्हैया ।
हम न जाएब तुअ पासे जाएब ऊघट घाटे, कन्हैया ।'

एहि पदमे विद्यापति हास-परिहासक माध्यम सँ कृष्ण आ ब्रजबालाक सौन्दर्य-भोगी रूपकेँ अतीव मोहक ढंगसँ प्रस्तुत कयलन्हि अछि । 'हम न जाएब तुअ पासे' मे संग जयबाक अस्वीकृति मे स्वीकृति सेहो निहित अछि । 'जाएब ऊघट घाटे' मे नारी-हृदयक आशंका आ संकेत-स्थली दिस जयबाक इशारा सेहो अछि । गोपी-वचनमे अनेक प्रकारक हावक कल्पना कयल जा सकैछ – रोमांच, मुस्कान, संकोच, कम्प, अंग-स्पर्श आदि । वस्तुतःई पद कृष्णक अनुरंजन आ गोपीक हास-परिहासपूर्ण रूपकेँ प्रस्तुत करैछ ।

ऋतु वर्णन :

विभिन्न ऋतुमे विशेष पर्व वा पावनि-तिहारक अवसरपर प्रेमोल्लासक विविध रूप देखना जाइछ, आ पावस तथा वसन्त तँ अपन प्राकृतिक विशेषताक कारणेँ विशेषरूपसँ प्रेमोद्दीपक अछि । एहि दुनू ऋतुमे शारीरिक सौन्दर्यक संग-संग मानसिक सौन्दर्य सेहो अपन चरम सीमापर पहुँचि जाइछ ।

विद्यापतिक पदावली एक श्रृंगार प्रधान गीतिकाव्य अछि । श्रृंगारक संयोग आ वियोग दुनू पक्षक चित्रणमे विद्यापति प्रकृतिकेँ उद्दीपन विभावक रूपमे प्रस्तुत कयलन्हि अछि । संयोगक क्षणमे प्रकृतिक सभ वस्तु नायक-नायिकाकेँ हृदयक आनन्द आ उल्लासकेँ बढ़यबामे सहायक भेल अछि । यथा -

नब वृन्दावन, नब नब तरुगन; नब नब विकसित फूल ।
नवल वसन्त नबल मलयानिल, मातल नव अलि कूल ।[125]

एहिठाम वसन्त वर्णनक माध्यम सँ विद्यापति एक दिस नवताक पोषण कयलन्हि अछि, तँ दोसर दिस नायक-नायिकाक उल्लासकेँ प्रकृतिक उल्लासक संग तादात्म्य स्थापित कऽ मानवीकरण प्रस्तुत कयलन्हि अछि ।

विद्यापति सौन्दर्यक संग यौवनक स्फुरणशील स्थितिक संकेत प्रकृतिक माध्यमसँ कयलन्हि अछि । सौन्दर्योपासक प्रकृतिवादी, प्रकृतिक दृश्यात्मक रूपसँ यौवनक व्यंजनाक संग आकर्षित होइछ । ओकरहि समानान्तर विद्यापति मानवीय सौन्दर्यक उल्लासमय यौवनसँ आकर्षित भऽ प्रकृति-रूप-योजनाक माध्यम सँ व्यक्त कयलन्हि अछि - 'कनकलता' मे कमल पुष्पित भऽ रहल अछि, ओकरा मध्य चन्द्रमा उदित भेल अछि। क्यो कहैछ जे सेमार सँ आच्छादित भऽ रहल अछि, क्यो कहैछ नहि, ई तँ मेघ सँ आच्छादित भेल अछि । एहि पदक पंक्ति निम्न प्रकारक अछि -

चिकुर सेमार हार अरुझाएल
जूथे जूथे उग चन्दा ।

एहि पदमे रूपकातिशयोक्ति द्वारा रूपात्मक सौन्दर्यक स्थापना कयल गेल अछि, संगहि यौवनक चपलताक भाव सेहो निहित अछि, जे प्रकृतिक स्फुरणशील रूपमे बद्ध अछि । विद्यापति प्रकृतिक माध्यम सँ यौवनक सौन्दर्यकेँ अनेक स्थल पर अभिव्यंजित कयने छथि -

सखि हे कि कहब किछु नहि फूरि,
तडित लता तल जलद समारल आँतर सुरसरि धारा ।

ई पूर्वहि कहल गेल अछि जे विप्रलम्भ आ संयोगमे प्रकृतिक उद्दीपन रूप उपस्थित होइछ, संगहि एहिमे बारहमासा आ षड् ऋतु-वर्णनक परम्परा सेहो पाओल जाइछ । एकर सभक रूप विशेष स्वतंत्र अछि, एहिमे प्रकृतिक संक्षिप्त उल्लेखक संग भावक अभिव्यक्ति भेल अछि । निम्नपदमे वियोगिनीक भावाभिव्यक्ति प्रकृतिक प्रति सहज सौहार्दक संग भेल अछि -

मोराहि रे अंगना चानन केर गछिया
ताहि चढ़ि करूरय काक रे ।
सोने चंचु बांधि देब तोहे बायस
जओ पिया आओत आजु रे ॥

विद्यापति ग्रीष्म आ वर्षाक भयंकरता एहि लेल प्रदर्शित कयलन्हि अछि जे अभिसारिका नायिका एतेक भयानक परिस्थितियोमे संकेत-स्थलपर पहुँचबाक लेल व्याकुल-हृदया अछि । बारहमासामे परम्परा-निर्वाह अछि - वर्षक सभ मास विरहणीक विरह-ज्वालाकेँ आर बढ़बयवला अछि । 'बारहमासा' प्रसंगमे सौन्दर्याभिव्यक्ति पूर्ण रूपेँ अभिव्यक्त भेल अछि -

मोर पिया सखि गेल दूर देस, जौबन दए गेल साल सनेस।
मास अषाढ़ उनत नव मेघ, पिया बिसलेख रहओ निरथेघ ।
कोन पुरुष सखि कोन से देस, करब मोँय तहाँ जोगिन भेस।
साओन मास बरसि घन बारि, पंथ न सूझै निसि अँधियारि ।
चौदिसि देखए बिजुरी रेह, से सखि कामिनि जीबन संदेह ।
भादव मास बरसि घनघोर, सभ दिसि कुहुकय दादुर मोर ।

प्रकृतिक विभिन्न उपकरण विरहिणी राधाक व्यथाकेँ तीव्र कऽ दैछ। संयोगक दशामे सुखप्रदान कयनिहार प्रकृति वियोगमे दुखदायी बनि जाइछ । निम्नपदमे वर्षा-वर्णन द्वारा नायिकाक व्यथित हृदयक भावोच्छ्वासक सौन्दर्यकेँ चित्रित कयल गेल अछि -

सखि हे हमर दुखक नहि ओर ।[126]
ई भर बादर माह भादर, सून मंदिर मोर ॥
झंपि घन गरजंति संतत, भुवन भरि बरसंतिया ।
कन्त पाहुन काम दारुन, सघन खर शर हंतिया ॥
कुलिस कत सत पात मुदित, मयूर नाचत मातिया ।
मत्त दादुर डाक डाहुक, फाटि जायत छातिया ।
तिमिर दिग भरि घोर जामिनि, अथिर बिजुरिक पांतिया ।
विद्यापति कह कइसे गमाओब, हरिबिना दिन रातिया ॥

एही प्रकारेँ अभिसार सम्बन्धी कतिपय पदमे पावस ऋतुक अन्हार रातिक अभिनव चित्रण विद्यापति द्वारा सेहो कयल गेल अछि -

आएल पाउस निविड़ अन्धार । सघन नीर बरसय जलधार ।
घन हन देखियत विघटित रंग । पथ चलइत पथिकहु मन भंग॥

× × × × × ×

जलद ससि जलधार, काजरे रांगलि राति ।
भमए भुजंगम भीम, पंके पुरल चौसीम ।
दिग मग देखिए पोर, पयर दिअ बिजुरी अजोर । (334)

ऋतु-वर्णनमे विद्यापतिक वसन्त-ऋतु वर्णन सर्वप्रशंसित एवं श्लाघ्य अछि । बाल-वसन्त, युवा वसन्त, राजा बसन्त आदि कएक रूपमे वसंतश्रीक चित्रण कयल गेल अछि । विद्यापतिक नायिका अपन सखी-बहिनपाक संग एक स्थलपर ऋतुराज बसंतक चुमान करबाक लेल प्रस्तुत होइछ –

अभिनव पल्लव बइसक देल, धवल कमल फुल पुरहर भेल। (140)
करु मकरंद मंदाकिनि पान, अरुन असोक दीप दहु आन ।
माई रे आज दिवस पुनुमन्त, करिअ चुमावन राय वसन्त ।

वस्तुतः कामक सखा वसंतक उन्मादक स्वरूपसँ विद्यापतिक हृदयक सामंजस्य स्थापित भऽ गेल छल । यैह कारण जे विद्यापति, वसंतक प्रभाव मात्र नायक-नायिकेधरि नहि, प्रत्युत समस्त मानव समाजपर देखलन्हि –

नाचहु रे तरुनी तजहु लाज, आएल वसंत ऋतु बनिक-राज ।
हस्तिनि चित्रिनि पदुमिनि नारि, गोरी सामरि एक बुड़ि बारि ॥

वियोगजन्य मानसिक सौन्दर्य :

चक्रवाक दम्पति कामशास्त्र वा स्मरागमक पारंगत प्राणी अछि । ओएह एकर मर्मज्ञता । ओ नित्तहुँ एक-दोसरा सँ बिछुड़िकऽ एक-दोसराक लेल नव भऽ जाइछ । सतत् अमृतपान सँ ऊबि कय जीभक स्वाद बदलबाक लेल शिव विष-पान कयलन्हि ।[127] श्रीहर्षक उक्त कथनमे प्रेमक एकरसताकेँ दूर करबाक लेल वियोग आवश्यक मानल गेल अछि, कारण एहि सँ प्रेमी आ प्रेमिका पुनः एक-दोसराक लेल नव बनि जाइछ। नातिदीर्घ वियोगमानक सम्बन्धमे ओकर युक्तियुक्तता आ मनोवैज्ञानिकता असंदिग्ध अछि, परंच दीर्घ वियोग (प्रवास) मे ई परिवर्त्तन नहि रहि, अत्यन्त गंभीर रूप धारण कऽ लैछ । प्रवासजन्य विप्रलम्भे मे कवि प्रेमी-प्रेमिकाक अनेक मानसिक स्थितिक चित्रण करैत अयलाह अछि ।

वस्तुतः विरह प्रेमक कसौटी थिक। संयोगावस्थामे हृदयक आशा-निराशाक ओतबा द्वन्द्व नहि मचैछ जतबा विरहदशामे । विप्रलम्भ एक एहन दशा थिक जाहिमे प्रेम धीप कऽ सोनक समान उज्ज्वल भऽ जाइछ । एहिठाम हृदयक समस्त कालुष्य भस्म भऽ जाइछ । प्रेमी आ प्रेमिकाक

शारीरिक दूरी अन्तःवृत्तिकेँ जगा दैछ । वासनाक अन्धकार प्रायः लुप्त भऽ जाइछ आ प्रेमक विशुद्ध अनुभूतिमे विरहिणी डूबि जाइछ । शास्त्रीय ग्रंथसभमे विप्रलम्भक चारि भेद कहल गेल अछि – पूर्वराग, मान, प्रवास आ करुण । विद्यापति एहिमे सँ प्रथम तीन पर बेस प्रकाश देलन्हि अछि । करुण विप्रलम्भक विद्यापतिमे अभाव जकाँ अछि। अतः एहिठाम एहिसभक संक्षिप्त विवेचन मानसिक सौन्दर्यक सन्दर्भमे कयल जाएत ।

पूर्वराग : श्रवण, दर्शन सँ पूर्वक रागारूढ़ – नायिका जाहि विशेष दशाकेँ मिलनक अभावमे प्राप्त करैछ, ओकरा पूर्वराग कहल जाइछ । पूर्वरागमे अभिलाषा, उद्वेग, उन्माद, विलाप, व्याधि आदि दशाकेँ शास्त्रसंमत एवं औचित्यपूर्ण बूझल जाइछ । प्रवासमे वियोगक गंभीरता परिलक्षित होइछ, तँ पूर्वानुरागमे संयोगाभिलाषक तीव्रता, कारण पूर्वानुरागक सूत्र-संचालन, अभिलाषाक तीव्रता करैछ आ प्रवासक दीर्घ अवसाद । पूर्वानुरागमे सामाजिक मर्यादाजन्य अवरोध रागकेँ आर तीव्र बना दैछ। पूर्वानुरागिनी नायिका, अवस्थाक दृष्टियेँ प्रायः मुग्धा होइछ । विद्यापतिक पूर्वराग साक्षात्-दर्शन पर आधारित अछि । साक्षात्-दर्शनक चारि-भेद बताओल जाइछ – साक्षात् दर्शन, चित्र, स्वप्न आ श्रवण। साक्षात्-दर्शन-जन्य पूर्वानुराग विषयक विद्यापतिक निम्नपद अत्यन्त मनोरम अछि –

किए मम दीठि पड़लि ससिबयना,
निमिख निबारि रहल दुहु नयना ।

एतय कृष्णकेँ अनुताप छन्हि एहि बातक जे किएक हुनक दृष्टि ओहि शशिवदना पर पड़लन्हि ? ओकरा देखलाक पश्चात् ओ परवशताक अनुभव करय लगैछ । नायिकाक पयोधर, वचनामृत, चरण, शरीर-यष्टि, वंकिम नेत्र आदि सभक सम्मिलित प्रभाव कृष्णकेँ परवश बना दैछ । एहि प्रकारेँ विद्यापति एहिठाम कृष्णक प्रेम-तरंगक चित्रण अत्यन्त मार्मिकतापूर्वक कयलन्हि अछि । एतबहि नहि, राधाक साक्षात्कारक पश्चात् कृष्णक की दशा भेलन्हि, तकर अनुमान दूतीक निम्न वचन सँ लगाओल जा सकैछ –

डरे न हेरए इन्दु निन्दए चन्दन बिन्दु मलयानिल बोल आगि,
तुअ गुन कहि कहि मुरझि पलए महि रयनि गमाबए जागि। (551)

नायकक अल्पकालिक दर्शनहि नायिकाक पूर्वारागक कारण बनि जाइछ –

हमे हँसि हेरला थोरा रे, सफल भेल सखि कौतुक मोरा रे (244)
हेरतहि हरि भेल आन रे, जनि मनमथ मन बेधल बान रे ॥

कृष्णक अल्पकालीन दर्शन सँ राधाक केहन स्थिति भेल तकर व्यंजना दूती वचन द्वारा कयल गेल अछि –

किसलय शयन आगि कए मानय, सखिगन न पार बुझाय ।

स्वप्न :

दर्शनजनित पूर्वरागक उदाहरण सेहो पदावलीमे प्राप्त अछि । स्वप्न-दर्शन यद्यपि प्रत्यक्ष दर्शनक पश्चाते संभव अछि, तथापि काल्पनिक जगतमे ई संभव अछि । स्वप्न-दर्शन अभिलाषाक प्रगाढ़ताक द्योतक थिक । सामाजिक बन्धनसभ सँ दबल गुप्त वासना स्वप्नमे प्रकाश पाबि जाइछ आ एक प्रकारेँ बिनु सामाजिक बन्धनकेँ तोड़नहि नायक-नायिका केँ अभीष्टक प्राप्ति भऽ जाइछ । विद्यापतिक नायिका कृष्णक दर्शन सँ तृप्तिलाभ कऽ रहलि छलि कि तखनहि सखी द्वारा ओकर नींद तोड़ि देल जाइछ आ स्वप्निल लोक नष्ट-भ्रष्ट भऽ जाइछ – एही प्रकारेँ एकटा अन्य गीतिपदमे अचानक निद्राभंग भऽ गेलापर प्रियसमागमक सुख सँ वंचित विरहिणीक क्षोभ एवं नैराश्यक चित्र सेहो विद्यापति द्वारा अंकित कयल गेल अछि –

सपने देखत हरि उपजल रंगे,
पुलके पुरल तनु जाग अनंगे ।
बदन मोराए अधर रस लेला,
निसि अवसान कान्ह कहाँ गेला ।
का लागि नींद भांगलि विहि मोर,
न भेले सुरत सुख लागल भोर । (571)

एहि प्रकारेँ पूर्वराग-विप्रलम्भ विद्यापतिक कृष्ण आ राधामे समान-रूपेँ चित्रित भेल अछि जे अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होइछ । वस्तुतः विद्यापतिक नायक-नायिकामे सखी वा दूती द्वारा एक-दोसराक शील, गुणादिक विषयमे जानि, किंवा चित्र दर्शन सँ पूर्वरागक स्थिति नहि उपस्थित होइछ, प्रत्युत दुनूमे साक्षात्-दर्शनहि सँ पूर्वराग उत्पन्न होइछ ।

मान :

मानः कोपः स तु द्विधा प्रणयेर्ष्या समुद्भवः ।

प्रणयवश अथवा ईर्ष्यावश दयितक प्रति कयल गेल कोप-भाव केँ मान कहल जाइछ । आचार्यलोकनि मानक दू भेद कयलन्हि अछि – प्रणयमान आ ईर्ष्यामान । पदावलीमे दुनू प्रकारक मानक वर्णन उपलब्ध अछि ।

प्रणयमान :

ई प्रेमक असाधारण गति थिक । प्रेमक तीव्रताकेँ अनुभव करबाक लेल यदि वास्तविक वियोग नहियो रहैछ, तँ कृत्रिम वियोग उत्पन्न कऽ लेल जाइछ । ई भाव एक प्रकारक 'हाव' सैह कहल जाएत। मान मात्र मानक बुभुक्षा शांत करबाक लेलहि भऽ सकैछ । एहि प्रकारक मानक अनेक उदाहरण विद्यापतिक पदावलीमे उपलब्ध अछि । नायिका कृत्रिम मान ठनबामे असफल होइछ आ सखी सँ स्पष्टतः कहैछ – 'कि करबि मान जओं आइति होए ।' वस्तुतः ओ परवश अछि । तेँ कृष्णक सम्मुख मान-प्रदर्शनक हेतु मुँह नुकओलो उत्तर जखन हँसी पर काबू नहि रहैछ तँ राधा कहैछ जे मान करबो करी तँ कोना ? विद्यापतिक कथन छन्हि जे ई तोहर दोष नहि, बुभुक्षित मदन तोरा एहि प्रकारेँ रोष करबाक लेल प्रेरित कयलकौक अछि । प्रणय मानक एकटा उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

मानिनि मान आबहु कर ओड़ ।
रयनि बहलि हे रहलि अछि थोड़ ॥
गुनमति मन गुन न धरिअ गोए ।
सुपुरुष दाने अधिक फल होए ॥
वेरा एक हेरय मन ताप ।
पेमलता तोड़ले बड़ पाप ॥
लोचन भमर हमरे करु आस ।
तुअ मुख पंकज करओ विलास ॥ ।122।

ईर्ष्याजनित मान :

पतिक अन्य नायिकाक संग विलास करबाक वा सुनि, देखि वा अनुमान कय पतिक प्रति कोप प्रकट करब ईर्ष्यामान कहबैछ । एकर अनुमान तीन-प्रकारेँ भऽ सकैछ – (1) नायकमे पर-स्त्री-सुरत-चिह्न केँ देखि कय; (2) सहसा नायकक मुँह सँ अन्य नायिकाक नाम बहार भेलापर; (3) स्वप्नमे दयितकेँ कोनो स्त्रीक सम्बन्धमे प्रलाप करैत सुनि कय । विद्यापतिक पदावलीमे प्रथम दू प्रकारसँ अनुमित नायिकागत ईर्ष्याजनितमानक वर्णन यथेष्ट भेल अछि । एहि संबन्धमे एक बड़ प्रसिद्ध पद अछि –

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद, रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ, रयनि गमाओलह जन्हिके साथ ॥
कुच कुंकुम माखल हिय तोर, जनि अनुराग राँगि करु गोर ॥

आनक भूषन लागल अंग, उकुति बेकत होअ आनक संग ॥

एहि पदमे खण्डिता नायिकाक सुन्दरचित्र तँ अछिये, नायिकाक मोनमे अन्या-रति-चिन्ह्-दर्शन, अन्या-नाम-कीर्त्तन सँ उत्थित नायकक प्रति जे ईर्ष्यामान उल्लिखित अछि, ओकरा नायिका, अपन सौभाग्य कहैछ आ एहि प्रकारेँ नायकक आचरण पर मार्मिक व्यंग्य करैछ –

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन,
वचन बोलत आध आधे ।
रति-आलस सामर तनु झामर,
हेरि पुरल मोर साधे ॥

प्रवास :

कार्यवश, शापवश अथवा भ्रमणवश नायक केँ अन्य देशमे चल जयबाकेँ प्रवासक संज्ञा देल जाइछ । प्रवासीक नायिका मइल वस्त्र धारण करैछ, आहि-आहि करैछ, रुदन करैछ आ भूपतित होइछ । असौष्ठव (मलिनता), संताप, पांडुता, दौर्बल्य, अरुचि, अधीरता, अस्थिरता, तन्मयता, उन्माद, मूर्च्छा आ मरण-ई काम-दशासभ, एहि समयमे, नायक-नायिका दुनूमे देखल जाइछ । पदावलीक प्रवास कृष्णक कार्यवशात् मथुरागमन पर आधारित अछि ।

प्रवासमे विरह वेदनाक चित्रण विस्तारपूर्वक कयल जा सकैछ । कृष्णकेँ मथुरा चल गेला पर कविकेँ राधाक विरह व्यथाकेँ अभिव्यक्त करबाक विशेष अवसर प्राप्त होइछ । विरहिणी राधाक हृदयक सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर्दशासभक चित्रण विद्यापति सफलतापूर्वक कयलन्हि अछि । कृष्णक बाट देखैत-देखैत नायिकाक आँखि फूलि जाइछ, जीवन भार-स्वरूप बनि जाइछ । नायिकाक कातरता, दैन्य आ उत्सुकताक मार्मिक व्यंजना निम्नपद मे भेल अछि –

लोचन धाए फेधाएल, हरि नहि आयल रे ।
सिव सिव जिबओ न जाए, आस अरुझायल रे । (527)

चिरप्रतीक्षाक पश्चातो जखन प्रिय नहि घुरिकऽ अबैछ तँ नायिका निराश भऽ जाइछ । आँगनमे बैसल कौआकेँ बजैत देखिकऽ ओकरा हृदयमे आशाक संचार होइछ । ओ स्त्री-प्रकृतिक अनुसार शकुन विचार करैत कौआ सँ प्रार्थना करैछ –

काक भाख निज भाखह रे, पहु आओत मोरा ।
खीर खांड भोजन देब रे, भरि कनक कटोरा ।

एवं प्रकारेँ पदावलीमे नायिकाक प्रवासजन्य विरह-वेदनाक अनेकानेक मर्मस्पर्शी-वर्णन उपलब्ध अछि ।

अपरुपक सौन्दर्य :

विद्यापति मुख्यतः अपरुपक कवि छथि । हुनक अपरुप वा अपरुब अपूर्व आ अपूरब अछि । ई अपरुप अलौकिक अछि । सौन्दर्य सम्बन्धी हुनक सम्पूर्ण दृष्टिकोण एहि एक 'अपरुप' शब्दमे समाहित भऽ गेल अछि । अपरुप ओ रूप वा सौन्दर्य अछि जे विद्यापतियेक शब्दमे 'तिल-तिल नूतन होए' अर्थात् जे अनुपम अछि, नित नवीन रहय वला अछि । ई अक्षय अछि, अनन्त अछि, विश्वव्यापी अछि । सौन्दर्य मोनकेँ कतबा भाव-विह्वल आ एकोन्मुख कऽ दैछ, से विद्यापतिकेँ बुझल छलन्हि । तेँ ओ प्रायः अपरुप वा सौन्दर्यक अतिशयताकेँ एक सजीव पदार्थक रूपमे ग्रहण कयलन्हि । हिनक 'अपरुप' सम्पूर्ण त्रिभुवनक विजेता अछि, ई अपरुप ककरहु चित्तकेँ चंचल कऽ सकैछ, कोनो ज्ञानीकेँ क्षुब्ध बना सकैछ –

सुधामुखि के विहि निरमल बाला ।
अपरुव रूप मनोभव मंगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥ [128]

'माधव की कहब सुन्दर रूपे, सजनी अपरुप पेखल रामा, ए सखि पेखलि एक अपरुप', आदि पंक्ति सँ आरम्भ भेनिहार गीतसभमे एहि अपरुप सौन्दर्यक माया-संकुलभावक व्यंजना कयल गेल अछि । राधा आ कृष्ण सँ सम्बन्धित अपरुव-वाची पदक संख्या पदावलीमे बीसहुँ सँ अधिक अछि । ई हुनक काव्य-मर्मज्ञता, मनोवैज्ञानिक भाव-प्रवणता, रसानुप्रियता तथा विलक्षण सहृदयताक परिचायक अछि । हुनक ई अपरुप मोन केँ विह्वल बना दैछ, प्राणमे शक्तिक संचार करैछ आ शरीरमे रोमांच उत्पन्न करैछ । एही अपरुपक लेल विद्यापतिक नायिका भुवन-मोहिनी बनि हमरा सभक समक्ष प्रस्तुत होइछ –

देख-देख राधा रूप अपार ।
अपरुब के विहि आनि मिलाओल खितितल लावनि-सार । [129]

यैह कारण अछि जे विद्यापतिक अपरुप सौन्दर्य, साधारण भइयो कऽ असाधारण अछि, चिर परिचित भइयो कऽ चिरनूतन अछि । वस्तुतः हुनक ई अपरुप सौन्दर्य लावण्यक सार थिक, ऋषि-मुनि-योगी-यती सभक मोनकेँ चंचल कयनिहार थिक । अपरुप सौन्दर्यक मान्यता विद्यापतिक

पदावलीमे अनेक छवि आ छटाक संग वर्णित भेल अछि । अपरुप-शब्द-वाहक सौन्दर्य-चित्रणक किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

(1) ए सखि पेखलि एक अपरुप ।
सुनइत मानिनी सपन सरुप ।
कमल युगल पर चाँदक माला ।
ता पर उपजल तरुन तमाला ॥
ता पर बेढ़लि बिजुरी लता ।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥ (636)

(2) माधव पेखल अपरुब बाला ।
सैसव यौवन दुहु एक भेला ॥

(3) पीन पयोधर दुबरिगता, मेरू उपजल कनकलता ।
कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई, अति अपरुब देखल साई ॥
(237)

(4) आज देखल जाति आएत ।
अपुरुब विहि निरमान रे ॥

(5) सुधामुखि के विहि निरमल बाला ।
अपरुब रूप मनोभव मंगल, त्रिभुवन विजयीमाला । (22)

(6) सजनी अपरुप पेखल रामा ।
कनकलता अवलम्बन उअल, हरिन हीन हिम धामा ।
जँह-जँह पग-युग धरई तँहि-तँहि सरोरूह झरई ॥
जँह-जँह झलकत अंग, तँहि-तँहि बिजुरि तरंग ।
कि हेरल अपरुब गोरि, पइढ़ल हिय मधि मोरि ॥ (626)

(7) माधव अपरुब तोहर सिनेह ।
अपने विरह अपन तनु जरजर,
जिबइत भेलि सन्देह ।

अन्तिम पदमे विरह-दशाजन्य प्रेमक चरमोत्कर्ष प्रदर्शित अछि । ई ओ अवस्था अछि, जखन प्रेमिका प्रियमय भऽ जाइछ । 'अनुखन माधव माधव सुमरित' वाला पद्यांश पर टिप्पणी करैत श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त लिखलन्हि अछि जे "एत उच्च-भावेर कविता वैष्णव काव्ये आर नाइ" । गीतगोविन्दक राधाक सेहो यैह स्थिति छैक –

महुखलोकित मण्डन लीला मधुरपि रह मिति भावन शीला ।

चिरनूतन-सौन्दर्य :

सौन्दर्यक सभसँ पैघ विशेषता अछि चिरनूतनता । विद्यापतिक सौन्दर्यक सेहो सभसँ पैघ विशेषता थिक चिरनूतनता । माघ सेहो सौन्दर्यक एहि चिर-नूतनता दिस संकेत करैत लिखने छथि –

क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रणीयतायाः ।[130]

नित्य नूतनताक कारणहि एहि सौन्दर्यकेँ देखि कऽ विद्यापतिक आँखि कहियो तृप्त नहि भऽ पबैत छन्हि –

जनम अवधि हम रूप निहारल,
नयन न तिरपित भेल ।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल,
स्रुतिपथ परस न गेल ।[131]

विद्यापतिक यौवन आ सौन्दर्य चिरनूतन यौवन आ अभिराम सौन्दर्य अछि – कि आरे ! नव यौवन अभिरामा

जत देखल तत कहए न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा ।[132]

विद्यापतिक नेत्र, सौन्दर्य-पारखी अणुवीक्षण यन्त्र तुल्य अछि । छोट-छोट चित्र, सूक्ष्म सँ सूक्ष्म वर्णन हुनक आँखिमे वर्णनीय सुन्दर रूपक संग अवतरित होइछ आ एहन रसमय अभिव्यक्तिक चित्रणमे विद्यापति निष्णात छथि । ओ नवीनताक चिर आकांक्षी छथि । ओ चिर नवीनतावादी छथि :-

नव वृन्दावन, नव नव तरुगन, नव नव विकसित फूल ।
नवल वसन्त, नवल मलयानिल, मातल नव अलि कूल ॥[133]

हुनक ई सौन्दर्य पल-पल नवीनताकेँ धारण कयनिहार सौन्दर्य अछि । ई कहियो पुरान नहि होइछ, एहि सँ मोन नहि अघाइछ । छलियाक ई सौन्दर्य कखनहु आँखिसँ दूर नहि होइछ, दोसराक सौन्दर्य आँखिमे नहि अटैछ । ई सौन्दर्य साधारण सौन्दर्य नहि बुझना जाइछ, जीवनक सम्पूर्ण सौन्दर्य जेना एहिठाम ढलकि कऽ एकाकार भऽ गेल हो । आँखि एक पलक लेल दूर नहि होबय चाहैछ –

अवनत आनत कए हम रहलहु बारल लोचन चोर ।
पियामुख-रुचि पिवए धाओल जनि से चाँद चकोर ।[134]

आँखिक एहि प्रकारक स्वरूप साधारण नहि । 'जनम अवधि हम रूप निहारल, नयन न तिरपित भेल ।' कविताक आँखि ओहि सौन्दर्यकेँ

प्रत्यक्ष करबाक शक्ति दैछ ।[135] मुदा ई सौन्दर्य कविताक छन्दमे नहि अँटि पबैछ । कविता ओकरा लेल सीमित छैक । मात्र दू आँखि सँ ओहि सौन्दर्यकें नहि देखल जा सकैछ – तें कवि कहैछ –

सूरपति पाए लोचन मागओ, गरुड़ मागओं पाँखि ।
नन्दक नन्दन में देखि आबओं, मन मनोरथ राखि ॥

इन्द्र सँ सहस्र आँखि माँगि कऽ एहि सौन्दर्यकें देखबाक प्रयास कयल जाइछ, कारण ई तिल-तिल नूतन भेनिहार सौन्दर्य अछि –

सखि, कि पूछसि अनुभव मोय ।
सेहो पिरित अनुराग बखानिए, तिल तिल नूतन होय ॥ (768)

वस्तुतः 'तिल-तिल नूतन' भेनिहार ई पिरित-अनुराग जन्मजन्मान्तरक थिक, तथापि आँखि रसपान कयलो उत्तर नहि अघाइछ । अतृप्ते रहि जाइछ । 'लाख-लाख' आ 'हिय-हिय' केर पुनरावृत्ति साभिप्राय अछि । ई वीप्सा-मोहक पुनरावृत्ति नहि, आकुल-व्याकुल प्राणक सरस-मधुर पुकार थिक, हृदयक हाहाकार थिक । एहिमे भावनाक गांभीर्य आ संवेदनाक प्राचुर्य अछि ।

सहज सौन्दर्य :

वस्तुतः विद्यापतिक सौन्दर्य-वर्णन मात्र अपूर्व, अलौकिक आ अपरुपे नहि, प्रत्युत सहज, स्वाभाविक, प्राकृतिक आ सरल-सरस अछि। एहि सौन्दर्यक सभसँ पैघ गुण ओकर सहजता अछि । एहि सौन्दर्यमे कृत्रिमता आ बनाबटीपनक कतहु कोनो भाव नहि । ई ओ मर्मस्पर्शी सौन्दर्य अछि जे सहजहि मोनकें मोहि लैछ, तुरन्त हृदयकें छूबि लैछ –

सहजहि आनन सुन्दर रे, भौँह सुरेखलि आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे, उड़ए पसारल पाँखि ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे, जतहि गेलि वरनारि ।
आसा लुबुध न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ॥ (38)

मात्र मुँहे सुन्दर नहि, भौँह सुरेखित सोनमे सुगन्ध-तुल्य अछि। ई सहज सुन्दर नायिका अपन चुम्बकीय सौन्दर्यसँ नायककें आकृष्ट करबामे पूर्ण समर्थ अछि –

सहज सुन्दर गोर कलेवर पीत पयोधर सिरी ।
कनकलता अति विपरीत फरल युगल गिरी ॥

नायिकाक शरीरमे एक अत्यन्त विपरीत बात दृष्टिगत होइछ । पर्वत पर तँ लताकें सभक्यो देखने होएत, मुदा कनकलता (शरीर) मे दू

पर्वत-(कुच-द्वय) कें सुस्पष्ट होइत मात्र विद्यापतिये देखि सकबामे समर्थ छथि । अतः हुनक उक्ति अछि –

सहज प्रसन मुख, दरस हृदय सुख, लोचन तरल तरंग ।

पारस-रूप सौन्दर्य :

विद्यापतिक ई अपरुप-सौन्दर्य ओ पारस-रूप थिक जे कोनहु साधारण रूपकें स्वर्णिम सौन्दर्य प्रदान करैछ – मानू पारस प्रत्येक लोहाकें सोना बना देने हो । एहि पारस-रूपक प्रभाव विश्वव्यापी अछि। हिन्दीक प्रेममार्गक कवि जायसीक नायिका पद्मावती हँसि देने छलि तँ सूर्योदय भऽ गेल छलैक, पुष्प प्रस्फुटित भऽ गेल छलैक, तहिना विद्यापतिक नायिका जतय-जतय-पयर धरैछ, ओतय अमृतक वृष्टि होबय लगैछ । वस्तुतः एहि सौन्दर्यमे चुम्बकत्व रहैछ, जे ककरहुँ अपना दिस आकृष्ट कऽ लैछ । ओहि चुम्बकीय सौन्दर्य दिस सभ क्यो सहज-स्वाभाविक रूपमे आकृष्ट भऽ कय चल अबैछ । विद्यापतिक पारस-रूप-सौन्दर्यक किछु उदाहरण द्रष्टव्य :-

(1) मन करे तहाँ उड़ि जाइअ, जहाँ हरि पाइअ रे ।
प्रेम-परसमनि जानि, आनि उर लाइअ रे ॥[137]

(2) आज देखल धनि जाइत रे, मोहि उपजल रंग ।

(3) जहाँ जहाँ नयन विकास, तँहि-तँहि कमल प्रकास ।
जहाँ लहु हास संचार, तँहि-तँहि अमिय विकार ॥
जहाँ जहाँ कुटिल कटाख, ततहि मदन-सर लाख ।

सूक्ष्म सौन्दर्य :

सौन्दर्योपासक कवि सौन्दर्यक मात्र भोक्ते नहि, निर्माता सेहो होइछ । विद्यापतिक सौन्दर्य मात्र शारीरिक नहि, अपितु मानसिक एवं सूक्ष्म सेहो अछि । हुनक अपरुप, सूक्ष्म सौन्दर्यहिक पर्याय थिक । प्रेमिकाक मानसिक प्रेम-भाव एवं हृदयक सुकुमारताक चित्र लौकिक भइयो कऽ अलौकिक अछि, दिव्योन्मुख अछि । आ यैह कवि विद्यापतिक अपरुप-सौन्दर्यानुभूतिक गूढ़ रहस्य थिक । ओ सौन्दर्यकें मात्र देखबे नहि कयलन्हि, स्वयं ओकर अनुभवो कयलन्हि । अतः हुनक सौन्दर्य-चित्रण भोगल यथार्थ पर आश्रित अछि । यैह कारण जे हुनक सौन्दर्य साधारण भइयोकऽ असाधारण अछि, चिर परिचित भइयोकऽ चिरनूतन अछि । साहचर्य सँ उत्पन्न प्रेम सेहो नित नूतन बनल रहैछ । एहि चिरनूतन सौन्दर्यकें अपरुप नाम सँ संज्ञायित कयल गेल अछि । ओ शाश्वत, सत्य एवं मंगलमय सौन्दर्यक अभिनव व्याख्या

प्रस्तुत कयलन्हि अछि, अँग्रेजीक कवि कीट्स सेहो सौन्दर्यकेँ सत्य मानलन्हि अछि, तुलसीदास 'छवि गृह दीप शिखा जनु बरई' कहि एहि सूक्ष्म सौन्दर्यक अंकन कयलन्हि अछि । विद्यापतिक सौन्दर्य-वर्णनक एकगोट वैशिष्ट्य अछि जे ओ सूक्ष्म सँ सूक्ष्मतर आ सूक्ष्मतम होइत जाइछ । सूक्ष्म सौन्दर्यक कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) चाँद सारलए मुख घटना करु लोचन चकित चकोर ।
अभिय धोए आँचर धनि पोछलि दह दिस भइल इजोर ॥ (21)

नायिकाक रचना चन्द्रमाक सारतत्व सँ कयल गेल अछि । अमृतमयी नायिकाक अपार सुन्दरताक वर्णन संभव हो तँ कोना ? विद्यापतिक नायिकाक मुँह पर सर्वदा चन्द्रमा उगल रहैछ -

(2) कनकलता अरविन्दा, दमना माझ उगल जनि चन्दा ।
केहु कहए सैवल छपला, केहु बोलए नहि नहि मेघ झपला॥

हुनक नायिकाक शरीर नव बादलक बीच बिजुरीक रेखाक समान अछि -

(3) ससन परस खसु अम्बर रे देखल धनि देह ।
नव जलधर तव संचर रे जनि बिजुरी रेह ।
आज देखल धनि जाइत रे मोहि उपजल रंग ।
कनक लता जनि संचर रे महि निर-अवलम्ब । (5)

(2) पुरुष-सौन्दर्य :

मानवीय सौन्दर्यक अन्तर्गत विद्यापति नारी-सौन्दर्यक अतिरिक्त पुरुष सौन्दर्यक वर्णन सेहो कयने छथि । पुरुष सौन्दर्यक रूपमे मात्र कृष्णक सौन्दर्य-चित्रण प्राप्त अछि । जतय पुरुष नारीक अपूर्व सौन्दर्यसँ मंत्र-बिद्ध अछि, तहिना विद्यापतिक नारी सेहो पुरुषक सुन्दरतापर प्राणपनसँ समर्पित अछि । राधाक दृष्टि मे कृष्णक सौन्दर्य दर्शनीय अछि -

कि कहब हे सखि कानुक रूप ।
के पतिआएत सपन सरूप ॥
अभिनव जलधर सुन्दर देह ।
पीत वसन पर दामिनी रेह ॥
सामर झामर कुटिलहिं केस ।
काजर साजल मदन सुवेस ।
जातकि केतकि कुसुम सुबास ।

फुलसर मनमथ तेजल तरास ॥
विद्यापति कि कहब आर ।
सून करल बिहि मदन भण्डार ॥ (635)

राधाक सखीलोकनि कृष्णक अपूर्व सौन्दर्यक वर्णन करैत राधाकेँ प्रिय-मिलनक हेतु उसकबैत अछि -

ए सखि पेखलि एक अपरुप । सुनइत मानबि सपन-सरूप ।
कमल जुगल पर चांदक माला । तापर उपजल तरुन-तमाला ॥
तापर बेढ़लि बिजुरी लता । कालिन्दी-तट धीरे चलिजाता ॥
विमल विम्ब फल जुगल विकास । तापर कीर थीर करु वास ॥
ता पर चंचल खंजन जोर । तापर सांपिनि झाँपल मोर ॥

विद्यापति प्रेमक पीड़ाक आश्रय मात्र अपन नायिके केँ नहि बनबैछ, हुनक नायक सेहो एहि मधुर-मादक पीड़ाक आस्वादन करैछ । विरहमे मिलनोत्कंठा, पीड़ाक-तीव्रता, आतुरता आ शारीरिक अकुलाहटि कृष्णमे सेहो देखल जाइछ । विरह सँ आकुल-व्याकुल कृष्णक सौन्दर्य देखबा योग्य अछि । सखीक - कथन अछि -

आज पेखल नन्दकिसोर ।
केलि-विलास सबहु अब तेजल अहनिसि रहत विभोर ।
जब घर चकित बिलोकि विपिन-तट, पलटि आओल मुख मोरि ।
तब धरि मदन मोहन तरु कानन लोटए धीरज छोरि ।

एवं प्रकारेँ विद्यापतिक गीतिपदमे कृष्णक शारीरिक एवं मानसिक दुनू प्रकारक सौन्दर्य-चित्रण अत्यन्त सान्द्रतापूर्वक कयल गेल अछि । श्रृंगारकाव्यमे नारीयेक प्रधानता रहैछ, अतः प्रायः कवि नारी-सौन्दर्यक वर्णन कइयेकऽ अलम् कऽ दैछ, मुदा विद्यापतिक सौन्दर्य-व्यापिनी दृष्टि सँ पुरुष-सौन्दर्य सेहो निरपेक्ष नहि रहि सकल अछि । ओ कृष्ण-सौन्दर्यक चित्रण सेहो ओही मनोयोगसँ कयलन्हि अछि । ओना ई बात दीगर थीक जे ओ राधाक सौन्दर्यक भाँति अधिक विस्तार केँ नहि प्राप्त कऽ सकल अछि । गीतिकाव्यमे पुरुष-सौन्दर्यक विस्तारक विशेष गुंजाइसो नहि रहैछ । विद्यापति कृष्णक सौन्दर्य-चित्रण प्रकृतिक उपमानहिसभक संग कयलन्हि अछि । कृष्णक आन्तरिक सौन्दर्य विरहावस्थामे प्रकट होइछ, मुदा विद्यापति जे सौन्दर्य राधाक भावनाकेँ दऽ पौलन्हि, ओ कृष्णक भावकेँ नहि । कृष्ण तँ मात्र एतबे कहि पबैछ -

कठिन कलेबर तेई चलि आओल,
चित रहलि सोई ठामा ।
से बिनु राति दिबस नहि भावए,
ताकि रहल मन वामा ।

अभिव्यंजनाक सौन्दर्य :

सुन्दर वर्णनक लेल सौन्दर्यमयी अभिव्यंजना आवश्यक होइछ । विषय कतबो सौन्दर्ययुक्त हो, परंच ओहिकेर व्यंजनामे जँ सौन्दर्य नहि, तँ विषयक सौन्दर्ये धूमिल पड़ि जाइछ । एहिमे कोनो सन्देह नहि जे विद्यापति अभिव्यंजना-सौन्दर्य पर यथेष्ट ध्यान देने छथि । अभिव्यंजना सौन्दर्यक अन्तर्गत शब्द-सौन्दर्य, नाद-सौन्दर्य, संगीत-सौन्दर्य आ भाषा-सौन्दर्य अबैछ।

शब्द-सौन्दर्यक अर्थ होइछ शब्दक सूक्ष्म चयन । सभ पर्यायवाची शब्द प्रत्येक स्थानपर एकहि भावकेँ व्यक्त नहि कऽ पबैछ । अतः जागरुक कलाकार भावनानुरूपेँ शब्दसभकेँ ग्रहण करैछ । विद्यापतिक शब्द-चयन पूर्णतः भावानुरूपहि अछि । उदाहरण द्रष्टव्य -

नन्दक नन्द कदम्बक तरुतर,
धिरे-धिरे मुरलि बजाव । (258)

एहिठाम 'नन्दक नन्द' शब्द ध्यानकेँ आकृष्ट करैछ । कृष्णक वर्णन श्रृंगारक रसक अन्तर्गत कयल गेल अछि । यदि एहिठाम मुरारि शब्दक प्रयोग भेल रहैत तँ भाव ओतबा मर्मस्पर्शी नहि भऽ पबैत । नन्दक नन्दन सँ एहन कृष्णक चित्र स्पष्ट भऽ उठैछ जिनक शरीरमे यौवनक पूर्ण विकास अछि आ जनिक मानसमे प्रेम आ श्रृंगारक लोल लहरि इतरा रहल अछि ।

शब्द-चित्रणक लेल कविकेँ शब्दक पारखी होयब अत्यावश्यक। विद्यापतिक पदावलीमे अगणित शब्द-चित्र उपलब्ध अछि । वयःसन्धिक प्रसंगमे बाल्यावस्थाक आ युवावस्थाक मध्य डगमग करैत नायिकाक शब्द-चित्र अत्यन्त मार्मिक भऽ उठल अछि -

खने खने नयन कोन अनुसरई ।
खने खन वसन धूलि तनु भरई ।
खने खन दसन-छटा छुट हास ।
खने खन अधर आगे गहु बास । (616)

भाव आ तज्जन्य प्रतिक्रियाक एहि सँ अधिक साकारता आर भइयो की सकैछ ?

नाद-सौन्दर्यक अभिप्राय विषयकेँ स्वरक माध्यम सँ व्यक्त करब होइछ । विद्यापतिक निम्न पंक्तिमे नाद-सौन्दर्यक अनुपम अभिव्यंजना भेल अछि - बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया ।

नटति कलावति माति श्याम संग,
कर करताल प्रबन्धक ध्वनिया ।
डम डम डंफ डिमिक डिम मादल,
रुनझुन मंजिर बोल ।
किंकिन रनरनि बलआ कनकनि,
निधुबन रास तुमुल उतरोल ।
बीन, पखाबज, मुरज, स्वरमंडल
सारि गम पधनि सा बहु विधि भाव । (1502)

वाद्य-यंत्रसभक स्वरक अनुरूपहि शब्द-चयन कय नाद-सौन्दर्यक अत्यन्त सजीव-चित्रण उपर्युक्त पंक्तिसभमे कएल गेल अछि ।

संगीतक सौन्दर्य-लयद्वारा भावसभकेँ सघनतर बनायब संगीत-सौन्दर्य कहबैछ । विद्यापतिक लय-विधान भाव मे मर्मस्पर्शिता उत्पन्न करैछ -

सुन्दरि चललिहु पहु-घर ना ।
चहु दिसि सखी सभ कर धर ना ।...(896)

एहि गीतमे 'ना'क लयमे अत्यन्त मधुर अनुरोध अनुस्यूत अछि जेकरा टारल नहि जा सकैछ । संगहि नायिकाक प्रति सखीसभक अपनत्वक भावना सेहो व्यंजित भेल अछि ।

भाषा तँ विद्यापतिक अनुचरी थिक । ओ जेना चाहैछ, तहिना ओकरा भावानुसारिणी भऽ कय चलय पड़ैछ । की भाव-पक्ष आ की कलापक्ष, सर्वत्र भाषाक सौन्दर्य द्रष्टव्य अछि -

काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा ।
क्षीर खाँड भोजन देब रे
भरि कनक कटोरा ॥

(ख) प्राकृतिक सौन्दर्य :

प्रकृति मानवक चिर सहचरी अछि । मानव जीवनकेँ नाना रूपमे प्रभावित कयनिहार, ओकरा चेतना आ प्रेरणा प्रदान कयनिहार मायाशक्तिक रूपमे प्रकृतिक भारतीय वाङ्मय मे अभूतपूर्व अभ्यर्थना कयल गेल अछि ।

प्रकृति आ पुरुषक युगनद्ध रूपमे दुनूक पारस्परिक सम्बन्ध-संतुलन आ सहयोगमे जीवनक सफलता बताओल गेल अछि । प्रकृति सौन्दर्यक अक्षय भंडार अछि । परिणामतः ऋग्वेदक मंत्र सँ लऽ कय वर्तमान युगक गीतिकाव्यसभमे प्रकृतिक शांत आ समृद्ध शक्तिक मनोरम चित्र अंकित कयल गेल अछि ।

विद्यापतिक काव्यमे सेहो प्रकृति अत्यन्त सजीव रूपमे उपस्थित अछि । प्रकृति-चित्रण सँ कलाकारक जागरूकताक परिचय प्राप्त होइछ। विभिन्न कवि अपन रुचि आ निरीक्षण-शक्तिक अनुरूप प्रकृतिक विभिन्न रूपमे अवलोकन करैछ । प्रकृतिक ई निरीक्षण लेखकक सौन्दर्य-बोध सँ अनुचालित होइछ । मनोवैज्ञानिक सौन्दर्यशास्त्री-लोकनि एही आधारपर सौन्दर्यशास्त्रक दू मुख्य उद्देश्य बतौलन्हि अछि - (1) सौन्दर्यक उपभोग आ ओहिसँ आनन्दक उपलब्धि, तथा (2) सौन्दर्यक निर्माण अर्थात् कलाकेँ जन्म देबाक भावना । अतः सौन्दर्य-बोधक वास्तविक विश्लेषणक अर्थ भेल - कलाकारक सौन्दर्य-ग्राहिका प्रवृत्तिक विश्लेषण । ग्राहिका प्रवृत्तिक पता दू प्रकारेँ लगाओल जा सकैछ - विशेष वस्तुसभमे लेखकक रुचि आ प्रकृतिक प्रति किंवा सौन्दर्यक आधारक प्रति ओकर जागरूकता सँ । कोनो व्यक्ति सौन्दर्यक अन्यतम साधन सँ ओतबहि आनन्द प्राप्त कऽ पबैछ, जतबा ओकरा मे योग्यता वा पात्रता रहैछ । कवि वा कलाकारक योग्यता वा श्रेष्ठता एही बात पर निर्भर करैछ जे ओ सौन्दर्यकेँ कोन रूपक आ कतबा उच्च स्तरीय रूपक अभ्यर्थना करैछ । एहिमे कलाकार वा कविकेँ कल्पना आ यथार्थक साहाय्य लेबय पड़ैछ ।

सौन्दर्य-बोधक उपयोगिताक विषयमे आध्यात्मवादी आलोचक लोकनिक कथन छन्हि जे प्रकृति अराजकताक समूह नहि, ओकर प्रत्येक स्पन्दनमे एक निश्चित नियम वा ऋतुक प्रेरणा काज करैछ । कवि वा लेखक प्रकृतिमे निहित एही सत्यक अन्वेषण करैछ । प्रकृति स्वतः एक महत् कला थिक । कवि प्रकृतिक सम्पूर्ण सम्पदा केँ अपन साधन बना सार्वभौम अदृश्य सत्ताकेँ व्यक्त करैछ । विद्यापति प्रकृतिक नाना उपकरणकेँ, ओकर सौन्दर्यक आकर्षणकेँ एही दृष्टियेँ देखने छथि । श्री क्षितिमोहन सेन अपन प्रसिद्ध ग्रंथ 'मध्ययुगेर वैष्णव साहित्य'मे लिखने छथि - चण्डीदास संसार सँ उपरक पक्षी छथि, जतय लौकिक सौन्दर्य छिड़िया जाइछ, मुदा ओतय स्वर्ग स्पर्श करैछ, विद्यापति दिनभरि रौदमे स्नात गुफा, पुष्पित उद्यानसभमे घुरैत छथि

आ संझाकाल हुनक लालसा एतबा उपर उठि जाइछ जे ओ प्रथम कवि केँ लाँघि दैछ ।[139]

विद्यापति प्रकृति-सौन्दर्यक निरूपण दू रूपमे कयने छथि - (1) वर्ण्यवस्तुक रूपमे, (2) उद्दीपनक रूपमे । प्रथम प्रकारक वर्णन मे ऋतुसभक वर्णन, वा प्रकृतिक कोनो विशेष रूपक वर्णन प्रकृतिक स्वतंत्र-सत्ताकेँ स्वीकार करैत कयल गेल अछि, मुदा एकरा पूर्णतः आलम्बनगत चित्रण नहि कहल जा सकैछ । यथा कवि द्वारा वसन्तक कतेको पदमे स्वतंत्र रूपमे वर्णन कयल गेल अछि - कतहु बालकक रूपमे, कतहु तरुणक रूपमे, आ कतहु राजाक रूपमे । प्रायः एहि प्रकारक सभ वर्णनमे प्रकृतिमे मानवीय भावक आरोपन कयल गेल अछि । यैह कारण जे वसंतक जतबा विशेषण अछि, ओसभ मानव-मोन केँ प्रसन्न कयनिहार गुणसभक द्योतक थिक - यथा' आयल वसंत सकल जन रंजक, वा आयल उन्मद समय वसन्त, वा आयल वसन्त सकल रस मण्डल, आदि । राजाक रूपमे वसन्त-सौन्दर्यक अनुपम चित्र निम्न पंक्तिमे प्रस्तुत कयल गेल अछि -

आयल रितुपति राज बसंत, धाओल अलिकुल माधबि-पंथ ।
दिनकर-किरन भेल पौगंड, केसर कुसुम धएल हेमदंड ।
नृप-आसन नव पीठल पात, कांचन कुसुम छत्र धरु माथ ।
मौलि रसाल-मुकुल भेल ताय, समुखहि कोकिल पंचम गाय ।
सिखिकुल नाचत अलिकुलयंत्र, द्विजकुल आन पढ़ आसिख मंत्र ।
चन्द्रातप उड़े कुसुम पराग, मलय पवन सह भेल अनुराग ।
कुन्द वल्ली तरुधयल निशान, पाटल तूण अशोक-दल वान । (716)

कवि वसन्तक स्वागतमे मत्त मयूर जकाँ नृत्य करय लगैछ । यद्यपि एहि कवितासभमे प्राचीन कविलोकनिक प्रभाव स्पष्टतः लक्षित होइछ मुदा एहिमे कविक अपन उद्‌भावना सेहो व्यंजित भेल अछि । जयदेव अपन गीत गोविन्दमे एही प्रकारक वर्णन वसन्तक चित्रणमे कयने छथि -

मृगमदसार भरभसवंशवद नव दल माल तमाले
युव जन हृदय विदारण मनसिज नख रुचि किंशुकजाले ।4।
मदन महीपति कनकदण्ड रुचि केसर कुसुम विकासे
मिलित शिलीमुख पाटलपटल कृतस्मर तूण विलासे ।5।[140]

एवं प्रकारेँ वसन्त-वर्णनमे समासोक्तिक द्वारा पैघ-पैघ क्रम-विन्यास, वसन्तक मानवीकरण, वसन्तकेँ चेतनासम्पन्न मानव एवं मधुमय वसन्तक

माधुर्यक मधुमय कल्पना हुनक मानवेतर प्रकृति-प्रेमक परिचायक थिक । अनेक गुणसँ परिपूरित वसन्त-श्रीक एकगोट अन्य उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

मधुरित मधुकर पाँति, मधुर कुसुम मधु माति ।
मधुर वृन्दावन माँझ, मधुर-मधुर रस राज ।
मधुर जुवति जन संग, मधुर मधुर रस रंग ।
मधुर मृदंग रसाल, मधुर मधुर करताल ।
मधुर नटन गति भंग, मधुर नटनी नट संग ।
मधुर मधुर रसगान, मधुर विद्यापति भान । (717)

मधुर विद्यापति द्वारा मधुर मधुमासक जे मधुर वर्णन प्रस्तुत कयल गेल अछि, ओ वस्तुतः मार्मिक, मनोहर, मनोरम, आ मधुर अछि। वस्तुतः विद्यापतिक एहि अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य-चित्रणक पाछाँ एक उर्वर पृष्ठाधार रहल अछि आ ओ अछि - विद्यापति सँ दू पीढ़ी पूर्वक मैथिली साहित्यमे सजीव स्वाभाविक प्रकृति-चित्रणक परम्परा । दोसर विद्यापतिक जन्मभूमि मिथिलाक शस्य-श्यामल भूमि प्रकृति-सौन्दर्यक रम्यस्थली रहल अछि । मैथिलीक प्राचीनतम उपलब्ध साहित्यमे एकर सजीव एवं विस्तृत चित्र उपलब्ध अछि । एही प्राचीन साहित्यमे कवि शेखराचार्य ज्योतिरीश्वर ठाकुरक 'वर्णरत्नाकर' अछि, जे मैथिलीयेमे नहि, प्रत्युत समस्त उत्तर-पूर्व भारतक प्राचीनतम उपलब्ध रचना थिक ।[141] वर्णरत्नाकर मे कतेको स्थल कविक काव्य-हृदयक स्पर्श सँ काव्यात्मक भऽ उठल अछि । एकर तृतीय कल्लोल मे प्रभात, मध्याह्न, सन्ध्या, वर्षाक राति, अन्धकार तथा चन्द्रमाक वर्णन; चतुर्थ कल्लोलमे वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् हेमन्त एवं शिशिरक वर्णन तथा पंचम कल्लोलमे वन-उपवन, पर्वत तथा समुद्रक वर्णन कयल गेल अछि । एहि प्रसंगमे प्रभात, मध्याह्न तथा सन्ध्या, राति तथा रातिक अन्धकार, चन्द्रमा तथा छओ ऋतुक वर्णन सरस काव्य सदृश रसप्लावित अछि। एकर प्रकृति-सौन्दर्यक किछु चित्र उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत अछि -

"...गजराजेँ शब्द करु, वासन्हि कोलाहल करु, नक्षत्र तिरोहित भेल, चान्द म्लान भेलाह, पूर्वदीश अरुणित भेल....कुलस्त्री सलज्ज भेलि, घटवान्हि जलाशय आरहल...पथिक-जने मार्गानुसन्धान कएल...

अथ मध्याह्न वर्णना-ग्रीष्मस्य विशेषत दशाओ दिश मृगतृष्णाञे कवलित भए गेलिअछ, किटाएल नियोगी अइसन आदित्य भए गेल अछि वुसक अग्नि अइसनी उष्ण धुनि धरनी भए गेल अछ, दारद्रीक हृदय अइसन

संतप्त पृथ्वी भेलि अछ, उन्मूलन विपदा अइसन जलाशये भए गेलछ, पथिकन्ह पथसंचार त्यजिहलु, श्वापदन्हि छाया आश्रये करु, युवतिन्हि जलकेलि आरहु, ब्राह्मणे मध्याह्न आरहु, दिनक दीर्घता, रात्रिक संकोच, पृथ्वीक कर्क्कशता रौद्रक तीक्ष्णता, चातकक तृषा..... पवनक वाच्छा, शीतक उत्कंठा, एवम्विध ग्रीष्म समयक मध्याह्न देषु ।[142]

तात्पर्य ई जे विद्यापति सँ पूर्व मैथिलीमे सजीव स्वाभाविक प्रकृति-चित्रणक परम्परा बनि गेल छल । मुदा प्रकृति चित्रण प्राचीन एवं मध्य युगीन काव्यमे उद्दीपन विभावेक रूपमे विशेष प्रचलित रहल । यैह कारण जे विद्यापतिक विभिन्न रचना सभमे जतय कतहु प्रकृति-सौन्दर्यक वर्णन उपलब्ध अछि, ओहिमे अधिकांश उद्दीपनेगत् चित्रण थिक । विद्यापतिक 'कीर्तिलता' एवं गीतिपदसभमे प्रकृतिक मनोहर एवं सजीव स्वाभाविक चित्र उपलब्ध अछि । ज्योतिरीश्वरक अतिरिक्त विद्यापतिक समक्ष जयदेवक परम्परा छल, पुनः संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंशक काव्य-परम्परा तँ छलहे । मुदा विद्यापति केँ ज्योतिरीश्वर जकाँ स्वतंत्र प्रकृति चित्रण करबाक ने अवकास छलन्हि, ने अवसरे । प्रकृति हुनक मुख्य वर्ण्य विषयो नहि छलन्हि ।

विद्यापतिक काव्यमे प्रकृति सामान्यतः मानवक क्रिया-व्यापारक पृष्ठभूमि तथा ओकर मनोगत भावसभक उद्दीपक रूपमे चित्रण कयल गेल अछि । विद्यापतिक प्रकृति-सौन्दर्यक किछु आओर उदाहरण द्रष्टव्य अछि :

(1) रअनि विरमिअ हुअऊँ पच्छूस
तरणि तिमिर संहारिअ हँसिअ अरविन्द कानन[143]

(2) सूखल सर सरसिज भेल झाल ।
तरुन तरनि तरु रहल न हाल ।।
देखि दरनि दरसाव पताल ।
अबहुँ धराधर धरसि न धार ।।[144]

एवं प्रकारेँ विद्यापति ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, शिशिर, हेमन्त आदि ऋतुसभक चित्रणमे जाहि प्राकृतिक सौन्दर्यक सृष्टि कयलन्हि अछि, से अद्वितीय अछि । विद्यापतिक एक अन्य पदमे वर्षाक उद्दीपन शक्तिक अन्यतम संकेत प्राप्त होइछ -

खेदव मोञे कोकिल, अलिकुल वारब, करकंकन झमकाई ।
जखन जलद धवलागिरि बरिसब तखनुक कञोन उपाई ।।[145]

एहि पदमे विरहिणी कहैछ जे ओ शरदक इजोरिया, वसन्तक सुरभित सुषमा, भ्रमरक गुंजार, कोइलीक कूक - सभकेँ कोनो-ने-कोनो प्रकारेँ सहि लेत, मुदा जखन वर्षाक दिन मे पर्वत-श्रृंगसभ सँ मेघ टकराएत, ओकर गर्जना सँ सभदिशा भरल रहत, तखन तँ प्राणत्याग करबाक अतिरिक्त ओकरा आर कोनो उपाय नहि भेटतैक ।

एहि प्रकारेँ विद्यापतिक काव्यमे जे प्राकृतिक सौन्दर्यक संग मानवीय क्रिया-व्यापारक एतबा मनोहर सामंजस्य भेल अछि, ओ कविक सहृदयता एवं सूक्ष्म दृष्टिक परिचायक अछि ।

निष्कर्ष

(1) विद्यापति प्रेम आ सौन्दर्यक, यौवन आ श्रृंगारक कवि छथि । सौन्दर्यक रमणीय अभिव्यक्ति विद्यापतिक काव्यक साध्य रहल अछि । सौन्दर्यक अनुभूति सँ सौन्दर्यक अभिव्यक्तिक लेल कवि हृदय फूटि पड़ल अछि - कविताक शब्द-शब्द सँ सौन्दर्य-मंदाकिनी प्रवाहित भेल अछि, एक-एक पद सँ सौन्दर्य-निर्झरनी निःसृत भेल अछि आ चहुधा रूपक वितान पसरि गेल अछि - सौन्दर्य-लहरीक अनुगुंज सँ पाठकक हृदय आप्यायित भऽ उठल अछि ।

(2) विद्यापति पार्थिव, इन्द्रियग्राह्य सौन्दर्यक उपासक छथि । सौन्दर्यहि हुनक दर्शन छन्हि आ सौन्दर्यहि हुनक जीवन-दृष्टि । हुनक सौन्दर्य, जगतक सुखद विभूति थीक । ओ सौन्दर्य केँ वास्तकिताक पृष्ठभूमि पर परखबाक प्रयास कयने छथि । एहि सौन्दर्य केँ ओ नाना रूप मे देखने छलाह, अतः एकरा ओ एक कुशल मणिकर चुनलन्हि, सजौलन्हि आ आलोकित कयलन्हि ।

(3) विद्यापति मुख्यतः मानवीय सौन्दर्यक उपासक थिकाह । मानवीय सौन्दर्यक अन्तर्गत नारी-सौन्दर्यक चित्रण हुनक अभिप्रेत छन्हि । नारी-सौन्दर्यक दू पक्ष अछि - शारीरिक वा बाह्य-सौन्दर्य एवं मानसिक सौन्दर्य । विद्यापति नारी-सौन्दर्यक कुशल चित्रकार छथि । नारीक शारीरिक सौन्दर्यक अन्तर्गत ओ नेत्र, मुँह, केश, नितम्ब, रोमावलि, अधर, दाँत, हास, मुस्कान, शरीर, कटि, नाभि, त्रिवली तथा यौवनावस्थाक अलंकार मे हाव, लीला, विलास, विच्छिति, किलकिंचित, ललित, मोट्टाइत, विव्वोक, विहित, कुट्टमित, हेला आदिक शत-सहस्र मधुर-मादक चित्र अंकित कयने छथि ।

(4) मानसिक वा आन्तरिक सौन्दर्यक अन्तर्गत विद्यापति संयोग मे शालीनता, हास-परिहास, ऋतु-वर्णन तथा वियोग मे मानकेर माध्यम सँ नायिकाक अनिंद्य रूपलावण्यक अभिनव सौन्दर्य-छवि अंकित कयने छथि ।

(5) भारतीय काव्य मे नख-शिख-वर्णनक परिपाटी अति प्राचीन अछि । नख-शिख-वर्णन रूढ़ परिपाटी केँ रहलो सन्ता एहि मे किछु अंग एहन अछि जे अन्य प्रसंगमे वर्णित भेलो सन्ता पर्याप्त कामोत्तेजक होइछ । एकरा मनोवैज्ञानिक शब्दावली मे अप्रधान यौन उत्पादन कहल जाइछ । नारी अवयवक विभिन्न अंग मे - स्तन एवं नितम्बकेँ सर्वाधिक महत्व अछि । पदावली मे एकर सभक अनुपम छवि-छटाक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि ।

(6) नेत्र-वर्णन कविलोकनिक प्रिय विषय रहल अछि । कविलोकनि एकर उपमा मृग, मृगनेत्र, कमल, कमलपत्र, मत्स्य, खंजन, चकोर, केतकी, भ्रमर, कामवाण आदि सँ दैछ । विद्यापति आँखिक उपमा प्रायः उपर्युक्त सभ उपमान सँ देने छथि, मुदा एकर प्रयोग चमत्कारक लेल वा उपादान सभकेँ एक स्थान पर एकत्र करबाक लेल नहि, प्रत्युत सौन्दर्य केँ प्रभावोत्पादक एवं भावोद्रेक केँ पूर्णता प्रदान करबाक लेल कयने छथि । ओ रूढ़ उपमानक संग-संग किछु नव उपमानक प्रयोग सेहो कयने छथि जे आँखिक सौन्दर्य-वर्णन मे सहायक सिद्ध भेल अछि । विद्यापतिक नायिकाक नेत्र-वर्णन मे नेत्रक रंग, नेत्रक दीर्घता एवं नेत्रक व्यापार (कटाक्षोत्क्षेप, कटाक्षपात कटाक्षक्षेप) आदिक सौन्दर्य-चित्र अतुलनीय अछि । 'कुटिल कटाख वान कनियारेँ' द्रष्टव्य थीक ।

(7) संस्कृत ग्रंथ सभ मे स्तनक लेल जाहि रूढ़ उपमान सभक प्रयोग भेल अछि, ओहिमे सँ अधिकांशकेँ गृहीत कय विद्यापति किछु नव रूढ़िकेँ सेहो स्थापित कयलन्हि अछि । एकर आकृतिक लेल पूंगीफल, कमल, कमल-कोरक, बिंब, ताल, गुच्छ, हाथीक कुम्भ, पहाड़, घट, शिव, चक्रवाक, सौवीर, जंबीर, बीजपूर, समुद्र, छोलंग आदि उपमान रूढ़ भऽ गेल अछि । प्रकृतिक दृष्टि सँ एकरा उन्नत, विस्तृत, दृढ़, पाण्डु आदि कहल गेल अछि । विद्यापति एहि रूढ़ि सभ केँ गनबैत बेल, ताल, हेम, कलश, गिरि, कटोरि, मेरु-शिखर, अरविन्द, चकेबा, कनकांचल आदि नाम लेलन्हि अछि । एतबहि नहि, ओ कुचक विकास केँ संलक्ष्य कऽ सेहो अपन उपमाक वैशिष्ट्य प्रदर्शित कयलन्हि अछि - 'पहिल बदिर कुच पुन नवरंग,

दिन-दिन बाढ़य पिड़ए अनंग' - विद्यापतिक प्रसिद्ध पद थीक । ओ विशेष स्थान पर स्तन केँ 'कनक संभु' वा 'संभुशेखर' कहलन्हि अछि । हुनका दृष्टि मे नारीक उरोज शोभाक भंडार थीक, कामदेवक एकमात्र निधि आ शुद्ध स्वर्ण-निर्मित ।

(8) काव्य मे पयोधरक वर्णन प्रेमोत्तेजक व्यापारक प्रवर्तकक रूप मे सेहो कयल जाइछ । कामशास्त्र मे पयोधरक स्पर्श एवं 'नखच्छत'क विस्तृत व्याख्या कयल गेल अछि, परंच एकर दर्शन मात्रहि सँ भावुक जनक मन मे एक प्रकारक उत्तेजना उत्पन्न होइछ । मनोवैज्ञानिक लोकनि अंशतः जीवनक आदिम सम्बन्ध केँ एहि उत्तेजनाक आधार बतौलन्हि अछि, जकर आधार माए एवं नवजात शिशुक सम्बन्ध विश्लेषण द्वारा स्थापित कएल जाइछ । गाथासप्तशतीकारक उक्ति 'ग्रामतरूण्यो हृदयं हरन्ति विदग्धानां स्तनभारवत्यः, कालिदासक उक्ति 'स्तोकनम्रा, स्तनाभ्याम्' एवं पंडितराज जगन्नाथक उक्ति 'सदैव सेव्यं स्तनभारवत्यः' सँ स्पष्ट अछि जे स्तन भार सँ नत नायिका शालीनताक द्योतन करैछ । स्तनक उन्नत होएब प्रमुख विशेषता थीक । विद्यापति सेहो उरोजक औन्नत्यक अभिनव चित्र अंकित कयने छथि। 'उनत उरोज चिर झपायब पुनपुन दरसाय' तथा 'पीनपयोधर मार, कामदेव अवतार' सदृश पंक्ति एहि बातक पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करैछ ।

(9) पीन नितम्ब आर्य स्त्री-सौन्दर्यक प्रमुख अवधानक केन्द्र, थीक। संस्कृत साहित्य मे सुन्दरीक नितम्ब केँ 'गुर्वी नितम्वस्थली' कहल गेल अछि । नारी-अवयवक प्रमुख अंग-कांति नेत्र, वक्ष, कटि एवं नितम्ब अछि जकरा माध्यम सँ बाला, कामदेवक संसार-विजय मे पताकाक काज लैछ । विद्यापति सेहो परम्परानुसार नितम्बक पुष्टता एवं गुरुता केँ विशेष प्रश्रय देलन्हि अछि । 'गुरूअ नितम्ब कहाँ चल गेल' तथा 'गुरू नितम्ब भरे चलए न पारए, माझ खीनिम माइ' आदि वाक्य एहि तथ्य केँ पुष्ट करैछ।

(10) संस्कृतक आलंकारिक लोकनि नाभि एवं कटिक सौन्दर्यक विषय मे बतौलन्हि अछि जे दक्षिणावर्त नाभि प्रशस्त होइछ । एकरा लेल रसातल, कूप, आवर्त, झील वा हृदयक उपमा देल जाइछ । नाभिक निकट श्यामल रोमावलिक वर्णन कवि परिपाटी रहल अछि । त्रिवलीक लेल लता, सोपान, नदी-तरंग, श्रेणी आ कटिक लेल सूइक नोक, शून्य, अणु, सिंह-कटि आदि उपमान गृहीत होइछ । विद्यापति प्रायः एहि उपमान सभक अतिरिक्त किछु नव उपमानक एहि रूपमे प्रयोग कयलन्हि अछि जे अन्यत्र दुर्लभ

अछि। 'कनक कदलि पर सिंह समारल' 'नाभि विवर सँय लोमलतावलि, 'हार रोमावलि जमुना-गंगा' प्रभृति पंक्ति एहि बातक अकाट्य प्रमाण थीक ।

(11) विद्यापति मानसिक किंवा आन्तरिक सौन्दर्य-वर्णन मे सेहो अपन कवि-कौशलक सत्ता स्थापित कयने छथि । प्रेमक प्रसंगमे आन्तरिक सौन्दर्यक अन्तर्गत शालीनता, स्पर्श, स्मृति, श्रवण, हास-परिहास आदिक वर्णन प्रस्तुत कयल गेल अछि । शालीनता कएक प्रकारक मानसिक स्थितिक सम्पृक्त मिश्रण थीक । ई प्रेम मे मधुर कल्पनाक सन्निवेश करैत, ओहि मे जीवनक संचार करैछ । मुग्धा नायिकाक सारल्य एवं अबोधता अपना मे शालीनताक प्रतीक अछि । विद्यापति सद्यःस्नाता नायिकाक चित्रण मे लज्जामिश्रित किंवा शालीनतायुक्त रूप-सौंदर्यक अनुपम चित्र अंकित कयने छथि । 'कामिनि करए सनाने। हेरइत हृदय हनए पंचवाने ।' मे एही शालीनतायुक्त रूप-सौन्दर्यक अभिनिवेश भेल अछि । एही प्रकारेँ शालीनताक अत्यधिक मनोरम एवं आकर्षक रूप वयःसन्धिक चित्रण मे रूपायित कयल गेल अछि । 'सैसव जौवन दरसन भेल, दुहु दल दन्द परिगेल । कबहु बाँधय कुच कबहु बिथारि, कबहु झाँपय अंग, कबहु उघारि ।' सदृश गीतिपद शालीनताक अभिनव चित्र प्रस्तुत करैछ ।

(12) विद्यापतिक सौंदर्य-भावना केँ मुख्यतः अपरूपक सौंदर्य, चिर नूतन सौंदर्य, सहज सौंदर्य, पारस-रूप-सौंदर्य, सूक्ष्म सौन्दर्य, चिरन्तन सौन्दर्य, अम्लान सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य आदि विभिन्न वर्ग मे विभक्त कयल गेल अछि । विद्यापति प्रधानतः 'सुन्दरम्'क कवि छथि, मुदा हुनक 'सुन्दर' मात्र सुन्दरहि नहिं, 'अपरूप' अछि । अपरूप अर्थात् अपूर्व । ई अपरूप अलौकिक थीक । यैह 'अपरूप' हुनक ईश्वर, हुनक सिद्धि । एहि अपरूप केँ देखिकऽ कहियो तृप्ति नहि होइछ । ई तँ 'जनम अवधि हम रूप निहारल, नयन व तिरपित भेल' सैह थीक ।

(13) विद्यापतिक सौन्दर्यक सभसँ पैघ विशेषता थीक चिरनूतनता। नित्य नूतनताक कारणहि विद्यापतिक आँखि कहियो तृप्त नहि भऽ पबैछ। हुनक नायिकाक यौवन आ सौन्दर्य चिरनूतन यौवन आ अभिराम सौन्दर्य अछि - 'कि आरे नव यौवना अभिरामा ।' ई सौन्दर्य साधारण सौन्दर्य नहि, ई अपूर्व अछि । वस्तुतः विद्यापतिक सौन्दर्य-वर्णन मात्र अपूर्व, अलौकिक आ अपरूपे नहि, ओ सहज, स्वाभाविक, प्राकृतिक आ सरल अछि, ओ 'सहजहि आनन सुन्दर रे, भोंह सुरेखलि आंखि' मे रूपायित भेल अछि ।

तालिका (क)
नारी-सौन्दर्यक विश्लेषण
1 - शरीरक अंग-प्रत्यंग

क्र. सं.	अंग	विशेषता	काव्यमे प्रयुक्त उपमा
1.	केश	दीर्घता, वक्रता कुञ्चितता, मृदुता, स्निग्धता, श्यामता, सुगन्धि आदि	मरकतक सूत, पन्नग, तम, मख, तूलक डोरी, कुहू, नीलकमल, चामर [146] भ्रमर, धुआँ, यमुनातरंग, मेघ आदि
2.	वेणी	दीर्घता, वक्रता आदि	सर्प, तलवार, भ्रमरावलि, महामाया आदि
3.	जूड़ा	सघनता आदि	राहु, बादल, सर्प, कुण्डली आदि
4.	सीउथ	शुभ्रता, लालिमा, सरलता आदि	पंथ, नीलगिरि पर रजत रेह, हास्यरस रेखा, आकाशगंगा आदि
5.	भाल	समतलता, विशालता, उन्नतता आदि	स्वर्णपट्टिका, अष्टमीक चन्द्रमा, कामक आसन आदि
6.	भृकुटि	वक्रता, श्यामता आदि	धनुष, तरंग, कृपाण, सर्प, भ्रमर, काजर आदि
7.	नेत्र	विशालता, चंचलता, दीर्घता, नीलिमा, मद्विह्वलता, वक्रता आदि	मीन, सरोज, खंजन [147], पंचवाण, क्षुर-धार, तीर, मृगनेत्र, चकोर, विष, मदिरा, यमुना, कुन्द पुष्प आदि
8.	पलक	चंचलता, आर्द्रता आदि	पातुर, पुतरी, कनक-संपुट, खंजन, कपाट आदि
9.	बरौनी	सघनता, श्यामवर्णता आदि।	शर, मखतूल, पल्लव आदि
10.	नाक	अग्रभागक तीक्ष्णता, पुटक गोलाइ, नासिका बोधक सूक्ष्मता आदि	कोर, तिलक, फूल, कलि, गंधफली आदि।
11.	कपोल	आभा, प्रफुल्लता, पुष्टता सुघड़ता आदि	सुधा-कलश, दर्पण, कमल, पुष्प आदि
12.	कपोलक खाधि	गहराइ	भंवर, खन्दक, कूप आदि
13.	कपोलक तिल	श्यामता	शशि-कलंक, लेखनीक डंक आदि
14.	अधर [148]	लालिमा, माधुर्य, कोमलता, क्षीणता आदि	इन्द्रबधू-तन, प्रवाल [148], बिम्बा फल, बंधूक पुष्प, पल्लव, सुधा-बिन्दु आदि
15.	दशन [149]	श्वेतिमा, चमक, पंक्तिबद्ध होयब आदि	कुंद कलिका, मुक्ता, माणिक्य, दाणिम [149] नक्षत्र आदि ।

क्र. सं.	अंग	विशेषता	काव्यमे प्रयुक्त उपमा
16.	चिबुक	सुडौलता	कनक, कोकनद, कामदेवक आसन आदि
17.	चिबुकक तिल	श्यामता	मकरन्द
18.	श्रवण	दीर्घता	ध्वजा, सीप, कंचन-पोत आदि ।
19.	ग्रीवा	दीर्घता, त्रिरेखा आदि	शंख
20.	भुजा	समता, कोमलता, दीर्घता आदि ।	कमललता, मृणाल-नाल, तरु-शाखा, कनक-दंड आदि
21.	तरहत्थी	कोमलता, समतल होयबा।	कंचन, मक्खन, पत्र, कमल कली आदि
22.	आंगुर	दीर्घता, कृशता, कोमलता, आदि ।	कल्पवृक्षक पांच टा शाखा, केसरकलिका, कलधोतक फर आदि ।
23.	वक्ष [150]	उन्नतता, प्रफुल्लता, कठोरता, विशालता, श्यामाग्रता, कुचाग्र, लालिमा आदि ।	शंभु, श्रीफल, हाथी, कुंभ, पहाड़ आदि
24.	कुच-संधि	संकीर्णता ।	पर्वतघाटी, खंदक आदि
25.	नाभि	सुडौलता, त्रिवलीयुक्त होयब, आदि ।	नदी, तरंग आदि
26.	रोमावलि [151]	मृदुता, श्यामता, सूक्ष्मता	विष-लता, मखतूल, डोरी आदि
27.	कटि [152]	क्षीणता, सूक्ष्मता आदि ।	रेखा, सिंह, शून्य, सुइक नोक आदि
28.	नितम्ब [153]	पृथुलता, सुडौलता, मांसलता आदि ।	पुलिन, पीड़ा, पृथ्वी, पहाड़ आदि
29.	उरु	दीर्घता, सुडौलता ।	हाथीक सूड़, कदलीस्तंभ आदि ।
30.	पिंडली	सुघड़ता, सुडौलता समता आदि ।	बेलना, केतकी आदि
31.	चरण	लालिमायुक्त, उन्नत पातर, छोट, सम, आदि ।	पल्लव, कमल, आदि
32.	पद-नख [154]	शुभ्रता, चमक आदि ।	मुक्ता, चन्द्रकान्तमणि, चन्द्रकला, प्रबाल आदि।

तालिका (ख)
नारी-सौन्दर्यक विश्लेषण
2 - शरीरक गुण

क्र. सं.	अंग		विशेषता	उपमा
1.	समग्र शरीर	1.	वर्ण, गोर, श्वेत, पीत	कुन्दपुष्प, चन्द्र, हिम, स्वर्ण, रजत, हरदि आदि ।

2.	दीप्ति	आरसी ।
3.	आभा	स्वर्ण ।
4.	लावण्य	दीप-शिखा [155] , ज्योत्स्ना आदि ।
5.	कान्ति	विद्युलता, विद्युत आदि ।
6.	मृदुलता	गुलाब, कमल आदि ।
7.	कृशता	कनक छड़ी, कनकलता आदि ।
8.	सुकुमारता	कमलिनी, कमल आदि ।
9.	यौवन-छटा	पुष्पलता, स्वर्णजूड़ी आदि ।
10.	पारदर्शिता	दर्पण ।
11.	प्रफुल्लता	कमलिनी, तरुशाखा आदि
12.	पल-पल परिवर्तित सौन्दर्य [156]	चित्र नहि खीचल जाय सकब ।
13.	विकास	कलिका, कमल, स्वर्णजूड़ी आदि
14.	सुगन्ध	केसर, गुलाब, इत्र आदि

तालिका (ग)
नारी-सौन्दर्यक विश्लेषण
3 - बाह्य प्रसाधन

क्र. सं.	अंग	विशेषता	उपमा
1.	मुँह [157]	बिन्दु	वीर-वधूटी, मंगल-बिन्दु, इन्दु, बाल-चन्द्र पंकज आदि
2.	नेत्र [158]	कज्जल [159]	शनि, राहु, भ्रमर, खंजन, भुजंग आदि
3.	चिबुक	चिबुक गोदब	सर, कूप आदि
4.	करतल [160]	मेंहदी	नवग्रह, कमल वेलि आदि
5.	वक्षप्रदेश	चंदनलेप	हिम, रजत, ज्योत्स्ना आदि
6.	मुख	दिठौनी	चन्द्रकलंक
7.	ओष्ठ	पानपीक	कमल, पराग, बालसूर्यक अरुणिमा, उषाक लाली, आदि
8.	पदतल [161]	महावरि	कमल, गुलाबक फूल, इंगुर आदि
9.	समस्त शरीर	सुगन्धि	गुलाब, कमल आदि
10.	विभिन्न अंग	आभरण	विभिन्न
11.	विभिन्न अंग	वस्त्र	विभिन्न
12.	पद	नूपुर	हंसक पंक्ति

तालिका (घ)
नारी-सौन्दर्यक विश्लेषण
4 - चेष्टागत सौन्दर्य

क्र. सं.	चेष्टा	उपमा
1.	मुस्कुराहटि	विद्युत, कलिका-विकास
2.	हास्य	ज्योत्स्ना, चन्द्रमा, फूल, अमृत फेन
3. [162]	स्वर-माधुर्य	हंस-रव, शुक, पिक, वेणु, वीणा आदि
4. [163]	भ्रू-निक्षेप	
	कटाक्ष-पात	तीर-संधान, पंचशायक आदि
	वक्रदृष्टि	
5.	अल्हड़ता	हिड़ला
6.	चंचलता	विद्युत
7.	लज्जायन्य अंग संकोच	हेम-मूर्त्ति [164], कमलिनी

संदर्भ

1. "Love's psychology and physio-logical material remain the same but every epoch treats it in a different manner, just as every epoch cuts its unvarying cloth and silk and linen into garments of the most diverse fashion."   -A. Huxley : Fashion in love (do what you will), p. 132.
2. ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 10
3. जायेव पत्ये, तन्वंरिरिच्यां विचिहहेवरथ्येवचक्रा ।। (ऋ.वे. 10/10/7)
4. ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 95 ।
5. हये जाये । मनसा तिष्ठ धारे वंचासि मिश्रा कृष्णवावहे नु ।
न नौ मंत्रा अनुदितास एते मयस्करन्परतरे च नाह्न ।। ऋ.वे. 10/95/1
6. न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति, साला वृकाणां हृदयान्येता। ऋ., 10/95/15
7. गुणाद्रूपं गुणाच्यपि प्रीतिर्भूयौ त्रिवर्धते ।
तस्याश्च भर्ता द्विगुणं हृदये परिवर्तते ।
अन्तर्गतमपि व्यक्तिमाख्याति हृदयं हृदा ।
तस्य भूयो विशेषेण मैथिली जनकात्मजा । बालकाण्ड 77/27-28 (वा.रा.)
8. अप्यहं जीवितं जह्यां त्वां वा सीते स लक्ष्मणः ।
न तु प्रतिज्ञां संश्रुत्य ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः ।। - अरण्यकाण्ड, सर्ग 10 (वा.रा.)
9. हिन्दी साहित्य-वीसवीं सदी 'आ. नन्ददुलारे बाजपेयी, पृ.-45-56
10. नातश्चतुर्थ प्रसवमापत्स्दपि वदन्त्युत । अतः परं स्वैरिणी
स्याद्बन्धकी पंचमी भवेत् ।। - आदिपर्व, 123/78 (महाभारत)

11. आदि पर्व : 76 (महाभारत)
12. उपमा कालिदासस्य भारवैरर्थ गौरवम् ।
दण्डिन: पद-लालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणा: ।।
13. मेघदूत: पूर्व मेघ: श्लोक ।
14. मेघदूत, श्लोक 18
15. ओएह, श्लोक 45
16. प्रस्थानं ते कथमपि सुखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवृतजघना को विहातुं समर्थ: । - मेघदूत, श्लोक 45 ।
17. हला अनसूये ! अतिपिनद्धेन वल्कलेन प्रियंवदया दृढं पीड़ितास्मि !
तत् शिथिलयं तावदेनत् । - अभिज्ञान शाकुन्तल, अंक-1
18. इदमुपहित सूक्ष्म ग्रन्थिना स्कन्ध देशे स्तन युगपरिणाहा ऽऽ च्छादिना वल्कलेन ।
वपुरभिनवमस्या: पुष्पति स्वां न शोभां कुसुममिवपिनिद्धं पाण्डुपत्रोदरेण।
- अ. शा. 1/19
19. अनाघ्रातं पुष्पं, किसलयमलूनं कररुहै, रनाविद्धं रत्नं, मधु नवमना स्वादित रसम् ।
अखण्ड पुन्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं, न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थायति विधि: । - अ.शा 2/2/11
20. मालविकाग्निमित्र; 3/7
21. हिन्दी गाथासप्तशती, 1/48, पृ.-12
22. हिन्दी गाथासप्तशती, 1/48, पृष्ठ-12
23. ओएह, 7/75, पृ.-162
24. ओएह, 7/74, पृ.-161
25. विद्यापति : युग और साहित्य, डा. अरविन्द नारायण सिन्हा, पृष्ठ-64
26. गर्ज वा वर्ष वा शक ! मुंच वा शतशो शनिम् ।
न शक्या हि स्त्रियो रौदंधुं प्रस्थिता दयितं प्रति ।। - मृच्छकटिकम्, 5/31
27. हिन्दी काव्यमे श्रृंगार परम्परा और महाकवि बिहारी : डा. गणपतिचन्द्र गुप्त, पृष्ठ- 113
28. (क) तिअड्डा चापि जोइनि दे अंकवाली ।
कमल कुलिश घांटि करहु विआली ।
जोइनि तइं विनु खनहि न जीवमि ।
तो मुह चुम्बि कमल रस पीवमि । - हिन्दी काव्य-धारा, पृ.-142
(ख) नाडि शक्तिदिढ घरिआ खाटे । अन्हा डमरू बजइ विरनाटे ।।
काण्ह कपाली जोई पइठ अचारे । देह न विरहइ एकाकारे ।।
- ओएह, पृ.- 150

29. 'यदि हरि स्मरणे सरसं मनो' - गीतगोविन्द, श्लोक 6
30. 'यदि विलासकलासु कुतूहलम्' - ओएह ।
31. कर कमलेन करोमि चरण महभागमितासि विदूरम् ।
क्षण मुपकुरु श्यनो परमामिव नुपुरमनुगति शूरम् ।।
विरहमिवापनयामि पयोधररोधकमुरसि दुकूलम् ।।
मदुरसि कुचकलशं विनिवेशय शोषय मनसिज तापम् ।
अधरसुधारसमुपनय भामिनि जीवन मृदमिव दासम् । - गीतगोविन्द, गीत 76
32. "अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् । मूकास्वादनवत्" - नारदभक्ति सूत्र, 51-52
33. पुरूष परीक्षा - सं. चन्द्रकान्त पाठक, कथा 35, 36 आ 37, पृ.-190-213
34. ओएह, 35/2, पृ.-190
35. ओएह, 35/4, पृ.-191
36. ओएह, 37/1, पृ.-201
37. ओएह, 36/4, पृ.-203
38. पुरूष परीक्षा, 37/7, पृ.-213
39. कीर्तिलता, द्वितीय पल्लव (सं. बाबूराम सक्सेना), पृ.-226
40. कीर्तिपताका (सं. डा. उमेश मिश्र), पृ.-5
41. गोरक्षविजय, पृ.-7 (क)
42. गोरक्षविजय, पृ.-11 (ख)
43. मि.म., पद-34, पृ.-31
44. आज मझु शुभ दिन भेला । कामिनि पेखलु सिनानक बेला ।।
चिकुर गलये जल धारा । मेह बरखये जनु मोतिमहारा ।।
वदन पोछल परचूर । माजि धएल जनु कनक मुकूर ।।
देह उदसल कुच-जोरा । पलटि बैसाओल कनक-कटोरा ।।
नीबि-बन्ध करल उदेस । विद्यापति कह मनोरथ सेस ।।
- विद्यापति : मि.म., पृ.-419
45. "नीली कुसम्भं मंजिष्ठा पूर्वरागोऽपिच त्रिधा" - साहित्यदर्पण
- 3/195, पृ.-143
46. मि.म., पद-554, पृ.-370
47. विद्यापति, मि.म., पृ.-396
48. ओएह, पृ.-289
49. ओएह, पृ.-146
50. ओएह, पृ.-32
51. ओएह, पृ.-33

52. मि.म. : पद-376, पृ.-264
53. ओएह, : पद - 653, पृष्ठ-431
54. ओएह, : पद - 163, पृ.-121
55. उपनायक संस्थायां मुनिगुरु पत्नी गतायां च ।
बहुनायक विषयायां रतौ तथानुभयनिष्ठायाम् ।।
प्रतिनायकनिष्ठत्वे तद्वदधमपात्रतिर्यगादिगते ।
श्रृंगारोऽ नौचित्यं रौद्रं, गुर्वादिगत कोपै ।। -साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, 3/263-264
56. परोढ़ां वर्जयित्वा तु वैश्यां चाननुरागिणीम् ।
आलम्बनं नायिकाः स्युर्दक्षिणाद्याश्च नायकाः ।
- साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, 3/184
57. रतिरहस्य, 13/4
58. कामजे चितविभ्रंशस्तन्द्रालस्यमभोजनम् ।
हृदये वेदना चास्य गात्रं च परिशुष्यति ।।
-कामसूत्रक जयमंगला टीकाक पुरुषार्थ-प्रज्ञा टीका, पृष्ठ-746
59. महाभारत, शांतिपर्व ।
60. Post Sahajiya Cult; Manindra Mohan Bose.
61. गीति-काव्य, रामखेलावन पाण्डेय, पृ.-198
62. मि.म. : पद-116, पृ.-90
63. ओएह, : पद-475, पृ.-324
64. मि.म. : पद-16, पृ.-15
65. ओएह, पद-589, पृ.-389
66. ऋग्वेद 1/49
67. ऋग्वेद 1/92
68. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड ।
69. पूर्वमेघः 16 मेघदूत
70. कालिदास, उत्तरमेघ, 22 मेघदूत
71. नैषध, स.-1
72. नैषध, स.-4-48
73. Will Durant : The Pleasures of Philosophy.
74. The function of art, of all arts is the echo in its own terms, the universal conflict. Any thing is beautiful that results from successful exploitation of a medium that exhibits.
- H.H. Purkhurast : Beauty (1930).
75. मि.म. : पद-22, पृष्ठ-20

76. विद्यापति की पदावली, वसंतकुमार माथुर : पृ.-2
77. How beautiful are thy feet in sandals, O Prince's daughter,
Thy rounded things are like jewels,
The work of the hands of cunning workmen,
The navel is like a rounded goblet
Where in no migled wine is wanting;
The belly is like a heap of wheat
Set about with lilies.
Thy two breasts are like two fawns
They are twins of a roe.
- Havlock Ellis, Psychology of Sex pt. III p.-142.
78. अङ्गं लावण्ण पुराणं सवणपरिसरे लोअणा फारतारा
वच्छं थोरथणिल्लं तिवलिवलंइअं मुट्ठिगेज्झं च मज्झं ।
चक्काआरो णिअम्बो तरुणिम् सभए किंणु अराणेण कज्जं
पंचेहिं चैअ बाला रहरमणमहावेज अन्तीउ हाँन्ति ।।
- राजशेखर, कर्पूरमंजरी, 3/19
79. अलंकारशेखर : केशवमिश्र, 1/1/6 तथा आगाँ ।
80. कविकल्पलतावृत्ति : काशी संस्करण, संवत् 1942, पृ.-136
81. लोचन चारु चकोर सम चातक मीन तुरंग ।
अंजन जुत अलि काम सर व्यंजन कंज कुरंग ।।
- सरदार कवि, (केशव रचित) कविप्रिया टीका, पृ.-398
82. तन्वी श्यामा शिखरिदसना पक्व बिम्बाधरोष्ठी
मध्येक्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणा निम्न नाभिः
श्रोणीभारात् लसतगमना स्तोकनम्रास्तनाम्यां
यास्याद्युवति विषये सृष्टिर्राद्येव धातुः ।
- कालिदास : (उत्तरमेघखण्ड । मेघदूत ।)
83. कटाक्षो यमुनावीचिभृंगावलिविषामृतेः
- अलंकारशेखर, चौखम्भा सीरीज, पृ.-50
84. अमिय हलाहल मदभरे, श्वेत श्याम रतनार ।
जियत मरत झुकि-झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ।। - रसलीन ।
85. अलसे पुरल लोचन तोर । अभिर्ञे मांतल चांद चकोर ।। (303)
कीर कुरंगिनी उपर देखल । भमर उपर फणी ।
86. डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ.-254
87. आंखिक वर्णक किछु आर उदाहरण द्रष्टव्य -
(क) रक्तोपल जनि कमल बइसाओल
नीलि नलनी दल तहु । (305)
(ख) तहु दुहु सुललित नयन सामरा ।

विमल कमल दल बइसल भमरा ।। (20)

88. पूगाव्जतत्कोरक-बिल्व-ताल-गुच्छैभकुम्भादि-घटैशचक्रे: ।
सौवीर-जम्बीरक-बीजपूर-समुद्गच्छोलंग-फलेरूरोज: ।।
- अलंकारशेखर : केशवमिश्र, 5/1/11

89. हिन्दी साहित्य की भूमिका : डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.-266

90. (1) बेल तालजुग हेम-कलस गिरि
कटोरि जिनिआ कुच साजा । (89)
(2) पीन पयोधर नख-रेख सुन्दर, करे बांधह का गोरि ।
मेरु शिखर नव उगि गेल ससधर, गुपुति न रहलि ए चोरि ।। (2)
(3) नखपद सुन्दर पीन पयोधर
कनक संभु जनि केसु पूजला । (3)
(4) ता पुन अपरुब देखल रे कुच जुग अरविन्द ।
विगसित नहि किछु कारन रे सोझा मुखचन्द ।। (5)
(5) कुच-जुग चकेव चरइ गंगाधारे । (20)
(6) उनत उरोज चिरे झपावए पुन पुन दरसाए
जइअओ जतने गोअए चाहए हिमगिरि न नुकाए ।। (23)
(7) कंचन कामे गढ़ल कुच कुम्भ ।
भंगइत भनव देइत परिरम्भ ।

91. वृहत्संहिता : (वराहमिहिर) 70/6

92. गाथा सप्तशती : हाल : 6/45

93. अइ तुंगत्तणु जं थणाएं सौच्छैयहु न हु लाहु ।
सहि जइ केवंह तुडिवसेण अहुरि पहुच्चह नाहु ।।
- पुरानी हिन्दी, पृ.-177

94. पयोधर-वर्णन-प्रसंग मे बेनीपुरी रचित विद्यापतिक पद सं.-10, सं.-34 धरि द्रष्टव्य ।

95. सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखल आंखि ।

96. अलंकार शेखर, 13/1

97. पदावली, रामवृक्ष बेनीपुरी - सम्पादित ।

98. पदावली : नगेन्द्रनाथ गुप्त ।

99. वराहमिहिर वन्धुजीवक समान लाल तथा अमांसल अधरकेँ प्रशस्त बतौलन्हि अछि। अधरक लेल प्रवाल, बिम्बफल, बंधूक पुष्प, पल्लव, तथा मीठ पदार्थ सँ उपमा देलनिह अछि - अलंकार शेखर, 13

100. अलंकार शेखर 13/10-11

101. विद्यापति पदावली, बेनीपुरी-सम्पादित : पद 12, 13, 25, 32, 36 द्रष्टव्य ।

102. रसार्णव सुधाकर, ट्रिवेंडरम् संस्करण, 1/162-163

103. मि.म. : पद-616, पृ.-407

104. यौवने सत्व जास्तासाष्टाविंशति संख्या । - साहित्य दर्पण, 3/89

105. यौवने सत्वजा : स्त्रीनामलंकारास्तु विंशति: । - दशरूपक, 2/30

106. रसार्णव सुधाकरक ट्रिवैंडरम् संस्करण पृ.-48

107. रसतरंगिणी : भानुदत्त, 6/5

108. "Another example of conquetry is furnished by the female King Fisher (Alu do is pidia) which will spend all the morning in tearing and flying away from the male but is careful constantly to look back, and never to let him out of her sight."
- Havlock Ellis : Studies in the Psychology of Sex, Vol. I, P.-40

109. तनक सिंगार मे जहां तरुनि महा छवि देत ।
सोई विच्छिति हाव को, बरनत बुद्धि-निकेत ।। - पद्माकर : जगद्विनोद

110. हरष, गरब, अभिलाष, श्रम, हास, रोष अरु भीति ।
होत एक ही संग है, किलचिंति यह रीति ।। - मतिराम : रसराज

111. तनक सिंगार मे जहां तरुनि महा छवि देत ।
सोई विच्छिति हाव को, बरनत बुद्धि-निकेत ।। - पद्माकर : जगद्विनोद

112. हरष, गरब, अभिलाष, श्रम, हास, रोष अरु भीति ।
होत एक ही संग है, किलकिंचित यह रीति ।। - मतिराम : रसराज ।

113. जहं अंगन की छवि सरस, बरनत चलन चितौन ।
ललित हाव ताको कहत, जे कवि कविता-भौन ।। - पद्माकर, जगद्विनोद

114. सुनत भावते की कथा, भाव प्रगट जहाँ होत ।
मोट्टाइत तासोँ कहेँ, हाव कविन के गोत ।। - पद्माकर, जगद्विनोद ।

115. जो पिय को अभिमानतै करै अनादर बाम ।
ताहि कहत विव्वोक हे, जे प्रवीन गुन धाम ।। - मतिराम, रसराज

116. लाजनि बोलि सके नही, पियहि मिले हूँ नारि ।
विहित हाव ता सौँ सबै, कविजन कहत विचारि ।।
- पद्माकर, जगद्विनोद ।

117. अधर उरज केशन गहे, जहाँ रुख रुखो होय ।
अन्तर सुख पावे तिया, हाव कुट्टमित होय ।।
तन मर्दत पिय के तिया, दरसावत झुट रोष ।
याहि कुट्टमित कहत है, भाव सुकवि निर्दोष ।। - पद्माकर, जगद्विनोद

118. अमित ढिठाई नाह सन, प्रगटे विविध विलास ।
ताहि कह्यो सुकवि मिलि, हेला नाम प्रकास ।। - पद्माकर, जगद्विनोद

119. मैथिल कोकिल विद्यापति, ब्रजनन्दन सहाय, पृ.-94

120. It is modesty that gives to love the aid of imagination and in doing imparts life to it."

- Ellis H. Psychology of Sex; Vol - I, p.-2

121. Modesty has thus come to have the force of tradition, a vague but massive force, bearing with special power on those who can not reason, and yet having its root in the institutes of all people of all classes. It has become mainly transformed into the allied emotion of decency, which has been described as modesty fossilized into social emotions.

- Ellis, H. Psychology of Sex, Vol.-I, P.- 70

122. "Partiridge who has studied the phenomena of blushing in one hundred and twenty cases (Pedagogical Seminary, April, 1947), finds that the following are the general symptoms : terrors near the waist or beating in the chest, warm wave from feet upward, quiver of heart and then rapid beating of heart, coldness all over followed by heart, dizziness, tingling of toes and fingers, numbers, something rising in throat, smarting of eyes, singing in ears, princkling sensation of face and pressure inside head."

- Ellis, H. Psychology of Sex, Vol.-I, p.-73

123. Modest women have a much greater horror of saying immodest things than of doing them.

- Ellis, H. Psychology of Sex, Vol.-I, p.-66

124. तोरए मोत्रे गेलहु फूल मोति मानिके तूल ।
साजनि, साजि अछोरसि मोरि ।
गरुवि गरुवि आरति तोरि ।
दिठि देखइत दिवस चोरि ।
एत कन्हाइ परधन लोभ ।
जे नहि लुबुध सेहे पय सोम । – विद्यापति, म.मि., पृ.-43

125. मि.म. : पद-718, पृ.-468

126. मि.म. : पद-726, पृ.-

127. जगति मिथुने चक्रावेव स्मरागमपरागो ।
नवमिव मिथ: शंभु जाते वियुज्य वियुज्य यौ ।
सततममृतादेवाहाराषयापदरोचकं
तदमृतभुजां भर्ता शम्भुर्विषं बुभुजे विभु: ।। – नैषध, 19/34

128. मि.म. : पद-22, पृ.-20

129. विद्यापति की पदावली : वसन्तकुमार माथुर : पृष्ठ-2

130. शिशुपालवधम् - माघ

131. मि.म. : पद-768, पृ.-498

132. ओएह, पद-216, पृ.-161

133. मि.म. : पद-718, पृ.-468

134. ओएह, पद-34 : पृ.-31

135. ओएह, पद-131

136. नयन जो देखा कमल भा, निरमल नीर समीर ।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन जोति नग हीर ।। - जायसी

137. मि.म. : पद-137

138. मि.म. : पद-636, पृष्ठ-421

139. मि.म. : पद-716, पृ.-466

140. गीत गोविन्द; जयदेव;

141. वर्णरत्नाकर : भूमिका - डा. सुनीति कुमार चटर्जी ।

142. वर्णरत्नाकर : सु.कु. चटर्जी, तृतीय कल्लोल, पृ.-15

143. कीर्तिलता - सम्पादक शिवप्रसाद सिंह, पृ.-46

144. मि.म. विद्यापति - पृ.-14, पद-14

145. ओएह, पद-171 : पृ.-128

146. जलधर तिमिर चामर जिमि ।

147. नलनि चकोर सफरि वर मधुकर, भृंगि खंजन जिमि ओख । सारंग नयन, एक कमल दुह जोति रे, काजर साजर मधुर धनु ।

148. जिनि बिम्ब अधर प्रवाले, मुखरुचि मनोहर अधर सुरंग ।
फूटल बांधुलि कमलक संग, अधर राग विद्रुप तरू पल्लव ।।

149. दसन दाड़िम बिजु, दसन मुकता पांति,
दसन मुकुतां जिमि कुन्द, करक बिज, पाति पइसल गजमोति रे ।

150. 'काम कम्बुभरि कनक सम्मुपरि, डारत सुरसरि धारा,
जुगल सेल-सिम हिमकर देखल एक कमल दुइ जोति रे,
मेरु उर दुइ कमल फुलायल, कुच जुग चारु चकेवा,
कुचमय कमल-कोरक जल मुदित रहु घट पर बेस हुतासे ।'

151. 'लोमलतावलि शैवाल कज्जल त्रिवलि तरंगिनि रंगा,'
'नाभि-विवर संय लोमलतावलि भुजगि निसास पियासा'
'सामर लोमलता कालिन्दी हारा सुरसरि धारा ।'

152. 'डमरू सिंह जिनि माझा ।'

153. 'नितम्ब जिनिअ गजकुम्भा' ।

154. 'नख दाड़िम बिजु इन्दु रतन जिनि ।'

155. पीन पयोधर दूबरि गता ।
मेरु उपजल कनक लता ।। - विद्यापति ।

156. सेहे स्वरूप अपरूप बखानिय ।
तिल-तिल नूतन होय ।। - विद्यापति ।
157. सुन्दर वदन चारू अरु लोचन, काजर रंजित भेला ।
कनक-कमल माझ काल भुजंगिनि श्रीयुत खंजन खेला ।। - विद्यापति
158. 'कनक मुकुर शशि कमल जिनिय मुख, अपरुप पेखलि रामा ।' - विद्यापति
159. 'नलिनि चकोर सफरि वर मधुकर, भृंगि खंजन जिमि ओखा।'-विद्यापति
160. 'थर-भय किसलय काँपे । - विद्यापति
161. 'नयनक नीर चरनतल गेल, थलक कमल अम्भोरुह भेल ।
'पल्लवराज चरन जुग शोभित, गति गजरराजक भाने ।' - विद्यापति
162. प्रथमहि गेल धनि प्रीतम पास ।
हृदय अधिक भेल लाज तरास ।।
ठाढ़ि भेलन्हि धनि अंगो न डोले ।
हेम-मूरति सयँ मुखहु न बोले ।। - विद्यापति
163. तिन बान मदन तेजल तिन भुवने अवधि रहल दओ बाने ।
विधि बड़ दारुन बघए रसिक जन सौंपल तोहर नयाने ।।
- विद्यापति ।
164. वयन पुनि सारंग । - विद्यापति ।

●

पंचम अध्याय

काव्यशास्त्रीय परम्परा आ विद्यापतिक काव्य-सौन्दर्य

पंचम अध्याय

काव्यशास्त्रीय परम्परा आ विद्यापतिक काव्य-सौन्दर्य

महाकवि विद्यापति संस्कृत-साहित्यक निष्णात पंडित छलाह । विद्यापतिक पूर्वज कर्मादित्य, देवादित्य, वीरेश्वर, धीरेश्वर, चण्डेश्वर, आदि संस्कृतक विख्यात विद्वान छलाह । ओ सभ संस्कृतमे ग्रंथ-रचना कय अपन युगक विद्वत्समाजमे पर्याप्त ख्याति अर्जित कयने छलाह । विद्यापति संस्कृत-विद्वानक परम्परा सँ अनुप्रेरित भऽ संस्कृत साहित्यक गहन अध्ययन कयलनि तथा संस्कृतमे विविध ग्रंथक रचना कऽ अपन व्यापक पांडित्यक परिचय देलनि । हुनक मात्र संस्कृते भाषा पर नहि, अपभ्रंश (अवहट्ठ) तथा अपन मातृभाषा मैथिली पर सेहो असाधारण अधिकार छलन्हि । ओ जतय अपन कुलक संस्कृत विद्वानलोकनिक परम्पराक अनुसरण कऽ संस्कृत ग्रंथक रचना कयलनि, ओतहि अवहट्ठ तथा मैथिली मे सेहो उच्चकोटिक ग्रंथ सभहिक प्रणयन कयलन्हि । मैथिलीमे ओ जाहि पदावलीक रचना कयलनि ओहि पर संस्कृत काव्य परम्परा तथा काव्यशास्त्रक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ ।

विद्यापति सँ शताधिक वर्ष पूर्वहि मैथिली भाषामे काव्य रचना भऽ चुकल छल । मैथिली भाषाक स्वरूप निश्चित भऽ गेल छल । ज्योतिरीश्वर विद्यापति सँ शताधिक वर्ष पूर्वहि 'वर्णरत्नाकर'क रचना कयने छलाह, जे सम्पूर्ण भारतीय भाषाक प्राचीनतम गद्य-रचना मानल जाइछ । वर्णरत्नाकर एक रीति ग्रंथ अछि जकर प्रणयन ज्योतिरीश्वर भाषा कविक लेल मार्ग-प्रदर्शनार्थ कयने छलाह । विद्यापतिक काव्य पर एकर स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ । विद्यापति जे 'कीर्तिलता' मे जौनपुरक वेश्याक चित्र अंकित कयने छथि, ओहि पर 'वर्णरत्नाकर'क प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होइछ । यथा -

'अह पुन कइसन, कृत्रिम लज्जा, कपट तारूण्य,
धनार्थे प्रेम लोभार्थे विनय, कारने सौभाग्य,

निर्मुक्त स्वामिसिन्दूर मुख्यमंडल वैन्हि
विअक्खनी परिहास पेसली सुन्दरी साथ,[1]
जबै नागरजन देखथि तबैं चारि पुरूषार्थ-जाति,
लज्जा, धन प्रतिष्ठा, उपेखथि । - वर्णरत्नाकर[2]
×× ×× ×× ××
'धननिमिते धर पेम, लोभे बिनअ,
सौभागे कामन, बिनु स्वामी सिन्दूर परा
परिचय । वैन्ही विअखनी,
परिहासपेशणी सुन्दरी साकी जबै देखिअ
तबे मनकर तेसरा लागि तीनू उपेखिअ ।' - कीर्तिलता

विद्यापतिक समयमे संस्कृत काव्यशास्त्र चरमोत्कर्ष पर छल । ओ स्वयं संस्कृतक एक प्रकाण्ड पंडित छलाह, तेँ संस्कृत काव्य-शास्त्र सँ परिचित होयब स्वाभाविक । ओ पदावलीक रचना एक रीति ग्रन्थ किंवा लक्षण-ग्रन्थक रूपमे नहि कयलनि, तथापि ओहि पर काव्य शास्त्रीय प्रभाव कैक रूपमे परिलक्षित होइछ । वस्तुतः विद्यापति संस्कृतक काव्य शास्त्रीय परम्पराक प्रतिए सतर्क भय पदावलीक श्रृंगार सम्बन्धी पद सभक रचना कयलनि । हुनक संस्कृत काव्य शास्त्रीय पर्याप्त ज्ञाने छल जे हुनका अपन काव्य-प्रतिभा केँ समृद्धि एवं प्रौढ़ता सँ अलंकृत करबामे सहायक सिद्ध भेल ।

संस्कृत साहित्य मे काव्य-शास्त्रीय परम्परा विद्यापतिक समय धरि (चौदहम-पन्द्रहम शताब्दी) अत्यंत प्रौढ़ एवं परिष्कृत रूप धारण कयने छल। अलंकार, रस, रीति, ध्वनि, वृत्ति, गुण आदि काव्यांगक विवेचन प्रस्तुत करैत संस्कृतक अनेक आचार्य अपन लक्षण ग्रंथक निर्माण कयने छलाह । परंच विद्यापति-युग धरि मैथिली मे रीति ग्रंथक रचना आरम्भ नहि भेल छल । अतः विद्यापति पर रीति ग्रंथक प्रभाव नहि लक्षित होइछ वरन् संस्कृत काव्य-शास्त्रहिक प्रभाव मानल जा सकैछ । ई निर्विवाद अछि जे विद्यापति संस्कृतक काव्यशास्त्रीय परम्पराक प्रति जागरूक भइये कऽ पदावलीक रचना कयने छथि ।

विद्यापति साहित्यक पदावलीक सम्यक् अध्ययन एवं अनुशीलन सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे विद्यापतिक काव्यशास्त्रीय ज्ञान अत्यंत प्रौढ़ एवं व्यापक छल । हुनक ई काव्यशास्त्रीय ज्ञान पदावलीक अनेक स्थल पर प्रस्फुटित भेल अछि । पदावली कोनो लक्षण-ग्रंथ नहि, मुक्तक काव्य थिक। परंच ओकर पद सभकेँ अवलोकन कयला उत्तर एहन भासित होइछ जे

विद्यापति श्रृंगार रस, नायिका भेद, अलंकार आदि काव्यांग सभक लक्षण केँ ध्यान मे राखि अनेक पदक रचना कयने छथि। पदावलीक पद सभकेँ पूर्वराग, मिलन, मान, दूती प्रसंग, अभिसार, विरह, मिलन, पुनर्मिलन आदि शीर्षक मे विभक्त कयल जा सकैछ । ओना तँ सभ प्रसंगमे काव्यशास्त्रीय ज्ञान प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूपेँ प्रकाशित होइछ, परंच मुख्यतः नायिका चित्रण, श्रृंगार रस वर्णन, अलंकार विधान आदिमे पदावलीक पद सभ पर काव्यशास्त्रक प्रभाव स्पष्टतः लक्षित होइछ । अतः एहि मे सँ कतिपय काव्यांगक निरूपण कऽ लेब उचित बुझना जाइछ ।

(क) रस तत्त्व :

मैथिल कोकिल विद्यापति मात्र मैथिलीयेक नहि, प्रत्युत विश्व-साहित्यक एक प्रतिभासम्पन्न एवं रस-सिद्ध कविक रूपमे समादृत छथि । हुनक काव्य-कृति रसक अजस्र स्रोतस्विनी अछि । मूलतः ओ प्रेम आ सौन्दर्यक कवि छथि, यौवन आ विलासक उद्‌गाता छथि । यैह कारण जे हुनक काव्य श्रृंगार रसक मन्दाकिनी सँ आप्लावित अछि । ओना विद्यापतिक काव्य मे वीर, शांत, करुण, भक्ति आदि रसक अभिधान सेहो भेल अछि, मुदा प्रधान शृंगारहि अछि । विद्यापतिक रसमय वाणीमे मधुरता एवं संगीतक मूर्छना अछि। ओ वाणीक अपूर्व शिल्पी, संगीतक पुरोधा एवं काव्य-कलाक जौहरी छथि। हुनक प्रत्येक गीतिपद मे रस-पारावार तरंगायित अछि ।

श्रृंगार :

विद्यापति पदावलीक प्रधान विषय थिक श्रृंगार । रति श्रृंगार रसक स्थायी भाव थिक । रतिक अर्थ अछि कामदेवक पत्नी । स्त्री-पुरुषक ओ भावना, जाहि सँ प्रेरित भऽ ओ पारस्परिक यौवन-सौन्दर्यक उपभोग करैछ, काम आ रतिक नाम सँ अभिहित होइछ । रतिक अर्थ अनुराग, आसक्ति, क्रीड़ा, रमण, सन्तोष, प्रीति, प्रेम अछि । साहित्य-दर्पणकार एकर अर्थ प्रिय वस्तु मे मोनक प्रेम-प्रेरित भऽ कय उन्मुख होयबा केँ रति कहलनि अछि।[3] रतिक विविध अर्थ होइछ, तथापि रतिकेँ श्रृंगार-रसक स्थायी भाव मानल जाइछ । एहि अवस्था मे ओ ओहि भावना, अनुभूति, कामना वा वासनाक अर्थ मे गृहीत कयल जाइछ, जकर वशीभूत भए स्त्री-पुरूष शारीरिक वा इन्द्रिय-सुख प्राप्त करैछ किंवा प्राप्त करय चाहैछ । एकर ई अर्थ भेल जे स्त्री-पुरूषक काम-भावक चित्रणे श्रृंगार होइछ । विद्यापति द्वारा चित्रित श्रृंगारक एक पद द्रष्टव्य अछि -

'अम्बर विघट अकामिक कामिनि करे कुचं झांपु सुछन्दा ।
कनक-सम्भु-सम अनुपम सुन्दर दुइ पंकज दस चन्दा ।
कत रूप कहब बुझाई ।
मन मोर चंचल लोचन विकले औ ओ अनइते जाइ ।
आड़ बदन कए मधुर हास दए सुन्दरि रहु सिर लाइ ।
अऔंधा कमल कान्ति नहि पूरए हेरइत जुग बहि जाइ । (प.स.195)

आलम्बन अछि यौवनोन्मत्त चपलतन्वी नायिका आ आश्रय छथि कृष्ण। रति स्थायी भाव अछि । हाथ सँ अचानक कुच-युग केँ झाँपब, अर्धनिमीलित आँखि केँ अढ़ सँ मुस्कायब आ कमल मुँह केँ झुका कय रहि जायब, ओकर लज्जा केँ प्रकट करैछ । प्रस्तुत चेष्टासभ तथा बसात सँ आँचरक उड़िया जायब उद्दीपन विभाव थिक । ई विस्मृत घटनाक वर्णन अछि, तेँ स्मृति आ हर्ष दुनू संचारी भाव थिक । एहि उत्फुल्लता आ रति भावक प्रतिक्रिया स्वरूप नायकक शरीर मे रोमांच, चापल्य, मुँह लाल भऽ जायब, दुनू डिम्भा मे प्रसन्नता आ मुस्कान आदि अनुभावक अनुमान सहजहि कयल जा सकैछ ।

रसक आस्वाद सँ प्राप्त आनन्द केँ ब्रह्मानन्द सहोदर कहल गेल अछि (रसो वै सः) । विद्यापतिक कोनहु रचनामे ओकर जतबा अधिक सामग्री एकत्र दृष्टिगोचर होइछ, रसनिष्पत्तिक दृष्टिसँ ओ ओतबहि उच्च कोटिक काव्य मानल जाएत । अतः रस परिपाकक दृष्टि सँ विद्यापतिक एक पदक परीक्षण करब समीचीन होयत -

आसा मन्दिर बैसि निसि गमाबए सुखे न सूत सयान ।
जखने जतने जाहि निहारए ताकि ताहि तुअ भान ॥
वन उपवन कुंज कुटीरहि सबहि तोर निरूप ।
तोहि बिनु पुनु पुनु मुरूछए अइसन पेम सरूप ॥
मालति सफल जीवन तोर ।
तोर विरहे भुवन भमए भेल मधुकर भोर ॥
जातकि केतकि कत न अछ कुसुम रस समान ।
सपनहि नहि काहु निहारए मधु कि कर पान ॥
जकर हृदय जतए रहल धसि पए ततहि जाए ।
जइअओ जतने बान्धि निरोधिअ निमन नीर समाए ॥

- बि. रा. प. 18, पृ.-25-26

दूती नायिका सँ कहि रहल अछि - मालती लताक समान सुन्नरि, अहाँक जीवन सफल अछि । नायक केँ अहाँ पर अनन्य प्रेम छन्हि । सुकुमार नव केतकीक सुरभियुक्त पुष्प तँ कतेको अछि, मुदा ओ अहाँके छाड़ि सपनहुँ मे ककरहु नाम नहि लैछ । फेर ओकर रसपान की करत ? दूती नायकक विरक्त दशाक उल्लेख करैत कहैछ - ओ अहाँक आशा मे अपना घर मे बैसल-बैसल सम्पूर्ण राति बिता दैछ, चैन सँ ओछावन पर सुतियो ने पबैछ, कओर फेरैत-फेरैत ओकर राति व्यतीत होइछ, जतय ककरहु देखैछ, ओकरा मे अहींक छबि प्रतिभासित होइछ, वन-उपवन, कुंज, कुटीर - सर्वत्र ओकरा अहींक छवि देखाइ दैछ । आर तँ आर, अहाँक विरह मे ओ बेरि-बेरि मूर्च्छित भऽ जाइछ । एहन छैक ओकर प्रेमक स्वरूप । ई सत्य थिक जे जकर मोन जतय बसल रहैछ, ओही दिस ओ बेर-बेर दौड़ैत रहैछ। जेना पानि केँ कतबो बान्हल जाए - ओ नीचे दिस जाएत ।

विद्यापतिक उक्त पद रसनिरूपणक दृष्टि सँ अन्यतम अछि । पदक मूल भावधारा विशुद्ध श्रृंगार थिक । नायकक विरह दशाक बात कयल जा रहल अछि नायिका सँ, अतः नायिका आलम्बन थिक । नायिका सुन्दरी, सुकुमारी आ नवयौवना थिक । नव वय, कुंज, कुटीर, वन, उपवन आदि उद्दीपन विभाव थिक । व्यग्रता, भ्रम, उत्कंठा, औत्सुक्य आदि संचारी भाव थिक । नायक विरहक नवम दशा मूर्च्छा धरि पहुँचि गेल अछि । ओकर दृष्टि जेम्हर जाइछ, ओकरा नायिकेक आभास भेटैछ । एहन छैक ओकर प्रेमक अनन्यता । एवंक्रमे उक्त पद मे पूर्णरूपेण रस-परिपाक भेल अछि । विप्रलम्भक एक पद -

माधव, कत परबोधव राधा ।
हा हरि हा हरि कहितहि बेरि बेरि अब जिउ करब समाधा।
धरनी धरिया धनि जतनहि बैठत पुनहि उठह नहि पारा ।
सहजहि विरहिणि जग महातापिनि बेधि मदन-सर-धारा ।
अरुन नयन तोरे तीतल कलेवर बिलुलित दीघल केसा ।
मन्दिर बाहिर करइते संसय सहचरि गनतहि सेसा ।
आनि अनिल केओ धनिक सुताओलि केओ देइ मुख पर नीरे।
निसबद हेरि केओ सांस नेहारत केओ देइ मन्द समीरे ।
कि कहब खेद भेद जनु अन्तर घन-घन उतपत श्वास ।
भनइ विद्यापति सोइ कलावति जिवन-बन्धन आस-पास ।

- मि.म., पृ.-486

एहि पद मे राधा आश्रय आ कृष्ण आलम्बन छथि । 'हा हरि हा हरि ! कहितहि बेरि-बेरि' सँ प्रकट अछि जे कृष्णक प्रति ओकर रतिभाव ओकरा व्यथित कऽ रहलैक अछि । 'बेरि मदन-सर धारा' सँ विरहक अत्यन्त वेदनापूर्ण स्थिति प्रकट होइछ आ बैसिकए पुनि उठि नहि पबैछ - एहि सँ ओकर क्षीणता प्रकट होइछ । अरुण नेत्र सँ अश्रुधारा बहैत रहैछ । मुँह पर पानि छिड़कला सँ, कमल-पत्र पर सुतौला सँ, मुँह लग हौँकला सँ प्रकट अछि जे ओ बेसुध धरि भऽ सकैछ । एहि पद मे वियोगिनी राधाक दैहिक विकार सभक (अनुभावसभक) परिपूर्णता अछि । अश्रुधारा, अरुण नयन, क्षीणता, विवर्णता, फुजल केश, श्वांसक जखन-तहन रुकि जायब आदि अनुभाव थिक । जड़ता, मरण, दीनता आदि संचारी भाव थिक । एक अन्य संयोग श्रृंगारक पद मे रस-निष्पत्तिक लेल एकत्र सामग्रीक राशि द्रष्टव्य अछि -

अवनत आनन कए हम रहलहुँ वारल लोचन-चोर ।
पिया मुखरुचि पिवए धावल जानि से चाँद चकोर ॥
ततहुँ सञे हठि हटि मोञ आनल धएल चरन राखि ।
मधुप मातल उड़ए न पारए तइअओ पसारए पाँखि ॥
माधवे बोललि मधुर वानी से सुनि मुदु मोयें कान ।
ताहि अवसर काम वाम भेल धरि धनु पचवान ॥
तनु पसैव पसाहिन मातलि पुलक तइसन जागु ।
चूनि चूनि भए कांचुअ फाटलि बाहु वलया भांगु ॥
भन विद्यापति काम्पित कर हो बोलल बोल न जाय ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन सामसुन्दर काय ॥

- मि.म. 34, पृ.-31

नायकक सोझा मे अकस्मात पड़ि गेला पर नायिकाक अनुराग-विह्वल तन-मनक केहन अवस्था होइछ, तकर वर्णन नायिका कऽ रहल अछि । उद्दीपन विभावक रूपमे स्वयं कामदेव पंचशर लेने प्रहार कऽ रहलाह अछि । स्वेद, रोमांच, कम्प, अंगसभक प्रेम सँ प्रफुल्ल भऽ उठब आदि अनुभाव थिक । पीड़ा, संकोच, औत्सुक्य, हर्ष आदि संचारी भाव थिक । एतबा रस सामग्रीक जतय संयोग भऽ रहल हो, ओतए जँ रसक पारावार नहि होअए तँ सैह आश्चर्य । सभ सँ विशेष चमत्कार तँ कवि, हर्षोत्फुल्ल तनक फूलि उठला सँ चुन्नी-चुन्नीकऽ कंचुकीक फटबाक उल्लेख द्वारा उपर्युक्त पदमे प्रदर्शित कयलन्हि अछि ।

एवंक्रमे श्रृंगारक अन्तर्गत अयनिहार सभ उद्दीपन विभाव तथा संचारी भावक चित्रण विद्यापतिक अधिकांश गीतिपद मे भेल अछि । शरद चन्द्रमा, मलय समीर, वासन्ती ज्योत्स्ना, भ्रमर, चातक, मोर, कोकिल, दादुर, पावस, मेघ, कमल, चन्द, जमुना-तट, कुंज कुटीर, फुलवारी आदि वियोग आ संयोग दुहु पक्षक उद्दीपन विद्यापतिक श्रृंगारमे रस-वर्द्धक भऽ कय आयल अछि । अनुभाव सभक तँ गिनतीये नहि भऽ सकैछ । एहि मे रंगीन चित्रहि रस-विम्ब अंकित करैछ । विद्यापति मे जे एकर परिपूर्णता भेल अछि, से अन्यत्र दुर्लभे अछि । विद्यापति मे निर्वेद, ग्लानि, शंका, भय, आलस्य, विषाद, चिन्ता, मोह, स्वप्न, विबोध, स्मृति, उत्सुकता, दीनता, हर्ष, व्रीडा, व्याधि, मरण, अपस्मार, आवेग, त्रास, उन्माद, जड़ता आदि संचारी भाव सभक अनेकानेक उदाहरण प्राप्त अछि ।

वीर रस :

विद्यापति अवहट्ठ मे रचित अपन 'कीर्तिलता' तथा 'कीर्तिपताका' मे वीर रसक ओजपूर्ण प्रसंगक उद्भावना कयने छथि । 'मि.म.' क पृष्ठ 9 पर कवीश्वर चन्दा झा सँ प्राप्त नगेन्द्रनाथ गुप्तक विद्यापति पदावलीमे संकलित एक गोट रचना प्रस्तुत अछि । अवहट्ठ मे रचित एहि रचनामे राजा शिवसिंहक कोनो मुसलमान राजा वा आक्रामक कें युद्ध मे पराजित कए ओकर किला जीत लेबाक घटना वर्णित अछि । एहि मे कवि अत्यन्त ओजपूर्ण वाणी मे राजा शिवसिंहक पराक्रम एवं हुनक विजय-वार्ता कें वर्णित कयने छथि । किछु पंक्ति उद्धृत अछि-

'दुग्ग दुग्गम दमसि भंजेओ गाढ़ गढ़ गूढ़ीय गंजेओ ।
पातिसाह ससीम सीमा समर दरसेओ रे ॥
×× ×× ×× ××
तरल तर तरुआरि रंगे विज्जुदाम छटा तरंगे ।
घोर घन संघात वारिस काल दरसेओ रे ॥
पार भइ परिपन्थि गंजिअ भूमि मण्डल मुण्डे मंडिअ ।
चारु चन्द्र कलेर कीर्ति मुकेतु तुलिओ रे ॥
देवसिंह नरेन्द्र नन्दन सत्रु भरवइ कुल निकन्दन ।
सिंघ सम सिवसिंघ राजा सकल गुणक निधान गनिओ रे ॥

- मि.म., पृ.-9

प्रस्तुत रचनाक प्रत्येक शब्द ओजपूर्ण तथा वीर दर्प सँ दमकैत प्रतीत

होइछ । एहिमे शब्दक चयन सेहो कविक प्रौढ़ कलाक प्रमाण थिक । भाषा एकर 'कीर्तिलता'क अवहट्ठ सँ किंचित न्यून अछि । मैथिलीक कोमल कान्त पदावली मे तँ ओतबा ओज नहि भरल जा सकैत छल । ओहि युगमे, जखन कि अपन रचना गाबि कए कवि जनमानस मे वीर भाव जगबैत छल, राजसभा मे पुरस्कार पबैत छल, युद्ध मे प्रयाण करैत काल सामन्तकुमार सभ मे वीरदर्प भरैत छल, 'दुग्ग दुग्गम दमसि भंजेओ' सदृश पंक्ति निश्चित रूपेँ वीर भावक उद्घोष कऽ राजा मे ओज भरने होएत । एवंक्रमे वीर रसक पूर्ण परिपाकक लेल आवश्यक सामग्री सभ एतए प्रचुर मात्रा मे प्रस्तुत अछि । आलम्बन छथि राजा शिवसिंह, जे 'सिंघसम' छथि, उत्साह स्थायी भाव अछि, अमर्ष संचारी भाव । 'पातसाहि' अपन परिसीमा बिसरि राजा पर आक्रमण करए आयल, अतः पातसाहिक सीमातिक्रमण उद्दीपन विभाव थिक । क्रोध मे मुँह लाल भऽ जायब, तत्क्षण प्रयाणकऽ देब - ई सभ अनुभाव थिक ।

'कीर्तिलता'क चतुर्थ पल्लव मे युद्धक अत्यन्त ओजस्वी एवं विशद वर्णन कयल गेल अछि । एहि रचना मे सुलतानक सेनाक प्रयाणक दृश्य सेहो ओजपूर्ण भाषा मे वर्णित अछि ।[4] एही प्रकारेँ कीर्तिपताका' मे सुल्तानक शिवसिंहक विरूद्ध अभियान करबाक तथा दुहुमे भयानक युद्ध होयबाक अत्यन्त जीवन्त चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । उपर्युक्त सभ प्रसंग वीर रस सँ ओत-प्रोत अछि ।

हास्य :

विद्यापतिक काव्य मे हास्यक मधुर व्यंजना सेहो कयल गेल अछि। शिवस्तुति संबंधी पद सभमे हास्यक सुन्दर उदाहरण उपलब्ध अछि । एहि मे अनमेल तथा वृद्ध विवाह प्रथा पर तीव्र व्यंग्य कयल गेल अछि । एहि सँ हास्यक संग-संग ओकर अन्तराल मे मार्मिक व्यंग्य किंवा नारी जीवनक एक अन्य विवशता सेहो व्यक्त होइछ । विद्यापतिक नचारी मे एहि प्रकारक कतिपय प्रसंग उपलब्ध अछि । एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

हम नहि आजु रहब एहि आँगन जौ बुढ़ होएत जमाई गे माई ।
एक त बइरि भेल विध विधाता दोसर धिया केर बाप ।
तेसर बइरि भेला नारद बाभन जे बुढ़ आनल जमाई गे माई ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोरब दोसर तोरब रुण्डमाल ।
बरद हाँकि बरियात बैलाएव धिया लेय जाएब पराए गे माई ॥

धोती लोटा पतरा पोथी से एहो लेवन्हि छिनाए ।
जोँ किछु बजता नारद बभना दाढ़ी घए घिसिआयब गे माई ॥
भने विद्यापति सुनु हे मनाइन दिढ करू अपन गेआन ।
सुभ सुभ कए सिरि गौरि विआहू गौरि हर एक समान ॥

- मि.म., पृ.-904

विद्यापतिक एहि पद मे शिष्ट हास्यक उदाहरण प्राप्त अछि । शिवक वाहन बरद केँ हाँकब, नारद केँ दाढ़ी धऽ कऽ घिसिअयबाक बात सँ हास्य रसक व्यंजना भेल अछि ।

शान्त रस :

शान्त रसक स्थायी भाव थिक निर्वेद । विद्यापतिक विनयक पद सभमे एहि रसक सुन्दर व्यंजना भेल अछि । यद्यपि एहि तरहक पद अधिक नहि अछि, परंच जे अछि से अत्यंत मर्मस्पर्शी । शान्त रसक एकगोट उदाहरण प्रस्तुत अछि -

तातल सैकत बारि-बिन्दु सम, सुत-मित-रमनि समाजे ।
तोहो बिसारि मन तोह समापलु, अब मझु होब कोन काजे ।
माधव, हम परिनाम निरासा ।
तुहुँ जगतारन दीनदयामय, अतय तोहर बिसबासा ।
आध जनम हम नींदे गमायल, जरा सिसु कत दिन गेला ।
निधुबन रमनि-रभस रंग मातलु, तोहे भजब कोन बेला ।

-मि.म., पृ.-571

×× ×× ×× ××

जतने जतेक धन पापे बटोरल, मिलि मिलि परिजन खाय ।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए, करम संग चलि जाय ।
ए हरि, बन्दो तुअ पद नाय ।
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि, पारक कओन उपाय ।
जाबत जनम नहि तुअ पद सेबल, जुबती मनिमय मेलि ॥

-प.स., पृ.-285

तप्त वालुका राशिमे पड़ल जलबिन्दुक समान सांसारिक जीवनक नश्वरता, विषय-वासना-जनित सुख एवं धन-सम्पत्तिक निस्सारताक चित्रण करैत विद्यापति एहन पद सभ मे शान्त रसक व्यंजना सुन्दर ढंग सँ कयलन्हि अछि ।

(ख) अलंकार-योजना :

अभिव्यक्ति केँ प्राणवान, प्रभावशाली, बोधगम्य, स्पष्ट चमत्कारी आ अर्थसमृद्ध बनयबाक लेल कवि-कल्पनाक अनेक साधनक उपयोगक आवश्यकता होइछ । भाव-तत्व आ विचार तत्वकेँ कल्पने-तत्व आकार प्रदान करैछ । कला कोनो विचार वा भावकेँ अभिव्यंजना प्रदान करैछ। अलंकार-योजना सेहो अभिव्यंजनाक एक अंग थिक, जेना विम्बात्मकता, प्रतीकात्मकता, अन्योक्ति, वक्रोक्ति आदि । शब्द वा अर्थक क्षेत्र मे जाहि साधन सभ सँ ई कार्य सम्पादित होइछ, अलंकार ओहि मे सँ एक सर्वाधिक प्रचलित एवं परिचित साधन थिक । अलंकार द्वारा सेहो अमूर्त्त भाव वा विचारकेँ मूर्त रूप प्राप्त होइछ ।

काव्य मे प्रस्तुत वस्तुक संग अप्रस्तुतक विधान सेहो महत्वपूर्ण स्थान रखैछ । एकरे अलंकारक संज्ञा सेहो प्रदान कयल जाइछ । श्रृंगार मे अलंकारक विशेष महत्व रहैछ, कारण सौन्दर्य वर्णन तथा श्रृंगार-चेष्टाक वर्णन मे अलंकार विशेष सहायक होइछ । महाकवि विद्यापति राधा-कृष्णक सौन्दर्य-वर्णन तथा प्रेम-प्रसंगमे अलंकार सभक मुक्तरूपेँ प्रयोग कयने छथि। हुनक पदावली मे प्रायः एकहु सौन्दर्य-चित्र एहन नहि, जे अलंकृत नहि हो । अतः एहि ठाम विद्यापति अलंकार-योजनाक विशेषता तथा कीर्तिलता, कीर्तिपताका आ पदावलीमे प्रयुक्त प्रमुख अलंकार सभक विवेचन करब हमर अभीष्ट थिक ।

विद्यापतिक पाछाँ हजारो वर्षक उर्वर परम्परा छल, तँ संभावना सँ परिपूर्ण युग-जीवनक विस्तृत आयाम छल, काव्यक फूजल वातायन छल । यैह कारण जे परम्परा सँ सम्पृक्त रहलो सन्ता ओ नव-युग-प्रवर्तक छलाह । ओ रुचि सँ सुसंस्कृत, युग-जीवन सँ परिचित, राजनीतिक उत्कर्ष-अपकर्ष सँ सजग, रूढ़िक विरोधक आ विचार-क्षेत्र मे क्रान्तिकारी छलाह । राज्याश्रित रहलो सन्ता ओ चारण नहि, सुख-दुःखक भोक्ता आ सामान्यजनक अनुकर्ता छलाह । यैह कारण जे ओ वासना आ सौन्दर्यक सरस गीत गयलन्हि तँ प्रेमक परमोज्ज्वल रूपकेँ सेहो चित्रित कयलन्हि । हुनक गीतिपदमे प्रेम आ सौन्दर्यक पावन संगम भेल अछि जाहि मे अद्यपर्यन्त असंख्य नर-नारी निमज्जित भऽ परमानन्द केँ उपलब्ध करैछ । एक मे चतुर शब्द-शिल्पीक हाथक निपुणता, उक्ति-चमत्कार एवं अलंकारक छटा अछि, तँ दोसर मे अछि भाव-तल्लीनता, मार्मिकता आ नारी-जीवनक वेदनाजन्य मौन पुकार ।[5]

विद्यापति अलंकारवादी कवि नहि छलाह । मात्र चमत्कार-प्रदर्शन हुनक लक्ष्य नहि छलन्हि । ओना नायक-नायिकाक अंगक वर्णन करैत काल ओ उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा प्रभृति कतेक अलंकारक प्रयोग कयलन्हि, मुदा कतहु ओ स्वाभाविकताक सीमाक अतिक्रमण नहि कयलन्हि । यद्यपि कवि नायिकाक विभिन्न अंगक वर्णन करैत समय अलंकार सभक प्रभूत मात्रामे प्रयोग कयलन्हि, तथापि कविक लक्ष्य अपन अलंकार-शक्तिक प्रदर्शन करब नहि, अपितु उपमेयक विशेषताकेँ उद्घाटित करब थिक ।[6] वस्तुतः विद्यापतिक कविता कतहु आलंकारिक बोझ सँ दबल नहि प्रतीत होइछ । जे अलंकार आयल अछि ओ यथास्थान अनायास एवं सहज-स्वाभाविक बुझना जाइछ । ई सहज स्वाभाविकता विद्यापतिक काव्यक स्थायी स्वर अछि । विद्यापति अपन काव्यमे सर्वत्र अकृत्रिम, अनायास स्वाभाविकताक संग अपन बात कहैछ । पांडित्य-प्रदर्शन करब हुनक लक्ष्ये नहि छलन्हि । पं. रमानाथ झा ठीके लिखलन्हि अछि जे विद्यापतिक शैली एतबा सहज संवेद्य अछि जे हुनक नामक कोनो दुरूह वा क्लिष्ट रचना देखिकऽ शंका होबए लगैछ जे ओ हुनक रचना वस्तुतः छन्हियो वा नहि ।[7]

विद्यापतिकेँ अलंकार योजनाक लेल क्लिष्ट कल्पना, ऊहात्मक वर्णन तथा चमत्कार-प्रदर्शन मान्य नहि छलन्हि, तथापि हुनक काव्यमे सर्वत्र आलंकारिक सौन्दर्यक छटा उपलब्ध अछि । विद्यापतिक पद-साहित्ये मे नहि, कीर्तिलता तथा कीर्तिपताका मे सेहो शब्दालंकार आ अर्थालंकारक सुन्दर योजना दृष्टिगत होइछ । अपन किछु दृष्टिकूट वा प्रहेलिका एवं दस-पाँच अन्य पदमे कवि द्वारा शब्दक कलावाजी अवश्य देखाओल गेल अछि, मुदा एहिकेँ छाड़ि अन्यत्र सर्वत्र अलंकार सभक अत्यन्त सरल एवं स्वाभाविक प्रयोग भेल अछि । 'कीर्तिलता', कीर्तिपताका' तथा 'पदावली' मे प्रयुक्त अलंकार-योजनाक चारुताक अवलोकन सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे विद्यापति केँ अलंकारक किंचितो व्यामोह नहि छलन्हि । ओ वस्तुतः रससिद्ध कवि छलाह आ यैह कारण अछि जे हुनक एक-एक पद मे तीन-तीन, चारि-चारि अलंकारक अनायासहि एतेक ने सहज एवं सुघर प्रयोग भेल अछि जे कविक अप्रतिम काव्य-प्रतिभाक स्वयं द्योतन भऽ जाइछ । अप्रस्तुत योजनाक मौलिकता एवं उपमाक अद्वितीयता विद्यापतिक काव्य कलाकेँ उत्कर्ष पर पहुँचा दैछ । अपन मौलिक, टटका आ नव अप्रस्तुत-विधानक लेल ओ अद्वितीय बनि गेल छथि ।

अप्रस्तुत योजना सादृश्यमूलक एवं साधर्म्य मूलक होइछ । विद्यापति विशेषत: साधर्म्य मूलक अप्रस्तुत सभक विशेष प्रयोग कयलन्हि अछि । अलंकार मे उत्प्रेक्षा, उपमा आ रूपकक प्रयोग सर्वाधिक होइछ । विद्यापति यद्यपि उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक, अतिशयोक्ति, यथासंख्य, सन्देह, प्रतीप, विषम, अत्युक्ति, विरोधाभास, व्यतिरेक, अर्थान्तरन्यास, अनुमान, विभावना, काव्यलिंग, निदर्शना, विनोक्ति, दृष्टांत, परिकर, तुल्ययोगिता, भाविक, समाधि, समुच्चय, उल्लास, भ्रम, मिथ्याधिवसति, एकावली, मीलित, विशेष, असंगति, तदगुण, सन्देह आदि अनेकहु अलंकारक सुघर प्रयोग अपन गीति-पद सभमे कयने छथि, मुदा उपमा, उत्प्रेक्षा एवं रूपकक प्रयोग प्रमुख अछि । विशेषत: नायिका एवं नायकक रूप-सौन्दर्यक उत्कर्ष देखयबाक लेल ओ उत्प्रेक्षाक प्रयोग कयलन्हि अछि । अत: सर्व प्रथम विद्यापति-साहित्य सँ उत्प्रेक्षाक किछु उदाहरण प्रस्तुत अछि -

तान्हि केस कुसुम वस, जतु मान्यजनक लज्जावलम्बित
मुख चन्द्र चन्द्रिका, करी अधओगति देखि
अन्धकार हस । नयनांजल संचारे मूलता भंग जनु
कज्जल कल्लोलिनी करी बीचि विवर्त बड़ी-बड़ी
शफरी तरंग । अति सूक्ष्म सिन्दूर रेखा निन्दते पाप
जनु पंचशर करो पहिल प्रताप ।।-कीर्तिलता, द्वितीय पल्लव

वेश्यासभ अपन केशक श्रृंगार फूल सँ कयलक अछि । एहन प्रतीत होइछ मानू ओकर सभक केश-राशि मे गूथल फूल ओकर सभक रूप-राशि केँ पान कयनिहार आगत मान्य जनक मुख चन्द्र चन्द्रिकापर अन्हारक उपहास्य हँसी हो । कामिनीक केश मे टाँकल फूलक उपमा अन्हारक हँसी सँ साइते अन्य कवि कयने होथि । एहि मे अन्हारक हँसब लाक्षणिक प्रयोग थिक । एकर अतिरिक्त फूलक समता अन्हारक हँसी सँ देखाओल गेल अछि, जाहि मे सूक्ष्मक द्वारा स्थूल अभिव्यंजना दर्शाओल गेल अछि जे विद्यापतिक कलाक श्रेष्ठता, मौलिकता एवं महत्ताक प्रमाण थिक । 'कीर्तिपताका' सँ सेहो एकटा उत्प्रेक्षाक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

दीर्घ केश कलाप कुटिल कोमल घन सामर ।
दप्पमत्त कन्दप्प धनुजनि वद्धिअ चामर ।। - कीर्तिपताका, पृ.-9

यहि ठाम रमणीक कारी कुंचित केश-कलापक छविक वर्णन कयल गेल अछि । आकाश मे साओन-भादवक उमड़ैत मेघ सदृश रमणीक कारी

दीर्घ केश कलाप एहन प्रतीत होइछ, मानू कन्दर्पोन्मत्त कामदेवक चँवर हो । कविक इहो प्रयोग अभिनवे अछि । विद्यापतिक 'गीतिपद' सँ सेहो किछु उत्प्रेक्षाक उदाहरण प्रस्तुत अछि -

चिकुर गरए जलधारा । जनु मुखशशि भए रोअए अंधारा ।।
- मि.म., 233

अवनत आनन कए हम रहलिहु वारल लोचन चोर ।
पिया मुखरुचि पिवए धाओल जनि से चाँद चकोर ।। -मि.म., 34
चन्दने चरचु पयोधर गिम गज मुकता हार ।
भसमे भरलि जनि शंकर सिर सुरसरि जलधार ।। - मि.म., 38
कनक कुच लोटायली घन सामर वैनी ।
कनय परय सूतली जनि कारि नागिनी ।। - मि.म., 168
हास विलासिनि दसन देखि जनि तरलित जोती । - मि.म.
ससन परस खसु अम्बर रे, देखल धनि देह ।
नव जलधर तट संचर रे, जनि विजुरी रेह ।। - मि.म. ।
कनक लता जनि संचर रे, महि नहि अवलम्ब ।। - मि.म. ।
उरहि अंचल झाँपि चंचल, आध पयोधर हेरू ।
पीन पराभव सरहघन जनि, वेकत कएल सुमेरू ।। - मि.म. ।

नायक-नायिकाक अंग-छवि तथा पूर्वरागक अवस्था मे नायक-नायिकाक कतिपय चेष्टा सभक चित्रण करबा मे विद्यापति उत्प्रेक्षाक प्रयोग कयलन्हि अछि । हेतूत्प्रेक्षा तथा गम्योत्प्रेक्षा-दुनूक यथासमय प्रयोग भेल अछि । निम्नलिखित पंक्ति मे नायिकाक रूपोत्कर्षक व्यंजनाक लेल गम्योत्प्रेक्षाक सुन्दर योजना प्रस्तुत कयल गेल अछि -

सहजहि आनन सुन्दर रे, भौँह सुरेखलि आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे, उड़ए पसारलि पाँखि ।।

एहि ठाम कवि नायिकाक मुँहक हेतु पंकज तथा आँखिक हेतु भ्रमर सदृश परम्परागत उपमानक प्रयोग कयलन्हि अछि । परंच बरौनीवला आँखिक विशेषताक पूर्ण बोध मात्र 'भ्रमर' उपमान सँ नहि भऽ सकैत छल । अत: विद्यापति मधुपान करैत उड़ि जयबाक मुद्रा मे पाँखि पसारने भ्रमर सँ नायिकाक चंचल आँखिक तुलना कऽ अपन मौलिकताक परिचय देलन्हि अछि । नायिकाक आँखिक लेल कवि कतेको उत्प्रेक्षा प्रस्तुत कयलन्हि अछि -

(1) लोचन जनु थिर भृंग आकार । मधु मातल किये उड़ए न पार ।।

(2) नीर नीरंजन लोचन राता । सिन्दुरे मंडित जनु पंकज-पाता ॥
(3) चंचल लोचन बंक नेहारन, अंजन शोभन भाय ।
जनु इन्दीवर परने ठेलल, अलिभरे उलटाय ॥
(4) चपल चरन चित चंचल भान । जागल मनसिज मुदित नयान ॥
एहन सैकड़ो उत्प्रेक्षा 'पदावली' मे देखल जा सकैछ ।[8]

विद्यापतिक अलंकार-विधानक सभ सँ पैघ विशेषता अछि हुनक मौलिकता । सौन्दर्य वर्णन मे ई अपेक्षितो रहैछ, कारण अप्रस्तुतहिक द्वारा सौन्दर्यक स्पष्ट चित्र अंकित कयल जाइछ । विद्यापति सौन्दर्यक सूक्ष्म पक्ष केँ स्पष्ट करबाक हेतु नव दृश्य-विधान तथा अप्रस्तुत सभक प्रयोग कयलन्हि अछि । ई कहब कठिन अछि जे विद्यापतिक प्रयोग सर्वथा मौलिक अछि, परंच ई तँ निश्चित अछि जे एहि मे कोनो प्रसिद्ध रूढ़िक किंवा कोनो प्रसिद्ध कविक उक्तिक छाया अछि । वस्तुतः मौलिकता वस्तु सभक लेल नव उपमान तकबा मे नहि, प्रत्युत् पुरान उपमान सभकेँ नव रूपमे प्रस्तुत करबा मे होइछ । विद्यापतिक गीति-पद सभ मे एकर उदाहरण सर्वत्र द्रष्टव्य अछि ।

'ततहि धाओल दुहु लोचन रे, जतहि गेलि बर नारि ।
आसा लुबुध न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ॥'

जेना आशा लुब्ध भिखारि, कृपणक पछोड़ नहि छोड़ैछ, तहिना ओहि सुन्दरीक पाछाँ-पाछाँ रूप-लुब्ध आँखि दौड़ि पड़ल । एतय 'कृपण' सम्बोधन मे नारीक रूप-शील दिस संकेत कयल गेल अछि जे कविक अपन मौलिकता अछि ।

एहि प्रकारेँ विद्यापतिक काव्यमे सबसँ अधिक उपमाक वैभव उपलब्ध अछि । एहि अलंकारक साइते कोनो भेदोपभेद हो जे हुनक कोनो ने कोनो पद मे नहि प्राप्त हो । यद्यपि विद्यापतिक किछु उपमान रूढ़ आ किछु परम्परागत अछि, मुदा किछु मे हुनक मौलिक उद्भावना व्यंजित भेल अछि । नख-शिख वर्णन मे ओ सर्वत्र पारम्परीन परिपाटी केँ अपनौलन्हि अछि, मुदा ओ एहि रूढ़ उपमान सभ केँ नव रूप मे प्रस्तुत कऽ अपन मौलिकताक परिचय देलन्हि अछि । उपमानक चामत्कारिक प्रयोग द्रष्टव्य अछि -

चिकुर निकर तमसम पुनु आनन पुनिम ससी ।
नअन पंकज केँ पतिआओब एक ठाम रह बसी ॥

बालिकाक कुन्तल राशि अन्हार सदृश अछि आ मुख छवि पूर्णिमाक चन्द्रमा सदृश-एतय धरि कोनो मौलिकता नहि, मुदा दुनू पँक्ति केँ एक संग

मिलाक देखला पर रससिद्ध कविक काव्य-कौशल स्वतः सिद्ध भऽ जाइछ । एहि पद मे अन्हार, पूर्णिमाक चन्द्रमा आ कमल-तीनूक अद्भुत मेल, अन्हार आ चन्द्रमा दुनू कमलक शत्रु, मुदा एहि ठाम तीनू एक संग बास करैछ, बासे नहि, एक-दोसरा सँ उत्कर्ष प्राप्तकऽ रहल अछि, एक दोसराक शोभा बढ़ा रहल अछि । विरोधाभासक अनुपम उदाहरण । उपमा आ विरोधाभासक ई संसृष्टि निश्चित रूपेँ अतुलनीय अछि । एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत अछि -

आँचर विघटु अकामिक कामिनि करे कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक सम्भु सम अनुपम सुन्दर दुई पंकज दस चन्दा ॥

स्तनक लेल 'कनक सम्भु'क उपमान मे कोनो नवीनता नहि, कारण ई पारम्परिक रूढ़ उपमान थिक । मुदा आँचर केँ अस्त-व्यस्त भऽ गेला सँ विद्यापतिक नायिका लज्जावश झट अपना दुनू हाथ सँ ओकरा झाँपि लैछ जे तरुणीक स्वाभाविक गुण थिक । एहि ठाम दू गोट कमल (हाथ) आ दस गोट चन्द्रमा (नह) क मेल भेल अछि । एकहि चन्द्रमाक दस-दस चन्द्रमा (नह) अछि, तइयो कमल प्रस्फुटित भऽ रहल अछि - कविकल्पनाक ई चमत्कार अतुलनीय अछि ।

एहि प्रकारेँ उपमाक योजना मे विद्यापति केँ पर्याप्त सफलता प्राप्त छन्हि । हुनक अप्रतिम, भावपूर्ण एवं हृदयग्राही उपमाक किछु उदाहरण प्रस्तुत अछि -

चिकुर-निकर तम-सम पुनु आनन पुनिम ससी ।
कनक लता सनि सुन्दरि सजनी गे विहि निरमाओल आनि ।
माधव सिरसि-कुसुम-सम राही ।
लोभित मधुकर कोसल अनुसर नव रस पिब अवगाही ।
सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमार धनि आलिंगन दृढ अनुराग ।
मधुसम बचन कुलिस सम मानस, प्रथमहि जानि न भेला ।
आनन सरद सुधाकर सम तसु बोलइ मधुर धुनि बानी ।
पहिल बदरि कुच पुन नव रंग, दिन-दिन बाढ़इ पिड़इ अनंग ।
से पुनि भए गेल बीजक पोर, अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर ॥
तोहर विरह दिन छन तनु छिन, चौदिसि चाँद समान ।
अधर बिम्ब सन, दसन दाड़िम-बिजु ।
मधु सम वचन, कुलिस सम मानस ।[9]

'पहिल बदरिकुच' वला पद मे लुप्तोपमाक योजना अछि । उरोज

क्रमशः बइर, नारंगी, बेल तथा नारियल सदृश बढ़ैत चल गेल अछि । एहि क्रम विकास मे एक दिस कविक विदग्ध अभिव्यंजना दृष्टिगत होइछ, तँ दोसर दिस उपमानक रूपमे ँ चयित फल सभमे सेहो नव चमत्कार देखना जाइछ । सुकुमारी सुन्दरी केँ 'कनकलता सनि सुन्दरि सजनी' 'सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमार धनि' आनन सरद सुधाकर सम तुअ' आदि कहि कवि सुन्दर उपमान सभक रचना कयने छथि । यैह कारण जे कविक उपमा-योजनाक मुक्तकंठ सँ प्रशंसा करैत डा. दिनेश चन्द्र सेन लिखने छथि -

"......ताहार उपमागुलि एतो सुन्दर ......एइ रूप उपमागूलिर संख्या नाई। उपमा भिन्न कथा नाई। विद्यापति सेई रूप एई पृथिवीर अति सचराचर दृश्य हइते उत्कृष्ट सौन्दर्य आविष्कार करिया छेन। उपमार यशे भारतवर्षे मात्र कालिदासे रई एकाधिपत्य, यदि द्वितीय एक जन किछु भाग दिते आपत्ति ना थाके तबे बोध हये विद्यापतिर नाम करा असंगत हइवे ना ।"[10]

उपमाक कोटि मे आरोप बोधक अलंकार 'रूपक' सेहो विद्यापतिक अत्यन्त प्रिय अलंकार, अछि । एहि प्रकारक अलंकार सभमे सांग रूपक तथा परम्परित रूपक-दुनूकेँ विशेष स्थान प्राप्त भेल अछि । सामान्य रूपक-बोधक शब्द, यथा सुधामुखी, कमलनयनी, नयन कमान आदिक तँ प्रभूत मात्रा मे प्रयोग भेल अछि । सांगरूपक तथा परम्परित रूपक केर अगणित उदाहरण विद्यापतिक गीति-पद मे प्राप्त अछि -

त्रिबलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि, मनमथे पत्र पठाऊ ।
जौबन-दलपति तोहि समर लागि, ऋतुपति दूत बढ़ाऊ ॥

शरीर रूपी दुर्गम नगर केँ त्रिबली रूपी तीन नदी सँ घेरल पाबि कऽ आक्रान्त कामदेव सर्वप्रथम चिट्ठी पठबौलनि आ शरीर रूपी नगर पर चढ़ाइ कयनिहार यौवन रूपी सेनापति, वसन्त रूपी दूतकेँ पठौलनि । एहि पद सँ विद्यापतिक सामरिक ज्ञानक तँ सहजहि परिज्ञान भऽ जाइछ, संगहि सांगरूपकक सुन्दर उदाहरण सेहो उपलब्ध भऽ जाइछ। परम्परितक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

नाभि-बिबर सएँ निकसि रोमावलि, भुजगि निसास-पिआसा ।
नासा खगपति-चंचु भरमे करु, कुच-गिरि-संधि निवासा ॥

सुन्दरीक नाभि रूपी बिबर सँ रोमावलि रूपी भुंजंगिनि बहार भऽ श्वास रूपी बसातक पियास सँ उपर दिस बढ़ल । उपर नासिका रूपी

गरुड़-चंचुक भ्रम मे भयातुर भऽ कऽ उरोजक सन्धि रूपी उपत्यकामे जा कऽ नुका रहल । एहि ठाम भुजंगिनिक रूपक लेल, ओहि सँ सम्बद्ध सम्पूर्ण परम्पराकेँ राखल गेल अछि, तेँ परम्परित रूपक अछि ।

भाव-व्यंजना मे समर्थ, रूपक अलंकारक योजना पदावलीक अनेक पद मे भेल अछि ।

यथा - **'नयन-चकोर कान्ह-मुख ससि-वर, कमल अमिय रस पान ।'**
'लोचन तीर तटनि निरमाने, करए कलामुखि तथिहि सनाने ।'
'सरस मृनाल करइ जपमाली, अहोनिस जप हरिनाम तोहारी ।'
'हार-रोमाबलि जमुना-गंग, त्रिबलि त्रिवेनी बिप्र-अनंग ।'
'सिन्दुर-तिलक तरनि सम भास, धूसर मुख ससि नहि परगास ।'
'मदन-भुजंगम दंसल कान, बिनहि अमिय रस कि करब आन ।'
'कलबति धरम काँच सम तूल, मदन दलाल भेज अनुकूल ।'
'गेलि कामिनी गजहु गामिनी, विहसि पलटि निहारी ।
इन्द्रजालक कुसुमसायक, कुहुक भेल नर-नारी ॥'
'कुचजुग चतुर चकेबा, निजकुल मिलत आनि कोन देवा ॥'
तेँ संकाएँ भुज पासे, बांधि धएल उड़ि जाएत अकासे ॥'

एवं प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे रूपक विद्यापतिक अत्यन्त प्रिय अलंकार छलनि । सौन्दर्य वर्णन, पूर्व राग तथा मिलन-प्रसंग मे साइते कोनो पद हो जाहि मे रूपकक प्रयोग नहि भेल हो । एहू स्थल पर कवि रूढ़ उपमान सभक मुक्त रूप सँ प्रयोग कयलन्हि अछि । किछु आर अन्यतम उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

'ऋतुपति हटवए नहि परमादी । मनमथ मधथ उचित मूलवादी ।
द्विज-पिक-लेखक, मसि मकरन्दा । काँप भमरपद साखी चन्दा ॥'
'बदन चाँद तोर नयन चकोर मोर रूप अमिय रस पीवे ।
अधरि मधुर फुल पिया मधुकर तुल विनु मधु कतखन जीवे ॥'

रूपक आ उपमाक संसृष्टि, नायिकाक सौन्दर्य, नायकक चेष्टा, प्रेम आ वासनाक मधुर संगम, नायकक व्यग्रता, नायिकाक अनुकूल होयबाक संकेत-अनेक बातक व्यंजना एक संग एहि पद मे कवि द्वारा कराओल गेल अछि । वदन चन्द्रमा सनक, नायकक आँखि चकोर सनक, नायिकाक अधर मधुरी फूल सनक - एतए धरि उपमा तथा 'रूप अमिय रस' मे रूपक । भाव ई जे विद्यापतिक गीति-पद सभमे एक संग उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि तेना ने एकाकार रहैछ जे स्वयमेव एक-दोसराक उत्कर्षक कारण बनि जाइछ ।

सौन्दर्यक उत्कर्षक लेल विद्यापति कतहु अनन्वय, कतहु उन्मीलि, कतहु विशेषोक्ति आ कतहु निदर्शना वा दृष्टान्तक प्रयोग कयलन्हि अछि। भावोत्कर्षक हेतु ओ सभ सँ अधिक अर्थान्तरन्यासक प्रयोग कयलन्हि अछि। अन्य अलंकार सभमे भ्रान्तिमान, सन्देह, काव्यलिंग विभावना, व्यतिरेक, समासोक्ति तथा पर्यायोक्तिक प्रयोग भेल अछि। शब्दालंकार मे यमक केर प्रयोग अनेक स्थान मे कयल गेल अछि। अनुप्रासक प्रयोग सर्वत्र दर्शनीय अछि, मुदा विद्यापति कतहु एकर दुरुपयोग नहि कयलन्हि अछि - जतयं कतहु अनुप्रासक प्रयोग भेल अछि, ओ सुष्ठु अछि एवं भाव-उत्कर्ष मे सहायक सिद्ध भेल अछि। अनुप्रासक अनेक चामत्कारिक प्रयोग विद्यापतिक पद सभमे भेल अछि। श्लेषक प्रयोग मे कतहु अतिवादिता कें प्रश्रय नहि देल गेल अछि। किछु पद मे परिकर एवं परिकरांकुरक सफल प्रयोग कयल गेल अछि। नख-शिख-वर्णन मे रूपकातिशयोक्तिक अत्यन्त चामत्कारिक प्रयोग उपलब्ध अछि। कतहु-कतहु रूपकातिशयोक्तिक संग-संग उपमा, रूपक आ यमक अलंकारक सुन्दर संसृष्टि कयल गेल अछि।

विद्यापतिक अलंकार-योजनाक किछु अन्यतम उदाहरण -

रूपकोतिशयोक्ति -

ए सखि पेखलि एक अपरूप। सुनइत भाबि सपन सरूप।
कमल जुगल पर चाँदक माला। ता पर उपजल तरुन तमाला।
ता पर बेढ़लि विजुरी लता। कालिन्दी तट धीरे चलि जाता।
साखा-सिखर सुधाकर पाँति। ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति।
विमल बिम्बफल जुगल विकास। ता पर कीर थीर करु वास।
ता पर चंचल खंजन जोर। ता पर साँपनि झाँपल मोर।

रूपकातिशयोक्तिक एकटा अन्य उदाहरण -

साजनि ! अकथ कहि न जाए।
धवल अरुन ससिक मंडल भीतर रह नुकाए॥
कदलि उपर केसरि देखल केसरि मेरु चढ़ला।
ताहि उपर निसाकर देखल कीर ता उपर वइसला॥
कीर उपर कुरंगिनि देखल चकित भमय जनि।
कीर कुरंगिनि उपर देखल भमर उपर फणि।
एक असंभव आओर देखल जल बिना अरविन्दा।
वेवि सरोरुह उपर देखल जइसन दूतिअ चन्दा॥

नायिकाक सौन्दर्यक नख-शिख वर्णन एहि पद मे मात्र उपमान सभक माध्यमे सँ उपमेयक व्यंजना कयल गेल अछि। कविक दू गोट आर पद मे रूपकातिशयोक्ति द्वारा नखशिख वर्णन कयल गेल अछि। एहि पदक अन्तिम पद मे उपमा अलंकार (जइसन दूतिअ चन्दा)क ध्वनि प्राप्त होइछ। रूपकातिशयोक्ति एकटा अन्यतम उदहारण प्रस्तुत अछि -

माधव की कहब सुन्दरि रूपे।
कतेक जतन बिहि आनि समारल देखल नयन सरूपे।
पल्लवराज चरणयुग सोभित गति गजराजक भाने।
कनक-कदलि पर सिंह समारल तापर मेरु समाने।
मेरु उपर दुइ कमल फुलायल नाल बिना रूचि पाई।
मनिमय हार धार बहु सुरसरि तय नहि कमल सुखाई।

मि.म. पद-25

एहि पदमे उपमाने सभ सँ उपमेयक काज लेल गेल अछि। एहिठाम राधाक सौन्दर्यक उद्घाटन रूपकातिशयोक्ति द्वारा कयल गेल अछि। यद्यपि एहिठाम कवि ओही परम्परागत उपमान सभक प्रयोग कयलन्हि अछि जे काव्य मे सर्वदा सँ प्रयुक्त होइत आयल अछि, मुदा ओ रूप-रंग आ आकार-साम्य सँ सौन्दर्य भावनाकें तीव्र बनयबा मे पूर्ण समर्थ अछि। ओ नायिकाक सौन्दर्य कें प्रभावशाली बनबैत रति-भाव कें उद्दीप्त करबा मे सहायक अछि। उपर्युक्त पद मे रूपकातिशयोक्तिक संग-संग उपमा, रूपक आ यमक अलंकारक सुन्दर संसृष्टि दृष्टिगत होइछ। एहन पद सभमे कविक अलंकार विषयक ज्ञान प्रकाश मे आबि जाइछ। एतए कविक दृष्टि भाव-पक्ष दिस विशेष नहि रहिकऽ कला-पक्षकें समृद्ध बनयबा मे रहल अछि।

काव्यलिंग - मेरु उपर दुइ कमल फुलायल नाल बिना रुचि पाई।
मनिमय हार धार बह सुरसरि तें नहि कमल सुखाई॥

सुमेरु पर कमलक फुलायब असंभव बात थिक। मुदा कवि दोसर पाँती मे एहि असंभव कार्यक कारण निर्दिष्टकऽ ओकरा संभव सिद्ध कऽ देलन्हि अछि। नायिकाक वक्षोज दू गोट कमल समान अछि, ओकर गराक माला गंगाधार सदृश ! अतः जाहि ठाम सुरसरिक धारा हो ओतय कमल किएक सुखायत ? वस्तुतः कविक अपूर्व एवं सूक्ष्म दृष्टिक जतबे प्रशंसा कयल जाए, सयह थोड़ अछि। काव्यलिंगक एक अन्य उदाहरण -

'पुनि फिरि सोइ नयने जदि हेरबि पाओब चेतन नाह ।
भुजंगिनि दंसि पुनहि जदि दंसए, तबहि समय विष जाह ॥

अनन्वय -

माधव कत तोर करब बड़ाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम कहितहु अधिक लजाई ॥
जों श्रीखण्डक सौरभ अति दुरलभ तों पुनि काठ कठोर ।
जों जगदीस निसाकर तों पुनि एकहि पच्छ उजोर ॥
मनि समान औरो नहि दोसर तनिकर पाथर नामे ।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह की कहु ठामहि ठामे ॥
तोहर सरिस एक तोहें माधव मन होइछ अनुमान ।
सज्जन जन सों नेह कठिन थिक कवि विद्यापति भान ॥
मि.म., पद-863

कृष्णक उपमा ककरा सँ देल जाय ? जतबा जे प्रसिद्ध उपमान अछि, ओहि मे सँ कोनो कवि कें नहि पसिन्न पड़ैछ । श्रीखंड चन्दनमे सौरभ आ शीतलता तँ अछि, मुदा ओ शुष्क काठ मात्र अछि, चन्द्रमा राति मे सम्पूर्ण संसार कें प्रकाशित कऽ प्रशंसाक पात्र बनि जाइछ, मुदा ओकरहु प्रकाश मासक एकहि पक्षमे लोक कें उपलब्ध रहैछ, मणि सँ कृष्णक कांतिपूर्ण शरीरक उपमा देल जा सकैत छल, मुदा कतए निर्जीव पत्थर आ कतए कृष्ण ? स्वर्ण जटित कदलि स्तंभ सँ कृष्णक जांघक उपमा देल जा सकैत छल, मुदा ओ स्वयं कृष्णक समता नहि कऽ सकबाक कारणें संकुचित रहैछ । भाव ई जे कृष्णक अंग-छविक, हुनक सौंदर्यक कोनो उपमान नहि, ओ स्वयमेव उपमान छथि - अप्रतिम आ अद्वितीय ।

व्यतिरेक -

कवरी भये चामरी गिरि कन्दरे मुख भये चान्द अकासे ।
हरिनि नयन भये स्वर भये कोकिल गति भये गज वनवासे ॥
सुन्दरि काहे मोहे सम्भासि न यासि ।
तुअ डरे इह सब दूरहिं पलाएल तुहुँ पुनि काहि डशसि ॥
कुच-भय कमल कोरक जले मुदि रहु घट परवेसे हुतासे ।
दाड़िम सिरिफल गगने वास करु सम्भु गरल करु ग्रासे ॥
भुज भये कनक मृणाल पंकें रहु कर भये किसलय काँपे ॥
विद्यापति कह कत कत ऐसंन कहब मदन परतापे ॥ मि.म. पद-626

उपमानक अपेक्षा उपमेयक उत्कर्ष वर्णित कयला उत्तर व्यतिरेक अलंकार होइछ । एहि पद मे मात्र उपमेयक समक्ष सुप्रसिद्ध उपमानेकें हीन नहि बताओल गेल अछि, प्रत्युत् अपन हीनता-बोध सँ लज्जा वा भयक कारणें ओकर सभक कतहु नुकयबाक वा विष-पान करबाक बात सेहो कहल गेल अछि । नायिकाक मेघोपम कुन्तल-राशिक भय सँ चमरी मृग पर्वत-कन्दरा मे जा नुकायल अछि, आँखिक शोभा सँ पराजित भऽ कऽ मृग, स्वरक माधुरी सँ कोयल तथा गति सँ मत्त गयन्द वनवास सेवन करय लागल अछि । सभ सँ त्रासदीय अछि नायिकाक स्तन द्वय । नायिकाक स्तन द्वय सँ डेरा कऽ कमल कलिका जलहि मे मुनायल रहैछ, घट भट्ठी मे प्रवेश करैछ, अनार आ बेल गाछक डारि पर निवास करय लागल अछि आ शंभु कें विवश भऽ कऽ विषपान करय पड़ैछ । नायिकाक सुकोमल बाँहिक शोभा आ सौकुमार्य सँ पराभूत मृणाल थाल मे नुकायल रहैछ तथा हाथक आंगुर सभक डरसँ किसलय कँपैत रहैछ ।

व्यतिरेकक उक्त उदाहरण अनुपम अछि । कवि मात्र सुप्रसिद्ध उपमानक, उपमेयक समक्ष अपकर्ष नहि देखाओल अछि, प्रत्युत् ओकरा उपमेयक शोभा सँ पराजित एवं लज्जित भय नुकयबाक सेहो उल्लेख कयल अछि । ज्योतिरीश्रक 'वर्णरत्नाकर' मे सेहो एकटा एहि प्रकारक प्रसंग उपलब्ध अछि । विद्यापति कें एकर प्रेरणा भले ज्योतिरीश्वर सँ भेटल होन्हि, मुदा अपन मौलिक संस्पर्श सँ ओ एहि पद मे नव सौन्दर्यक सृष्टि कयलन्हि अछि । व्यतिरेकक एक अन्य उदाहरण सेहो द्रष्टव्य अछि -

तोहर वदन सम चांद होअथि नहि जइयो जतन विहि देला ।

असंगति -

कारण एवं कार्य मे संगति नहि रहला पर असंगति अलंकार होइछ । विद्यापतिक उपेक्षिता अपन जीवन कें व्यर्थ सिद्ध करैत कहैछ -

सुरतरुतल जब छाया छोड़ल हिमकर बरिसय आगि ।
दिनकर दिनफले सीत न बारल हम जीयब कथि लागि॥
सजनि अब नहि बुझिए विचार ।
धनका आरति धनपति न पूरल रहल जनम दुख मोर ॥
जनम-जनम हर गौरि अरधल सिब भेल सकति विभोर ।
कामधेनु कत कोतुकें पूजल न पुरल मनोरथ मोर ॥
अमिय सरोबरे साधे सिनायलु संसय परल परान ।
विहि विपरीत किय भेल ऐसन विद्यापति परमान ॥ प.स.,पृ.-422

उपेक्षिताक मनोव्यथा सजल रागिनी बनि फूटि पड़ल अछि । नायिका अपन कोनो दोष, ओकर कोनो कारण नहि देखि रहलि अछि। प्रियक मुँह फेरि लेबाक कारण तकलो सँ नहि भटैछ । कल्प वृक्ष बुझि जकरा लग ओ गेल छथि, ओएह आइ अपन शांतिप्रद छाया सँ हुनका वंचित कऽ देलन्हि अछि। आइ चन्द्रमाक किरिण हुनका तप्त करैछ, सूर्य हुनका लेल मंद भऽ गेल अछि - हुनका लेल एहना अवस्था मे जीबाक कोनो अर्थ नहि । हुनका लेल कुबेरक कोष सेहो खाली भऽ गेलैक अछि, ओ तँ हुनका जन्म-जन्म धरि दुःख-दारिद्रय भोगबाक लेल छोड़ि देलकैक अछि। कामधेनुक पूजा कयलो सन्ता हुनक मनोरथ पूर्ण नहि भऽ सकलन्हि। ओ अमृत-सरोवर मे स्नान करबाक लेल गेल छथि, मुदा उन्टे हुनक प्राण अवग्रह मे पड़ि गेलैन्हि । एहि पद मे व्याकरणक विरूद्ध कार्य होइत देखाओल गेल अछि, तेँ एहिठाम असंगति अलंकार अछि । असंगतिक एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

दिठि अपराध परान पय पीड़सि ।
से तुअ कोन विवेक ॥

अपह्नुति -

प्रस्तुत केँ निषेध कए कोनो अन्य वस्तुक जखन स्थापना कयल जाइछ तँ अपह्नुति अलंकार होइछ । एकर एक भेद अछि भ्रान्तापह्नुति। एहि मे सत्य बात केँ प्रकट कऽ कय ककरो शंका दूर कयल जाइछ । विद्यापतिक एक पद भ्रान्तापह्नुतिक सुन्दर उदाहरण अछि -

कत न वेदन मोहि देसि मदना । हर नहि बाला मोञे जुवति जना ॥
नहि मोहि जटाजूट चिकुरक वेनी । सिर सुरसरि नहि कुसुमक सेनी ॥
चाँद तिलक मोहि नहि इन्दु छोटा। ललाट पावक नहि सिन्दुरक फोटा॥
कण्ठ गरल नहि मृगमद चारु । फनीपति मोराँ नहि मुकुता हारु ॥
भनइ विद्यापति सुन देव कामा । एक दोस अछ ओहि नामक बामा॥

त.न.गु.प.-69

प्रियक विछोहमे तरुणी केँ प्रतीत होइछ जेना कामदेव ओकरा पर तानि-तानिकऽ प्रखर शर-संधान कए रहल अछि । कामदेव केँ ओकरामे शंकरक भ्रम भऽ गेलैक अछि, तेँ ओ अनवरत शर-प्रहार कऽ रहल अछि। कामदेवक भ्रम दूर करबाक लेल नायिका कहैछ जे ओकरा माथ मे जटा-जूट नहि, केशक वेणी छैक, सुरसरि-धार नहि, केश मे खोसल फूल छैक, ओकरा मस्तक पर चानन आ सिन्दूरक ठोप छैक, शिवक मस्तक पर सुशोभित चन्द्रमा वा तेसर नेत्र नहि । ओकर गरा मे मृगमदक आभा मंडल

छैक, शिवक नील-स्याह कण्ठ नहि, ओकरा गरदनि मे झुलैत मुक्ताहार छैक, शंकरक गराक फणिधर नहि । एक आर बात अछि, स्त्री केँ लोक वामा सेहो कहैछ आ शंकरक सेहो एकटा नाम वामदेव थिक, जौँ एहि नाम-सादृश्यक कारणेँ कामदेव केँ भ्रम भऽ गेल होन्हि तँ ई दोसर बात थिक, अन्यथा कतए कोमलांगी तरुणी आ कतए अवधूत शंकर ।

परिकरांकुर -

जतय साभिप्राय विशेष्यक कथन कयल जाइछ, ओहिठाम परिकरांकुर अलंकार होइछ । विद्यापतिक राधा, कृष्णक निष्ठुरता एवं उपेक्षाक भाव दिस संकेत करैत कहैछ -

केओ बोल माधव केओ बोल कान्ह ।
मञे अनुमापल निछछ पखान ॥

उपेक्षिता राधाक कथन छन्हि जे कृष्ण केँ क्यो माधव व्यर्थ कहैत अछि, माधव नामधारी केँ तँ मधुक आगार होयबाक चाही, ओ भला कठोर वा निष्ठुर कोना भऽ सकैछ ? मुदा आब ओ कृष्णकेँ नीक जकाँ बुझि गेलि अछि जे ओ एकदम पत्थर सदृश अछि - नीरस आ कठोर । एहिठाम 'माधव' मे साभिप्राय विशेष्यक कथन अछि, तेँ परिकरांकुर अलंकार अछि ।

समासोक्ति -

कार्यसाम्य, लिंगसाम्य वा विशेषण साम्य सँ प्रस्तुतक वर्णन मे अप्रस्तुतक कथन भेला पर समासोक्ति अलंकार होइछ । विद्यापतिक एक पद मे कार्यसाम्य एवं लिंग साम्यक आधार पर समासोक्तिक सुन्दर योजना भेल अछि -

सौरभ लोभे भमर भमि आए पुरुव पेम विसवासे ।
बहुत कुसुम मधुपान पिआसल जाएत तुअ उपासे ॥
मालति करिअ हृदय परगासे ।
कत दिन भमरे पराभव पाओव भल नहि अधिक उदासे ॥

मानवती नायिका केँ लक्ष्य करैत ओकर सखी कहैछ जे अनेक फूलक रस-पान करैत भौंरा पुनः मालतीक गुच्छा पर आओत । तात्पर्य ई जे नायिकाक प्रिय एखन अन्य रमणी सभमे आसक्त अछि, मुदा ओहि सँ ओकर रस-तृषा दूर नहि होयतैक, ओ पुनः लौटत । अतः ओकरा नायककेँ निराश नहि करबाक चाही, कारण ओ बड़ बौआ चुकल अछि, ओकरा उदास करब नीक नहि । एहि उदाहरण मे कार्यसाम्य तथा लिंगसाम्य दुनू अछि । 'भ्रमर' बहुवल्लभ नायकक उपमान थिक तथा 'मालती' नव यौवना नायिकाक ।

अप्रस्तुत प्रशंसा -

अप्रस्तुत द्वारा प्रस्तुतक कथन केँ अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार कहल जाइछ । ई सारूप्य वा साधर्म्य पर आधारित रहैछ । विद्यापतिक एक मार्मिक पद केँ अप्रस्तुत प्रशंसाक उदाहरण-स्वरूप देखल जा सकैछ-

माधव काहु जनु दिन अवगाहे ।
सुरतरुतर सुखे जनम गमाओल धथुरा तर निरवाहे ॥
दखिन पवन सौरभे उपभोगल पीउल अमिअ रस सारे ।
कोकिल कलरव उपवन पूरल तहुँ कत कएल विकारे ॥
पातहि सजे फुल भमरे अगोरल तरुतर लेलन्हि वासे ।
से फल काटि कीटे उपभोगल भमरा भेल उदासे ॥
भनइ विद्यापति कलिजुग परिनति चिन्ता जनु कर कोई ।
अपने करम अपने पए भुञ्जिय जञो जन्मान्तर होई ॥

प्रस्तुत पद मे कविक वैयक्तिक अनुभूति रूपायित भऽ उठल अछि। नन्दन काननक कल्पवृक्षक छाहरि मे मृदु-मलय पवनक झोंक पर कोमल मञ्जरक रसपान करैत जे भ्रमर कोइलीक मधु-गीतिका सुनिकऽ सुख-विभोर बनल रहैत छल, आइ ओएह धथूरक नीचाँ गुजर कऽ रहल अछि । अप्रस्तुत भ्रमरक माध्यम सँ कवि अपन प्रस्तुत स्थितिक उल्लेख कयलन्हि अछि । अतः एहिठाम अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार संगत अछि ।

निश्चय -

जतय कोनो वस्तु मे अन्य वस्तुक भ्रम भेला पर सत्य बात कहिकऽ भ्रम दूर कयल जाइछ, ओतए निश्चय अलंकार होइछ । विद्यापतिक निम्न पद निश्चय अलंकारक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करैछ-

कतन वेदन मोहि देसि मदना, हर नहि बाला मोहि जुवति जना।
विभुति भूषन नहि चानन रेनू, बाघछाल नहि मोर नेतक बसनू।
नहि मोरा जटाभार चिकुर बेनी, सुरसरि नहि मोरा कुसुमक सेनी।
चाँदक विन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा ललाट पावक नहि सिनदुर फोटा।
नहि मोरा कालकूट मृगमदचारु, फनपति नहि मोरा मुकुता हारु।
भनइ विद्यापति सुन देव कामा, एक पए दूखन नाम मोरा बामा।

एहिठाम निश्चय अलंकारक यत्न साध्य योजना देखना जाइछ, संगहि विरह-वेदनाक व्यंजना सेहो सुन्दर रीतियें भेल अछि ।

प्रतीप

जतय उपमेय केँ उपमान सँ बढ़ि कए बताओल जाइछ, ओतए प्रतीप अलंकार होइछ । पदावली सँ प्रतीपक एक उदाहरण प्रस्तुत अछि-

कबरी भय चामरि गिरि-कन्दर मुख-भय चाँद अकासे ।
हरिन नयन-भय स्वर-भय कोकिल गतिभय गज बनवासे ॥

एहि पद मे प्रयुक्त उपमान चामरि, चाँद, हरिन, कोकिल, गज आदि सँ बढ़ि कए कबरी, मुँह, नयन, स्वर, गति केँ बताओल गेल अछि, तेँ एहिठाम प्रतीप अलंकारक योजना कवि द्वारा कयल गेल अछि। प्रतीतक किछु अन्य उदाहरण -

1. कुच मंडल सिरि हेरि कनकगिरि लाजे दिगन्तर गेल ।
2. तोहर बदन-सम चाँद होअथि नहि, जइयो जतन विहि देल।
   कए बेरि काटि बनाओल नव कय, तइयो तुलित न भेल।।
3. लोचन तूल कमल नहि भय सक, से जग के नहि जाने ।
   से फेरि जाए लुकाएल जलभए पंकज निज अपमाने ॥

अनुप्रास

जतय व्यंजन वर्णक एक सँ अधिक बेर आवृत्ति हो, ओतय अनुप्रास अलंकार होइछ । विद्यापतिक गीति-पद मे सँ किछु अनुप्रासक उदाहरण प्रस्तुत अछि -

1. रितुपति राति रसिक रसराज । रसमय रास रभस सस माँझ ।
   रसमति रमनि रतन धनि राहि । रास रसिक सह रस अबगाहि ।।
2. नव वृन्दावन नव-नव तरुगन, नव-नव विकसित फूल ।
   नवल वसन्त नवल मलयानिल, मातल नव अलि फूल ।
3. कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि मूंदि रहए दु नयान ।
4. सलिल सनेह सहज थिर सीतल, ई जानए सब कोई ।
5. किंकिन किनकिन कंकन कनकन घन-घन नूपुर बाजे ।
6. गिरिवर गरुअ पयोधर परसित गिम गजमोतिक हारा ।

यमक

जखन एक शब्द एक सँ अधिक बेर भिन्न-भिन्न अर्थक संग आबय, तँ यमक अलंकार होइछ । एहिठाम पदावली सँ यमक अलंकारक एक अति प्रसिद्ध उदाहरण प्रस्तुत अछि -

सारंग नयन वयन पुनि सारंग,

सारंग तसु समधाने ।
सारंग ऊपर उगल दस सारंग,
केलि करथि मधु पाने ॥

एहि ठाम 'सारंग' शब्दक बेर-बेर आवृत्ति भेल अछि तथा ओकर भिन्न-भिन्न अर्थ अछि, अतः एहि ठाम यमक अलंकारक योजना भेल अछि।

एहि प्रकारेँ विद्यापतिक पदावली मे अलंकार-योजनाक एक सँ एक चामत्कारिक रूप प्रस्तुत कयल गेल अछि। एहि ठाम किछु अन्य अलंकारक उदाहरण देल जा रहल अछि -

यथासंख्य 'हरिन इन्दु अरबिन्द करिनि हेम
पिक बूझल अनुमानी ।
नयन वदन परिमल गति तन-रुचि
अओ अति सुललित बानी ॥

सन्देह कनक लता अरविन्दा । दमना माँझ उगल जनि चन्दा ॥
केहु कहे सेबल छपला । केहु बोले नहि नहि मेघ झपला ॥
केहु कहे भमए भमरा । केहु कहे नहि नहि चरए चकोरा ॥

विषय अकास-पताल बस सेहो कैसे भेल अस
चाँद सरोरूह संग ।

अत्युक्ति 'तितल वसन तन लागू, मुनिहुक मानस मनमथ जागू ।'

विरोधाभास 'सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति-पथ परस न भेल ।'

अर्थान्तरन्यास 'आशा लुबुध न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ।'

अनुमान 'इंगित नयन तरंगित रे, बाम भौंह भेल भंग ।
तखन न जानल तेसर रे, गुपुत मनोभव रंग ॥

विभावना 'बड़ई चतुर मोर कान । साधन बिनहि भांगल मझु मान ।'

विशेषोक्ति 'तुहु बिनु आन इथे नहि कोइ ।
बिसरए चाह बिसरि नहि होइ ।'

निदर्शना 'केओ दे हास सुधा सम नीक ।

विनोक्ति तुअ दरसन बिनु तिलओ न जीब ।
जइओ कलामति पीयुख पीव ॥
जइ सन परहोक तइसन बीक ।'

दृष्टान्त 'जकर हिरदय जतहि रतल सेधसि ततहि जाए ।
जइओ जतने बाँधि निरोधिए निमन नीर थिराए ।'

परिकर 'रति-सुबि सारद तुहु राखु मान ।
बाढ़ि ले जौवन तोहे देब दान ।'

तुल्योगिता 'केस-कुसुम तोर सिरक सिन्दूर ।
अलक तिलक हे, सेउ गेल दूर ।'

व्याजोक्ति 'लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ।'

पर्यायोक्ति 'मरमक वेदन बान समान ।
आनक दुःख आन नहि जान ।'

भाविक 'समुद ऐसन निसि न पारिए उर
कखन उगत मोर हित भए सूर ।'

समाधि 'झुमिरि मझु तनु अवस भेलि जनि अथिर थर-थर काँप ।
ई मझु गुरुजन नयन दारुन घोर तिमिरहि झाँप ।'

समुच्चय 'विद्यापति भन की करत गुरुजन, नीद निरूपन लागी ।
नयन नीर भरि धीर अपाबए, रयनि गमाबए जागी ।'

उल्लास 'नहि बरिसय अवसन नहि होए ।
पुर परिजन संचर नहि कोए ।'

भ्रम 'हार मनोहर बेकत भेल उरज उरंग संसअ लेल ।
तेँ घसि मजूर जोड़ल झाँस, नखन गाड़ल हृदय काँप ।'

मिथ्याधिवसति 'तटिनि-तट न पाइअ बाट, तेँ कुच गड़ल कठिन काँट।'

एकावली 'जनम होअए जनु जोँ पुनि होए, जुबती भए जनमए जनु कोए।
होइ जुबति जनु हो रसमंति, रसओ बुझओ जुन हो कुलमंति।'

मीलित 'देह जोति ससि किरिन समाइति केँ विभिनावए पार ।'

विशेष 'कनक लता जनि संचर रे, महि निर अवलंब ।'

तद्गुण 'अनुखन माधव माधव सुमरित,
सुन्दरि भेलि मधाई ।'

कतहु-कतहु विद्यापतिक पद मे एकहि संग अनेक अलंकारक योजना सुन्दर ढंग सँ भेल अछि। यथा -

कि आरे ! नब जौबना अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ छओ अनुपम एक ठामा।
हरिन इन्दु अरबिन्द करिनि हेम पिक बूझल अनुमानी ।
नयन बदन परिमल गति तन रुचि अओ अति सुललित बानी।

कुच जुग परसि चिकुर फुजि पसरल ता अरुझायल हारा ।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल चाँद बिहिनु सब तारा ।
लोल कपोल ललित मनि-कुण्डल अधर बिम्ब अध जाई ।
भौंह-भ्रमर नासापुट सुन्दर से देखि कीर लजाई ।

एतय अतिशयोक्ति, यथासंख्य, वृत्यानुप्रास, उत्प्रेक्षा, आ प्रतीप एक संग पाँच गोट अलंकारक संसृष्टि भेल अछि । निम्न अलंकार नायिकाक सौन्दर्य केँ उत्कर्ष धरि पहुँचबैत नायकक हृदयक रति केँ तीव्र बनयबा मे समर्थ अछि । विद्यापति भाव-पक्षक उपेक्षा कऽ मात्र अलंकार प्रदर्शन हेतु किंवा चमत्कार उत्पन्न करबाक हेतु कखनहु चेष्टा नहि कयलन्हि अछि। 'संसृष्टि'क उक्त रूप सहजहि विद्यापतिक एहि पदमे व्यंजित भेल अछि।

एहिठाम विद्यापतिक अलंकार-योजनाक आभास मात्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । यदि हुनक एक-एक अलंकारक चुनल उदाहरण एकत्र कयल जाए तँ पृथक एक ग्रंथ तैयार भऽ सकैछ । वस्तुतः विद्यापतिक सौन्दर्य-चित्रण, पूर्वराग, मान, अभिसार, मिलन सम्बन्धी पद मे सहजहि अलंकारक छटा प्राप्त भऽ जाइछ । विशेषतः हिनक सौन्दर्य सम्बन्धी पद अलंकृत भाषाक अन्यतम उदाहरण बनि गेल अछि। रसवादी कवि होइतहु अलंकारक रुचिकर योजना कय विद्यापति अपन पदावली केँ अत्याकर्षक बना देलन्हि अछि । हुनक अलंकारिक रचनाओं मे भाषा, भाव आ अभिव्यंजना तीनूक समन्वय भेल अछि । ओ अलंकार द्वारा अभिव्यंजना केँ प्राणवान, प्रभावशाली आ हृदयग्राही बनयबा मे पूर्ण सफल भेलाह अछि । अन्ततः ई कहल जा सकैछ जे विद्यापतिक अलंकार-योजना निश्चित रूपेँ साधन-स्वरूपा अछि आ तेँ हुनक कविता-कामिनीक मंजुल हार बनि गेल अछि ।

(ग) नायिका भेदक परम्परा

श्रृंगार रसक आलम्बन नायक-नायिका होइछ । रीति ग्रंथ सभमे नायकक अपेक्षा नायिका केँ विशेष महत्व प्रदान कयल गेल अछि, कारण नारीये पुरुषक आकर्षणक प्रधान केन्द्र होइछ । यैह कारण जे नायकक अपेक्षा नायिकेक भेदोपभेद पर काव्यशास्त्रीय लोकनिक विशेष ध्यान गेलन्हि अछि ।

काव्य-शास्त्रक परिभाषानुसार प्रत्येक नारी, नायिका नहि कहा सकैछ। जाहि लावण्यमुखी, सुषमासम्पन्न, आकर्षक, सुकुमारि युवती केँ देखि कए हृदय मे श्रृंगार-रसक संचार होइछ, ओकरा नायिका कहल जाइछ ।

मनोविज्ञान मे, अवस्था, दशा आ प्रेम-स्तरक आधार पर स्त्रीगणक स्वभाव, अवस्था स्थिति आदिक अनुकूल मनोदशा सभक अध्ययन केँ नायिका-भेद कहल जाइछ ।

नायिका लोकनिक विभिन्न श्रेणीक सर्वप्रथम निरूपण अपन 'नाट्यशास्त्र'क सामान्याभिनय प्रकरण मे भरत मुनि कयलन्हि, मुदा ओकर कामशास्त्रहि सँ सम्बन्ध भए सकैछ, काव्यशास्त्र सँ सम्बन्धित भरत मुनि द्वारा अन्य निरूपण अछि । एही प्रकरणक श्लोक (145-7) मे ओ नायिकाक तीन श्रेणी निर्धारित कयने छथि - बाह्य, आभ्यन्तर तथा बाह्याभ्यन्तर । उच्चकुलोत्पन्ना एवं स्व-परिणीता पत्नी-कुलस्त्री केँ ओ आभ्यंतर आ वेश्या वा सामान्या केँ बाह्य श्रेणी मे रखने छथि । [11]

प्रकृतिक अनुसारेँ नायिका सभकेँ तीन श्रेणी मे विभक्त कयल जाइछ - उत्तमा, मध्यमा आ अधमा । [12]

एकर अतिरिक्त भरतक 'नाट्यशास्त्र' मे सामाजिक व्यवहारक आधार पर नायिकाक (1) कुलजा, (2) वेश्या तथा (3) प्रेष्या; यौवनक दृष्टियें (1) नवयौवना, (2) द्वितीय यौवना (3) तृतीय यौवना तथा (4) चतुर्थ यौवना ई चारि गोट भेद अछि । एकर अतिरिक्त पुनि काव्यशास्त्र मे (1) दिव्या, (2) कुलस्त्री तथा (3) गणिकाक उल्लेख पाओल जाइछ । एवंक्रमे अवस्थानुसार ओकर पुनः (1) स्वाधीन पतिका, (2) अभिसारिका, (3) वासकसज्जा, (4) विरहोत्कण्ठिता, (5) खण्डिता, (6) विप्रलब्धा, (7) कलहांतरिता तथा (8) प्रोषितपतिका एहि आठ भेदक चर्चा काव्यशास्त्रक ग्रंथ मे कयल गेल अछि । भरत मुनिक एहि वर्गीकरण पद्धति केँ यद्यपि परवर्ती आचार्यलोकनि तत्वतः स्वीकार कयलनि किन्तु मनोविज्ञानक आधार पर नायिकाक वर्गीकरण (1) स्वकीया (2) परकीया तथा (3) सामान्या वा साधारणी नामे परवर्ती काव्य ग्रंथ मे कयल गेल । [13]

मनोविज्ञानक आधार पर नायिकाक तीन भेद कयल जाइछ - स्वकीया, परकीया तथा सामान्या वा साधारणी । स्वकीयाक तीन भेद अछि - मुग्धा, मध्या तथा प्रगल्भा । [14] मुग्धा वा नववधू सेहो तीन प्रकारक भए सकैछ - नवयौवना, नवअनंगरहस्या, लज्जाप्रायरति, तत्पश्चात् मध्याक धीरा, धीराधीरा तथा अधीरा ई तीन गोट उपभेद बताओल गेल अछि । मध्याक चारि उपभेद आर अछि - ओकर यौवन, प्रेम करबाक रीति, प्रणयालाप तथा रतिकेलि प्रगल्भताक अनुसारेँ । पुनः प्रगल्भाक सेहो प्रणय-केलिकुशलता आ अभिरुचिक

अनुसार चारि गोट उपभेद कयल गेल अछि, अन्यासक्त नायकक प्रतिं ओकर व्यवहारक आधार पर तीन उपभेद आरो भए सकैछ ।[15]

(1) स्वकीया -

स्वकीया नायिका नम्रता तथा सरलता आदि गुण सँ सम्पन्न, गृह-कार्य मे प्रवीण एवं पतिव्रता होइछ । स्वकीया मे सामाजिक भय नहि होइछ । ओकर स्वच्छन्दतापूर्वक उपभोग कयल जा सकैछ । मुदा परकीयाक स्थिति एहि सँ बिलकुल विपरीत होइछ । ओकर उपभोगमे सामाजिक भय एवं अपयशक शंका ब्रोबरि बनल रहैछ । फलत: ओकर स्वच्छन्द उपभोग नहि कयल जा सकैछ । भारतीय काव्य मे स्वकीयाक अपेक्षा परकीया-प्रेमहीक अधिक चित्रण भेल अछि । एकर कारण ई जे परकीया प्रेमहि मे प्रेम एवं भावनाकेँ अधिक विशद आ विस्तृत होयबाक अवकाश भेटैछ, कारण स्वकीयाक प्रेम सहज गति सँ बहनिहार सरिताक समान होइछ आ परकीयाक प्रेम पग-पग पर बाधा-विघ्न तथा भयक चट्टान सँ टकराय वाला निर्झरिणीक सतत् प्रगतिशील प्रवाह थिक आ से स्वाभाविक, कारण बाधा गतिक प्रतीक होइछ ।

स्वकीया नायिकाक भेद मुग्धा, मध्या आ प्रगल्भा पूर्व मे कहल गेल अछि । मुग्धा ओ नायिका थिक जकरा शरीर मे यौवन अवतरित भेल अछि, मोनमे कामक उन्मेष आरम्भ भेल अछि, रति-क्रिया मे हिचक होइछ, प्रणय-कोप सुकोमल होइछ तथा लाजक कारणेँ प्रेम-प्रकाशन मे विवश रहैछ । मध्या ओ स्वकीया नायिका थिक जे रतिक्रीड़ा मे निपुण, काम-पिपासा मे उग्र, उभरल यौवन, उन्मुक्त प्रेमालाप तथा रति-क्रिया मे लाज-रहित रहैछ । प्रगल्भा ओ स्वकीया नायिका थिक, जकरा कामोन्माद नितान्त अधिक, यौवन पूर्ण उभरल, रति-क्रिया मे पूर्ण प्रवीणता तथा रतिलीला मे नितान्त उग्र रहैछ ।[16] एही प्रकारेँ मध्यमा आ प्रगल्मा केँ धीरा, अधीरा तथा धीराधीरा तीन-तीन प्रकार होइछ । मध्या धीरा ओ नायिका थिक जे अपन प्रियतम पर अपन क्रोध नीक-बेजाय कहि केँ प्रकट करैछ । अधीरा मध्या ओ थिक जे कठोर वचन सँ अपन प्रिय केँ आघात करैछ तथा धीरा-धीरा मध्या ओ थिक जे अपन प्रियतम पर अपन क्रोध कानि-खीजि केँ प्रकट करैछ । प्रगल्भा धीरा नायिका ओ थिक जे प्रपंचपूर्ण आलाप मे अपन क्रोधपूर्ण स्वरूप केँ नुकबैछ, अपन प्रेमी पर बनावटी प्रेम प्रदर्शन करैछ तथा अपन प्रेमीक संग रतिक प्रसंग मे उदासीन रहैछ । प्रगल्भा अधीरा नायिका ओ थिक जे अपन प्रेमी केँ डेरबैत-धमकबैत अछि तथा समयानुसार ओकरा

ताड़बो करैत अछि । प्रगल्भा धीरा-धीरा ओ नायिका थिक जे अपन व्यंग्य-बचनसँ अपन प्रेमी केँ व्यथित करैछ ।

(2) परकीया

परकीया नायिकाक प्रौढ़ा (पर-परिणीता) आ कन्यका (अपरिणीता) दुइ भेद अछि ।[17] प्रौढ़ा परकीया ओ नायिका थिक जे यात्रा आदि मे विशेष रुचि रखैत अछि, दोसराक संग प्रेमालाप करैत अछि तथा निर्लज्ज होइत अछि । कन्यका ओ थिक जे नवयुवती एवं लज्जाशील होइछ । ओ कुमारि रहैछ तथा अपन माय-बापक वश मे रहैछ ।[18]

परकीयाक आर छः भेद मानल गेल अछि (1) गुप्ता, (2) विदग्धा, (3) विलक्षिता (4) कुलटा, (5) अनुशयाना तथा (6) मुदिता । गुप्ता ओ नायिका थिक जे अपन प्रेम-भाव केँ नुकयबाक प्रयत्न करैछ । एकरहु दुइ भेद अछि - भावगोपना तथा सुरत गोपना । विदग्धा ओ नायिका थिक जे अपन कार्य तथा वचन मे विदग्धता रखैछ। एकरहु दुइ भेद अछि - वाग्विदग्धा तथा क्रियाविदग्धा । विलक्षिता ओ नायिका थिक जे गुप्त रहियो कए, प्रयत्न कयलो सन्ता अपन भाव अथवा सुरत केँ गोपित नहि राखि पबैछ । अर्थात् गुप्ता नायिका जखन प्रयत्न कयलो सन्ता अपन भाव अथवा सुरत केँ गोपित नहि राखि पबैछ तँ ओ लक्षित भए जयबाक कारणेँ विलक्षिता कहबैछ। कुलटा ओ नायिका थिक जकर सम्बन्ध अनेक पुरुषक संग रहैछ । अनुशयाना ओ नायिका थिक जे संकेत-स्थल केँ नष्ट भए जयबाक कारणेँ, समय पर ओतए नहि जुमि सकबाक कारणेँ अथवा नायक सँ मिलबाक संभावना नहि रहलाक कारणेँ पश्चात्ताप करैछ । मुदिता ओ नायिका थिक जे संभोग श्रृंगारक संभावना सँ मुदित रहैछ ।

(3) सामान्या -

सामान्या अथवा साधारणी ओ नायिका थिक जे रति-कुशल तथा संगीत आदिकला मे प्रवीण होइछ, जे साधारणत: वेश्या कहल जाइछ । एहि तरहक नायिकाक प्रेम कपटपूर्ण होइछ । एकरा प्रेमकेँ विशेष महत्व नहि देल जाइछ, कारण एकरा हृदय मे प्रेमक सहयोग नहि रहैछ, ओतए मात्र स्वार्थपरते रहैछ, ओ मात्र धनेक हेतु प्रेम करैछ । सामान्या अथवा वेश्या मात्र धनार्जनक लेल प्रेम करैछ अथवा ओकरहु कोनो एकक प्रति प्रेम-भाव रहैछ - एहि विषय पर कतिपय ग्रन्थकार लोकनि विस्तृत विवेचन कयने छथि । रुद्रभट्टक अनुसारेँ सामान्या नायिका सेहो ककरहु सँ प्रेम करैछ, अन्यथा

यदि धनार्जने टाक लेल ओकर प्रणय-क्रीड़ा एवं प्रेम-चेष्टा मानल जाए तँ ओहि मे रसाभास भए सकैछ, श्रृंगार रसक पूर्ण परिपाक नहि ।[19] 'कीर्तिलता' मे विद्यापति 'जोनापुर'क वेश्या सभक वर्णन करैत लिखलन्हि अछि - 'धननिमित्ते धरू प्रेम लोभेविनय'[20]। ज्योतिरीश्वर ठाकुर सेहो एकर चर्चा कयने छथि ।[21] एहि विषय पर परवर्ती ग्रंथकार लोकनि सेहो विवेचन कयने छथि। अवस्थानुसारे नायिकाक आठ भेद जे मानल गेल अछि, ओकर विश्लेषण एवंक्रमें कयल जाइछ -

(1) स्वाधीन पतिका - स्वाधीनपतिका ओ नायिक थिक जकर प्रणयी ओकर प्रेम-पाश मे तेना ने आबद्ध रहैछ जे ओकरा छोड़ि ओ कतहु अन्यत्र प्रेमालाप नहि करैछ । अर्थात् जाहि नायिकाक पति पूर्णतया ओकरा वश मे हो, अनुकूल हो ।[22] एकरहु मुग्धा, मध्या, प्रगल्भा, परकीया तथा सामान्या आदि उपभेद होइछ ।

(2) विरहोत्कण्ठिता - विरहोत्कण्ठिता नायिका ओ थिक जकर प्रियतम मिलबाक हेतु उत्सुक रहितहु, दुर्गाग्यवश ओकरा सँ नहि मिलि सकैछ । फलतः ओ वियोग-व्यथा सँ विह्वल भए जाइछ । परंच कतिपय ग्रंथकारक अनुसारेँ संकेत स्थल पर प्रियतमक प्रतीक्षा मे उत्कण्ठिता नायिको एहि श्रेणी मे आबि जाइछ । एकहि नगर वा स्थान मे रहलो सन्ता मिलनक अभावक स्थिति मे नायिका विरहोत्कण्ठिता होइछ, एहनो ककरहु-ककरहु मत अछि ।[23]

(3) वासकसज्जिका - वासकसज्जिका ओ नायिका थिक जे अपन अलंकृत वैश्म (भवन) मे अपन सखीक द्वारा सजाओल जाइछ तथा अपन प्रियतमक मिलनक प्रतीक्षा मे पड़ल रहैछ । वासकक तात्पर्य प्रियतमक प्रेमोपचार सँ थिक ।[24] अवसितप्रवास पतिका अर्थात् नायक प्रवास सँ आबए वला हो, ई उपभेद सेहो ककरहु मतानुसारे एकरा अन्तर्गत अबैछ । मुग्धा आदि उपभेद सेहो भए सकैछ ।

(4) विप्रलब्धा - विप्रलब्धा ओ नायिका थिक जे अपना केँ एहि हेतु अपमानित अनुभव करैछ जे ओकर प्रेमी स्वयं मिलनक संकेत देलहु सन्ता ओकरा ओतए नहि अबैछ । किछु परवर्ती ग्रंथकार लोकनि संकेत स्थल पर नायिकाक होयब आवश्यक नहि मानलन्हि अछि । स्वकीया वा सामान्याक लेल संकेत स्थल पर जायब आवश्यको नहि । नायकक वंचकताक कारण निराशा, एहि अवस्थाक नायिकाक अनिवार्य विशेषता होइछ । विद्यापतिक कतोक पद मे एहि अवस्थाक नायिकाक चित्र प्राप्त अछि ।[25]

(5) खण्डिता - खण्डिता नायिका ओ थिक जकर प्रेमी आन नायिकाक संग प्रेमालाप मे रत रहि निश्चित समय पर ओकरा ओतए नहि अबैत अछि । फलतः ओ विरह-वेदना सँ व्यथित रहैछ । परवर्ती ग्रंथकारलोकनि अन्य रमणीक संग रमण करबाक निश्चित स्थितिये मे खण्डिता अवस्था मानलन्हि अछि।[26] भरत तथा रुद्रभट्ट खण्डिता आ विप्रलब्धा मे अधिक भेद नहि मानलन्हि अछि । हुनकालोकनिक अनुसारेँ खण्डिता अपन घर पर तथा विप्रलब्धा संकेत स्थल पर प्रिय मिलन सँ निराश नायिका केँ कहल जाइछ। विप्रलब्धा तथा खण्डिता मे भेद निराशा तथा ईर्ष्याक होइछ । ईर्ष्याक संग पहु केँ रहला पर मानवती नायिकाक अवस्था होयत । किन्हकहु अनुसारेँ खण्डिता तथा मानवती मे एतबहु भेद नहि ।[27] हिनका अनुसारेँ मानवती बेसी सँ बेसी खण्डितेक एक गोट उपभेद भए सकैछ ।

भरत नायिकाक ईर्ष्याक चारि गोट कारण बतौलन्हि अछि - नायकक वैमनस्य, व्यालीक, विप्रिय तथा मन्यु ।[28] नायिकाक समक्ष प्रेम प्रकट करब तथा अन्य मे आसक्ति विप्रिय, रोकलो पर अन्य रमणीक संग प्रेम करब व्यालीक, अन्य रमणीक संग रमण करबाक चिन्ह सँ युक्त नायक केँ देखि कए व्यथा वैमनस्य तथा नायिकाक सम्मुख अनेक रमणी केँ अपना प्रति आसक्त बताएब मन्युक अवस्था अछि । ई चारू खण्डिताक अन्तर्गत अबैछ । विद्यापतिक पदावली मे एकर चित्र कतोक पद मे उपलब्ध अछि ।[29] खण्डिताक एक भेद अन्य संभोगदुखिता सेहो मानल जाइछ । एकरहि अन्तर्गत दूती संभोगदुखित सेहो अबैछ ।

(6) कलहान्तरिता - कलहान्तरिता ओ नायिका थिक जे प्रणय-निवेदन केनिहार प्रणयी केँ क्रोधवश निरादृत कए पुनि पश्चात्ताप करैछ । खण्डिता तथा कलहान्तरिता मे एतबहि भेद अछि जे खण्डिता कोप एवं ईर्ष्याक अतिरेक मे रहैछ तथा कलहान्तरिता मे कोपक अपेक्षा वा ओकरा स्थान पर नैराश्य, अनुताप एवं व्यथाक स्थिति प्रधान रहैछ, खण्डिता मे प्रमुखता ईर्ष्याक तथा कलहान्तरिता मे अनुताप एवं दुःखक रहैछ । विद्यापतिक पद सभ मे एहि अवस्थाक नायिकाक चित्र अधिक नहि उपलब्ध अछि ।

(7) प्रोषितपतिका - प्रोषित-पतिका ओहि नायिका केँ कहल जाइछ जे प्रियतम केँ परदेश गेला पर कामक वेदना सँ व्यथित रहैछ । एकर तीन भेद अछि - (1) प्रवत्सतपतिका, (2) प्रवत्स्यत्पतिका (3) आगतपतिका । जकर पति परदेश जाएवला हो से प्रवत्स्यत्पतिका तथा जकर पति परदेश सँ

आबि तँ गेल छैक, मुदा मिलन नहि भए पौलकि अछि, से आगत पतिका कहबैछ । प्रोषितपतिकाक एक आर भेद कतिपय आलंकारिकलोकनि बतौलन्हि अछि - अवसत प्रवासपतिका, अर्थात् जाहि नायिकाक प्रियक प्रवास समाप्त होबएवला छैक तथा ओ ओकर प्रतीक्षा मे अत्यन्त आतुर भए रहल अछि ।

(8) अभिसारिका - अभिसारिका ओ नायिका थिक जे कामक वश मे तेहन विह्वल रहैछ जे ओ अपन प्रणयी केँ या तँ अपनहि ओतए बजबैछ किंवा ओ स्वतः अपन प्रणयीक गृह जाइछ । विद्यापतिक अनेक पद मे अभिसारिकाक चित्रण कयल गेल अछि । विशेष कए साओन- भादवक कारी-अन्हार राति मे जखन वर्षा होइत हो, कतहु किछु नहि सुझैत हो, बिजुरीक चमकला सन्ता बाट देखाइ पड़ैत हो, थाल-पानि सँ धरती भरल हो, बाट मे डेग-डेग पर सांप-बीछक भय हो, प्रिय-मिलनक हेतु अत्यन्त साहस कए संकेतस्थल पर जाइत नायिकाक चित्रण विद्यापतिक अनेक पद मे कयल गेल अछि ।[30] एकरहु दुइ भेद अछि - कृष्णाभिसारिका तथा शुक्लाभिसारिका ।

एहि सभ भेद सभक अतिरिक्त विद्यापतिक पद सभमे एक आर नायिकाक चित्रण कयल गेल अछि जकरा एक विद्वान उपेक्षिता नायिकाक कोटि मे परिगणित कयलन्हि अछि ।[31] विद्यापतिक कतेको पद मे पति वा प्रणयी द्वारा उपेक्षिता किंवा परित्यक्ता नायिकाक चित्रण कयल गेल अछि । एकर चित्र सभ अत्यन्त मार्मिक अछि ।

दशाकेर आधार पर नायिकाक तीन भेद आर मानल गेल अछि- अन्य संभोग-दुखिता, गर्विता तथा मानवती । अन्य संभोग-दुखिता ओ नायिका थिक जे नायक लग सँ घुरल अपन सखी वा दूतीक सुरत-चिन्ह सँ ओकरा नायक द्वारा संयुक्त अनुमान करैछ अथवा नायकक शरीर पर अन्य रमणीक सुरत-चिह्न केँ देखि तीव्र वेदनाक अनुभव करैछ । गर्विता ओ नायिका थिक जकरा कोनहु प्रकारक गर्व रहैछ । एकर कतेको भेद अछि - यथा, रूपगर्विता, सुरत गर्विता आदि । मानवती ओ नायिका थिक जे मान करयवाली हो । एकर अतिरिक्त प्रेम-स्तरक आधार पर नायिकाक दुइ भेद होइछ - जेष्ठा आ कनिष्ठा । जेष्ठा पर नायकक पूर्ण प्रेम रहैछ, कनिष्ठा पर अपेक्षाकृत कम ।

एकर अतिरिक्त नायिका सभक किछु सहायिका सेहो रहैछ । दूती-भेद मे साहित्य-दर्पणकार सखी, नटी, दासी, धाय, धाय-पुत्री, पड़ोसिन, सन्यासिनी, शिल्पकारक स्त्री आदिक उल्लेख कयने छथि । एहि सहायिका

सभकेँ सेहो नायिका-भेदक अन्तर्गत मानल जाइछ । एहि तरहेँ समस्त नायिका एक सौ अट्ठाइस प्रकारक मानल जाइछ जकर उत्तम, मध्यम आ अधम तीन-तीन प्रकारक भेद अछि ।

विद्यापतिक पदावली मे वर्णित नायिका-भेद

विद्यापति मूलतः एवं सर्वांशतः कवि थिकाह । नायिका-भेद अथवा रीतिकाव्यक अन्य उपादान सभहिक योजनाबद्ध निरूपण करब हुनक अभीष्ट नहि छल । परंच हुनक गीतिपद सभ मे मुग्धा सँ प्रगल्भा धरि तथा वासकसज्जा सँ प्रोषितपतिका धरि विभिन्न श्रेणीक नायिका सभक अनेक चित्र उपलब्ध अछि । नायिका-भेदक परम्परानुसार विद्यापति अनेक स्थल पर औचित्यक सीमाक उल्लंघन कए श्रृंगार रसक स्थूल एवं मादक चित्र अंकित कयने छथि । फलतः विद्यापतिक गीतिपद सभ मे राधाक कतिपय रूपक संकेत उपलब्ध होइछ तथा कखनहु ओ स्वकीयाक अपेक्षा बेसी परकीया, प्रौढ़ाक अपेक्षा बेसी मुग्धा तथा खण्डिताक अपेक्षा बेसी अभिसारिकाक रूपमे चित्रित कएल गेल अछि ।

श्रृंगार रसक अन्तर्गत नायिका भेदक निरूपणक चर्चा विद्यापतिक गीतिपद सभमे जे पाओल जाइछ ताहि मे मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा, गुप्ता, विदग्धा, विलक्षिता, अभिसारिका, मानवती आ प्रोषित-पतिका प्रमुख अछि ।

मुग्धा नायिका -

'रसराज' मे मुग्धाक व्याख्या करैत लिखल गेल अछि -

अभिनव जौबन आगमन, जाके तन मे होई ।
ताको मुग्धा कहत हैं कवि कोविद सब कोई ।

अर्थात् जकरा जीवन मे नव-यौवनक संचार हो, तकरा विद्वान-कवि मुग्धा कहैछ । विश्वनाथ मुग्धाक पांच गोट विशेषता निर्दिष्ट कयने छथि- (1) यौवनक प्रथम अवतार, (2) कामक प्रथम संचार, (3) रति मे वामाचार, (4) मान मे मृदुता, (5) लज्जाधिक्य । विद्यापतिक मुग्धा यौवनक प्रथम अवतार थिक । ओकरा रूप मंडित करबाक हेतु हरिण, इन्दु, अरविन्द, करिणी, हेम आ पिककेँ एकहि स्थान पर एकत्र कयल गेल अछि । ओकर रूप लावण्य केँ देखि करोड़ो कामदेवहु केँ मर्दित कयनिहार कृष्ण संज्ञाहीन भए धरातल पर खसि पड़ैछ । यौवनक संगहि ओकरा मे कामक संचार सेहो भेल अछि । ओ अयना लए प्रायः श्रृंगार करैछ तथा अपन सखी सँ सुरति-विहारक प्रसंग मे पूछैछ । लाजक तँ ओ साक्षात् देवी थीक । जेना

हरिणी दत्तचित भए संगीत सुनैछ, तहिना ओ रस-कथा मे निमग्न भए लाजक आवरण सँ विहीन नहि होइछ । कृष्णक सम्मुख अपन सर्वस्व न्यौछावार कयलहु संता ओ निर्निमेष दृष्टि सँ हुनका देखियहु तक नहि सकैछ -

अवनत आनन कए हम रहलिहु
वारल लोचन चोर ।
पिया-मुख-रुचि पिबए धाओल
जनि से चाँद चकोर । - मि.म. - 34

मुग्धा नायिकाक एक अन्य उदाहरण -

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल ।
वचनक चातुरि लहु लहु भास
धरिनिये चाँद कएल परगास । -मि.म.-620

मध्या -

मध्या मे लाज आ उत्कण्ठा समान स्तर पर रहैछ । मुग्धा जकाँ ने तँ ओकर कामने पर लाजक आवरण होइछ आर ने प्रौढ़ा जकाँ अभिप्रायक स्पष्ट अभिव्यक्तिए । एहि नायिकाक शब्द आ कार्य मे लाज एवं कामनाक समन्वय पाओल जाइछ -

तुअ गुन गौरव सील सोभाव ।
सुनि कए चढ़लिहु तोहरि नाव ॥
आइलि सखि सभ साथ हमार ।
ले सब भेलि निकहि विधि पार ॥
तोँह पर नागर हम पर नारि ।
काँप हृदय तुअ प्रकृति विचार ॥ - मि.म.-49

उपर्युक्त पंक्ति मे नायिका अपन अभिप्राय प्रकट कए तँ देल, किन्तु ओकरा पर लाजक आवरण पड़ल अछि जे नारी हृदयक गूढ़ रहस्य एवं आन्तरिक सौन्दर्यक दिग्दर्शन करबैछ ।

प्रौढ़ा

विद्यापतिक प्रौढ़ा नायिकाक अनुराग मे गाम्भीर्य, मार्मिकता तथा शुद्ध भावनाक अपेक्षा रतिमूलक भावनाक प्राबल्य अछि जे अनुभूति केँ वासनाक आवरण मे प्रक्षिप्त रखैछ । प्रेमक आतुरता मे उपहास आ लाजक कतहु की कोनो स्थान रहैछ -

अबहुँ तेजहु पहु मोहि न सुहाए ।
पुनु दरसन होत मदन दोहाए ॥

कामदेवक शपथ लए पुनि मिलबाक प्रतिज्ञा करबा मे लाजक आवरणक आवश्यकते कथिक ? एहि सँ बेसी स्पष्ट अभिव्यक्ति नारीक वचन मे सम्भवो नहि भए सकैछ । विद्यापतिक एहि पद मे व्यक्त यौवन असंगत परिकीयत्वक भावना मे तीव्र अनुभूति आ मादक उन्माद पाओल जाइछ जे समस्त तर्क, विवेक आ बुद्धि केँ तिलांजलि दए नारीत्वक उच्छृंखल चेष्टा, सुलभ आकर्षण एवं मर्यादाजन्य विकर्षणक सम्मिलित रूपकेँ साकार कए विपरीत रति तकहु मे उद्यत भए जाइछ -

आकुल चिकुर बेढ़लि मुख सोभ ।
राहु कएल ससि-मंडल लोभ ॥
बड़ अपरूब दुइ चेतन भेलि ।
विपरित रति कामिनि कर केलि ॥
कुच विपरीत बिलम्बित हार ।
कनक कलस बह दूधक धार ॥
पिय मुख संमुखि चूमि तजि ओज ।
चाँद अधोमुख पिबए सरोज ॥
किंकिन रटत नितम्बिनि छाज ।
मदन महारथ बाजन बाज ॥ - मि.म.-502

उपर्युक्त पद मे यद्यपि उन्मुक्त काम-वासना केँ देखाओल गेल अछि जे रति-कलाक चरम विकासक परिणति थिक, तथापि उपमा आ उपमेयक दृष्टिसँ ई नितान्त महत्वपूर्ण अछि । 'राहु कएल ससि मंडल लोभ' 'चांद अधोमुख पिबए सरोज' आदि भावक निरूपण अत्यन्त सरस एवं मधुर अछि । वस्तुतः उन्मुक्त श्रृंगार वर्णनक प्रवृत्तिक आधार साधारण जन-जीवनक प्रेम सँ अछि जकर सुन्दर चित्र विद्यापतिक पद मे पाओल जाइछ ।

गुप्ता

गुप्ता नायिका प्रेम-व्यापार केँ नुकयबाक प्रयास करैछ । विद्यापति 'छलना' शीर्षक मे गुप्ता नायिकाक अत्यन्त विस्तार पूर्वक वर्णन कयलन्हि अछि । प्रेमालाप केँ नुका कऽ रखबाक प्रयास सामान्यतः सभ नायिका मे पाओल जाइछ, परंच परकीया नायिका जे विशेषतः मुग्धाक श्रेणी मे अबैछ, एहि कला मे प्रवीण रहैछ । नारी-सौन्दर्यक चित्रण एवं नायक-नायिकाक

प्रणयजन्य विविध चेष्टाक संग नायिका द्वारा दन्तक्षत कें प्रक्षिप्त रखबाक निमित्त ओकरं चातुर्यमय मनोदशाक चित्रण एहि पद मे भेल अछि -

कुसुम तोरए गेलहुँ जहाँ ।
भ्रमर अधर खंडल तहाँ ॥
ए सखि सरूप कहल तोहि ।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि ।
हार मनोहर बेकत भेल ।
उजर उगर संसअ लेल ॥
ते घसि मजूर जोड़ल झाँप ।
नख गाड़ल हृदय काँप ॥
भन विद्यापति उचित भाग ।
बचत पाटब कपट लाग ॥ - मि.म.-355

नायिकाक सखी द्वारा दन्तक्षतक प्रसंग मे पुछला उत्तर ओ कहैछ जे हार कें व्यक्त भेला पर ओकर उज्जर दाना कें साँप बुझि मयूर ओहि पर झपट्टा मारलक आ से ई ओकरहि चेन्ह अछि । वस्तुतः नायिकाक एहि उत्तर मे सुमधुर एवं सुकुमार भावक अपूर्व व्यंजना भेल अछि ।

गुप्ता नायिकाक प्रपंचपूर्ण वचन-कौशल सँ प्रणयजन्य चेष्टा कें झाँपबाक प्रयास अद्भुत अछि । हार तथा चूड़ी फुटबाक बहाना सेहो कम चातुर्यपूर्ण नहि -

खरि नरि बेगे भासलि नाई ।
धरए न पारथि बाल कन्हाई ॥
ते धसि जमुना भेलहुँ पार ।
फुटल बलआ टूटल हार ॥ - मि.म.-356

अयबा मे विलम्ब होयबाक कारण बतबैत नायिका अपना सखी सँ कहैछ जे नदीक तीक्ष्ण-धार मे नाव कें भासि गेला सँ ओ पयरे नदी कें पार कयलक । फलतः कानक कुण्डल यमुना मे खसि पड़लैक जकरा ताकबा मे सन्ध्या भऽ गेल तथा पायरक मेंहदी एवं माथक सिन्दुर मेटा गेल, चूड़ी ओ हार टूटि गेल, नदी कात कुबाट सँ अयलाक कारणें कुचमे तीक्ष्ण काँट गरि गेल । वस्तुतः नायिकाक एहि प्रकारक उक्ति मार्मिकतापूर्ण अछि। वस्तुतः एहि प्रकारक गीत मे चित्रित श्रृंगार रस नायक-नायिकाक यौवन-कालक विकसित सौन्दर्य पर आश्रित अछि ।

विलक्षिता

गुप्ता नायिका मे लक्षित तँ होइछ, किन्तु जखन गुप्ताक प्रेम-व्यापार प्रकट भऽ जाइछ तँ ओ विलक्षिता कहल जाइछ । विद्यापति विलक्षिताक प्रसंग मे एहि प्रकारें सखीक मुँहे कहबैत छथि -

सामरि हे झामरि तोर देह ।
की करू का सयँ लायलि नेह ॥
नींद भरल अछ लोचन तनोर ।
कोमल वदन कमल-रुचि चोर ॥
निरस घुसर करू अधर पँवार ।
कोन कुबुधि लुहु मदन-भंडार ॥ -मि.म.-68

विदग्धा

विद्यापतिक विदग्धा नायिका अपना क्रिया-कलाप एवं वचन सँ मनःस्थिति कें प्रच्छन्न रखैछ । अतएव ओकर दुइ भेद अछि -क्रियाविदग्धा आ वाग्विदग्धा। विद्यापतिक क्रियाविदग्धाक उदाहरण निम्नलिखित पद मे द्रष्टव्य अछि -

दाहिनि नयन पिसुन गन बारल
परिजन बामहि आध ।
आघ नयन कोने हरि पेखल
तेँ भेल अत परमाद । -मि.म.-68

विदग्धा नायिकाक आचरण स्वभावतः स्त्रीक चरित्र सँ थीक जे सर्वथा प्रक्षिप्त, गूढ़ तथा रहस्यमय होइछ ।

अभिसारिका

गुरुजनक भय सँ गृह त्यागि कें निश्चित संकेत-स्थल पर अपन नायक सँ मिलबाक हेतु गेनिहार नायिका कें अभिसारिका[32] कहल जाइछ। एकर दू भेद अछि - शुक्लाभिसारिका तथा कृष्णाभिसारिका । शुक्ल पक्ष मे विचरण करयवाली कें शुक्लाभिसारिका तथा कृष्ण पक्ष मे विचरण करयवाली कें कृष्णाभिसारिका नायिका कहल जाइछ । विद्यापति अभिसारिका नायिकाक जी खोलिकऽ वर्णन कयलन्हि अछि । पदावली मे' शुक्लाभिसारिका तथा कृष्णाभिसारिकाक अतिरिक्त वर्षाभिसारिका, दिवसाभिसारिका, पुरुष-वेषाभिसारिका नायिकाक वर्णन सेहो उपलब्ध अछि ।

विद्यापतिक अभिसारिकाक उत्कंठा एतबा अदम्य छैक जे ओकरा समक्ष जीवन-मरणक कोनहु स्थान नहि -

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई ।
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर बलगई ।
सजनी आज दुरदिन भेल ।
कन्त हमर नितांत अगुसरि, संकेत कुंजहि गेल ।
तरल जलधर बरखि झर-झर, गरज घन घनघोर ।
साम नागर एकले कइसन, पंथ हेरए मोर ।
सुमिरि मझु तनु अवस भेल जनि, अथि रथ स्थर काँप ।
ई मझु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाँप ।

नायिका निर्धारित स्थान पर जयबाक हेतु जहिना उद्यत होइछ कि नभमण्डल मे मेघ उमरए लगैछ । बिजुलीक चमकब प्रारंभ भऽ जाइछ। ठनकाक ठनकब तथा पवनक सनसनाहटि सँ बाहर जयबाक बाट नहि, पंरच विद्यापतिक अभिसारिका केँ धैर्य कतए ? प्रियतम तँ पूर्वहि ओहि स्थान पर पहुँचि ओकर प्रतीक्षा कऽ रहल छलैक । सभ सँ दारुण तँ छलैक गुरुजनक नयन आ ताहि सँ बचबाक लेल ओ उपाय निकालि लैछ –

धवल बसन तनु झँपाएब, गमन करब मंदा ।
जइयो सगर गगन उगल, सहस चंदा ।।

ओ श्वेताम्बर सँ अपना शरीर केँ तेनाकऽ ने झाँपि लेल जे हजारो चन्द्रमा किएक ने होथु, किन्तु ओकरा क्यो चिन्हियो धरि नहि सकत । वस्तुत: नारीक रूपमे प्रेम आ श्रृंगारक तथा संयोग आ वियोगक ध्रुव बिन्दु पाओल जाइछ । एहिठाम अभिसारिकाक अन्य भेद सभक मात्र उदाहरण देल जाइछ –

(क) **कृष्णाभिसारिका –**

नव अनुरागिनि राधा, किछु नहि मानय बाधा ।
एकलि कएल पयान, पथ विपथ नहि मान ।।[33]

(ख) **शुक्लाभिसारिका :**

चल-चल सुन्दरि हरि अभिसार, जामिनि उचित करउ सिंगार।
जइसन रजनि उरोजल चन्द, ऐसन बेस भुसन करु बन्ध ।।[34]

(ग) **वर्षाभिसारिका :**

बारिस जामिनि कोमल कामिनि, दारुन अति अंधार ।
पथ निसाचर सहसे संचर, घन पर घन जलधार ।।[35]

(घ) **दिवसाभिसारिका :**

राहु मेघ भए गरसल सूर, पथ परिचय देवसिंह भेल दूर ।
नहि बरसए आसन नहि होए, पुर परिजन संचर नहि कोए।।

– मि.म.-312

(ङ) **पुरुषवेशाभिसारिका :**

अबहु राजपथ पुरजन जागि, चाँद किरन जगमण्डल लागि ।
सहए न पारए नव-नव नेह, हरि-हरि सुन्दरि पड़लि सन्देह ।।

– ओएह 928

वासकसज्जा

वासकसज्जा नायिकाक कोमल हृदयक उद्‌गार प्रियतमक मिलनक पवित्र उत्कंठा एवं आकुलता मे रहैछ । वासकसज्जाक चित्रण विद्यापतिक निम्नलिखित पद मे प्राप्त अछि –

कुसुम रचित सेजा, दीप रहल तेजा
परिमल अगर चन्दने ।।
जबे जबे तुँअ मेरा निफल बलहि वेरा ।
तबे तबे पीड़लि मदने ।।
माधव, तोरि राही वासकसज्जा ।
चरन सबद चौदिस आपए काने
पिआ लोभे परिनति लजा ।
सुनिअ सुजन नामे अवधि न चुकए ठाम्हे
जनि वन पसेरल हरी ।।
से तुअ गमन आसे निन्द न आवे पासे
लोचन लागल देहरी ।। – मि.म.-358, पृ.-253

प्रियतम सँ मिलबाक हेतु नायिका अपन सेज केँ सजौलक अछि। दीप जड़ि रहलैक अछि । चानन तथा धूपक सुगन्ध चहु दिस प्रसारित भऽ रहल अछि । नायकक पयरक ध्वनि केँ सुनबाक लेल ओ अपन कान केँ चारूभर पथने अछि । प्रियतम-मिलनक तीव्र अभिलाषाक समक्ष ओकरा मे संकोचक कोनो टा स्थान नहि । सुनल जाइछ जे सज्जन समय आ स्थान सँ कथमपि नहि चुकैछ तथा ओ सर्वदा सांकेतिक स्थल पर अबितहि छथि। परंच प्रियतम केँ नहि अयलासँ प्रतीत होइछ जे जंगल मे आगि प्रसारित भए रहल अछि । प्रियतमक अयबाक आशा मे ओकरा निन्न नहि होइछ तथा ओकर नेत्र बरोबरि द्वारि दिस लागल रहैछ ।

वासकसज्जा नायिका आशाक अवलम्बनक आधार पर उत्कंठिताक रूपें अपन प्रियतमक बाट तकैत मोनमे विविध प्रकारक अभिलाषाक पोषण करैछ -

पिया जब आओत मझु गेहे ।
मंगल जतन करब निज देहे ।
कनक कुंभ करि कुच युग राखि ।
दरपन धरब काजर देब आँखि । -मि.म.-760

प्रियतम कें अयला सन्ता नायिका अपन सभ अंगक श्रृंगार करत। कुच द्वय कें कनक-संभु जकाँ स्थापित करत तथा नेत्र मे काजर लगा आगू मे अयना कें राखत । वासकसज्जा नायिकाक प्रेममय जीवनक सुकुमार आकृति मे नारीक अपार सुषमा एवं विशिष्ट कांतिक व्यंजना भेल अछि ।

मानवती

प्रिय सँ रुष्ट नायिका कें मानवती कहल जाइछ । मान प्रेमक एक स्वाभाविक अंग थिक जे ओकर उत्कर्ष कें प्रकट करैछ । अवस्थाक अनुसारें मानक दू भेद अछि - (1) प्रणय मान आ (2) ईर्ष्या मान । प्रिय आ प्रिया जँ अकारणें एक दोसरा पर क्रोध प्रकट करैछ तँ ओकरा प्रणयमान तथा जँ प्रिया अपन प्रिय कें अन्यासक्त देखैछ अथवा अनुमान करैछ आ प्रियक प्रति अपन कोपकें प्रकट करैछ तँ ओकरा ईर्ष्या-मान कहल जाइछ।

मान यद्यपि नायक आ नायिका दुनू मे होइछ, परंच श्रृंगार शास्त्र मे नायिकाक माने कें प्रधानता देल गेल अछि । एकरा भंगकरबाक उपक्रम कें साम, भेद, दाम, नति, उपेक्षा एवं रसान्तर कहल जाइछ । प्रिय वचन द्वारा मानिनी कें मनयबा कें साम, नायिकाक सखी द्वारा ओकरा मनयबा कें भेद, आभूषण आदि दए ओकरा मनयबा कें दाम, नायिकाक पएर पर अपन माथ राखि मनयबा के नति, सभ उपचार असफल भेला सन्ता नायिकाक अनादर करबा कें उपेक्षा तथा भय, हर्ष, धृष्टता आदि भाव द्वारा नायिकाक मोन कें अन्यत्र आकृष्ट कए मान कें बिसरि जयबा कें रसान्तर कहल जाइछ । मानभंगक एहि विभिन्न उपचार मे भेद आ नतिक विशेष महत्व आ प्रचलन अछि ।

अपन वचन चातुर्य सँ नायिकाक सखी प्राकृतिक दृश्यक वर्णन एवं अन्यान्य उपालंभक द्वारा नायिका कें मान-भंगक निमित्त प्रेरित करैछ जकरा भेद कहल जाइछ । विद्यापतिक निम्न पद मे एहि प्रकारक भाव पाओल जाइछ-

विरह व्याकुल वकुल तरुवर, पेखल नन्द कुमार रे ।
नील नीरज नयन सयँ सखि, ढरह नीर अपार रे ।
पेखि मलय जल पंक मृगमद, तामरस घनसार रे ।
निज पानि-पल्लव मूंदि लोचन पड असंभार रे ।

- मि.म.-929

उपर्युक्त पद मे मानिनी नायिकाकें ओकर सखी वसंतक मादक वर्णन द्वारा मान-भंगक उपक्रम करैछ ।

प्रोषितपतिका

विप्रलंभ श्रृंगारमे प्रोषितपतिकाक चित्र सभ सँ बेसी मार्मिक होइछ। प्रोषितपतिकाक तीन भेद कयल गेल अछि - आसन्न प्रवासपतिका, प्रवासपतिका, अवसित प्रवासपतिका । एकरहि प्रवत्सत्पतिका, प्रवत्स्यत्पतिका आ आगत पतिका सेहो कहल जाइछ ।[36]

विद्यापतिक अनेक पद मे प्रोषितपतिकाक सविस्तर वर्णन कयल गेल अछि । विद्यापतिक प्रोषितपतिका सभक पति विदेश चल गेल छैक वा चल जायवला छैक । गेल छैक ओ विदेश विजय करबाक वा वाणिज्य करबाक हेतु, मुदा ओतए जाए नहि जानि किएक नहि घुरलैक- ओतहि बसि गलैक वा कोनो अन्य रमणी मे आसक्त भऽ गेलैक । एतए एकाकिनी विरहिणी कखनहुँ मदन-ताप सँ, कखनहुँ अपन 'सून मन्दिर'क एकांतता सँ, कखनहुँ सखी-बहिनपाक व्यंग्य-वाण सँ, कखनहुँ गुरुजन- परिजन की बुझैत होएत ताहि ग्लानि सँ, कखनहुँ पड़ोसियाक अपन रूपयौवन दिस ललचायल दृष्टि सँ संतप्त-व्यथित भऽ रहल अछि ।

विद्यापतिक पदावली मे प्रोषितपतिकाक मात्र दू भेदक उदाहरण पाओल जाइछ - प्रवत्सत्पतिका आ प्रवत्स्यत्पतिकाक । प्रवत्स्यत्पतिकाक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

सखि हे बालम जितब विदेस ।
हम कुल कामिनी कहइते अनुचित
तोहहि देहुन उपदेस ॥

किन्तु जखन सखीक प्रयास निरर्थक भऽ जाइछ तँ ओ समस्त लोक-लाज कें त्यागि अन्तमे अपन प्रियतम सँ नहि जयबाक लेल कहैछ -

माधव तोहे जनु जाह विदेस ।
हमरो रंग रभस लए जएबह,
लएबह कोन सन्देस ॥ - मि.म.-503

नायिकाक कथन मे कतेक मार्मिकता अछि ? नायक तँ ओकर सभ रंग-रभस केँ लए जाइछ, मुदा ओकर बदला मे ओकरा लेल कोन सन्देस आनत ? हीरा, मणि, माणिक्य आदि अमूल्य, बेसकीमती तँ होइछ, मुदा ओ तँ अपन प्रियतमे केँ चाहैछ । किन्तु निर्दय नायक जखन परदेश गमन कइए रहल छल कि प्रियतमक मुँह निहारैत नायिकाक नयन सँ अविरल अश्रु प्रवाहित होमए लागल –

कानु मुख हेरइते भवानि रमनी,
फुफरइत, रोअत झरझर नयनी ।

अन्त मे कृष्ण विदेश (मथुरा) चलिए जाइछ । राधा प्रवत्सत्पतिका भऽ जाइछ । एकर एक उदाहरण दर्शनीय अछि –

माधव हमर रहल दुर देस ।
केओ न कहइ सखि कुसल सनेस ॥
जुग-जुग जिबथु, बसथु लाख कोस ।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ॥ – मि.म.-519

विद्यापतिक प्रवत्सत्पतिका 'कुलमन्ती' नारी अछि । ओ अपन प्रवासी प्रियतमक हेतु अहर्निश मंगलकामना करैछ । सभ दोष अपना उपर लए लैछ । प्रिय ओकरा बिसरि गेलैक अछि । घर-द्वार, नवयौवना पत्नी केँ बिसरि ओ विदेस मे रमल अछि, मुदा तकर सभ टा दोष ओकर अपन छैक, एहि मे प्रियतमक कोन दोष ? विद्यापतिक नायिकाक पूर्ण आत्मसमर्पण भाव प्रोषितभर्तृकाक रूप मे मूर्त्तमान भए ओकर व्यथा सजल गीत सभ मे फूटि पड़ल अछि । एहि प्रसंगक पद निम्नलिखित अछि –

जाहि देस पिक मधुकर नहि गुंजर कुसुमति नहि कानने ।
छव ऋतु मास भेद नहि जानए - सहजहि अबल मदने ॥
सखि हे से देस गेल पिय मोरा ।
रसमति वानी जतए न जानिअ सुनि पेम बड़ थोला ॥
कहलिओ जतए न बूझए की करति अंगित काजे ।
कओन परि ततए रतल अछ वालमु निरभय निगुण समाजे ॥
हमे अपना केँ धिक कए मानल की कहब तिन्हिकि बड़ाइ ।
कि हमे गरुबि गमारि (नि) सवतह की रति विरत कन्हाइ ॥
– मि.म.-533

उपर्युक्त पद मे वसन्त, पावस, शरद आदि छअओ ऋतु मे कोन प्रकारेँ नायिका केँ मदनक खरतर वाण-दंश सहन करए पड़ि रहल छैक, तकर दर्शन प्राप्त भए जाइछ ।

प्रोषितपतिकाक मनोभावक मार्मिक चित्र विद्यापतिक शताधिक पद मे उपलब्ध अछि ।[37] एहि महक एक पद मे कवि बारह मासा[38] तथा एक मे षड्ऋतु[39] वर्णनक पद्धति अपनौने छथि । एहि पद सभ मे प्रत्येक मास प्रकृतिक बदलैत पृष्ठपटल पर प्रोषितपतिका वियोगिनी कन्या कोन प्रकारे व्यथाक अनुभव करैछ, तकर अत्यन्त मर्मस्पर्शी शब्द मे वर्णन कयल गेल अछि ।

विरहोत्कंठिता

विरहोत्कंठिताक हृदय मे विछोह जन्य उत्कंठा सर्वोपरि रहैछ । ई पूर्वरागक स्थितिमे सेहो संभव होइछ । नायिकाक हृदय मे नायकक प्रति प्रेम अंकुरित भऽ गेल अछि, प्रियतम सँ मिलबाक लेल ओकरा मोन मे आतुर उत्कंठा भरल छैक, ओकर अंग-अंग प्रियतम सँ भेंट करबाक लेल उत्सुक, आतुर छैक, नायिका एहना स्थिति मे अनायासे कहि दैछ–

अब ने धरम सखि बाचत मोर ।
दिन-दिन मदन दुगुन शर जोर ॥

विरह ताप सँ दग्ध नायिका बिनु पानिक माछ जकाँ छटपट करैछ, तड़पैछ, छिड़िआइछ आ सखी सभ अनेक प्रकारक उपचार करैछ । प्राचीन एवं मध्ययुगीन कवि लोकनि एहि स्थितिक एक हृदयग्राही चित्रण कयने छथि । कृष्ण-काव्यक तँ ई मुख्य वर्ण्य विषय थिक । विद्यापति विरहोत्कंठिताक चित्र दशाधिक पद मे बेस सजीवतापूर्वक कयने छथि । एकर एक उदाहरण प्रस्तुत अछि –

हृदयक हार भुजंगम भेल । दारुन दाढ़ मदने रिस देल ॥
नखसिख लहरि पसर विषधाधि । तुए पदपंकज अइलिहु कल बान्धि ॥
ए हरि त लागहि तजे गोहारि। संशय पललि अछए वर नारि ॥
केओ सखि मन दए चरण पखाल। केओ सखि चिकुर चीर संभार ॥
केओ सखि उठि निहारए सास। मत्रे सखि अएलाहु कहए तुअ पास॥

विद्यापतिक एहि पद मे विरहोत्कंठिता नायिकाक एक मार्मिक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । एहिठाम नायिका आश्रय थिक, नायक आलंबन, नववय, यौवन आदि उद्दीपन विभाव, व्याधि, जड़ता आदि विरह-दशा थिक,

श्रृंगार रसक पूर्ण परिपाक लेल आवश्यक सामग्री प्रस्तुत अछि । हुनक कैकटा पद मे विरहोत्कंठिताक चित्र उपलब्ध अछि ।[40]

विप्रलब्धा

संकेत स्थल पर पहुँचियो कए नायक सँ मिलन नहि भेलाक कारणेँ निराश नायिकाकेँ विप्रलब्धा कहल जाइछ । किछु व्यक्तिक अनुसारेँ विप्रलब्धा ओकरहु कहल जाइछ जे अपना घरहि पर नायकक प्रतीक्षा करैत रहैछ, मुदा दुनूक भेट नहि भए पबैछ । विद्यापति दुनू स्थितिक चित्रण कयने छथि । विद्यापतिक कतिपय पद[41] मे संकेत-स्थल पर प्रतीक्षाकुल एवं निराश नायिकाक चित्र उपलब्ध अछि । कतिपय अन्य पद सभमे अपना भवनहि मे प्रियतमक प्रतीक्षा कयनिहारि नायिकाक हृदयक निराशाक अभिव्यक्ति कवि द्वारा कएल गेल अछि ।[42]

विद्यापतिक विप्रलब्धाक सुपरिचित चित्र निम्नांकित पदमे प्रस्तुत अछि –

मधु रजनी संगहि खेपवि कत कति छलि आस ।
विहि विपरीते सबै बिघटल रहु रिपु जन हास ॥
हे सुन्दरि कान्त न बूझ विसेख ।
पिसुन वचन उचित विसरि अपदहो निरिपेख ॥
कत गुरुजन कत परिजन कत पहरी जाग ।
एतहु साहस भजे चलि अइलहु एहन छल अनुराग ।

–वि.रा.प.–152

खण्डिता

खण्डिताक चित्र विद्यापति द्वारा अधिक नहि प्रस्तुत कयल गेल अछि । जाहि ईर्ष्या-विदग्ध मन-स्थिति मे नायिकाकेँ खण्डिता कहल जाइछ, वस्तुतः विद्यापतिक पूर्ण आत्मसमर्पण भाव सँ प्रेम करएवाली नायिकाक लेल ने तँ ओ स्वाभाविके छल, ने समीचीने ।

खण्डिताक अन्तर्गत धीरा, अधीरा तथा धीराधीरा, उत्तमा, मध्यमा आ अधमा-उपभेद मानल जाइछ । खण्डिता स्वकीया वा परकीया दुनू भऽ सकैछ । विद्यापति द्वारा दुनू चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । विद्यापतिक खण्डिता विशेषतः परकीया, मध्या धीरा अछि । ओकरा मे मुग्धा सन प्रणय-अनभिज्ञता नहि, ओ धीरा जकाँ नायकक प्रति कठोर वा कटु शब्द नहि व्यवहार करैछ ।[43] ओ अन्य रमणीक संग रमण कऽ कए आएल नायक

केँ ओकर पूर्व प्रेमक स्मरण दियबैछ, ओकर कहल बात सभ केँ मोन पड़बैछ, ओ उपालंभे धरि दैत छैक, झगड़ैत वा कुपित भए कटु शब्द कहैत ओकरा नहि देखल जाइछ ।[44]

विद्यापतिक दू पद मे अन्य रमणीक संग राति बिता कए रमण-चिह्न सहित आयल नायकक भर्त्सना करैत नायिकाक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि –

(1) कुंकुम लओलह नख-खत गोई ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥
तइयो न छपल कपट-बुधि तोरि ।
लोचन अरुन बेकत भेल चोरि ॥ –मि.म.–115

(2) पदजावक हृदय भिन अछ
अरू करज खत तोहे ।
जाहि जुवति संगे रअनि गमौलह
ततहि पलटि बरू जाहे ॥ – मि.म.–116

विद्यापतिक खण्डिता नायिकाक एक टा अन्य उदाहरण प्रस्तुत अछि –

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद ।
रयनि उजाएर गरुअ निवेद ॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ ।
रयनि गमओलह जन्हि के साथ ॥[45]

कलहान्तरिता

कलहान्तरिताक नैराशयपूर्ण वेदना विद्यापतिक कतोक पद मे साकार भए उठल अछि । पररमरणीरत प्रियतमक प्रति नायिकाक हृदय मे कोप एवं खौंझाहटिक होयब स्वाभाविक । तद्जन्य कलह तथा फलतः दुनूमे मिलन नहि भऽ पाएब कलहान्तरिताक लक्षण थिक । एहि प्रकारक कलह, मान, रूसब-बौसब मे मिलनक अवधि व्यतीत भए जाइछ आ नायक घुरि कऽ चल जाइछ । मिलन अवसर हाथ सँ निकलि जयबाक कारणेँ नायिका अत्यन्त खिन्न एवं व्यथित भऽ जाइछ । तखन कलहान्तारिता अपन वर्त्तमान स्थिति सँ समझौता करबाक चेष्टा करैछ । कविक शब्द मे –

हे माधव भल भए कएलह कूले ।
कांच कंचन दुहु सम कए लखलह न जानह रतनक मूले ॥

तोहे हमे पेम जते दूरे उपजल सुमरह से आवे ठामे ।
आवे पररमनि रंगे तोहे भुललह विहुँसिहुँ हसि हेर वामे ॥
ऐसन करम मोर तेँ तोहे जदि मोर हमे अबला कुल नारी ।
पिसुनक वचन कान जदि धएलह साति न कएलह विचारी ॥
भनइ विद्यापति सुनह सुन्दरि जनु मानह संका ।
दिवस वाम सखि सबे खन न रहए चाँदहु लाग कलंका ॥

-मि.म.-379, पृ.-265

प्रस्तुत पद मे नायिकाक हृदयक व्यथा, निराशा, अनुताप तथा ग्लानिक स्वर शतधा भए फूटि पड़ल अछि । विद्यापतिक अन्य पद मे सेहो एहने चित्र चित्रित कएल गेल अछि -

की कहब अगे सखि मोर अगेयाने ।
सगरिओ रात गमाओलि माने ॥
जखने मोर मन परसन भेला ।
दारुन अरून तखन उगि गेला ॥[46]

एवं प्रकारेँ ई स्पष्ट अछि जे विद्यापतिक गीतिपद सभमे प्रेमक कोनो प्रसंग हो, नायिका मे किछु अपन विशेषता पाओल जाइछ । शास्त्रीय दृष्टि सँ विद्यापतिक नायिका केँ जाहि श्रेणी मे राखल जाए, परंच ओकरा मे पूर्ण आत्मसमर्पणक भाव, सरलता, बदलैत स्थितिक संग समझौता, अपन कुलमन्ती होयबाक चेतना, प्रेमक निश्छलता, कृत्रिम हाव-भावक नातिशयता, सहज स्वाभाविक ग्रामीण अकृत्रिमता तथा मौनक संग शारीरिक आवश्यकताक प्रति सजगता आदि गुण पाओल जाइछ जे ओकर अपन वैशिष्ट्य थिकैक ।

विद्यापतिक किछु अन्य नायिका-भेद सभक उदाहरण नीचा देल जा रहल अछि -

नवोढ़ा नायिका : सयन चरावहि पावे, दुर कर से सब सकल सयाने ।
मुख अवनत तेज लाज, कत महि लिखसि चरन महि के आसे।
रामा रह पिया पासे, अभिनव संगम तेजहि तरासे ।-मि.म.-277

स्वाधीनपतिका : बड़ कोसलि तुअ राधे ।
किनल कन्हाई लोचन आधे ॥ - मि.म.-112

विक्षुब्ध नवोढ़ा नायिका :
थर थर कापल लहु लहु भास ।
लाजे न वचन करए परकास ।

आजु धनि पेखल बड़ विपरीत ।
खन अनुमति खन मानए मीत । - मि.म.-681

परकीया नायिका -
कमल मिलल दल मधुप चलल घर,
विहग गइल निज ठामे ।
अरे रे पथिक जन थिर रे करिअ मन,
बड़ पांतर दुर गामे ।
चन्दन चारु चम्प घन चामर,
अगर कुंकुम घरवासे ।
परिमल लोभे पथिक नित संचर,
तँह नहि बोलय उदासे - मि.म.-16

लक्षिता नायिका -
मृगमद तिलक अगर अनुलेपित सामर बसन समारि ।
हेरइ पछिम दिस कखन होयत निस गुरुजन नयन निहारि ।
बिनु कारन गृह करह गतागत मूनि नयन अरविन्दा ।
अति पुलकित तनु बिहसि अकामिक जागि उठलि सानन्दा ।

आनन्दसम्मोहिता नायिका :
सामर पुरुसा मझु घर पाहुन रंगे विभावरी गेली ।
करवा सिरिफल नख भूति लओलन्हि केसु पखुरिया भेली ।
से पिया दए गेल केस पखुरिया धरय न पारल मोये रे ।
- मि.म.-77

वर्त्तमानगुप्ता नायिका :
जेतहि नाल कमल हम तोरलि करय चाह अवशेखे ।
काहे कोहाएल मधुकर धाएल तेहि अधर करू दंशे ।
लेलि भरल कुम्भ तेँ उर गासलि ससरि खसल केस पासे ।
सखि दस आगु-पाछु भय चललिहि तेँ उर्ध स्वास न वाके ।

वृद्धा कुटनी :
हमे धनि कूटनि परिनत नारि । बैसहु वास न कहौं विचारि ।
काहु के पान काहु दिअ सान । कत न हकारि कएल अपमान ॥
- मि.म.-6

प्रगल्भा कुलटा :

वचन अमिय सम मने अनुमानि । निअर अएलाहु तुअ सुपुरुष जानि।
तसु परिनति किछु कहहि न जाए । सूति रहल पहु दीप मिझाए।।
-मि.म.-406

(घ) उक्ति आओर वाग्वैदग्ध्य

जाहि रूपेँ कवि अलंकार द्वारा काव्यमे सौन्दर्यक प्रतिष्ठा कयलनि अछि, तहिना उक्ति आओर वाग्वैदग्ध्य सेहो हुनका काव्य केँ सौन्दर्य प्रदान करबा मे सहायक सिद्ध भेल अछि । विद्यापति अपन जीवनक अमूल्य समय केँ मात्र राजासभहिक विलासी जीवन केँ अबलोकन करबहि मे नहि व्यतीत कयलनि, प्रत्युत जीवनक सत्य केँ तकबा मे, ओकरा उद्घाटित करबा मे बितौलनि । जीवनक सत्य हुनक काव्यमे यथास्थान उद्घाटित भेल अछि तथा काव्य केँ अनुपम सौन्दर्य सँ अभिमंडित कयने अछि । महाकविलोकनिक कविताक एक ई वैशिष्ट्य होइछ जे हुनक काव्यमे जीवनक सत्यक परिज्ञानक रूपमे अनेक उक्ति निहित रहैछ आओर ई उक्ति सभ पाठकक मस्तिष्क पर एकटा अमिट छाप अंकित कऽ दैछ । महाकवि विद्यापतिक काव्यमे एहि प्रकारक अनेक उक्ति प्राप्त अछि । दूती आर सखीक सम्भाषण मे वाग्विलासक मनोहारी पंक्ति सेहो अनेक अछि ।

विद्यापति जीवन मे मुनुक्ख केँ अपन बात पर दृढ़ रहबाक उपदेश दैछ -

सुपुरुष वचन कबहु नहि बिचलय जओ विधि बामओ होइ ।

एही प्रकारे ओहि लोक सभ केँ सेहो चेतौनी देल गेल अछि जे अपन वेदना सभकेँ कहैत फिड़ैत अछि -

अपन वेदन तिहि निवेदिअ जे पर वेदन जान ।

विद्यापति रतिक अनेक प्रसंगमे एही प्रकारक जीवन-सत्य सभ केँ देखि-सुनि ओकरा प्रस्तुत कयने छथि एवं अपन बुद्धि-कौशलक यथेष्ट परिचय देने छथि -

दुख सहि सहि सुख पाओल ना ।

यद्यपि उपर्युक्त पंक्ति रति प्रसंगक पश्चात् आयल अछि, तथापि ई जीवनक विराट सत्य थिक जे मनुक्ख परिश्रम कयलेक पश्चात् आनन्द प्राप्त करैत अछि । एहि प्रकारक आर अनेक उक्ति सभ सँ पदावली अलंकृत अछि -

1. काँच काँचन जानय मूल ।
2. कुदिना हित जन अनहित रे, शिव जगत सोभाव ।
3. बानर कण्ठ की मोतिय हार ।

एहि प्रकारेँ कवि जीवनक ओहि पक्ष केँ सेहो अपना काव्य मे चित्रित कयलन्हि अछि, जतय कला मात्र कलाक लेल नहि, बल्कि जीवनक लेल सेहो उपयोगी बनि गेल अछि । कवि स्वान्त:सुखाय रचना करथि किंवा राजा-रानीक मनोविनोदक लेल, जीवनकेँ ओ अपना दृष्टि-पथ सँ अदृष्ट नहि होमय देलन्हि अछि । प्रत्यक्ष उपदेश ने तँ कविता मे सफले होइत अछि आर ने क्यो एकर परामर्शहि देलन्हि अछि, साहित्यक जीवनोपयोगी किंवा हित सहित माननिहार व्यक्ति सेहो कान्ता सम्मति उपदेशहिक परामर्श देलन्हि अछि । कविक कला-कौशल एही बात मे अछि जे ओ अप्रत्यक्ष रूपमे नीति-चर्चा करैत जाइथि । प्रसंगानुकूल कहल गेल बात नीरस भेलो उत्तर सरस भऽ जाइछ । विद्यापति अप्रत्यक्षतया नीति-उपदेश दऽ जाइत छथि, प्रसंग मे ओ एहि प्रकारेँ गुम्फित अछि जे ओकरा फराक नहि कयल जा सकैछ । बातहि बात मे अपन प्रभाव सेहो छोड़ि जाइछ । अप्रत्यक्ष नीतिक जतबा गँहिरगर प्रभाव पड़ैछ, ओतबा प्रत्यक्षक नहि । विद्यापति एहि रहस्य केँ जनैत छलाह । मूलतः विद्यापति मनोविज्ञानक महान पंडित छलाह आ हुनक 'कान्ता-सम्मित-उपदेशक प्रवृत्ति' सेहो एक मनोवैज्ञानिक उपचारे थिक ।

मानव-जीवन सम्बन्धी अनेक नीति-प्रसंग पदावली मे उपलब्ध अछि, आ ओ सभ प्रसंग ओही श्रृंगार सँ सजल अछि, जाहि सँ पदावली सुसज्जित अछि । संसार मे मनुष्य-जीवन केँ सर्वोत्कृष्ट मानल गेल अछि, तेँ 'नरत्वं दुर्लभं लोके' केर सूक्ति समाज मे प्रचलित अछि । विद्यापति अपन समाज मे देखने छलाह जे लोक मनुष्यता सँ पतित भेल जा रहल अछि, अत: ओ सभ सँ कहौलनि 'हे सखि मानुस जनम अनूप ।' जँ मनुष्य जीवन भेटि जाय तँ ओकरा सनक आचरण दुर्लभ होइत अछि । मनुष्यक पैघ गुण अछि, वचनक पालन करब, मर्यादा पुरूषोत्तम रामक पूर्वज सेहो वचन पालन कइयेकऽ मनुष्यताक नाम समुज्ज्वल कयने छलाह । विद्यापति सेहो वचन पालन पर जोर दैत छथि -

सुपुरुष वचन कबहु नहि विचलय,
जओ विधि बामओ होइ ।

मनुष्य कें नीक-अधलाहक ज्ञान होयबाक चाही, क्रोध सभसँ अधलाह वस्तु थिक । कवि कहैत छथि - नागर से जे हिताहित जान। तथा - सुपुरुष भये नहि करिए रोषे।

कवि कुसंगति सँ बचबाक सेहो उपदेश देने छथि । हुनका अटूट विश्वास छन्हि जे कुसंगति मे फँसल मनुक्खक स्वप्नहुँ मे उद्धार संभव नहि -

ए सखि की कहब अपनुक द्वन्द्व ।
सपनहु जनु हो कुपुरूष संग ।
दूधय पटाइए सीचिअ नीत ।
सहज न तेज करइला तीत ।

अपन हानि उठाइयो कऽ परोपकार करब सभ सँ पैघ विवेक थिक, एहि सामाजिक नीति-व्यवहार कें कवि निम्न शब्द मे व्यक्त कयने छथि -

कमल भमर जग अछए अनेक ।
सब तँह से बड़ जाहि विवेक ।
मानिनि तोरित करह अभिसार ।
अवसर थोड़हु बहुत उपकार ।
मधु नहि छेलह रहल की खागि ।
से सम्पति जे पर-हित लागि ।
भनइ विद्यापति दुति कह गोए ।
निअ छति बिनु परहित नहि होए ।

संसारक नश्वरता कें देखि परोपकार तँ आरो आवशकय धर्म भऽ जाइछ -

थिर नहि जउबन थिर नहि देह ।
थिर नहि रहए बालमु सओं नेह ।
थिर जनु जानह ई संसार ।
एक पए थिर रह पर उपकार ।

साहस सँ असाध्य काज सेहो पूर्ण भऽ जाइछ - 'साहसे साहिअ असाधे' - मुदा, संशयक स्थान पर साहस सेहो उचित नहि - 'अनुचित काज भल न परिनाम । साहस न करिअ संसय ठाम ।'

उपर्युक्त जीवनोपयोगी बातहुँ सँ पैघ विद्यापतिक एक पैघ देन छन्हि, जीवनक प्रति आस्था आ आस्तिक दृष्टिकोण । ई दृष्टिकोण सेहो कलात्मके

ढंग सँ प्रस्तुत कयल गेल अछि । ई एक ऐतिहासिक सत्य अछि जे कृष्ण वृन्दावन सँ मथुरा गेलाह तँ घुरि कऽ नहि अयलाह, परंच विद्यापति प्रत्येक स्थिति मे अपना नायिका कें कनैत-कनैत मरि नहि जाय दैत छथि, प्रत्युत ओकरा आश्वस्त करैत छथि आ प्रभु केर अयबाक आशा प्रदान करैत छथि -

कवि विद्यापति गाओल रे, धनि धरू पिय आस ।
आओत तोर मनभावन रे, एहि कातिक मास ॥
भनहि विद्यापति गाओल रे, धैरज धरु नारी ।
गोकुल होएत सोहाउन रे, फेरि मिलत मुरारी ॥

विद्यापति 'माधव हम परिनाम निरासा' कहियोकऽ निराश नहि होइत छथि, ओ तँ 'तुहुँ जगतारन दीन दयामय अतय तोहर बिसवासा' कहि विश्वास एवं आस्थाक स्थापना करैत छथि । ओ एक परम आस्तिक जकाँ बाजि उठैछ -

भनय विद्यापति सेस सयन भय, तुअबिनु गति नहि आरा ।
आदि अनादिक नाथ कहाओसि, अब तारन भार तोहारा ॥

(ङ) प्रतीकात्मकता :

प्रतीकवाद सांकेतिक अभिव्यंजना शैलीक प्रमुख अंग थिक । रहस्यवादी अनुभूति एवं भावना सभकें अभिव्यक्ति प्रदान क़रबाक निमित्त शब्दक अभिधाशक्ति नितान्त असमर्थ अछि । लक्षणा आ व्यंजना शक्ति सेहो बहुधा गुह्य किंवा रहस्यमय अर्थ सम्पादनमे असफल भऽ जाइछ । जखन भाव-साधक भाषा कें साहित्य-परिचित साधनो द्वारा अपन अनुभूति कें व्यक्त नहि कऽ पबैछ तँ ओकरा उपमान विशेष द्वारा अपन अर्थक उपलब्धि करय पड़ैत छैक । यैह उपमान-विशेष ओहि भाव-योगीक रचना मे प्रयुक्त भऽ विशेष अर्थ-व्यंजक बनि जाइछ। विशेष अर्थ-बाहक होयबाक कारणें, ई विशेष भाव वा अर्थक प्रतीक बनि जाइछ ।

रूपकातिशयोक्ति अलंकार सेहो प्रतीकवादहिक एक प्रकार थिक। रूपकातिशयोक्तिक अर्थ बुझबाक लेल बुद्धि कें विशेष श्रम वा कल्पना कें अधिक प्राणायाम नहि करय पड़ैछ । परंच प्रतीकवादी उपमान सभक अर्थ निश्चित नहि होइछ, ने ओकर उपमेय सैह निश्चित रहैछ, तें ओकर अर्थ ग्रहण करबा मे विशेष सतर्कता एवं बुधियारीक आवश्यकता पड़ैछ । दुनू एक होइतहुँ, अपना मे सूक्ष्म अन्तर रखैत अछि । अतः प्रतीकक प्रयोग अत्यन्त प्रतिभाशाली एवं प्रवीण शब्द-शिल्पीये सँ संभव भऽ पबैत अछि ।

एतबा भेला उत्तरो प्रतीकात्मक रचनाक मनोनुकूल अर्थ नहि बहार कयल जा सकैछ। अन्योक्ति सँ व्यापार-समष्टि आ पूर्ण-प्रसंगक सादृश्यक अभिव्यक्ति होइछ, आ उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा, रूपकातिशयोक्ति आदि गुण वा क्रियाक पृथक-पृथक साम्य कें प्रकट करैछ। प्रतीक पद्धति मे समष्टिक साम्य सेहो अभिव्यक्त होइछ आ पृथक-पृथक वस्तु, व्यापार, धर्मक साम्य सेहो। प्रतीकक चुनाव आ प्रयोग मे धर्म-सादृश्य राखब अपेक्षित होइछ।

विद्यापति अपन श्रृंगार-वर्णनक अन्तर्गत विविध भाव कें प्रकाशित करबाक लेल प्रतीक-पद्धतिक उपयोग कयने छथि। आध्यात्मिक प्रेमक रहस्य भावना वा गुह्य अनुभूति विद्यापतिक प्रतीकात्मकताक विषय नहि। राधा कृष्णक श्रृंगार-वर्णन किंवा सगुण-भक्ति मे गुह्यवादक कोनो स्थान नहि। अतः विद्यापति मे सन्त वा प्रेम मार्गी जकाँ प्रतीकात्मकता नहि पाओल जाइछ। प्रतीकवादक अत्यन्त सुबोध रूप विद्यापति मे पाओल जाइछ -

रोपलहु पहु लहु लतिका आनि। परतह जतने पटवितह पानि।
तँए अरथित उपचित भेलि से। तोहें बिसरलि भल बोलत के।

एतय लतिकाक अभिप्रत्यर्थ अछि, प्रेम-बेलि, जाहि सँ सिनेह, भावुकता, सहृदयता, आत्मीयता आदि पोसल जाइछ। प्रियतम सँ उपेक्षित भऽ कऽ प्रेम कोना रहि सकैत अछि ?

कंचन-ज्योति कुसुम परकास। रतन फुलब बोलि बढ़ाओल आस॥
तकर मूले देल दूधक धार। फले किछु न हेरिए झनझनि सार॥

एही प्रेम-लता मे अभिलाषक कंचन-ज्योति-कुसुम प्रस्फुटित होइत अछि। एकरा देखि नायिका आशा करैछ जे जीवनक सुख-विलास, भविष्यक आनन्द-उल्लास रत्न जकाँ चमकि उठत। एहि प्रेमक गाछ कें नायिका दूध सदृश निर्मल पावन भावना सँ अभिसिंचित कयलक, मुदा ओकर कामना पर तुषारपात भऽ गेलैक। एहि प्रेम सँ कोनो सार नहि निकलल। नायक निर्मम-निष्ठुर बनि विश्वासघात कयलनि।

उपर्युक्त दुनू पद्यांश मे प्रेम-विकास आ प्रेमक निस्सार निराशपूर्ण परिणामक वर्णन कयल गेल अछि। अभिधा, लक्षणा आ व्यंजना कोनो शब्द-शक्तिक द्वारा लताक प्रेम, कंचन, कुसुमक अभिलाष, दूधक भावना, सहृदयता किंवा आत्मीयता अर्थ नहि लगाओल जा सकैछ। मुदा प्रस्तुत उपमान (लतिका, कंचन-कुसुम, पानि आ दूध, रत्न) आओर उपमेय (प्रेम, आश, अभिलाषा, सुख-विलास) मे एक बेस आन्तरिक साम्य अछि। ओकरहि द्वारा

वास्तविक अर्थ धरि पहुँचल जा सकैछ। प्रेम आ लता मे सुकुमारता, शीतलता, मद, सुख आ उपेक्षा वा ताप मे मुरझयबाक धर्मक अप्रत्यक्ष साम्य अछि।

'झटक झटल छोड़ल ठाम। कएल महातरु तर विसराम।
ते जानल जिब रहत हमार। से डारि टूटि परल कपार।

×× ×× ×× ××

आतपे तापित सीतल जानि कहु। सेओल मलयगिरि छाहे।
ऐसन करम मोर सेहओ दूर गेल। कएल दवानल दाहे।

दुनू पद्यांश मे जीवनक पीड़ा आतप-ताप सँ आहत भय कोनो महान आश्रय मे पहुँचबाक वर्णन अछि। प्रसंग नायिकाक विरह-पीड़ित निराश जीवनक थिक, तें महातरुक अर्थ कुलीन नायक सँ लेल जा सकैछ। महातरु तले विश्राम लेबाक अर्थ अछि - आत्म-समर्पण आ शरणागति। डारि टूटिकऽ कपाड़ पर खसबाक तात्पर्य अछि, नायक द्वारा कयल गेल निष्ठुर आ कठोर व्यवहार। दोसर पद्यांश मे मलयगिरिक शीतल छायाक अर्थ अछि स्नेह-मधुर ललित नायकक प्रेम सँ। प्रतीकात्मक अर्थ-उपलब्धि मे प्रसंगक धेयान राखब अत्यावश्यक। प्रतीकक कोनो निश्चित अर्थ नहि होइछ। प्रस्तुत आ अप्रस्तुत मे जे सामान्य सूक्ष्म साम्य होइछ, ओएह प्रसंग सँ मिलि कय वास्तविक अर्थ धरि पहुँचबैत अछि।

(च) बिम्ब-विधान :

कवि अपन सजग आ सूक्ष्म कल्पना द्वारा विशेष पदार्थ कें एहि रूपें सजबैत अछि जे अभिलषित चित्र अंकित भऽ सकय। ओ निश्चित भावाभिव्यंजक शब्दक द्वारा अपन अनुमति कें एहि रूपें प्रकाशित करैछ जे काव्य-विशेषक बिम्ब सहजहि प्रत्यक्ष भऽ उठैछ। भावक बिम्बात्मकता काव्य-शिल्पक सभ सँ महत्वपूर्ण धर्म थिक। अमूर्त रस एकरहि द्वारा मूर्त रूप धारण करैछ। विद्यापति मे ई बिम्बात्मकता दू रूपमे प्राप्त होइछ - रूप-चित्रण आ भाव-बिम्बना। रूप चित्रणा मे वातावरण आ स्त्री-पुरुषक सौन्दर्यक चित्र अबैछ तथा भाव बिम्बना मे अमूर्त भाव सबहिक (अनुभूति सभक) भावना, कामना, मनोविकार आ प्रवृत्ति आदिक चित्र।

बरिस पयोधर धरनि वारि भर, रयनि महा भय भीमा।
तइअओ चललि धनि तुअ गुन मने गुनि, तसु साहस नहि सीमा।
देखि भवन भिति लिखल भुजगपति, जसु मने परम तरासे।
से सुवदनि करे झपइत फनिमनि, बिहुसि आइल तुअ पासे।

उपर्युक्त पदमे रात्रिक भयंकरताक चित्र अंकित अछि । मुसलाधार वर्षा-भयानक राति । जे स्वभाव सँ एतेक भीरु जे देवाल पर चित्रित साँप केँ देखि भय सँ काँपि जाइत छलि, ओएह साँपक मणि सभकेँ अपना हाथेँ झाँपैत अछि जाहि सँ ओ मणिक प्रकाश मे चिन्ह ने लेल जाय आ आगाँ बढ़ैत अछि । रात्रिक भयंकरताक ई चित्र भय सँ रोमांचित कऽ दैछ । नायिकाक प्रेमासक्ति, मिलनक अटूट कामना, वासनाक तीव्रता, प्रेम-संकल्प सँ अनुप्रेरित दु:साहसक पूरा परिज्ञान, भयंकर रात्रिक पृष्ठ पर रहियेकऽ लागाओल जा सकैछ ।

मानिनि आब उचित नहि मान ।
एखनुक रंग एहन सन लगइछ, जागत पय पचोवान ।
जूड़ि रयनि चकमक कर चानन, एहन समय नहि आन ।
एहि अवसर पहु मिलन एहन सुख, जकरहिं होए से जान ।
रभसि-रभसि अलि विलसि-विलसि करि, जेकर अधर मधु पान।
अपन अपन पहु सबहु जेमाओलि, भूखल तुअ जजमान ।

उपर्युक्त पद मे जगमग करैत पूर्णिमा आ भ्रमर-विलासक चित्र अंकित कएल गेल अछि । 'जूड़ि रयनि चकमक कर चानन' तथा 'रभसि रभसि अलि विलसि विलसिकरि' मे शीतल चन्द्र-ज्योत्सनाक, रजत झिलमिलाहटि एवं भ्रमरक आकुल भय, फूल सभ पर मरड़यबाक तथा रसपान करबाक चित्र अंकित अछि । जहन एहन मादक, विलास-प्रेरक आ तृष्णा-तृप्तिक समय, मोन मे दबल काम-भावना केँ उत्तेजित कऽ रहल हो, तखन मान नहि स्थिर रहि सकैछ । अत: मान करबा सँ कोन लाभ ?

अम्बर विधुट अकामिक कामिनी, करे कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक सम्भु सम अनुपम सुन्दर, दुइ पंकज दस चन्दा ।
×× ×× ×× ××
काचा सिरिफल नख भूति लओलन्हि केसु पखुरिया भेली ।
×× ×× ×× ××
नाभि विवर सयँ लोम-लतावलि, भुजग निश्वास-पियासा ।
नासा-खगपति-चंचु-भरम-भय, कुच-गिरि-सन्धि निवासा ।

उपर्युक्त पद सभमे नारी सौन्दर्यक अत्याकर्षक चित्र अंकित अछि। नायिकाक आँचर सहसा ओकरा वक्ष सँ ससरि जाइछ । ओ चपलताक संग अपना दुनू हाथ सँ उरोज केँ झाँपि लैछ । स्वर्ण-शम्भु सदृश उरोज पर

राखल ओकर हाथ दू गोट कमल सदृश तथा नह चमकैत दस चन्द्रमा सदृश प्रतीत होइछ । एहि पदमे मात्र उरोज किंवा हाथहिक सौन्दर्य-चित्र नहि, नारीक सम्भ्रम, संकोच, चपलता, लोक-लाज एवं अंग झाँपबाक मनोमुग्धकर चित्र सेहो चित्रित अछि । दोसर पद्यांश मे नायिकाक नख-क्षतक वर्णन कयल गेल अछि । उन्नत उरोज काँच बेलक समान अछि । नख-क्षत पलाश-पुष्पक समान । पलाश-पुष्प अर्ध-चन्द्राकार होइछ । एकर जड़ि कारी तथा शेष भाग लाल होइछ । उरोज पर अंकित नखाघात लाल आ नील भऽ जाइछ । चित्र तेँ अत्यन्त यथार्थ थिक । तेसर पद्यांश मे नारीक नाभि सँ उरोज दिस जाइत रोमावलीक चित्रण कयल गेल अछि । नाभि रूपी बियरि सँ रोमावली रूपी सर्पिणी नि:श्वास रूपी पवनक पान करबाक हेतु उपर दिस जा रहल अछि । परंच नासिका रूपी गरुड़-चंचुकेँ देखि, ओ उरोज रूपी पर्वतक मध्य भाग मे नुका जाइत अछि । नारीक वक्ष-सौन्दर्यक ई अभूतपूर्व चित्र थिक । नाभि सँ उपर दिस जाइत रोमाबली वस्तुत: रेंगइत सर्पिणीक समान लगैत अछि । कुच-गिरि-सन्धि मे नुका जायब अत्यन्त स्वाभाविक अछि ।

जेनाकि पूर्व मे कहल गेल अछि जे भाव-बिम्बना मे अमूर्त्त भाव सभकेँ मूर्त्त रूप प्रदान कयल जाइछ । भाव अमूर्त्त होइछ – अपन प्रतिक्रिया, प्रभाव, परिणाम आ अनुभवक द्वारा अमूर्त्त भाव मूर्त बनैछ। आकार धारण कयले उत्तर ओकरा रसक संज्ञा देल जाइछ । भाव अपन प्रतिक्रिया, परिणाम-प्रभाव केँ अनुभाव किंवा आश्रय मे प्रकट करैत अछि । कोनो भाव केँ उत्तेजित भेला पर आश्रयक शरीर मे जे विकार अथवा परिवर्त्तन होइछ, ओएह मिलि कऽ ओकर बिम्ब वा आकार कहबैत अछि । एहि प्रकारक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

मृगमद तिलक अगर अनुलेपित, सामर वसन समार ।
हेरह पछिम दिस कखन होयत निस, गुरुजन नयन निहारि ।
बिनु कारण गृह करह गतागत, मूनि नयन अरविन्दा ।
अति पुलकित तनु विहँसि अकामिक, जागि उठलि सानन्दा ।

उपर्युक्त पद मे कृष्णाभिसारिका नायिकाक मनोभावक मूर्त्त रूप प्रत्यक्ष भऽ उठैछ । गुरु जनक दृष्टि बचा कऽ बेरि-बेरि पश्चिम दिशा मे ताकब ओकर उत्कण्ठा एवं मिलनोत्कण्ठा केँ व्यक्त करैछ । आँखि मूनि कऽ अनेरे घर मे चलबा सँ ज्ञात होइछ जे ओ अन्हार मे चलबाक अभ्यास कऽ रहलि अछि । तन पुलकित भेला सँ तथा मुस्कुरा देला सँ ओकर

हृदयक उल्लास तथा मिलन-सुखक अनुभूति ज्ञापित होइछ । एक अन्य उदाहरण मे ओ कहैत छथि -

धरनी धरिया धनि कत बेरि बैठइ, पुनि तहि उठइ न पारा ।
कातर दिठि करि चौदिसि हेरि हेरि, नयने गलये जलधारा ।
×× ×× ×× ××
उससि उससि पड़ खसि खसि, आलि आलिंगन चाहे ।
याकर वेयाधि पराधिन ओखधि, ताकर जीवन काहै ।

उपर्युक्त पद्यांश सभमे राधाक विरह-विधुरावस्थाक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । राधा विरह-पीड़ा सँ आहत एनाने जर्जर एवं निर्बल भऽ गेलि छथि जे धरतीक सहारा लऽ कऽ बैसि जाइछ । एक बेर बैसला उत्तर पुनः उठब कठिन भऽ जाइछ । ओ अश्रुयुक्त कातर दृष्टि सँ चारू भर तकैछ छथि । निःश्वास छोड़ैत सखीक आलिंगन सँ बेरि-बेरि खसि पड़ैछ । पूर्णिमाक चन्द्रमा केँ लज्जित करयवला मुँह क्षीण शशि-रेखा सदृश भऽ गेल अछि । कमल-कान्ति सनक देह-द्युति नष्ट भऽ चुकल अछि । दिनानुदिन देह दुब्बर भेल जाइछ । एहि पद्यांश सभ मे राधाक विरहक सम्पूर्ण चित्र साकार भऽ दृष्टि-पट पर अंकित भऽ जाइछ । राधाक क्षीणता, असक्तता, विवशता, कातरता, क्षण-क्षण लुप्त होइत सुषमा आ शक्ति, मरण-आशंका आ विरहक पहिलुक यौवन-श्री सभ किछु एक बिम्ब मे अंकित अछि । एहि प्रकारेँ रूप-चित्रण, प्रेमासक्ति, अभिसार, मिलन आदि प्रसंग मे बिम्बात्मकताक अनेक उदाहरण देखल जा सकैछ। विरहानुभूतिक पद तँ विद्यापतिक बिम्बविधानक जीवन्त चित्र थिक -

कुसुमित कानन हेरि कमल मुखि, मूदि रहय दू नयान ।
कोकिल कलरव मधुकर धुनि सुनि, कर देई झाँपए कान।

उपर्युक्त पद्यांश मे एक दिस वसंतक वातावरणक चित्र प्रतिबिम्बित होइछ, तँ दोसर दिस जर्जर राधाक बिम्ब प्रत्यक्ष होइछ । बिम्बात्मकताक एहन मनोहारी रूप विद्यापतिक अप्रस्तुत-योजनाक सफल आयोजनक कारण संभव भऽ सकल अछि । विद्यापति अपन काव्य मे दू प्रकारक अप्रस्तुतक उपयोग कय बिम्बात्मकता केँ सजीवता एवं प्राणवत्ता प्रदान कयलन्हि अछि - एक वास्तविक आ दोसर कल्पना जन्य । वास्तविक अप्रस्तुत केँ उपमाक अन्तर्गत राखल जा सकैछ आ कल्पना-जन्य केँ उत्प्रेक्षाक अन्तर्गत । वास्तविक अप्रस्तुतक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

उरहि अंचल, झाँपि चंचल, आध पयोधर हेरू ।
पौन पराभव सरद-घन जाने, बेकत कएल सुमेरू ।

एतय वक्षस्थल पर उड़िआइत आँचर सँ आधा पयोधर केँ झाँपल रहब आ आधा केँ उघार होयब प्रस्तुत अछि, कवि एकरा रूप प्रदान करबाक लेल पवन-प्रताड़ित शरद-घन केँ हटि गेला उत्तर व्यक्त सुमेरु अप्रस्तुत सँ काज लेलन्हि अछि । ई वास्तविक अप्रस्तुत अछि । एही प्रकारेँ कल्पना जन्य अप्रस्तुत मे सेहो कैक चित्र मे बिम्बात्मकता केँ देखल जा सकैछ । कल्पना जन्य अप्रस्तुतक एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

गिरिवर गरुअ पयोधर परसित, गिम गज मोतिक हारा ।
काम कंबु भरि कनक-संभु परि, ढारत सुरसरि धारा ॥

गिरिवर सदृश गुरु पयोधरक स्पर्श करैत गजमुक्ताक हार प्रस्तुत अछि । एकरा रूपायित करबाक लेल कवि कल्पना जन्य अप्रस्तुत 'काम देव शंख मे सुरसरि-धार केँ भरि कऽ कनक शंभु पर ढारि रहलाह अछि' केर आयोजन अछि । कामदेव द्वारा कतहु शिवक पूजा कयल गेल अछि ? ई तँ मात्र कविक कल्पना अछि । मुदा एहि कल्पनो मे विद्यापतिक कौशल निहित अछि । ओ एहन अप्रस्तुतक कल्पना कयने छथि, जकर संस्कार लोकक हृदय पर पड़ल आबि रहल अछि । शिव-पूजन हमरा लोकनिक संस्कार मे रमल अछि । अतः कल्पना जन्य भेलो सन्ता ई वास्तविक भऽ उठल अछि । कामदेव, सुरसरि धार तथा कनक-शंभुक प्रत्यक्ष बिम्ब साकार भऽ जाइछ जे कविक काव्य-कौशलक चातुर्य एवं अप्रतिम कल्पनाक उड़ानक (FLIGHT OF IMAGINATION) प्रतिमान अछि ।

(छ) ध्वनिवादिता :

मुख्य अर्थक अपेक्षा व्यंग्य (प्रतीयमान) अर्थ-प्रधान काव्य केँ ध्वनिकाव्य कहल जाइछ । आचार्य मम्मटक अनुसार ई उत्तम काव्य थिक । ध्वनिकार आनन्दवर्धन ध्वनिये केँ काव्यक आत्मा कहलनि अछि। भारतीय काव्यशास्त्रक इतिहास मे ध्वनिक कल्पना अति सूक्ष्म आलोचना एवं गहन अध्ययनक परिचायक थिक । ध्वनि सम्प्रदाय, रस सम्प्रदायेक विशद रूप थिक । 'ध्वनिवादी सभ रस, रीति, गुण, दोष आदि काव्यांग सभ केँ अनेक दृष्टिकोण सँ सुव्यवस्थित बनौलनि । ध्वनिकारक कथन छनि जे अंगनाक सुशोभन अंग सभक अतिरिक्त यथा लावण्य, सौष्ठव, कान्ति, चमक-दमक एकटा पदार्थ अछि, तहिना महाकवि सभक वाणी मे एक एहन वस्तु रहैछ,

जे शब्द, अर्थ, रचना-वैचित्र्य आदि सँ भिन्न प्रतीयमान होइछ, आ ओऐह काव्यक आत्मा थिक । अतः जतय अर्थ वा शब्द अपन अभिप्रायक प्रधानता केँ परित्याग कए जाहि कोनो विशेष अर्थ केँ अभिव्यक्त करैछ, ओकरा ध्वनि कहल जाइछ । व्यंग्य अर्थ केँ प्राधान्य दऽ कय एहि परम्पराक प्रवर्तन कयनिहार छथि आचार्य आनन्दवर्धन । ध्वनिवादी, रस-अलंकार आदि केँ ध्वनिक अन्तर्गत मानैत छथि । जतय रस ध्वनित हो, ओतय रस ध्वनि आ जतय अलंकार ओ वस्तु ध्वनित हो, ओतय अलंकार ध्वनि तथा वस्तु ध्वनि अभिप्रेत होइछ । वस्तु ध्वनि तथा अलंकार ध्वनिक उत्पत्ति शब्द तथा अर्थक शक्ति द्वारा होइछ, मुदा रस ध्वनि तथा अलंकार ध्वनिक उत्पत्ति शब्द तथा अर्थक शक्ति द्वारा होइछ, मुदा रस ध्वनि मे रस, रसाभास, भाव, भावाभास आदि शब्द अथवा अर्थक शक्ति सँ वाच्य नहि होइछ । ओ विभावादिसभक द्वारा अभिव्यक्त होइछ ।

ध्वनिवादी लोकनि ध्वनिक मुख्यतः दू भेद निर्धारित कयने छथि - अविवक्षित वाच्य किंवा लक्षणामूला ध्वनि आओर विवक्षितान्य परवाच्य किंवा अभिधामूला ध्वनि । लक्षणामूला ध्वनि मे वाच्यार्थ जखन कोनो दोसर अर्थ मे संक्रमित भऽ गेल रहैछ, तँ ओकरा अर्थान्तर संक्रमित ध्वनि कहल जाइछ आ जखन वाच्यार्थ अत्यन्त तिरस्कृत होइछ तँ अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि होइछ । अभिधामूला ध्वनि मे वाच्यार्थ तँ तिरस्कृत नहि होइछ, प्रत्युत वाँछित रहलो उत्तर अन्यपरक होइत अछि, तेँ एकरा विविक्षितान्य पर वाच्य ध्वनि कहल जाइछ । विविक्षितान्य परवाच्य केँ दू भेद कयल गेल अछि - असंलक्ष्यक्रम तथा संलक्ष्यक्रम । रस, भावादि सभ मे असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य होइछ । एहि मे वाच्यार्थ सँ व्यंग्यार्थक अनुभूति मे क्रम लक्षित नहि होइछ। एकरहु तीन भेद कयल गेल अछि - शब्द शक्त्युद्भव, अर्थ शक्त्युद्भव एवं उभय शक्त्युद्भव। पुनः एकर आओरो कएकटा भेद कयल गेल अछि ।

विद्यापति यद्यपि काव्यशास्त्रीय समीक्षा विषयक कोनो ग्रंथक सर्जना नहि कयलनि, परंच हुनक गीतिपद सभ मे ध्वनिक प्रायः सभ रूपक दर्शन होइत अछि । विद्यापतिक रसमय पदावली ओही रसवादिताक मनोहर उद्घोष थिक । विद्यापति रस तथा वस्तु ध्वनिक बहुशः प्रयोग कयने छथि । एकरा संगहि लक्षणमूला ध्वनिक प्रयोग सेहो कोनो कम नहि भेल अछि । विद्यापति केँ व्यंग्य मे विशेष विश्वास छलनि । हुनक गीत सभक अंतिम पंक्ति सभ मे प्रायः यैह ध्वनि भेल अछि जे एहना रस केँ सभ क... नहि जनैछ । जे

डूबैत अछि, ओएह बुझैत अछि । विद्यापतिक पद सभमे विभावादि सभहिक द्वारा किंवा ई कहल जाय जे रूप सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य तथा हाव-भावेक द्वारा रस केँ अभिव्यंजित करबाक चेष्टा कयल गेल अछि ।

जतय रूप वर्णन अछि, ओतय लक्षणामूला ध्वनिक विशेष प्रयोग कयल गेल अछि । एकर दू भेद अछि - अर्थान्तर संक्रमित तथा अत्यन्त तिरस्कृत । लक्षणामूला ध्वनिक मूलमे लक्षणा क्रियाशील रहैत अछि, यथा -

ततहि धावल दुइ लोचन रे जतहि गेलि वरनारि ।
आसा लुबधल न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ॥

ओ सुन्दरी नारी जाहि दिशा मे गेलि अछि, ओही दिस हमर दुनू आँखि एना ने दौड़ल, जेना कोनो भिखारि कृपण व्यक्तिक पाँछा-पाँछा दौड़ैत अछि, भने किछु प्राप्त होइक वा नहि । एतय 'धावल' शब्द अपन लाक्षणिक प्रयोग द्वारा 'आकर्षण' केँ व्यंजित कऽ रहल अछि । आँखि मे दौड़बाक योग्यता तँ होइछ नहि, ओ मात्र ओहि दिस आकृष्ट भऽ गेल । ओ तँ ओही दिस ताकि रहल अछि, जाहि दिशा मे ओ नारी गेल अछि । नारी-रूपक प्रति आकर्षण 'धावल' शब्द सँ व्यंजित भेल अछि ।

अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि-पदगतक उदाहरण -

पल्लवराज चरन जुग सोभित, गति गजराजक भाने ।
कनक कदलि पर सिंह समारल, ता पर मेरु समाने ॥

एहि पद मे नायिकाक सौन्दर्य अभिव्यंजित भेल अछि । हुनक दुनू चरण कमल सदृश सुशोभित अछि । गति गजराज सदृश । कदलि पर सिंह स्थापित कयल गेल अछि । एतय 'कदलि' अपन अर्थ केँ तिरस्कृत कऽ देने अछि । 'कदलि' सँ एतय जाँघ व्यंजित अछि । ओही प्रकारेँ 'सिंह' तथा 'मेरु' सेहो अपन अर्थ केँ तिरस्कृत कऽ कटि तथा वक्षक अर्थ धारणकऽ लेने अछि । व्यंग्यार्थ बनल नायिकाक कदलि सदृश सुचिक्कण जाँघ पर सिंह सदृश क्षीण कटि स्थापित अछि । जाँघ आ कटिक भाव कदलि आ सिंह सँ व्यंजित कयल गेल अछि, अतः एतय अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि अछि ।

जखन भाषा मे मुहाबरा सभक प्रयोग होइछ, तँ ओकरा मूल मे लक्षणा कार्य करैत अछि, विशेषतः लक्षण-लक्षणा । अतः ओहि ठाम अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि होइछ । विद्यापति मुहाबरा तथा लोकोक्ति सभक एहि दृष्टियें प्रयोग कऽ अपन कौशलक परिचय देने छथि, द्रष्टव्य-

(1) अंग विलेपन कुंकुम भार ।
पीताम्बर धरू इथे कि विचार ।।
(2) चूनि चूनि भए काँचुल फाटलि
बाहु बलआ भागु ।
(3) मदन-बान मुरुछलि अछओं ।
(4) साओन घन सम झर दु नयान ।
(5) हेरइत प्रान हरि लेइ गेल मोर ।
(6) तनु मन बिबस खसए निबि-बंध ।
(7) किए विष दाह समय जल दाने ।
(8) गेल जौवन पुनु पलटि न आबए ।
(9) सुजनक प्रेम हेम समतूल ।
दहइत कनक दिगुन होय मूल ।।
(10) सकल समय नहि रीतु वसंत ।
(11) तनु भेल कुछु ससि खीना ।
(12) जकर हिरदय जतहि रतल
से धसि ततहि जाय ।
जइयो जतने बाँधि निरोधिए
निमन नीर थिराए ।

एहि मुहाबरा तथा लोकोक्ति सभक प्रयोग सँ विद्यापतिक भाषा अत्यंत व्यंजनामय भऽ गेल अछि । यैह कारण अछि जे विद्यापतिक गीतिपद सभ मे अभिव्यंजना अत्यन्त प्रभावशालिनी अछि ।

आब अभिधामूला ध्वनिक दृष्टि सँ विद्यापतिक गीतिपद सभक परीक्षण कयल जाए । जाहि ध्वनिक मूल मे अभिधा वा वाच्यार्थ-सम्बन्ध हो, तकरा अभिधामूला ध्वनि कहल जाइछ । एकर दू भेद अछि - असंलक्ष्य क्रम तथा संलक्ष्यक्रम । असंलक्ष्यक्रमक पुनः पदगत पद्यांशगत, काव्यगत, रचनागत, प्रबंध गत, अर्थगत छः भेद कएल गेल अछि। असंलक्ष्य ध्वनि केँ रसध्वनि किंवा रस कहल गेल अछि । रस, रसाभास, भाव, भावाभास आदि एहि मे ध्वनित होइछ। विद्यापति प्रेम एवं श्रृंगारक कवि छथि । ओ श्रृंगार एवं भक्ति-दुनू क्षेत्रमे 'रति' केँ ध्वनित कयने छथि । पदावली मे एहन अनेक दृष्टान्त प्राप्त अछि -

अवनत आनन कए हम रहलिहु वारल लोचन चोर ।
पिया मुख रुचि पिबए धाओल जनि से चाँद चकोर ।।

ततहुँ सँय हठ हटि मो आनल धएल चरनन राखि ।
मधुप माँतल उड़ए न पारए तइअओ पसारल पाँखि ।। आदि।

एहि पद मे स्थायी भाव रति अछि । आलम्बन नायक, उद्दीपन नायकक मधुर वाणी तथा अनुभाव प्रस्वेद, पुलक आ कम्प अछि । ब्रीड़ा संचारी भाव अछि । सभ रस सामग्री एकत्र अछि । सम्पूर्ण पद द्वारा श्रृंगार रस ध्वनित होइछ, अतः रचनागत ध्वनि भेल । आओरो उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) कुच-कोरी-फल नख-खत-रेह, नव ससि छन्दे अंकुरित नव नेह।
जिव जञो निरधने निधि पाए, खने हेरए खने राख झपाए ।।
-सुभद्र झा, विद्यापति गीत संग्रह पद-116
(2) वसन हरइते लाज दुर गेल पिआक कलेबर अम्बर भेल ।
अऔंधे मुहे निहारए दीप मुदला कमल भमर मधु पीब ।। आदि
-सुभद्र झा, विद्यापति गीत संग्रह, पद-57
(3) नव अनुरागिनी राधा । किछु नहि मानए बाधा ।।
एकलि कएल पयान । पथ विपथ नहि मान ।।
तेजल मनिमय हार । उच कुच मानए भार ।।
कर सँञ कंकन मुदरि । पथहि तेजल सगरि ।।
मनिमय मंजिर पाय । दुरहि तेजि चलि जाय ।
जामिनी घन अंधियार । मनमथ हिय उजियार ।।
विघनि विगारित बाट । पेमक आयुधे काट ।।
विद्यापति मति जान। ऐछे ना हेरिये आन।।-मि.म. पद-642

पदावलीक किछु पद मे वीर, हास्य, भयानक, रौद्र आ भक्तिक प्रसंग आयल अछि । मात्राक दृष्टियेँ अधिकांश पद मे श्रृंगार-रस-ध्वनिक प्रधानता अछि । हिनक अभिसार-मान-मिलन-विरहक विषयक भावोच्छ्वासमे विलास, चेष्टा, अनुभाव तथा हाव सँ रतिये ध्वनित होइछ । विद्यापति सर्वत्र रस केँ कहबाक अपेक्षा ओकरा व्यंजित करहि मे सतर्कता एवं तत्परता देखौलन्हि अछि ।

संलक्ष्यक्रम ध्वनि ओतय होइछ, जतय अभिधा द्वारा वाच्यार्थक स्पष्ट बोध भेला उत्तर क्रम सँ व्यंग्यार्थ संलक्षित होइछ । व्यंग्यार्थ बोधक हेतु एतहु वाच्यार्थक विविक्षा रहैछ । अतः ई विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनिक दोसर भेद थिक । ध्वनिक उत्थान कतहु शब्द सँ, कतहु अर्थ सँ आ कतहु दुहुक सम्मिलित शक्ति सँ होइछ । ध्वनित होबऽ वला पदार्थ रस वस्तु आ अलंकारे

अछि । वस्तुतः अलंकार आ वस्तुक ध्वनन कयनिहार ध्वनि, रस ध्वनि सँ भिन्न होइछ । ओहि मे शब्द सँ अर्थक प्रतीतिक अनन्तर संधान कयला सन्ता व्यंग्यार्थक बोध होइछ । किछु दृष्टान्त द्रष्टव्य - शब्द शक्त्युद्भव संलक्ष्य क्रम व्यंग्य ध्वनि-जतय कविता मे एहन शब्द सभक प्रयोग हो जे ओकर सभक अन्य पर्यायवाची शब्द सभ सँ व्यंग्यार्थक बोध नहि भऽ सकय -

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेआनि ।
कनक लता सनि सुन्दरि सजनि गे
बिहि निरमाओल आनि ॥ आदि

-बेनीपुरी संपादित 'विद्यापति, पद-16

एतय 'नागरि' शब्द ध्वन्यात्मक थिक । बाट मे जाइत कोनो नायिकाक अपूर्व रूपसँ व्यामुग्ध भय एक सखी अपन अन्य सखी सँ कहैछ जे ओ बाट मे जाइत ओहि नारी केँ देखलक अछि । ओ सयानि, बुद्धिमती, अग्रगण्य एवं चातुर्यक आगार अछि । विधाता ओकरा कनक लता सदृश शोभाशालिनी बनौने छथि । एतय 'नागरि' शब्द 'चतुरानारी' केँ ध्वनित कऽ रहल अछि । ओना 'नागरि'क सामान्य वाक्यार्थ नगर मे बास कयनिहारि नारीक द्योतक थिक । परंच एतय 'चतुरा' केँ व्यंजित कऽ रहल अछि । एहि पद मे नागरिक शब्दक स्थान पर अन्य पर्याय शब्द केँ राखि देला उत्तर ओ अर्थ नहि व्यंजित भऽ पबैछ जे 'नागरि' सँ भऽ रहल अछि । अतः एतय पदगत शब्द शक्त्युद्भव संलक्ष्यक्रम- व्यंग्य ध्वनि थिक । आओर एतय वस्तु ध्वनित अछि - नारीक सौन्दर्य, चातुर्य आदि । एहि ध्वनिक चारि भेद कयल गेल अछि - (1) पदगत वस्तुध्वनि, (2) वाक्यगत वस्तु ध्वनि, (3) पदगत अलंकार ध्वनि तथा (4) वाक्यगत अलंकार ध्वनि । अर्थ शक्त्युद्भव संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि - जतय कोनो शब्दक, अन्य पर्यायवाची शब्द राखियो देला पर, अर्थक कारण व्यंग्य होइत अछि, ओतय अर्थ शक्त्युद्भव संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि होइत अछि । एकर तीन मुख्य भेद अछि - स्वतः सम्भवी, कवि प्रौढ़ोक्ति तथा कविनिबद्ध प्रौढ़ोक्ति । एहि सभकेँ पुनः चारि-चारि टा भेद कयल गेल अछि - वस्तु सँ वस्तु, वस्तु सँ अलंकार, अलंकार सँ अलंकार, अलंकार सँ वस्तुक ध्वनि । किछु दृष्टान्त द्रष्टव्य अछि -

कवि प्रौढ़ोक्ति सिद्ध अलंकार सँ वस्तु ध्वनि -

कामिनि करए सनाने । हेरितहि हृदय हनए पंचबाने ॥
चिकुर गरे जलधारा । जनि मुख-ससि डर रोअए अंधारा । आदि

-बेनी- विद्यापति, पद-23

एहि पद मे उत्प्रेक्षा अलंकार सँ नायिकाक उन्मादक सौन्दर्य ध्वनित होइछ । जकरा देखितहि दर्शकक मोन मे भोगक आकांक्षा उत्प्रेरित होइत छैक । ई सद्यःस्नाताक प्रसंग थिक । अन्हार केँ चन्द्रमाक डर सँ कानब लोक संभव नहि, ई कवि कल्पित उत्प्रेक्षा थिक । एहि सँ नायिकाक सद्यःस्नान आ ओकर भीजल कारी केश सँ आवेष्ठित चन्द्रमा सदृश मुखरूप, वस्तु-ध्वनि प्रस्तुत करैत अछि ।

कवि निबद्ध प्रौढ़ोक्ति सिद्ध वस्तु सँ अलंकार ध्वनि -

जतय कवि निबद्ध पात्रादिक द्वारा वस्तु-विवरण सँ ध्वनि प्रस्तुत कयल जाय, ओतय कवि निबद्ध प्रौढ़ोक्ति सिद्ध-वस्तु-अलंकार ध्वनि होइछ । उदाहरण द्रष्टव्य -

आज पुनिम तिथि जानि मोय अयलिहु
उचित तोहर अभिसार ।
देह जोति ससि किरन समाइति
के बिभिनाबए पार ॥ - बेनी, विद्यापति, पद-123

एहि पद मे नायिकाक चन्द्र ज्योत्स्ना मे सर्वथा विलीन भऽ जायब कवि कल्पित थिक आ कवि द्वारा नहि कहिकऽ एक गोट सखी द्वारा कहाओल गेल अछि । अतः कवि निबद्ध वक्त्री सखी-कथन थिक । नायिकाक चन्द्र ज्योत्सना मे एकमेव भऽ जाएब लोक-संभव नहि । एहि सँ ध्वनित होइछ जे अपन रूपक उज्ज्वलतावश नायिका इजोरिया सँ एकाकार भऽ अभिसारक समय ककरो देखाइ नहि पड़त । इजोरिया आ नायिकाक शरीरक रंग एक समान अछि, अतः एतय वस्तु सँ मीलित अलंकार व्यंग्य थिक ।

वस्तु सँ वस्तु ध्वनि

एहि मे प्रतीयमान अर्थ, वाच्यार्थ सँ बड़ भिन्न होइत अछि । वाच्यार्थ विधि-परक होइछ आ प्रतीयमान निषेध परक वस्तु व्यंग्य । प्रतीयमान (वाच्यार्थ सँ भिन्न भेल) प्रतीयमान अर्थ कामिनी-कुच कलश सदृश निपुणतापूर्वक प्रत्यभिज्ञेय होइछ । अतः जतय शब्द वा अर्थ (वस्तु) अपन अभिप्रायक प्रधानता केँ परित्याग कय, जाहि कोनो विशेष अर्थ

(वस्तु) केँ व्यक्त करैछ, ओकरा वस्तु-ध्वनि कहल जाइछ। यथा -

निसि-निसिअर भम भीम भुअंगम।
जलधर बिजरि उरोज॥
तरुन तिमिर निसि तइअओ चललि जासि
बड़ सखि साहस तोर॥
सुन्दरि कओन पुरुस धन तोर हरल मन
जसु लोभे चलु अभिसार।
आतर दुतर नरि से कइसे जएबह तरि
आरति न करिअ झाँप।
तोरा अछ पचसर ते तोहि नहि डर
मोर हृदय बरु काँप । आदि

- मि.म., पद-211

एतय अंतिम पंक्ति मे प्रथमतः ई ध्वनित होइछ जे नायिका संकेत स्थल पर प्रिय-समागमक हेतु जा रहलि अछि, अतः सखी केँ ओतय जयबा सँ ओकरा अपनहि काज मे वाधा पड़तैक। दोसर ध्वनि एतय इहो निकलि रहल अछि जे यदि नायिका चाहय तँ ओकर सखी संकेत स्थल धरि ओकरा पहुँचा सकैत अछि। तेसर इहो ध्वनित भऽ रहल अछि जे यदि ओकरहि जकाँ ओकर सखियो समागम करितैक, तँ ओकरहु डर नहि लगितइक, मुदा ओकरा ने एहन अवसरेँ प्राप्त छैक, तेँ हेतु ओकर हृदय काँपि रहल छैक।

अलंकार सँ अलंकार ध्वनि

दीपक अलंकार आदि मे व्यंग्य, अलंकार गुणी भाव केँ प्राप्तभऽ जाइछ। यथा, कारक दीपक अलंकार ओहि ठाम होइछ, जाहिठाम एकहि कारक अनेक क्रिया सँ सम्बद्ध रहैत अछि। उदाहरण द्रष्टव्य -

तुअ रूप साम अखर नहि सूनए, तुअ रूप रिपु सम मानि।
तुअ जन सयँ सम्मान न करई, कइसे मिलाएब आनि।
नील वसन बर कांचन चुरिकर, पौंतिक माल उतारि।
करि रद चुरि कर मोति मालवर, पहिरल अरुनिम सारि।
असित चित्र उर पर छल, मेटल, मलयज देह लगाइ।
मृगमद तिलक धोइ दृगंचल, कुच सयँ मुख लए छपाइ । आदि

- बेनी. विद्यापति, पद-145

एहि पद मे कृष्ण सँ सादृश्य रखनिहार वस्तु सभ सँ अरुचि व्यंग्य अछि। कृष्ण सनक सभ कारी पदार्थ केँ राधा अपना लग सँ हटाकऽ विपरीत चरित प्रस्तुत कयलनि। अतः एहिठाम अछि राधाक विव्बोक हाव। अभिमानवश अपन प्रियतमक पदार्थ दिस सँ उदासीनताक प्रदर्शन। वर्णन मे व्यंग्य अलंकार उपमा अछि - जेना कृष्ण राधा सँ दूर भेलाह नहि कि राधा सेहो कृष्ण सनक वस्तु सभ केँ हटा रहलि छथि। वाच्य अछि कारक दीपक। उपमाक मूलाधार होइछ सादृश्य विधा तथा दीपकक मूलाधार होइछ कतोक अप्रस्तुत केँ माला जकाँ गाँथि देब किंवा एकहि कारक केर (राधा) अनेक क्रिया सँ सम्बद्ध होयब। एतय चमत्कार सादृश्य मे नहि, कतेक अप्रस्तुत (साम आखर, तुअ रूप, तुअ जन, नील वसन, कांचन चुरि, पौंतिक माल आदि) केर उपादान मे अछि तथा सभ उपमान सभ सँ सम्बद्ध एक क्रिया अपसारण मे अछि। अतः व्यंग्य उपमा गौण भऽ गेल अछि आ वाच्य दीपक प्रधान। अतः ई गुणीभूत व्यंग्यक उदाहरण थिक। कारक दीपक अलंकारक द्वारा कृष्ण सदृश उपमान सभक अपसार, कथनपूर्वक मानिनी राधाक दुर्ज्जय मानक ध्वनि गुणीभूत थिक। एही प्रकारेँ दृष्टान्त आदि दोसर सादृश्यमूलक अलंकार सभमे सेहो उपमा गर्भित रहैछ आ गुणीभूत भऽ जाइछ। उदाहरण द्रष्टव्य -

जकर हिरदय जतही रातल
से धसि ततही जाय।
जइओ जतन बाँधि निरोधिअ
नीमन नीर थिराय॥

एतय दृष्टांत अलंकार थिक। जतए उपमेय वाक्य केँ उपमान काव्य सँ दृष्टांत देल जाए, ओतय दृष्टांत अलंकार होइछ किंवा उपमेय वाक्य आ उपमान वाक्य मे बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव भेला उत्तर दृष्टांत अलंकार होइछ। मम्मटक अनुसार दृष्टांत वाक्यार्थ केँ देखाकऽ अनिश्चित वाक्यार्थक निश्चय करब दृष्टांत अलंकार थिक।[48] 'यत्नपूर्वक बान्हि कऽ रखलो उत्तर जल नीचा दिस बहैत अछि' एहि दृष्टांत वाक्य सँ एहिठाम जाहि व्यक्ति केँ जकरा सँ राग (प्रेम) भऽ जाइछ, ओकर हृदय ओम्हरे लपकैत अछि एहि अनिश्चयात्मक वाक्य मे निश्चय बोधक आधार भेल अछि। जल-गति-विषयक वाक्य उपमान वाक्य थिक, रागी-हृदय-विषयक वाक्य उपमेय वाक्य। एक विशेष प्रकारक गीत दुनू मे सदृश थिक। ओहि सादृश्यक दृष्टान्त वाक्य सँ

गुणीभाव भेल अछि।

नयन नलिनि दओ अंजन रंजइ
भौंह बिभंग विलासा ।
चकित चकोर-जोर बिधि बंधल
केबल काजर पासा ॥
गिरिवर-गरुअ पयोधर परसित
गिम गजमोतिक हारा ।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारत सुरसरि-धारा ॥ बेनी. विद्यापति, पद-18

उपर्युक्त पद मे वृत्यानुप्रास तथा नयन-नलिनि-चकोरक सादृश्य, गिरिवर-गरुअ पयोधर, मोतिक हार-सुरसरि-धाराक सादृश्य मात्र ओतबा चमत्कार विधायक नहि, जतबा कवि-अभिप्रेत उत्प्रेक्षा । अंजन-रंजित कमलिनीसन ललितगर एवं चकोर सन चंचल गोपीक नेत्रक जोड़ी केँ मानू विधाता मात्र काजर-पाश सँ बान्हिकऽ रखने छथि । हिमालय सदृश गौरवशाली पयोधरक स्पर्श करयवला गर मे सुशोभित मोतीक हार की थिक, मानू कामदेव कनक-सम्भु (सोनक महादेव-कुच) पर कम्बु-शंख (कण्ठ) मे भरिकऽ गंगाक धारा केँ ढारि रहलाह अछि । रमणीक नेत्र-लावण्य आ वक्षस्थलीय अपरूपक ध्वनि उत्प्रेक्षा सँ कएक गुना बढ़ि गेल अछि ।

रूपक, उपमा, तुल्ययोगिता, निदर्शना आदि जतबा सादृश्य मूलक अलंकार होइछ, ओहि सभ मे सादृश्य अथवा उपमानोपमेय भाव व्यंग्य रहैछ। एहि सभ अलंकारमे सादृश्यक तँ अभिव्यंजना होइतहि अछि, परंच रमणीयताक पर्यवसान ओहि व्यंग्य सादृश्यमे नहि होइछ । अलंकार सभक अपन-अपन विशेषते मे रमणीयताक पर्यवसान होइत अछि । यथा, रूपकमे सादृश्यक अभिव्यक्ति तँ होइतहि अछि, मुदा रमणीयता भेद स्थगनहि मे सन्निहित रहैछ जे रूपकक अपन विशेषता अछि । व्यंग्य सादृश्य मात्र रूपकक सहायक भऽ जाइछ । अत: कहल जा सकैछ जे रूपक मे सर्वज्ञ उपमा व्यंग्य होइछ, मुदा ओ गुणीभूत भऽ कऽ रूपक केँ प्रधानता प्रदान कऽ दैत अछि । यथा -

पल्लव-राज चरन-जुग सोभित
गति गजराजक भाने ।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ॥ - बेनी. विद्यापति, पद-12

एहिठाम सुन्दरीक चरणक सादृश्य पल्लराज (कमल) सँ अछि, ओ व्यंग्यहि अछि, ओकर गति गजराज सन मस्ती सँ आपूरित अछि, व्यंग्य थिक । एही प्रकारेँ ओकर कनक-कदलि पर सिंह सनक क्षीण कटि आ ताहि पर उन्नत उरोज । ई सभ सादृश्यमूलक व्यंग्य गुणीभूत भऽ कऽ सांग रूपक केँ प्रधानता दऽ देने अछि आ एहि सँ बहरायल ध्वनि सँ सुन्दरीक नख-शिख मुखरित भऽ उठल अछि ।

अलंकार सभ मे चारुताक आधान कयनिहार तत्व थिक गुणीभूत व्यंग्य । उपमा, वक्रोक्ति, अतिशयोक्ति आदि अलंकार सभमे रमणीयताक सम्पादन गुणीभूत व्यंग्यहिक द्वारा होइछ । गुणीभूत व्यंग्य मे चारुता व्यंग्यक होइत अछि । व्यंग्यक चारुताक तात्पर्य ई जे ओहि मे एहन योग्यता रहबाक चाही जे ओ रसक अभिव्यक्ति कऽ सकय । रसक अभिव्यक्ति करब व्यंग्य-चारुताक मूलाधार अछि । गुणीभूत व्यंग्य, ध्वनिक निष्पन्द रूप थिक जे अत्यंत रमणीय होइछ आ महाकवि सभक ई उत्तम विषय थिक । वास्तविकता तँ ई अछि जे प्रत्येक काव्यक परिणति ध्वनिये मे होइत अछि। अत: एहि दृष्टियेँ ध्वनि काव्यक दू भेद कएल गेल अछि - (1) एहन ध्वनि, जाहि मे वाच्यार्थ निम्न हो तथा व्यंग्यार्थ प्रधान, (2) एहन ध्वनि, जाहि मे वाच्यार्थ उत्कृष्ट हो आ ओहि वाच्यार्थ केँ कोनो दोसर व्यंग्यार्थ अनुप्राणित कऽ रहल हो, जाहि सँ ओहि मे अलंकारक मधुरिमा सेहो आबि गेल हो तथा समस्त काव्यक पर्यवसान अंतिम रस-व्यंजना मे होइत हो । निश्चित प्रथम कोटिक अपेक्षा द्वितीय कोटिक काव्य केँ उच्च कोटिक काव्य कहल जाइत अछि ।

प्रतीयमान अर्थक, काव्य मे अत्यन्त महत्व होइछ । आनन्द वर्धनक 'ध्वन्यालोक' मे कहल गेल अछि -

मुख्या महाकविगिरामलंकृतिभूतामपि ।
प्रतीयमानच्छाचेषा भूषा लज्जेव योषिताम् ।।[49]

अर्थात् जेना क्यो स्त्री कतबहु आभूषण किएक ने पहिरने हो, ओकर मुख्य आभूषण लज्जे होइछ, कारण ओहि मे प्रतीयमानक छाया (शोभा) रहैछ, तहिना कोनो कविक वाणी मे कतबहु प्रकारक अलंकारक किएक ने प्रयोग कएल गेल हो, अथवा ओहि मे एकहु अलंकार नहि हो, परंच ओकर मुख्य आभूषण प्रतीयमानक शोभे थिक । एहि ठाम प्रतीयमान केँ स्त्रीक लज्जा-आभूषणक समता प्रदान कयल गेल अछि । एकर दू कारण अछि

– एक तँ लज्जा भाव, गोपनक प्रवृत्ति होइछ। दोसर लज्जाशीलता सँ जखन ललना लोकनि अपन भाव कें नुकबैत छथि, तँ ओहि मे एक प्रकारक सौन्दर्य आबि जाइछ। ई सौन्दर्य, भाव-गोपनकहिक सौन्दर्य होइछ आ यैह लज्जाक प्राण थिक। एही प्रकारें ध्वनि मे सेहो गोपनहिक सौन्दर्य निहित रहैछ। कवि जाहि बात कें कहय चाहैछ, ओकरा ओहि रूप मे नहि कहिकऽ गोपनक संग कहैछ। विद्यापति-पदावली मे प्रतीयमानजन्य रमणीयताक अपन वैशिष्ट्य अछि। ओतय श्रृंगार रस ध्वनि मे गोपनहिक सौन्दर्य विराजमान अछि। विद्यापतिक पदान्त मे एकर छटा दर्शनीय अछि –

भनइ विद्यापति अद्‌भुत कोतुक, ई सब वचन सरूपे।
रूप नरायन ई रस जानथि, सिवसिंह मिथिला भूपे ॥ [50]
भनइ विद्यापति सुन बर जौवति, इह रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंह रूपनरायण, लखिमा देइ रमाने ॥ [51]
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति कौतुक बुझ रसमन्त।
सिर सिवसिंध राउपुरुख सुकृत पाउ लखिमा देइ रानि कन्त ॥ [52]
विद्यापति कवि गाओल रे, रस बुझ रसमन्त।
देवसिंह नृप नागर रे, हासिनि देइ कन्त ॥ [53]
विद्यापति कह आरति ओर।
बुझिओ न बूझए इए रस भोर ॥ [54]
भनइ विद्यापति सुन बर नारि।
प्रेमक रीत अब बुझह विचारि ॥ [55]
भनइ विद्यापति ई रस गाब।
नागरि कामिनि भाव बुझाब ॥ [56]
भनइ विद्यापति कोमल काँति।
कोसल सिरिस-सुमन अलि भाँति ॥ [57]
भन विद्यापति सुन कविराज। आगि जारि पुनि आगिक काज ।[58]
भनइ विद्यापति इह रस जान। बानर मुँह की सोभय पान ।[59]
ई रस-रसिक विनोदक विन्दक, कवि विद्यापति गावे।
काम प्रेम दुहु एक मत भय रहु, कखने की न करावे ।[60]
जाहि दुइ खोज करइ छथि सासुन्हि, से मिलु अपना संगे।
भनइ विद्यापति सुन वर जौबति, गुपुत नेह रति-रंगे ॥ [61]
एत कहि सबहु चललि मंदिर, जोगी चरन प्रणाम।

विद्यापति कई नटवर सेखर, साधि चलल मन काम ॥ [62]
भनए विद्यापति ई रस धंद। भेक कि जान कुसुम-मकरन्द ॥ [63]
तिल एक जघन सघन रब करइत। होअल सेनक भंग।
विद्यापति कवि ई रस गावए। जामुन मिलल गंग ॥ [64]

एहि प्रकारें विद्यापति जे कहय चाहैत छथि, तकरा ओही रूप मे नहि कहि, किछु गोपनक संग कहैत छथि। यैह हुनक ध्वनिवादिता थिक। पदावलीक सौन्दर्योक मूल यैह थिक। रस-प्रवण विद्यापतिक अप्रस्तुत विधान मे ई विशेषता दृष्टिगोचर होइछ जे ओ मात्र एक प्रस्तुतक लेल एकहि अप्रस्तुत लबैत छथि। हिनक अप्रस्तुत व्यापार सेहो तेहन नहि जे प्रस्तुत व्यापारक विरूद्ध भाव उद्दीप्त करय, प्रत्युत् ओ तँ भावना कें सम्यक् रूप देबा मे समर्थ भेल अछि।

कविताक लक्ष्य मात्र वस्तु-बोध करायब नहि अछि, प्रत्युत् भावोत्कर्ष करब अछि। विद्यापति भाव सभक उत्कर्ष-व्यंजनाक सहायताक लेल शुद्धापन्हुति, हेतुत्प्रेक्षा, पर्यायोक्ति, विभावना, रूपक आ उपमाक प्रयोग कयलन्हि अछि। रूपक अनुभव कें तीव्र करबाक हेतु रूपकातिशयोक्ति, अतिशयोक्ति, निदर्शनाक सहायता लेलन्हि अछि। मुदा एहि मे प्रधानता अछि उत्प्रेक्षाक। ललितोपमा, तुल्योगिता तथा रूपक द्वारा क्रियाक अनुभव तीव्र कराओल गेल अछि। गुणक अनुभव तीव्र करयबाक हेतु व्यतिरेक, सन्देह आ भ्रम सँ काज लेल गेल अछि। विद्यापति विशेषतः साम्यमूलक अलंकारक प्रयोग कयलन्हि अछि। पदावली मे किछु दृष्टकूट पद सभकें छाड़ि अन्यत्र कतहु अलंकार सभक निकृष्ट योजना नहि कयलन्हि अछि। उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

माधव की कहब सुन्दरि रूपे
　　कतेक जतन बिहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे।
　　पल्लवराज चरन-जुग सोभित
गति गजराजक भाने।
　　कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरू समाने ॥ [65]

एहि पद मे रूपक, उपमा, यमक, रूपकातिशयोक्तिक विचित्र संसृति कें पढ़ि मात्र कुतूहलेक उन्मेष नहि होइछ, अपितु ओहि वैचित्र्यक अनुभूति

उद्‌बुद्ध होइछ, जे नव वयस केँ देखिकऽ भेल करैछ। ई सत्य अछि जे ई समस्त उपमान परम्परारूढ़ अछि, मुदा निस्संदेह एहि ठाम एहि रूपमे अछि जे रूप रंग आ आकार साम्य सँ सौन्दर्यक भावना केँ तीव्र करैत अछि। एकटा दोसर भावमूलक अलंकारक उदाहरण दर्शनीय अछि -

कत न वेदन मोहि देसि मदना ।
हर नहि बाला मोहि जुवति जना ।। 66

- बेनीपुरी, विद्यापति, पद-42

एहि पदमे एक दिस तँ पाठकक ध्यान आकृष्ट करबाक हेतु चमत्कार मूलक अलंकार अपह्नुतिक प्रयोग कयल गेल अछि, तँ दोसर दिस विरहिणीक भावना केँ व्यंजित कयल गेल अछि । दयितक वियोग मे नायिका केँ चन्दन भभूत सदृश, नित्य व्यवहारक वस्त्र चर्मवत्, केश जटा सदृश, सिन्दूर-विन्दु चिनगी सदृश प्रतीत होइछ । ई विरह-वेदना केँ प्रवर्धमान करबा मे उत्कृष्ट कोटिक भावमूलक अलंकार अछि ।

एही प्रकारें लोकोक्तिमे सादृश्यमूलक अलंकारक नियोजन भेल अछि। कहावत सँ निःसृत होबऽवला ध्वनि भाषामे प्रभावोत्पादकता एवं प्रभाव-प्रेषणीयताक वृद्धि करैछ । लोकोक्तिक दू-चारि गोट शब्द कोनो विचार वा भाव केँ ग्राह्य करयबामे जतबा समर्थ होइछ ओतबा लम्बा-चौड़ा व्याख्यानो नहि । अतः जाहि कविक रचना मे जतबहि लोकोक्तिक प्रयोग भेल रहैछ, ओ ओतबहि लोकप्रिय होइत छथि । कहावतक प्रयोग व्यावहारिक भाषा सँ सम्बद्ध रहैछ । विद्यापति सेहो तत्कालीन लोकभाषहि केँ पदावलीमे व्यवहृत कयने छथि । पदावली जकाँ लोकोक्तिक प्रयोग मैथिलीये मे किएक, अन्यान्यो भारतीय भाषाक कोनो प्राचीन अथवा अर्वाचीन कवि मे नहि पाओल जाइछ । काव्य शास्त्र एवं संगीत शास्त्रक रूढ़ि सँ आबद्ध विद्यापतिक पदावलीक विशेषताक यैह रहस्य थिक। पदावलीक अनुशीलन सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे विद्यापति ध्वनिवादी छलाह। हुनक पद सभ मे विवक्षित वाच्य तथा अविवक्षित वाच्य ध्वनिक प्रायः सभ रूप उपलब्ध अछि । श्रृंगारपरक पद सभमे असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनिक प्रयोग भेल अछि । विद्यापति भाव एवं रसकेँ कहबाक अपेक्षा ओकरा ध्वनित करहि मे अपन चरम साफल्यक अनुभव कयने छथि ।

(ज) अन्योक्तिक प्रयोग :

अन्योक्तिवाद प्रतीकवाद सँ बहुत किछु साम्य रखैछ । ओकरहि एक रूप ईहो थिक ।[64] अन्योक्ति केँ द्वारा प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत व्यापार-समष्टि

अथवा पूर्ण प्रसंगक साम्य देखाओल जाइछ । परंच प्रस्तुत अलक्ष्य रहैछ - अप्रस्तुते प्रकट रहैछ । उपमान प्रसंगहिक द्वारा अभिलषित प्रसंग किंवा व्यापार-समष्टिक कल्पना कयल जाइछ । अन्योक्तिमे उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा जकाँ प्रस्तुतक साम्य प्रत्यक्ष नहि रहैछ । मुदा ई कहब जे साम्य वा सादृश्यक आवश्यकते नहि होइछ, किंवा ओ रहबे नहि करैछ, गलत थिक, अन्योक्ति मे रूप-साम्य भेल नहि हो, व्यापार-साम्य आ गुण-साम्य होयत, तखनहि अन्योक्तिक सार्थकता । अन्योक्तिक क्षेत्र-विस्तार प्रतीकवाद सँ अछि - एकहि अन्योक्ति केँ अनेक व्यापार समष्टि पर आरोपित कयल जा सकैछ। अतः जीवन-व्यवहार मे एकर उपयोग बेस पाओल जाइछ । लोकोक्तिक बाद जनमानस मे एकरहि प्रचलन अछि । अन्योक्तिक एकटा उदाहरण द्रष्टव्य -

दहए बुलिए बुलि भमरि करुना कर
आहा दह आइ की भेल ।
कोर सुतल पिया आन्तरो न देअ हिया
के जान कओन दिग गेल ।।

उपर्युक्त पदमे करुण विलापक चित्र अंकित अछि । दशहो दिशामे घूमि-घूमिकऽ भ्रमरी करुण विलाप कऽ रहल अछि - हे भगवान, ई की भऽ गेल । जे प्रियतम कोर मे सुताकऽ हृदय सँ फराक नहि होइत छलाह, नहि जानि ओ आइ कतऽ चल गेलाह । भ्रमरीक द्वारा विरहिणी नायिकाक वेदनाक चित्रण एतऽ कयल गेल अछि । आध्यात्म पक्ष मे ई एक विरहिणी आत्माक विलाप कहल जा सकैछ । वियोगिनी आत्माक कातर विलाप एक अन्य अन्योक्ति से सिसकैत पाओल जाइछ -

साँझहि निअ मधु प्रेम पियाइ ।
कमलिनी भमरी राखल छिपाइ ।
सेज भेल परिमल फुल भेल वासे ।
कतय भमरा मोर परल उपासे ।
भमि भमि भमरी बालुम निज खोजे ।
मधु पिबि मधुकर सुतल सरोजे ।
नर फुल कहेस न उगइ न सूरे ।
सिनेहो नहि जाय जीव सो मोरे ।
केओ नहि कहे सखि बालमु बाते ।
रइन समागम भइ गेल प्राते ।[65]

दुनू अन्योक्ति मे भ्रमर, भ्रमरी तथा कमल आध्यात्मिक अर्थ केँ सेहो व्यंजित करैत अछि । मोन, आत्मा तथा परमात्मा वा आत्मा, बुद्धि तथा मायाक अर्थ सेहो एहि सँ लेल जा सकैछ । विद्यापति भ्रमर, भ्रमरी आ कमलक उपमान सभ सँ जे आध्यात्म पक्षमे अन्योक्तिक विधान कयने छथि, ओएह हिन्दीक कवि कबीर मे सेहो पाओल जाइछ । विद्यापति अन्यत्र कहैछ –

तोह जलधर सउ जलधर राज ।
हम चातक जलबिन्दुक काज ।
वरयो परान आस कए तोर ।
समय न वरि सखि असमय मोर ।
जलदए जलद जीव मोर राख ।
देले सहस अवसहो लाख ।[66]

मेघक प्रति कथित ई अन्योक्ति, कोनो उदार हृदय, आश्रयदाता, जे आब उदासीन छथि, रूसल निष्ठुर प्रेमी किंवा अकरुण भगवानक प्रति कहल जा सकैछ । एहि मे प्रकट कयल गेल कातर याचना पियासल पथिक, आशंकित कृषक, चातक आ भक्त केर दर्द – आपूरित पुकार थिक । नायक-नायिका सम्बन्धी दू अन्योक्ति नीचा देल जा रहल अछि –

मालति सफल जीवन तोर ।
तोर विरहे भुवन भमए भेल मधुकर मोर ।
जातकि केतकि कत न अछए सबहि रस समान ।
सपनहु नहि ताहि निहारए मधु कि करत पान ।
वन उपवन कुंज कुटीरहि सबहि तोहि निरूप ।
तोहि बिनु पुनु पुन मुरूछए अइसन प्रेम स्वरूप ।[67]

× × ×

सौरभ मोले भमर भमि आएल पुरुब पेम विसवासे ।
बहुत कुसुम मधुपान पिआसल जाएत तुअ उपासे ।
मालति करिअ हृदय परगासे ।
कत दिन भमरे पराभव पाओल भल नहि अधिक उदासे ।

उपर्युक्त दुनू पद्यांश मे मालतीक तात्पर्य अछि नायिका तथा मधुकर-भमर सँ नायक । प्रथम मे कहल गेल अछि जे हे मालती (नायिका) अहाँक विरहमे भ्रमर बताह भेल जाइत अछि । जातकी, केतकी (अनेक नायिका)क संग रमण

कयला सँ यद्यपि समान आनन्द प्राप्त होइछ, तथापि ओ अहाँकेँ कुँज-कुँज मे तकैत फिरैत छथि । ओ अहाँक अभाव मे बेसुध भऽ जाइत छथि । दोसर पद्यांश मे नायक केँ अनेक प्रेमिकाक संग सहवास कयलो पर अतृप्त रहब बताओल गेल अदि । दूती कहैछ जे हे मालती ! अहीं सँ ओ तृप्तिलाभ कऽ सकैछ ।

नायक-नायिकाक उपर्युक्त अन्योक्ति मे मधुकर-मालतीक रूप प्रदान कयल गेल अछि । निम्न अन्योक्तिमे सेहो एहि प्रकारक लौकिक एवं आध्यात्मिक पक्षक उद्घाटन भेल अछि । विद्यापतिक अन्योक्ति सभ मे श्रृंगार-भावनाक बाहुल्यक संग आध्यात्मिक संकेत सेहो उपलब्ध होइछ ।

दृष्टकूट :

श्री वामन शिवराम आप्टे केर शब्दकोशक अनुसार दृष्ट शब्दक अर्थ होइछ 'देखल गेल' आ 'दर्शनीय', 'कूट' शब्दक अर्थ होइछ पेंचीदा वा उलझन वला स्थल जेना कि कूट श्लोक आ कूटान्योक्ति । एहि प्रकारे दृष्टकूटक अर्थ भेल एहन साहित्य रचना जकर अर्थ लेखक द्वारा तँ लक्षित होइछ, परंच स्रोता वा पाठकक लेल दर्शनीय होइतहुँ उलझनपूर्ण होइछ, गूढ़ होइछ । शुद्ध शास्त्रीय दृष्टि सँ कूट-काव्य, चित्र-काव्यक एक भेद अछि, कारण ओहि मे आलंकारिकताक प्रधानता होइछ । तथापि ओकरा चित्र काव्यक संकुल क्षेत्र मे सीमित नहि कयल जा सकैछ, कारण अधिकांश कूट रचनामे भावाभिव्यंजना विकासक चरम सीमा धरि पहुँचि गेल अछि । अतः ओकर गणना ध्वनि-काव्य अथवा उत्तम काव्यहिक अन्तर्गत कयल जाइछ । 'दृष्ट कूटं यस्मिन तत् पदं दृष्टकूटम् ।' एहि प्रकारे 'दृष्टकूट' शब्दक-निरुक्ति कयला सँ दृष्टकूट ओ काव्य थिक जाहि मे शब्द आ अर्थक छद्म एवं क्लिष्टता दृष्टिगोचर हो । एकरा दोसर शब्द मे कहि सकैत छी जे जाहि मे दुरुहताक संग-संग भाषाक कलात्मक विधान हो, ओ 'दृष्टकूट' अछि । वाग्वैदग्ध्य एवं कलात्मकता एकर अनिवार्य तत्व थिक ।

कूट-काव्य दू खण्ड मे विभक्त अछि – उलटबांसी आ दृष्टकूट। उलटबांसीक प्रयोग रहस्यात्मक आ आध्यात्मिक अभिव्यंजनाक लेल कयल जाइछ आ दृष्टकूटक प्रयोग विशेषतः साहित्यक उत्कर्ष अथवा काव्य-कौशलक लेल । रहस्यात्मक आ आध्यात्मिक अभिव्यंजना विशेषतः वैदिक साहित्य मे उपलब्ध अछि, मुदा उलटबांसी प्रधानतः मैथिलीक सिद्धलोकनिक आविष्कार थिक । विद्यापति संस्कृतक कूट परम्परा के अपनौने छथि आ हुनक कूट पद 'दृष्टकूट' कहबैत अछि ।

सामन्तीय वातावरण मे, विद्वत्समाजक अलंकार प्रधान नख-शिख एवं रूपचित्रण तथा नायक-नायिका भेदक विषद विवरण प्रस्तुत करबाक शैलीक संग, साहित्य क्षेत्र मे दिग्विजय-प्रसंग मे दृष्टकूंट शैलीक विकास भेल । दरबार मे प्रायः सभ विद्वान एवं पडित दृष्टकूटक द्वारा अपन पाण्डित्य प्रदर्शन करैत जाइत छलाह । एहि शैली मे मात्र मानसिक व्यायामहि रहैछ, मुदा सामंती दरबारक एक परम्पराक रूप मे ई अक्षुण्ण रहैत आयल अछि। संस्कृत साहित्यक शिलष्ट एवं प्रहेलिका पद एकरहि पूर्वज थिक । लौकिक संस्कृत सँ पूर्व वैदिक साहित्यमे नाना विधि साहित्यिक एवं दार्शनिक जटिल पहेली (बुझौअलि) प्राप्त अछि।

सामान्य पाठकक दृष्टि मे दृष्टकूट वा प्रहेलिका किएक ने अरुचिपूर्ण एवं अनाकर्षक रहल होउक, परंच एतबा तँ निश्चित जें विद्यापतिक युग मे, दरबार सभमे पाण्डित्य प्रदर्शनक स्पर्द्धाक अभाव नहि छल । एहि स्पर्द्धा मे विद्यापति सेहो विजयपताका पहरयबाक लेल अनेक दृष्टकूटक रचना कयलनि, जे निश्चय हुनक तत्कालीन साहित्यिक-विजयक स्मृति-चिन्ह अछि । एहि प्रकारक रचनाक उन्मुक्त प्रशंसा तत्कालीन गुणी-रसिक, काव्य मर्मज्ञ आश्रयदाता तथा दरबारक विद्वत्समाज द्वारा कयल जाइत छल । एहन समाज मे कखनहु-कखनहु हृदयक अपेक्षा मस्तिष्कहि कें विशेष आदर देल जाइत छलैक । तें जँ विद्यापति दृष्टकूटक रचना कयलनि, तँ ओहि मे कोनो आश्चर्य नहि । विद्यापतिक कूट पद सभक विषय अछि राधाक सौन्दर्य आ हुनक प्रेम-विरह-जन्य-कार्य-व्यापार । किछु दृष्टकूट पद सभमे विद्यापति उपमेयक स्थान पर उपमानक स्थापनाकऽ क्रमशः नख-शिख वर्णन कए चमत्कार प्रदर्शित कयने छथि -

माधव की कहब सुन्दरि रूपे ।
कतेक जतन बिहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे ।
पल्लव राज चरन जुग सोभित
गति गजराजक भाने ।
कनक कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ।
मेरु उपर दुइ कमल फुलायल
नाल बिना रुचि पाई ।

मनिमय हार धार बहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई ।
अधर बिम्ब सन दसन-दाड़िम-बिजु
रवि ससि उगथिक पासे ।
राहु दूर बस नियरो न आबथि
तें नहि करथि गरासे ।
सारंग नयन बयन पुनि सारंग
सारंग तसु समधाने ।।
सारंग उपर उगल दस सारंग
केलि करथि मधुपाने
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
एहन जगत नहि आने ।
राजा शिवसिंह रूपनरायन
लखिमा देइ पति माने ।। - बेनीपुरी, पद-12

उपर्युक्त पदमे उत्प्रेक्षा अलंकारक आश्रय ग्रहण कय उपमेयक स्थान पर उपमान सभकें क्रमशः राखि नारी-सौन्दर्य सँ तँ कवि चमत्कृत करबे कयलन्हि अछि, संगहि शिलष्ट सारंग शब्द सँ एहि कूट कें आर अधिक गूढ़ बना देने छथि । एहन कूट पद सभ मे मुख्यतः दू प्रकारक शैली प्राप्त होइछ - एक उपमेयक स्थान पर उपमानक स्थापना आ दोसर शिलष्ट शब्द-प्रयोग सँ पद मे आर अधिक गूढ़ताक स्थापना ।

माधव जइति देखलि पथ रामा ।
गरुड़ासन-सख-तातक वाहन
ता सम गति अभिरामा - मि.म. पद-268

विद्यापति कहैत छथि जे हे माधव ! हम ओहि युवती कें जाइत देखल अछि । गरुड़सन-विष्णु-कृष्णक सखा अर्थात् अर्जुनक तात-इन्द्रक वाहन ऐरावत गजराज केर अभिराम गतिएँ ओ चलैत छथि ।

विद्यापतिक विरह-पद सभमे विलक्षण कूट शैलीक दिग्दर्शन होइछ। एतय साहित्य मे गणितक अद्भुत प्रयोग भेल अछि । संख्यावाचक शब्द सभक ध्वनि साम्यक माध्यमे अर्थ-प्रतिपादन कयल गेल अछि । वर्णाक्षर सभक गणनाक उल्लेख अछि । ओहि अक्षर-समूह कें क्रमशः रखला सन्ता सार्थक शब्दक निर्माण होइछ । एकर संगहि कतहु-कतहु लक्षणाक प्रयोग सँ

अभिव्यक्ति मे आर विलक्षणता आबि गेल अछि । एकर एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

भरम भवन तेजि गेलाह मुरारि ।
जत दिन गेलाह तकर गुन चारि ।।
प्रथम एगारह फेरि दिअ पाँच ।
तीसक तेगुन थोड़ दिन साँच ।।
चालीस काटि आधा हरि देल ।
तेँ पुनि जीवन एहन सन भेल ।।
से मुँह चौगुन लिअ ने विचारि ।
तेँ तोहि भल नहि कहत मुरारि ।।
भनइ विद्यापति आखर लेख ।
बुध जन होथि से कहथि विसेस ।। – मि.म. पद-893

हे कृष्ण ! अहाँ भ्रमवश हमरा घरहि मे छोड़िकऽ चल गेलहुँ । अहाँक जयबा काल हम जतबा दिनक (वयसक) छलहुँ, ओहि सँ आब चारि गुना बेसी उमेरक भऽ गेलहुँ अछि । पहिने एगारह आ फेर पांच अर्थात् (11+5=16) सोलह वर्षक छी । षोड़सीक आगाँ कथन छनि जे तीसक तिगुनो नब्बे वा नव्य (30×3=90) अर्थात् नव वयस थोड़बहि दिनक लेल सत्य थिक – थोड़बहि दिन धरि ठहरति अछि । चालीस मे सँ आधा गुनाक महत्वक दायक (अर्थात् जकर चारि गुना सय होइछ अर्थात् पच्चीस) 25 वर्षक अपन वयस (जे जीवन मे विलासक समय होइछ) केर सेहो अहाँ विचार नहि कएल, तेँ अहाँ केँ लोक नाम धऽ कऽ बजबैतअछि । विद्यापतिक कथन छनि जे हमर एहि अक्षर लेखक बुध जनहि व्याख्या कऽ सकैत छथि ।

किछु कूट पद सभमे कवि बुधजनक समक्ष अत्यंत गोप्य एवं अश्लील बात केँ प्रहेलिकाक रूपमे प्रस्तुत कयने छथि । एकर उदाहरण निम्न पद मे देखल जा सकैछ –

कुसमित कानन कुंज बसी ।
नयनक काजर घरि मसी ।।
नखसँ लिखलि नलिनि दल पात ।
लीखि पठाओल आखर सात ।।
प्रथमहि लिखलनि पहिल वसन्त ।

दोसरेँ लिखलनि तेसर के अन्त ।।
लिखि नहि सकलैन्हि अनुज वसन्त ।
पहिलहि पद अछि जीवनक अन्त ।।
भनहि विद्यापति आखर लेख ।
बुध ज होथि से कहत विसेस ।। – मि.म. पद-328

एहि पद मे नायिका द्वारा अपन ऋतुमती होयबाक सन्देश पठयबाक उपक्रम अछि । वन कुसुमित भऽ गेल अछि । कुंज मे बैसि विरहिणी नायिका आँखि मे काजरक (स्याही) मोसि बनाकऽ प्रेमी के पत्र लिखि रहल छथि । कमल-पत्र पर नह सँ सात आखर 'कुसुमित कानन' लिखैत छथि अर्थात् हम पुष्पवती वा ऋतुमती भऽ गेलहुँ अर्थात् हमरा ज्ञान-प्रान भऽ गेल। पहिने लिखलन्हि- ई प्रथम बसन्त थिक अर्थात् पहिल बेर ऋतुमती भेलहुँ अछि – यौवनागमन भऽ गेल । पुनः ओ लिखय जा रहल छलीह कामदेव (वसन्तक अनुज) सता रहल अछि, मुदा कन्दर्प नहि लिखि पौलन्हि, कारण पहिल शब्दहि प्राण लऽ लीतनि । विद्यापति कहैत छथि जे बुधजने विशेष अर्थ कहि सकैछ । एतावता ई स्पष्ट अछि जे कविक भावना श्रृंगार-रस-निमज्जित अछि आ हुनक कूट वाणी केँ प्रबुद्ध जन नीक जकाँ जनैत छथि । एहि सभ कूट पद सभक मूल मे पाण्डित्य-प्रदर्शनक प्रवृत्ति एवं श्रृंगार भावना अछि । एहि प्रकारेँ विद्यापतिक दृष्टकूट-पद मे जाहि प्रकारक पाण्डित्यक प्रदर्शन भेल अछि, ओ तत्युगीन राजदरबारी काव्य-परम्परा दिसि संकेत करैछ, संगहि कवि-पाण्डित्यक प्रकाशन सेहो करैछ । एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य थिक-

हरि [1] सम आनन हरि [2] सम लोचन, हरि [3] तहाँ हरि [4] बर आगी।
हरिहि [5] चाहि हरि हरि [6] न सोहाबय, हरि-हरि [7] कए उठि जागी।।
माधव हरि [8] रहु जलधर छाई ।
हरि [9] नयनी धनि हरि [10] घरिनी जाने, हरि [11] हेरइत दिन जाई ।।
हरि [12] भेल भार हार भेल हरि [13] सम, हरिक [14] वचन न सोहाबे।
हरिहि [15] पइसि जे हरि [16] जे नुकाएल, हरि [17] चढ़ि मोर बुझाबे।
हरिहि [18] वचन पुनु हरि [19] सयँ दरसन, सुकवि विद्यापति भाने ।।

ई एक प्रहेलिका वा दृष्टकूट पद थिक जाहि मे राधाक चित्र अंकित कयने छथि। 'हरि' शब्द एहि दृष्टकूट पदक मूलाधार अछि । हरि शब्दक अनेक अर्थ होइछ, जे एहि पद मे प्रयुक्त क्रमशः संख्यानुसार नीचा देल गेल

अछि । हरि शब्द एहि पद मे 20-21 बेर प्रयुक्त भेल अछि । चमत्कार दर्शनीय अछि : राधाक मुँह हरि (चन्द्रमा)क समान छन्हि आ आँखि कमलक समान । कारण हरि (कृष्ण) तहाँ (ओतए-मथुरा) चल गेलाह, अतः हुनक विरहवश राधा केँ हुनक हरि (चन्द्रमा) आगि सदृश जरैत प्रतीत होइछ । ओ हरि (कृष्ण) केँ चाहैत छथि, आ हुनक अभाव मे हरि (जल), हरि (कमल) सनक शीतलतादायक पदार्थ हुनका नहि सोहाइत छन्हि । ओ हरि-हरि कहि चौंकि उठैछ (जागि जाइछ)। हे माधव ! पावस से हरि (आकाश) लागल रहैछ तँ मृगनयनी राधा मयूरिनी जकाँ आकाश दिस देखैत दिन बितबैत छथि, अर्थात् आकाश मे पसरल कारी मेघ मे अहाँक दर्शन करैत छथि । हरि (वायु) साँस लेब सेहो अहाँक विरहवश ओकरा दूभर भऽ गेल छैक, हर गराक हरि (साँप) जकाँ अरुचिकर प्रतीत होइछ आ हरि (कोकिल पपीहा) केर वचन ओकरा कनिञो नहि नीक लगैछ ।

एहि कूट पद सभक सम्यक् अध्ययन कयला सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे ओहि युगक राजदरबार मे जखन कोनो कवि अपन कूटपद सुनबैत होयताह तँ निश्चित रूपेँ श्रोतालोकनि पर हुनक पांडित्यक अमिट प्रभाव पड़ि जाइत रहल हेतन्हि कारण एहन रचनाक पृष्ठाधार पर समस्त पारम्परिक काव्यशास्त्र, अलंकरशास्त्र, कामशास्त्र एवं लौकिक अनुभव बजैत अछि एवं ताल-स्वर कविक उद्भट पांडित्यक जयघोष करैत अछि ।

लोकोक्ति एवं मुहाबरा :

कहावत जनताक उक्ति होइछ । लोक ओकरा अपन कय मानैत अछि, तेँ ओ लोकोक्ति कहबैत अछि । विद्वानलोकनि कहावत केँ अनेक रूपेँ परिभाषित कयने छथि । क्यो ओकरा अनुभवक दुहिता कहैछ, क्यो एहन वाक्य सूत्र केँ कहावत कहैछ, जाहि मे जीवनक अनुभव संचित रहैछ, क्यो ओकरा ज्ञान-सागरक गागर कहैछ, तँ क्यो ओकरा कालातीत बतबैछ, एहन फर्नीचर (साज-सज्जा) जाहिमे कालक दिबार नहि लागि पबैछ । किन्तु वास्तविकता ई अछि जे कोनो उक्ति कतबहु प्रकारक गुण सँ किएक ने युक्त हो, जाधरि ओहिमे लोकक उक्ति नहि रहतैक, ताधरि ओकरा लोकोक्ति किंवा कहावत नहि कहल जा सकैछ ।

लोकोक्ति मे संक्षिप्तता, सारगर्भिता तथा सप्राणताक सन्निवेश अनिवार्य अछि, परंच बहुतो एहन उक्ति प्राप्त अछि जाहि मे उपर्युक्त तीनू गुणक सन्निवेश रहलो सन्ता लोकोक्तिक अनिवार्य गुण-लोकप्रियताक अभाव

पाओल जाइछ जाहि सँ ओ लोकोक्तिक रूपमे व्यवहृत नहि भऽ पबैछ । एहि सँ ई कहल जा सकैछ जे लोकोक्तिक श्रेष्ठताक लेल उपर्युक्त तीन गुंणक होयब तँ आवश्यक अछिए, तथापि लोकप्रियते लोकोक्तिक अनिवार्य गुण थिक । वस्तुतः संक्षिप्तता, सारगर्भिता, सप्राणता तथा लोकप्रियता - एहि चारू तत्वक कारणहि कोनो उक्ति केँ लोकोक्तिक गौरव प्राप्त होइछ ।

परिभाषाक रूपमे ई कहल जा सकैछ जे अपन कथनक पुष्टिमे, शिक्षा वा चेतावनी देबाक उद्देश्य सँ, कोनो बात केँ ककरो माध्यम सँ कहबाक अभिप्राय सँ, किंवा उपालंभ देबाक आ व्यंग्य करबाक लेल अपनामे स्वतंत्र अर्थ रखनिहार जाहि लोकप्रचलित तथा सामान्यतः सारगर्भित, संक्षिप्त एवं चामत्कारी उक्तिकेँ लोक प्रयोग करैछ, ओकरहि लोकोक्ति वा कहावतक नाम देल जा सकैछ ।

संस्कृत मे कहावतक लेल आभाणक, प्रवाद, लोकोक्ति, लोक प्रवाद, लौकिकी गाथा, लौकिक न्याय तथा प्रायोवाद आदि शब्दक प्रयोग भेल अछि । वाल्मीकि रामायण मे कहावतक अर्थ मे प्रवाह, लोक प्रवाद तथा लौकिकी गाथा शब्दक प्रयोग भेल अछि ।[68]

कालिदास अपन 'मालविकाग्नि मित्र' नामक नाटक मे कहावतक लेल 'लोअ-वाओ (लोकवाद) तथा 'लोअधवाओ (लोक प्रवाद) शब्दक प्रयोग कयने छथि ।[69]

पालि साहित्य मे कहावतक लेल 'भासितो' शब्दक प्रयोग भेल अछि। अप्रभंश मे 'अहाणउ' (आभाणक) शब्द कहावतक अर्थ मे व्यवहृत भेल अछि । परंच एहू भाषा मे कोनो एहन शब्द नहि प्राप्त होइछ, जकरा 'कहावत' शब्दक पूर्वरूप कहल जा सकैछ ।

किछु आधुनिक भारतीय भाषा मे कहावत शब्दक पर्यायवाचीक आकलन अधोलिखित पंक्ति मे देल जा रहल अछि -

भाषा	**पर्याय**
तमिल	फ्जुमोलि
तेलगु	सुमेतु
मललायम	पजुमचौल
मराठी	म्हण, म्हणणी, आणा, आहणा, न्याय लोकोक्ति।
बंगला	प्रवाद, वचन, प्रवचन, लोकोक्ति, प्रचलित वाक्य ।
गुजराती	कहैवत, कहैणी, कहैती, कथान, उखाणुं ।

हिन्दी	कहावत, कहनावत, कहाउत, कहनूत, उपखान, परवाना, लोकोक्ति ।
उर्दू	जुर्बल मिस्ल ।
लहंदी	अरवाण ।
गढ़वाली	परवाणा ।
असमी	लंबीर, लंबरिम ।
राजस्थानी	औरवाणो, कहबत, केवत, कुवावत, कुवावट ।
मालवी	केवात ।
मैथिली	कहबी, कथनी, फकड़ा, लोकोक्ति, कहिनी ।

वस्तुतः लोकोक्ति जन-समुद्र मे छिड़िआयल रत्न थिक । एहि रत्न सभकेँ के छिड़िऔलक, से निश्चित रूपेँ नहि कहल जा सकैछ, तथापि ई तँ निश्चित अछि जे एकान्त मे बैसिकऽ कहावतक निर्माण नहि भऽ सकल होएत, प्रत्युत् जीवनक प्रत्यक्ष वास्तविकते कहावत सभकेँ जन्म देने अछि। बुद्धिविलासी व्यक्ति कहावतक निर्माता नहि छलाह, ओकर रचयिता तँ जीवनक द्रष्टा छलाह । कहावतक जन्मदाता तँ विस्मृतिक गर्भ मे विलीन भऽ गेलाह, मुदा हुनका सँ उद्भूत ओ अमर वाक्य काल समुद्रक तरंग पर अमिट भय आइयो नृत्य कऽ रहल अछि। लोकोक्ति मात्र कहावते नहि थिक, प्रत्येक प्रकारक उक्ति लोकोक्ति थिक । पहेली सेहो, बुद्धि-परीक्षाक साधन रहलो सन्ता लोकोक्तिये थिक। पहेली सेहो ओही मात्रा मे उक्ति थिक, जतबा कि कहाबत । कतहु-कतहु एहि उक्तिक सेहो कएकटा रूप प्राप्त होइछ । ओ अछि अनमिल्ला, भोरि, अचका, ओठपाव, खुंसी, गहगडड, ओलना तथा एही प्रकारक अन्यान्य । ई पद्यात्मक तथा निरर्थक-सार्थक दुनू होइछ । निर्थक एहि सभमे अनमिल्ला होइछ । शेष सभ सार्थक होइत अछि। एकरा सभकेँ कहावतक अन्तर्गत राखल जा सकैछ ।

संसारक प्रायः सभ देश आ जाति मे कहावतक महत्वपूर्ण स्थान रहल अछि । संसारक साइते कोनो एहन भाषा होयत, जाहि मे कहावत सभक प्रयोग नहि भेल हो । ईसा मसीह कहावत सभहिक माध्यम सँ शिक्षा देलन्हि - बाइबिल मे कहावत (PROVERB)क एकटा विशद प्रकरणे अछि। गौतम बुद्ध उपदेशक हेतु लौकिकी गाथा सभहिक प्रयोग कयलन्हि । जातक कथा सभ ओही संदर्भ मे प्रस्तुत भेल । स्वयं अरस्तू सनक सुविख्यात दार्शनिक सर्वप्रथम कहावत सभहिक संग्रह कयलनि । एहि प्रकारेँ अत्यन्त

प्राचीन काल सँ कहावत सभ केँ अत्यंत सम्मान प्राप्त रहलैक अछि । एहन लोकोक्ति सभ, जकर सत्य पुरान नहि पड़लैक अछि, ओ आइयो जीवन रूपी व्याकरणक लेल पाणिनि केर सूत्र जकाँ उपयोगी अछि । की साहित्य, की भाषाविज्ञान, की नृतत्वशास्त्र, सभ दृष्टि सँ कहावत वा लोकोक्ति महत्वपूर्ण थिक ।

विद्यापतिक कविता मे भाव सम्बन्धी जे वैशिष्ट्य अछि, से तँ अछिए, मुदा एकर अतिरिक्त आर एक अंश अछि जे विद्यापतिक ख्यातिक कारण बनल अछि आ ओ अंश थिक लोकोक्ति । ई अंश एतेक ने नीक तथा व्यापक अछि जे प्रत्यह ओकर सभक प्रयोग होइत रहैछ आ कहावतक भाँति ओकर व्यवहार आइयो लोक-भाषा मे कयल जाइछ । विद्यापति वस्तुतः सजग आँखि सँ सामान्य जन-जीवनक गहन अध्ययन कयने छलाह । ओ अपन सूक्ष्म प्रतिभाक तीक्ष्ण धार सँ जीवनक बाह्य जड़ आवरण केँ चीरिकऽ मानवीय सत्यक साक्षात्कार कयने छलाह । अपन विवेक सँ ओकरा बुझने छलाह । प्रकृतिक चिरन्तन तथ्य एवं सत्यक उपलब्धि कयने छलाह। ऐतिहासिक दृष्टि सँ सेहो ओ एहि दिशा मे मार्ग-दर्शक थिकाह । जाहि प्रकारेँ तुलसीक चौपाई तथा सूक्ति उत्तर प्रदेश मे कहावतक रूप मे प्रयुक्त होइछ, तहिना विद्यापतिक पंक्ति सभ बिहारक दैनिक जीवनक चिरसंगिनी बनि गेल अछि । विद्यापतिक लोकोक्ति कोनो भाव वा कथनक उत्कर्षक लेल, रस वृद्धि वा अभिव्यंजना केँ सबल आ प्रमाण-पुष्ट करबाक लेल प्रयुक्त भेल अछि -

अछइत जे बोल नहि अछए से लहु सबहु चाहि ।

दूती नायिका केँ बुझा रहल छथि जे तोँ अपन सौन्दर्य-यौवन नायक केँ दऽ दहिक । तोरा पास पूर्ण यौवन छौक । ई कोन काज औतउक ? जे कोनो पदार्थ केँ रहलो सन्ता 'नहि' कहि दैछ, ओ सबसँ छोट कहबैछ। रहीमक एक दोहा मे सेहो एही प्रकारक भाव व्यक्त भेल अछि।[70]

तोहें कुल ठाकुर हम कुल नारि ।
अधिपक अनुचिते किछु न गोहारि ।
पिसुने हसब पुनु माथ डोलाए ।
बराक कहिनी बड़ि दुर जाए ।[71]

नायिका कातरता प्रकाश करैत नायक केँ बुझबैछ जे हँसी-ठट्ठा जुनि करू । अहाँ पैघ कुलीन ठाकुर छी, हम कुलवधू । जौँ राजा स्वयं

अनुचित काज करय लागथि तँ न्याय कतय भऽ सकैछ ? दुष्ट लोक सभ अहाँक आ हमर निन्दा करैत हँसी उड़ाओत । पैघ लोकक कथा बड़ जल्दी दूर-दूर धरि पसरि जाइछ ।

एही प्रकारेँ एक नायक अपन नायिका केँ विस्मृत कऽ परदेश चल गेल अछि । नायिका केँ ओकर अयबाक आशा नहि छैक । ओ कहैछ, जँ विरह-ज्वाला मे यौवन भस्म भइये गेल तँ नायकके‌ँ अयलो सँ कोन काज ? फूल केँ मुरझा गेला उत्तर वर्षा भेलो सन्ता ओ पुनः नहि फुलाइत अछि -

समय गेले मेघे बरीसब, की दुहु तेँ जल धार ।
सती समापले वसन पाइएँ, तेँ दुहु की उपकार ॥

नारी-जीवनक सार्थकता एही मे अछि जे युवावस्था मे ओकर प्रिय ओकरा लग मे रहथि । विद्यापतिक उक्ति द्रष्टव्य अछि -

सरसिज बिनु सर सर बिनु सरसिज
की सरसिज बिनु सूरे ।
जौवन बिनु तन तन बिनु जौवन
की जौवन पिय दूरे ॥

बिनु कमलक सरोवरक शोभा नहि आ बिनु सरोवरक कमलक शोभा व्यर्थ - कमल केँ पुष्पित करबाक लेल सूर्यक उपस्थिति अनिवार्य। बिनु यौवनक शरीरक कोन शोभा, शरीरक बिना यौवनक कोन गति ? मुदा यौवनोक कोन उपयोग जौँ प्रिय पास नहि हो ।

एतऽ उदाहरण लेल विद्यापतिक लोकोक्ति सभक कतिपय संग्रह प्रस्तुत कयल जा रहल अछि ।

अवहट्ठ आ संस्कृत भाषाक लोकोक्ति -

कीर्तिलता :

(1) अवसओं उद्यम लक्षि बस, अवसओ साहस सिद्धिः
लक्ष्मी उद्योग मे निश्चित रूपेँ बास करैछ आ साहस मे सेहो अवश्य सफलता अछि ।

(2) अवसओ बिसहर बिस बमइ, अमिञ बिमुक्कइ चन्द ।
विषधर सर्प अवश्यमेव विष उगलैत छथि, आ चन्द्रमा अमृत वर्षा करैत अछि ।

(3) चान्दनक मूल इन्धन बिका ।
चन्दनक भाव मे जारनि बिकायल ।

(4) चोर घुमाइअ नाअक हाथे ।
चोरकेँ नाथ द्वारा घुमयबाक चाही ।

(5) छोटे ओ तुरूक्का भभकी मार ।
तुर्कक छोट सन बच्चो हिन्दू केँ डेरबइत अछि ।

(6) जइ साहसहु न सिद्धि हो झंक कविव्वउं काह ।
यदि साहस कयलो सँ सिद्धि नहि प्राप्त हो तँ मनहूस रहि शोक कयले सँ कोन लाभ ?

(7) जनि उजड़ल लंका ।
जेना लंका उजड़ि गेल हो ।

(8) तावे न जीवन नेह रह, जवे न लग्गइ मान ।
जाधरि जीवन मे कोनो मान नहि, ताधरि ओहि मे स्नेह नहि ।

(9) दुष्खे सिज्झइ राअ घर कज्ज ।
बड़ कष्ट सँ राजाक दरबार मे सिद्धि प्राप्त होइछ ।

(10) नहु मान धनष्खि भिष्ख भावइ ।
मानधन केँ भीख माँगब शोभा नहि दैछ ।

(11) पुरिस कम्म साहस करिज्जइ ।
साहस करब पुरुषक कार्य थिक ।

(12) फल दैवह आअत ।
फल भाग्यक अधीन होइछ ।

(13) महुअर बुज्झइ कुसुम रस, कव्वकलाउ छइल्ल ।
सज्जन पर उअआर मन, दुज्जन नाम मइल्ल ॥
भंवरे फूलक रस केँ चिन्हैत अछि तथा कलामे निपुण पुरुषहि काव्य-कलाक अनुभव करैत अछि । सज्ज्न जनक मोन परोपकार मे लागल रहैछ, मुदा दुर्जनक मोन मात्र मलिनता सँ परिपूर्ण रहैछ ।

(14) वाणिज होइ विअष्खणा धम्म पसारइ हट्ट ।
भित्ता मित्ता कंचना विपथ काल कसवट्ट ॥
चतुर लोक बनियाक समान होइत छथि । धर्मक प्रसारहि हाट थिक । भृत्य आ मित्र सोन थिक आ विपत्तिकालहि हुनक कसौटी थिक ।

(15) विपइ न आवइ तासु घर जसु अनुस्तेओ लोग ।
जकरा मे लोक अनु होइछ, ओकरा घर मे विपत्ति नहि अबैछ ।

(16) विभ हीन नथिथ वाणिज्य ।
बिनु विभवक वाणिज्य नहि होइत अछि ।

(17) वे भूपाल मेइनी वैण्डा एक्का नारि ।
संहहि न पारइ वैवि भर अवस कराबए मारि ।।
दू राजा वला पृथ्वी, तथा दू पुरुषक एक्कहि टा नारी-ई दुनू भार नहि सहन कऽ सकैछ । ई अवश्य युद्धक कारण बनैछ ।

(18) सव्वउं कैरा रिज नअन तरुणी हेरहि वंक ।
चोरी पेम पिआरिओ अपने दोष सशंक ।।
युवती स्त्री, सभक सरल-सहज दृष्टि केँ वक्र बुझैत अछि। चोरि सँ प्रेम करयवाली प्रेयसी अपनहि दोष सँ घबरायल रहैछ ।

(19) होजहो सेई ।
होनहारे होइत अछि ।

पुरुष परीक्षा -

(1) प्रेम आ सौन्दर्य :

(20) भूयादनश्वरं प्रेम यूनोर्जन्मनि जन्मनि ।
धर्म श्रृंगार संपृक्ते सीताराघवयौरिव ।। [72]

(21) सुखोपकरणं नारी प्रेम तस्यां प्रियोचितम् ।
वश्यता च निषिद्धैव स्त्रीवश्यो याति दुर्गतिम ।।

(22) आज्ञा यत्र न लंघ्यते न विनये वैषम्यारोप्यते ।
सद्भावः प्रथमोत्थितो न हृदयते वाच्यास्पदैर्नीयते ।।
अन्योन्य सुखदुःखयोः समतया यदभुज्यते वैभवं ।
तत्प्रेम प्रियौर्मुदे तहितरत्कन्दर्पकारागृहम् ।। [73]

(23) चमत्कारिषु चित्रेषु भूषोष्वेश्वरेषु च ।
लोभो भवति नारीणां फलेषु कुसुमेषु च ।। [74]

कीर्तिपताका -

(24) कविमह नवजयदेव कवि रसमह रस सिंगार ।
त्रिपुरसिंहसुत राअ मह तीनिहु तिहुअनसार ।।

(25) करुना बसओ विवेक समो खेमा सतुएओ संग ।
धम्म सहित सिंगार रस कव्व कला बहुरंग ।।

(26) संसाररत्नं मृगशावकाक्षी रसो च श्रृंगार रसो रसानाम् ।

गोरक्षविजय -

(27) कि करिवो जपतप जोग धेयान । कि करिवो दान कि परम गेआन ।।
भनइ विद्यापति जुवति समाज । बड़े पुन्ये पाइअ जौवन राज ।। [75]

मैथिली लोकोक्ति : पदावली

(28) बहुल कामिनी एकल कन्त । कृष्ण पतिआएल समनतन्त।।
रूपे से नागर रसविहार । कौतुके गाव कवि कण्ठहार ।। [76]

(29) सुकृतिक बाट विचित्रतञे नारि । [77]

(30) अभिनव जलधर सुन्दर देह । पीत वसन जनि दामिनि रेह।
जातकि केतकि कुसुम सुवास । फुलसर मनमथ तेजल त्रास।
राधिकाक पूर्वरागपद-2

(31) अवनत आनन कए हम रहलोँ, बारलि लोचन चोर,
पियामुख रुचि पीबए धाओल, जनि से चाँद चकोर ।
ततहुँ सो हठ हठि मो आनलि, धएलि चरनन राखि,
मधुप मातल उड़ए न पारए, तैओ पसारए पाँखि । 10

(32) अलखित हमे हेरि विहसलि थोरि
जनु रजनी भेल चाँद उजोरि । ओएह, पद-5

(33) अधिक चोरी परसओ करिअ एहे सनेहक सोत । (26) अ

(34) अपन मुर अपने हम चाछल दोख दिव गए काहि

(35) अपन करम अपनहि भुँजिअ ।
विहिक चरित नहि बाध लो ।

(36) अछय परम सुख मूढ़ गमार ।

(37) अमिय धोए आंचरे धनि पोछल, दह दिश भेल उजोर (21)

(38) अधमक पिरीत ना करिए मान (78)

(39) अपने ही पेम तरुअर बाढ़ल कारन किछु नहि भेला ।
साखा पल्लव कुसुमे बेआपल सौरभ दह दिस गेला।।(147)

(40) अपनहि नागरि अपनहि दूत । से अभिसार न जान बहूत।।(253)

(41) अलसे पूरल लोचन तोर । अमिञे मातल चाँद चकोर ।।(303)

(42) अन्धकूप सम रयनि विलास । (339)

(43) अनुभवि दूर कएल अनुबन्ध । भुगुतल कुसुम भमर अनुसन्ध ।।
(401)

(44) अविरत नयने वारि झर निर्झर जनु घन साओन माला (741)
(45) अनुखन माधव माधव सुमरइत सुन्दरि भेलि मधाई ।
ओ निज भाव सोभावहि बिसरल आपन गुन लुबुघाई ।।
(46) असमय पसि आलाना पाये । चेओ करये काहु न सोहाये।।
विद्यापति भन न कर विराय । अवसर जानि धरत ओ काय ।।
(47) अमरखे विमरख न करिअ दूर
(48) अकुलनि बोल नहि ओर धरि निवहये धरम आपत वेवहारे।
आगिल दूर कर पाछिल चितधर जइसन बड़ि कुसियारे। (167)
(49) अधिक सिंगारे अधिक उपहास । (6)
(50) अपना पुतके न जानए काज ।
(51) अधिक माचन के सहय पार (62)
(52) अबुझ ना बुझ यालके कहे मन्द ।
पोआ पिवर काँहा कुसुम मकरन्द । (78)
(53) अपनुक कुगति अपने नहि जानह की उपदेशआआने ।
(54) आधि चोरी पर सँओअरिअ
इहे सिनेहक लोते । (65)
(56) अरथ असम्भव के पतिआए ।
(57) अधर सुधारस जोँ जय पीव (259)
(58) अछइत जे बोल नहि अछए
से लहु सबहु चाहि । (267)
(59) अधिपक अनुचिते किछु न गोहारि । (274)
(60) अति रति हठे नहि जीवए नारि । (285)
(61) अपन काज होअ पर अनुरोध ।
अवसर लाख लहए उपकार
तरतमे नहि किछु सम्भव काज । (313)
(62) अपन निवेदन ताहि निवेदिअ
जे पर वेदन जान ।। (382)
(63) अधिक आपद धेरज करब
कवि विद्यापति भान ।। (395)
(64) अवयव सबहि नयन पए भास । (420)
(65) अबुझ न बुझए अलाहु बोल मन्द

दूधे पटाइअ सीचीअ नीत ।
सहज न तेज करइला तीत ।।
मन्दा रतन भेद नहि जान । (423)
(66) अपन वेदन जे प्रतिपालय
से बड़ सबहु चाहि । (435)
(67) अधिरक आतर मधथ लजाइ । (438)
(68) अभिनव रस रभस पओले
कमन रह विवेक । (441)
(69) अपना वचन नहीं परकार ।
जे अगिरिअ से देलहि नितार ।। (451)
(70) अपन वेदन जाहि निवेदञो तइसन मेदिनि घोल । (510)
(71) अविरत नयने वारि झर निर्झर जनु घन साओन माला । (741)
(72) अनुखन माधव माधव सुमरइत सुन्दरि भेलि मधाई ।
ओ निज भाव सोभावहि विसरल आपन गुन लुबुधाई ।।
(73) असमय पसि आलाना पाये । चेओ करये काहु न सोहाये।।
विद्यापति मन न कर विराय । अवसर जानि धरत ओ काम ।।
(143)
(74) अमरखे विमरख न करिअ दूर
क्रोध विमर्ष दूर नहि करैछ । (150)
(75) अकुलनि बोल नहि ओर धरि निवहये धरय आपत वेवहारे।
आगिल दूर कर पाछिल चितधर जइसन बड़ि कुसियारे।। (167)
(76) अधिक सिंगारे अधिक उपहास (6)
अपना पुतके न जानए काज ।
(77) अपदहि गिरि सम गौरव गेल (न. गु. पद-429)
(78) अपनहु न देखिए अपनुक देह । (न. गु. पद-477)
(79) अपने आरति न मिल आन (न. गु. पद-140)
(80) अपने सांसे जाइति उड़िआए (न. गु. पद-762)
(81) अरथ असम्भव के पतिआए (न. गु. पद-30)
(82) अवसर बहला रह पचताव । (न. गु. पद-239)
(83) अवसर लाख लहए उपकार (न. गु. पद-239)
(84) असमय आस न पूरय काम (न. गु. पद-165)

(85) आपद अधिक धैरज करब धैरज सबै उपाए । (34 अ)
(86) आनक वेदन आन न जान (विरह - 18)
(87) आइति पओ ले बुझिअ विवेक । (न. गु. पद-125)
(88) आगिक दहने आगि प्रतिकार । (न. गु. पद-179)
(89) आगि जारि पुनु आगिहिक काजे (न. गु. पद-201)
(90) आडम्बर आदर हो सब तहँ। (गंगानन्दसिंह-वि.प. पृष्ठ 510)
(91) आदरे जानिअ आगिल काज (न. गु. पद-334)
(92) आदि अन्त नहि महघ पसार । (न. गु. पद-79)
(93) आन औषध कर आन बेआधी (न. गु. पद-79)
(94) आनक वेदन नइ बुझ आन । (न. गु. पद-182)
(95) आरति अधिक न रह मुख सोभ । (न. गु. पद-129)
(96) आसा भंग दुख मरन समान । (न. गु. पद-359)
(97) आसा लुबुधल ने तेजल रे, कृपनक पाछु भिखारि । (नि. वि. पद-52)
(98) आगे गुनि जे काजन करए पाछै पचताओ ।
(99) आजु देखु गजराजपति वरजुअति त्रिभुवनसार । (30)
(100) आस पासे मदन करु बन्ध जिवइते जुबति न तेज अनुबन्ध। (363)
(101) आज रजनि भागे पोहायलु पेखल पिय मुख चन्दा ।
जीवन जौवन सफल की मानल दस दिस भेल निरदन्दा ।।
सोइ कोकिल अब लाख डाकहु लाख उदय करु चन्दा ।
पाँच वान अब लाख वान होय मलय पवन बहु मन्दा ।। (766)
(102) आपनि हाहरि तेज न पास । (15)
(103) आसा न अवसान । (108)
(104) आदर आनि न खण्डिअ मान । (342)
(105) आरति न रहए उचित बेथा ।
भागल मनोरथ केओने सखि पओला ।। (559)
(106) आइलि जगत जुवति के अन्ध ।
सामि समिहित कर प्रतिबन्ध ।। (561)
(107) आयुरे आदर हो सब तहु ।
निरधन आदर के कर कहाँ ।। (603)

(108) आकम नामे रहए हिअ हारि ।
जनि करिवर तर खसल पञेनारि । (न. गु. पद-159)
(109) आँखि देखि जे काज न करए ताहि पारे के अन्ध । (392)
(110) आँखि अछइते कहसे खसब कूप । (227)
(111) इन्द्रिअ दाएन जतहि हटिअ
ततहि ततहि धावे ।। (556)
(112) उदित ओ चन्दा अमिय न मुचए की पिवि जिउत चकोरे (387)
(113) उपचित कतए तिरोहित होए । (71)
(114) एकसरि तारा केअओ नहि देख (न. गु. पद-539)
(115) ए सखि राअहिसि अपनुक लाज, परक दुआरे करह जनुकाज।
परक दुआरे करिअ जञो काज, अनुदित अनुखने पाइक लाज ।।
(116) एहि महि आवे अथिर जीवन जउवन अलप काल ।
(117) एकहि पलंग पर कान्ह रे । मोर लेल दुर देस भान रे । (467)
(118) एक भमर भमि बहुल कुसुम रमि कतहु न केओ कर वाध।
बहुबल्लभ सओ सिनेह बढ़ाओल पड़ल हमर अपराध ।। (523)
(119) एक दिस मनिमय नवनिधि हेम । अओक दिस नवरस सुपुरुष पेम।
निकुती वोल कएल अनुमान । प्रीत अधिक थिक के नहीं जान । (575)
(120) एखन एखनि करि दिवस गवायलुं दिवस दिवस करि मास।
मास मास करि बरस गमाओल छोड़ल जीवनक आस।।(735)
(121) एहि महि अछ अथिर जीवन जउवन अलप काल ।(267)
(122) एहि मह पाप अधिक थिक नारि ।
जे न गनए पर पुरुसक गारि ।। (495)
(123) ओछाओन खण्डतरि पलिआ चाह । (56)
(124) कमल युगल पर चांदक माला, तापर उपजल तरुन तमाला।
(125) कनकलता अवलम्बन ऊअल, हरिन-हीन हिम धामा ।
(126) कनकलता जनु संचरे महि निर अवलम्ब ।
ता पुनि अपुरुव देखल रे कच जुग अरविन्द ।
विगसित नहि किछु कारन रे सोझा मुख चन्द ।
(127) कतए नुकाएल चांदक चोर, जतहि नुकाएत ततहि उजोर ।
(128) कउड़ि पढओले पाव नहि घोर । (न.गु. पद-217)

(129) कउन मुगुधि आलिंगति आगी । (न. गु. पद-391)
(130) कएले धन्धे धरम दुर जाए । (न. गु. पद-93)
(131) कण्टक दोसे केतकि सञो रूसल ।
(132) कतए भीति जञो दृढ अनुरागे । (न. गु. पद-296)
(133) कतए सुनल अछ जूडि हो आगि । (न. गु. पद-518)
(134) कत-कत लखिमी चरणतल नेउछय । (न. गु. पद-2)
(135) कर सञो खसल परसमनि रे, के लेल अपनाई । मिथिला गीत संग्रह - 2, पृ. 29 ।
(136) कह कवि सेखर गरुअ भूख पर, जनु थोर अहार । (178)
(137) कहल न बूझल हृदयक सून । (31)
(138) करिअ मान जञों आइति होय । (430)
(139) कन्त दिगन्तर जाहि न सुमर की तसु रूप कि गूने (556)
(140) कएले धन्ध धरम दूर जाए । (45)
(141) कतए तिमिर जहाँ रवि । (97)
(142) कर मधुकर तोहे दिढ गेआन । अपने आरति न मिलये आन । (293)
(143) कपट हेम धर कतिखन वाने । (385)
(144) कपट रहत कतखन जे धरू ॥ (3)
(145) करए कृपा बड़ पर दुख देखि ।
(146) कतए भीति जों दृढ अनुरागे । (105)
(147) कत न नागर गुनक सागर
सबे न गुनक गेह । (108)
(148) कत देखल मधु अपने जा मधुकर समाज । (332)
(149) कमल भमर जग अछए अनेक ।
सब तँह से बड़ जाहि विवेक ॥
भलेओ मन्द हो मन्दा समाज ।
निअ क्षति विनु परहित नहि होए । (403)
(150) कतहु न सुनले अइसन बात ।
सांकर खाइत भांगए दात ॥ (408)
(151) कमल न विकस भमर अनुरोध ।
जीवहु चाहि अधिक की सानि । (449)

(152) कतए गुजा रतन तूल ॥ (457)
(153) कतए सुनए अछि जुड़ि आगी ॥ (458)
(154) कबहु न होअए जाति व्यभिचार । (459)
(155) कलियुग एहे अधिक परमाद ।
दुरजन दुर लए बोल अपवाद ॥ (518)
(156) काम प्रेम एकमत भए रहु, कखने की न कराबे । अभिसार, 5
(157) काक सबद जब गरुअ सोहाय ।
दुरे रहु कोकिल पंचम राग ॥ (659)
(158) काच काँचन न जानय मूल । (198)
(159) काज घटी अनुगत जल जेम । नागर लखत हृदय गत प्रेम। (248)
(160) कामिनि कुलक धरम निभाये कइसे अगोरति पास ।
सुरत सुख निमेष बेरा जावे ज़ीव उपास ॥ (255)
(161) कालिक अवधि पिया करि गेल । लिखइते कालि भीति भरि गेल ।
(162) काएर पुरूष हिरदइ हारि भर सुपुरूष सह अवसाद लो । (50)
(163) काहुक विपद काहुक सम्पद नाना गति संसार लो । (149)
(164) काच कनक लए गांथ गमार । (306)
(165) काज संसय हृदय वंका ।
कत न उपजए विरह संका ॥
(166) काहुक कउतुके काहुक निरासा ।
(167) काम-कला रस देव अधीन । (259)
काम पेम दुहु एक मत भए रह ।
(168) किय विष दह समय जलदाने । (89)
(169) की मोरा जीवने की मोरा जउवने की मोरा चतुरपने ।
मदन वाने मरूछलि अछओ सहओं, सहओ जीवन अपने॥ (243)
(170) की करत चांदनी की अरविन्दे । विरह विसर जमे सूतिअ नीन्दे ।
(171) की जीवने जओ खंडित मान । (417)
(172) कुकुरक लांगुल न होय समान । (660)

(173) कुजनक प्रीति मरन आधीन । (18)
(174) कुदिना हित जन अनहित रे, थिक जगत सोभाव । (720)
(175) कुम्भी जल कए जेहन पिरीत । (मि.गी. सं. पृ. 9 मा. 6)
(176) कुल रखले रह । (215)
(177) कुलटा भए जदि पेम बढ़ाइअ तेँ जीवने की काज ।
तिला एक रंग रभस सुख पाओब रहत जनम भरि लाज ।
कुल कामिनि भय निजपिय विलसए अपथे कतहु नहि जाइ ।
की मालति मधुकर उपभोगए किंवा लताहि सुखाई ।।
(178) कूप न आवए पथिकक पास । (444)
(179) कूप पानि अधिक होअ काटि ।
(180) कौआ मुह न भनिअए वेद । (359)
(181) कृपिन पुरुष काँ केओ नहि निक कह, जग भरि कर उपहास,
निमीधन अछइत नहि उपभोगब, केवल परहिक आस । (45)
(182) खेत कएल रखवारे लुटल ठाकुर सेवा भोर ।
वनिजा कएल लाभ नहि पाओल अलप निकट भेल थोर ।।
(614)
(183) गगन मण्डल दुहुक भूषण एकसर उग चन्दा ।
गए चकोरी अमिय पीवए कमुदिनि सानन्दा ।।
मातलि काइअ करिअ रोष ।
एकल भमर बहुल कुसुम कमन तोहर दोष ।। (441)
(184) गरल आनि सुधारसे सिंचिअ सीतल होमय न पार ।
जइयो सुधा निधि अधिक कुपित तइयो न वरिस खार ।।
(435)
(185) गाए चरावए गोकुल वास । गोपक संग करय परिहास । (351)
(186) गरुआ नितम्ब उपर कुच भार भांगिया के चाहे पेघिबा के चार ।
तनु रोमावलि देखिअ न भेल, निज धनु मनमथ धे धन देल।
(187) गुंजा रतन करए समतूल । (189)
(188) गुपुति न रहलिए चोरि । (2)
(189) गुनमति मन गुन न धरिए गोए ।
सुपुरुष दाने अधिक फल होए । (122)
(190) गुनहि बुझिअ ऊच नीच रे । (465)

(191) गेले नीर निरोधक की फल, अवसर बहले दान । (31)
(192) गेल जउबन पुनु पलटि न आबए, केवल रहं पचतावि । (91)
(193) गेल दिन पुनु पलटि न आब । (348)
(194) गेल दिना नहि आवए ।
(195) गेल भाव जे पुनु पलटावए, सेहे कलामति नारी । (541)
(196) गोप भरमे जन बोलह गमार । (92)
(197) गोपहि न पारिए हृदय उलास ।
मुनलहु वदन वेकत हो आस ।
भूखल मदन बढ़ावए रोस । (430)
(198) गौरव अहे सखि धैरज साथ । बहु धरए सतओ अपराध । (497)
(199) घीउ उधार मांग मति मोर । (217)
(200) चन्दा जनि उगु आजुक राति ।
पिया के लिखिये पठाओब पाँति ।। (321)
(201) चिकुर गरए जलधारा, मुखससि भय जनि रोअए अंधारा ।
(202) समय गेले मेघे बरीसब, की दुहु तेँ जलधार ।
(203) चित थिर नहि होय । (628)
(204) चेतन आग चतुरपन कइसन
विद्यापति कवि भाने । (92)
(205) चेतन हाथ लाथ नहि सम्भव
विद्यापति कवि भाने । (94)
(206) चेतन गापये गूपति चोर । (298)
(207) चोरि प्रीति होय लछ गुन रंग । (11)
(208) चोर जननि जओ मनहि मन झाखिओ, रोअओ बदन झपाय।
(209) चंचल लोचन बाके निहारय अंजन सोभा पाए,
जनि इन्दीवर पवन पेलल अलि भरे उलटाए । (20)
(210) चंचल चरन चित चंचल मन, जागल मनसिज मुदित नयान ।।
ओएह, मध्या नायिका, वय:सन्धि पद (2)
(211) चांद दिनहि होए हीन, से पुनि पलटि छने छन छीन ।
अंगुरि बलय पुनि फेर, मांगि गढ़ाएव बुझि कत बेर ।
(212) चांद हरिन बह राहु कवल सह प्रेम पराभव थोर (16) अ
(213) चाँदहु काँ किछु लाग कलंक ।। (29)

(214) छाड़ते चन्दा भरइते बुलह
कि कर ताहे विपती ।। (350)
(215) छिक्काहि नहि चली । (63)
(216) छोट पानि चह-चह कर पोठी, के नहि जान ।
(217) जनिक एहन धनि कामकला सनि से किए करु व्यभिचार (45)
(218) जकर जास ओ रीति, दुरहुक दुर गेले दोगुन पिरीत । (507)
(219) जत विसिरिअ तत विसर न जाए ।
(220) जगत विदित थिक सब काँ सब तहु
मन का मन थिक साखी । (453)
(221) जत बिछुरिअ तत बिछुर न जाए ।
(222) जइओ जकर मुह पेचसन, दूसय चाहए आन ।
(223) जइसन परहोंक तइसन बीक । (129)
(224) जउबन रूप ताबे धरि छाजत, जावे मदन अधिकारी । (97)
(225) जञो जग जीविअ नवओ निधि मील । (666)
(226) जखन कपाल बाम सब विपरीत ।
(227) जकर हृदय जवहि रतल से धसि ततहि जाय ।
जइअओ जतने बांधि निरोधिय निमन नीर थिराए ।। (43)
(228) जनु अनुराग दूर सब गेल । मोतिक पुतरी विषधर भेल। (119)
(229) जइयो तरणि जल सोषए सजनी कमल न तेजए पाक ।
जे जन रतल जाहि सँय सजनी कि करत विहि भए बांक ।।
(230) जउवन गेल विपद भेले पूछि न पूछत कोए ।
एहि महि अछ अथिर जीवन जउवन अलप काल ।
इथी जत-जत न विलसए से रह हृदय साल ।। (267)
(231) जकर जतए रति तयं बिनु की थिति ।
नेह न विषय विचार ।। (393)
(232) जल मधे कमल गगन मधे सूर । आंतर चांद कुमुद तक दूर ।। (448)
(233) जनम होअए जनि जओं पुनु होए । जुवती भए जनमए जनु कोए ।।
होइह जुवति जनु हो रसमन्ति । रसओ बुअए जनु हो कुलमन्ति ।।
ई धन मांगओ विहि एक तोहि । थिरता दिहह अवसानहु मोहि ।।
मिलिहि राति नागर रस धारा । परबस होअए जनु हमर पियारा ।।
(452)

(234) जउवन रतन अछल दिन चारि । तावे से आदर कएल मुररि ।।
(460)
(235) जखने जे रह तेहि मगाइअ जे बहत दीअ पीठ । (395)
(236) जलधि न मांगए रतन भंडार । चांद अमिअ दे सब रस सार ।।
(237) जस अपजस दुअओ चिरे पाए
आओर दिवस दुइ चारि लो ।। (50)
(238) जगत कत न जुव जुवती
कत न लावए प्रेम ।
बापुर पुरुष विचखन चाहिअ
जे कर आगिल खेम ।। (91)
(239) जओबन हाथि करिअ अवधान । (257)
(240) जगइत निन्द गेल न होअ जगाए । (406)
(241) जक् वलाह सुचेतन नही
तकेक के दिअ रूप ।
असकाइ रूप हित पए
होअए हमर भेल काल ।। (516)
(242) जा उर प्रीति सो जन अन्ध । (53) वि
(243) जाति जाति धमिल अनल अधिक विमल हेम । (135)
(244) जाबे सरस पिया बोलए हंसी । ताबे से बालमु तजे पेअसी ।।
(394)
(245) जावे से धन रह अपना हाथ । ताबे से आदर कर संग साथ ।।
(460)
(246) जिव जञो, जनि निरधने निधि पाए,
खन हेरए, खने राख झपाए ।। (185)
(247) जीवन सार जौवन रस रंग । जौवन जञो तञो सुपुरुष संग। (315)
(248) जीवन माह जौवन दिन चारि ।
तथिहि सकल रस अनुभव नारि ।। (209)
(249) जुवति चरित बड विपरीत बुझए के दहु पार,
बुझए चेतन गुन निकेतन भुलल रह गमार । (77)
(250) जुग जुग जीवथु वसथु लाख कोस । हमर अभाग हुनक नहि
दोस ।। (519)

(251) जे रसवन्त सेहो रस पाय । (688)
(252) जेकर व्याधि पराधिन और वध, तेकर जीवन काटे। (58)वि.
(253) जे अनुपम उपभोग न आवए, की फल ताहि निहारि। (15)
(254) जे अंगिरिअ तां न गुनिअ गारि । (23)
(255) जे अंगिरिअ ता न होइअ उदास । (125)
(256) जेकर साहस ता हो सिधि । (234)
(257) जे किछु कबहु नहि कला रस जान,
नीर खीर दुहु करए सयान । (198)
(258) जे पुनु जानए रतन सांच, रतन तेजि न किनए कांच। (510)
(259) जेहन विरह हो तेहन सिनेह । (698)
(260) जेकर नाह विचखन नाहि ताके कांदिअ रूप । (188)
(261) जे अनुपम उपभोग न आवए, की फल ताहि निहारि। (37)
(262) जे नहि लुबुध सेहे पय सोभ ।। (48)
(263) जेहन विरह हो तेहन सिनेह ।। (538)
(264) जो गुनवन्त सोइ फल पाब । (375)
(265) जोवन नगरि बेसाहब रूप। तते भुलइ छह जते सरूप।। (55)
(266) जौवन रूप तावे धरि छाजत जावे मदन अधिकारी। (265)
(267) झरक पानि डाभक कोंइ, गरव उपजु जाहि ।
भने विद्यापति दहक कमल दूसए चाहए ताहि ।।
(268) टूटइत नहि टूट प्रेम अद्भूत ।
जैसन बाढ़ए मृणालक सूत ।। (999)
(269) ढाकि रहय न अपजस वासि । (122)
(270) तरु तर भेटल तरुन कन्हाई, नयन तरंग जनि गेल सनाई। (13)
(271) तन्हि सओं कहाँ पिरीत रसाल
बानर कण्ठ कि मोतिय माल। वानर मुंह की सोभए पान। (49)
(272) तबे जौवन जब सुपुरूष संग । (671)
(273) तत करि जत फावए चोरि (261)
(274) तह्निका सतत तोहर पर पाव,
जनि निरधन मन कतए न धाव । (101)
(275) तर सूते गढ़ि काट कुम्हार । (457)
(276) तरुणीक उपअ लहत की चन्द ।

(277) तत मत करइते न होअए काज । (316)
(278) तहाँ की करब पुरुष भसन ।।
जहाँ असहनि नारि ।।
प्रथम प्रेम और धरि राखए
(279) तत करिअ जत फाबए चोरि ।
परसन रस लए न रहिअ अगोरि ।। (487)
(280) तातल सैकत बारि बिन्दु सम, सुत मित रमनि समाजे । (शांत रस, 4)
(281) तिल आध दुख जनम भरि सुख,
इथे लागि धनि के होइअ विमुख । (317)
(282) तिला एक लागि रहल अछि जीवे । विन्दु सनेह वरइ घर दीवे। (160)
(283) ते परि करब केलि जे पुन होअ मेलि, मूल राख बनिजारा। (मध्या नायिका, पद 14)
(284) तेलि बड़द थान भल देखिअ पालव नहि उजिआइ । (397)
(285) तोहर विरह दीन, छन छन तनु छीन, चौदसि चाँद समान। (8)
(286) तोहर हृदय बचन नहि थिर, नलिनि पात जइसन बह नीर (15)
(287) तोहें बहु बल्लभ हमहि अजानि । तकराहुं कुलक धरम भेल हानि ।। (359)
(288) तैसन सिंह तइसन सिआरा ।। (215)
(289) तोहहु नागर अति गमार ।
हठे कि होइह समुद पार ।। (299)
(290) थोरि सलिले तुअ न जाब पिआस । (166)
(291) दरसि जनु हेरहु, चाँद भरम मुख गरसत राहु । (20)
(292) दहइत कनक दिगुन होए मूल । (95)
(293) दिवस तिल आध राखबि, यौवन कहइ दिवस सब जाब । (अस पद 2)
(294) दिन दिन आगे सखि । अइसनि होए वह,
घोसिनि घोरक मूले । (81)
(295) दिवस मन्द भल न रहए सब खन । (50)
(296) दिवस दोषे की नहि सम्भव प्रेम परानहु चाह । (182)

(297) दिने-दिने दूना पेम बढ़ाओब, जइसे बाढ़लि सुससि । (294)
(298) दिने-दिने बाढ़ए सुपुरुष नेहा । अनु दिने जइसन चान्दक रेहा ॥ (455)
(299) दिन दस चीत रहलि विचारि । तते होएत जत लिहल कपालि ॥ (561)
(300) दिन-दिन अगे सखि ऐसनि होय वह
घोसिनी घोरक भूले । (265)
(301) दिने दिने बाला बुझति पिरीत । (289)
(302) दिवसहु के जा निअ पिया पास । (338)
(303) दिवस बाम सखि सबै खन न रहए
चाँदहु लागु कलंक ॥ (379)
(304) दिवसक भोजने वर्ष न आट ।
पर उपकारे परम होअ पून ॥ (410)
(305) दीप देले घर न रहए अन्हार । (129)
(306) दीठी देखइत दिवस चोरि । (48)
(307) दुर कर दुरमति कहल मो तोए, बिनु दुख सुख नहि होए । (20)
(308) दुख सहि सहि सुख पाओल ना । (35)
(309) दुरजन वचन न लहु सब ठाम । बुझए न रहए जावे परिणाम। (129)
(310) दूधक माँझी दूती भेलि । (516)
(311) दूधे पटाइअ सीचिअ नीत,
सहज न तेजए करइला तीत । (431)
(312) दूरिह रहब तेँ अरथित होए । (129)
(313) दूती भए जनु जनमए नारि । (136)
(314) देहनि न होअए हथि झपाए । (441)
(315) देखि भवन भिति लिखत भुजंगपति जसुमन परय तरासे ।
से सुवदनि करे झँपइत फनि मनि विहसि आइलि तुअ पासे ॥ (337)
(316) देले पाइल के नहि जान । (372)
(317) धनि अलप बयसी बाला, जनु गांथलि पूहुप माला ।
(318) धएले रतन अधिक मूल होए । (29)

(319) धके के केओ कुअ डूब बिपाक । (139)
(320) धन जउबन रस रंगे ।
दिन दस देखिल तलित तरंगे ।
(321) धन कुल धरम मनोभव चोर । (179)
(322) धरखने जीव कतए नहि जाव । (472)
(323) धन अछइत जे नहि भोगए
ता मने हो पचताव ।
जउबन जीवन बड़ निरापन
गेले पलटि न आब ॥ (161)
(324) नयनक नीर थीर नहि बान्धइ, पंक कएल महि रोइ । (32)
(325) नव नागरि नव नागर बिलसय पुन फले सबे सबे पार । (9)
(326) नयनक अंचल चंचल मान । जागल मनमथ मुदित नयान । (62)
(327) नयनक नीर चरन तल गेल । पलक कमल उम्भोरुह भेल ॥ (10) वि
(328) नख छेदन के लाब कुठार । (389)
(329) न पूरे अलप धन दारिद पिआस । (168)
(330) नलिनी दल चिर नित न रहय थिर ।
(331) नहि नहि करिअ नयन झारू नोर । काँच कमल भमरा झक झोर ॥ (290)
(332) नलिनि दल निर चिर न रहए थिर ।
जत घर तत हो बाहर ॥ (320)
(333) नव अनुरागे किछु होय वरु रह दिन तिनि चारि ।
प्रथम प्रेम धरि राखए सेहे कलामति नारि ॥ (437)
(334) नहि नहि नहि पए भाखे ।
तइअओ कोटि जतन कर लाखे ॥ (341)
(335) नव नव उछल पहिलुक मोह ।
किछु दिन गेले भेल पनिसोह ॥
बड़ाकु हृदय बड़ेओ हो मन्द । (418)
(336) नागर जे से हिताहित जान । (162)
(337) नारंगि छोलंगि कोरि कि बेली । काम पसाहलि आंचर फेली। (418)

(338) नागर भमर दुहु एक रीति । रस लए निरसि करए फिरि तीति ।। (473)
(339) नागर नेह पुनमत पावे । (418)
(340) नागर जे दीअ कि करत नाहि ।
जकरा जे रह से दे ताहि ।।
पर अनुबोधे कतए रह मान । (424)
(341) नागर हो जे सइ हेरि तहि जान ।
काठओ रस दे नाना बन्ध । (425)
(342) नागर भमर दूहू एक रीति ।
रस लए निरसि करए फिरि तीति ।। (473)
(343) नागरि रम पिय अभिमत जानी । (498)
(344) निर्धन काँ जञो धन किछु हो,
करए चाहए उछाह । (216)
(345) निठुर पुरुस पिरीति ।
जीव दए सता व जुवती ।। (532)
(346) नीर निरंजन लोचन राता ।
(347) नीन्द विदेसिनि तन्हि पिया रंगे । (162)
(348) नूतन नेह संसारक सीमा । (77)
(349) नूतन रस संसारक सार । (282)
(350) परक वेदन पर बाँटि न लेइ । (63)
(351) पर दुखे दुखी नहि कोइ । (35)
(352) पर धने मांग बेआज । (74)
(353) पर बोध न माने जनि बाल भुअंग । (154)
(354) परसन रस लए न रहिअ अगोरि । (261)
(355) पलटल दीठि सून गेल ठाम । (73)
(356) पर पुरुषक सिनेह मन्द । (15)
(357) परवन नीत करए सब कोई । करिअ प्रेम जओ विरह न होई। (54)
(358) पर तिरि मानव तीति । धीरजे मनोभव जीत । (157)
(359) पहिल पसार संसार सार रस परहोक पहिल तोहार हे । (348)
(360) परगत करब न सुपहुक दोस ।

राखव अनुनय अपन भरोस ।। (396)
(361) परक वेदन न बुझए मुरुख निरापन चपलमती । (443)
(362) परहित अहित सदा विहि जाम ।
दुइ अभिमत न रहए एक ठाम ।। (173)
(363) परिमले जानिअ कमल पराग ।
नयने निबेदिअ नव अनुराग ।।
आदरे अधिक काज नहि बन्ध । (381)
(364) परक भूसने परक वैभव
कत खन दुहू सोभ ।। (392)
(365) परसि हलह जनु पिसुनक बोल ।
सुपुरुष पेम जीव रह ओल ।।
विमुख बुझाए न करिअए बोल ।
मुख सुखे धेंगुर काट पटोर ।। (432)
(366) पर पीड़ाए जीवन थिक छार । (434)
(367) परक वेदन दुख न बुझए मुरूख ।।
(368) परवेदन दुःख पर नहि जान ।। (543)
(369) पावक सिखा नीच न धावए, ऊँच न जा जल धार ।।
तत से पए अवस करए जकर जे बेवहार ।। (13)
(370) पण्डित गुनि जन दुख अपार ।
अछय परम सुख मूढ़ गमार ।। (661)
(371) पाइअ ठाम बइसले न निधि । (242)
(372) पानि तेल नहि निवड पिरीत । (391)
(373) पिउत कुगैयां गोमुख लाए । (133)
(374) पिपड़ी काँ जँ पाँखि जनमए,
अनल करए झपान । (219)
(375) पिरिति काजे जीउ उपेखल । ए वेरि होउ की बाऊ ।। (319)
(376) पिआ अनुरागी तञे अनुरागिणि दुहु दिस दाहु दुरन्ता ।। (415)
(377) प्रेम लता तोड़ले बड़ पाप । (122)
(378) पेमक अंकुर तेहि जल देल । दिन दिन वाढ़ि महातरु भेल ।। (470)
(379) पीठि आलिंगने कत सुख पाव,

पानिक पिआस दुधे किअ जाव ।। (563)
(380) पीन पयोधर नखर मन्दा। जनि महेसर सिखर चन्दा ।। (398)
(381) पुरब भानु जदि पछिम उदीत, तइअओ विपरित लह सुजन पिरीत ।।
(382) पुन फले गुनमति पिअ मन जाग (82)
(383) पुरुषक कपटी प्रीति । (त्रि.गी.स.मा. 1, पृ. 69)
(384) पुरुषक चंचल सहज सोभाव । (44)
(385) पुरुष न जानए नारि दुख सजनी गे,
केवल अपन सुख चाह । (त्रि.गी.स.मा. 1, पृ. 39)
(386) पुरुष नहि परमान रे । (त्रि.गी.स.मा. 1, पृ. 39)
(387) पुरुष भमर सभ कुसमे कुसमे रम । (125)
(388) पुरुष विहुनि जीवए जनु नारि । (512)
(389) पुरुष पिचारि नारि हम अछलिहुँ अब दरसनहुँ सन्देह ।
भमर भमए भमि सबहु कुसुमे रमि न तेजए कमलिनि नेह। (734)
(390) पुनफले गुनमति पिआ मन जाग ।
लुबुधल भमरा कि देव उपाय ।
बाधला हरिन न छाड़ए ठाम ।। (360)
(391) पुरुष निठुर हिअ सहजक भावे । (387)
(392) पुनमन्ते पावए गुनमति नारि । (314)
(393) प्रेम प्रेमक रीति कहल सब दुखी । (44)
(394) प्रेम करवि जव सुपुरुष जानि । (95)
(395) प्रेम पंथ कतए दूर । (107)
(396) प्रेमहि कलावति पराभव सहइ । (644)
(397) पंडित गुनिजन दुःख अपार,
अछय परम सुख मूढ़ गमार । (433)
(398) बड़ वचन कबहुँ नहि बिचलए, निसि पति हरिन उपाये
(399) बड़ अपराध मोन कर साध । (336)
(400) बड़क कहनि बड़ि दुर जाए । (480)
(401) बड़ पुने गुनमति पुनमत पाबे । (12)
(402) बड़ पुने रसवति मिलिए रसवन्त । (106)

(403) बड़ेओ भूखल नहि दुहु कओरे खाए
(404) बड़ जन जेकर पिरीति रे । कोपहुँ न तेजए रीति रे ।। (465)
(405) बड़ाक अनय मोन पथ साथ ।। (376)
(406) बड़ परिहर गुन दोस विचारि ।।
(407) बा (बै) घल हरिन न छाड़ ठाम । (82)
(408) बासि कुसुम किए गाँथए माल । (396)
(409) बान्धल हीर अजर लए हेम । सागर तह हे गहिल छल पेम ।।
ओउ भरल ई गेल सुखाए ।। (459)
(410) बाढ़िक पानि काढ़ि जा जानि । ठाम रहल गए जे निञ मानि।
(411) बाहर औषध भितर बेआधि ।
वाति न रासि भिआएल दीबै ।। (518)
(412) बिनु साहस सिधि आस न पूर । (31) अ.
(413) बिनु नचले नहि सीझए काज ।
(414) बिनु अवसर हठ रस नहि आब,
फुलला फूल मधुकर मधु पाब ।
(415) बिनु दुख सुख ककरहु नहि होए । (137)
(416) बिनु पहु जीवन की थिक सजनी गे ।
(417) बिनु माधव मधुरजनी आइति मीन कि जिव बिनु पानी । (213)
(418) बिनु परिचये प्रेमक आंकुर पल्लव भेल अनेक । (226)
(419) बिनु साहसे सिधि आस न पूर
जे अंगीरिय तां न गुनिअ गारि ।। (319)
(420) बिनु साहस अभिमत नहि पूर । (312)
(421) बिनु अवसर हठ रस नहि आब
फुलला फुल मधुकर मधु पाव ।।
(422) बस बथान सालि दुहु गाय ।
तहिन कि बिलसब नागरि पाय ।। (218)
(423) बड़ अपराध उतर नहि सम्भव
विद्यापति कवि भाने ।
(424) बड़हिक बड़ हो धैरज ।
पैघ लोकक धैर्य पैघ होइत अछि ।

(425) पूव पछिम नहि जान । (223)
(426) बैभव गेलि भलाहु मंदि भास ।
अपन पराभव पर उपहास ।। (461)
(427) बोलल बोल पलटि नहि आबै । (461)
(428) बोलल बोल पलटि नहि आब
रूप व जौवन बड़ परे आस ।
वचनक कोसले की नहि होए ।। (433)
(429) बोललि बोल उत्तिम पए राख ।
नीच सबद जन की नहि भाख ।।
कत न अछ जगत रसमति फूल ।
मालति मधु मधुकर पए भूल ।। (439)
(430) बाँक विघाता की न कराबे । (153)
(431) फल कारने तरु अवलम्बल छाहरि भेले सन्देहे ।
भाग विहिन जन आदर नहि लह अनुभव धनि जन ठामे। (402)
(432) फल जानिये परिनामे । (148)
(433) फाव चोरि जओ चेतन चोर । (259)
(434) फेकलेओ चेप पाव पुनु ठाम । (440)
(435) भल जन कर न विरस परिनाम । (10)
(436) भन विद्यापति तुहु सब जान । आसा भंग दुख मरन समान। (9)
(437) भन विद्यापति सुन वर नारि । सुजनक कुदिन दिवस दुइ चारि।।
(438) भमरा भरे मांजर न मांगे । (143-144)
(439) भल जन न कर विरस परिणाम । (165)
(440) भल पओलहि अलपहि कर तोस । (133)
(441) भने विद्यापति जे नर तापर रतल नारि । (4)
(442) भमि भमि भ्रमरी बालमु निज खोजे ।
मधु पिवि मधुकर सुतल सरोजे ।। (395)
(443) भनइ विद्यापति नागर रीति । व्याज बचन उपजाव पिरीत ।। (590)
(444) भल मन्द जानि करिअ परणाम । जस-अपजस दुइ रह गए ठाम ।

(445) भनइ विद्यापति नारि सोभाव ।
अपनुक अभिमत उकुति बुझाव ।। (128)
(446) भन विद्यापति एहो रस जान ।
अबुझ न बुझए बुझए मतिमान ।। (180)
(447) भमरा भेल घुरए सब ठाम । (259)
(448) भनइ विद्यापति इ रस गाव ।
मगले कान्ठ के नहि पाव ।। (268)
(449) भल नहि अधिक उदासे ।
की करव ते धन अरु जीवने
जे नहि बिलसए वेरि ।। (426)
(450) भलजन वचन दुअओ सम तूल ।
वहुल न जानए रतनक मूल ।।
(451) भाग बिहिन जन आदर नहि लह
अनुभव धनि जन ठामे ।। (402)
(452) भिन-भिन राज भिन बेवहार । (5)
(453) भुजगिनि दसि पुनहि यदि दसय
तवहि समय विष जाइ । (90)
(454) भुखल भमरा पिव मकरन्द । (390)
(455) भेलिहु सिद्धि न बढ़ाइअ दन्द (63)
(456) भेक न पिबए कुसुम मकरन्द । (631)
(457) भेलि निम सन तीत । (644)
(458) मनमथ तन्त अन्त धरि पढ़ि कए अवसर भेल सआनी ।
आजुक दिवस कालु नहि पइअए जौवन वन्ध घुट पानी ।
(459) मधु मिसरी पकवान रे। खएते तित मिठ जान रे। (25) वि
(460) मणी कादव लेपटाए रे,
तएँ की हुनक गुन जाए रे ।
(461) मधुक मातल उड़ल न पारे । (12)
(462) मन्त्र न सुनए जनि बाल भुजंग (213)
(463) मनसिज मद जल जओ उमताए । धरिहसि पियतम आकुस लाए । (250)
(464) मधुतह सुन्दरि मधुर सिनेह । (493)

(465) मन कर वहाँ उडि जाइअ जहाँ हरि पाइअ रे ।
पेम परसमनि जानि आनि उर लाइअ रे ।। (527)
(466) मधु न आव मधुकर पास । (85)
(467) मधु लए के धर मधुपक संग ।
थावर गौरव इ बड़ रंग ।। (131)
(468) मलयानिल पिव जुवति मान ।
विरहिन-बेदन केओ न जान ।। (214)
(469) मन्दाकु काज कति भलि भेलि ।
चोरी पेम चारिगुन रंग ।
सपुरुष पेमक बहु नहि छाड़
दिने दिने चाँद कला जञों बाढ़ (315)
(470) मरए मधथहि मकर केतु ।
बड़ बोलछड़ बड़ अनुचित ।। (445)
(471) माणिक पड़ल कुबानिक हाथ । (198)
(472) मातल करि नहि अंकुर समान । (168)
(473) मारिअ नागर उवर गमारा । (48)
(474) माली जाने कुसुम विकास ।
(475) मानस दहोदिसि धाव साजनिया ।
सुमुखि धैरज सकल सिधि मिल । (610)
(476) मेरु उपर दुइ कमल फुलाएल, नाल बिना रुचि पाई,
मणिमय हार धार बहु सुरसरि, ते नहि कमल सुखाई ।
(477) मुरुछल जीवए चुरु एक पानी ।
(478) मुन्दला मुकुल कतए मकरन्द । (44)
(479) मुनिहुक काज पलए परमाद ।
हमराहु जनु से पल अपवाद ।। (119)
(480) मूर मांगल सन कएलह सिनेह । (449)
(481) मूल राख बनिजारा । (145-180)
(482) मांगि लाएब बिन से यदि होए नित अपन करब कओन काज।
(45)
(483) भंगले कान टके नहि पाव । (101)
(484) रस सिंगार पार के पाओल अमोल मनोभव सिधा । (35)

(485) रसिकक सरवस नागरि वानि । (458)
(486) रयनि गेले दीप निरोधिअ भोजन दिवस अन्त ।
जउवन गेले जुवति पिरिति की फल पाओब कन्त ।।
(487) रतने जदि जतने गोपिअ लेअओ न जानए आन । (568)
(488) रस बुझु रसमन्ता ।
(489) रमन सूखे जञो रमनी जीव ।
मधुकर कुसुम राखि मधु पीव ।।
रतिरस रभस होएत नहि अन्त । (288)
(490) राखल चाहिअ गुपुत सिनेह । (343)
(491) रोपि न काटिअ विषहुक गाछ । (4) भ
(492) रोगि करए जइसे औषघ पान । (168)
(493) रोपि न काटिअ विषहुक गाछ ।
(494) लघु लघु संचर कुटिल कटाछ, दूअउ नयन लह यक होक लाछ ।
नयन बयन दुइ उपमा देल, एक कमल दुइ खंजन खेल (ओएह, द-9)
(495) लघु कहिनी भल कहइते आन । (372)
(496) लाभक लागि मूल डुबि गेल । (423)
(497) लाख जोजन बस चन्दा । तइअओ कुमुदिनि करय आनन्दा।
जकरा जा सभे रीति । दुरहुक दुर गेले दुगुन पिरीत। (153)
(498) लाजे न करए हृदय अनुमान । पेम अधिक लघु जानत आन ।।
(420)
(499) लाडुलि लतिका की फल काटि । (129)
(500) लाभ लाइ गेलाहु मुलहू भेल हानि ।
(501) लुबुधल नयन हटए के पावए । (264)
(502) लोभे अधिक मूल न मार, जे मुल राखए से बनिजार। (22)
(503) लोचन जुग भृंग अकारे । मधुक मातल उड़ए न पारे।(237)
(504) लोभ परिहरि सूनहि रांक ।
धके कि केओ कुइ विपाक ।।
अपने आरति न मिल आन । (293)
(505) लोभे करिअ मन्द जत काम ।

से न सफल होअ जब विहि वाम ।·(284)
बड़क बचने करिए विसवास ।। (490)
(506) रुसइते आनहु बोल अगेआन । (133)
(507) रूसल बञोसब बड़ परेआस । (461)
(508) रांकक हाथ रतन नहि सोभ ।
(509) वानर कण्ठे कि मोतिम हार । (198)
(510) वानर मुँह कि सोभय पान । (198)
(511) वास न पावए मांग उपाति,
लोभक रासि पुरुष थिक जाति । (217)
(512) वारि विलासिनी वेसनी कान्ह । मदन कउतुकिया हटल न मान। (285)
(513) वाजू राखए आँखिक लाज । (294)
(514) विद्यापति कह सुपुरुष नारि । मरन समापन प्रेम विचारि ।। (61) वि
(515) विद्यापति कह बान्धह थेह । सुपुरूष कबहु न तेजय नेह ।।
(516) विद्यापति कवि गाओल रे, धनि मन घरू धीर ।
(517) विद्यापति चिन्हिल भल मन्दा । (728)
(518) विरह विसर जञो सूतिअ निन्दा (79)
(519) विसय कुसुमसर काहु जनु लागू । (49)
(520) विसरए चाह विसरि नहि होइ ।
(521) विरह विखिन तनु भेल सरस । कुसुम सुखाय रहल अछि बरस। (170)
(522) विभव दया थिक सारा ।
माघ छाँह ककरो नहि भावए ग्रीसम प्रान पियारा ।(133)
(523) विकसम अंग न जाओत धरने । (617)
(524) विपरित अभिसार अमिय बरिस धार । (88)
(525) विरह सहाइअ नारि, विवेक के न हनिअ मार । (212)
(526) विरह वचने बाढ़ए दन्द ।
वचन कउसले जिनिअ वाद । (356)
(527) विद्यापति कह सुन्दर सेह ।
करिअ जतन फलमत हो जेह ।। (446)

(528) विधिवसे जदि हो अनुगति बाचे ।
तैअओ सुपहु नहि धर अपराधे ।। (455)
(529) विरहे विखिनि धनि किछु न भाव । (479)
(530) विरहिन नयन विहल विहि रे
अविरल बरसाव । (544)
(531) विरहक कसमसि निन्द नहि होए । (564)
(532) वैभव गेले रहत विवेक । तइसन पुरूष लाखे मह एक ।। (464)
(533) सपनेहु जनि होइ कुपुरुष संग ।
(534) सबहु मतंजग मोति नहि मानि ।
सकल कराठ नहि कोइल बानि ।। (669)
(535) सकल काज हम बुझल बुझाएल,
न बुझल अन्तर नारि ।
(536) सकल कंठे नहि कोकिल वानि । (95)
(537) सकल पुरुष नारि नहि गुनमन्त । (95)
(538) सकल समय नहि रितु वसंत । (137)
(539) सगरा जगत सबकु कांए सुनिअ,
घरनिक बोल नहि टारे । (518)
(540) सब फुल मधु मधुर नहि । (97)
(541) सब सो बड़ थिक आँखिक लाज । (151)
(542) सब तह गनिअ अधिक वेबहार । (441)
(543) सब परदेसिआ एके सोभाव । (718)
(544) समयक दोषे आगि बम पानि । (350)
(545) समय गेले मेघे बरिसब,
कीदहु तेँ जलधार । (644)
(546) समय नहि बुझत अचतुर चोर । (26)
(547) सहजहि आनन सुन्दर रे भउँह सुरेखलि आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे उड़ए पसारे पांखि । (38)
(548) सहजहि कामिनि कुटिल सिनेहा (52)
आस पसाह बाँक ससि रेह ।
(549) समयक बसे नहि नब अनुराग । (124)
(550) सब रस लागि पिअ हिअ अराहिअ बइरस वास न करिआ

(139)
(551) सहसे रमनि रयनि विपथु भोराहु तन्हिकेँ आस ।
जउवन जीवन बड़ निरापन गेल पलटि न आव ।। (161)
(552) सरसिज विनु सर, सर विनु सरसिज, की सरसिज विनु सूरे।
जौवन विनु तन, तन विनु जौवन, की जौवन पिय दूरे ।। (163)
(553) सगर संसारक सारे ।
अछए सुरत रस हमर पसारे ।। (346)
(554) सखिहे मन्द पेम परिनामा । (399)
(555) सखिजने आंचरे धइलि झपाइ । अपनहि सांसे अपनि उड़िजाइ। (555)
(556) सखि हे कि पूछसि अनुभव मोय ।
सोइ पिरीति अनुराग बखानइत जे तिलतिल नूतन होय ।। (768)
(557) सब फुल परिमल सब मकरन्द । अनुभव बिनु न बुझिए भलमन्द ।।
वैभव गेले भलाहु मन्दि भास । पराभव पर उपहास (461)
(558) सब तह बड़ थिक पर उपकार ।। (49)
(559) सबहि सुन्दरि साहस सार ।
तोहि तेजि के करए पार ।।
(560) समय बुझ सयान । (161)
(561) सहए के पार काम घरहार । (344)
(562) समयक दोसे आगि बम पानि ।
भल जन हृदय तेजए नहि मन्द ।। (386)
(563) सबहि कुसुम मधुपान भमर कर । (426)
(564) सब तह गनिअ अधिक वेवहार ।
देहरि न होअए हाथे झपाए । (444)
(565) सबहि साजनि धैरज सार । (524)
(566) सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआय ।। (545)
(567) सहजहि संकट परवस पेम ।
पातक भीत परापति जेम । (549)

(568) साजनि ताक जिवन थिक सार, जे मन दए कर पर उपकार। (36)
(569) साहस न करिअ संसय ठाम । (168)
(570) साहसे साहिअ असाधे । (242)
(571) साजनि सुजन जन सिनेह ।
कि दिय अजर कनक उपज कि दिय पसान रेह ।।
ओ जदि अनल आनि पजारिय तइयो न होय विराम ।
इ जदि असि कसि कइ काटिय तइयो न तेजए ठाम ।।(435)
(572) सागर सार चोराओल चन्द ता लागि राहु करए बड़ दन्द। (310)
(573) सागर कओने पएवह थाहि । (58)
(574) साधु न फाबए चोरि । (113)
(575) साजनि ताक जिवन थिक सार ।
जे मन दए कर पर उपकार ।।
बड़ अनुरोध बड़े पए राख । (266)
(576) सिआर काँ जओ सींग जनमए,
गिरि उपारए चाह ।
(577) शिथिल बिलम्बे होएत हास । (240)
(578) सीत समापले वसन पाइअ,
तेँ दहु की उपकार । (644)
(578) सुरपति पाए लोचन मांगओ गरूड़ माँगओ पाँखि,
नन्दक नन्दन हो देखि आबओं मन मनोरथ राखि । (17)
(579) सुन्दरि चलु अभिसार, रस सिंगार संसारक सार । (88) अ.
(580) सुजनक प्रेम हेम सम तूल,
दहइत कनक दिगुन होए मूल । (95)
(581) सुपुरुष कबहु न तेजह नेह । (647)
(582) सुपुरुष कबहु न होयत नदाने । (37)
(583) सुपुरुष प्रेम कबहु नहि छाड़ । (106)
(584) सुपुरुष बचन पखानक रेह । (239)
(585) सुपुरुष विलसय से वरनारि । (8)
(586) सुहित वचन न राअब हिअ आनि । (129)

(587) सुपुरुष वचन सबहु विधि पूर । (150)
(588) सुपुरुष पेम सघनि अनुराग । दिने दिने बाढ़ अधिक दिन लाग । (7)
(589) सुरत रस खन एके पारिअ जाव जीव रह गारि । (254)
(590) सुनि सुन्दरि नव मदन पसार । जनि गोपह आओव वनिजार। (273)
करब दरस रस राखव गोए । धयले रतन अधिक मूल होए।।
(591) सुरत रस सुचेतन बालमु ता परि सवे असार । (338)
(592) सुपुरुष पेम हेम अनुमानि । मन्दा कालहि मन्दे हानि ।। (411)
(593) सुपहु सुनारि सिनेह । चाँद कुसुम सम रेह ।। (431)
पुने मिले पिआ गुणमान ।
(594) सुपुरुष सिनेह अन्त नहि होए । (471)
(595) सुघटेओ विहि विघटावे । बाँक विधाता की न करावे ।। (153)
(596) सुन्दरि नहि मनोरथ ओल ।
अपन वेदन जाहि निवेदिअ, तइसन मेदिनि घोल ।। (510)
(597) सुरतरु तर सुखे जनम गमाओल धधुरा तर निरवाहे ।
अपन करम अपने पए भुंजिअ जओ जन्मान्तर होई ।। (530)
(598) सुकवि भनथि कणठहार ।
के सह काम परहार । (157)
(599) सुनिअ सुजन नामे अवधि न चुकए ठामे ।
(600) सुजन वचन खोटि न लाग । (412)
(601) सुपुरुख न कर निदान रे । (522)
(602) सुदिने पलटए भाग ।
(603) से अलि नागर तो तस तूल,
एक नले गांथ दुइ जन फूल । (80)
(604) से नहि विचल जकर जे जाति । (512)
(605) सेहे अइसनी नारि पिअगुन परचारि बेकतओ दोष नुकाबे ।
निसि-निसि कुमुदिनी ससधर पेम विमि अधिक अधिक रस पाबे । (125)
(606) से अति नागर तौयँ तसु तूल । एक नले गाँथ दइ जनि फूल। (264)

(607) सेसे करत जकर जे जाति । (495)
(608) सैसव से तनु छोड़ नहि पार ।
(609) सोनाक तुरना काग कि नाग । (28)
(610) सोइ पिरिति अनुराग बखानिअ तिल-तिल नूतन होए। (21) पृ.
(611) सांकर खाइते भांगए दांत । (481)
(612) संकेत आइति तेजए के पार । (300)
(613) हरिनि जानए भल कुटुम्ब विबाध । तबहु व्याधक गीत सुनइक साध।
भनइ विद्यापति सुन बर नारि । जानि पीबि कि हो जाति बिचारि। 31 म.
(614) हठ कएले पहु हो रस भंग ।
(615) हठ नहि करबे आइति पाए । (146)
(616) हठे कि होइए समुद पार । (319)
(617) हम तह के विषहु आगर,
ढोढ़हु काँ थिक भान । (216)
(618) हम नहि बुझिअ रस तीत की मीठ । (165)
(619) हरखे सबए सोहाए । (304)
(620) हठ जो करवह सिनेहक ओर ।
फूटल फटिक बलअ के जोर ।। (396)
(621) हेम हरदि कर बीच रे । गुनहि बुझिअ ऊँच नीच रे ।। (465)
(622) हठें जे जखने करम करिअ भल नहि परबाक । (256)
(623) हठ नहि करबे आइति पाए ।
(624) हरिणी जानय भल कुटुम्ब विवाह
तबहुँ व्याधक गीत सुनइत करू साध ।।
पानिपियै किअ जाति विचारि । (646)
(625) हाथक कांगन अरसी काज (444)
(626) हाथ महते नव के नहि जान ।
(627) हाथे न भेट पखानक रेह ।।
(628) हाथक दरपन माथक फूल । नयनक अंजन मुखक बूल ।।
हृदयक मृगमद गीतक हार । देहक सरबस गेहक सार ।।
पाखिक पाख मीनक पानि । जीवन जौवन हम तुहुँ जान (710)

(629) हाथिक दसन पुरुष वचन कठिने बाहर होय । (568)

(630) हाथक रतन तेजह कोई । (462)

(631) हीरा मनि मानिक एको नहि मांगव, फेरि मांगव पहु तोरा।
पहु संग कामिनि बहुत सोहागिनि चन्द, निकट जइसे तारा ।।
(503)

(632) हृदय सरिस जन न देखिअ जति खन
तति खन सयर अंधार ।। (393)

(633) हृदयक कपटी वचने पिआर,
अपने रसे उकट (फटए) कुसिआर

(उपर्युक्त सभ पद 'वि.वि.म'क विद्यापति पदावली' सँ उद्धृत)

निष्कर्ष :

(1) विद्यापति संस्कृत साहित्यक निष्णात पंडित छलाह । ओ संस्कृत विद्वानक परम्परा सँ अनुप्रेरित भऽ संस्कृत साहित्यक गहन अध्ययन कयलनि एवं संस्कृत मे विविध ग्रंथक रचनाकऽ अपन व्यापक पांडित्यक परिचय देलनि । अपभ्रंश, अवहट्ठ तथा अपन मातृ-भाषा मैथिली पर सेहो हुनका असाधारण अधिकार छलन्हि ।

(2) विद्यापतिक पदावली पर संस्कृत काव्य परम्परा तथा काव्यशास्त्रक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ । हुनक काव्य पर ज्योतिरीश्वर कृत 'वर्णरत्नाकर'क स्पष्ट प्रभाव सेहो देखना जाइछ ।

(3) 'पदावली' कोनो लक्षण ग्रंथ नहि, मुक्तक काव्य थिक । परंच पदावलीक पद सभक सम्यक् अध्ययन कयला सन्ता ई भासित होइछ जे विद्यापति श्रृंगार रस, नायिका-भेद, अलंकार आदि काव्यांग सभक लक्षण ध्यान मे राखि अनेक पदक रचना कयने छथि ।

(4) विद्यापति मूलतः प्रेम आ सौन्दर्यक कवि छथि, यौवन आ विलासक उद्गाता छथि । ओना विद्यापतिक काव्य मे वीर, शांत, करुण, भक्ति आदि रसक अभिधान सेहो भेल अछि, मुदा प्रधानता श्रृंगार रसहिक अछि । श्रृंगारक दुनू पक्ष-संयोग एवं वियोगक जेहन अभिनव चित्र हिनक गीतिपद सभ मे अंकित अछि तेहन अन्यत्र दुर्लभ अछि । हुनक रसमय वाणी मे नैसर्गिक माधुर्य एवं संगीतक मूर्छना अछि । ओ वाणीक अपूर्व शिल्पी, संगीतक पुरोधा एवं काव्य-कलाक जौहरी छथि। हुनक प्रत्येक गीतिपद मे रसक पारावार तरंगायित अछि ।

(5) विद्यापति ने अलंकारवादी कवि छलाह, ने चमत्कार-प्रदर्शन करब हुनक लक्ष्य छल, तथापि हुनक काव्य मे सर्वत्र आलंकारिक सौन्दर्य-छटा उपलब्ध अछि । यद्यपि ओ उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक, अतिशयोक्ति, यथासंख्य, प्रतीप, विषय, अत्युक्ति, विरोधाभास, व्यतिरेक, अर्थान्तरन्यास, सन्देह आदि अनेक अलंकारक सुघर प्रयोग अपन गीतिपद सभमे कयने छथि, परंच उपमा, उत्प्रेक्षा एवं रूपकक प्रयोग प्रमुख अछि ।

(6) विद्यापतिक अलंकार-विधानक सभसँ पैघ विशेषता अछि हुनक मौलिकता । सौन्दर्य-वर्णन मे ई अपेक्षितो रहैछ, कारण ओतए अप्रस्तुहिक द्वारा सौन्दर्यक स्पष्ट चित्र अंकित कएल जाइछ । विद्यापति सौन्दर्यक सूक्ष्म स्पष्ट चित्र अंकित करबाक लेल नव दृश्य-विधान तथा अप्रस्तुतक प्रयोग कयलन्हि अछि ।

(7) काव्य-शास्त्रक अनुसारेँ जाहि लावण्यमुखी, सुषमासम्पन्न, आकर्षक, सुकुमारि युवती केँ देखि हृदयमे श्रृंगार रसक संचार होइछ, ओकरा नायिका कहल जाइछ । मनोविज्ञानक आधार पर अवस्था, दशा आ प्रेम-स्तर पर स्त्रीगणक स्वभाव, अवस्था, स्थिति आदिक अनुसारेँ नायिकाक अनेक भेद-उपभेद कयल गेल अछि । विद्यापतिक पदावली मे मुग्धा सँ प्रगल्भा धरि तथा वासकसज्जा सँ प्रोषितपतिका धरि विभिन्न श्रेणीक नायिका सभक चित्र उपलब्ध अछि ।

(8) जाहि प्रकारेँ विद्यापति अलंकार द्वारा अपन काव्य मे सौन्दर्यक सृष्टि कयलनि अछि, तहिना उक्ति आ वाग्वैदग्ध्य सेहो हुनक काव्य केँ सौन्दर्य प्रदान करबा मे सहायक सिद्ध भेल अछि । हुनक काव्य मे एहि प्रकारक अनेक उक्ति प्राप्त अछि जकरा द्वारा हुनक काव्य सौन्दर्य- मंडित भऽ उठल अछि । दूती आ सखीक सम्भाषण मे वाग्विलासक मनोहारी पंक्ति सभक नियोजन भेल अछि ।

(9) प्रतीकवाद सांकेतिक अभिव्यंजना शैलीक प्रमुख अंग थिक । प्रतीक-पद्धति मे समष्टिक साम्य सेहो अभिव्यक्त होइछ आ पृथक-पृथक वस्तु, व्यापार, धर्मक साम्य सेहो । प्रतीकक चुनाव आ प्रयोग मे धर्म-सादृश्य राखब अपेक्षित होइछ । विद्यापति अपन श्रृंगार वर्णनक अन्तर्गत विविध भाव केँ प्रकाशित करबाक लेल प्रतीक-पद्धतिक प्रयोग कयने छथि ।

(10) कवि अपन सजग आ सूक्ष्म कल्पना द्वारा विशेष पदार्थ केँ एहि रूपेँ प्रस्तुत करैछ जे अभिलषित चित्र अंकित भऽ जाइछ । ओ निश्चित

भावाभिव्यंजक शब्द द्वारा अपन अनुभूतिकेँ एहि रूपेँ प्रकाशित करैछ जे भाव विशेषक बिम्ब सहजहि प्रत्यक्ष भऽ उठैछ । यैह बिम्बात्मकता काव्य-शिल्पक सभ सँ महत्वपूर्ण धर्म थिक । विद्यापतिक काव्य मे ई बिम्बात्मकता दू रूपमे प्राप्त होइछ - रूप चित्रण एवं भाव-बिम्बन । रूप-चित्रणा मे वातावरण आ स्त्री-पुरुषक चित्र अबैछ तथा भाव-बिम्बन मे भाव सभक (अनुभूति सभक) भावना, कामना, मनोविकार, प्रवृत्ति आदिक चित्र ।

(11) मुख्य अर्थक अपेक्षा व्यंग्य (प्रतीयमान) अर्थ प्रधान काव्य केँ, ध्वनि काव्य कहल जाइछ । जतए अर्थ वा शब्द अपन अभिप्रायक प्रधानता केँ परित्याग कए जाहि कोनो विशेष अर्थ केँ अभिव्यक्त करैछ, ओकरा ध्वनि कहल जाइछ । ध्वनि दू प्रकारक होइछ - अविवक्षित वाच्य किंवा लक्षणामूला ध्वनि तथा विवक्षितान्य परवाच्य किंवा अभिधामूला ध्वनि । विद्यापति यद्यपि काव्यशास्त्रीय समीक्षा विषयक कोनो ग्रंथक सर्जना नहि कयलनि, तथापि हुनक गीति पद सभमे ध्वनिक प्राय: सभ रूपक दर्शन होइत अछि ।

(12) अन्योक्तिवाद, प्रतीकवादहिक एक रूप थिक । अन्योक्ति द्वारा अभिलषित प्रसंग किंवा व्यापार-समष्टि अथवा पूर्ण प्रसंगक साम्य देखाओल जाइछ । अन्योक्ति मे रूप-साम्यक अभाव किएक ने हो, मुदा व्यापार-साम्य आ गुण साम्य केँ रहले उत्तर अन्योक्ति सार्थक होइछ । जीवन-व्यवहार मे एकर उपयोग बेस पाओल जाइछ । विद्यापतिक गीतिपद सभमे एक सँ एक अन्योक्तिक प्रयोग कयल गेल अछि । विद्यापतिक अन्योक्ति मे श्रृंगार-भावनाक बाहुल्यक संग-संग आध्यात्मिक संकेत सेहो उपलब्ध होइछ ।

(13) 'दृष्टं कूटं यस्मिन् तत् पदं दृष्टकूटम्' । 'दृष्टकूट' शब्दक निरुक्ति कयला सँ ई स्पष्ट होइछ जे दृष्टकूट ओ काव्य थिक जाहि मे शब्द आ अर्थक दृश्य एवं क्लिष्टता दृष्टिगोचर हो, अर्थात् जाहि मे दुरूहताक संग-संग भाषाक कलात्मक विधान हो, ओ दृष्टकूट' थिक । विद्यापतिक युग मे राजदरबार सभमे पाण्डित्य-प्रदर्शनमे स्पर्द्धाक अभाव नहि छल । एहि स्पर्द्धा मे विद्यापति सेहो अपन विजयपताका फहरयबाक लेल अनेक दृष्टिकूटक रचना कयलनि, जे हुनक तत्कालीन साहित्यिक विजयक स्मृति-चिह्न अछि । विद्यापतिक कूट पद सभक विषय अछि राधाक सौन्दर्य आ हुनक प्रेम-विरह-जन्य कार्य-व्यापार ।

(14) कहावत जनसामान्यक उक्ति होइछ । लोक ओकरा अपन मानैत अछि, तेँ ओ लोकोक्ति कहबैत अछि । विद्वानलोकनि कहावत केँ अनेक रूपमे परिभाषित कयने छथि, किन्तु वास्तविकता ई थिक जे कोनो उक्ति कतबहु प्रकारक गुण सँ किएक ने सम्पन्न हो, जा धरि ओहि मे लोकक उक्ति नहि रहतैक, ताधरि ओकरा लोकोक्ति नहि कहल जा सकैछ । विद्यापतिक कविता मे भाव-वैशिष्ट्यक अतिरिक्त एक सबल पक्ष थिक लोकोक्तिक सफल प्रयोग जे हुनक ख्यातिक कारण बनल अछि । जेना तुलसीक चौपाई तथा सूक्ति उत्तर प्रदेश मे कहावतक रूपमे प्रयुक्त होइछ, तहिना विद्यापतिक पंक्ति सभ बिहारक दैनिक जीवनक चिरसंगिनी बनि गेल अछि । हुनक लोकोक्ति सभ कोनो भाव वा कथनक उत्कर्षक लेल, रस-वृद्धि वा अभिव्यंजना केँ सबल आ प्रमाण-पुष्ट करबाक लेल प्रयुक्त भेल अछि । जीवनक प्राय: सभ पक्षक गहन अध्येता होयबाक कारणेँ विद्यापति अपन पदावली मे विभिन्न विषयक लोकोक्तिक प्रयोग कयने छथि जकर संख्या छओ सय धरि अछि । एहि लोकोक्ति सभक जन्मदाता आइ हमरा सभक बीच नहि छथि, मुदा हुनका सँ उद्भूत अमर वाक्य सभ काल-समुद्रक तरंग पर अमिट भऽ आइयो नृत्य कऽ रहल अछि । वस्तुत: हुनक लोकोक्ति सभ जन-समुद्र मे छिड़िआयल रत्न थिक जे जीवनक प्रत्यक्ष यथार्थ सँ उद्भूत अछि ।

संदर्भ

1. वर्णरत्नाकर - ज्योतिरीश्वर, सं. डा. सुनीति कुमार चटर्जी एवं बबुआ जी मिश्र, एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल, प्रथम संस्करण - 1940
2. तत्रैव
3. रतिमनोनुकूलयै मन: पुवर्णायतम् । साहित्य दर्पण : विश्वनाथ
4. कीर्तिलता, विद्यापति, सं. बाबूराम सक्सेना, पृ.-64-68
5. विद्यापति : युग और साहित्य, डा. अरविन्द नारायण सिन्हा, पृ.-149
6. हिन्दी काव्य मे श्रृंगार-परम्परा और बिहारी, डा. गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.-157
7. पुरुष परीक्षा, भूमिका, पं. रमानाथ झा, पृ.-58
8. 1. उत्प्रेक्षाक कतिपय अन्य उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) सुन्दर वदन सिन्दुर विन्दु सामर चिकुर भार ।
जनि रवि ससि संगहि ऊगल पाछु कए अंधकार ।।

(2) धनि अलप वयस वाला । जनि गाँथलि पुहुप माला ।।

(3) कुच जुग ऊपर चिकुर फुजि पसरल ता अरुझाएल हारा ।।
जनि सुमेरू ऊपर मिलि उगल चाँद विहिन सब तारा ।
(4) कनक लता अरविन्दा दमना माँझ उगल जनि चन्दा ।
(5) भउहक कथा पूछह जनू । मदन जोड़ल काजर-धनू ।
(6) चिकुर गरए जलधारा । मेह बरिस जनु मोतिन हारा ।।
(7) वदन पोछल परचूरे । माजि धएल जनि कनक मुकूरे ।।
(8) आवर परसि पयोधर हेरू । जनम पंगु जनि भेटल सुमेरू ।।
(9) सजल चीर रह पयोधर सीमा । कनक-वेल जनि पड़ि गेल हीमा।।
(10) सुरत समापि सुतल बर नागर, पानि पयोधर आपी ।
कनक संभु जनि पूजि पुजारी, धरए सरोरुह झापी ।।
(11) कर जुग पीहित पयोधर अंचल चंचल देखि चित भेला ।
हेम कमल जनि अरुनित चंचल मिहिर तरे निन्द गेला ।।
(12) केस निंगारइत बह जलधारा । चामर गरिए जनि मोतिम हारा ।।
(13) अलकहि तीतल तेँ अति सोभा । अलिकुल कमल बेढ़ल मधु लोभा।।
(14) कुचजुग चारु चकेबा । निज कुल मिलिअ आनि कोन देवा ।
(15) गिरिवर गरुअ पयोधर परसित गिम गजमोतिम हारा ।
काम कम्बु भरि कनक सम्भु परि ढारत सुरसरि धारा ।।

9. उपमाक किछु आर उदाहरण द्रष्टव्य अछि -
1. दुहु दिसि दारु दहन जइसे दगधइ, आकुल कीट परान ।
ऐसन बल्लभ हेरि सुधामुखि, कवि विद्यापति भान ।।
2. तातल सैकत वारि-विन्दु सम, सुत मित रमनि समाजे ।
तोहे विसारि मन तोह समरपल, अब मझे होब कोन काजे ।।
3. जइसे जगमग नलिनिक नीर । तइसे डगमग धनिक शरीर ।।
4. पुनमिक इन्दु निन्दि मुख सुन्दर से ससि खेल अब रेहा ।
कलेवर कमल कांति जिनि कामिनि दिने खीन भेल देहा ।।

10. बंग भाषा ओ साहित्य-डा. दिनेश चन्द्र सेन, पृष्ठ संख्या-145
11. श्रृंगार मंजरी, भूमिका - वी. राघवन्, पृ.-16-17
त्रिविधा : प्रकृतिः स्त्रीगणां नाना सत्यसमुद्भवा ।
बाह्या चाभ्यंतरा ज्ञेया बाह्या वैश्यांगना कृते ।
कृतशौचा च या नारी सा बाह्याभ्यंतरा स्मृता ।।
12. काव्यमाला, तृतीय गुच्छक, 1/88, पृ. 130
13. श्रृंगार तिलकम् - रुद्र भट्ट ।
स्वकीया परकीया च सामान्य वनिता तथा ।
कलाकलापकुशलस्तिसः तस्येह नायिका ।। - 1/33 श्रृंगार तिलकम्

14. मुग्धा मध्या प्रगल्भा च स्वकीया त्रिविधा मता ।। 1/34 तत्रैव
मुग्धा नववधूस्तत्र नवयौवन भूषिता
नवानंगरहस्यापि लज्जाप्राप्तरतिर्यथा ।। 1/35
- काव्य माला, तृतीय गुच्छक, पृ.-110
15. काव्यमाला, तृतीय गुच्छक, पृ.-118-121-39-45
16. विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, 3-56-60
17. अन्यदीया द्विधाप्रोक्ता कन्यौढ़ाचेतिते प्रिये
दर्शनाच्श्रवणाद्वापि कामात्ते भवतो यथा -
- काव्यमाला, तृतीय गुच्छक, 1/50, पृ. 122
18. विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, 3/66-67
19. काव्य माला, तृतीय गुच्छक, 1-61-68, पृ. 126-127
20. कीर्तिलता, पृ.-39 (स. शिव प्रसाद सिंह)
21. (क) वर्णरत्नाकर, पृ.-26
(ख) मअवं घणाधीणो-(क्खू) अर्थ जणो त्रात्किं (1 रच अंचणोताकि)
एत्थ अरुण्णरुदिअं कदुअ अप्पाणअं बिलम्बेसि' - धूर्तसमागम, पृ.-14
22. काव्यमाला, तृतीय गुच्छ, 1-72-82, पृ. 127-29
स्वाधीन पतिकोत्का च तथा वासकसज्जिका ।
संधिता विप्रलब्धा च खण्डिता चाभिसारिका ।।
प्रोषितप्रेयसी चैव नायिका : पूर्व सूचिताः ।
ता एवात्र भवन्यष्ठाववस्थाभिः पुनर्यथा ।। ओएह, पृ.-127
23. प्रियागमनवेलायां मण्डयन्ती मुहुर्मुहुः केली गृहमथात्मानं सा
स्याद्वासकसज्का - प्रतापरुद्रीय यशोभूषण- 1/44
विद्यापति - 'कुसमे रचित सेजा दीप रहल तेजा परिमल अगर चन्दने ।
जबै जबै तुअ मोरा निफल बरूलि वेश तवे तवे पीडलि मदने।
माधव तोरि राही वासकसज्जा । मि.म., 358, पृ.-253
24. मि. म., 345, 112
25. मि. म., पद सं.-360-62, 370, 373-74 आदि
26. दश रूपक ।। - 25
27. कोपोत्पत्ति समये खण्डिताः सैवमानं कुर्व्वती चैन्मानवती ।
- श्रृंगारमंजरी, पृ.-23
28. यत्र स्नेहो भयं तत्र यत्रैर्ष्या मदनस्ततः । चतस्रो यो नयस्तस्या
कीर्त्यन्तेता निबोधता । वैमनस्यं व्यलीकं च विप्रियं मन्युरेव च ।
एषेतां संप्रद-यामि लक्षणानि यथाक्रमम् ।। - भारतीयम्

29. मि. म., 359, 376, 77, 78, 79, 80, 81, 82 आदि ।
30. मि. म., 104-7, 322-27, 331-34, 335-40 आदि ।
31. विद्यापति: युग और साहित्य, डा. अरविन्द नारायण सिन्हा, पृ.-111
32. वि.रा.मा.प. - 240 ।
रयनि काजर बम भीम भुअंगम कुलिस पलए दुरवार ।
गरज तरज मन रोसे बरिस घन संशय पलु अभिसार ।।
33. मि. म., 642 । कृष्णाभिसारिकाक एकटा अन्य उदाहरण -
चरण नूपुर ऊपर सारी । मुख पेखल करे निवारी ।।
अम्बरे सामर देत झपाई । चललि तिमिर पंथ समाई ।। - मि.म.- 325
34. मि.म. 641 । शुक्लाभिसारिकाक एकटा अन्य उदाहरण -
सखि हे आज जायब मोही ।
घर गुरजन डर न मानब वचन चुकब नाही ।
चाँदने आनि आनि अंग लेपब, भूषन कय गजमोती ।
अंजन बिहुन लोचन जुगल धरत धवल जोती । - मि.म.- 95
35. मि.म.- 332
36. मि.म.- 156
37. मि.म.-173-78, 180, 184, 186-89, 145, 146, 158-66, 415, 510-16, 52-60, 719-762
38. मि.म. - 'मोर पिया सखि गेल दुर देस....... ।
39. मि.म. - 550
40. मि.म. - 41-41, 362, 453, 448
41. ओएह 362, 336, 67, 68, 370, 374, 380
42. ओएह 40-41, 362, 453, 448 आदि ।
43. अण्ण महिला प्रसंग दे दैव करेसु अम्ह दइअस्स ।
पुरिसा एकान्त रसा ण हु दोषगुणे बिआणन्ति ।।
(हे देव, हमरा प्रियतमक लेल दोसर महिलाक प्रसक्तिक विधान कयल जाओ, नहि तँ ओ एक रसास्वादी भऽ जयताह तथा गुण-दोषक विशेष भाव कें नहि बुझि सकताह ।) - गाथा सप्तशती 1/48
44. मि.म. 113-16, 385, 411, 477, 646
45. विद्यापतिक खण्डिता नायिकाक एकटा आर उदाहरण -
नयन काजर अधरे चोराओल नयने चोराओल रागे ।
बदन बसन लुकाओब कति खन तिला एक कैतव लागे ।
माधव कि आबे बोलअब अस ताहे ।

जाहि रमणी संगे रयनि गमौलह ततहि पलटि पुनु जाहे ।
46. मि.म. 28, 345-46
कलहान्तरिताक एकटा अन्य उदाहरण द्रष्टव्य अछि -
आजु परल मोहि कोन अपराधे,
किए हेरिअ हरि लोचन आधे ।
आन दिन गहि लाविय गेहा,
बहु विधि वचन बुझाएव नेहा ।। - मि.म. 468
मि.म. क 379, 388, 409, 427, 443, 467 कलहान्तरिताक लेल द्रष्टव्य।
47. 'उपमानोपमेय वाक्येषु एव क्रिया दीपकम्' - वामन
48. 'दृष्टोन्तः निश्चयो यत्र स दृष्टान्तः ।' - मम्मट ।
49. आनन्दवर्धन, ध्वन्यालोक, तृतीय उद्योत ।
50. बेनीपुरी : विद्यापति, पद-14
51. ओएह, पद-15
52. ओएह, पद-22
अ.- बेनीपुरी, विद्यापति पद - 29, 44, 51, 62, 70, 74, 78, 97, 121, 131, 161, 169, 171 ।
53. बेनीपुरी, विद्यापति, पद-12
54. बेनीपुरी, विद्यापति, पद-42
55. विद्यापति, मित्र एवं मजुमदार, पृष्ठ 263
56. ओएह, पृष्ठ - 317
57. विद्यापति, मित्र एवं मजुमदार, पृष्ठ 39
हरि-(1) चन्द्रमा (2) कमल (3) कृष्ण (4) चन्द्रमा (5) कृष्ण (6) जल, (7) कमल (8) कृष्ण-कृष्ण (9) आकाश (10) मृग (11) मोर (12) आकाश (13) वायु वा श्वास (14) सर्प (15) कोकिल-पपीहा (16) जल (17) बादल (18) पर्वत, (19) कृष्ण (20) कृष्ण ।
58. प्रवादः सत्य एवायं त्वां प्रति प्रायशो नृप ।
पतिव्रतानां नाकस्मात्पत्पतन्त्यश्रूणि भूतले । - वाल्मीकि रामायण-114/67
लोक प्रवातः सत्यो यं पंडितैः समुदाहृतः ।।
अकाले दुर्लभो मृत्युः स्त्रिया वा पुरुषस्य वा ।। 5/25/12
कल्याणीबत गाथेयं लौकिकी प्रतिभाति मे ।।
एति जीवन्तमानन्दो नरं वर्षशतादपि ।। 6/129/2
59. अहं जे णिउणिए सुणामि बहुमो मदो किल इत्थि आजणस्स बिसेण मंडणंति।
अवि सच्चो एसो लोअवाओ । - मालविकाग्निमित्र - तृतीय अंक ।

निपुणिका-हम बड़ सुनल करैछ जे मदिरापान कयला पर स्त्रीगण सभ बड़ सुन्नरि लागय लगैछ । ई 'लोकवाद' की सांच थिक ?

60. रहिमन वे नर मर चुके, जे कहिं माँगन जाहिं ।
उनते पहिले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहि ।।

– रहिमन विलास, पृ.-24

61. मि.म. – पृ. 201
62. पुरूष परीक्षा, सं. पं. चन्द्रकान्त पाठक,
सं. पं. रमानाथ झा, पृष्ठ-191
63. ओएह, 36/4, पृष्ठ-200
64. ओएह, 37/4, पृष्ठ-203
65. गोरक्षविजय, सं. डा. उमेश मिश्र, डा. जयकान्त मिश्र, पृ.-7 (क)
66. गोरक्षविजय, सं. डा. उमेश मिश्र, डा. जयकानत मिश्र, पृ.-7 (ख)
67. ओएह, पृष्ठ 11 (ग)

●

षष्ठ अध्याय

शृंगारक उन्मुक्त गायक विद्यापति

षष्ठ अध्याय

श्रृंगारक उन्मुक्त गायक विद्यापति

(क) काव्यमे श्रृंगारक महत्व :

साहित्य-दर्पणकार श्रृंगारक व्याख्या करैत लिखलन्हि अछि जे कामदेवक उद्भेदकेँ श्रृंगार कहल जाइछ आ एकर आगमनक लेल उत्तम-प्रकृति-प्रायः रसकेँ श्रृंगार कहल जाइछ । परस्त्री तथा अनुरागशून्य वेश्याकेँ छोड़िकऽ अन्य नायिकासभ तथा दक्षिण आदि नायक एहि रसक आलंबन विभाव मानल जाइछ । चन्द्रमा, चन्दन, भ्रमर आदि एकर उद्दीपन विभाव होइछ । अनुरागपूर्ण भृकुटि-भंग आ कटाक्ष आदि एकर अनुभाव होइछ । उग्रता, मरण, आलस्य आ जुगुप्साकेँ छोड़ि अन्य निर्वेदादि एकर संचारी भाव होइछ ।[1] श्रृंगारक प्रस्तुत व्याख्या प्रायः सर्वमान्य अछि ।

मुदा मन्मथोद्भेद वा कामोद्दीपनक सामान्य अर्थमे लऽ कऽ एक प्रश्न उठैछ जे की श्रृंगार रस कामोद्दीपन मात्र थिक ? भरत बहुत पूर्वहि श्रृंगारक महत्व प्रतिपादित करैत लिखने छथि जे 'यत्किंचिल्लोके शुचिर्मेध्यमुज्जवलं दर्शनीयं वा तच्छृङ्गारेणोपमीयते' अर्थात् जे किछु उत्तम, पवित्र, उज्ज्वल आ दर्शनीय अछि, ओकरहि नाम श्रृंगार थिक । मन्मथोद्भेद केँ उत्तम, पवित्र, शुचि आदि नहि मानब भारतीय परम्पराक विरुद्ध अछि । सर विलियम जोन्स सदृश पाश्चात्य विद्वानक कथन छनि जे भारतीय शास्त्रकारलोकनि कोनो प्राकृतिक धर्मकेँ गर्हित नहि कहलन्हि अछि । एहि प्रकारक विशेषतासभसँ हुनक समस्त रचना अलंकृत अछि आ ओकरा कहियो अनैतिक नहि मानल गेल ।[2] साहित्यदर्पणकार कामोद्रेककेँ भारतीय परंपराक अनुकूल अर्थमे ग्रहीत कयने छथि । ओ परस्त्री आ अनुरागशून्य वेश्याकेँ एकर आलंबन नहि मानि मर्यादित सेहो कयने छथि । नायिकाक परपुरुषमे अनुरक्ति रसाभास मानल गेल, कारण एहिसँ सामाजिक औचित्यक उल्लंघन होइछ । एही प्रकारेँ मुनि, गुरु-पत्नी गत रति, बहुनायक विषयरति, अनुभयनिष्ठ रति, प्रतिनायकनिष्ठ रति, अधमपात्र आ तिर्यग्योनिगत रति अनौचित्यक परिधिमे अबैछ ।

अभिनवगुप्तपादाचार्यक मतसँ ओ एकनिष्ठ रतियो, जे आगाँ चलि कऽ उभयनिष्ठ भऽ जाइछ, रसाभासक अन्तर्गत अबैछ ।

श्रृंगारक उपर्युक्त व्याख्यामे आभिजात्यक जे गन्ध अबैछ तकर कारण ई अछि जे अधम जन वा अनुचित सामाजिक सम्बन्धक प्रवर्तकलोकनिक संग सहृदय सामाजिक अपन साधारणीकरण नहि कऽ सकैछ, जे भारतीय रस-सिद्धान्तक पहिल शर्त थिक । ई श्रृंगार भाव उत्तम प्रकृतिक व्यक्तियेक (अभिजात वर्ग) आस्वाद्य थिक । तेँ एकरा अनित्य आ क्वचित् कहल गेल अछि । नीच जातिक (जकरा विश्वनाथ अधम पात्रक संज्ञा देलन्हि अछि) रति केँ श्रृंगारसँ वहिष्कृत करब समाज-शास्त्रीय दृष्टिसँ ओकर जीवनक अस्पृश्यतामूलक प्रवृत्तिक सूचक सेहो थिक । नायक-नायिकाक वर्गीकरण सेहो उच्चवर्गीय मनोवृत्तियेक परिचय दैछ ।

प्रेमक क्षेत्रमे एहि प्रकारक विधि-निषेध नहि अछि । ओकर मूलमे सेहो 'मनोनकूलेष्वर्थेषु सुख संवेदनम्' रतिये अछि जे फ्रायडक लिविडो अर्थात् कामक मूल प्रेरक तत्व अछि । एकर व्यापक सीमामे श्रृंगारक प्रवेश भऽ जाइछ । श्रृंगारक 'टाइप' उभयनिष्ठ प्रेम, सेहो प्रेमे अछि । भील-भीलिनीक प्रेम आ राजकुमार तथा राजकुमारीक प्रेम मे कोनो तात्विक अन्तर नहि । अन्य नायकनिष्ठ रतिकेँ सेहो प्रेमक क्षेत्र सँ निष्कासित नहि कयल जा सकैछ ।

श्रृंगार रसक विश्लेषण

श्रृंगारक तत्व-नाट्यशास्त्रक रचयिता भरतमुनि सँ लऽ कऽ पंडितराज जगन्नाथधरि संस्कृतक विभिन्न आचार्य श्रृंगाररसक विभिन्न तत्व पर यथेष्ट प्रकाश देने छथि । हिनकालोकनिक विश्लेषणसँ ई स्पष्ट भऽ गेल अछि जे श्रृंगारक परिधिमे मात्र दाम्पत्यप्रेमे समाहित भऽ सकैछ, विशुद्ध प्रेम, स्नेह, वात्सल्यादिकेँ एहि केँ अन्तर्गत नहि राखल जा सकैछ । श्रृंगार भावनाक विश्लेषण कयला सन्ता ओहिमे मुख्यत: तीन तत्वक मिश्रण पाओल जाइछ - (1) काम, (2) सौन्दर्य आ (3) प्रेम । श्रृंगारक परिभाषा[3] करैत प्राय: सभ आचार्य दू भिन्न लिंगी व्यक्तिक (नायक-नायिकाक) स्थितिकेँ स्वीकार कयने छथि जकर सम्बन्ध काम-तत्व सँ अछि । उपवन, ऋतु, माला आदिक वर्णन तथा पारस्परिक सम्बन्धक उल्लेख श्रृंगारमे क्रमश: सौन्दर्य आ प्रेमक परिचायक अछि । रस-दशाक परिणतिमे आश्रयक हृदय-स्थित वासना आलम्बनक विशेषतासँ उद्दीप्त भऽ कऽ भावना रूपमे परिणत भऽ जाइछ -

एकरहि साहितियक माध्यमसँ आस्वाद करब रस कहबैछ । श्रृंगार रसक क्षेत्रमे उपर्युक्त वासनाकेँ, कामक आलम्बनक विशेषताकेँ सौन्दर्यक तथा विकसित भावनाकेँ प्रेमक संज्ञा देल जा सकैछ ।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

मनोविज्ञानक अनुसारेँ प्रत्येक भावना-कोनो-ने-कोनो मूल-प्रवृत्तिसँ सम्बन्धित रहैछ । कामकेँ मूल प्रवृत्तिसभ मे सँ एक प्रवृत्ति मानल गेल अछि तथा एकर प्रेम-भावना सँ गँहीर सम्बन्ध स्वीकारल गेल अछि । अस्तु, श्रृंगारमे काम-वासनाक स्थिति अनिवार्यत: रहबे करैछ ।

सौन्दर्यक श्रृंगारसँ सम्बन्ध

प्रत्येक स्थायी भावक आलम्बनमे एक प्रमुख विशेषता अपेक्षित रहैछ । जाहि प्रकारेँ हास्यक आलम्बनमे विद्रूपता, भयानकमे विकटता, करुणमे दीनता वा दुर्बलता, वीरमे पुष्टता आ वीभत्समे कुरूपताक सन्निवेश रहैछ, तहिना श्रृंगार रसक आलम्बनमे सुन्दरताक स्थापना अनिवार्य होइछ । संसारक समस्त श्रृंगारिक साहित्यमे नर-नारीक बीच आकर्षण उत्पन्न कयनिहार जादू सौन्दर्यहि थिक । वैदिक-युगक पुरूरवा आ उर्वशी, महाभारतक उषा आ अनिरुद्ध, कालिदासक दुष्यन्त आ शकुन्तला, आ भवभूतिक मालती-माधवसँ लऽ कऽ विद्यापतिक राधा-कृष्ण धरिक प्रणय-सम्बन्ध सौन्दर्यक प्रेरणहिसँ स्थापित होइछ । पाश्चात्य कविलोकनिक प्रथम दृष्टिहि सँ होबयवला प्रेम (Love at first sight) सेहो सौन्दर्यक प्रभावक अतिरिक्त आर किछु नहि अछि। अस्तु, साहित्य आ व्यवहार जगतमे सौन्दर्य आ प्रेमक घनिष्टता सर्वमान्य अछि ।

प्रेमक स्पष्टीकरण

श्रृंगार सँ सम्बंधित प्रेम वस्तुत: काम-समन्वित प्रेम थिक । तथापि ओकरा कामुकतामात्र सँ भिन्न बुझबाक चही । कामुकता वा काम-भावनाक सम्बन्ध मात्र शारीरिक मिलने धरि सीमित नहि अछि, ओकरा लेल आलम्बनक सुन्दरता सेहो अपेक्षित नहि होइछ । काम-वासनामे जतय चंचलता, अस्थिरता, दुर्बलता, स्वार्थमयता एवं अनेकोन्मुखता रहैछ, ओतय प्रेममे गंभीरता, दृढता, शक्तिमत्ता, नि:स्वार्थता एवं एकोन्मुखता होइछ । अस्तु, वासना खान सँ निकलल अशुद्ध धातु जकाँ शरीरक एक प्राकृतिक वृत्ति मात्र थिक, जखनकि धातुसभक संशोधित, परिष्कृत एवं बहुमूल्य द्रव्यसभक योगसँ निर्मित रसायन जकाँ प्रेम होइछ। प्रकृति एवं गुणक दृष्टिये प्रेम आ वासनामे गँहीर अन्तर होइछ ।

श्रृंगारक तीन वर्ग

उपर्युक्त विवेचन सँ ई स्पष्ट अछि जे श्रृंगारमे काम, सौन्दर्य एवं प्रेम तीनू तत्वक महत्वपूर्ण स्थान अछि । मुदा कोनहु रचनामे तीनू तत्वक उचित समन्वय होयब कठिन अछि । कविक रुचि एवं अनुभूतिक भेदसँ ओकर रचनामे कोनो एक प्रमुखता पाबि लैछ । अतः एहि आधारपर हम श्रृंगाररसक रचनासभकेँ तीन वर्गमे विभाजित कऽ सकैत छी - (1) काम-वासना-प्रधान, (2) सौदर्य प्रधान (3) प्रेम-प्रधान। एहिमे चित्रित श्रृंगारकेँ क्रमशः कामुकता, रसिकता एवं प्रणय तथा ओकर नायक केँ क्रमशः कामी, रसिक एवं प्रेमी कहल जा सकैछ । कामुकक लेल ई आवश्यक नहि जे नायिका सुन्दर सेहो हो, ओकर युवती होयब पर्याप्त छैक, जखन कि एक रसिक, नायिकाक सौन्दर्यक अपेक्षा करैछ । जतय रसिक अनेक सुन्दरीक प्रति आकृष्ट भऽ जा सकैछ, ओतय प्रेमीक अनुरक्ति एक विशेष सुन्दरीये मे होयतैक । एहि प्रकारेँ कामी, रसिक एवं प्रेमीक आलम्बन-क्षेत्र उत्तरोत्तर संकुचित होइत जाइछ, संगहि ओही परिमाणमे ओकर भाव-क्षेत्रमे विशदता एवं गंभीरता आबि जाइछ । अतः एहिमे कोनहु संदेह नहि जे रस-दशाक पूर्ण विकास प्रणय- प्रधान श्रृंगारहिक चित्रण सँ संभव अछि । मात्र कामुकता वा रसिकताक चित्रण सँ स्थायीभाव अपन उत्कर्षकेँ नहि प्राप्त कऽ सकैछ । अस्तु, श्रृंगारक क्षेत्रसँ स्थूल, नग्न एवं अश्लील दृश्यक अतिचित्रणक बहिष्कार हम नैतिक दृष्टिसँ नहि, भावनाक विकासक दृष्टि सँ सेहो कऽ सकैत छी ।

निष्कर्ष :

(1) काव्य-शास्त्रमे श्रृंगार रसक महत्व सर्वविदित अछि । कामदेवक उद्भेदकेँ श्रृंगार कहल जाइछ तथा एकर आगमनक लेल उत्तम प्रकृति-प्राय रसकेँ श्रृंगार रसक अभिधा प्रदान कयल जाइछ । भरत बहुत पूर्वहि श्रृंगार रसक महत्व केँ प्रतिपादित करैत लिखने छथि 'यत्किंचिल्लोके शुचिमेध्यमुज्ज्वलं दर्शनीयं वा तच्छृङ्गारेणोपमीयते' अर्थात् जे किछु उत्तम, पवित्र, उज्ज्वल आ दर्शनीय अछि, ओकरहि श्रृंगार कहल जाइछ ।

(2) श्रृंगारक परिधिमे मात्र दाम्पत्य प्रेमहि समाहित भऽ सकैछ, विशुद्ध प्रेम, स्नेह, वात्सल्यादिकेँ एहिकेँ अन्तर्गत नहि राखल जा सकैछ । श्रृंगार भावनाक विश्लेषण कयलासँ ओहिमे मुख्यतः तीन तत्वक मिश्रण पाओल जाइछ -(1) काम (2) सौन्दर्य आ (3) प्रेम ।

(3) मनोविज्ञानक अनुसारेँ काम, मूल प्रवृत्ति सभमे सँ एक थीक तथा प्रेम-भावनाक संग एकर गँहीर सम्बन्ध अछि । श्रृंगारमे काम भावनाक स्थितिकेँ अनिवार्य बताओल गेल अछि ।

(4) जाहि प्रकारेँ हास्यक आलम्बनमे विद्रूपता, भयानक मे विकटता, करुणमे दीनता वा दुर्बलता, वीरमे पुष्टता आ वीभत्समे कुरूपताक सन्निवेश रहैछ, तहिना श्रृंगाररसक आलम्बनमे सुन्दरताक स्थान अनिवार्य अछि ।

(5) श्रृंगारसँ सम्बंधित प्रेम वस्तुतः काम-समन्वित प्रेम थिक, तथापि ओ कामुकता सँ भिन्न वस्तु थीक । वासना खानसँ निकलल अशुद्ध धातु जकाँ शरीरक एक प्राकृतिक वृत्ति मात्र थीक, जखन कि प्रेम धातु सभक संशोधित, परिष्कृत एवं बहुमूल्य द्रव्यसभक योगसँ निर्मित रसायन थीक ।

(6) एवं विधि श्रृंगार प्रधान रचनाकेँ तीन वर्गमे विभाजित कयल जा सकैछ - (1) काम-वासना-प्रधान, (2) सौन्दर्य प्रधान, तथा (3) प्रेम-प्रधान । एहिमे चित्रित श्रृंगार केँ क्रमशः कामुकता, रसिकता एवं प्रणय तथा ओकर नायक केँ क्रमशः कामुक, रसिक एवं प्रेमी कहल जा सकैछ। कामुकक लेल ई आवश्यक नहि जे नायिका सुन्दरे हो । ओकर युवती होबय पर्याप्त छैक, जखन एक रसिक, नायिकाक सौन्दर्यक अपेक्षा करैछ । जतय कामुक अनेक सुन्दरीक प्रति आकृष्ट भऽ सकैछ, ओतय प्रेमीक अनुरक्ति एक विशेष सुन्दरीये धरि सीमित रहैछ।

(ख) विद्यापतिक संयोग श्रृंगार

विद्यापति एक रस-सिद्ध श्रृंगारी कविक रूपमे समादृत छथि। प्रेम आ सौन्दर्य विद्यापतिक काव्यक प्रमुख वर्ण्य विषय अछि । प्रेम आ सौन्दर्यक चित्रण काव्य-शास्त्रीय दृष्टि सँ श्रृंगार रसक अन्तर्गत अबैछ । साधारणतः दू भिन्नलिंगी व्यक्तिक कामसमन्वित प्रेमहि कविताक क्षेत्रमे श्रृंगार रसक रूपमे प्रस्फुटित होइछ । लौकिक प्रेमक अपेक्षा काव्यमे वर्णित प्रेम अधिक प्रभावशाली, व्यापक आ उदात्त होइछ ।

लौकिक जीवनमे स्त्री-पुरुषक प्रेम दू व्यक्तिए धरि सीमित रहैछ,, मुदा काव्य-जगत मे आबिकऽ ओएह प्रेम श्रृंगार रसक रूपमे सहृदयमात्रक आस्वाद्य बनि विशेष प्रभावशाली, तीव्र एवं व्यापक रूप धारण कऽ लैछ । यैह कारण जे काव्य-शास्त्रक आचार्यलोकनि एकरा रस-राजक उपाधि सँ विभूषित कयलन्हि अछि ।

श्रृंगाररसक स्थायीभाव रति थिक । जाहि व्यक्तिकेँ देखि कऽ ई स्थायीभाव उद्बुद्ध होइछ, ओकरा आलम्बन कहल जाइछ । आलम्बनक द्वारा उद्बुद्ध ई स्थायीभाव बाहरक जाहि पदार्थ, व्यापार वा परिस्थिति सँ उद्बुद्ध वा परिवर्द्धित होइछ, ओकरा उद्दीपन विभाव कहल जाइछ । रतिभावक आलम्बनस्वरूप व्यक्तिक सौन्दर्य, ओकर हाव-भाव एवं शारीरिक चेष्टा तथा विभिन्न ऋतु, नदी, उपवन, पर्वत आदि प्राकृतिक दृश्य एहि रतिभाव केँ उद्दीप्त करबामे समर्थ होयबाक कारणेँ उद्दीपन-विभावक अन्तर्गत अबैछ। जखन रतिभाव एहि उद्दीपन विभाव सभक सहायतासँ आश्रयक हृदयमे उद्दीप्त भऽ उठैछ तँ रतिभावक अनुभवकर्त्ता (आश्रय) क शरीरमे जे विकार एवं चेष्टा उत्पन्न होइछ, तकरा अनुभाव कहल जाइछ । रतिभावक अनुभूतिक दशामे आश्रयक हृदयमे समय-समय पर किछु एहन अस्थायीभाव उत्पन्न होइछ जे मूलभावकेँ रस-कोटिधरि पहुँचयबामे सहायक होइछ । एहि प्रकारक अस्थायी भावसभकेँ संचारीभाव कहल जाइछ । एहि प्रकारेँ विभाव, अनुभाव आ संचारीभाव सभक संयोगसँ आश्रयक हृदयमे रतिभावक स्थायीभाव पूर्णतया प्रबुद्ध भए श्रृंगार रसक रूपमे परिणत होइछ ।

श्रृंगार रस विद्यापतिक काव्यक मूल स्वर थिक । ओ श्रृंगाररसकेँ सर्वोपरि स्थान देने छथि । कीर्तिपताकाक निम्न उक्तिमे विद्यापतिक श्रृंगार-विषयक मान्यता व्यक्त भेल अछि -

"संसाररत्नं मृगशावकाक्षी रत्नं च श्रृंगाररसो रसानाम् ।"

विद्यापतिक काव्यमे संयोग श्रृंगारक अत्यन्त मनोहर चित्र प्राप्त होइछ। नायिकाक सौन्दर्य-वर्णन करबा मे तँ ओ अप्रतिम छथि । संयोगदशामे नायक-नायिकाक हृदयमे क्षण-क्षण परिवर्तनशील केहन स्थितिसभ उत्पन्न होइछ, ताहिसभक अत्यन्त हृदयग्राह्य एवं कलात्मक चित्रण पदावलीमे कयल गेल अछि । संयोग श्रृंगारक अन्तर्गत आलम्बनस्वरूप नायिकाक सौन्दर्य एवं शारीरिक चेष्टासभहिक वर्णन उद्दीपन विभावक अन्तर्गत परिगणित होइछ । विद्यापति उद्दीपन विभावक रूपमे नायिकाक सौन्दर्यक चित्रण अत्यन्त सफलतापूर्वक कयलन्हि अछि । रूप-लावण्यक प्रतिमा राधा, कृष्णक हृदयक रति केर आलम्बन छथि आ हुनक सौन्दर्य उद्दीपन विभावक रूपमे रसोद्रेक करबामे पूर्ण समर्थ अछि । राधाक विश्वमोहिनी छविक अत्यन्त हृदयग्राही ओ मादक चित्र पदावलीक निम्न पद मे अंकित भेल अछि -

देख देख राधा रूप अपार ।
अपरूब के विहि आनि मिलाओल खितितल लावनि सार ॥
अंगहि अंग अनंग मूरछायत हेरए पड़ए अथीर ।
मनमथ कोटि मथन करु जे जन से हेरि महि मधि गीर ॥
कत-कत लखिमी चरणतल नेओछए रंगिनी हेरि बिभोरि ।[4]

राधाक अद्‌भुत रूप पृथ्वी पर लावण्यक सार थिक । करोड़हु कामदेवक मथन कयनिहार व्यक्तियो एहि रूपकेँ देखि पृथ्वी पर पछाड़ खा कए खसि पड़ैछ । रूप-लावण्यक प्रतिमा कतेको लक्ष्मी राधाक चरणपर उत्सर्ग कयल जा सकैछ ।

विद्यापतिक काव्यमे चित्रित श्रृंगाररसक नायक-नायिकाक यौवन, विकास-जन्य सौन्दर्य पर आश्रित अछि । यौवनक देहरि पर ठाढ़ नायिकाक मनोभावक चित्रण सेहो बेस सहृदयतापूर्वक कयल गेल अछि । एकरा संगहि नायक-नायिकाक हृदयमे नवांकुरित प्रेम, प्रथम मिलनक तैयारी, मिलन, नायिकाक विश्रंभन, अभिसार, प्रणयमान, पुनर्मिलन आदिक एक-सँ-एक सजीव चित्र विद्यापतिक पदावली मे चित्रित कयल गेल अछि।

दिव्य वा दिव्यादिव्य नायक-नायिकाक सौन्दर्य वर्णनमे नख-शिख तथा लौकिक नायक-नायिकामे शिख-नख पद्धतिक अनुसरण कयल गेल अछि । विद्यापति द्वारा दुनू पद्धति केँ अपनाओल गेल अछि । राधा एवं कृष्ण औपचारिक रूपमे एतय लौकिक नायिका तथा नायकक रूपमे चित्रित कयल गेल छथि । राधाक सौन्दर्य वर्णनमे कवि लौकिक नायिकाक अंगछवि एवं सौन्दर्यकेँ प्रस्तुत कयलन्हि अछि, तँ नायकक रूपमे कृष्णक अंगकांति, परिधान तथा रूप-सौन्दर्यक वर्णन कयलन्हि अछि-

नील-कलेवर पीत वसनधर चन्दन तिलक धवला ।
सामर मेघ सौदामिनी मण्डित तथिहि उदित ससिकला ॥[5]

नीलवर्ण, पीतवसन तथा चन्दन-तिलक-कृष्णक सुन्दर रूप मध्यकालीन श्रृंगार एवं भक्तिकाव्यक चिरपरिचित नायकक रूप थिक । अप्रस्तुत योजना सेहो चिर-परिचिते अछि । चन्दन-तिलकक उपमा शशिकला सँ दऽ कए विद्युत-रेखा तथा शशिकलाक समन्वय विशेष चामत्कारिक अछि । दू गोट आर पदमे कृष्णक सौन्दर्यक वर्णन कयल गेल अछि -

की कहब हे सखि कानुक रूप । के पतियायव सपन सरूप ॥
अभिनव जलधर सुन्दर देह । पीत वसन सौदामिनी रेह ॥

सामर झामर कुटिलहि केस । काजरे साजल मदन सुबेस ॥
जातकि केतकि कुसुम सुवास । फुल सर मनमथ तेजल तरास॥
विद्यापति कह की कहब आर । सुनल विहल विहि मदन भंडार ॥[6]

कृष्णक सौन्दर्य अवर्णनीय अछि - स्वप्नप्रतिमा सदृश । एहि प्रकारक वर्णन एक अन्यान्य पदमे सेहो भेल अछि -

ऐ सखि पेखल एक अपरूप । सुनइत मानवि सपन सरूप ॥[7]

एहिमे कवि कृष्णक अंग-छविक संग-संग हुनक सुरभिक वर्णन सेहो कयलनि अछि । सौन्दर्यक संग सुरभि-सोनामे सुगन्धि, सोनक अंगूठीमे हीराक नग । सेहो जातकि केतकी - सद्यः प्रस्फुटित क्योड़ाफूलसनक सुगन्धि-कृष्ण जेम्हर सँ जाइछ, सम्पूर्ण वातावरण नैसर्गिक सौरभसँ मँह-मँह करए लगैछ । तहिना कृष्णक मनमोहक सौन्दर्यक प्रभाव ! नायिका कने-मने देखैछ नहि कि ओकरापर अपन प्राण न्यौछावर कऽ दैछ ।

नायिकाक सौन्दर्य-चित्रणमे तँ विद्यापतिक कला पूर्णताकेँ प्राप्त कयलक अछि । किशोरी तथा तरुणीक अंग-विन्यास एवं सौष्ठवक चित्रण करबामे लोक-भाषाक साइते कोनो कवि विद्यापतिक समता कऽ सकैछ । एक-एक अंगक लेल एक सँ एक अभिनव उपमानक योजना ओ करैत चलैछ । विद्यापतिक नायिका जेना अनेक चित्रपटक समष्टि होथि ।[8]

बालिकाक रूपमे राधाक चित्रण कविकेँ श्रृंगारी मनोवृत्तिक अनुकूल नहि बुझना जाइछ । अतः यौवनक द्वारिपर ठाढ़ि राधाक मादक सौन्दर्यक उद्घाटनहिमे कवि विशेष रुचि प्रदर्शित कयलन्हि अछि। राधाक एहि अभिनव यौवन एवं तद्जनित सौन्दर्य-सुषमाकेँ देखि कृष्ण विस्मय-विमुग्ध भऽ जाइछ, ओकर रूपक वर्णन करबामे असमर्थ भऽ जाइछ -

कि आरे नव जौबन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ छओ अनुपम एक ठामा ॥[9]

श्रृंगारक आलम्बन स्वरूप नायिकाक रूप-चित्रणक संग-संग ओकर रति-प्रेरक हाव-भावसभहिक अंकन मे सेहो कविकेँ आशातीत सफलता प्राप्त छन्हि -

खने-खन नयन कोन अनुसरई, खनेखन वसन धूलि तनु भरई।
खने-खन दसन-छटा छुट हास, खने-खन अधर आगे गहुबास।
चउँकि चलए खने खन चलु मंद, मनमथ पाठ पहिल अनुबन्ध।
हिरदय मुकुल हेरि हेरि थोर, खने आँचर दए खने होए भोर ।[10]

एहिमे नायिकाक विभिन्न चेष्टासभक अत्यन्त हृदयग्राही ओ मादक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि । एहि प्रकारक चेष्टा नायिकाक सौन्दर्यकेँ विशेष प्रभावशाली बनबैछ तथा उद्दीपन विभावक रूपमे रतिभावकेँ उद्दीप्त करैछ । नायिकाक नख-शिख वर्णनक एकटा अन्यतम उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

माधव की कहब सुन्दरि रूपे ।
कतेक जतन बिहि आनि समारल, देखल नयन सरूपे ।
पल्लवराज चरण-जुग सोभित, गति गजराजक भाने ।
कनक कदलि पर सिंह समारल, ता पर मेरु समाने ।
मेरु उपर दुइ कमल फुलायल, नाल बिना रुचि पाई ।
मनिमय हार धार बहु सुरसरि, तैं नहि कमल सुखाई ।
अधर विम्बसन, दसन दाड़िम बिजु, रवि ससि उग थिक पासे।
राहु दूर बस नियरो न आबथि, तैं नहि करथि गरासे ।[11]

सौन्दर्य-वर्णनक लेल ओ सर्वदा उपमानहिक सहाय्य नहि लैछ, कखनहुँ सोझे ओकर अपूर्वता[12] क उल्लेख कऽ ओकर अप्रतिम वैशिष्ट्यक निर्देश कऽ दैछ, कखनहु ओकर सहज सौन्दर्य पर विमुग्ध भऽ जाइछ -

सहजहि आनन सुन्दर रे भौंह सुरेखलि आँखि ।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे, उड़ए पसारल पाँखि ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे, जत गेलि बरनारि ।
आसा लुबुधल न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ॥[13]

विद्यापति सौन्दर्यक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करैछ । नायक वा नायिकाक एक अंग पर अनेकानेक उपमान प्रस्तुत करब हुनक इष्ट नहि। सम्पूर्ण पदमे एकहि अंगक छवि-वर्णन ओ नहि कयलन्हि अछि। हुनक पदमे नायिका अपन समस्त सौन्दर्य-लालित्यक संग चित्रित भेल अछि । विद्यापति नायिकाक सौन्दर्य-उद्घाटन करैत परम्परागत नखशिख परिपाटीकेँ अपनौने छथि, मुदा एहिमे हुनक विशेष रुचि प्रदर्शित नहि होइछ । नायिकाक नख-शिख-वर्णनक मात्र चारि पद प्राप्त होइछ ।[14] एहिमे प्रथम तीनमे नख सँ शिख धरिक तथा अंतिममे शिख सँ नखधरिक सौन्दर्य वर्णन कयल गेल अछि । प्रथम तीनहुमे रूपकातिशयोक्तिक प्रधानता अछि । चारिम पद मे उत्प्रेक्षाक सहारा लेल गेल अछि । एहि पदमे नायिकाक स्वर-माधुर्यक उल्लेख सेहो कयल गेल अछि -

मत्त कोकिल वेणु वीणावाद त्रिभुवन भास ।
जनि मधुर हाक पसारि आनन करए वचन विलास ॥

एहि पदसभमे, विशेषतः अन्यत्र सामान्यतः कवि परम्परा प्राप्त कवि-प्रसिद्धि तथा रूढ़िसभक सहारा लेहन्हि अछि, एहि प्रकारेँ वस्तु-विधानक दृष्टि सँ कोनो विशेष मौलिकता एहि प्रसंगमे नहि देखौलन्हि अछि। नायिकाक विभिन्न अंगक मनोमुग्धकारी रंगीन चित्रक अंकन कवि द्वारा सेहो कयल गेल अछि। नायिकाक पयोधरक प्रभावोत्पादक शक्तिक वर्णन अनेक पदमे भेल अछि –

गिरिवर गरुअ पयोधर परसित गिम गजमोतिक हारा।
काम कम्बु भरि कनक सम्भु परि ढारत सुरसरि धारा ॥[15]
कुच जुग परसि चिकुर फुजि पसरल ता अरुझायल हारा।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल चाँद बिहुन सब तारा ॥ [16]

अवस्थानुसार नायिकाक कुच-विकासक विविध स्थितिक वर्णन उपयुक्त उपमानक योजना द्वारा अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंगसँ चित्रित कयल गेल अछि –

पहिल बदरि कुच पुन नवरंग, दिने-दिने बाढ़ए पिड़ए अनंग।
से पुन भये गेल बीजक पोर, अब कुच बाढ़ल सिरफल जोर ॥ [17]

सौन्दर्य-चित्रण सम्बन्धी पद प्रारम्भ करबाक विद्यापतिक अपन एक विशेष पद्धति छन्हि। हुनक एहि पदसभक पहिल पंक्तिमे विस्मय, उल्लास आ प्रशंसात्मक किछु एहन शब्द एवं भावक योजना रहैछ जे अनायासहि पाठककेँ कोनो अपूर्व अनुभूतिक लेल तैयार कऽ लैछ। पाठक केँ बुझना जाइछ जेना ओकरा सोझामे अपरुपक चित्र एक-एककऽ चलचित्रक भांति प्रस्तुत भऽ रहलैक अछि। [18]

एही प्रकारेँ संयोग श्रृंगारक अन्तर्गत सद्यःस्नाताक अत्यन्त हृदयग्राही ओ मादक चित्र विद्यापति द्वारा सेहो अंकित कयल गेल अछि –

कामिनि करए सनाने। हेरितहि हृदय हनए पंचवाने।
चिकुर गरए जलधारा। जनि मुख-सखि डरे रोअए अन्धारा।
कुच-जुग चारु चकेबा। निअ कुल मिलिअ आनि कोन देबा।
ते संका भुज-पासे। बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे।
तितल बसन तन लागू। मुनिहुक मानस मनमथ जागू। [19]

सद्यःस्नाता रमणीक मादक सौन्दर्य रतिभावक उद्रेक मे पूर्णतः समर्थ बुझना जाइछ।

विद्यापतिक गीतिपदमे श्रृंगारक अविरल धारा प्रवाहित होइछ। श्रृंगार

रसक संयोगपक्षक जतेक दशा संभव भऽ सकैछ, आ ओहिदशासभमे नायक-नायिकाक हृदयमे जतबा भाव सभहिक आविर्भाव भऽ सकैछ, ओहिसभक मार्मिक व्यंजना पदावलीमे भेल अछि। नायक-नायिकाक हृदयक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावोर्मिसभक मनोवैज्ञानिक विश्लेषणमे विद्यापतिक विलक्षण कौशल दृष्टिगत होइछ। संकेत स्थान पर अपन प्रेयसी राधाक प्रतीक्षा करैत कृष्णक मिलनोत्कंठा जन्य स्थितिक मार्मिक व्यंजना निम्न पद मे भेल अछि :-

नन्दक नन्द कदम्बक तरुतर धिरे धिरे मुरलि बजाव।
समय संकेत निकेतन बइसल बेरि बेरि बोलि पठाव।
सामरि तोरा लागि अनुखन बिकल मुरारि।
जमुनाक तिर उपवन उद्‌बेगल फिर फिर ततहि निहारि।
गोरस बेचए अबइत-जाइत जनि जनि पुछ बनमारि ॥ [20]

'बेरि बेरि बोल पठाव', 'फिर फिर ततहि निहारि' तथा 'जनि जनि पुछ बनमारि' सदृश शब्दसभमे कृष्णक हृदयक व्याकुलता एवं मिलनोत्कंठा साकार भऽ उठल अछि। एहिप्रकारेँ पदावलीक पदसभमे संयोग श्रृंगारक विभिन्न दशा सभहिक अगणित भावक अभिव्यक्ति श्रृंगार रसक उद्रेक हेतु समर्थपूर्ण ढंग सँ कयल गेल अछि। रूपलिप्सा, औत्सुक्य, हर्ष, उल्लास आदि अनेकानेक भावक मार्मिक चित्रण पदावलीमे भेल अछि।

श्रृंगार रसक उद्रेक मे समर्थ विभाव, अनुभाव आ संचारीभावक सशक्त एवं प्रभावशाली योजना अनेक पदमे कयल गेल अछि। पदावली मे राधा आ कृष्ण दुनू एक-दोसराक हृदयगत रतिक आलम्बन छथि। आलम्बन आ आश्रयक रूपमे राधा आ कृष्णक पारस्परिक रतिक उद्रेक प्रथम मिलनक अवसर पर अतीव सुंदर ढंगसँ भेल अछि –

पथगति नयन मिलल राधा-कान। दुहु मन मनसिज पूरल संधान।
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर। समय न बूझए अचतुर चोर।
विदगति संगिनि सब रस जान। कुटिल नयन कयलन्हि समधान।
चलत राजपथ दुहु उरझाई। कह कवि-सेखर दुहु चतुराई।

मार्गमे जाइत राधा आ कृष्णक आँखि परस्पर मिलि जाइछ। दुनूक हृदयमे कामदेवक वाण-प्रहार होइछ। दुनू एक-दोसराक मुँह देखैत रहि जाइछ। अचतुर चोर सदृश दुनूकेँ अवसरहुक ध्यान नहि रहैछ। एहिठाम संयोग श्रृंगारक स्थायी भाव रतिक उद्रेक सुंदर ढंग सँ भेल अछि।

निम्नलिखित पदमे संयोग श्रृंगारक संयोजन विभाव, अनुभाव आ संचारीभावक मार्मिक योजना द्वारा भेल अछि -

नहाइ उठल तीर राइ कला मुखि । समुख हेरल बर कान ।
गुरुजन संग लाज धनि नतमुख । कइसन हेरब बयान ।
सखि हे अपरूब चातुरि गोरि ।[21]

एहिठाम स्नानक पश्चात् यमुना-तट पर ठाढ़ि राधा आश्रय अछि। कृष्ण आलम्बन विभाव छथि तथा हुनक सौन्दर्य उद्दीपन विभाव । राधाक मुँह घुराकऽ कृष्ण दिस देखब, अपन हार तोड़ब, निर्निमेष दृष्टियेँ कृष्णकेँ निहारब आदि अनुभाव थिक । लज्जा, औत्सुक्य, हर्ष, आदि संचारीभाव थिक । एहिप्रकारेँ विभाव, अनुभाव आ संचारीभाव सँ परिपुष्ट भऽ कए राधाक हृदयक रति एहिठाम संयोग श्रृंगारक रूप धारण करैछ ।

एहि प्रकारें नायिका केँ देखिकऽ नायकक हृदयक रति निम्नलिखित पदमे संयोग श्रृंगारक रूपमे व्यक्त भेल अछि -

अम्बर बिछुट अकामिक कामिनि कर कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक सम्भु सम अनुपम सुन्दर दुइ पंकज दस चन्दा ।
कत रूप कहब बुझाई ।
मन मोर चंचल लोचन विकल भेल ओ नहि अनइत जाई।
आड़ वदन कए मधुर हास दए सुन्दरि रहु सिर नाई ।
आओध कमल कान्ति नहि पूरए हेरइत जुग बहि जाई ।[22]

एहिठाम कामिनी नायिका आलम्बन अछि । नायक आश्रय । ओकर हृदयक रति स्थायीभाव अछि । बसात सँ नायिकाक आँचरकेँ हटब, ओकर दुनू हाथसँ कुचकेँ झाँपब, आँचरक अऽढ़मे मुँह झुका कय मुसकायब आदि उद्दीपन विभाव थिक । नायकक हृदयगत हर्ष, औत्सुक्य आदि संचारीभाव। रतिभावक प्रतिक्रिया स्वरूप नायकक शरीरमे रोमांच, चपलता, मुँहक लाल होयब, ओकरा द्वारा बेरि-बेरि नायिका दिस ताकब, मुसकायब आदि अनुभावक एहिठाम अनुमान कयल जा सकैछ । एहि प्रकारेँ संयोग श्रृंगारक अत्यन्त हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत पदमे अंकित कयल गेल अछि ।

नायकक हृदयग्राही अनुपम-मादक सौन्दर्यकेँ देखि नायिकाक हृदयगत रतिभावक सशक्त व्यंजना निम्न पदमे भेल अछि -

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ बारल लोचन चोर ।
पियामुख-रुचि पिबए धाओल जनि से चाँद-चकोर ।

ततहुँ सयँ हठ हरि मो आनल धएल चरनन राखि ।
मधुप मातल उड़ए न पारए तइअओ पसारए पाँखि ।
माधव बोलल मधुर बानी से सुनि मुँह मौँय कान ।
ताहि अवसर ठाम बाम भेल धरि धनू पँचवान ।
तनु पसैब पसाहनि भासलि पुलक तइसन जागु ।
चूनि-चूनि भए काँचुअ फाटलि बाहु बलआ भांगु ।
भन विद्यापति कम्पित कर हो बोलल बोल न जाय ।[23]

एहिठाम संयोग श्रृंगारक सभ सामग्री वर्तमान अछि । नायिका आश्रय थिक । नायक आलम्बन तथा ओकर मुँहक कांति तथा मधुर वाणी उद्दीपन विभाव थिक । लज्जा, हर्ष, औत्सुक्य आदि संचारी भाव थिक । नायिकाक शरीरगत स्वेद, कम्प, पुलक, कंचुकीक फाटब, चूड़ीक फूटब आदि अनुभाव थिक । नायिकाक हृदयक रति स्थायीभाव थिक । एहि प्रकारेँ विभाव, अनुभाव एवं संचारीभाव सँ पुष्ट भए नायिकाक हृदयक रति एहिठाम संयोग श्रृंगारमे परिणत हेइछ ।

नायक-नायिकाक प्रथम समागमक वर्णन करैत विद्यापति संयोग-श्रृंगारकेँ उच्चतम शिखरपर अवस्थित कऽ देलन्हि अछि । निम्नलिखित पदमे प्रथम समागमक अवसर पर नवोढ़ा नायिकाक हृदयक लज्जा, शंका, चिन्ता आदिक मार्मिक व्यंजना मनोवैज्ञानिक एवं कामशास्त्रक सिद्धान्त पर कयल गेल अछि -

प्रथमहि गेल धनि प्रीतम पास । हृदय अधिक भेल लाज तरास ।
ठाढ़ि भेलन्हि धनि अंगो न डोले । हेम-मूरति सन मुखहु न बोले।
कर दुहु धए पहु पास बइसाए । रूसल छलि धनि बदन सुखाए ।
मुख हेरि ताकए भमर झाँपिलेल ।
अंकम भरि केँ कमलमुखि लेल।[24]

लज्जा वा त्रासक कारण नायिकाक हृदय काँपय लगैछ । ओ स्वर्ण प्रतिमा जकाँ निस्तब्ध ठाढ़ रहि जाइछ । लज्जा पयरक जिंजिर बनि जाइछ । मुँह सँ एक शब्द तक नहि बहराइछ । सखी आश्वासन दए कोनहुना नायिकाकेँ कोहबर धरि पहुँचा अबैछ । नायक हर्षित हृदय सँ ओकर स्वागत करैछ । एहि अवसर पर नायिकाक चेष्टा एवं ओकर विभिन्न भावसभक मनोरम अभिव्यक्ति निम्न पदमे भेल अछि -

सखि परवोधि सयनतल आनि। पिय हिय हरखि धएल निज पानि।

छुबइत बालि मलिन भइ गेलि। बिधुकर मलिन कमलिनी भेल।
नहि-नहि कहइ नयन झर नीर । सूति रहलि रहि सयनक तीर।
आलिंगए निबिबंध बिनु खोरि। कर कुच परस सैह भेल थोरि।
आँचर लेइ बदन पर झाँप । थिर नहि होइअ थर-थर काँप ।[25]

रति-क्रीड़ाक अवसर पर नायक-नायिकाक अनुरागपूर्ण चेष्टा एवं अन्तर्दशाक चित्रण सेहो श्रृंगार रसक उद्रेक मे सफलताक संग भेल अछि । यथा –

अधर मँगइते अओंध कर माथ, सहय न पीर पयोधर हाथ ।
बिघटल नीबी कर धर जाँति, अँकुरल मदन, धरएकत भाँति।
कोमल कामिनी नागर नाह, कओन परि होइत केलि निरबाह ।
कुच कोरक तब कर गहि लेल, काँच बदरि अरूनिम रुचि भेल।
लाबए चाहिए नखर बिसेख, भौहनि आबए चाँदक रेख ।
तसु मुख सौं लोभे रहु हेरि, चाँद झपाए बसन कत बेरि ।[26]

प्रियसमागमनक वर्णनमे विद्यापति नायिकाक शारीरिक एवं मानसिक स्थितिक, सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतिक चित्रण अत्यन्त सफलतापूर्वक कयलन्हि अछि । एहि पदसभकेँ देखि सहजहि विद्यापतिक नारी-मनोविज्ञानक पांडित्यक परिज्ञान भऽ जाइछ । वस्तुतः नारी-हृदयक एक-एक कोनमे पैसिकऽ, ओकर एक-एक वातायन सँ हुलकी दऽ महाकवि जाहि प्रेम आ सौन्दर्यक मूर्तिक सर्जना कयलन्हि अछि, ओ सम्पूर्ण मध्यकालीन एवं अनेकानेक परवर्ती कविलोकनिक लेल पथ-प्रदर्शक एवं प्रकाश-स्तम्भ बनल रहल अछि ।

सम्भोगान्तक जेहन मार्मिक, सजीव एवं हृदयग्राही चित्र विद्यापति अंकित कयलन्हि अछि से अन्यत्र दुर्लभ अछि । संभोगक पश्चात् नायक-नायिकाक स्थितिक स्वभाविक चित्रण प्रस्तुत पदमे भेल अछि –

सुरत समापि सुतल बर नागर पानि पयोधर थापी ।
कनक संभु जनि पूजि पुजारी, धरए सरोरुह झाँपी ।
सखि हे, माधव केलि विलासे ।
मालति रमि अलि ताहि अगोरसि, पुनु रतिरंगक आसे ।
बदन मोराए धयल मुखमंडल, कमल मिलल जनि चंदा ।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल, पीबि अमिय मकरंदा ।[27]

रतिक विभिन्न अवस्थामे नायक-नायिकाक अगणित शारीरिक चेष्टा तथा हृदयगत भावक हृदयग्राही अभिव्यक्तिमे विद्यापतिक अद्भुत कौशल दृष्टिगत होइछ । एकर अतिरिक्त किशोरवयस्का कुमारि कन्याक स्वाभाविक

चेष्टा यौवनागम-जन्य विकार तथा कायिक एवं मानसिक परिवर्तनक चित्रणमे सेहो विद्यापतिक अद्वितीयता सर्वसिद्ध भऽ गेल अछि । वयःसन्धिक नायिकाक चित्रण श्रृंगारकाव्यमे अत्यन्त लोकप्रिय रहल अछि । गौड़ीय वैष्णव पदकर्तालोकनिक सेहो ई प्रिय विषय रहलन्हि अछि । विद्यापतिक दशाधिक पदमे यौवनागम-जन्य नायिकाक शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तनक सजीव चित्र उपलब्ध होइछ । एक उदाहरण –

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल । श्रवनक पथ दुहु लोचन लेल ॥
बचन न चातुर लहु लहु हास । धरनिये चाँद कएल पर गास॥
मुकुर लई अब करई सिंगार । सखि पुछइ कइसे सुरत-विहार ॥
निरजन उरज हेरए कत बेरि । हँसइ से अपन पयोधर हेरि ॥[28]

एहि पदमे वयःसन्धि प्राप्त नायिकाक आन्तरिक भाव एवं बाह्य चेष्टासभक सुन्दर सामंजस्य भेल अछि । यैह ओ अवस्था अछि जखन नायिका अपन सखी-सभसँ काम-कलाक अनेक पाठक ज्ञान प्राप्त करब प्रारम्भ कऽ दैछ । एहिठाम 'निरजन-उरज हेरए कत बेरि' मेँ नायिकाक भाव-समुच्चयक मनोवैज्ञानिक संकेतक दिग्दर्शन कराओल गेल अछि । किशोरीक तन आ मोन जेना शैशव आ यौवनक संग्रामस्थल बनि गेल हो –

सैसव जौवन उपजल वाद । केओ न मानए जय-असवाद ॥

एहि संग्राम मे नायिकाक तन-मन सभमे परिवर्तन भऽ रहलैक अछि। कतहु स्थिरता नहि रहि गेलैक अछि – चरणक चंचलता नेत्र लऽ लेलकैक अछि, कटि क्षीण भऽ गेलैक अछि, वक्ष आ नितम्ब गौरवान्वित भऽ उठलैक अछि, माटिमे खेलनिहार आब रस-कथासभमे रुचि लेबए लागल अछि, केश कौखन बान्हल रहैछ, कौखन फुजि कऽ पसरि जाइछ, चंचलता नायिकाक शरीरक पोर-पोरमे समा गेलैक अछि –

चंचल चरन चित चंचल भान ।
जागल मनसिज मुदित मयान ॥

किशोरावस्थाक स्वाभाविक चेष्टा तथा शारीरिक परिवर्त्तनसभक चित्रण एहि प्रकारक पदसभमे भेल अछि । एकर सुदीर्घ परम्परा कवि केँ प्राप्त छलन्हि । कवि द्वारा परम्पराक निर्वाह करैत नव-नव रूपेँ ओकरा अभिव्यंजित करबाक प्रयास कयल गेल अछि । जीवनक जाहि काल मे कवि द्वारा 'वर जुअति तिहुअन सार' तथा मृगशावकाक्षीकेँ 'संसाररत्नं' कहल गेल छल, उपर्युक्त पदसभक रचना सेहो प्रायः ओहीकाल विशेष मे कयल गेल हो ।

शैलीक दृष्टिसँ एहि प्रकारक पदसभक सभसँ पैघ विशेषता अनलंकृत भाषाक प्रयोग थिक । एहिठाम ने शब्दशिल्पीक चामत्कारिक स्पर्श अछि, ने अछि मर्यादानुभूतिक सूक्ष्म अभिव्यंजना । एतय अछि विशुद्ध रसिकता । एकरा विद्यापतिक सौन्दर्य-चित्रणक एकटा महत्वपूर्ण अंग मानल जा सकैछ।

नायक-नायिकाक सौन्दर्य-चित्रणमे दशाधिक एहन पद सभ प्राप्त अछि जाहिमे अपरूप शब्दक प्रयोग भेल अछि । डा. शिव प्रसाद सिंह केँ अपरूप शब्दमे रहस्यात्मक संकेत प्राप्त भले भेल होनि, मुदा ई अनुमान निराधार थिक । वस्तुतः 'अपरूप' अपूर्वहिक मैथिली-रूपान्तर थिक । अपूर्व-अपूरब-अपुरूव-अपरूप । अपन अन्य एकाधिक पदमे अपूरबे शब्दक सेहो ओही अर्थ आ प्रसंगमे प्रयोग कयलन्हि अछि जाहि अर्थ तथा प्रसंगमे ओ अपूरव शब्दक प्रयोग कयने छथि । वस्तुतः विद्यापति रहस्यावादी कवि नहि छथि । हुनक पदसभमे वर्णित नायिका पार्थिव अछि, एही माटिक गन्ध मे नहायल हाड़-मांसक बनल युवती अछि, ओ वैष्णव साहित्यक राधा सेहो नहि । ओ कहैछ -

सगर संसारक सारे । अछए सुरत रस हमर पसारे ।।[29]

ओकरा ई बुझल छैक जे ओकर प्रिय ताबते धरि ओकर आदर आ मान करैछ जाधरि ओकरा पास यौवन-रत्न थिकैक आ ओकरा ईहो ज्ञात छैक जे ई 'यौवन-रत्न' दु-चारिये दिनधरि टिकएवला अछि, स्थायी नहि -

जौवन-रतन अछल दिन चारि । तावते से आदर कएल मुरारि ।।[30]

अतः विद्यापतिक नायिका (राधा) मे कोनो रहस्यात्मक संकेत ताकब किंवा ओकरा अलौकिकता प्रदान करब युक्तिसंगत नहि ।

विद्यापति एकाधिकपदमे सद्यःस्नाताक अत्यन्त मनोरमचित्र प्रस्तुत कयने छथि ।[31] नायिकाक वस्त्र एवं आभूषणक वर्णन सेहो कतिपय पदसभमे उपलब्ध अछि । आभूषणसभमे गराक मोतिम माल, मणि माला, गजमुक्ताहार वा मोतिहारक उल्लेख विशेषरूपे भेल अछि । नख-शिखक अन्तर्गत नायिकाक भौंहक सम्बन्धमे एकटा उक्ति अत्यन्त मनोहर अछि-

सहजहि आनन सुन्दर रे, भौंह सुरेखलि आँखि ।
मधुक मातल उड़ए न पावए तइअओ पसारए पाँखि ।।[32]

आँखि-मधुपान-प्रमत्त भ्रमरयुग्म आ भौंह उड़बाक लेल पसारल गेल ओकर पाँखि - अनुपम कवि-कल्पना । नायिकाक नाभि, रोमावलि आ त्रिवलीकेँ लऽ कए सेहो कैकटा अभिनव कल्पना कयल गेल अछि ।

नायिकाक गजगतिक वर्णना सेहो कवि द्वारा कयल गेल अछि । कीर्तिलता मे गोपीगणकेँ सेहो कवि गजगामिनीक रूपमे चित्रित कयलन्हि अछि -

'चलन्त गोपकामिनी गजेन्द्रमत्तगामिनी ।'

नायिकाक विभिन्न अवयव मे सभसँ अधिक उक्ति आँखि आ वक्ष सँ सम्बन्धित अछि । यद्यपि उक्त परम्परा विद्यापतिकेँ पूर्ववर्ती कविलोकनि सँ प्राप्त भेल छनि, तथापि ओकर प्रयोग करबाक ढंग हुनक अपन छन्हि - आकर्षक, हृदयग्राह्य एवं संवेद्य ।

मुख्यतः विद्यापतिक प्रेम-काव्यमे दुइ प्रकारक धारा परिलक्षित होइछ - एक धारा थिक विवाहित जीवनक दाम्पत्य प्रेमक आ द्वितीय धारा थिक - परकीय प्रेमक ।

विवाहित दाम्पत्य-प्रेमक चित्रण विद्यापतिक निम्न पद मे भेल अछि -

सुन्दरि चललिहु पहु घर ना ।
जाइतहु लागु परम डर ना ।।[33]

प्रस्तुत पद मे दाम्पत्य प्रेमक प्रारंभिक अवस्थाक चित्रण कयल गेल अछि । आइयो मिथिलामे नवविवाहिता कन्याकेँ जखन चतुर्थी राति मे कोबर मे लऽ गेल जाइछ ताहि समय मे सखीसभक द्वारा उपर्युक्त गीत गयबाक परिपाटी विद्यमान अछि । विद्यापतिक एहिपदक सम्बन्ध ने राधा -कृष्णहि सँ अछि, ने परकीये प्रेमक संग एकर कोनो सम्बन्ध अछि, ई विशुद्ध रूपेँ दाम्पत्य प्रेमसँ सम्बन्धित गीत अछि ।

विद्यापतिक नायक-नायिकाक प्रेम-परिपाक मे दूतीक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान अछि ।

निष्कर्ष

(1) विद्यापति एक रस-सिद्ध श्रृंगारी कविक रूपमे समादृत छथि । प्रेम आ सौन्दर्य विद्यापतिक काव्यक प्रमुख वर्ण्य विषय अछि। प्रेम आ सौन्दर्यक चित्रण काव्य-शास्त्रीय दृष्टि सँ श्रृंगार रसक अन्तर्गत अबैछ । साधारणतः दू भिन्न लिंगी व्यक्तिक कामसंमन्वित प्रेमहि कविताक क्षेत्रमे श्रृंगार रसक रूपमे प्रस्फुटित होइछ । लौकिक केर अपेक्षा काव्यमे वर्णित प्रेम अधिक प्रभावशाली, व्यापक एवं उदात्त होइछ । यैह कारण जे काव्य-शास्त्रक आचार्यलोकनि श्रृंगारकेँ रस-राजक संज्ञा प्रदान कयने छथि ।

(2) श्रृंगार रस विद्यापतिक काव्यक मूल स्वर थीक । यैह कारण जे ओ 'संसाररत्नं मृगशावकाक्षी रत्नं च श्रृंगाररसो रसानाम्' कहि श्रृंगाररसक महत्वक उद्घोषणा कयने छथि ।

(3) विद्यापतिक काव्यमे संयोग श्रृंगारक अत्यन्त मनोहर एवं हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि। नायिकाक सौन्दर्य-वर्णन करबामे तँ ओ अप्रतिम छथि । संयोग-दशामे नायक-नायिकाक हृदय मे क्षण-प्रतिक्षण परिवर्तित विभिन्न मनोदशाक अत्यन्त सूक्ष्म, हृदयग्राह्य एवं कलात्मक चित्रण पदावलीमे कयल गेल अछि ।

(4) विद्यापतिक काव्यमे चित्रित श्रृंगार रस, नायक-नायिकाक यौवन-विकासजन्य सौन्दर्य पर आश्रित अछि । नायक-नायिकाक हृदयमे नवांकुरित प्रेम, प्रथम मिलनक तैयारी, मिलन, नायिकाक विश्रंभन, अभिसार, प्रणय, मान, पुनर्मिलन आदिक एकसँ एक सजीव चित्र विद्यापतिक पदावलीमे चित्रित कयल गेल अछि ।

(5) विद्यापतिक काव्यमे दिव्य वा दिव्यादिव्य नायक-नायिकाक सौन्दर्य-वर्णनमे नख-शिख तथा लौकिक नायक-नायिकामे शिख-नख पद्धतिक अनुसरण कयल गेल अछि ।

(6) सौन्दर्य-चित्रणमे सर्वदा उपमानहिक साहाय्य नहि लय, सोझे ओकर अपूर्वताक उल्लेख कय कखनहुँ ओकर अप्रतिम वैशिष्ट्यक उल्लेख कयल गेल अछि, तँ कखनहुँ ओकर सहज सौन्दर्यक अंकन भेल अछि । विद्यापतिक पद सौन्दर्यक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करैछ ।

(7) सौन्दर्य-चित्रण सम्बन्धी पद प्रारम्भ करबाक एक विशेष पद्धति विद्यापति अपनौलन्हि अछि । एहि पदसभक प्रथम पंक्तिमे विस्मय, उल्लास आ प्रशंसात्मक किछु एहन शब्द एवं भावक योजना रहैछ जे ओ अनायासहि पाठककेँ कोनो अपूर्व अनुभूतिक लेल तैयार कऽ लैछ ।

(8) संयोग श्रृंगारक अन्तर्गत सद्यःस्नाताक अत्यन्त मादक एवं हृदयग्राही चित्र विद्यापति द्वारा अंकित कयल गेल अछि । हुनक सद्यः स्नाता रमणीक मादक सौन्दर्य रति-भावक उद्रेक मे पूर्ण समर्थ अछि ।

(9) संयोगपक्षक जतबा दशा संभव भऽ सकैछ, आ ओहि दशासभकेँ नायक-नायिकाक हृदयमे जतबा भावसभक आविर्भाव भऽ सकैछ, ओहिसभक मार्मिक व्यंजना पदावलीमे भेल अछि । नायक-नायिकाक हृदयक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावोर्मिसभक मनोवैज्ञानिक विश्लेषणमे विद्यापतिक विलक्षण कौशल दृष्टिगत होइछ ।

(10) पदावलीमे रूपलिप्सा, औत्सुक्य, हर्ष, उल्लास आदि अनेकानेक भावक मार्मिक चित्रण तँ भेले अछि, संगहि श्रृंगाररसक उद्रेक मे समर्थ

विभाव, अनुभाव एवं संचारीभावक सशक्त एवं प्रभावशाली योजना सेहो अनेक पदमे कयल गेल अछि ।

(11) प्रिय समागमक वर्णनमे विद्यापति नायिकाक शारीरिक एवं मानसिक स्थितिक, सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतिक सफल चित्रण कय अपन नारी-मनोविज्ञानक पांडित्यक परिचय देलन्हि अछि ।

(12) किशोरावस्थाक कुमारिकन्याक स्वाभाविक चेष्टा, यौवनागमजन्य विकार तथा कायिक एवं मानसिक परिवर्तनक चित्रणमे विद्यापतिक अद्वितीयता सर्वसिद्ध अछि ।

(13) शैलीक दृष्टि सँ एहिप्रकारक पदसभक सभ सँ पैघ विशेषता अछि अनलंकृत भाषाक प्रयोग । एतय ने शब्द-शिल्पीक चामत्कारिक स्पर्श अछि, ने अछि मर्मानुभूतिक सूक्ष्म अभिव्यंजना, प्रत्युत, एतय अछि विशुद्ध रसिकता जे विद्यापतिक अपन वैशिष्ट्य थीक ।

(14) विद्यापतिक प्रेम-काव्यमे विवाहित जीवनक दाम्पत्य प्रेम तथा परकीय प्रेमक चित्रण प्रधानतः कयल गेल अछि ।

(ग) विद्यापतिक विप्रलंभ श्रृंगार

विरह प्रेमक कसौटी थिक । संयोगावस्थामे प्रेमी आ प्रेमिकाक स्थूल, वासनाजन्य, कामप्रेरित प्रेमहि विशेष रूपेँ प्रकाशमे अबैछ, परंच विरहमे ई स्थूल कामप्रधान प्रेम विरहतापसँ संतप्त भऽ अपन कालुष्यकेँ मेटाकऽ परिष्कृत, गंभीर एवं उदात्त रूप धारण करबामे समर्थ होइछ । सामान्य जीवनमे संयोगे केँ काम्य एवं आनन्ददायक बूझल जाइछ, परंच रसिक हृदयक लेल विप्रलंभक कम महत्व नहि । साहित्य दर्पणक लेखक विश्वनाथक अनुसारेँ विप्रलंभक बिनु श्रृंगारक पुष्टिये नहि होइछ ।[34] एकर कारण मानव-प्रकृतिमे अनुस्यूत अछि। सहजप्राप्त वस्तु उपयोगी रहलो सन्ता विशेष मूल्यवान नहि होइछ । अनेक प्रकारक बाधा -विघ्नकेँ पार कयला सन्ता कठिनाइसँ प्राप्त भेनिहार वस्तु विशेष प्रिय, मधुर, आस्वाद्य तथा अमूल्य बनि जाइछ । यैह कारण जे वियोगक पश्चात् होबयवला मिलन बेसी मधुर होइछ । दोसर बात ई जे पास्परिक अनुरक्तिक अनन्तर प्रेमी-प्रेमिकाकेँ पारस्परिक मिलनक हेतु जतबा अधिक कष्ट सहन करय पड़ैछ, ओतबहि ओकर सभक प्रेमक परिष्कार संभव होइछ । वियोग-दशामे नायक-नायिकाक हृदयगत काम, स्वार्थ एवं अहंकेर विगलन संभव होइछ तथा ओकरालोकनिक हृदयमे त्याग, तन्मयता आ आत्मसमर्पणक भावना जाग्रत होइछ । संयोगावस्थाक वासना प्रधान कलुषितप्रेम

वियोगावस्थामे आबि कऽ साधनापूत, उदात्त एवं उज्ज्वलताकेँ धारणकऽ लैछ। तेँ विरहकेँ अनुरागक उत्कृष्टताक मापदण्ड कहल जा सकैछ । संयोगक अपेक्षा विरहमे प्रेमक महत्ता स्वीकार करैत कहल गेल अछि -

संगम-विरह-विकल्पे वरमिह विरहो न संगमस्तस्याः ।
मिलने सैव यदेका त्रिभुवनमपि तन्मयं विरहे ।।

काव्यमे विप्रलंभक विशेष महत्वक तेसर कारण ई अछि जे मिलनक मादकतामे, ओकर आनन्दानुभूति मे हम मात्र स्वयमेक नहि, प्रत्युत् सम्पूर्ण अग-जगकेँ बिसारि दैत छी, परंच विरहमे अश्रुविगलित क्षणमे हम सम्पूर्ण जगतक प्रति अभिमुख भऽ जाइतछी, अपन अनुभूत विरहजन्य दुःखक आधारपर संसारक अन्य प्राणीक दुःखक प्रति साकांक्ष भऽ जाइतछी। व्यथा - आकुलित दृष्टि सँ आनक व्यथाक परिज्ञान होबय लगैछ । यैह कारण अछि जे संयोग श्रृंगारक अपेक्षा विप्रलंभक मानव वृत्तिक उन्नयन एवं परिष्कार मे विशेष योग रहल अछि । तेँ हिन्दीक कोनो कवि लिखने छथि -

मिलन अन्त है मधुर प्रेम का और विरह जीवन है ।
विरह प्रेम की जाग्रत गति है और सुषुप्ति मिलन है ।[35]

वस्तुतः श्रृंगारक कोटिमे जतए संयोग वहिर्मुखी निधि थिक, ओतए विप्रलंभ श्रृंगार अन्तर्मुखी भावक सरस चित्रण प्रस्तुत करैछ । एहि स्थितिमे आलंबनक अनुपस्थिति आश्रयक लेल अत्यन्त पीड़ादायक होइछ । ओ आलम्बन सम्बन्धी स्मृति, चिन्तामे विस्मृत भऽ नोर बहबैत रहैछ । अतीतक प्रेम-प्रसंगसभक स्मरण करब ओकर आन्तरिक निधि भऽ जाइछ । ओ बहिर्जगत सँ एक प्रकारेँ विरक्त भऽ अन्तर्मनमे स्थापित प्रिय-मूर्तिमे लीन भऽ जाइछ । विद्यापतिक नायिकाक सेहो यैह अवस्था अछि । कखनहुँ ओकरा अन्तरमे पुनर्मिलनेच्छा जागृत होइछ, कखनहुँ अतीतक मादक-मदिर-मिलनक प्रसंग मोन पड़ैछ, कखनहुँ उन्माद, विलाप, व्यग्रता सँ आपूरित ओकर दुःखद दशा हमरालोकनिकेँ अभिभूत कऽ दैछ । मृत्युन्मुखी ओ निराश-जीवनक अश्रु आ दुःखक मैत्रीमे अपन सम्पूर्ण दिन व्यतीत कऽ लैछ । मोहक, मादक, मधुर सम्वाद ओकरा लेल शून्य भऽ जाइछ, ऋतुसभ ओकरालेल त्रासदी बनि जाइछ, वाटिकाक मधुगंध ओकरा डाहय लगैछ आ मदिर बसातक स्पर्श ओकरा लेल शूल बनि जाइछ । अंतिम दर्शनक हेतु तैयो स्वांस कतहु अटकल रहैछ । एहू अवस्थामे नायिका अपन प्रियतमक शुभचिन्तने करैछ, सभ दोष अपना उपर मढ़ि लैछ -

माधव हमर रहल दुर देस । केओ न कहए सखि कुसल-सनेस।।
जुग-जुग जिबथु बसथु लाख कोस । हमर अभाग हुनक नहि दोस।।
हमर करम भेल बिहि विपरीत । तेजल माधव पुरुब पिरीत ।।
हृदयक बेदन बान समान । आनक दुःख आन नहि जान ।।
भनहि विद्यापति कवि जयराम । देब लिखल परिनत फल बाम ।।[36]

श्रीकृष्णकेँ दूर भेलो आ सन्देश नहि पठयलो उत्तर नायिका अपनाकेँ अभागलि कहि प्रियेक दीर्घायु होयबाक कामना करैछ । कृष्ण पूर्व-प्रेमकेँ बिसरि गेलाह अछि, यैह पीड़ा नायिकाकेँ खेने जा रहल छैक । क्यो दोसराक दुःख किएक बुझत गऽ ? भगवानहि प्रेमक उन्टा फल देलन्हि, तँ दोष ककरा देल जाए ? विरहक कारण नायिकाक दशा अत्यन्त सोचनीय अछि । आइ वसन्तागमन सँ सुखायल गाछ सेहो हरियर भऽ गेल अछि, ओतए नायिकाक आँखिमे एखनहुँ साओन-भादवक झड़ी लागल अछि । ओकरा शीतल चानन सेहो कालकूट सदृश प्रतीत होइछ आ मदिर-पवन अग्नि-ज्वाला तुल्य -

चन्दन गरल समान । सीतल पवन हुतासन जान ।।
हेरह सुधानिधि सूर । निसि बैठलि सुवदनि झूर ।।[37]

आ पुनः आगमन होइछ साओन मासक । क्यो माधवकेँ संदेशतँ पहुँचा दितन्हि, नायिकाक चिठिये हुनका दऽ अबितन्हि -

के पतिया लए जाएत रे मोरा प्रियतम पास ।
हिए नहि सहए असह दुख रे भेल साओन मास ।।[38]

नायिकाक समय क्षण-क्षण, दिन-दिन आ मास-मास कऽ बीति रहल छैक । यौवन माटि मे मीलि गेलैक, आब प्रिय अयबो केलथिन्ह, तँ की भेटतन्हि ? आब तँ जीवनोक आश समाप्त भऽ गेलैक -

एखन-तखन करि दिवस गमाओल
दिवस-दिवस करि मासा ।
मास-मास करि बरस गमाओल
छोड़लि जीवन-आसा ।।

आन्तरिक ताप निरन्तर प्रज्ज्वलित रहलैक अछि । मेघ कतबहु बरसय, ताप तँ शान्त नहि होइछ । यौवन विरहमे बीति गेलैक, नहि जानि प्रिय कहिया अओथिन्ह -

अंकुर तपन ताप यदि जारब,
कि कहब बारिद मेह ।

ई नब जौवन बिरह गमाओब,
कि करब से पिअ गेह ।

परदेसी प्रियतमक अभावमे यौवन कोन काजक ? एकटा मादक अभिव्यंजना प्रस्तुत अछि -

सरसिज बिनु सर, सर बिनु सरसिज,
की सरसिज बिनु सूरे ।
जौवन बिनु तन, तन बिनु जौबन,
की जौबन पिय दूरे ।[39]

सबसँ पैघ कष्ट तँ निन्न नहि अयबाक छैक । पहिने निन्नमे स्वप्न देखलापर ओ प्रियतमकेँ पाबि लैत छलि, मुदा आब तँ निन्दहुक कोनो पता नहि । कतबा दुःख छैक -

सपनहु संगम पाओल रंग बढ़ाओल रे ।
से मोर बिहि बिघटाओल निन्दओ हेराएल रे ।

नायिका जीबि कोना रहल अछि ? प्राण-प्रिय दूर, सन्देश नदार्थ। यौवन द्वारा पीड़ित आ निन्न नहि अयला सँ मिलनक संभावनासँ रहित नायिका जीबओ करय तँ कोना ? प्राण आँखिमे, तथापि ई आशा ओकरा जीबाक लेल विवश कऽ रहलैक अछि -

लोचन धाए फेघाएल, हरि नहि आयल रे ।
सिव सिव जिवओ न जाए, आस अरुझाएल रे ॥

जतए संयोगदशामे विद्यापतिक राधा कामकेलि-विशारदा, विलासिनी नायिकाक रूपमे हमरालीकनिक समक्ष अबैछ, ओतए विरह-वर्णनमे ओ एक आदर्श कुल ललनाक रूपमे प्रस्तुत होइछ । राधाक प्रियतम कृष्ण विदेश जएबाक लेल प्रस्तुत छथि, लज्जाशीला कुलवधू राधा हुनका रोकबामे लज्जाक अनुभव करैछ । तेँ ओ कृष्णकेँ रोकबाक हेतु अपन सखी सँ प्रार्थना करैछ -

सखि हे बालम जितब विदेसे ।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित, तोहहुँ दे हुनि उपदेसे ।
ई न बिदेसक बेलि ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब, ते तोहे पिया लग भेलि ।
किछु दिन करथु निबास ।
हम पूजल जे सेहे पए भुंजब, राखथु पर-उपहास ।

होयताह किए बधभागी ।
जेहि खन हुन मन जाएब चिंतब, हमहु मरब धसि आगी ।

एहिठाम राधाक शब्दमे परवशता तथा कृष्णकेँ नहि रुकलापर आगिमे जरि मरबाक कातरताक अद्भुत व्यंजना भेल अछि । सखीक कहलो पर जखन कृष्ण रुकि जयबाक बात नहि मानैछ, तँ नारी सुलभ लज्जा एवं संकोच केँ तिलांजलि दए राधा स्वयं प्रियतम सँ विदेश नहि जएबाक अनुनय करैछ -

माधव तोहेँ जनु जाह विदेश ।
हमरो रंग रभस लए जएबह, लएबह कोन संदेस ।
बनहि गमन करु होएति दोसर मति, बिसरि जाएब पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब, फेरि माँगब पहु तोरा ।
जखन गमन करु नयन नीर भरु, देखहु न भेल पहु ओरा।[40]

अन्तमे राधाकृष्णकेँ विदेश-गमन सँ रोकबा मे समर्थ नहि होइछ आ कृष्ण मथुरा जयबाक लेल तैयार भऽ जाइछ तँ राधा विवश भऽ कय 'हरि हरि' कहैत मूर्च्छित भऽ जाइछ -

कानु मुख हेरइते भावनि रमनी, फुकरइ रोअत झर-झर नयनी ।
अनुमति माँगि ते वर विधु-वदनी, हरि-हरि शबदे मूरछि पड़ु धरनी।

राधाक हृदयक असह्य वेदना आ विवशताक मार्मिक चित्र एहि पदमे अंकित भेल अछि ।

कृष्णकेँ मथुरा चल गेला सन्ता राधाक हृदयक ग्लानि, स्मृति, निर्वेद आदि संचारी भावसभक मार्मिक व्यंजना निम्नलिखित पंक्तिमे भेल अछि :-

एक सघन सखि सूतल रे, आछल बालम निसि मोर ।
न जानल कति खन तेजिगेल रे, बिछुरल चकेबा जोर ॥
सून सेज हिय सालए रे, पिया बिनु घर मोँय आजि ।
बिनति करओं सहलोलिनिरे, मोहि देह अगिहर साजि ॥

प्रियकेर वियोगमे दिन गनैत-गनैत राधाक नह खिया गेलैक, बाट तकैत-तकैत आँखि चोन्हरा गेलैक अछि । एहन दशामे संचारीभावक रूपमे नायिकाक हृदयक विविध स्थितिसभक चित्रण बेस मनोवैज्ञानिक ढंगसँ प्रस्तुत कयल गेल अछि -

सखि मोर पिया, अबहु न आओल कुलिस हिया ।
नखर खोआओलु दिवस लिखि-लिखि, नयन अँधओलुँ पिया-पथ देखि।

जब हम बाला परिहरि गेला, किए दोस किए गुन बुझइ न भेला।

एहिठाम अमर्ष, औत्सुक्य आ विवर्त सदृश संचारीभावसभहिक योजना बेस सुंदर ढंग सँ भेल अछि । विप्रलंभ श्रृंगार-वर्णनमे विद्यापति अनुभाव आ संचारीभाव-सभक विधानमे आशातीत सफलता प्राप्त कयलन्हि अछि । कतहु-कतहु तँ विप्रलम्भ श्रृंगारक सभ अवयवक निर्वाह चारुतापूर्वक कयल गेल अछि । विरहिणी नायिकाक शरीरक कृशता, हृदयगत कातरता एवं तीव्र वेदनाक मार्मिक अभिव्यक्ति निम्न पंक्तिसभमे भेल अछि -

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि, मूदि रहय दु नयान ।[41]
कोकिल कलरब मधुकर धुनि सुनि, कर देइ झाँपई कान ।
माधव, सुन-सुन बचन हमारा ।
तुअ गुन सुन्दरि अति भेल दूबरि, गुनि-गुनि प्रेम तोहारा ।
धरनि धनि धरि कत बेरि बइसल, पुनि ताँहि उठइ न पारा ।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि-हेरि, नयन गरए जलधारा ।

'कातरदिठि करि चौदिसे हेरि-हेरि, नयन गरए जलधारा'मे कवि विरह-विधुरा नायिकाक सजीव मूर्ति प्रस्तुत करबामे पूर्ण संफल भेल छथि । विप्रलम्भ श्रृंगारक प्राय: सभ अवयवक योजना एहिठाम बेस सुन्दर ढंग सँ भेल अछि । राधा आश्रय आ कृष्ण आलम्बन । राधाक हृदयक रति स्थायी भाव थिक । कुसुमित कानन, कोकिलक कलरव आ मधुकरक ध्वनि उद्दीपन विभाव थिक । नायिका द्वारा अपन आँखिकेँ मूनब, कान-झाँपब, दृष्टिसँ चारूभर निहारब, आँखिसँ नोर टपकायब आदि संचारी-भाव थिक । एहिप्रकारेँ विभाव, अनुभाव आ संचारीभाव सभसँ परिपुष्ट भए राधाक हृदयक रति एहिठाम विप्रलम्भ श्रृंगार मे परिणत भेल अछि ।

प्रियकेर वियोगमे नायिकाक आँखि सँ दहो-बहो नोर खसि रहलैक अछि । ओकर आँखिक नोर स्तन पर खसि रहलैक अछि । ओकर पूर्ण पीन पयोधर तारुण्यकेँ व्यक्त करय लगलैक अछि । एहना अवस्थामे परदेशी प्रियसँ उपेक्षित भेला पर नायिकाक दशा दयनीय भऽ उठलैक अछि । ओकर हृदयक असूया, अमर्ष आ दैन्यक मार्मिक व्यंजना निम्न पदमे भेल अछि -

आसक लता लगओल सजनी, नयनक नीर पटाय ।
से फल अब तरुनत भेल सजनी, आँचर तर न समाय ।
काँच साँच पहु देखि गेल सजनी, तसु मन भेल कुहु भान।
दिन-दिन फल तरुनत भेल सजनी, अह खन न करु गेआन।

सबकर पहु परदेस बस सजनी, आयल सुमिरि सिनेह ।
हमर एहन पति निरदय सजनी, नहि मन बाढ़य नेह ।[42]

विरहावस्थामे जतबा-जे भाव-तरंग हृदयमे उठैछ, ओहिसभक चित्रण कवि द्वारा मनोयोगपूर्वक कयल गेल अछि । निर्वेद, शंका, ग्लानि, दैन्य, चिन्ता, स्मृति, औत्सुक्य, उन्माद, वितर्क आदि विविध भावक सशक्त व्यंजना पदावलीक अनेक पदमे भेल अछि । विरह-वर्णन मे कवि संचारीभावसभक विधान प्रचुरमात्रामे कयलन्हि अछि । नायिकाक विरह कातर हृदयक संग तादात्म्य स्थापित कऽ कए ओकर अन्तर्दशा सभहिक चित्रण पदावलीमे मनोवैज्ञानिक ढंगसँ कयल गेल अछि । एहिप्रकारेँ संचारीभावसभक योजना विप्रलम्भ-श्रृंगारक परितोषमे पूर्णत: समर्थ भेल अछि। विप्रलंभ श्रृंगारमे परिगणित स्मरण, गुण-कथन, अभिलाषा, मूर्च्छा, व्याधि, उद्वेग, प्रलाप, जड़ता, उन्माद आ मरण- एहिसभ दशाक उदाहरण विद्यापतिक गीतिपद-सभमे उपलब्ध अछि -

(1) स्मरण

मोहन मधुपुर वास रे, हमहुँ जाएब तिन पास रे ।
भल तनि कुबजा के नेह रे, तजलनि हमरो सिनेह रे ।।

(2) गुणकथन

पहिले पिया मोर सुख मुख हेरि-हेरि तिल एक छोड़ल न अंग।
अपरुब प्रेम पास तनु गाँथल, अब तेजल मोर संग ।।

(3) अभिलाषा

कत दिन पिय मोर पूछब बात, कबहु पयोधर देअब हाथ ।
कत दिन लेइ बैठाइब कोर, कतदिन मनोरथ पूरब मोर ।।

(4) मूर्च्छा

वर रामा हे ! सो किय बिछुरन जाय ।
कर धरि माथुर अनुमति माँगलि ततहि पड़ल मुरछाय ।।

(5) व्याधि

कि कहब सुन्दरि तोहर काहिनी, कहहि न पारिअ देखलि जहिनी।
अनिल अनल सम मलअज वीख, जे छल सीतल से भेल तीख।।
चाँद सताबय सविताहु जीनि, नहि जीवन एक मत भेला तीनि।
किछु उपचार न मानब आन, एही बेआधि अथिक पंचबान ।

(6) उद्वेग

सजनी, के कह आओब मधाई ।
विरह पयोधि पार किए पाओब, मझु मन नहि पतिआई ।

(7) प्रलाप

कतहु कह सखि बोल त बोलत रे, हमर पिया कोन देश रे ।
मदन सरानल इह तनु जरजर, कुसल सुनत सन्देस रे ।।

(8) जड़ता

न कर पुरुष पिरीती, जिव दय सन्तर युवती ।
नोचल नयन चकोर, ढरिए पल-पल नोर ।।
पथए बहे हेरि हेरी, पिय गेल अवधि बिसेरी ।

(9) उन्माद

(क) अनुखन माधव माधव सुमरइत, सुन्दरि मेलि मधाई ।
(ख) मोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि छल छल लोचन पानी।
अनुखन राधे राधे रटतिहि आध-आध कहु बानी ।।

(10) मरण

(क) माधव अब न जीउति राही ।
जतबा जनिकर लेने छलि सुन्दरि से सभ सोपलक ताही।
(ख) मधुपुर गेल भगवान रे, हुन बिनु त्यागब प्राण रे ।।

काव्यशास्त्रमे विप्रलम्भ श्रृंगारक चारि भेद मानल गेल अछि - पूर्वराग, मान, प्रवास आ करुण विरह । पूर्वरागक तीन भेद बताओल गेल अछि - नीली, कुसुम आ मंजिष्ठा ।[43] विद्यापति पूर्वानुरागक अत्यन्त सजीव, कलात्मक एवं रसमय चित्रण कयलन्हि अछि । हुनक पूर्वानुरागक अधिकांश पद वैष्णव पदावलीमे संकलित कयल गेल अछि।

(क) पूर्वराग

प्रथम दर्शन अथवा गुणश्रवण आदि सँ परस्पर अनुरक्त नायक-नायिकाक समागम सँ पूर्वक दशाकेँ पूर्वरागा कहल जाइछ ।[44] पूर्वरागक अन्तर्गत नवओ (दशम मरणकेँ छाड़ि) काम-दशासभकेँ चित्रित करबाक प्रचलन स्वीकृत छल, विद्यापतिक पदसभमे मरण पर्यन्त दशो कामदशाक चित्रण उपलब्ध अछि जकर चर्च उपर कयल जा चुकल अछि । एहिमे कवि द्वारा यथासंभव मार्मिकता अनबाक प्रयास कयल गेल अछि । विद्यापतिक पूर्वराग साक्षात्-दर्शन पर अबलम्बित अछि । एहि दर्शनक चारि भाग कयल

गेल अछि - साक्षात्, चित्र, स्वप्न आ श्रवण । विद्यापति प्रत्यक्ष दर्शन तथा सखी वा दूती सँ रूप-गुण (मुख्यतः रूप-सौन्दर्यक प्रशंसा) सुनिये कए नायक- नायिकाक हृदयमे अनुराग अंकुरित होयबाक चित्रण कयलन्हि अछि। साक्षात् दर्शनजनित पूर्वानुराग विषयक विद्यापतिक निम्नपद अद्वितीय अछि -

किए मम दीठि पड़लि ससि बयना,
निमिख निबारि रहल दुहु नयना ।[45]

एहिठाम कृष्णकेँ अनुताप छन्हि एहि बातक जे शशिवदना पर हुनक नजरिये किएक पड़लनि ? ओकरा देखलाक बाद सँ ओ परवशताक अनुभव करैछ । मोनकेँ ओकर पयोधर कचोटि रहल अछि। भितरे-भितरे मनोभव जागृत भऽ रहल अछि । कृष्ण ओकर वचनामृत पान करबाक लेल व्याकुल छथि । चाहलो सन्ता चरण ओकर सामीप्य केँ नहि छोड़य चाहैछ। ओ क्षण भरि दुनू आँखि सँ देखने छलथि, आ से आब ओहि फाँस सँ बाँचब कठिन भऽ रहल छनि । ओकर ओ तिर्यक् दृष्टि आब काल बनि गेल छनि। एहि प्रकारेँ विद्यापति एहि स्थल मे कृष्णक प्रेम-तरंगक अत्यन्त मार्मिक अभिव्यंजना प्रस्तुत कयलन्हि अछि ।

एतबहि नहि, राधासँ साक्षात्कार कयलाक बाद कृष्णक केहन दशा भेलन्हि, तकरहु अनुमान दूतीक निम्न शब्द सँ लगाओल जा सकैछ -

डरे न हेरए इन्दु - मलयानिर बोल आगि ।
तुअ गुन कहि-कहि मुरलि पलए महि, रयनि गमाबए जागि।।[45]

प्रियतमक अल्पकालीन साक्षात् दर्शनहि नायिकाक पूर्वरागक कारण बनि जाइछ -

हमे हँसि हेरल न थोरा रे, सफल भेल सखि कौतुक मोरा रे।
हेरतहि हरि भेल आन रे, जनि मनमथ मन बेधल बान रे ।।[46]

कृष्णकेँ कने काल देखलाक फलस्वरूप राधिकाक जे दशा भेलनि तकर निवेदन दूती द्वारा माधवसँ निम्न शब्दमे कयल गेल अछि-

किसलय शयन आगि कए मानए, सखिगन न पार बुझाए ।

स्वप्न-दर्शन जन्य पूर्वरागक उदाहरण सेहो विद्यापतिक पदावलीमे उपलब्ध अछि । स्वप्न-दर्शन यद्यपि प्रत्यक्ष दर्शनक पश्चाते संभव थिक, तथापि काल्पनिक जगतमे ई संभव । स्वप्न-दर्शन अभिलाषक प्रगाढ़ताक द्योतक होइछ, सामाजिक बन्धनसँ दबल, किन्तु श्रृंगाररतिलकम् केर लेखक रुद्रभट्ट पूर्वरागकेँ मात्र दर्शनजन्य मानलन्हि अछि -

दंपत्योर्दर्शनादेव समुत्पन्नारागयोः ।
ज्ञेयः पूर्वानुरागोऽ यम प्राप्तोच दशा यथा ॥

– शृंगारतिलकम, 2/2 काव्यमाला, तृतीयखंड, पृ.–131

गुप्त वासना स्वप्नेमे साकार भऽ उठैछ आ एक प्रकारेँ बिनु सामाजिक बन्धन तोड़नहि नायक–नायिकाकेँ अभीष्टक प्राप्ति भऽ जाइछ । विद्यापतिक नायिका स्वप्नमे कृष्णक दर्शन सँ तृप्ति–लाभ कऽ रहल छलीह कि तखनहि सखी ओकर निन्न तोड़ि दैछ (मे.को. विद्यापति, पृ. 112)। एहिठाम नायिकाकेँ एहि बातक बड़ दुःख छन्हि जे सखी हुनका प्रियसँ मिलबाक स्वप्नहुमे सुयोग नहि दऽ सकलीह ।

पूर्वरागक स्थिति नायक एवं नायिका दुनूक हृदयमे होयब स्वाभाविक होइछ । किन्तु, कविलोकनि द्वारा नायिकेक पूर्वानुरागक अधिक चित्रण कयल गेल अछि । विद्यापति नायिकाक अतिरिक्त पूर्वरागक स्थितिमे नायकक विकलताक सेहो सजीव चित्रण कयलन्हि अछि । एहि तरहक पदसभमे दूती वा सखी नायिकाक समक्ष ओकरा प्रेम मे विभोर, ओकरा सँ भेंट करबाक लेल उत्कण्ठित नायकक व्याकुलताक स्वाभाविक चित्रण करैछ। एहि प्रकारक एक पद द्रष्टव्य अछि –

आसाञे मन्दिर बैसि निसि गमाबए, सुखे न सूत सयान ।
जखन जतए जाहि निहारए, ताहि–ताहि तुअ मान ॥
मालति सफल जीवन तोर ।
तोर विरहे भुवन भमए भेल मधुकर भोर ॥
जातकि केतकि कत न अछए सबहि रस समान ।
सपनहु नहि ताहि निहारए मधु कि करत पान ॥
बन–उपवन कुंज कुटीरहि सबहि तोहि निरूप ।
तोहि बिनु पुनु पुनु मुरुछए अइसन पेम सरूप ॥
साहर निवह सउरभ न सह, गूजरि गीत न गाव ।
चेतन आपु चिन्ताए वेआकुल, हरख सवे सोहाव ॥
जकर हृदय जतहि रतल, से धसि ततहि जाए ।
जइअओ जतने बांधे निरोधिअ निमन नीर थिराए ॥ [48]

पूर्वानुरागक अत्यन्त सजीव एवं उज्ज्वल रूप एहिपदमे चित्रित कयल गेल अछि । अभिलाषा, चिन्ता सँ लऽ कए मूर्च्छा धरिक काम–दशाक वर्णन एहिमे भेल अछि । प्रीतिक अनन्यता एहन अछि जे सर्वत्र नायिकेक

रूप–छवि नायककेँ दृष्टिगोचर होइछ । पुनः प्रेमक महत्ता, विशिष्टता तथा गम्भीरताक निरूपण करैत कवि कहैछ जे वास्तविक प्रेमी अपन प्रियाक अतिरिक्त आर कतहु नहि देखैछ । ओ तँ जतए रमि गेल, रमि गेल । ओकरहि चिन्ता करत, ओकरहि सँ मिलबाक लेल व्याकुल रहत ।

पूर्वानुरागमे नायके जकाँ नायिकाक स्थिति सेहो रहैछ । नायिकाक स्थिति केहन अछि, तकर सजीव चित्रण निम्नांकित पदमे भेल अछि –

कानु हेरब छल मन बड़ साध । कानु हेरहते भेल एत परमाद ॥
तब धरि अवधि भुगुधि हम नारि । कि कहि सुनि किछु बुझए न पारि ॥
साओन घन सम झरे दू नयान । अविरत घसमस करए परान ॥
की लागि सखी दरसन भेल । रभसे अपन जिउ परहथ देल ॥
ना जानु किए करु मोहन चोर । हेरइत प्राण हरि लय गेल मोर ॥
जत सब आदर गेल दरसाइ । जत विसरिय तत विसरि न जाइ ॥
विद्यापति कह सुन वर नारि । धैरज धर चित मिलव मुरारि ॥ [49]

नायकक रूप–गुणक प्रशंसा सुनि नायिकाक मोन मे ओकरा देखबाक अभिलाषा जागृत होइछ । मुदा नायककेँ देखितहिँ नहि जनि ओकरा की भऽ गेलैक । नहि जानि ओकरा कोन व्याधि पकड़ि लेलकैक ? ओ की बाजए, की सुनए – ओकरा किछु बुझबामे नहि अबैछ । नहि जानि कोन रोग ओकरा भऽ गेलैक । दिन–राति ओकर आँखि बरसैत रहैछ, प्राण अवग्रहमे पड़ल बुझि पड़ैछ । आब तँ ओ ओहि समयपर खौंझाइत अछि, जखन ओकरा नायक सँ भेंट भेल छलैक । वस्तुतः मोहन बड़ छलिया थिक । मोनक चोर, एकहि क्षणमे ओकर मोन चोराकए नहि जानि कतए निपत्ता भऽ गेलैक । मुग्धाक प्राण संकट मे छैक ।

(ख) मान – मान विप्रलंभ श्रृंगारक दोसर भेद थिक । 'मानः कोपः सतु द्विधा प्रणयोर्ष्या समुद्भवः ।' – प्रणयवश अथवा ईर्ष्यावश प्रियक प्रति कयल गेल कोप–भावकेँ मान कहल–जाइछ । एकरहि अन्य शब्दमे एहिप्रकारे कहल जा सकैछ जे नायकक कोनो अन्य स्त्रीमे आसक्तिक शंका वा ज्ञानजन्य ईर्ष्या सँ परिपूर्ण होयबाक स्थितिकेँ मान कहल जाइछ।[50]

प्रणय–मान

रुद्रभट्ट मानक तीन उपभेद बतोलन्हि अछि – गुरु, मध्यम तथा लघु । नायकक शरीरपर अन्य रमणीक संग कयल गेल रमणक चिह्न

देखिकऽ गुरु, ओकरा कोनो अन्यमे आसक्त होयबाक शंका भेलापर मध्यम तथा सामान्य कारण सँ कुपित होइतहु प्राय: अनुकूल बनल नायिकामे लघु मानक उल्लेख कयल जाइछ । परंच सामान्यत: मानक दू भेद कयल जाइछ - प्रणयमान आ ईर्ष्यामान । हृदयमे प्रेमकेँ रहैत नायक-नायिकाक अकारण कोपकेँ प्रणय-मान कहल जाइछ तथा नायकक कोनो अन्य नायिकामे अनुरक्त भेलाक कारणेँ उत्पन्न नायिकाक कोपकेँ ईर्ष्या-मान कहल जाइछ । वियोगमे प्रेम तीव्र भऽ जाइछ । ओहि तीव्रताकेँ अनुभव करबाक हेतु, वास्तविक वियोग केँ नहि रहला पर कृत्रिम वियोग उत्पन्नकऽ लेल जाइछ । एहि प्रकारक भाव एकतरहें हावे थिक । मान मात्र मोनक बुभुक्षा शांत करबैक लेल भऽ सकैछ । एहि प्रकारक प्रणयमानक चित्रण विद्यापतिक पदावलीमे बड़ थोड़ भेल अछि। एहि मानक एक उदाहरण मे मोनक उबियाहटि केँ दूर करबाक प्रयासमे कृत्रिम मान ठानबामे नायिका असफल भऽ जाइछ । ओ सखीसँ स्पष्टत: कहैछ - 'कि करबि मान जओं आइति होए ।' वस्तुत: ओ परवश अछि। यैह कारण जे कृष्णक सम्मुख मान-प्रदर्शनक हेतु मुँह नुकयलोपर हँसी केँ नहि रोकि पबैछ आ तेँ ओ कहैछ जे मान करबो करी तँ कोना ? विद्यापतिक कथन छन्हि जे ई तोहर (नायिकाक) दोषनहि, बुभुक्षित मदन तोरा एहि प्रकारक रोष प्रकट करबाक लेल वाध्य कयलकौक अछि ।

विद्यापति द्वारा कृष्णहुमे प्रणय-मान प्रदर्शित कयल गेल अछि -

राधा-माधव रतनक मन्दिर, निबसए सयनक सूखे ॥
रसें-रसें दारुन दंद उपजल, पुन कान्ह चलल तब रोखे ।
नागर-अंचल कर धरि नागरि, हसि मिनति करू राधा ॥
नागर-हृदय पाँच-सर, हनलक, उरज दरसि मन बाधा ।[51]

राधा-माधव रत्न-जटित मन्दिरमे शय्या-सुख-विलासक उपभोगकऽ रहलाह अछि, तखनहि रसे-रसे दारुण कलह उत्पन्न भऽ जाइछ । कृष्ण रुसिकऽ चल जाइछ । केलि-कला-विशारदा राधा कृष्णक वस्त्र केँ पकड़ि अनुनय-विनय करए लगैछ । ओही समय कामदेव कृष्णक हृदयकेँ पंचशर सँ विद्ध कऽ दैछ आ राधाक उरोज-द्वय केँ देखि हुनक मोन दोलायमान भऽ उठैछ । एहि पर राधा सखी सँ कहैछ जे ई तँ कृष्णक फूसि मान छल । कृष्ण किएक रोष कयने छलाह, तकर कोनो कारण देखबामे नहि अबैछ, परंच एतबा सत्य जे रोषकेँ छाड़ि ओ पुन: एकांत लीलाक प्रसारमे लागि गेलाह । वस्तुत: प्रणयमान अल्प-स्थायी होइछ ।

ईर्ष्या-मान :

पतिक अन्य नायिकाक संग विलास करबाक बात सुनि, देखि वा अनुमान कए पतिक प्रति कोप प्रकट करब ईर्ष्या-मान कहबैछ । एकर अनुमान तीन प्रकारें भऽ सकैछ - एक, नायकमे पर-स्त्री-सुरत-चिह्नक अवलोकन कए; दोसर, सहसा नायकक मुँह सँ अन्य नायिकाक नाम बहरयला सँ; आ तेसर, स्वप्न मे पतिकेँ कोनो अन्य स्त्रीक सम्बन्धमे प्रलाप करैत सुनि कए । विद्यापति पदावलीमे प्रथम दू प्रकारसँ अनुमित नायिकागत ईर्ष्याजनित मानक वर्णन अनेक पदमे भेल अछि । एहि प्रकारक मानक चित्रण निम्न पदमे अत्यन्त सफलतापूर्वक कयल गेल अछि -

लोचन अरुन बुझल बर भेद । रयनि उजागर गरुअ निबेद॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ । रयनि गमाओलह जन्हिके साथ॥
कुच-कुंकुम माखल हिअ तोर । जनि अनुरागे राँगि करु गोर॥
आनक भुसन कलंक तुअ अंग । बड़ओ मन्द मन्दक परसंग॥
चिटि-गुड़ चुपड़लि राड़क पोरि ? लाओले लाथ बेकत भेल चोरि ॥[52]

एहि पदमे खण्डिता नायिकाक सुन्दर चित्र तँ अछिये, मानवती नायिकाक कलह पूर्ण रूप सेहो बेस प्रवीणताक संग चित्रित भेल अछि । एकटा अन्य पदमे नायिकाक मोनमे अन्यारति-चिह्न-दर्शन आ अन्या-नाम-कीर्त्तन सँ उत्थित नायकक प्रति जे ईर्ष्यामान उल्लिखित अछि, तकरा नायिका अपन सौभाग्य कहैछ आ एहि प्रकारें नायकक आचरण पर मार्मिक व्यंग्य करैछ -

आध-आध मुदित भेल दुहु लोचन, वचन बोलत आध-आधे ।
रति आलस सामर तनु झामर, हेरि पुरल मोर साधे ॥

गुरु मान, मध्यमान तथा लघुमानक चर्च पूर्व मे भेल अछि, अत: ओकरहु विश्लेषण एहिठाम अपेक्षित अछि ।

गुरुमान :

मनबैत-मनबैत राति बीति जाए आ मान नहि टूटए तँ ओकरा गुरुमान कहल जाइछ । गुरु-मान अधिक काल धरि स्थायी रहैछ । एहिमे विशेष अनुनय-विनयक आवश्यकता पड़ैछ । विद्यापति पदावलीमे एकर कतिपय उदाहरण प्राप्त अछि । एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

चाँद बदन कुबलय दुहु लोचन, अधर मधुरि निरमान ।
सगर सरीर कुसुमें तुअ सिरिजल, किए तुहु हृदय पखान ॥

असकति कर कंकन नहि पहिरसि, हार हृदय भेल भार ।
गिरिसम गरुअ मान नहि मुंचसि, अपरूब तुअ बेवहार ॥[53]

मध्य मान :

ई गुरु मानक अपेक्षा अल्प स्थायी होइछ । परंच सहजहि नहि टूटैत अछि । उदाहरण द्रष्टव्य –

एते दिन छलि नब रीति रे । जल मिन जेहनि पिरीत रे ॥
एकहि बचने बिच भेल रे । हँसि पहु उतरो न देल रे ।
चरन-नखर मनि-रंजन छांद । धरनि लोटाएल गोकुल चाँद ॥[54]

लघुमान :

लघुमान सहजहिमे टूटि जाइछ । विद्यापतिक गीतिपदमे सहजहि लघुमानक उदाहरण उपलब्ध भऽ जाइछ । एहिठाम एकर एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

ढरकि-ढरकि परु लोचन नोर । कतरूप मिनति कएलि पहु मोर ॥
लागल कुदिन कएल हमे मान । अबहु न निकसए कठिन परान ॥[55]

मान-मोचन :

शास्त्रीय परम्पराक आधार पर मान-भंगक छः भेद कयल गेल अछि – "समा भेदथदानं च नत्युपेक्षारसान्तरम्"। विद्यापति साम, दाम, भेद, उपेक्षा, रसान्तर वा प्रसंग विध्वंसे मे सँ मात्र साम आ नति केर उपायकेँ अपनौलन्हि अछि । साम वा नति वा प्रणतिए एहन उपाय अछि जकरा द्वारा अपराधी होइतहु कृष्ण सहजभावसँ मधुर शब्दमे राधासँ आत्मीयता प्रकट कऽ सकलाह आ पुनः ओकर विश्वासपात्र बनि सकलाह । पदावलीमे राधा आ कृष्णक मतान्तर-मिलन आ प्रेम वैचित्र्यकेँ साम आ प्रणतियेक द्वारा शक्ति प्राप्त भेलैक अछि । विद्यापति मान-भंग करबए हेतु ओहिमे कृष्णक असीम चातुरीक दिग्दर्शन करबौलन्हि अछि । ओ कखनहु योगी बनि कऽ 'मान-रतन देह मोय' केर भीख मांगैछ, आ कखनहु स्वयं स्त्रीक वेश धारण कए नायिकाक निकट पहुँचबामे सफल होइछ –

वर नागर साजए नागरि बेसा ।
मुकुटि उतारि सीमंत संवारल बेनी बिरचल केसा ॥
चंदन धोए सिंदुर भाल रंजल लोचन अंजन अंका ।
कुंडल खोलि करनफूल पहिरल भरि तनु केसर-पंका ॥
× × × ×

राइक निकट बजाओल सुन्दरि भए गेल साधा ।
ए नव-यौवनि नबिन विदेसिनि आबह पुकारए राधा ॥
सुनइत स्याम हरखि चित आएल उठि धनि आदर देल ।
बाँहि पकड़ि निज आसन बइसाओल कत कत हरखित भेल ॥

साम – मधुर वचन द्वारा मानिनीक मान-मोचन करब साम कहबैछ । प्रणयमे मधुर वचन अत्यन्त कार्य-साधक होइछ । यैह उपालंभहि दण्डक कार्य कऽ सकैछ । जतए स्वाभाविक प्रेम रहैछ, ओहिठाम कने अनुनय कयले सँ काज चलि जाइछ । एकर अतिरिक्त मधुर वचन सँ माननीकेँ एतबा सांत्वना तँ भेटिए जाइछ जे ओकर प्रियतम ओकरा सँ रुष्ट नहि छथिन्ह । अत्यन्त मधुर वचन सँ मानिनी राधासँ कृष्ण निहोरा करैत अनुनय करैछ –

ए धनि माननि करह संजात ।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि, ताक उपर धरु हाथ ॥
तोहेँ छाड़ि जदि हम परसब कोए, तुअ हार-नागिनि काटब मोए ।[56]

कृष्ण कहैछ, हे मानिनी ! मान पर संयम करू ! यदि विश्वास नहि हो तँ शपथ खुआ लीअऽ । शास्त्रमे सोन आ सर्प केँ छू कए शपथ खायब प्रामाणिक मानल जाइछ, तेँ हम अहाँक कुच रूपी सोनक घैल एवं हार रूपी सर्पिणीक उपर हाथ राखि शपथ खाइत छी जे यदि अहाँकेँ छाड़ि अन्यकेँ स्पर्श करी तँ अहाँक हार रूपी सर्पिणी हमरा काटि खाए । एहिठाम नटनागरक शपथ आ दण्ड-दुहु विलक्षणे अछि ।

प्रणति – पर-रति-चिह्न-लक्षित कृष्णकेँ विद्यापति अपन अमूल्य सलाह दैछ जे हे माधव, अनेरे वाद-विवाद कयलासँ कोन लाभ ? पैघ सँ पैघ अपराधक निवारण मौन धारण कयलासँ भऽ जाइछ । मौनं स्वीकार लक्षणम् । मौन स्पष्ट रूपें अर्द्ध-सम्मतियो अछि आ क्षमाक प्रार्थना सेहो। अतः व्यर्थक विवादकेँ छाड़ि-मौन धारण कऽ लीअऽ –

भनइ विद्यापति बजबहु बाध ।
बड़ अपराध मौन पए साध ॥[57]

फलतः कृष्ण मौन एवं मधुर अनुनय करैछ । जखन मात्र मधुर वचनहि सँ काज नहि चलैछ तँ ओ नति पूर्वक विनय करैछ –

चरन-नखर मनि-रंजन छाँद । धरनि लोटाएल गोकुल चाँद ।
ढरकि-ढरकि परु लोचन नोर । कतरूप मिनति कएलि पहु मोर ॥

वस्तुतः मधुर वचन सँ जखन काज नहि चलैछ तँ नायक केँ

नतिपूर्वक विनय करए पड़ैछ । प्रायः स्वकीया नायिका अपन दयित (पति) कें विनय करैत नहि देखय चाहैछ । अतः पतिकें कतहुँ बेसी समय धरि झुकिकऽ नमन कयलासँ कष्ट नहि उठबए पड़ैन्हि, तें ओ अपन मान-मोचन कऽ दैछ । नमन मे अपराधक लेल पश्चाताप आ क्षमा-प्रार्थनाक भाव निहित रहैछ । नमनक आगाँ पैघ-सँ-पैघ अपराध सेहो क्षम्य भऽ जाइछ ।

(ग) प्रवास

विप्रलंभ काव्यक सभसँ मार्मिक रूप वस्तुतः प्रवास-जन्य-विरह-चित्रणे होइछ । पूर्वरागक अन्तर्गत प्रेमी-प्रेमिकाक दर्शन, रूप-गुण-श्रवण -जन्य एक-दोसराकें प्राथमिक परिचय मात्र रहैछ, मान मे प्रियकेर सान्निध्य रहैछ, परंच प्रवासीक प्रिया नितान्त एकाकिनी, व्यापक सोगमे उब-जुब करैत रहैछ । मुदा एहिमे मिलनक आस निरन्तर बनल रहैछ। मानक अपेक्षा ई विशेष तीव्रतर होइछ । वस्तुतः प्रवासहि वियोगक प्रमुख भेद बुझना जाइछ। एहीमे कविकें वियोगक भिन्न-भिन्न अवस्थाक निदर्शन करबाक अवसर प्राप्त होइछ । प्रवास-विरहमे प्रेमीक मोनमे दू प्रकारक बात उठैछ - एक तँ प्रियकेर अभावक दुःख, दोसर प्रियकेर दुःखक अनुमान कएला सँ उत्पन्न दुःख । विद्यापतिक गीतिपदसभमे पहिल प्रकारहिक प्रवासक अभिव्यंजना भेल अछि । प्रवास विप्रलंभक शास्त्र-सम्मत तीन कारण अछि - कार्य, शाप आ भय । एहिमे पदावलीक प्रवास, कृष्णक कार्यवशात् मथुरा-गमन पर आधारित अछि । प्रवासक कारण खाहे जे किछु होअओ, परंच एहिसँ प्रेम नवीन भऽ कय आस्वाद्य भऽ जाइछ तथा विमुख नायक-नायिका सेहो एक-दोसराक लेल प्रिय बनि जाइछ ।[58]

विद्यापति प्रवास-विरहक अत्यन्त मर्मस्पर्शी चित्र अपन गीतिपदसभमे चित्रित कयने छथि । हुनक काव्यक प्रायः सभसँ अधिक मार्मिक स्थल प्रवास-प्रसंगहिमे उपलब्ध होइछ । एहिमे राधाक हृदयक सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर्दशासभक चित्रण अत्यन्त सफलतापूर्वक कएल गेल अछि । एहि विरह वर्णनमे कवि-हृदयक सहजानुभूतिक उन्मेष दृष्टिगत होइछ ।

विद्यापति विप्रलंभ-वर्णनहुमे संयोग-वर्णनहिक भाँति उभयपक्षक ध्यान रखलन्हि अछि । जाहिप्रकारें राधा कृष्णक वियोगमे विह्वल होइछ, तहिना कृष्ण सेहो राधिकाक वियोगमे विह्वल होइछ । संवेदनात्मक पद्धतिपर आधारित विद्यापतिक विरह-वर्णन कखनहु हास्यास्पद नहि भेल अछि । पदावलीगत विरह-वर्णनमे वेदनाक अनेरे छाती नहि पीटल गेल अछि ।

ओहिमे दृश्यक अनुभूति, व्याकुलता आ तन्मयता सभ किछु अछि । प्राचीन कविलोकनि संयोग आ विप्रलंभ दुहूमे षड्ऋतुक वर्णनकें कवि-कर्मक रूपमे स्वीकार कयने छथि । वियोगमे कखनहु षड्ऋतुक वर्णन बारह मासाक रूपमे कयल जाइछ । विद्यापति बारहमासा-पद्धतिकें अपनौने छथि। वियोगक अन्तर्गत दस काम-दशाक चित्रण कयल जाइछ। विद्यापति एहि काम-दशासभक वर्णन सेहो अत्यन्त तन्मयतापूर्वक कयने छथि । संगहि विरहिणीक एहि नानारूपात्मक जगतक प्रति अनुभवक, अवधि-काल-परिगणनक, संदेश-प्रेषणक सेहो कवि द्वारा उल्लेख कयल गेल अछि ।

प्रवास-विरहक आश्रय होइछ प्रोषितपतिका । एकरहु तीन भेद बताओल गेल अछि - प्रवत्स्यत-पतिका, प्रवास-पतिका तथा अवसत् प्रवास-पतिका । विद्यापतिक गीतिपदसभमे एहि तीनूप्रकारक चित्र उपलब्ध होइछ । विद्यापति एहि तीनू अवस्थाक अत्यन्त मार्मिक चित्र प्रस्तुत कयने छथि । प्रोषित-पतिकाक दैहिक अवस्था - कृशता, वैवर्ण्य, व्याधि आदिक वर्णनमे ओतबा रुचि नहि प्रदर्शित कयल गेल अछि । विद्यापतिक वास्तविक रुचि तँ ओहि पदसभमे प्रकट भेल अछि जाहिमे विरहिणी स्वयं विरह-व्यथासँ संतप्त होइतहु अपन प्रवासी प्रियतमक मंगल कामना करैछ -

माधव हमर रहल दुर देस, केओ न कहइ सखि कुसल-सनेस।
जुग-जुग जीबथु बसथु लाखकोस, हमर अभाग हुनक नहि दोस।
हमर करम भेल बिहि विपरीत, तेजलनि माधव पुरुबि पिरीत।
हृदयक बेदन बान समान, आनक दुख आन नहि जान ।[59]

विद्यापतिक विरह-गीतसभमे दाम्पत्य-प्रेमक गाम्भीर्यक स्वर मुखरित भेल अछि । नारी-हृदयक अनन्त सहनशीलता, अतुल भावुकता, पुरुषक भ्रमरी-वृत्ति एवं चंचलता, उपेक्षिता पत्नीक एकाकारिता आदिक स्वर स्पष्टतः श्रुतिगोचर होइछ । उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत पद द्रष्टव्य अछि -

पहिलि पिरीति परान आँतर तखने अइसन रीति ।
से आवे कबहुँ हेरि न हेरथि भेलि नीम सन तीत ॥
साजनि जीवथु सए पचास ।
सहनि रमनि रयनि खेपथु मोराहु तन्हिक आस ।
कतने जतने गउरि अराधिअ माँगिअ स्वामि सोहाग ॥
तथहु अपन करम भुंजिअ जइसन जकर भाग ।
समय गेले मेघे बरिसव कीदहुँ तयँ जलधार ॥

शीत समापले वसन पाइअ तयँ दहु की उपकार ॥
रयनि गेले दीप निरोधिअ भोजन दिवस अन्त ।
जउवन गेले जुवति पिरीति की फल पाओब कन्त ॥
धन अछइत जे नहि भोगए ता मने हो पचताव ।
जउवन जीवन बड़ निरापन गेले पलटि न आव ॥
भन विद्यापति सुनह जौवति समय बूझ सयान ।
राजा सिवसिंह रूपनरायण लखिमा देइ रमान ॥[60]

दाम्पत्य-प्रेमक गाम्भीर्यक दृष्टियेँ प्रस्तुत पद अद्वितीय अछि। 'साजनि जीवथु सए पचास'क द्वारा परदेशी प्रियतमक प्रतियेँ प्रोषितपतिकाक समस्त मंगलकामनाक अभिव्यक्ति सहजहि भऽ जाइछ । विरहिणी अपन ओहि बीतल दिन-सभक स्मरण करैछ जखन प्रियक संग ओकर दू तन एक प्राणक सम्बन्ध छलैक । मुदा आइ तँ ओहि दिनक स्मृति सेहो ओकरा लेल महादुःखदायी प्रतीत होइछ । कोनो अंग्रेज कविक अनुसार सुन्दरतम वस्तुक अवसान शीघ्रता सँ होइछ, ओकर सुरभिये ओकर अवसानक बाद शेष रहि जाइछ । मुदा गुलाब सँ जे प्रेम करैछ, ओकरा लेल तँ ओकर सुरभियो दुःखदायी होइछ ।[61] प्रस्तुत पदक नायिकाक सेहो तेहने दशा अछि । पति ओकरा अपन पूर्ण प्रेम नहि दऽ रहलैक अछि, तथापि एकर मूल कारण ओकर अपनहि भाग्यक दोष छैक, पूर्वजन्मक फल थिकैक, एहिमे पतिक कोनहु दोष नहि ।

प्रस्तुत पदक नायिका विरहिणी अछि । ओ युवती, प्रियदर्शिनी एवं सुन्नरि अछि । अतः ओकरा एखनहु ई आस छैक जे प्रियतम ओकर सुधि लेतैक । वास्तविक अनन्य प्रेम निष्फल नहि होइछ । मुदा यौवनक फूल झड़ि गेलापर प्रिय केँ अयलासँ कोन लाभ ? खेत सुखा गेला पर वर्षाक कोन प्रयोजन ? जाड़ा बीति गेलापर वस्त्र भेटबाक कोन साफल्य ? चण्डीदासक विरहिणीक सेहो एही प्रकारक उक्ति अछि – नारीक यौवन पानिक ज्वारि जकाँ होइछ, गेला पर पुनः घुरि कए नहि अबैछ । जीवन यदि रहल तँ प्रिय सँ भेंट तँ होएत, मुदा यौवन नहि रहला पर ओ भेटों भारस्वरूपे होयत ।[62]

एहि प्रकारेँ प्रवासी प्रियतम लेल निरन्तर मंगलकामना कयनिहार, अपन दुःख-संतापक लेल कर्म-फलकेँ दोष देनिहारि, गौरी सँ अपन सोहाग सुरक्षित रखबाक हेतु याचना कयनिहारि, प्रियतमक प्रतीक्षामे अपन मोन-प्राणक आरती सजौनिहारि आर क्यो नहि, शाश्वत भारतीय ललनाक प्रतिमा थिक जकर सर्जना विद्यापतिक विरह-काव्यमे भेल अछि ।

प्रवत्स्यत्-पतिकाक एक चित्र दर्शनीय अछि -

सखि हे बालंभ जितव विदेश ।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित तोह देहु हुन्हि उपदेस॥
ई न विदेसक बेली ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापव तेँ तोहि पिआ गेल ऐली ॥
किछु दिन करथु निवासे ।
हमें पूजल जे सेहे पए भुंजव राखथु पर उपहासे ॥
होएता हे किये वध भागी ।
जाहि खन्हे हुनि मने माधव चिन्तव हमहु मख धसि आगी ॥
विद्यापति कवि भाने ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन लखिमा देइ रमाने ॥[63]

एहि पदमे आसन्न विरहिणीक मर्मव्यथा साकार भऽ उठल अछि। नायिका अपन सखी सँ कहैछ जे ओ जाकऽ ओकरा पति सँ कहि दैक जे ओ किएक ओकर मृत्युक कारण बनताह । प्रवास-गमनक विचार छोड़ि देथि, किछु दिन आर रहथि, फेरो कोनो बात सोचल जेतैक। अंतमे ओ अपन संकल्प सेहो सुना दैछ जे प्रियतमक विछोह ओकरा सहल नहि जयतैक । दारुण विरह-व्यथामे पड़िकऽ मरबा सँ पहिने ओ स्वयं अपन प्राण दऽ देति। विप्रलंभ श्रृंगारक कामदशामे दशम अवस्था मरण होइछ । विरहिणीकेँ प्रिय-विछोहक संभावना बुझना जाइछ। वस्तुतः प्रस्तुत पद प्रवत्स्यत्-पतिकाक मनोव्यथाक सहज-अकृत्रिम चित्रण मे अद्वितीय अछि ।

विप्रलंभ श्रृंगारक चारिम आ अन्तिम उपभेद करुण-विरह होइछ। रसशास्त्रीलोकनिक अनुसार नायक वा नायिकाक मृत्युक आभास भेला सन्ता करुण-विरह होइछ।[64] विद्यापति रसशास्त्रीलोकनि द्वारा प्रतिपादित करुण-विरहक चित्रण नहि कयलन्हि अछि । ओना, हुनक काव्यमे करुणामिश्रित विरहक अनेक मर्मस्पर्शी उदाहरण उपलब्ध अछि । मुख्यतः विद्यापतिक उपेक्षिता किंवा परित्यक्ता नायिकाक चित्रण अत्यन्त करुणोत्पादक अछि । विद्यापतिक एहि प्रकारक विरह-गीत मे नारी-हृदयक सर्वसमर्पणकारी प्रेमक उज्ज्वल रूप व्यक्त भेल अछि, संगहि प्रिय द्वारा परित्यक्ता नारी-हृदयक करुण-रागिनी सेहो श्रुति-श्रव्य अछि । यौवन-ज्वारि उतरला पर नायिकाक स्थिति अत्यन्त कारुणिक भऽ जाइछ जखन ओ कहैछ - 'वारि विहुन सर केओ नहि पूछ।' नारीक लेल ई अत्यन्त कारुणिक स्थिति होइछ । विद्यापतिक कएकटा पदमे एकर मर्मस्पर्शी चित्र उपलब्ध अछि ।

(घ) श्रृंगारक आलंबन राधा-कृष्ण

आधुनिक भारतीय भाषामे राधा-कृष्णकेँ सर्वप्रथम आलम्बनक रूपमे प्रस्तुत करबाक श्रेय महाकवि विद्यापतिये केँ प्राप्त छन्हि । एहि सँ पूर्व राधा-कृष्णक आलम्बन रूपमे चित्रण सभसँ पहिने हाल किंवा सातवाहनक गाथासप्तशती मे प्राप्त होइछ । कालक्रमे ई स्वरूप लोक-गीतसभमे विकसित भेल । भक्ति-आन्दोलनक आगमनक पश्चात् राधा-कृष्णक उक्त स्वरूपक प्रतिष्ठा भारतीय मानस मे भेल । भागवत (नवम शताब्दी) मे श्रीकृष्णक यौवनविलासी रूपक विशद् चित्रण भेल । ब्रह्मवैवर्त पुराणमे कृष्णक एहि स्वरूपक संग राधाक सेहो अवतारणा भेल । परंच अधिकांश विद्वान ब्रह्मवैवर्त पुराणकेँ सोलहम शताब्दीक रचना स्वीकार करैछ, तेँ ओहिपर जयदेव एवं विद्यापतिक प्रभाव सेहो मानल जा सकैछ । विद्यापतियोकेँ एहि रूपक प्रेरणा जयदेव सँ प्राप्त भेलन्हि । श्रृंगारक बहाना सँ हरिस्मरण-गीत गोविन्दक मुख्य उद्देश्य बताओल गेल । परंच एकर प्रमुख उद्देश्य भऽ गेल श्रृंगार-निरूपण किंवा राधा-कृष्णक यौवन-विलासी आ काम-कातररूपक-चित्रण । एही रूपक विशाल आ जगमगाइत चित्र विद्यापति द्वारा चित्रित कयल गेल अछि ।

आलम्बन आ आश्रयक मिलनमे बाह्य किंवा शारीरिक सौन्दर्य तथा यौवनक आकर्षणे अछि बाह्यरूपक प्रेरक । विद्यापति संयोग वा संयोगपक्षक चित्रणमेँ राधा-कृष्णक मांसल किंवा शारीरिक सौन्दर्य आ मादक यौवनक अत्यन्त विशद् रूपमे चित्रण कयने छथि । विशेषतः राधाक सौन्दर्य-वर्णन अत्यन्त विस्तृत अछि, कृष्णक सौन्दर्य चित्रण अपेक्षाकृत कम । पुरुषक सौन्दर्य प्रायः कविक श्रृंगारिक अनुभूतिकेँ ओतबा प्रभावित एवं उत्तेजित नहि करैछ जतबा नारी-सौन्दर्य । यैह कारण अछि जे कविलोकनि द्वारा विशेषतः नारीये सौन्दर्यक विरुदावली गाओल गेल अछि ।

विद्यापतिक काव्यमे जतय राधा आलम्बन अछि ओतय कृष्ण आश्रय तथा जतए कृष्ण आलम्बन ओतय राधा आश्रय । जतय राधा आलम्बनक रूपमे आएलि अछि, ओतय ओकर शारीरिक सुषमाक अत्यन्त प्रभावशाली एवं मादक चित्रण भेल अछि । आश्रय कृष्णक मानसिक स्थितिसभक अत्यन्त सूक्ष्म चित्रण भेल अछि । जतय कृष्ण आलम्बन आ राधा आश्रय अछि, ओहिठाम, कृष्णक शारीरिक सौन्दर्यक अपेक्षाकृत कम वर्णन भेल अछि, परंच राधाक मानसिक दशाक अत्यन्त विशद् एवं सूक्ष्म वर्णन भेल अछि । भाव ई जे प्रत्येक अवस्थामे राधा विशेष सूक्ष्मता एवं विशदतापूर्वक

अंकित भेलि अछि । विद्यापतिक आलम्बन राधा-कृष्ण हिन्दी काव्यकेँ एतबा अधिक प्रभावित कयलक जे राधा प्रमुख रूपेँ श्रृंगार-प्रतिमा आ काव्य-प्रेरिका बनि गेल । कृष्ण-भक्ति काव्य एवं श्रृंगार-काव्य एकर अकाट्य प्रमाण थिक ।

विद्यापति राधा-कृष्णक जे श्रृंगारिक रूप उपस्थित कयलन्हि, ओ एतबा उत्तेजक, मोहक, रसप्रेरक आ मादक अछि जे परवर्ती कविलोकनिकेँ कृष्णक एहि रूपक अतिरिक्त अन्य कोनो रूप दिस ध्यान नहि गेलन्हि । एही प्रकारें, विद्यापतिक कृष्ण धीरललित धृष्ट नायक छथि । कतहु-कतहु कृष्णमे सठ नायकक लक्षणक आभास सेहो प्राप्त होइछ । ओ अनेक रमणीक संग रमण करैछ । रात्रि-विलासक चिह्न सहित ओ राधा वा अन्य गोपीगण लग जाइछ । खंडिता राधा हुनका बेस फटकार सुनबैछ । हिन्दीक सूरदास सँ लऽ कऽ रीतिकालीन- श्रृंगारीकविलोकनि धरिक काव्यमे कृष्णकेँ धीरललित, धृष्ट तथा सठ नायकहिक रूपमे चित्रित कयल गेल अछि ।

निष्कर्ष

(1) विरह प्रेमक कसौटी थीक । संयोगावस्थामे प्रेमी आ प्रेमिकाक स्थूल, वासनाजन्य, कामप्रेरित प्रेमहि विशेषरूपेँ, प्रकाशमे अबैछ, परंच विरह मे ई स्थूल-काम-प्रधान प्रेम विरह-तापसँ संतप्त भऽ, अपन कालुष्यकेँ मेटा कऽ परिष्कृत, गंभीर एवं उदात्त रूप धारण कऽ लैछ । यैह कारण जे वियोगक महत्वकेँ स्वीकार करैत विश्वनाथ लिखने छथि जे विप्रलंभक बिना श्रृंगारक पुष्टिए नहि भऽ सकैछ ।

(2) श्रृंगार रसक कोटिमे संयोग वहिर्मुखी निधि थीक तँ विप्रलंभ अन्तर्मुखी भावक बहुमूल्य रत्न । विद्यापतिक विरह-विदग्धा नायिकाक सेहो यैह स्थिति देखल जाइछ । कखनहु ओकरा अन्तरमे पुनर्मिलनेच्छा जागृत होइछ, कखनहुँ अतीतक मादक-मदिर-मिलनक चित्र मोन पड़ैछ, कखनहुँ उन्माद, विलाप, व्यग्रता सँ आपूरित ओकर दुःखद दशा व्यंजित होइछ ।

(3) विद्यापतिक संयोगावस्थाक काम-केलि-विशारदा राधा वियोगावस्थामे आबि एक आदर्श कुल-ललनाक रूप धारण कऽ लैछ । एहि प्रकारक लज्जाशीला कुलवधू राधाक चित्रण विरहसम्बन्धी पदमे सहजहि प्राप्य अछि ।

(4) विप्रलंभ श्रृंगारक वर्णनमे विद्यापतिकेँ अनुभाव एवं संचारीभावसभक विधानमे आशातीत सफलता प्राप्त छन्हि । कतिपय पदमे

श्रृंगारक प्रायः सभ अवयवक योजना एकहि ठाम बेस सुन्दर ढंग सँ भेल अछि जे कवि-कौशलक परिचायक थीक ।

(5) विरहावस्थामे जतबा भाव-तरंग हृदयमे उठैछ, तकर सभक चित्रण कवि द्वारा बेस मनोयोगपूर्वक कयल गेल अछि । निर्वेद, शंका, ग्लानि, चिन्ता, स्मृति, औत्सुक्य, उन्माद, वितर्क आदि विविध भावक सशक्त व्यंजना पदावलीक अनेक पदमे भेल अछि । एकर अतिरिक्त, विप्रलंभ श्रृंगारमे परिगणित स्मरण, गुण-कथन, अभिलाषा, मूर्च्छा, व्याधि, उद्वेग, प्रलाप, जड़ता, उन्माद, आ मरण, एहि-सभ दशाक उदाहरण विद्यापतिक गीतिपदसभमे उपलब्ध अछि ।

(6) प्रथम दर्शन अथवा गुण-श्रवण आदि सँ परस्पर अनुरक्त नायक-नायिकाक समागम सँ पूर्वक दशाकेँ पूर्वराग कहल जाइछ । पूर्वरागक चारिभेद - साक्षात् दर्शन, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन तथा श्रवणमे सँ विद्यापतिक पूर्वराग साक्षात्-दर्शनपर अवलंवित अछि । स्वप्न दर्शनजन्य पूर्वरागक उदाहरण सेहो विद्यापतिक पदावलीमे उपलब्ध अछि।

(7) मान विप्रलंभ श्रृंगारक दोसर भेद थीक । एकर दू भेद होइछ - प्रणयमान तथा ईर्ष्यामान । विद्यापतिक गीतिपदसभमे प्रणयमान तथा ईर्ष्यामान-दुनूक चित्रण भेल अछि, मुदा प्रधानता ईर्ष्यामान केँ प्राप्त अछि । एकर अतिरिक्त रूद्रभट्ट द्वारा वर्गीकृत-गुरुमान, मध्यमान तथा लघुमानक चित्र सेहो पदावली मे उपलब्ध अछि ।

(8) शास्त्रीय परम्पराक आधारपर मानक साम, नति, दाम, भेद, उपेक्षा, रसान्तर वा प्रसंग-विध्वंस आदि भेदसँ विद्यापति मात्र साम एवं नति केँ अपनौलन्हि अछि ।

(9) विप्रलंभ काव्यक सभसँ मार्मिक रूप प्रवासजन्य विरह-चित्रणहिमे उपलब्ध होइछ । प्रवास-विरहमे प्रेमीक मोनमे दू प्रकारक बात उठैछ - एक तँ प्रियकेर अभावक दुःख, दोसर प्रियक दुःखक अनुमान कयलासँ उत्पन्न दुःख । विद्यापतिक गीतिपदमे पहिल प्रकारहिक प्रवासक अभिव्यंजना भेल अछि । शास्त्रीय दृष्टि सँ प्रवासक तीन भेद होइछ - कार्य प्रवास, शाप-प्रवास आ भय-प्रवास । पदावलीक प्रवास प्रथम कोटिक प्रवास थीक।

(10) वियोग-वर्णनमे पारम्परिक षड्ऋतु वर्णन बारहमासाक रूपमे आयल करैछ । विद्यापति बारहमासा पद्धतिकेँ अपनौने छथि । दसहु काम-दशाक वर्णन सेहो ओ तन्मयतापूर्वक कयने छथि । संगहि विरहिणीक

नानारूपात्मक जगतक प्रति अनुभवक, अवधि-काल-परिगणन, सन्देश-प्रेषणक सेहो कवि द्वारा उल्लेख कयल गेल अछि ।

(11) विद्यापतिक विरह-गीतसभमे दाम्पत्यप्रेमक गांभीर्यक स्वर सेहो मुखरित भेल अछि । एहि ठाम नारी-हृदयक अनन्त सहनशीलता, अतुल भावुकता, पुरुषक भ्रमरीवृत्ति एवं चंचलता तथा उपेक्षिता पत्नीक एकाकारिता आदिक स्वर स्पष्टतः श्रुति-मधुर अछि ।

(12) विप्रलंभ श्रृंगारक चारिम भेद - करुण विरहक चित्रण विद्यापति नहि कयल अछि । ओना हुनक काव्यमे करुणामिश्रित विरहक अनेक मर्मस्पर्शी उदाहरण अछि ।

●

संदर्भ

1. श्रृङ्गे हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः ।
   उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः श्रृङ्गार इष्यते ।।183।।
   परोढां वर्ययित्वा तु वेश्यां चाननुरागिणीम् ।
   आलंबनं नायिकाः स्युर्दक्षिणाद्याश्च नायकाः ।।184।।
   चन्द्रचन्दररोलम्बरुताद्युद्दीपनं मतम् ।
   भू-विक्षेप-कटाक्षादिरनुभावः प्रकीर्तितः ।।185।।
   त्यक्तवोग्रय्मरणालस्यजुगुप्सा व्यभिचारिणः ।।186।।
   - साहित्यदर्पण, शालिग्राम-विमला हिन्दी व्याख्या 2 वृत्ति, 33 परिच्छद ।
2. "It seems never to have entered into the heads of the Hindu Legistators that any thing natural could be offensively obscene, a singularity which pervades all their Writings, but is not proof of the deprevity of their morals."
   Ellis, H. Sex in Relation to Society (1945) p. 83.
3. (क) भरत मुनि - 'प्रायः सुख प्रदान करयवला इष्ट पदार्थसभ सँ युक्त ऋतु-मालादि सँ सेवित स्त्री आ पुरुष सँ युक्त श्रृंगार कहबैछ ।'
   - सुख प्रायष्ट सम्पन्न ऋतु माल्यादि सेवकः ।
   पुरुषः प्रमादयुक्त श्रृंगार इति संज्ञितः । - नाट्यशास्त्र, 6/46
   (ख) धनंजय - परस्पर अनुरक्त युवा नायक-नायिकाक हृदयमे, रम्य देश, काल, कला, वेश, भोग आदिक सेवन द्वारा आत्माक प्रसन्न होएब रतिक स्थायी भाव थिक । यैह रतिक स्थायीभाव नायक वा नायिकाक अंगसभक चेष्टा द्वारा एक-दोसराक हृदयमे परिपुष्ट भऽ कऽ श्रृंगार रस कहबैछ ।
   - रम्य देश कला काल वेष भोगादि सेवनः

प्रमोदात्मा रतिः सेव्यः यूनोरन्योन्यरक्तयोः
प्रहृष्यमाण श्रृंगारो मधुरां विचेष्टि तेः । - दशरूपक 4/48, पृ.-253

(ग) भोज - विशिष्ट इच्छा आ चेष्टाकेँ व्यक्त करयवला आत्म-गुणक उत्कर्षक मूल बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न संसकारसभक सभसँ पैघ कारण, आत्माक अहंकार विशेष आ सहृदय द्वारा आस्वादित होबयवला रस श्रृंगार कहबैछ ।

- 'श्रृंगारो हि नाम विशिष्टेष्ट चेष्टाभिव्यंजकानामात्मगुण संपदामुत्कर्ष बीजं बुद्धि सुख दुःखेछाद्वेष प्रयत्न संस्कारातिशय हेतुः आत्मनो अहंकार विशेषः सचेतसा रस्यमानः रस इत्युच्येत ।'

- श्रृंगार प्रकाश, पृ.-353

(घ) विश्वनाथ - कामदेवकेँ अंकुरित होयबाकेँ श्रृंगार कहल जाइछ, ओकर उत्पत्तिक कारण उत्तम प्रकृतिक रस श्रृंगार कहबैछ ।

- 'श्रृंगारहि मन्मथोभदेदस्तदागमन, हेतुकः । उत्तमप्रकृति प्रायोरसः श्रृंगार इष्यते ।' - साहित्यदर्पण, 3/188

(ङ) जगन्नाथ - स्त्री पुंसयोरन्योन्यालम्बनः प्रेमाख्याश्चितवृत्ति
विशेषोरति स्थायिभावः गुरुदेवता पुत्राद्यालम्बनस्तु व्यभिचारी।

-रसगंगाधर, पृ.-129

4. विद्यापति पदावली, वसंतकुमार माथुर, पृ.-2
5. मि.म., 35, पृ.-32
6. मि.म., 635, पृ.-420
7. ओएह, 636, पृ.-421
8. बंग भाषा ओ साहित्य, दिनेशचन्द्र सेन, पृ.-145
9. मि.म., 216, पृ.-161
10. ओएह, 616, पृ.-407
11. मि.म., 25, पृ.-23
12. (क) ए सखि देखल एक अपरूप ।
    (ख) माधव अपरुप देखल रामा ।
    (ग) साजनि अकथ कही नहि जाय ।
    (घ) अपरूप रूप मनोभव मंगल त्रिभुवन विजयी माला ।
13. मि.म., 38, पृ.-34
14. मि.म., 25, 26, 27, 30
15. मि.म., 629, पृ.-417
16. ओएह, 216, पृ.-161
17. ओएह, 623, पृ.-412

18. (क) सुधामुखि को विहि निरमल बाला ।
    (ख) माधव कि कहब सुन्दरि रूपे ।
    (ग) कि आरे नवजौवन अभिरामा ।
    (घ) सहजहि आनन सुन्दर रे ।
    (ङ) ए सखि पेखल एक अपरूप ।
    (च) सजनि अपरुप देखल रामा ।
19. मि.म., 233, पृ.-174
20. मि.म., 258, पृ.-191
21. बेनी. विद्यापति की पदावली, पद-208
22. मि.म., 39, पृ.-35
23. मि.म., 34, पृ.-31
24. मि.म., 57, पृ.-49
25. ओएह, 680, पृ.-447
26. ओएह, 253, पृ.-206
27. मि.म., 900, पृ.-569
28. मि.म., 620, पृ.-410
29. मि.म., 460, पृ.-315
30. तुलनीय - मध्यस्थ प्रतिभानमेति जघनं वक्षोजयोर्मन्दता ।
    दूरं यात्युदरंच रोमलतिका नेत्रार्जवं धावति ।।
    कन्दर्पः परिवीक्ष्य नूतन मनोराज्यभिषिक्तं क्षण ।
    रंगानीव परस्परं विदधते निलुष्ठनं सुभ्रुवः ।।

    -साहित्यदर्पण - विश्वनाथ, तृतीयपरिच्छेद ।
31. जाइत पेखल नहाएलि गौरी । कति सँय रूप धनि आनलि चोरी ।।
    केस निंगारइत गरु जल-धारा । चमर गरए जनि मोतिम-हारा ।।

    - वि.प., व.कु.मा., पृ.-46
32. मि.म., 38, पृ.-34
33. ओएह, 896, पृ.-567
34. न विना विप्रलम्भेन संभोगः पुष्टिमश्नुते ।
    काषाायिते हि वस्त्रादौ भूयान्रागो विवर्ध्यते ।। -साहित्यदर्पण, पृ.-150 ।
35. पथिक, रामनरेश त्रिपाठी ।
36. मि.म., 519, पृ.-341
37. ओएह, 744, पृ.-483
38. ओएह, 545, पृ.-365

39. मि.म., 163, पृ.-121
40. मि.म., 503, पृ.-342
41. मि.म., 179, पृ.-136
42. मि.म., 898, पृ.-568
43. "नीली कुसुम्भं मंजिष्ठा पूर्वरागोऽपि च त्रिधां" - साहित्यदर्पण 3/195, पृ.-143
44. "श्रवणदर्शनाद्वापि मिथः संरूढ़ रागयोः ।
दशा विशेषो यो प्राप्तौ पूर्वरागः स उच्यते।।"-सा.द. : 3/188, पृ.-140
45. ओएह, पृष्ठ-85-86
46. ओएह, पृ.-94
47. मैथिल कोकिल विद्यापति, ब्रजनन्दन सहाय, पृ.-71-72
48. मि.म., पद-43, पृ.-39
49. मि.म., पद- 668, पृ.-422
50. समानो नायिका यस्मिन्नोर्ष्यया नायक प्रति ।
धत्ते विकारमन्यस्त्रीसंगदोषवशाद्यथा ।। - श्रृंगारतिलकम् 2/32
51. मि.म., 645, पृ.-426
52. मि.म., 376, पृ.-264
53. विद्यापति पदावली, वसंतकुमार माथुर, पद-138, पृ.-222
54. मि.म., 931, पृ.-587
55. ओएह, 467, पृ.-319
56. विद्यापति, बेनीपुरी, पद-137
57. विद्यापति, बेनीपुरी, पद-133
58. गावांद्व्यसनत्यागाद्विप्रियकरणाच्च निष्ठुरालापात् ।
लोभादतिप्रवासात् स्वीणां द्वेष्यः प्रियो भवति ।।
- रुद्रभट्ट, श्रृंगारतिलकम्, 2/56
59. मि.म., 519, पृ.-351
60. मि.म., पद-191, पृ.-120
61. "Fairest things have fleetest ends
Their scent survives their close,
But rose's scent is bitterness
To him who loves the rose." -Anon.
62. जोयारेर पानी नारीर यौवन गेले ना फिरिवे आर ।
जीवन थाकिले बंधु रे पाइव यौवन मिलन भार ।। - चण्डीदास ।
63. मि.म., पद-156, पृ.-116

●

सप्तम अध्याय

विद्यापतिक प्रेम-काव्य मे लोक चेतनाक उन्मेष

सप्तम अध्याय

विद्यापतिक प्रेम-काव्यमे लोक चेतनाक उन्मेष

लोक चेतनाक विभिन्न पक्ष :

कवि जाहि युगमे जन्म लैछ, जाहि समाज मे पालित-पोषित होइछ, जाहि परिवेश मे सांस लैत जीवन-संघर्ष मे रत रहैछ, ओहि युग आ समाजक प्रत्येक क्रिया-कलाप सँ प्रभावित होइत रहैत छथि । ओहि युगक परिस्थिति तथा प्रचलित रीति-कुरीति सभक प्रभाव हुनका पर अवश्य पड़ैत छनि । ओ समाजक एक अंग बनि जाइछ - उर्ज्वस्वित प्रकाश पिण्ड । यैह कारण जे कोनो महान कविक कृति मे सम्पूर्ण युग जीवित-जाग्रत भऽ उठैछ । युग-यथार्थक स्पन्दन सँ ओ भास्वर भऽ जाइछ । विद्यापतिक युगक मिथिलाक सामाजिक परिस्थितिक अध्ययन तथा हुनक काव्यक अनुशीलन सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे हुनक काव्यक साफल्यक पाछाँ आर किछु नहि, हुनक उद्बुद्ध सामाजिक चेतने छल । ओ एकटा दरबारी कवि छलाह । हुनक जीवनक अधिकांश भाग विभिन्न राजाक दरबार मे व्यतीत भेल छल। राजा शिवसिंह तथा लखिमा देवी सदृश आश्रयदाता सभ सँ प्रेरणा प्राप्त कय ओ पदावलीक अनेक पदक रचना कयलनि । विभिन्न प्रकारक राजा तथा अभिजात वर्गक संग हुनक सम्पर्क विशेष रहलनि । एतबा भेलो सन्ता विद्यापति जन-जीवनक उपेक्षा नहि कऽ सकलाह । दरबारी कवि रहलो सन्ता ओ अपन सामाजिक जीवनक प्रति अत्यन्त जागरूक रहलाह, सतर्क छलाह। यैह कारण जे तत्कालीन समाजक मान्यता, रूढ़ि, आचार-व्यवहार एवं जीवन मूल्यक समावेश हुनका काव्य मे स्वत: भऽ गेल अछि । ओ मात्र अपन आश्रयदाता सभक ऐश्वर्य, विलास एवं पराक्रमहिक वर्णन नहि कयलनि, प्रत्युत जन-सामान्य-हृदयक सहज भावना केँ सेहो वाणी प्रदान कयलनि । हुनक काव्य मे जतय कवि हृदयक सहज अनुभूतिक व्यंजना भेल अछि, ओतहि जन-साधारणक सामाजिक जीवनक चेतना सेहो मुखरित भेल अछि ।

ओहुना प्रेम, युद्ध आ वैराग्य अनन्त काल सँ कवि लोकनिक वर्ण्य विषय रहैत आयल अछि । कवि जखन सामन्ती अभिजात वर्गक जीवनक चित्रकार होइत छलाह, तँ हुनका लेल आन कोनो वस्तुक महत्व भइयो ने सकैत छल । विद्यापतिक एहने युगक कवि छलाह । परंच हुनक मर्मग्राहिणी दृष्टि सामान्य जन-जीवनक विवशता कें सेहो देखने छल । यैह कारण जे अपन 'पुरुष परीक्षा'क कथा सभमे, 'लिखनावली'क पत्र सभमे, 'कीर्तिलता'क नगर-वर्णन मे तथा अनेकानेक गीति पद (नचारी आ महेशवाणी) मे यथा प्रसंग ओ जनजीवनक सुख-दुःखक संकेत-रेखा सेहो प्रस्तुत कयने छथि ।

'पुरुष परीक्षा' मे धर्मवीर, सत्यवीर तथा दानवीरक कथाक संग अपव्ययी वणिक-पुत्र तथा सोम (कंजूस)क कथा सेहो ओ लिखलनि । 'लिखनावली' मे तँ तत्कालीन सामाजिक जीवनक पूर्ण एवं सर्वांगीण चित्र कें ओ प्रस्तुत कयने छथि । ओहि समय मे दंड प्राप्त बन्दी लोकनिकें राजा सँ अनुमति प्राप्त कय मुक्त कऽ देल जयबाक प्रथा प्रचलित छल । एहि सम्बन्ध मे 'लिखनावली' मे एक गोट रोचक पत्र प्राप्त अछि । महामंत्री कें एकटा पदाधिकारी लिखैत छथि जे कारागार मे जे बन्दी पड़ल छथि, ओ घोर दुर्गति मे छथि, ओ आबो द्रव्य नहि दऽ पौताह । हुनका आर समय धरि बन्दी रखला सँ हुनक मृत्युक संभावना अछि । अतः हुनका मुक्त कऽ देल जाय ।[1] एतबहि नहि, ओहि युग मे क्रय-विक्रयक प्रथा सेहो प्रचलित छल। एहि मे क्रेता ठाकुर, साह, शर्मा, मिश्र आदि रहैत छलाह, मुदा बिकाइत मात्र शूद्र, शूद्रीये छल । बिकायवला शूद्र-शूद्रीक रंग, नाम, उमेर तथा पिताक नाम लिखल रहैत छल ।[2] एक दू गोट मजमून मे शूद्र-शूद्री कें बन्धकी राखल जयबाक सेहो उल्लेख भेल अछि ।[3] तत्कालीन मिथिला प्रधानतः तीन वर्ग मे विभक्त छल । जाति तँ अनेक छल । जातिक अन्तर्गत मूल, कुल आदिक आधार पर अनेक श्रेणी बनाओल गेल छल । साहु, महथा, राउत, केवर्त्त, वणिक आदि कतेको जातिक नामोल्लेख अछि । ब्राह्मण मे श्रोत्रिय तथा योग सर्वोच्च मानल जाइत छलाह । ब्राह्मणक उपाधि त्रिपाठी, चतुर्वेदी, शर्मा, ठाकुर, मिश्र, शुक्ल आदि छल । उपाध्यायक उपाधि तँ बेस प्रचलित छल। कायस्थक उपाधि 'दास' छल । पंजी प्रथा, दास प्रथा, कन्या-विवाहक समस्या, ऋण देबा-लेबाक प्रचलन, बहु विवाह आदि अनेक सामाजिक प्रथा, चालि-चलन, रीति-रेवाज सभक वर्णन विद्यापतिक सामाजिक चेतनाक द्योतन करैत अछि ।

'कीर्तिलता'क तीन गोट प्रसंग मे विद्यापतिक संवेदनशीलता एवं जनजीवनक प्रखर चेतनाक प्रमाण भेटैत अछि । प्रसंग अछि ओइनवार राजकुमार सभक 'जऊोनापुर' यात्रा, 'जऊोनापुर' नगरक वर्णन तथा सुलतान इबराहिम शाहक सेनाक संग जाइत राजकुमार सभक दयनीय अवस्थाक चित्र ।

'कीर्तिपताका' मे सेहो विद्यापति युगक सामाजिक जागरूकताक संकेत प्राप्त होइछ । प्रारंभहि मे कवि अपन युगक पंडित मंडलीक ज्ञान-दंभ, मम्मटी वृत्ति तथा ईर्ष्यालु प्रकृति पर व्यंग्य कयने छथि । आगाँ ओ आदर्श-वाक्यक रूपमे लिखने छथि जे शत्रु सँ धरयलो उत्तर मनुक्ख कुशल रहय, करुणाक संग विवेकक संगम हो, धर्मक संग श्रृंगारक योग रहय तथा काव्य-कला मे अनेक रंग-अनेक रूपता रहय - सैह भेल आदर्श रूप ।

विद्यापति-साहित्यक मुकुट-मणि अछि हुनक पदावली । हुनक पद प्रेमक हो किंवा भक्तिक, ओकर जड़ि जीवनक सामान्य धरातल मे अन्तर्भुक्त अछि । पदावलीक सबसँ प्रमुख वैशिष्ट्य ई अछि जे ओकर पद जीवन आ जगतक नाना क्रिया-व्यापार एवं परिस्थिति सँ सम्बन्धित मार्मिक उक्ति सँ अभिमंडित अछि । हुनक शिव विषयक 'नचारी' तथा 'महेशवाणी' मे तत्कालीन सामाजिक जीवनक कतेको पक्षक मार्मिक उद्घाटन भेल अछि । एहि मे एक पद एहन अछि जाहि सँ ज्ञात होइछ जे ओहि युगक तिरहुत मे अनमेल विवाहक प्रचलन बेस छल । 'पंच वर्षेतु भवेत गौरी नव वर्षेतु रोहिणी' मे विश्वास करय वला समाज बाल्यावस्था मे अपन कन्याक विवाह कऽ दैत छल। वर साधारणतः अधिक बयसक किंवा बूढ़ रहैत छलाह । एहि प्रकारक बूढ़ बर सँ व्याह करबाक लेल क्यो कन्या मोन सँ तैयार नहि होइत छलीह । कन्याक माय एकर घोर विरोध करैत कहैत छथि -

'हम नहि आजु रहब एहिआंगन
जौं बुढ़ होयत जमाई, गे माई ।
एक तऽ बइरि भेला बीध बिधाता
दोसर धिया केर बाप ।
तेसर बइरि भेल नारद बाभन
जे बूढ़ आनल जमाई, गे माई ।'

एकर अतिरिक्त एहि पद सभ सँ इहो भाषित होइछ जे ओहि युग मे विद्यापतिक समाज मे जन सामान्य बड़ निर्धन छल । ओकरा जीवन मे जन्महि सँ दुःखक जे साम्राज्य स्थापित भेलैक, तकर कहियो अन्त नहि

भेलैक। सुख सँ तँ कहियो भेटो नहि भऽ सकलैक, स्वप्नो मे सुख नहि भेटलैक।[4] एवं प्रकारेँ 'नचारी' तथा 'महेशवाणी' मे समाजक दुःख-दैन्यक अनेक चित्र अंकित भेल अछि जे विद्यापतिक सामाजिक चेतनाक प्रमाण थिक।

संस्कृत विद्वत्कुलसम्भूत विद्यापति स्वयं संस्कृतक प्रकाण्ड पंडित छलाह, तथापि अपन युगक जनजीवनक निकटता केँ प्राप्त करबाक लेल ओ पदावलीक रचना बुध-जनक भाषा संस्कृत मे नहि कय, जन सामान्यक भाषा मैथिली मे करब स्वीकार कयलनि। जन-भाषाक प्रति हुनका एतबा ने प्रेम एवं ममत्व छलनि जे ओ 'कीर्तिलता' मे एकर उद्घोष पहिने कयलनि -

बालचन्द बिज्जाबइ भाषा,
दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा
ई परमेसर सिव सिर सोहइ,
ई निच्चय नाअर मन मोहइ।

एहि सँ ई स्पष्ट अछि जे ओ जनसामान्यक हृदयक भाव केँ व्यक्त करबाक लेल जन-भाषा केँ अपन माध्यम बनौलनि। विद्यापतिक पदावली एकटा श्रृंगार-प्रधान गीति काव्य थिक। साधारणतः गीतिकाव्य मे कवि-दृष्टि समष्टिगत नहि भय, व्यक्तिपरके रहैछ, मुदा विद्यापति जन जीवन सँ पृथक् रहि मात्र अपन व्यक्तिगत भावनाक चित्रण नहि कयलनि। अधिकांश पद मे जन-मानसक संग अपन हृदयक तादात्म्य स्थापित कय, जनजीवन केँ वाणी प्रदान कयलनि। पदावलीक अनेक पद मे लोक तत्वक समावेश प्रचुर मात्रा मे पाओल जाइछ। ओहि मे कविक व्यक्तिगत भावनाक संग-संग जन-मानसक प्रतिफलन अनायासहि भऽ गेल अछि।

गीतिकार विद्यापति यद्यपि मध्यकालीन दरबारी कवि परम्परा मे एक स्वीकृत कवि छलाह, तथापि ओ जन-जीवनक प्रति अत्यधिक जागरूकताक परिचय देने छथि। लोक-जीवन सँ सम्बन्धित अनेक लोकगीतक सेहो ओ रचना कयलनि। एहि गीत सभ मे लोक-हृदयक अनुभूतिक मार्मिक अवतारणा भेल अछि। एहि गीत सभमे मात्र लोकगीतक धुने केँ नहि, अपितु लोक-जीवनक अनुभूति सभहिक सेहो निष्ठापूर्वक सरल स्वाभाविक ढंग सँ अभिव्यक्ति प्रदान कयल गेल अछि -

'मोरे रे अंगनवा चनन केरि गछिया, ताहि चढ़ि कुररय काग रे।
सोने चोंच बान्हि देब तोय बायस, जओ पिया आओत आज रे।

-मि.म., पद-203, पृ.-153

एहि सम्पूर्ण पदक विरहिणी नायिकाक काक-शकुन-संभाषण लोक-मर्म केँ स्पर्श करबा मे पूर्णतः समर्थ अछि। एही प्रकारेँ एक आन पद मे अचानक निन्न भऽ जयबाक कारणें प्रिय समागम जनित कल्पित सुख सँ वंचित विरहिणी नारीक हृदयक निराशा एवं आत्मग्लानिक अभिव्यक्ति सहज-स्वाभाविक रूपेँ भेल अछि-

सुतल छलहुँ हम घरवा रे, गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे, पिया आएल हमार।
कर कौसल कर कँपइत रे, हरबा उर टार।
कर पंकज उर थपइत रे, मुख चन्द्र निहार।
केहनि अभागलि बैरिनि रे, भांगलि मोर निन्द।
भल कए नहि देखि पाओल रे, गुनमय गोविन्द।
विद्यापति कवि गाओल रे, धनि मन धरू धीर।
समय पाय तरुबर फर रे, कतबो सिचु नीर।'

-मि.म., पद-865, पृ. 552

विद्यापतिक गीत मे लोक-जीवन केँ स्पर्श करबाक अपार क्षमता अछि। यैह कारण जे आइयो मिथिलाक ललनाक ठोर पर विद्यापतिक गीतक पांती अंकित अछि, कन्या लोकनिक कंठ-कंठ मे ओकर एक-एक शब्द उच्चरित अछि आ पंडित सँ लय हरबाह-चरबाहक स्वर मे ओकर ध्वनि अनुगुंजित अछि। आइयो जतय कोनो सामाजिक उत्सव एवं पावनि हो, ओ विद्यापतिक गीते सँ मर्यादित होइछ। 'जय-जय भैरवि, असुर भयावनि, पशुपति भामिनि माया' तँ आइ एहि समाज मे जन-जागरण एवं क्रांतिक आह्वान करय वला 'प्रयाण-गीत' भऽ गेल अछि। प्रायः सभ उत्सवक प्रारंभ आइ एही जय गीत सँ होइछ। विवाहक पश्चात् प्रथम समागमक अवसर पर मिथिलाक स्त्रीगण नव विवाहिता कन्या केँ शिक्षा दैत ई पद गबैत छथि -

सुन्दरि चललिहु पहु घर ना। चहु दिस सखी सब कर धर ना।
जाइतहु लागु परम डर ना। जइसे ससि काँप राहु डर ना।

मिथिलाक जन-मानस मे विद्यापतिक गीत केँ जतबा ख्याति प्राप्त अछि, ओतबा कतहु नहि। यैह कारण जे आइ हुनक गीतसभ लोक-गीतक रूप धारण कय जन-रंजन कऽ रहल अछि।

लोक तत्वक चयन मे विद्यापति केँ अद्भुत कौशल प्राप्त छन्हि। ओ अनेक पदक छन्द, धुन, स्वर एवं शब्द-विन्यास केँ लोक-जीवन सँ

ग्रहण कय संयोग एवं वियोग वर्णन मे लोकजीवनक मान्यता केँ प्रधानता देलन्हि अछि । उदाहरणक रूप मे बालकक रूपमे वसन्तक वर्णन करैत, बालकक जन्मक अवसर पर जन जीवन मे प्रचलित टोना-टोटका तथा अन्य लौकिक प्रथा केर चित्रण निम्न पद मे प्राप्त होइछ -

मधुलय मधुकर बालक दए कमल-पंखरी लाई ।
पओनार तोरि सूत बांधल कटि केसर कइलि बधनाई ।

विद्यापतिक पद मे दरबारी संस्कृतिक नहि, जन-साधारण सँ सम्बन्धित लोक-संस्कृति केँ अभिव्यक्ति प्रदान कयल गेल अछि । ओ राधा आ कृष्ण केँ सामान्य नायिका आ नायकक रूप मे चित्रित कय, प्रेम-व्यापार मे सामान्य प्रेमी-प्रेमिकाक हृदयगत भाव केँ प्रतिबिम्बित कयने छथि । ओ कृष्ण आ राधाक रूप, मिलनोत्कंठा, हर्ष-उल्लास, हास्य-विनोद आदिक चित्रण सामान्य प्रेमी आ प्रेमिकाक रूप मे कयने छथि -

कुंज भवन सँय निकसलि रे, रोकल गिरधारी ।
एकहि नगर बस माधव हे, जनि कर बटमारी ।
छोड़ कन्हैया मोर आंचर रे, फाटत नव सारी ।
अपजस होयत जगत भरि हे, जनि करिअ उघारी । (347ख)

दरबारी कवि भेलो सन्ता विद्यापति विरहिणी नायिकाक चित्रण कोनो रानी वा राजकुमारीक रूप मे नहि कय, एक साधारण नारीक रूपहि मे कयलन्हि अछि । निम्न पद मे विरह-विधुरा नायिकाक तीव्र वेदनाक अभिव्यक्ति लोकगीतक शैली पर भेल अछि -

के पतिआ लए जाएत रे, मोरा प्रियतम पास ।
हिए नहि सहए असह दुख रे, भेल साओन मास ।
एकसरि भवन पिआ बिनु रे, मोरा रहलो न जाय ।
सखि अनकर दुख दारुन रे, जग के पतिआय ।

– मि.म. पद-545, पृ. 365

विरह जन्य लोकगीत मे प्रायः निराशावादी प्रवृत्तिक अभाव सर्वत्र देखल जाइछ । विद्यापति सेहो अपन विरह सम्बन्धी गीत सभमे लोकगीतक एहि आशावादी प्रवृत्तियें केँ प्रश्रय दय विरहिणी नायिका केँ प्रिय-मिलनक आश्वासन प्रदान कयने छथि -

सून सेज हिए सालए रे, पिया बिनु घर मोय आजि ।
विनति करओ सहलोलिनि रे, मोहि देइ अगिहर साजि ।
विद्यापति कवि गाओल रे, आबि मिलत पिय तोर ।

डा० शिव प्रसाद सिंह विद्यापतिक गीतक आशावादी प्रवृत्तिक महत्व-निर्देश कयने छथि जे विद्यापतिक लोक चेतनाक वृहत् आयामक उद्घाटन करैत अछि – 'विद्यापतिक एहि गीत सभमे जतए नायिका आत्मग्लानि मे पीड़ित भऽ हजारो प्रकारक परिस्थितिक कल्पना कय, अपन दुःसह दुःखक भयंकरता सँ उबियाकऽ अनिष्टक बात सोचैत अछि, कवि ओकरा प्रत्येक परिस्थिति मे सखीक मुँहे, पथिकक मुँहे किंवा स्वयं अपने मुँहे आश्वासनक दूटा शब्द, आशाप्रद दूटा बात अवश्य कहैछ । विद्यापतिक एहि गीत सभकेँ गाबि नइ जानि कतेको प्रोषितपतिका सुदूर कर्मरत अपन प्रेमी, पतिक विशेष दुःख केँ सम्हारबा मे समर्थ भेल होयतीह ।[5]

विद्यापति अपना युगक जन-जीवन मे प्रचलित स्वस्थ एवं अस्वस्थ-दुनू प्रवृत्तिक चित्रण यत्र-यत्र कयने छथि । लोक-जीवन मे प्रचलित अनमेल विवाह सदृश कुप्रथा दिस हुनक निम्न पद हमरा लोकनिक ध्यान आकृष्ट करैछ -

पिया मोर बालक हम तरूनी,
कोन तप चुकलौंह भेलौंह जननी ।
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर,
पियाक देखैत मोर दगध शरीर ।
पिया लेली गोदके चलिलि बजार,
हटियाके लोग पूछे के लागु तोहार ।
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाइ,
पुरुव लिखल छल बालम हमार ।
बाट रे बटोहिया कि तुहु मोरा भाइ,
हमरो समाद नैहर लेने जाइ ।
कहिहुन बाबा के किनए धेनु गाइ,
दुधवा पियाइ के पोसता जमाइ ।

– मि.म., पद-597, पृ. 394

कन्याक पिता पर केहन तीक्ष्ण व्यंग्य । कन्याक विवाह एकटा बालक पति सँ भेल अछि । कन्या अपन पिता केँ सम्वाद दैछ जे ओ अपन एहि जमायक लेल दूध पीबाक हेतु एक गोट गाय कीनि पठा देथि । विद्यापति एतय कन्याक पिता केँ मूर्ख नहि बतौलनि, हुनक भर्त्सना वा सामाजिक उपहास नहि कयलनि, मात्र व्यंग्य कयलनि – मार्मिक आ तीक्ष्ण !

यथार्थक अतीव सुन्दर अभिव्यक्ति हुनक कूटनी नारी सँ सम्बन्धित पद मे भेल अछि । एकटा एहन दूती, जे अपन सम्पूर्ण यौवन-काल छल-छद्मपूर्ण प्रेम-व्यापार किंवा व्यवसाय मे व्यतीत कऽ चुकलि अछि, वृद्धावस्था मे अपन कुत्सित जीवन सँ विरक्त एवं निराश भऽ जाइत अछि। एहि प्रकारेँ कूटनी नारीक कुत्सित जीवनक चित्र द्वारा तत्कालीन नारी-वर्गक दुर्दशा दिस संकेत कयल गेल अछि –

हमे धनि कूटनी परिनत नारि, बैसहु वास न कहाँ विचारि ।
काहु के पान काहु दिअ सान, कत न हकारि कएल अपमान।
कय परमाद हिया मोर भेल, आहे यौवन कतय चल गेल ।
भांगल कपोल अलक भरि साजु, संकुल लोचने काजर आजु ।
धवला केस कुसुम करु वास, अधिक सिंगार अधिक उपहास।
थोथर थैया थन दुहु भेल, गरूअ नितम्ब कहाँ चलि गेल ।
यौवन सेस सुखायल अंग, पाछु हेरय विपुलइते उमत अनंग ।
खने खस घोघट विघट समाज, खन खन आब हकारलि लाज।
भनहि विद्यापति रस नहि छेओ, हासिनि देइ पति देवसिंह देओ।

–मि.म., पद-6, पृ.-6

वस्तुतः सामन्ती युगक नारी केँ पुरुष जकाँ कोनो निश्चित उदात्त आदर्श नहि छल । हुनका सभक लेल सौन्दर्य आ यौवन सभ सँ पैघ आभूषण छल, कलामति होयब हुनक श्रृंगार छल –

गेल भाव जे पुनु पलटावए सेहो कलामति नारि ।

– मि.म., पद-82, पृ.-66

ओहि युग मे 'न तु स्त्री स्वातंत्र्यमर्हसि' सिद्धान्त केँ मानल जाइत छल। सुन्नरि कुमारि कन्या तकरेर अपहरण राजा वा हुनक सामन्त कयल करैत छलाह आ सेहो गर्वक संग । अतः विद्यापति सेहो अपन युगानुकूल नारीक लेल निर्देश कयलनि –

मा जीवन्तु स्त्रिया नाथा वृक्षेण च बिना लताः ।
साध्वीनां जगति प्राणाः पतिप्रणानुगामिनः ।[6]

तथा –

सिंहा सत्पुरुषाश्चैव निज दर्पोपजीविनः ।
पराश्रयेन जीवन्ति कातराः शिशवः स्त्रियः ।[7]

अथवा,

पतिरेव गतिः स्त्रीणां बालानां जननी गतिः ।
नालसानां गतिः काचिल्लोके कारुणिकं बिना ॥[8]

कतेको गीति पद मे सेहो कवि एहि आदर्श दिस संकेत कयने छथि –

कैरव सुरूज कमल चन्द । परपुरुषक सिनेह मन्द ।[9]

××× ××× ×××

ते हमे एहे हलल अवधारि । पुरुष विहुन जीवए जनु नारि ।[10]
कत न जीवन संकट परए, कत न मीलए नीधि ।
उत्तिम ते अओ सत न छाड़ए, भल मन्द कर बीधि ॥

××× ××× ×××

मान बेचि जदि प्राण जे राखिअ ताते मरण भला ।

उपर्युक्त पंक्ति सभ दाम्पत्य प्रेमक स्थिरता, अचलता, पवित्रता तथा आदर्शक सूचक थिक । युग-परिसीमाक अन्तर्गत कवि एहि सँ बेसी आर लिखबे की करितथि ? परकीया प्रेम जाहि युगक काव्यक मुख्य वर्ण्य विषय हो, ओतय कवि यदि एतबा लिखब नहि बिसरलथि तँ कोन कम ।

विद्यापतिक पद सभमे वहुवल्लभ नायक द्वारा उपेक्षिता, विस्मृता, अर्द्धविस्मृता पत्नी वा प्रेयसीक मनोभावक अनेक चित्र प्राप्त अछि । हुनक अनेक पद हुनकालोकनिक व्यथा सँ सजल अछि । बेरि-बेरि हुनका पद सँ कतहु-कतहु सामन्ती नारीक व्यथा सहस्रघा भऽ फूटि पड़ैछ –

जनम होअए अनु जञो पुनु होई । जुवती भए जनमए जनु कोई ॥
होइह युवति जनु हो रसमन्ती । रसओ बुझाए जनु हो कुलमन्ती ॥
निधन मागओ विधि एक पए तोही। थिरता दिह अवसानहु मोही ॥
मिलिहि सामि नागर रस धारा । परवस होअ जनु हमर पियारा ॥
होअह परवस बुझहि विचारि । पार विचार हार कओन नारि ॥
भनइ विद्यापति अछ परकारे । दन्द समुद होएत जीव दए पारे ॥[11]

कुलमन्ती नारी केँ अपन कुल-मर्यादा तँ निमाहहि पड़ैत छैक, मुदा ओकरा ने विवाह पूर्व प्रेमक स्वतंत्रता वा अवसरे प्राप्त होइछ, ने ओकरा लेल यैह निश्चित रहैछ जे विवाह भेला पर पति ओकरा भावनाक आदर करथिन वा नहि । एकर अतिरिक्त 'सोरह सहस गोपी-पति कान्हे' केर आदर्श जाहि समाज मे हो, ओहि मे कोनो पति अपन स्त्रीक कतबा दिन धरि बनि कऽ रहि सकैछ, से कल्पना करबाक बात थिक ।

निष्कर्ष ई जे विद्यापतिक गीतिपद सभमे दाम्पत्य जीवनक पवित्रता पर यथावसर बल देल गेल अछि, मुदा परकीया प्रेमक चित्रण सेहो ओही मात्रा मे भेल अछि । एहि सँ हम ई मत निर्धारित कऽ सकैत छी जे विद्यापतिक काव्य मे मूल तथा महत्वपूर्ण स्वर दाम्पत्य सम्बन्धक पवित्रताक अछि, संगहि परकीया प्रेमक विविध प्रसंगक वर्णन कय कवि अपन युग-यथार्थपरक दृष्टिक परिचय देलन्हि अछि ।

विद्यापति कृष्णक प्रेम-क्रीड़ा सभक चित्रण करैत काल कृष्ण केँ नन्दराजक कुमारक रूप मे प्रस्तुत नहि कय, जन साधारण सँ परिचय-पात राखयवला एकटा सामान्य ग्वाल-बालक रूपमे प्रस्तुत कयलन्हि अछि । जमुना-तट पर कदम्बक गाछक नीचाँ मुरली बजैबत कृष्ण एक सामान्य प्रेमीक रूपमे अपन प्रेयसीक प्रतीक्षा करैत देखल जाइछ -

नन्दक नन्द कदम्बक तरु-तर धिरे-धिरे मुरलि बजाव ।
समय संकेत-निकेतन बइसल, बेरि-बेरि बोलि पठाव ।
सामरि, तोरा लागि अनुखन विकल मुरारि ।
जमुनाक तिर उपबन उदबेदल फिर-फिर ततहि निहारि ।
गोरस बेचए अबइत-जाइत जनि-जनि पुछ बनमारि ।

-मि.म., पद-258, पृ.-191

विद्यापति कृष्णक हेतु जाहि ग्राम्य वातावरणक सृष्टि कयने छथि, ओ लोकजीवनक अभिव्यक्तिक लेल सर्वथा उपयुक्त अछि । राधा एक सामान्य नायक कृष्ण पर व्यंग्य करैत हुनक मूर्खता दिस अनेक पद मे संकेत करैत छथि - यथा -

कउड़ि पठाओले पाव नहि घोर ।
घीव उधार मांग मति मोर ।
बास न पाबए मांग उपाति ।
लोभक रासि पुरूष थिक जाति ।

- मि.म., पद-56, पृ.-48

ई कृष्ण कतेक मूर्ख छथि ? की कौड़ी सँ कतहु घोड़ा कीनल गेलैक अछि ? बैसबाक लेल जगह नहि, मुदा खयबाक लेल उत्तम व्यंजन चाही ।

वस्तुतः विद्यापति सामान्य जन-जीवनक गहन अध्येता छलाह । यैह कारण जे जन साधारण सँ सम्बद्ध चिरन्तन सत्यक उद्घाटन मे विद्यापति केँ

महती सफलता प्राप्त भेल छनि । जाहि प्रकारेँ हिन्दीक महाकवि तुलसीक चौपाई, सूक्ति तथा कहावतक रूप मे जन-सामान्य मे प्रचलित अछि, ओही प्रकारेँ मिथिलाक दैनिक जीवन मे विद्यापतिक अनेक पंक्ति लोकप्रियता प्राप्त कऽ चुकल अछि । मुहाबरा आ लोकोक्तिक प्रयोग मे विद्यापति एकटा जीवनद्रष्टा, जनसामान्यक प्रतिनिधि कविक रूपमे उपस्थित भेल छथि । लोक प्रचलित मुहाबराक प्रयोग सँ ओ भाषाकेँ एकटा नव शक्ति प्रदान कयलनि, संगहि अपन काव्य केँ विशेष जीवन्त आ लोक जीवन-सम्पृक्त बनओलन्हि । लोकोक्ति लोक भाषाक सम्पत्ति मानल जाइछ । ओहि मे जन-जीवनक शाश्वत सत्य सुरक्षित रहैछ । स्त्रीगणक बात-चीत मे तँ एहि लोकोक्ति सभक आर अधिक प्रयोग होइछ । विद्यापति सेहो राधा तथा हुनक सखी सभक वार्तालापक प्रसंग मे एहि लोकोक्ति सभक विशेष अभिनव प्रयोग कयल अछि। राधा अपन सखी सभ सँ अपन रातुक अनुभव बतबैत मर्मस्पर्शी लोकोक्ति सभक योजना द्वारा कृष्णक मूर्खतापूर्ण व्यवहार पर व्यंग्य करैत देखल जाइछ -

कि कहब हे सखि रातुक बात । मानिक पड़ल कुबानिक हात ।
कांच कंचन न जानए मूल । गुंजा रतन करए समतूल ।
जे किछु कभु नहि कला रस जान । नीर खीर दुहु करए समान ।
तन्हि सौ कहाँ पिरीत रसाल । बानर कंठ कि मोतिम माल ।

- मि.म., पद-708, पृ.-462

विद्यापतिक काव्य जन-जीवन मे प्रचलित लोकोक्ति एवं ग्राम्य प्रयोगक कारणें लोकचेतना केँ मुखरित करबा मे आर समर्थ भऽ उठल अछि । पदावली मे प्रयुक्त ग्राम्य प्रयोग तथा लोकोक्ति सभक किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

कूप न आबए पथिकक पास ।
अपने कर हम मूड़ मुड़ाएल, कानु से प्रेम बढ़ाइ ।
जाकर हिरदय जतहि रतल, से धसि ततही जाई ।
जइओ जतने बांधि निरोधिए निमन न नोर थिराई ।
आशा लुबुधल न तेजए रे, कृपनक पाछु भिखारि ।
हृदयक बेदन बान समान, आनक दुख आन नहि जान ।
अभिनव ए कमल फुल सजनी, दोना नीमक डार ।
पीठ आलिंगने कत सुख पाव, पानिक पिआस दुधे किअ जाव ।
आरति गाहक महग बेसाह ।
रोपि न काटिअ विषहुक गाछ ।

भेक न पिबए कुसुम मकरन्द ।
बड़हु भुखल नहि दुहु कर खाय ।
परक वेदन पर बांटि न लेई ।
पवन न सहय दीपक जोती ।
बानर मुख की सोभए पान ।
सुपुरुष वचन पखानक रेह ।
धयले रतन अधिक मूल होय ।
अपन अपन भल सब केओ चाह ।
भिन भिन राज भिन्न वेवहार ।

एकर अतिरिक्त विद्यापति अपन पदावली मे यत्र-तत्र नीति परक सूक्ति सभक प्रयोग कय अपन लोकजीवन सम्बन्धी चेतनाक यथेष्ट परिचय देने छथि । लौकिक जीवन मे धनिकलोकनिक आदर आ निर्धनक उपेक्षा युग-युग सँ होइत आयल अछि । एहि जीवन-सत्यक उद्घाटन हुनक निम्न सूक्ति मे भेल अछि –

धनिकक आदर सब तह होय, निरधन बापुर पुछय न कोई।

एहि रूपें कृपण पुरुषक जीवनक उपहास कवि निम्न पंक्ति मे कयने छथि –

कृपन पुरुष के केओ नहि निक कह, जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहि उपभोगब, केवल परहिक आस ।

विद्यापति अपन कतेको पद मे सामान्य जन-जीवनमे प्रचलित रूढ़ि एवं अन्धविश्वास पर सेहो व्यंग्य कयने छथि । देवी-देवता, भूत-प्रेत, टोना-टोटका मे जनसाधारणक विश्वास दिस सेहो संकेत कयल गेल अछि। उदाहरण स्वरूप एकटा प्रेमिका गोपी अपन सासु केँ धोखा देबाक लेल भूत लगबाक अभिनय पसारि दैछ, कृष्ण एकटा ओझा बनैछ आ एकसरे मे मंत्र प्रयोगक आज्ञा लय घरक सभ क्यो केँ ओतय सँ हटा दैछ, गोपीक रोग दूर भऽ जाइछ –

निरजन होइ मंत्र झाड़िए, तब इह होएब माल ।
एत सुन जहिला घर दोहे लाओल, निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल बाहर बइसल, पुरल कान्ह मन काम ।
बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल भागल तब सेहो देबा ।
देव देयासिनि घर संय निकलल, चातुरि बूझलि केवा ।

विरह सम्बन्धी पद सभमे विद्यापति अनेक पदमे लौकिक विश्वासक प्रयोग कय अपन उक्ति केँ विशेष मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी बनौने छथि । कृष्णक विरह मे राधा कृष्णक निष्ठुरता दिस संकेत करैत अपन आत्मग्लानि केँ निम्न पंक्तिक माध्यम सँ व्यक्त कयने छथि –

की हम साझक एकसर तारा, भादब चौथिक ससि ।
इथि दुहु माझ कवन मोर आनन, जे पुहु हेरसि न हसि ।[12]

राधा कहैछ जे हम की सांझुक एकाकी तारा छी अथवा भादबक चौथक चन्द्रमा जे हमर प्रियतम हमरा मुँह केँ कलंकित बूझि, हमरा दिस तकबो ने करैत छथि ? राधाक एहन उक्ति मे लोक-संस्कार अन्तर्हित अछि।

विद्यापतिक काव्य मे एहन अनेक स्थल प्राप्त होइछ जतय ओ अस्वस्थ एवं अनैतिकतापूर्ण वर्णन प्रस्तुत कयने छथि । रतिक वीभत्स वर्णन, विपरीत रतिक अश्लील वर्णन तथा विवृत आलिंगनक वर्णन स्वस्थ प्रवृत्तिक लक्षण नहि थिक । यद्यपि कतहु-कतहु कवि एहन वर्णन केँ रूढ़ अप्रस्तुत सभक माध्यम सँ झपबाक प्रयास कयने छथि, किन्तु से संभव नहि भऽ पाओल अछि । एकटा उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर ।
सपन कि परतख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥२॥
तडित-तला तल सजल समारल
आंतर सुरसरि धारा ।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ तारा ॥४॥
अंबर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले ।
खरतर बेग समीरन संचरु
चंचरिगन करू रोले ॥६॥
प्रलय-पयोधि-जले तन झापल
ई नहि जुग अवसान ।
के विपरीत कथा पतिआयत
कवि विद्यापति भान ॥८॥

–व.कु.मा.प. 172, पृ. 278

एहि पद मे कवि श्लेष के द्वारा विपरीत रतिक नग्न क्रिया कलाप केँ झपबाक यथेष्ट प्रयास कयल अछि, मुदा से संभव नहि भऽ पाओल अछि। अलंकारक आवरण रहलो सन्ता नग्नता नहि नुका सकल अछि। विदग्धविलासक प्रायः सभ पद एहि दोष सँ आक्रान्त अछि, मुदा ओहि मे प्रेमक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावाभिव्यंजन एवं सौन्दर्यक छटा पूर्णतः मुखरित भेल अछि जे कविकेँ काम्य अछि।

भारतवर्षक सबसँ पैघ व्यवसाय खेती करब थिक। ओ आइयो अछि, प्राचीन युग मे सेहो छल। 'लिखनावली'क दशाधिक पत्र मे खेती तथा ओकर समस्या वर्णित अछि। कोनो पत्र मे, कोन धान रोपल जाय, तकर वर्णन अछि, तँ कोनो मे गाय-बड़दक बथान केँ झाड़ि-पोछि खड़रिकऽ रखबाक आदेश अछि।[13] उच्च वर्गक खेती रखबार तथा हुनक बहिया चाकर सभ पर निर्भर करैछ। विनयक एक पद मे एकर संकेत प्राप्त होइछ-

खेत कएल रखबारे लूटल ठाकुर सेवा भोर।
वणिजा कएल लाभ नहि पाओल अपन निकट भेल थोर।[14]

मिथिलाक अधिकांश खेत सभ गर्मीक दिन मे सुखा जाइछ, ओहि मे दड़ारि फाटि जाइछ। बैशाख-जेठ मे सूर्यक ताप अपन चरम विन्दु पर रहैछ। प्रचण्ड रौद सँ चर-चाँचर, पोखरि-डाबर सभ सुखा जाइछ। विद्यापति एक पद मे एकर एक गोट जीवन्त चित्र प्रस्तुत कयने छथि -

सूखल सर सरसिज भेल झाल। तरुन तरनि, तरु न रहल हाल।
देखि दरनि दरसाव पताल। अबहु धराधर धरसि न धार॥
जलधर जलघन गेल असेखि। करए कृपा बड़े पर दुख देखि॥[15]

अभिसार सम्बन्धी दशाधिक पद मे पावस ऋतु मे मिथिलाक गाँव कोना जलमग्न भऽ जाइत अछि, बाट पिच्छर, डेग-डेग पर सांपक आशंका, मुसलाधार वर्षा आ क्षण-क्षण बिजुरीक चमकब-एकर सजीव स्वाभाविक चित्र सेहो प्राप्त होइछ।[16] खेत पटयबाक लेल वर्षाक पानि केँ आड़ि बान्हिकऽ एकत्र कऽ लेल जाइछ, जौँ से नहि कएल जाय तँ पानि बहि जायत। एक पद मे एहि दिस संकेत कयल गेल अछि -

गेला नीर निरोधक की फल अवसर बीतल दान[17]

एही प्रकारे वर्षा बीति गेला पर मात्र पश्चात्तापे शेष रहि जाइछ, तकर संकेत निम्न पद द्वारा देल गेल अछि -

समय गेले मेघे वरिसव की दहु ते जलधार।[18]

अपना ओहि ठामक प्रायः गरीब खेतिहर अपना खेत मे किंवा आँगन मे मचान बनाकऽ ओहि मे साग, तीमन-तरकारीक लत्ती लगबैत अछि। मचान नहि बन्हला सँ लत्ती लतरत नहि आ ओ कोना फरत-फुलायत? 'कीर्तिलता'क प्रारम्भहि मे कवि एकर एकटा अतीव सुन्दर चित्र चित्रित कयने छथि -

तिहअन खेतहि माँझ किमि कितिबल्ली पसरेई।
अक्खर अम्भारम्भजओं ञो तसु मंच न देई॥

एकटा महेशवाणी मे सेहो 'खेती-पथारी'क चर्चा कयल गेल अछि। भगवान शिव औढ़र छथि, ने ओ खेती करैत छथि, ने पथारी, तथापि ओ त्रिभुवनक प्रसिद्ध दानी थिकाह -

खेती न पथारी करथि भाग अपना।
जगतक दानी थिका तीन भुवना॥[19]

विद्यापति-युग राजनीतिक उथल-पुथलक युग छल। आक्रमण-प्रत्याक्रमण, युद्ध विप्लव आदि तँ प्रायः होइते रहैत छल। राजन्य वर्गक जीवन वा सिंहासन अनिश्चित रहैत छल। राजा सभक संग हुनक सामन्त, सभासद, कवि, पंडित-पुरोहित आदिक भाग्य-परिवर्तन होइत रहैत छल। स्वयं विद्यापतिक जीवन मे सेहो अनेक पटाक्षेप आयल, मुदा एक वर्ग एहन छल, जकरा जीवन मे कोनो उथल-पुथल नहि छलैक। ओ वर्ग छल दोकानदार-व्यापारी वर्ग। सामान्य लोक मेहनत-मजदूरी करैत छल, तैयो दरिद्रे रहैत छल। प्रभु वर्ग राग-रभसमे रहैत छल, पंडित-ब्राह्मण पठन-पाठन मे, ग्रंथ-रचना करबा मे, मुदा वणिक अपन मोती, मजीठ, कर्पूर, ताम्बूल, तेल, सोना-चाँदी आदिक व्यापार करैत छल। ओ प्रभु वर्गकेँ विलासक सामग्री देश-विदेश सँ आनि कऽ दैत छलैक। अतः ओकरा राज्य मे मान-प्रतिष्ठा छलैक। 'लिखनावली'क कैक गोट पत्र मे मोती, मजीठ, ताम्बूल, पुंगीफल, स्वर्ण आदिक वाणिज्य-व्यापारक उल्लेख भेल अछि। एक ठाम राजाक कोनो सम्बन्धीक लेल व्यवहारक वस्तु मँगबयबाक हेतु एक व्यापारी अपन अन्य व्यापारी मित्र केँ एहि प्रकारक पत्र लिखैत अछि।[20] विद्यापतिक पद सभ मे सेहो दोकानदारी, वणिज-कर्म सँ सम्बन्धित संकेत प्राप्त होइछ। विनयक एक पद मे एहि प्रकारक एक उदाहरण देखल जा सकैछ -

जोषि-परेषि भनहि हमे निरसल, धन्ध लागल मन मोर।
ई संसार हाट कए मानह सबो नैक वनिजे ओर॥

जो जस बनिजए लाभ पावए मुरुख मरहि गमार ।
विद्यापति कह सुनह महाजन राम भगति अछि लाभ ॥[21]

जाचब-परखब, संसार केँ हाटक उपमा देब, जेहन व्यापर होयत, जेहन दोकानदारी होयत, ओहने लाभ-हानि, मूर्ख व्यापारी तँ अपन पूंजीओ गमा कऽ हाट सँ घुरि अबैछ आदि कथन कविक अपन युगक वाणिज्य-व्यापारक नीक ज्ञानक परिचायक थिक । विनयक पद मात्र वैराग्य किंवा ईश्वर भक्तियेक उपदेश नहि दैछ, जीवनक क्रिया-व्यापार मे सेहो दक्ष होयबाक प्रेरणा प्रदान करैछ । चाहे प्रेमक पद हो वा भक्तिक, विद्यापति जीवनक व्यावहारिक पक्षक प्रतियें सर्वदा जागरूक एवं सतर्क देखल जाइछ ।

पुरुष परीक्षाक एक कथा मे अपव्ययी वणिक पुत्रक दुर्दशाक वर्णन कयल गेल अछि । व्यापार दिस ध्यान नहि दऽ रंग-रभस मे टका खर्च करबाक कारणेँ आ अपन सम्पूर्ण पैत्रिक सम्पति केँ नष्ट कय व्यापार केँ चौपट कऽ दैछ आ अकिंचन बनि बौआय लगैछ ।[22] एही कथा मे ईहो कहल गेल अछि जे व्यापार धनक मूल अछि, संगहि व्यापार सँ धन कोना बढ़ैछ तकर रहस्य सेहो बताओल गेल अछि -

देश देशान्तर नीतं कालात् कालान्तरं तथा ।
वस्तु मूल्य विभेदेन वणिजो लाभ मादिशेत् ॥[23]

'कीर्तिलता'क 'जञोनापुर' वर्णन प्रसंग मे विद्यापति ओहि ठामक हाट-बजार, बनिया-बनिआइनक हाव-भाव आदिक वर्णन कयने छथि । एहि सँ विद्यापतिक वाणिज्य-व्यापार मे अभिरुचिक संकेत प्राप्त होइछ । एकर अतिरिक्त अनेक प्रेमगीत मे सेहो वणिज-व्यापारक दुनिया सँ उपमित कयल गेल अछि । एक पद मे सखी, नायिका केँ अपन प्रेमक पसार अर्थात् दोकान पसारबाक शिक्षा दैछ । ओ इहो कहैछ जे जतबा रूप होयतह, ओहि के अनुरूपे ओकर मूल्य सेहो लेबाक चाही-

से अति नागरि तञे सब सार । पसरओ मालति प्रेम पसार॥
जौवन नागरि बेसाहब रूप । ततै मूल इह जते सरूप ॥[24]

लोक कतबहु युक्ति वा कौशल सँ वस्तु किएक ने बेचय, बेकाजक वस्तुकेँ के कीनत ? एहि सन्दर्भ मे विद्यापतिक स्पष्टोक्ति द्रष्टव्य अछि -

जतने कत न के न बेसाहए गुंजा केदहु कीन ।[25]

एकटा रूपगर्विता नायिका अपन अपूर्व रूप छवि केँ पसारि कऽ नायक सँ पूछैत अछि जे ओकरा हाट मे तँ सभ वस्तु छैक - सोना-चांदी,

मणि-माणिक्य-ओ की लेत आ बदला मे की मूल्य देत ?[26] पहिल बेर दोकान लगबयबला नीक बोहनीक आशा करैत अछि, गाहक सँ ओ नीक बोहनी करबाक आग्रह करैत अछि । जौं पहिल बोहनीये नीक नहि भेलैक, तँ दोकानदारी की ? जौं गाहक वस्तु केँ छू-छा कऽ चल जांय तँ ताहू सँ दोकानदार केँ घाटा सैह लगैछ । छूला सँ तँ रत्नक मूल्य सेहो कम भऽ जाइछ ।[27] बेसी लाभक आशा मे कौखन व्यापारी केँ नोकसानो उठबय पड़ैछ । एहि सँ तँ कखनहुँ पूजिओ नष्ट भऽ जाइछ ।[28] एहि प्रकारक व्यापार सम्बन्धी अनेक उदाहरण प्रस्तुत कयल जा सकैछ ।

अपन युगक राजन्य वर्ग सँ विद्यापतिक घनिष्ट सम्पर्क छलन्हि । वादी-प्रतिवादी, जयपत्र आदि अनेक शब्द हुनक पद सभमे उपलब्ध अछि । एहि सँ ई ज्ञात होइछ जे विद्यापति जन सामान्य सँ लऽ कय राजन्य वर्ग धरिक क्रिया-व्यापार सँ परिचित छलाह । न्यायालयक विधि-कानूनक सेहो हुनका यथेष्ट ज्ञान छलन्हि । एक पद मे तँ न्यायालय मे कोनो मोकदमाक दुनू फरीक तथा न्यायाधीश आदिक पूर्ण दृश्य उपस्थित कऽ देल गेल अछि । पद द्रष्टव्य अछि -

माइहे शीत वसन्त विवाह । कवने विचारब जय अवसाद ॥
दुहु दिश मधथ दिवाकर भेल । दुजवर कोकिल साखिता देल ॥
नव पल्लव जयपत्र सञो भांति । मधुकर माला आखर पांति ॥
वादी तह प्रतिवादी मीत । शिशिर विन्दु हो अन्तर शीत ।

- मि.म., पद-141, पृ. 106

शीत आ वसन्तक मोकदमा मे दिवाकर मध्यस्थ थिकाह । पक्षी मे श्रेष्ठ कोइली गवाह अछि, भ्रमरक पंक्ति अक्षरक पंक्तिक काज करैछ । गीत वादी केर भऽ रहल छैक, प्रतिवादी सहमल अछि, भयभीत अछि । एतय न्यायालय मे मोकदमाक पूर्ण दृश्ये केँ प्रस्तुत कऽ देल गेल अछि । 'लिखनावली' मे न्यायालय सम्बन्धी दशाधिक पत्र देल गेल अछि । एहि सँ ई प्रतीत होइछ जे मोकदमाक प्रचलन मिथिला मे आइये नहि, विद्यापतिक युग मे सेहो छल । एहि प्रकारक वर्णन सभ सँ ई ज्ञात होइछ जे विद्यापति केँ अपन युगक न्याय-व्यवस्थाक पूर्ण ज्ञान छलनि, ओकर दुर्बलता एवं विशेषताक वर्णन सँ हुनक तीव्र निरीक्षण शक्तिक परिचय प्राप्त होइछ । एकरा विद्यापतिक कवि-कौशल, प्रखर दृष्टि तथा युग-जीवनक व्यापक ज्ञानक परिचायक कहल जा सकैछ । विद्यापतिक काव्य मे सामाजिक

चेतनाक उन्मेष कोन रूपें भेल अछि, तकर पूर्व कथित पदस अप्रतिम उदाहरण थिक ।

राजन्य वर्ग सँ सम्बन्धित किछु अन्य प्रकारक पद सेहो प्राप्त अछि, जाहि मे राज्याभिषेक प्रमुख अछि । ऋतुराजक आगमनक चित्रण करैत विद्यापति राज्याभिषेकक समयक किछु आनुष्ठानिक चित्र सेहो प्रस्तुत कयने छथि । वसन्तक आगम भऽ गेल अछि । प्रकृति नव पल्लव, नव मञ्जर, नव सौरभ तथा मधुकरक नव गुंजन सँ आपूर्यमान भऽ रहल अछि। कवि वसन्तक 'चुमाओन' करबा रहल छथि । चित्र द्रष्टव्य अछि -

अभिनव पल्लव बइसक देल । धवल कमल फुल पुरहर भेल ।
करु मकरन्द मन्दाकिनि पानि । अरुन असोग दीप बहु आनि ।
माइ हे आइ दिवस पुनमन्त । करिए चुमाओन राम वसन्त ।
सपुन सुधानिधि दधि भल भेल । भमि भमि भमरि हंकारइ देल ।
केसु कुसुम सिंदुर सम भास । केतकि धूल विथुरलह परवास ।
भनइ विद्यापति कवि कण्ठहार । रस बुझ सिवसिंह सिव अवतार ।

-मि.म., पद - पृ. 106

चुमाओनक समयक कोनो विधक सामग्री एतय नहि छुटल अछि । एक अन्य पद मे ऋतुराजक जन्म लेबाक आ ओहि उपलक्ष्य मे होमयवला उत्सवक सविस्तर वर्णन प्रस्तुत कयल गेल अछि । जन्म सँ युवावस्था धरिक कैक प्रकारक संस्कारक कवि क्रमपूर्वक वर्णन कयने छथि ।[29] एही प्रकारेँ विवाहक चित्र सेहो एक अन्य पद मे वर्णित अछि ।[30]

विद्यापति मुख्यतः प्रेम आ सौन्दर्यक कविक रूपमे विख्यात छथि । मिथिला सँ बाहर कृष्ण-गोपी प्रेम-प्रसंगक कवि रूपमे लोक हुनका प्रतिष्ठा प्रदान केलकनि । बंगाल मे प्रचलित विद्यापतिक पद सभ मे उच्छल उन्मद श्रृंगारक पारावार तँ भेटैछ, मुदा ओहि मे नारी-जीवनक व्यथा-विवशताक अभिव्यक्ति ओतबा नहि भेल अछि जतबा मिथिला वा नेपाल मे प्राप्त आकर पोथी सभक पद मे । बंगाल मे प्राप्त पद सभमे विद्यापतिक काव्यक सामाजिक पक्ष गौण अछि ।[31]

विद्यापतिक युग मे पुरुषक बहुवल्लभ होयब तथा परकीया प्रेमक बेस प्रचलन छल । सामन्ती सामाजिक जीवनक ओहि काल मे जे श्रृंगार काव्यक रचना भेल अछि, तकरा मूल मे यैह दुनू प्रकृतिक चित्रण भेल अछि। विद्यापति सेहो कोनो अपवाद नहि छथि । ओ अपना युगक प्रत्येक

सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उथल-पुथल, लोकाचार तथा एक-एक घटना-दुर्घटना सँ उच्छ्वसित भेल छथि । यैह कारण जे जतय विद्यापतिक काव्य मे श्रृंगारक वर्णन भेल अछि, ओतहि ओहि मे आचरणक पवित्रता, कर्तव्यनिष्ठा, वचन निर्वाह, व्यवहार-कुशलता तथा कलाक आघात सभकें दृढतापूर्वक सहन करबाक सन्देशक सेहो चित्रण कयल गेल अछि । सामाजिक नैतिकताक प्रति कविक जागरूकता 'पुरुष परीक्षा'क पृष्ठ-पृष्ठ पर अंकित अछि । पुरुष परीक्षा मे आदर्श पुरूषक संकेत देल गेल अछि। पुरुष-आदर्शक प्रतिष्ठा 'पुरुष परीक्षा'क वर्ण्य विषय अछि तथा नारी-जीवनक वास्तविकता, रसमाधुरी, सुख-दुःख तथा आदर्श पदावली मे स्थापित कयल गेल अछि । कवि ओकरहि वास्तविक पुरुष कहलनि अछि जे वीर, बुद्धिमान, विद्वान तथा पुरुषार्थी हो, अन्यान्य तँ पुरुषक आकृति मात्र धारणकऽ कय रहैत अछि -

'धीरः सुधी सुविद्यश्च पुरुषः पुरूषार्थवान् ।
तदन्ये पुरुषाकारा पशवः पुच्छवर्जिताः ॥[32]

पुरुष कें बातक धनी होयबाक चाही । वचन दऽ कय बिसरि जायब, ओकर निर्वाह नहि करब, पुरुषक मर्यादाक विरुद्ध थिक । 'पुरुषक वचन पषानक रेह' - विद्यापति - पदावलीक स्थायी स्वर थिक। पुरुषक दोसर विशेषता थिक मानक धनी होयब । जे व्यक्ति मानक धनी नहि, हुनक जीयब व्यर्थ थिक । मान बेचि कऽ यदि प्राणक रक्षा कयल जाय तँ ओ आर व्यर्थ ।[33] शत्रुक समक्ष जे अपन मस्तक नहि झुकाबय, अपन मान आ प्रतिष्ठाक रक्षाक लेल जे अपन प्राणहुक आहुति दऽ दीअए, ओएह श्रेष्ठ पुरुष थिक । मान बेचि कऽ प्राण-रक्षा करबाक अपेक्षा मरि जायब नीक थिक ।[34]

विद्यापति कें जीवनक बदलैत पटाक्षेप, सामाजिक अन्हर-बिहाड़ि, आनन्द-परिहासक जतबा अनुभव छलन्हि ओतबा आर किनको नहि । समयानुकूल काज करब हुनक आदर्श छल । निम्न पद मे एकर सुन्दर निरूपण भेल अछि -

गगनमंडल उगल कलानिधि कते निवारवि दीठि ।
जखने जे रह ततहिं गमाइयजे बहए दीअ पीठि ।
xxx xxx xxx
न थिर जीवन न थिर यौवन न थिर एहे संसार ।
गेल अवसर पुनु न पाइअ किरिति अमर सार ॥

कते राघव राए घरिनि कतए लंकापुर वास ।
कत हनूमते साअर बांधल किछु न गुनु तरास ॥
जखने जकर बांक विधाता सब कला अनुमान ।
अधिक आपद धैरज करब कवि विद्यापति भान ॥

-वि.म., प. 395, पृ.-275

एवं प्रकारेँ आशा एवं विश्वास, रौद तथा छाया, सुख तथा दुःख, आशा तथा निराशा आदि मानव जीवनक मूल प्रवृतिक चित्रण द्वारा लोक मे धैर्य तथा पुरुषार्थक जे भावना प्रवाहित कयल गेल अछि, ओ कविक लोक चेतनाक उज्ज्वल पक्ष थिक । विद्यापति मूलतः मानवीय भाव-पक्षक संग-संग मांसल पक्षक चित्रण सेहो कयने छथि । विद्यापतिक प्रायः सभ नायक रस-लोभी पहिने छथि, प्रेमी बाद मे । मुदा विद्यापतिक नायिका लेल तँ प्रेम एकटा खेलौना मात्र नहि, सम्पूर्ण जीवने थिकैक । प्रेमक गंभीरता तथा पवित्रता, जकर सम्बन्ध लोकमंगल सँ रहैछ, विद्यापतिक नायिकाक मनोभाव मे विशेष रूपें प्रस्फुटित भेल अछि । उदाहरण स्वरूप किछु पंक्ति प्रस्तुत अछि -

(क) माधव जन होअ प्रेम पुराने ।
नव अनुराग ओल धरि राखब जे न बिघट मोर माने ।
(ख) सुपुरुष कबहु न तेजय नेह ।
(ग) सेहो पिरीति अनुराग बखानइते तिल-तिल नूतन होए।
(घ) जुग-जुग जीवथु वसथु लाख कोस, हमर अभाग हुनक नहि दोस ।
(ङ) सुपुरुष पेम सुधनि अनुराग दिने-दिने बाढ़ अधिक लाग।
(च) प्रथम प्रेम ओर धरि राखय सेहे कलामति नारि ।

पदावली मे एहन बहुतो पद प्राप्त अछि जाहि पर लोक-गीत अथवा लोक साहित्यक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ । श्री राम इकबाल सिंह द्वारा सम्पादित 'मैथिली लोकगीत'[35] नामक ग्रंथक भूमिका मे डा० अमरनाथ झा लिखने छथि जे "'नचारी' मिथिलाक एकगोट विशेष वस्तु थिक । कएक सय वर्ष सँ शिव भक्तिपूर्ण ई गान एतय गाओल जाइछ - 'आइने अकबरी' मे एकर चर्चा अछि, विद्यापतिक समय सँ आइ धरि एकर रचना होइत आयल अछि । नचारी गयबाक कोनो खास मौसम, कोनो विशेष मुहुर्त नहि । अन्तःपुर मे, सून सेज पर, बेटीक व्याहक अवसर पर, पावस ऋतु मे खेतक आड़ि पर, साँझ आ प्रातःकाल मन्दिर वा देवस्थान मे बैसि, सभ समय

'नचारी' गाओल जाइछ । साधु आ भिखारि गृहस्थ लोकनिक द्वारि पर एकरा गाबि कऽ भिक्षाटन करैछ आ शिवक प्रार्थनाक व्याज सँ अपन आर्थिक दुखद अवस्थाक नग्न चित्र प्रस्तुत कऽ श्रोता लोकनि मे करुण भावक उद्रेक करैछ । अतः एहि गीत सभ मे श्रमजीवी किसान एवं मजदूर सभक दर्द भरल हुंकार सेहो सुनबा मे आबि जाइछ ।"

'नचारी' शैलीक गीत सभ मे शिव-उपासनाक अत्यंत उत्कृष्ट रूपें अभिव्यक्ति भेल अछि । कोनहु-कोनहु पद मे शिवजीक बरिआतीक उल्लेख, कोनहु मे हुनक स्वभाव, चरित आ रहन-सहनक परिचय, कोनहु मे हुनक ताण्डव नृत्यक चित्रण तथा कोनहु मे कवि लोकनिक दार्शनिक एवं धार्मिक आदर्शवादक आदर्श निर्धारित कयलन्हि अछि । ओना एहि मे विशेषतः आत्मनिवेदन, स्तुति तथा आत्मबोधक भाव अभिव्यंजित भेल अछि । प्रायः कन्या-पक्ष दिस सँ वर शिव केँ पार्वती सँ हीन आ लघु प्रदर्शित करबाक प्रयास कयल जाइछ आ ई एतेक गहींर व्यंग्यक रूप मे एतेक ने कौशलक संग कहल गेल अछि जे ओ पठनीय अछि । एहि प्रकारक पद सभमे प्रयुक्त शब्दावली एक दिस अपन व्यंजना वृत्तिक द्वारा वरक रूप-रंग आ हुनक हृदयक नहि जानि कतबा भावना सभक मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करैछ, ओतहि दोसर दिस मैथिल स्त्री लोकनिक गीत गयबाक भास तथा अपूर्व भाव-भंगिमाक सूक्ष्म रेखा-चित्र सेहो चित्रित करैत अछि । सरल भाव-विश्लेषण आ स्वाभाविक विदग्धतापूर्ण वर्णन 'नचारी' गीत शैलीक सभ सँ पैघ व्याख्या थिक । विद्यापति अपन अनेक 'नचारी' गीत मे उपरि उद्धृत भावना सभक सफल चित्रांकन कयने छथि । नचारीक एक गोट उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

हम नहि आजु रहब एहि आंगन, जों बुढ़ होएता जमाई गे माई ।
एक तऽ बइरि भेला बीध विधाता, दोसर धिया केर बाप ।
तेसर बइरि भेल नारद बाभन, जे बूढ़ आनल जमाई गे माई ।[36]

नचारी पद मे गृह-पत्नी अपन युवती कन्याक अनुरूप वरक व्यवस्था नहि भेल देखि, कोना खौंझाइत छथि, तकर सजीव चित्र अंकित भेल अछि ।

'लग्न-गीत'क रूप मे सेहो विद्यापतिक एक पद पाओल गेल अछि जे प्रायः विवाहक पश्चात वर-विदाक समय कन्या-पक्ष दिस सँ मिथिलांचल मे एखनहुँ गाओल जाइछ -

आज हमर विह वाम हे सखि
मोहि तेजि पहुचल गाम

पहुं भेल हृदय कठोर हे सखि
घूरि ने ताकय मुख ओर
जाहि वन सिकियो ने डोल हे सखि
ताकि वन पिय हंसि बोल
भनहि विद्यापति मान हे सखि
पुरुषक नहि विश्वास ॥[37]

'नचारी' केर माध्यम सँ विपन्नक आत्म निवेदन सेहो अत्यंत प्रभावशाली रूप मे प्रस्तुत कयल गेल अछि –

कहलो ने जाइछ भोला विपति के हाल
भोला विपति के हाल ।
माय बाप धय देलक फिकिर जंजाल
नारी बिन घर भेल नरक समान
भोला विपति के हाल ।
एकता पुतर छिका तिनि जेहन काल
राजा नगर से तऽ दिहलन निकाल
रोजी पुजी छीन लेलक घर धन माल
बन-बन डोलू शिव नामी कंगाल ।
सुनि तेरो नाम जस दिन प्रतिपाल
तोहरे चरन पर टेकब कपाल
भनहि विद्यापति सून हे कंगाल
एक बेर भोला हेरथुन भऽ जएबह नेहाल ॥

विद्यापतिक नाम सँ तिरहुत गीत सेहो उपलब्ध अछि । 'झूमरि आ सोहर'कें यदि हम ग्राम-साहित्यक निर्झरिणीक मधुर कलनाद कही तँ मिथिलाक 'तिरहुति' नामक गीत कें फागुनक अभिसार कहय पड़त। स्वाभाविकता, सरलता, प्रेमपरकताक सामञ्जस्य आ उच्च भावक स्पष्टीकरण – ई 'तिरहुति'क विशेषता थिक ।[38] वस्तुतः जे साधारणतः नहि देखना जाइछ, जे अदर्शनीय तथा अन्य लोकनिक अनुमान मे सेहो आबयवला नहि अछि, ओकरहि व्यक्त करब कुशल कलाकारक काज थिक । एकर नव-विकसित सलज्ज-कातर यौवनश्रीक समक्ष सारंगीक संगीत तथा छलकैत शीराजी सुवर्ण-पदिकक मादकता सेहो फीका पड़ि जाइछ। ई मृग-नाभि मे अन्तर्हित कस्तूरीक मादक सुगन्ध सँ सुवासित अछि –

मोहि तजि पिय मोरा गेलाह विदेश
कवन विधि वितत सखि बारि वयेस ।

विद्यापतिक नाम सँ प्राप्त ग्रामीण गीतक पंक्ति एहि प्रकारक अछि –

मोहि तेजि पिय गेलाह विदेश
कोने परि खेपब बारि वयस
नैन सरोवर काजर नीर
ढरकि खसल पहु धनिक शरीर
सेज भेल परिमल फूल लेल वासे
कोन देश पिय पड़ल उपासे
भनहि विद्यापति सुन ब्रजनारि
धइरज धय रह मिलत मुरारि ॥[39]

'बटगमनी' सेहो मिथिलाक लोकप्रिय गीतक एक गोट भेद थिक । ई गीत प्रायः कोनो प्रसिद्ध पावनि किंवा मेलाक अवसर पर विशेष रूप सँ गाओल जाइछ । वर्षाक दिनमे गाछी-कलमबाग मे लागल झूला पर बैसिकऽ युवती ललना द्वारा सेहो ई गाओल जाइछ, तँ पाइन भरि कऽ गृहाभिमुखी पनिभरनी किंवा ग्राम्य-कन्याक ठोर पर सेहो एकर छन्द अंकित पाओल जाइछ । 'बटगमनी' क भावक अभिव्यंजना नितान्त मौलिक होइछ, तँ एकर तर्ज रोमांटिक । एकर कल्पना बैशाखक सन्ध्या सन शीतल तथा भाषा मिश्री सन मधुर । किछु गोटे 'बटगमनी' कें 'सजनी' नाम सँ सेहो अभिहित करैत छथि । विद्यापतिक नाम सँ प्रसिद्ध 'बटगबनी'क किछु उदाहरण द्रष्टव्य थिक –

(क) जाइत देखलि पथ नागरि सजनी गे
आगरि सुबुधि सेयानि ।
कनक लता सनि सुन्दरि सजनी गे
बिहि निरमाओल आनि ॥
हस्ति गमन जकाँ चलइत सजनी गे
देखइत राजकुमारि ।
जिनकर एहन सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ॥

–विद्यापतिः बेनीपुरी, पद-16

(ख) कखन गगन घन गरजल सजनि गे
सुनि हहरल जिव मोर

प्राननाथ परदेश गेला सजनि गे
चित भेल चान-चकोर ॥

– मैथिली लोकगीत, रामइकबाल सिंह, पृ.–240

लोक-साहित्यक अन्तर्गत वर्षा सँ सम्बद्ध दू प्रकारक गीत गाओल जाइछ – एक ओ गीत जाहि मे प्रकारान्तर सँ वर्षाक चर्चा रहैछ, आ दोसर ओ जकरा ऋतु गीत कहल जाइछ । विद्यापति पदावली मे वर्षा सम्बन्धी दुनू प्रकारक गीतक दृष्टान्त पाओल जाइछ। एकर एकटा उदाहरण द्रष्टव्य अछि–

मोरा रे अंगनमा चनन केरि गछिया ।
ताहि चढ़ि कुररय काग रे ।
सोने चोंच बांधि देव तोय वायस
जओं पिया आओत आज रे ।

– विद्यापति, बेनीपुरी, पद–222

लोकगीत मे 'बारह-मासा' सभ सँ अधिक प्रचलित अछि । एकर सर्व प्रथम दर्शन 13वीं शतीक अपभ्रंश कवि नैमिनाथ कृत 'बारहमासा' मे प्राप्त होइछ। तकर पश्चात् 14–15वीं शती मे विद्यापतिए लोक छन्द मे 'बारहमासा'क रचना कयने छथि –

मोर पिया सखि गेल दुर देस ।
जौवन दए गेल साल सनेस ॥
मास अषाढ़ उनत नव मेघ ।
पिया विसलेख रहओं निरथेघ ॥
कोन पुरुष सखि कोन से देस ।
करब मोय तहाँ जोगिनि भेस ॥[40]

श्रृंगारक आवरण मे नुकाएल महाकवि विद्यापतिक लोक चेतनाक दिग्दर्शन पदावली मे प्रयुक्त मुहाबरा तथा लोकोक्ति सभ मे सुष्ठु रूपें भेल अछि । एहि पद सभमे मुहाबरा तथा लोकोक्ति मे कविक कौशल दर्शनीय अछि । एकर विशेष प्रयोग राधा तथा ओकर सखीक वार्तालाप मे भेल अछि। एहि प्रकारक लोकप्रयोग प्राय: स्त्रीगणक बोल-चाले मे सुरक्षित अछि। निम्न पद ध्यातव्य अछि –

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरत सब मनकाम ।
कंटक दरस परस भेल सजनी

सीमर भेल परिनाम ॥
एकहि नगर बसु माधव सजनी
पर-भामिनि बस भेल ।
हम धनि एहन कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥
अभिनव एक कमल फुल सजनी
दोना नीमक डार ।
सेहो फुल ओतहि सुखायल सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥
विधिवस आज आएल सजनी
एत दिन ओतहि गमाय ।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआय ॥
भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओल गुनसाह ।
उठ बधाब करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥ – वि. बै., पद–149

उपर्युक्त पद मे मानिनी गोपी अपन सखी सँ कहैछ जे ओ मूर्ख कमलक अभिनव पुष्प केँ नीमक दोना मे फेकि देल, जे ओतहि सुखाकऽ छिड़िया गेल अछि । एतय नीमक पातक दोना दर्शनीय अछि । एहि मे कटुता एवं तिक्तताक भाव तँ अछिए, संगहि कमलक फूलक 'नीमक दोना मे फेकब' केर अर्थ-गुण केँ नहि बुझब कतबा सरल एवं अपूर्व ढंग सँ अभिव्यक्त कएल गेल अछि ?

पदावली मे अर्थान्तरन्यास पद्धति केँ अपनाकऽ विद्यापति लोकोक्ति तथा मुहाबराक जे नग जड़लन्हि अछि तकर छटा विलक्षण अछि । श्रृंगार रस मे निमज्जित पाठकक लेल उपदेशपूर्ण लोकोक्ति सर्वथा नव एवं आह्लादकर· प्रतीत होइछ । एहि सँ ई सिद्ध होइछ जे विद्यापति, दरबारी वातावरण मे रहलो सन्ता लोक-चेतनाक प्रतियें अत्यन्त जागरूक छलाह । लोक-मानसक ओ अपूर्व पारखी छलाह, 'देसिल बयना' पर न्योछावर छलाह। अवहट्ठ वा मैथिली केँ ओ दुर्जन (आलोचक) सभक उपहासोक्तिक बिनु परबाहि कयनहि, अपन कविताक माध्यम बनौलन्हि। देसिल बयना पर ओ मुग्ध छलाह, आ आइ हुनक देसिल वयनाक पदावली पर लोक मुग्ध अछि ।

निष्कर्ष :

(1) कवि अपना युगक द्रष्टा आ स्रष्टा दुनू होइछ । परिवेशगत सत्य आ युगीन समस्या सभक प्रभाव सँ ओ अपना केँ असम्पृक्त नहि राखि पबैछ तथा ओहि सभसँ प्रभावित विद्यापति सेहो अपना युगक एक उर्ज्वस्वित भास्वर प्रकाश पिण्ड छलाह । यैह कारण जे हुनक कृति सभमे सम्पूर्ण युग जीवित-जाग्रत भऽ उठल अछि आ हुनक कृति युग-यथार्थक स्पन्दन सँ भास्वर भऽ गेल अछि ।

(2) दरबारी कवि रहलो सन्ता विद्यापति जन-जीवन केँ सर्वथा उपेक्षित नहि कऽ सकलाह । तेँ एक दिस हुनक काव्य मे कवि-हृदयक सहजानुभूतिक अभिव्यंजना भेल अछि, तँ दोसर दिस जन-सामान्यक सामाजिक जीवनक चेतना सेहो मुखरित भेल अछि ।

(3) संस्कृत-विद्वत्-कुल-संभूत विद्यापति स्वयं संस्कृतक प्रकाण्ड पंडित छलाह, तथापि अपन युगक जन-जीवनक निकटता केँ प्राप्त करबाक हेतु ओ पदावलीक रचना बुध जनक भाषा संस्कृत मे नहि कय, जनसामान्यक भाषा मैथिलीये मे करब स्वीकार कयलनि । जनसामान्यक हृदयक भाव केँ व्यक्त करबाक हेतु ओ जनभाषा मैथिलीये केँ अपन माध्यम बनौलनि ।

(4) पदावली मे व्यक्तिपरक दृष्टिकेँ नहि स्वीकार कय, समष्टिगत दृष्टियेक चित्रण प्रस्तुत कयल गेल अछि । विद्यापति जन-मानसक संग अपन हृदयक तादात्म्य स्थापित कय, जन-जीवन केँ वाणी प्रदान कयलनि।

(5) मध्यकालीन दरबारी कविक परम्परा मे रहलो सन्ता ओ जन-जीवनक प्रति सतत् जागरूक रहलाह । लोक-जीवन सँ अटूट सम्बन्ध रखबाक लेल ओ अनेक लोकगीतक रचना कयलनि । यैह कारण अछि जे अद्यपर्यन्त मिथिलाक ललनाक ठोर पर, जनसामान्यक हृदय मे तथा बुधजनक मस्तिष्क पर हुनक लोक-गीत सभ अंकित अछि।

(6) विद्यापतिक गीति-पद सभमे लोक-हृदय केँ स्पर्श करबाक अद्भुत क्षमता अछि । यैह कारण अछि जे आइयो विद्यापतिक पद मिथिला मे लोकगीतक रूप धारण कय प्रत्येक पावनि-तिहार, मांगलिक अनुष्ठान केँ अपन स्वर-संगीत सँ अनुगुंजित कयने रहैत अछि ।

(7) विद्यापति लोक-जीवनक महान उद्गाता छलाह । ओ लोक तत्वक महान चयनकर्ता छलाह । यैह कारण जे पदावली मे अनेक छन्द, धुन, स्वर एवं शब्द-विन्यास लोक-जीवन सँ गृहीत अछि तथा विरह-वर्णन मे लोक-जीवनक मान्यता केँ प्रश्रय देल गेल अछि ।

(8) पदावली मे दरबारी संस्कृति केँ नहि, प्रत्युत जन सामान्य सँ सम्बन्धित लोक-संस्कृति केँ अभिव्यक्ति प्रदान कयल गेल अछि । एहि मे साधारण प्रेमी-प्रेमिकाक रूप मे राधाकृष्णक चित्रण कयल गेल अछि ।

(9) यद्यपि विद्यापति आजीवन विभिन्न राज-परिवार सँ सम्बन्धित-सम्पर्कित रहलाह, तथापि हुनक दृष्टि जनसामान्ये पर केन्द्रित छल। यैह कारण जे विरहिणी नायिकाक चित्रण रानी वा राजकुमारीक रूप मे नहि कय, ओ साधारण नारीक रूप मे कयने छथि। एकर स्पष्ट प्रमाण हुनक नायिका सम्बन्धी पद मे प्राप्त होइछ ।

(10) साधारणतः लोकगीत मे निराशावादी प्रवृतिक अभाव आ आशावादक प्रस्थापना पाओल जाइछ । विरह सम्बन्धी लोक गीत सभ मे विद्यापति सेहो आशावादी प्रवृतियेक अनुकूल प्रिय-मिलनक समायोजन कयने छथि ।

(11) विद्यापतिक गीति पद सभमे जन-जीवन मे प्रचलित स्वस्थ आ अस्वस्थ दुनू प्रवृतिक चित्रण कयल गेल अछि जे सामाजिक परिवेशक प्रति हुनक जागरूकताक परिचायक थीक । 'पिया मोर बालक हम तरुनी । कोन तप चुकलौंह भेलाहुँ जननी ।' सदृश पंक्ति मे तत्कालीन समाज मे प्रचलित बाल विवाह पर जोरगर व्यंग्य कयल गेल अछि ।

(12) विद्यापतिक एक पद मे कूटनीक यथा-तथ्य जीवंत-चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि जाहि सँ तत्कलीन समाजक एक वर्गीय नारीक वस्तु-स्थितिक परिज्ञान सहजहि भऽ जाइछ ।

(13) विद्यापति अपन पदावली मे प्रेम-क्रीड़ाक चित्रण मे कृष्ण केँ नन्दराजक राजकुमारक रूप मे प्रस्तुत नहि कय, जन सामान्य ग्वाल-बालक रूपमे प्रस्तुत कयने छथि ।

(14) पदावली मे गाम्य वातावरणक सहज-सरल चित्र अनेक स्थल पर अभिनव रूप मे प्रस्तुत कयल गेल अछि । कृष्णक मूर्खता केँ ज्ञापित करबा हेतु जे राधा द्वारा व्यंग्योक्तिक प्रयोग भेल अछि ताहि मे ग्राम्य वातावरणक सहज पुट गुम्फित अछि ।

(15) साधारणतः भारतीय साहित्य मे परकीया प्रेम केँ ग्राह्य नहि मानल गेल अछि, तथापि सम्पूर्ण भारतीय साहित्य परकीया प्रेमक चित्रण सँ अभिमंडित अछि । विद्यापतिक काव्यमे सामान्य सामाजिक जीवन मे प्रचलित परकीया प्रेमक विशद चित्रण उपलब्ध अछि जे तदयुगीन सामन्ती समाज मे प्रचलित प्रेम-परिपाटीक द्योतन करैछ ।

(16) पदावली मे विविध प्रसंग आ विषय सँ सम्बन्धित मुहाबरा आ लोकोक्तिक प्रभूत मात्रा मे प्रयोग भेल अछि । विद्यापतिक प्रायः सभ पद मे एकर सहज आ सुष्ठु प्रयोग भेल अछि जे सहजहि हुनका सामाजिक चेतना सँ संवलित एवं जन सामान्य सँ सम्बन्धित- सम्पर्कित कऽ दैछ ।

(17) विद्यापतिक गीति पद सभमे दाम्पत्य जीवनक पवित्रता पर यथावसर जोर देल गेल अछि । हुनक मूल तथा महत्वपूर्ण स्वर दाम्पत्य-सम्बन्ध क पवित्रताक अछि तथापि परकीया प्रेमक विविध प्रसंगक वर्णन कय कवि अपन युग-यथार्थपरक दृष्टिक परिचय देने छथि ।

(18) विद्यापतिक काव्य जन-जीवनमे प्रचलित लोकोक्ति एवं ग्राम्य-प्रयोगक कारण लोक-चेतनाकेँ मुखरित करबा मे पूर्ण समर्थ अछि । पदावली मे प्रयुक्त 'कूप न आबए पथिकक पास' 'आरति गाहक महग बेसाह' 'बानर मुख नहि सोभय पान' प्रभृति ग्राम्य प्रयोग आइयो मिथिलांचलक अकाट्य अंग बनल अछि ।

(19) पदावली मे यत्र-तत्र नीतिपरक सूक्तिक प्रयोग कय कवि लोक-चेतनाक यथेष्ट परिचय देने छथि । ओहि युग मे सामाजिक प्रतिष्ठाक एक मात्र आधार धन भऽ गेल छल, जाहि दिस संकेत करैत ओ लिखने छथि - 'धनिकक आदर सब तह होय, निर्धन बापुर पुछय न कोय' ।

(20) विद्यापति कतेको गीतिपदमे सामान्य जन-जीवन मे प्रचलित रूढ़ि एवं अन्धविश्वासक चित्रण कय ओहि पर प्रखर व्यंग्य कयने छथि । देवी-देवता, भूत-प्रेत, टोना-टोटकाक चित्रण मे जन साधारणक विश्वास दिस संकेत कयल गेल अछि ।

(21) विरह संबंधी पद सभमे लौकिक विश्वासक प्रयोग कय उक्ति केँ अधिक धारदार आ मार्मिक बनाओल गेल अछि ।

(22) निष्कर्षतः ई कहल जा सकैछ जे विद्यापति अपन कविता केँ राजदरबारक नर्तकी नहि बना, जन-मानसक अधीश्वरी बनौने छथि ।

(ख) विद्यापति-युगीन राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवस्था

मिथिलाक इतिहासमे विद्यापति-युग केँ स्वर्ण युग कहल गेल अछि। विद्यापतिक तिथिक सम्बन्ध मे एखनहु विद्वान लोकनिमे मतैक्य नहि छनि तथापि साधारणतः विद्वतवर्ग विद्यापतिक जीवन-काल 1360 इ. सँ 1480 इ. निर्धारित करैछ ।[41] प्राचीन कालहि सँ मिथिलाक अपन सांस्कृतिक आ साहित्यिक परम्परा अक्षुण्ण रहलैक अछि । विदेह जनकेक समय सँ

मिथिला भारतीय संस्कृति, साहित्य आ धर्मक प्रमुख केन्द्र रहल अछि । विदेह जनकक समय मे जाहि संस्कृतिक सूत्रपात भेल तकर चरमोत्कर्ष विद्यापतिक युग मे आबि कऽ भेल । राजशेखर मैथिल रीतिक उल्लेख कयने छथि । गुप्त अभिलेख सभमे 'शिथिलाः मिथिलाः' शब्दक व्यवहार भेल अछि । 'यशस्तिलक' मे तिरहुत सैन्यक वर्णन कयल गेल अछि । विद्यापति 'पुरुष परीक्षा' मे मैथिलक सम्बन्ध मे लिखने छथि ताहि सँ स्पष्ट अछि जे मैथिल विद्यापति युग मे विशिष्ट गुणक द्योतक मानल जाइत छलाह ।[42] पुरुष परीक्षाक माध्यम सँ विद्यापति किछु एहि प्रकारक मूलभूत सिद्धान्त सभक प्रतिपादन कयलनि जे सर्वतोभावेन व्यावहारिक छल । ओ चाहैत छलाह जे ओहि सिद्धान्त सभक लोक पालन करय । पुरुषार्थक ओ समर्थक छलाह आ ओकर प्राप्तिये हुनक लक्ष्य छलन्हि ।[43]

मिथिला मे चौदहम-पन्द्रहम शताब्दी घोर राजनीतिक उथल-पुथलक युग छल तथापि एहि शताब्दी मध्य एतय एक सँ एक विद्वान, चिंतक, कवि तथा कलाकारक प्रादुर्भाव होइत रहल । युद्ध क्षेत्र मे सिंहासन आ राजवंशसभक भाग्यक पाशा खेलायल जाइत छल । ओम्हर पंडित लोकनिक घर पर न्याय आ तर्कक समस्या सभक समाधान खोजल जाइत छल । एहन परिवेश मे विद्यापतिक प्रादुर्भाव केँ एकटा महान ऐतिकासिक घटना कहल जा सकैछ । विद्यापति एक विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न-रससिद्ध कविक रूपमे समादृत छथि। हुनक कृति सभ मे हुनक असाधारण काव्य-प्रतिभाक चरमोत्कर्ष देखल जाइछ । विद्यापतिक शक्तिशाली बहुमुखी व्यक्तित्व, प्रखर कवित्व शक्ति एवं व्यापक पाण्डित्य हुनक रचना सभमे स्पष्टतः परिलक्षित होइछ । हुनक काव्य जतय एक दिस अपन युग-धर्म सँ प्रभावित अछि, ओतहि व्यक्तिपरक भावना, अनुभूति एवं विचार धारा सभकेँ सेहो अपन विशाल कलेवर मे समाहित कयने अछि । प्रायः प्रत्येक प्रतिभाशाली कवि अपन युगक विभिन्न परिस्थिति, सामाजिक एवं धार्मिक चेतना तथा साहित्यिक परम्परा सँ प्रेरणा प्राप्त कऽ अपन रचनाक सृजन करैछ । कवि युग-जीवन सँ विच्छिन्न भऽ कऽ अपन वाणी मे प्राण रसक संचार नहि कऽ सकैछ। युग-जीवनक भूमिये पर कविताक निर्झरिणी फुटैत अछि । युग-जीवनक जलवायु मे कविताक लता पल्लवित-पुष्पित होइछ । अतः कोनो कविक कृति एवं ओकर उपलब्धिक मूल्यांकन ओकर देश-कालक परिप्रेक्ष्यहि मे सम्यक रूपेँ कयल जा सकैछ । विद्यापति सेहो अपन युगीन परिस्थिति एवं

चेतना सभ सँ प्रेरणा प्राप्त कय अपन काव्य कृतिक सर्जना कयलन्हि तथा युग-निर्माण मे महती योग देलन्हि । तेँ विद्यापति केँ युगीन परिस्थितिक परिप्रेक्ष्यहि मे राखि हुनक सही मूल्यांकन कयल जा सकैछ ।

राजनीतिक अवस्था :

राजनीतिक दृष्टि सँ विद्यापतिक युग अत्यंत अस्त-व्यस्तता आ विक्षुब्धताक युग छल । एहि काल मे उत्तर भारत मे मुख्यतः तुगलक वंशीय मुसलमान शासक अपन प्रभुत्व स्थापित करबा मे प्रयत्नशील छल। दिल्ली मुख्य शासन केन्द्र छल, परंच केन्द्रीय शासन सुदृढ एवं सुव्यवस्थित नहि भऽ सकल छल । उत्तर भारतक विभिन्न प्रान्त मे छोट-छोट स्वतंत्र राज्य स्थापित भऽ गेल छल । प्रान्तीय शासन यदा-कदा केन्द्रीय शासनक प्रति विद्रोह कय अपन-अपन स्वतंत्र सत्ता स्थापित करबाक उपक्रम करैत छल । हिन्दू जनता मुसलमान शासकक कठोर नीति सँ असंतुष्ट छल । विद्यापति कालीन मिथिला मे दिल्लीक सुलतान गयासुद्दीन मुहम्मद आ फिरोज शाह सदृश तुगलक वंशीय बादशाहक अधीनता स्वीकार करैत हिन्दू राजा राज्य कऽ रहल छलाह । मिथिलाक लग-पास बंगाल, अवध, जौनपुर मे सेहो मुसलमान शासकक प्रभुत्व स्थापित भऽ गेल छल । एहि युग मे मिथिलामे ओइनवार ब्राह्मण लोकनिक राज्य छल। ओइनवार वंशीय राजालोकनि विद्वान होइतहुँ शूर-वीर आ योद्धा छलाह । ओहि युग मे मिथिलाक ओइनवार वंशीय राजा गणेश्वर, कीर्ति सिंह, भवसिंह, शिवसिंह आदि अंशतः दिल्लीक सुल्तानक अधीन भऽ कय तथा अंशतः स्वतंत्र रूपमे मिथिला मे राज्य करैत जाइत छलाह । प्रो. राधाकृष्ण चौधरीक अनुसार विद्यापति युग मे मिथिला एक स्वतंत्र राष्ट्र छल आ एहि बातक सबल प्रमाण थिक जे शिवसिंहक स्वर्णमुद्रा तथा भवसिंहक चाँदीक मुद्रा मिथिलाक क्षेत्र मे प्राप्त भेल अछि।[44] स्वर्ण मुद्रा चलौनिहार ओइनवार वंशीय सम्राट सभमे शिवसिंह प्रथम छलाह। एहि बात सँ दिल्लीक सुलतान कुपित भेलाह । अभिमानी शिवसिंह केँ दिल्ली सम्राट केँ कर पठायब अपमानजनक बुझाना गेलन्हि । फलतः आक्रमण भेल आ शिवसिंह पराजित भेलाह आ मिथिला पुनः मुसलिम शासनक अधीन भऽ गेलि।[45] कामेश्वर सँ लऽ कय कंसनारायण धरि मिथिलामे ओइनवार ब्राह्मण राजाक राज्य रहल । ई हिन्दू राजा लोकनि अत्यन्त धर्मात्मा, दानी, पराक्रमी, नीति-निपुण, साहित्य-प्रेमी आ विद्वान छलाह, परंच अपन प्रशासन दिस ध्यान देबाक हुनका लोकनिकेँ अवकाश

नहि भेटैत छलन्हि । प्रजाक हितक अपेक्षा ओ सभ अपना जीवन केँ अधिक सुखमय बनयबामे व्यस्त छलाह। हिनका लोकनिक विशेष समय तँ युद्ध आ बाहरी आक्रमण सँ अपन राज्यक रक्षाक प्रयत्न मे व्यतीत होइत छल, तथापि साहित्य-चर्चा एवं संगीत कला मे हिनका सभकेँ विशेष अभिरुचि छलन्हि । हिनका लोकनिक दरबार मे अनेक विद्वान, कवि तथा कलाकार लोकनि केँ आश्रय प्राप्त छलन्हि तथा हुनकालोकनिक आश्रय प्राप्त कऽ साहित्य एवं कला केँ विकसित होयबाक यथेष्ट अवसर प्राप्त होइत रहलैक ।

वस्तुतः विद्यापतिक युग राजनीतिक दृष्टि सँ अराजकतापूर्ण छल। मिथिला नरेश गणेश्वरक असलान द्वारा हत्या कऽ देल गेल छल, जाहि सँ सम्पूर्ण प्रदेश मे अराजकताक लहरि पसरि गेल छल । जनता नव शासक केँ स्वीकार करबा मे असमर्थ भऽ रहल छल, परिणामतः मुसलमान द्वारा हिन्दू पर मनमानी आ अमानुषिक अत्याचार कयल जा रहल छल । पं. शिवनन्दन ठाकुरक अनुसारेँ मुसलमानक दुर्व्यवहार सँ हिन्दू जातिक दुर्दशा भऽ गेल छल। हिन्दू-जातिक राजा हिन्दूलोकनिक सहायताक लेल, अपन विरोधी केँ तलवारक बले हटा देबाक लेल स्वयं धर्म, देश आ हिन्दू जातिक नाम पर मरि जयबाक लेल तैयार छलाह । एहना अवस्था मे कखनहु जय, कखनहु पराजय, कखनहु उत्साह, कखनहु विषाद, कखनहु धर्म-परायणताक कारणे मृत्युहु सँ नहि डरब, कखनहु बलात्कार सँ अधर्मक शरण लेब आदि विरोधी घटना प्रतिदिन होइते रहैत छल ।[46] एहि प्रकारेँ राजनीतिक दृष्टियेँ विद्यापतिक युग अशांति आ विक्षोभक युग छल । विद्यापति 'कीर्तिलता' मे एहि परिस्थिति तथा तज्जन्य प्रभावक वर्णन करैत लिखने छथि जे मिथिला मे कोनहु गुण अवशिष्ट नहि रहि गेल छल। कवि लोकनि भिक्षुक बनि बौआइत फिरैत छलाह -

ठाकुर ठक भए गेल चोरें चप्परि घर लिज्झिअ ।
दास गोसाअनि गहिअ धम्म गए धन्ध निमज्जिअ ।।
खले सज्जन परिभविअ कोइ नहि होइ विचारक ।
जाति अजाति विवाह अधम उत्तम का पारक ।।
अक्खर रस बुज्झनिहार नहि, कविकुल भमि भिखारि भउं ।
तिरहुत्ति तिरोहित सब्ब गुणे राए गणेस जबै सग्ग गउं ।।[47]

कर्णाट राजवंश :

कर्णाट राजवंशक संस्थापक नान्यदेवक विषय मे पूर्ण निश्चितता पूर्वक किछु कहब कठिन अछि । बंगालक सेन राजालोकनि जकाँ नान्यदेव सेहो कर्णाट

क्षत्रिय छलाह । हुनक उपाधि 'कर्णाट कुलभूषण' एकरहि संकेत करैछ । एगारहम् सदीक उत्तरार्द्ध मे चालुक्यलोकनिक उत्तर एवं उत्तरपूर्वी भारत पर कयकटा आक्रमण-अभियान भेल । ई आक्रमणकर्त्ता कर्णाट वंशीय क्षत्रिय छलाह । एही सामंत सभमे एक नान्यदेव छलाह जे राजनीति-शून्य मिथिला मे अपन राज्य अर्जित कयलन्हि । नान्यदेवक विरुद 'महासामन्ताधिपति धर्मावलोक' सेहो एकरहि संकेत करैछ । हुनक एक अन्य उपाधि 'धर्माधारभूपति' सेहो छल ।

कर्णाट राजवंशक स्थापना मिथिलाक लेल एकटा युगान्तरकारी घटना छल । विदेह लोकनिक पश्चात 1500 वर्ष धरि मिथिलामे कोनो शक्तिशाली स्वतंत्र राज्य स्थापित नहि भऽ सकल छल । मिथिला मे अनिश्चितता, आक्रमण, राजनीति-शून्यताक जे दुःखद स्थिति परिव्याप्त छल तकर अन्त एहि राजवंशक स्थापना सँ भेल । नान्यदेव मिथिला मे एक स्वतंत्र राज्यक स्थापना कयलन्हि तथा 'मिथिलेश्वर'क उपाधि धारण कयलन्हि । कवीश्वर चन्दा झा द्वारा संपादित 'पुरुष परीक्षा' मे उद्धृत सिमराओन शिलालेखक एक श्लोक [48] क अनुसार 1019 शक संवत (1097-98 इ.) क श्रावण सप्तमी शनि दिन एहि नव राज्यक उदय भेल ।

नान्यदेव अत्यन्त पराक्रमी राजा छलाह । चेदि राजा यशःकर्ण कें संभवतः 1124-25 इ. मे घोर युद्ध मे पराजित कऽ लगभग दू शती धरिक लेल मिथिलाकें बाहरी आक्रमण सँ मुक्तकऽ देलन्हि । ओ गौड़ तथा अन्य बंगीय राजा लोकनि कें [49] युद्ध मे पराजित कयलनि, मालव [50] तथा सोवीर लोकनि [51] कें हरौलनि । एवं विधि हुनक शक्तिक डंका तत्कालीन पूर्वोत्तर भारत मे पिटा गेल । उत्तर मे नेपालक स्थानीय राजालोकनि, जयदेवमल्ल तथा आनन्दमल्ल कें पराभूत कऽ हुनका सभ पर अपन संप्रभुता स्थापित कयलनि । एहि पराक्रमी तथा परम प्रतापी पुरुषसिंहक मृत्यु 1147 इ. मे लगभग 50-54 वर्ष धरि राज्य करबाक उपरान्त भेल । [52]

नान्यदेवक समय मे मिथिला साहित्य, दर्शन, ललितकला आदिक केन्द्र बनि गेल छल । विदेहहि जकाँ एक बेर पुनः मिथिला ज्ञान-चिन्तन, कला-कौशल तथा विद्वज्जनक भूमि बनि गेल । [53] ओ स्वयं विद्वान, काव्यशास्त्र-विद् तथा सुलेखक छलाह । भरत मुनिक नाट्यशास्त्र पर हुनक टीका एहि बातक प्रमाण थिक । [54]

कर्णाट राजवंशक अन्य राजा लोकनिक नाम अछि मल्लदेव, गंगदेव, नरसिंह, रामसिंह देव, शक्तिसिंह देव तथा हरिसिंहदेव। [55] मल्लदेवक विषय

मे किछु विशेष ज्ञात नहि होइछ । विद्यापतिक 'पुरुष परीक्षा' मे नान्यदेवक पुत्र मल्लदेवक चर्च प्राप्त अछि । युद्धवीरक उदाहरण मे हिनक उल्लेख भेल अछि । [56] डा. उपेन्द्र ठाकुरक अभिमत छन्हि जे नान्यदेवक राज्य हुनक दुनू पुत्र मे बटि गेल होयत, एहि मे मल्लदेव कें राज्यक पूर्वी भाग भेटल । हुनक आश्रय मे वर्द्धमान उपाध्याय नामक सुप्रसिद्ध स्मृतिकार रहैत छलाह। [57] गंगदेव (1147-1187 वा 1181 इ.) कें बल्लाल सेनक शत्रुताक सामना करय पड़लन्हि । तथापि हुनका राज्य मे शांति तथा समृद्धि, विद्या, चिन्तन, कला-कौशलक उन्नति भेल । हुनक महामंत्री श्रीधर अत्यन्त योग्य तथा राजकाज मे दक्ष छलाह । गंगदेव अपना राज्य मे कैक प्रकारक प्रशासनिक सुधार अनलन्हि । सम्पूर्ण राज्य कें कैकटा परगना मे बांटि देलन्हि, मालगुजारी ओसूल करबाक लेल प्रत्येक परगना मे एक चौधरी नियुक्त कयल गेलाह । पंचायत-व्यवस्थाक पुनरूद्धार कयल गेल । धार्मिक कार्यक व्यवस्थाक लेल धर्माधिकरणिक पदक व्यवस्था भेल । ओ अनेक पोखरि खुनबौलनि । [58]

नरसिंहदेव (1187-1225 इ.)क 31 वर्षक राज्यकाल सुख-समृद्धि तथा शांतिपूर्ण छल । हिनकहि राज्यकाल मे गंगाक दक्षिण सँ होइत मुहम्मद बिन बख्तियार मगध कें कुचलैत, नालन्दा-विक्रमशिला कें ध्वस्त करैत, बंगालक वृद्ध राजा लक्ष्मण सेन कें आतंकित करैत गौड़पर मुसलमानी आधिपत्य जमौलन्हि । हिनक दू मंत्री - कर्मादित्य तथा रामादित्य ठाकुर-अत्यन्त योग्य छलाह । रामदेवसिंह (1215-76 इ.) तथा शक्तिसिंह देव (1276-1296 इ.)क राज्य-काल मे यद्यपि मिथिलाक चारू भर शक्तिशाली मुसलमानी राज्यक उदय-अस्त भऽ रहल छल, दिल्ली सल्तनतक नव-नव राजा जरि आ मिझा रहल छलाह, तथापि मुसलमानी घोड़सवार सभहिक टाप एखन एहि भूमि कें आक्रान्त नहि बना सकल छल ।

एहि राजालोकनि कें एक-सँ-एक बढ़िकय योग्य एवं दक्ष मंत्री प्राप्त छलन्हि । राज्य मे शांति तथा समृद्धि छल । प्रभुवर्ग-ब्राह्मण, क्षत्रिय, ठाकुर, राउत, वणिकक जीवन अत्यन्त सुख-चैन मे, भोग-विलास मे बितैत छल । स्मृति आ निबन्ध लिखल गेल । सांधिविग्रहिक कर्मादित्य ठाकुर, महामत्तक वीरेश्वर, चंडेश्वर आदि एहि कालक प्रसिद्ध विद्वान, सुलेखक एवं राजमंत्री छलाह । [59] एहि काल मे मिथिला न्याय, तर्क, मीमांसा आदिक अध्ययन-अध्यापनक केन्द्र बनल रहल । मुदा शक्तिसिंहक अंतिम दिन सुख

सँ नहि बीति सकल, कारण मुस्लिम आक्रमणक आशंका बरोबरि बनल रहैत छल ।

हरिसिंह देव (1303-1326 इ.) कर्णाट राजवंशक अन्तिम राजा भेलाह । ओ 10-12 वर्षक अवस्था मे गद्दी पर बैसलाह ।[60] वीरेश्वरक सात मंत्रीक व्यवस्था दक्षतापूर्वक राज्यकाज चलबैत रहल । एहि मंत्री सभमे प्राय: सभ क्यो विद्वान तथा सुलेखक छलाह । एहि काल मे अनेक पांडित्यपूर्ण ग्रंथ लिखल गेल । 1324 इ. मे गयासुद्दीन तुगलक कर्णाट राज्यक अन्त कय देलक । हरिसिंहदेव संभवत: एक दू वर्ष धरि आर राज्य करैत रहलाह, परंच मिथिलाक स्वतंत्र राज्यक रूपमे अस्तित्व समाप्त भऽ गेल ।[61] हरिसिंह देवक नाम नव मिथिला पंजी प्रबन्धक लेल मिथिलामे चिरकाल धरि अमर रहत । ओ कुलीन-अकुलीनक व्यवस्था कयलनि, मैथिल समाज कें अनेक-उँच-नीच मूल तथा गोत्र मे विभक्त कऽ देलनि । मिथिलाक ब्राह्मण तथा कायस्थक लेल ई एक बड़ पैघ आ व्यापक प्रभाव छोड़यवला व्यवस्था छल ।

ओइनवार वंश :

कर्णाट राजवंशक अवसानक बाद मिथिलाक स्वतंत्र राज्यक रूप मे अस्तित्व समाप्त भऽ गेल । किछु दिनक पश्चात मिथिला मे पुन: एक नव राजवंशक उदय भेल । नान्यदेव तथा हुनक वंशज लगभग 229 वर्ष धरि मिथिला मे राज्य कयने छलाह । ई नव राजवंश मैथिल ब्राह्मणक छल जकर राज्य-काल मिथिला मे लगभग सै वर्ष धरि (सन् 1350-1450 इ.) बनल रहल । यद्यपि ई राज्य स्वतंत्र वा संप्रभुता-प्राप्त नहि छल, मुदा दिल्ली सल्तनतक अन्तर्गत प्राय: ई व्यवस्था छलैक जे जाधरि कोनो सामन्त वा अधीनस्थ राजा सरेआम विद्रोह नहि करैत छल तथा समय-समय पर कर चुकबैत रहैत छल, ताधरि ओकरा तंग नहि कयल जाइत छलैक । वस्तुत: राजनीतिक अनिश्चयताक एहि युग मे स्वयं दिल्लीक केन्द्रीय शासन बरमहल कमजोर बनल रहैत छल । जखन दिल्ली मे कोनो शक्तिशाली राजा नहि रहैत छल, ओहि काल मे सभ अधीनस्थ राजा तथा नबाब अपनाकें स्वतंत्र घोषित कऽ लैत छल । मिथिलाक राजा लोकनि कें दिल्लीक बादशाहक अतिरिक्त गौड़ाधिपति, लखनावती तथा जौनपुरक नबाब सभ सँ सेहो बरोबरि सामना करय पड़ैत छलन्हि । एहि काल मे हिन्दू राजा अपन स्वतंत्रताक झंडा फहरयबाक उपक्रम मे लागत रहैत छलाह । ओ सभ एहि

मे युद्ध आ कूटनीति दुनूक प्रयोग करैत छलाह । निरन्तर संघर्ष होइत रहैत छल, तें कोनो राजवंश दीर्घायु नहि भऽ पबैत छल । यैह कारण अछि जे मिथिला मे हरिसिंहदेवक उपरान्त कोनो राजा दीर्घकाल धरि राज्य नहि कऽ सकलाह ।

ओइनवार वंशक आदि पुरुष ओय ठाकुर[62] सिद्ध पुरुष तथा महा पंडित छलाह । हुनका कर्णाट वंशीय कोनो राजा सँ ओइनी[63] (वर्तमान पूसा रोड स्टेशनक समीपस्थ ग्राम) पुरस्कार मे भेटल छलन्हि । ओ अपन प्रपौत्र कामेश्वर ठाकुर कें मिथिला राज्य प्रदान कयलनि । कामेश्वर ठाकुर सेहो सिद्ध पुरूष तथा राज पंडित छलाह । प्रसिद्ध अछि जे हिनक एक उत्तर सँ प्रसन्न भय सुलतान फिरोजशाह तुगलक हिनका मिथिलाक सामंत राजा बनौलन्हि ।[64] विद्यापति सेहो 'कीर्तिलता' मे हिनक उल्लेख कयने छथि ।[65]

कामेश्वर ठाकुरक ज्येष्ठ पुत्र भोगीश्वर ठाकुर दीर्घ काल धरि (लगभग 33 वर्ष) राज्य कय स्वर्गीय भेलाह । भोगीश्वरक मरणोपरान्त हुनक पुत्र गअनेसर (गगनेश्वर वा गणेश्वर) राजा भेलाह । मुदा छल सँ असलान नामक कोनो स्थानीय मुसलमान सरदार हुनक बध कऽ देल ।[66] गणेश्वरक मृत्युक उपरान्त तीन-चारि दशक धरि मिथिला मे अराजकता व्याप्त रहल । विद्यापति एकर मार्मिक वर्णन 'कीर्तिलतो' मे कयने छथि ।[67]

गअनेसर कें तीन पुत्र छलन्हि - वीरसिंह, कीर्तिसिंह तथा राजसिंह । आसन्न पितृवधक प्रतिशोधाग्नि मे जरैत जोनपुरक शासक इबराहिम शाह[68] क सहायता सँ मलिक असलान कें युद्ध मे पराजित कय मिथिलाक राज्य पुन: अपना अधीन मे लेलन्हि । वीरसिंह युद्ध मे मारल गेलाह वा कतहु अदृश्य भऽ गेलाह । तिरहुतक गद्दी पर गणेश्वरक द्वितीय पुत्र कीर्ति सिंह बैसलाह । इबराहिमशाह आपस लौटि गेल ।[69] इबराहिमशाह स्वयं हुनक राज्य तिलक कयने छल ।[70]

कीर्तिसिंह बड़ प्रतापी, दानशील एवं शूर-वीर छलाह । कीर्तिसिंहक कीर्ति के अमरत्व प्रदान करबैक हेतु विद्यापति 'कीर्तिलता'क रचना कयलनि-

'ओतुर्दातुर्वदान्स्य कीर्तिसिंह महीपते ।
करी तु कषितु: काव्यं भव्यं विद्यापति: कवि: ।।

कीर्तिसिंहक विरुदावली विद्यापतिक समकालीन महाकवि दामोदर मिश्रक वाणी भूषण[71] नामक छन्द सम्बन्धी ग्रंथमे सेहो उपलब्ध अछि -

'कीर्तिसिंहनृपजीवयावदमृतद्युतितरणी'

'त्वयि चलति चलति वसुधा वसुधाधिप कीर्तिसिंह धरणी रमणे।'

कीर्तिसिंह बहुत काल धरि राज्य नहि कऽ सकलाह । महान उथल-पुथलक ओहि युग मे कोनहु स्वतंत्रताक मर्यादाप्रिय राजाक लेल ई संभवो नहि छल।

एहि समय मे आबिकऽ ओइनावार राजवंश दू शाखा मे विभक्त भऽ गेल छल । एक शाखाक प्रवर्तक भोगीश्वरक भाय भवेश्वर वा भवसिंह छलाह । हिनक राजधानी भवग्राम वा भभाम मे छल । दोसर शाखाक कीर्तिसिंह छलाह । भवसिंह सेहो पराक्रमी आ यशस्वी राजा छलाह । ओ युद्ध मे शत्रु कें जीति कऽ तथा ब्राह्मण सभकें दान दय ख्याति पौने छलाह। अन्तमे ओ वाग्मतीक तट पर शिवमूर्तिक समक्ष शरीर त्याग कयलनि ।[72] गअनेसर (गणेश्वर)क वीरसिंह, कीर्तिसिंह आ राजसिंह एहि तीनू पुत्र मे किनको सन्तान नहि भेलनि, तें कीर्ति सिंहक पश्चात हुनक पितामह भोगीश्वरक भाय भवसिंहक पुत्र देवसिंह कें गद्दी पर बैसाओल गेल । ओ ओइनी राजधानी कें छोड़ि दरभंगाक निकट 'देवकुली' नामक नव राजधानी बनौलन्हि । अपन पूर्व पुरुषहि जकाँ ओ बड़ धर्मात्मा आ पराक्रमी छलाह। विद्यापति शैवसर्वस्वसार मे हिनक दानशीलताक वर्णन निम्न लिखित शब्द मे कयने छथि -

दत्तं येन द्विजेभ्यो द्विरदमथमहादानमन्यैरशक्यं
का वार्त्ता त्वन्यदाने कनकमयतुलापुरुषो येन दत्तः ।
यस्य क्रीड़ातड़ागस्तुलयति सततं शासने वारिराशिं
देवो सो देवसिंहः क्षितिपतितिलकः कस्य न स्यान्नमस्यः ॥

- शैवसर्वस्वसार

महाराज देवसिंह दीर्घायु भेलाह । परिणत वय मे ओ राजकाज शिवसिंहक हाथ मे सौंपि नैमिषारण्य मे भगवत् भजन मे समय व्यतीत कऽ रहल छलाह । विद्यापति हुनका सँ भेंट करबाक लेल गेल छलाह तथा किछु दिन धरि ओतय रहलो हेताह, एहन संकेत 'भूपरिक्रमा'क निम्न श्लोक मे प्राप्त होइछ -

देवसिंहनिदेशाच्च नैमिषारण्यवासिनः
शिवसिंहस्य पितुः सुतपीड़ निवासिनः ।
पंचषष्ठि देशपुतां पंचषष्ठि कथान्विताम् ।
चतुः खण्ड समायुक्तामाह विद्यापतिः कविः ॥ - भू परिक्रमा।

देवसिंहक तिरोधानक पश्चात् 1402 इ. मे शिवसिंहक विधिवत् राज्याभिषेक भेल । हिनक सुयोग्य शासनककाल मे राज्य समृद्ध एवं सम्पन्न भऽ गेल । विद्यापति 'पुरुष-परीक्षा' मे एक ओजस्वी श्लोक मे एकर संकेत देने छथि -

यो गौड़ेश्वर गज्जनेश्वर रणक्षौणीषु लब्धा यशो
दिक्कान्ताचयकुन्तलेषु नयते कुन्दप्रजामास्पदम् ।
तस्य श्री शिवसिंह देव नृपतिर्विज्ञप्रियस्याज्ञय ।
ग्रंथ ग्रन्थिल दण्डनीतिविषय विद्यापतिर्व्यातनोत् ॥

शिवसिंहक राज्यारोहण 1408 इ. वा 14 मे भेल, ई कतेको विद्वानक अभिमत छन्हि ।[73] शिवसिंहक राज्यत्वकाल सेहो दीर्घ नहि भऽ सकल । हुनक राजत्वकाल 1410 इ. सँ 1414 इ. धरि बताओल गेल अछि।[74] पण्डित रमानाथ झा 1402 मे ल. सं. क प्रारम्भ मानलन्हि अछि। तदनुसार शिवसिंहक राज्याभिषेक 1402 मे तथा 1406 मे हुनक अन्तिम पराजय एवं अदृश्य होयब निश्चित होइछ । शिवसिंह अपन नामक स्वर्णमुद्रा सेहो चलौने छलाह । हुनक दू गोट सिक्का उपलब्ध अछि ।[75]

शिवसिंह कला-प्रेमी, विद्यानुरागी तथा पराक्रमी राजा छलाह । विद्यापति कतेक स्थल पर शिवसिंहक गौड़नरेश सँ युद्ध मे विजयी होयबाक उल्लेख कयने छथि । अपन अवहट्ठ मे रचित दू पद (मि.म. पद सं० 8 एवं 9) मे राजा शिवसिंहक कोनो यवन राजाक संग घमासान युद्ध कऽ कय ओकरा पराभूत करबाक उल्लेख कयल गेल अछि । कीर्तिपताका'क खण्डित प्रति मे घोर युद्ध मे यवन राजा कें परास्त भए, ओकर भागि कऽ शरण लेबाक कथा वर्णित अछि । तीन वर्ष नौ मास राज्य कय राजा शिवसिंह कोनो आक्रामक मुस्लिम सेनाक संग युद्ध करैत मारल गेलाह किंवा कतहु अदृश्य भऽ गेलाह । कीर्तिपताका'क अंतिम पृष्ठ पर ई घटना वर्णित अछि। ओ पुनः आपस नहि भेलाह । एकर आभास प्रायः हुनका पहिने भेटि गेल छलन्हि, तें प्रस्थानक पूर्वहि ओ अपन परिवार, अपन प्रिय सखा, सभासद, राज-कवि एवं मंत्री विद्यापतिक संरक्षण मे अपन एक मित्र राज- बनौलीक राजा पुरादित्यक ओहि ठाम पठा देलन्हि । अनुश्रुतिक अनुसार शिवसिंहक घुरि कऽ अयबाक बारह वर्ष धरि प्रतीक्षा कयलाक बाद रानी लखिमा हुनक एक कुश-प्रतिमा बनबा कय ओकरहि संग सती भऽ गेलीह ।

शिवसिंहक पश्चात् हुनक कनिष्ठ भ्राता किछु समयक लेल मिथिलाक राज्य अपना हाथ मे लेलन्हि । शिवसिंहक मंत्री कायस्थ चन्द्रकरक पुत्र अमृतकर कोनो प्रकारेँ मुसलमान बादशाह केँ प्रसन्न कय पद्मसिंह लेल मिथिलाक राज्य मांगि लेने छलाह । पद्मसिंह दड़िभंगा क 'पदमा' नामक स्थान पर अपन राजधानी स्थापित कयलन्हि । मुदा मिथिलाक गरिमा पुनः आपस नहि आयल । पद्मसिंह छः वर्ष धरि राज्य कय दिवंगत भेलाह । हुनक पत्नी विश्वास देवी बारह वर्ष धरि राजकाज सम्हारैत रहलीह । 'शैवसर्वस्वसार' मे विद्यापति हिनक प्रशंसा कयने छथि ।

ओइनवार वंशक राजपंजिका मे एकर बाद जाहि व्यक्ति सभक संग महाराजक पदवी लागल अछि ओहि मे प्रमुख छथि – नरसिंह तथा रत्नसिंह, भैरवसिंह तथा अमरसिंह । विद्यापतिक कतिपय पद मे हिनकालोकनिक नाम आयल अछि । भैरवसिंहक परवर्ती राजा लोकनिक ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध नहि अछि । विद्यापति यत्र-तत्र कतिपय पद मे राजा लोकनिक दिस संकेत कयने छथि । एहि सँ ई सिद्ध होइछ जे विद्यापति एहि परवर्ती राजा लोकनिक समय धरि ग्रंथ-रचना करैत जीवित छलाह ।

उपर्युक्त विवरणक आधार पर विद्यापति-युगीन मिथिलाक राजनीतिक अवस्था सँ सम्बन्धित प्रभूत मात्रा मे सामग्री उपलब्ध होइछ । एहि सँ ई प्रमाणित होइछ जे विद्यापतिक युग घोर राजनीतिक उथल-पुथलक युग छल। तिरहुत एहि समय मे कयक खंड मे विभाजित छल । ओइनवार वंशीय राजा ब्राह्मण छलाह । ओ सभ शासक होयबाक संग-संग धर्म कार्य एवं सामाजिक आचार-विचारक नियामक सेहो छलाह । तिरहुत पर मुसलमान राजा सभक बरोबरि आक्रमण होइत रहैत छल । राजा शांतिपूर्वक दीर्घकाल धरि राज्य नहि कऽ पबैत छलाह । राज्यक शासन व्यवस्था मे मंत्री लोकनिक महत्वपूर्ण स्थान रहैत छल । विद्यापति-युग मे मिथिला तिरहुत वा तीरभुक्तिक नाम सँ प्रसिद्ध छल । कर्णाट वंशीय राजाकेँ स्वतंत्रता आ संप्रभुता-प्राप्त छलन्हि, मुदा ओइनवार वंशीय राजा संप्रभुता प्राप्त नहि छलाह । राजा शिवसिंह संप्रभुता प्राप्त करबाक प्रयास कयने छलाह, मुदा सफल नहि भऽ सकलाह।

सामाजिक अवस्था :

विद्यापतिक काव्यमे युगीन सामाजिक चेतना पर्याप्त मात्रा मे मुखरित भेल अछि । मिथिलाक सामाजिक जीवनक प्रभाव विद्यापतिक रचना पर स्पष्टतः परिलक्षित होइछ । विद्यापति-युगीन मिथिलाक सामाजिक तथा

सांस्कृतिक अवस्था सँ सम्बन्धित प्रचुर सामग्री ज्योतिरीश्वर ठाकुर, विद्यापति एवं अन्य कएक कवि, पंडित आ लेखकक रचना सभ मे उपलब्ध अछि ।[76] हालहि मे प्रकाशित प्रो. राधा कृष्ण चौधरीक एतद्विषयक अमूल्य ग्रंथ 'मिथिला इन द एज आफ विद्यापति' शोधार्थी एवं सुधी पाठकक लेल मीलक पाथर सिद्ध भेल अछि । विशेषतः विद्यापतिक ग्रंथ सभमे एहि कालक सामाजिक जीवन सँ सम्बन्धित एतेक सामग्री उपलब्ध अछि जे तत्कालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवस्थाक सुचारु रूपेँ अनुशीलन एवं मूल्यांकन कयल जा सकैछ । एहि विषय सँ सम्बन्धित पोथी सभमेँ सभसँ महत्वपूर्ण एवं प्रमुख अछि 'लिखनावली' । एकर अतिरिक्त हुनक 'पुरुष-परीक्षा' 'कीर्तिलता', 'दान वाक्यावली' 'गयापत्तलक' आ 'विभागसार' मे एतत् सम्बन्धी बहुमूल्य सामग्री प्राप्य अछि । हुनक 'पदावली' मे सेहो एतद्विषयक सामग्री प्रभूत मात्रा मे उपलब्ध अछि । दामोदर मिश्रक 'वाणी भूषण', भवशर्मा प्रतिहस्त कृत'सुगति सोपान', महामत्तक चण्डेश्वर ठाकुर कृत 'कृत्यरत्नाकर' आदि मे सेहो तत्कालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवनक यथेष्ट मात्रा मे सामग्री उपलब्ध अछि ।

विद्यापति युगीन मैथिल समाज सामन्तवादी आधारहि पर अवस्थित छल तथा मध्यकालीन सामन्ती समाजक सभ दोष ओतय विराजमान छल । समाज मे मूलतः दू वर्गक लोक छल आ बेगारक प्रथा प्रचलित छल ।[77] एक वर्ग राजन्य वर्ग सँ सम्बद्ध उच्च श्रेणीक ऐश्वर्य सम्पन्न शिष्ट लोकनिक छल आ दोसर वर्ग निम्नवर्गीय साधारण जनताक छल । सामान्य जनताक स्थिति बड़ दयनीय छल । सामन्त वर्गक लोकक जीवन पर्याप्त मात्रा मे समृद्ध एवं आमोद-प्रमोद सँ परिपूर्ण छल । सामन्त लोकनि पैघ-पैघ उपाधि सँ विभूषित छलाह, यथा, महासामन्ताधिपति, महासामन्त, महाराज, महामाण्डलिक, महामण्डलेश्वर, महामत्तक, महा संधिविग्रहिक, महाभांडारक, महादेवागारिक, सामन्त, रणक, राउत, ठक्कुर[78] आदि । ई सभ राजनीति आ समाज दुनू क्षेत्र मे नेतृत्व प्रदान करैत छलाह । तत्कालीन मिथिलामे आर्थिक आ सामाजिक विषमता सर्वत्र व्याप्त छल आ तकर निराकरणो सुलभ नहि छल । विद्यापति अपन नचारी आ महेशवाणी मे संतप्त मानव आत्माक यथार्थ आर्त्तनादक चित्रण कयलन्हि अछि जकर समर्थन तत्कालीन अन्य साधन सभ सँ सेहो होइछ ।[79]

गाँव मे ब्राह्मण धनी होइत छलाह आ जमीन पर हुनक आधिपत्य छलन्हि । अतः साधारण लोक सभकेँ हुनका सभक अधीन मे रहय पड़ैत

छलैक आ जीविकाक लेल हुनकहि अनुकूल चलय पड़ैत छलैक । एहि युग मे मिथिला मे जाति प्रथा कें आरो कठोर बनयबाक प्रयास कयल गेल आ एहि प्रथाकें दृढ बनयबाक हेतु हरिसिंह देव (1324 इ.)क समय मे पंजी प्रथाक विकास भेल ।[80] जातीय शुद्धिक नाम पर किंवा अपन पद के आर उपर उठयबाक लेल एक-एक व्यक्ति पच्चीस-पच्चीस व्याह करब शुरू कऽ देल आ एहि तरहें 'बिकौआ'क प्रथा प्रारम्भ भऽ गेल । उच्च मूलक गरीब लोक नीच मूलक कन्या सँ विवाह करैत छलाह आ व्यवस्थाक रूपमे टाका लैत छलाह आ एहि लेल ई सभ 'बिकौआ' कहबैत छलाह । पंजी प्रथा कें लागू भेला सँ मिथिला मे 'पंजीकार' आ'घटक'क प्रथा चलि पड़ल । विद्यापति वर्ण-व्यवस्थाक संग-संग पंजी व्यवस्थाक सेहो समर्थक छलाह आ ओ एहि मे आस्था रखैत छलाह ।[81] ज्योतिरीश्वरक' वर्णरत्नाकर' मे सेहो एहि व्यवस्थाक उल्लेख भेल अछि ।[82] कुलीन-अकुलीनक भेद पर विद्यापति सेहो व्यवस्थाक संग छलाह ।[83] सामन्तवादी समाज मे धनहि सामाजिक प्रतिष्ठा, मान आ आदरक मापदण्ड छल ।[84] धनहि सँ बुद्धि आ विवेकक जांच होइत छल आ धन गेला पर लोकक नीक गुणहु लुप्त भऽ जाइत छल ।[85]

ब्राह्मण मे कएकटा श्रेणी छल, जाहि मे श्रोत्रिय आ योग्य (योग) सर्वोच्च छलाह । राजपूत मे चौहान, चन्देल आदि कएक टा शाखा-उप शाखा छल । ब्राह्मणक उपाधि त्रिपाठी, चतुर्वेदी, शर्मा, ठाकुर, मिश्र, शुक्ल, उपाध्याय आदि होइत छल ।[86] अन्य जाति मे कायस्थक उपाधि 'दास' छल । 'लिखनावली' मे साहू, महथा, राउत आदि उपाधिक सेहो उल्लेख अछि ।[87] भृत्य वर्ग मे 'कैवर्त'क उल्लेख कएकटा पत्र मे भेल अछि । एहि वर्गक स्थिति अत्यन्त दयनीय छल । कैवर्त-विद्रोह एहि वर्गक अत्याचार-पीड़ित होयबाक प्रमाण प्रस्तुत करैछ । वणिज वर्ग सम्पन्न छल । ई सभ राजा कें उपहार मे रत्न भेंट करैत छल जाहि सँ राजा पर एकर सभक प्रभाव छल होयत । ब्राह्मणहि जकाँ कायस्थ मे सेहो पंजी प्रबन्ध छल । लिखनावलीक एकटा पत्र मे दस्तावेजक लिपिकारक रूप मे कायस्थक उल्लेख भेल अछि। सामान्य प्रजाक आर्थिक अवस्था नीक नहि छल । ऋणपत्र, जमीन, स्वर्ण तथा दास-दासीक भरना पर रखबाक, बन्धक रखबाक[88] तथा 'बेचबाक' अनेक नमूना 'लिखनावली' मे उपलब्ध अछि ।

सभसँ दयनीय दशा शूद्र लोकनिक छल ।[89] प्राचीन यूनानक दास-दासी जकाँ एकर सभक परिवारक परिवार बेचि देल जाइछ छलैक । शूद्र लोकनिक अवस्था कतवा दयनीय छलैक, तकर आभास विद्यापतिक एकटा पदहु मे प्राप्त होइछ ।[90] रोप्य, पण (कौड़ी, पाइ), कौड़ी ओहि समयक प्रचलित सिक्का छल । चारि रुपैया (रोप्य टंक) मे एक दासी आ दू रुपैया मे एक दास कें बेचल जाइत छल ।[91] लिखनावली सँ ज्ञात होइछ जे एहि समय मे सूदखोरीक व्यवसाय प्रचलित छल आ बहुतो लोक एहि व्यवसाय सँ लाभ उठबैत छल ।[92] सूदिक दर ऊँच छल, दू पैसा सँ छः पैसा धरिक सूदि प्रचलित छल । व्याज पर ऋण-बन्धक आदिक प्रथा प्रचलित छल । सामाजिक उत्सवक अवसर पर बेसी कर्ज लेल जाइत छल। शूद्र अपन शरीर कें बन्धक राखि कर्ज लैत छल आ एहि प्रकारक लोक सभकें 'बहिया' कहल जाइत छल ।[93]

'वर्णरत्नाकर' मे दू प्रकारक निम्न स्तरक लोकक वर्णन प्राप्त होइछ- निर्वासित आ अनिर्वासित ।[94] निर्वासितक श्रेणी मे अयनिहार लोक हिन्दू समाज सँ बाहर छल आ ओ 'मन्द जातीय' कहबैत छल ।[95] मन्द जातिक अन्तर्गत ज्योतिरीश्वर निम्नलिखित जातिक उल्लेख कयलन्हि अछि - तेली, तांती, तीवर, तुरिया, तुलुक, धांगल, धानुख, हाड़ी, गोंह, चमार, गोआर, ओड़, सुड़ी, विन्द, कादव, नागर, डोम आदि । डोम, निषाद, कापालिक आदिकें अछूत कहल गेल अछि ।[96] लिखनावली मे गोंढ़ी, धीवर, सहनी, हट्टोपजीवी आदिक सेहो वर्णन प्राप्त होइछ । निम्न स्तरक सभ जातिक लोक कें शूद्र वर्ण मे राखि देल जाइत छल । शूद्रक स्थिति मे थोड़-बहुत परिवर्तन सेहो लक्षित होइछ । चण्डेश्वरक अनुसार एक नीक शूद्रक ओहि ठाम जमीन, गाय आदि प्राप्त करबाक हेतु ब्राह्मण भोजन ग्रहण कऽ सकैत छलाह । लक्ष्मीधर आ चण्डेश्वरक अनुसार शूद्र ब्राह्मणकें भात बनयबाक लेल चाउर सेहो देल करैत छल ।

चण्डेश्वर, विद्यापति आ वाचस्पतिक स्मृति-रचना सभक अनुसारें तत्कालीन समाज मुख्यतः चारि वर्ग मे विभक्त छल - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आ शूद्र । एकर अतिरिक्त अनेकानेक आरो निम्न जातिक एहि युग मे विकास भेल । समाज मे ब्राह्मणक सभ सँ अधिक चलती छल आ सामाजिक मामिला मे सेहो हुनकें लोकनि द्वारा बनाओल गेल नियमक पालन होइत छल । समाज मे द्वितीय स्थान क्षत्रियक छल । प्रजाक रक्षाक लेल अस्त्र-शस्त्रक निर्माण करबाक हुनका अधिकार प्राप्त छलनि । सामाजिक व्यवस्था मे तेसर स्थान वैश्यक छल । वाणिज्य-व्यापार हिनका लोकनिक प्रधान पेशा छल ।

सूदि पर टाका लगायब तथा खेती करब सेहो हिनक कार्य छल । शूद्र [97] क स्थिति सभ सँ दयनीय आ निम्न स्तरीय छल । विद्यापति 'लिखनावली' मे विभिन्न वर्णक सम्बोधनक उल्लेख कयने छथि । [98]

मिथिला मे चारू वर्णक बाहर ब्राह्मणक बाद महत्वपूर्ण जातिक रूप मे करण कायस्थ छलाह । ओ सभ राज-काज चलयबा मे सिद्धहस्त छलाह आ हुनक महत्व ब्राह्मणे जकाँ छल । ज्योतिरीश्वरक 'वर्णरत्नाकर' मे करणाध्यक्ष'क वर्णन भेटैछ जाहि सँ ई अनुमान लगाओल जा सकैछ जे करण प्रशासन सँ सम्बन्धित एकटा 'आफिस' छल आ एहि मे काज कयनिहार सभ लोक 'करण' कहबैत छलाह । सुवर्ण वणाविदान '(1971इ.) मे एक'करणमंडपक' उल्लेख भेटैत अछि जाहि सँ न्यायालयक बोध होइछ। मिथिलाक सामाजिक आ राजनीतिक इतिहास मे 'करणक महत्वपूर्ण स्थान रहल अछि तथा श्रीधर दास ('सदुक्ति कर्णामृत'क सम्पादक) सँ लऽ कय अद्यपर्यन्त ओ मैथिल समाज केँ प्रभावित कयने छथि । विद्या-बुद्धिक लेल तँ ई सभ अत्यन्त प्रसिद्ध रहलाह अछि । विद्यापतिक पुरुष परीक्षा, कीर्तिलता तथा कीर्तिपताका मे एहन कएकटा लोकक नाम सुरक्षित अछि । अमृतकर, अमियकर आदि तँ विद्यापतिक समकालीने छलाह । आराक एक प्रशासनिक करण कायस्थ जयराम दत्तक हाथक लिखल (चित्रांक सहित) कालचक्र तंत्रक पांडुलिपि आइयो केम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे सुरक्षित अछि । [99] लिखनावलीक कएक पत्र मे दस्तावेजक लिपिकारक रूप मे कायस्थ लोकनिक उल्लेख भेल अछि ।

एवं विधि समाज कतोक स्तर मे खण्ड-पखण्ड भेल छल । एक दिस छल दरबार, बादशाह, नबाब आ सूबेदार लोकनिक दरबारक तमीज आ तहजीब । एहि ठाम सँ तरुआरिक झंकार, अंगूरी आसवक गंध, नरगिसी भावक छटाक वातावरण समाजकेँ प्रभावित करैत ससरि रहल छल आ पसरि रहल छल । दोसर दिस छल गढ़ आ गढ़ेश्वरक परिसर - चकित, आ शंकित आ आतंकित । एहि ठाम तरुणी छलीह, तरुआरि छल, दान छल, तान छल, भोजन छल, भोग छल । तेँ शाकी-शराब, अदा-अदब, जम्मा-मिरजे, शेर-शायर, निशस्त-बरखास्त, इत्तिला-इजहार आ अरजी-मरजीक रंग एहि भूमिक सामन्ती मन पर बेसी गढ़गर भेल जा रहल छल । किन्तु एहि हिलकोर सँ असम्पृक्त जकाँ छल साधारण जन समाज । ओकरा लए ने शस्त्र छलैक आ ने शास्त्र छलैक । साग-पात खाइत छल आ महराइ ठोकैत छल।

माँ मिथिला जे अन्न-धन, दूध-फल या खीर-खांड़ दैत छलथिन ताही मे मगन । महीस-गाय छलैक बथान पर, देवता छलथिन थान तर आ संस्कृति छलैक कमला मैयाक गान पर । शशिधरक आगू बम-बम कयलक आ असिधरक आगू मेमिआयल । जइसन राज तइसन बेवहारक अनुसार ढंग बदलैत ।

स्त्रीगणक स्थिति दयनीय छल । एकर स्पष्ट संकेत ज्योतिरीश्वरक' 'स्त्रीक चरित्र अइसन दुर्लक्ष्य' एवं 'स्त्रीक चरित्र अइसन दारुण' सदृश वाक्य सँ प्राप्त होइछ । विद्यापति सेहो स्त्री केँ अलप गेआनी कहलनि अछि । दुहिता सन्ततिः पित्रोरूद्वेग निमित्तमेवास्ति' वाक्य सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे कन्याक परिवार मे की स्थान छल । ओना एहि युग मे लखिमा, धीरमती, विश्वास देवी आ चन्द्रकला सनक विदुषी नारी भेल छलीह, मुदा से अपवाद छल । समस्त मिथिलाक स्त्रीक स्थान उपर्युक्त नारी जकाँ नहि छल । एहि समयमे सती प्रथाक सेहो प्रचलन छल । [101] भवसिंहक दू रानी वाग्मती तट पर सती भेल छलीह । समाज मे बहु विवाह, बाल विवाह [102], बेमेल विवाह आदिक उल्लेख तत्कालीन रचना सभ मे प्राप्त होइछ । 'गृहस्थरत्नाकर' 'मदनपारिजात' आ 'लिखनावली' मे विवाह सम्बन्धी विधान आ स्त्री-धनक सम्बन्ध मे विवरण उपलब्ध होइछ । विद्यापति अपन 'विभाग सार' [103] मे दाय भागक प्रतिपादन कयने छथि । 'स्त्रीधन' केँ मैथिल निबन्धकार लोकनि 'सोहायिक' [104] तथा यौतुक [105] सेहो कहलनि अछि । मिथिला मे बहु विवाहक प्रथा बेस प्रचलित छल । विद्यापति बहु विवाह प्रथाक विरोधी छलाह जकर संकेत ओ 'पुरुष परीक्षा' मे कयने छथि । [106] विवाहिता पत्नीक अतिरिक्त सम्पन्न लोक अन्य रमणी सभक संग सेहो प्रणय सम्बन्ध रखैत छलाह । राजा शिवसिंह केँ छः पत्नी छलनि, विद्यापतिक दू विवाह भेल छलनि । 'बहुल कामिनि एकल कन्त' अपवाद नहि भऽ कय नियम जकाँ बनि गेल छल । एहन समाज मे नवविवाहिता पत्नीक की दुर्दशा भऽ सकैत छलैक तकर संकेत 'लिखनावली'क एक पत्र मे प्राप्त होइछ । कविक कतेको पद परित्यक्ता एवं उपेक्षिता नारीक व्यथा-वेदना सँ अश्रु-विगलित अछि ।

घर, समाज आ परिवारक अतिरिक्त आरहु कतेक प्रकारक स्त्रीगणक वर्णन पुरुष परीक्षा मे कयल गेल अछि । [107] राजा, सामन्त ओ धनाढ्य वणिक प्रासाद मे कुल-ललनाक अतिरिक्त तरलिका (शराब ढारयवाली)

ताम्बूल वाहिनी, चँवरधारिणी, पत्र-लेखा, श्रृंगारिका, चित्रलेखा, मयूरिका (पक्षी के दाना देबयवाली), संकेतवाहिनी आ प्रक्षालिका (फुहार छीटयवाली) आदि सुन्दरी युवती सभक हेंज राखल जाइत छल। वेश्याक स्थान साहित्य आ समाज मे महत्वपूर्ण छल। ओ सभ एके संग कलामयी, नर्त्तकी, असाधारण सुन्दरी, गायिका, वादिका, वाक्य चतुरा, आ व्यवहार कुशला होइत छलीह। राजा, पंडित, मंत्री, बोद्धा, योद्धा, श्रीमन्त आ श्रेष्ठी मे सँ अधिकांश लोक कोनो ने कीनो वेश्या विशेष सँ सम्बन्धित रहैत छलाह आ अनुप्राणित होइत छलाह। वेश्या सभक विवरण 'कीर्तिलता'[108] मे सेहो भेटैत अछि। विद्यापतिक पूर्व ज्योतिरीश्वर ठाकुर सेहो वेश्याक विशद वर्णन कयने छथि।[109] अपन 'पंचसायक' मे ओ विभिन्न प्रकारक नायिकाक वर्णन सेहो कयने छथि। एहि प्रसंग मे ओ कलिंग, बंग, गौड़, मध्यदेश, मालवा, गुर्जर, सिन्ध, द्रविड़, मुद्र, पुंढ्र, कर्णाट आदिक स्त्रीगणक विशिष्टता पर प्रकाश देने छथि। विद्यापति सेहो 'कीर्तिलता' मे उपर्युक्त स्थान सभक वर्णन एक स्थान पर कयने छथि।

वेश्या सँ कने हटिकऽ 'नागरि'केर स्थान छल। एहि मे सँ अधिकांश वेश्ये सनक परिवारक होइत छलीह। संगहि सामन्त कुलक किछु 'बहकरा' सभ सेहो 'नागरि' भऽ जाइत छलीह। पैघ घरक त्यक्ता, असंतुष्टा, पीड़िता, सोति-निर्वासिता आ अपहृता सेहो 'नागरि'क कोटि मे आबि जाइत छलीह। काशीक वेश्या-हाट आ दासी बजारक लेल एही परिसर सँ सुन्दरी नारी प्राप्त कयल जाइत छलीह। अभिसार, मिलन, विदग्ध-विलास, वियोग, प्रतीक्षा, उत्कंठा, छटपटी, कछमछी, पांती, संकेत, श्रृंगार सभटा एही वातावरणक उत्पत्ति छल आ रसनिष्पति छल। एही परिसरक सौन्दर्य बोध, संस्कृत कविक 'अलका', वैष्णव कविक वृन्दावन आ शैव-शाक्तक भैरवी-पीठ सिरजैत छल।[110] एकर अतिरिक्त 'कुटनी', संकेत वाहिका, दूती आदिक सेहो प्रचलन छल। अशिष्ट आ अभद्र स्त्री केँ कुलटा कहल जाइत छल। शूद्र स्त्री आ पुरुषक खरीद-बिक्री ओहि युग मे बेस प्रचलित छल आ एकर प्रमाण लिखनावली मे भेटैत अछि।[111]

विद्यापतिक युग मे समस्त उत्तर भारत मे मुसलमानी शासनक स्थापना भऽ गेल छल। मुसलमान संस्कृति हिन्दू समाज केँ प्रभावित करय लागल छल। मिथिलाक हिन्दू जीवन एवं सामाजिक परिवेश पर मुसलमानक कोनो विशेष प्रभाव नहि पड़ल, मुदा ओ पूर्णतः असम्पृक्तो नहि रहि सकल।

प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपेँ मिथिलाक नरेश लोकनि एवं जन सामान्यक जीवन पर मुसलमान शासक लोकनिक वैभवपूर्ण विलासिताक प्रभाव पड़य लागल छल। मुसलमान विजेता अपना संगे घोड़ा आ तरुआरिये टा नहि अनने छलाह। हुनक संग लागि कऽ एकटा नव प्रकारक 'तमीज-तहजीव, शाकी-शराब, शेर-शायर' आ विचारधारा सेहो आयल छल जकर प्रभाव सामन्त वर्ग पर जोरगर भावे पड़य लागल छल।[112]

राजा केँ ईश्वरक अवतार मानल जाइत छल आ विद्यापति स्वयं शिवसिंह केँ 'एकादश अवतार' कहि सम्बोधित कयने छथि।[113] राजा केँ ईश्वरक प्रतिनिधि घोषित कय सामन्त सेहो अपना केँ ओही स्तर पर रखैत छलाह आ प्रजा सँ सेहो भक्तिक अपेक्षा करैत छलाह। राजा कर लैत छलाह आ एकरा लेल पदाधिकारी, कर्मचारी तथा स्थायुकवर (ठाकुर) नियुक्त करैत छलाह। सेना मे विदेशी लोकनिकेँ सेहो नियुक्त कयल जाइत छल। किछु स्थायी सैनिक सेहो रहैत छल तथा समय-समय पर नियुक्तो कयल जाइत छल। एहि मे चौहान, चन्देल प्रभृति जातिक राजपूतक प्रधानता छल। दस्तावेज, मुकदमा मे जयपत्रक व्यवस्था प्रचलित छल। एहि कागज-पत्र सभ पर गबाहक हस्ताक्षर होइत छल आ एकरा लिखयवला कायस्थे होइत छलाह। राजाक मंगल कामनाक लेल जाप, यज्ञ, पूजा आदि अनुष्ठान होइत रहैत छल। दण्ड प्राप्त व्यक्ति केँ राजा सँ अनुमति प्राप्त कय मुक्त कऽ देबाक प्रथा छल। एहि प्रसंग मे एकटा रोचक पत्र 'लिखनावली' मे उपलब्ध अछि।[114] न्याय-शासनक कोनो सुनिश्चित व्यवस्था संभवतः नहि छल। राजा स्वयं वा हुनक मंत्री पैघ-पैघ झगड़ा मे वादी-प्रतिवादी केँ बजाकऽ ओकर कागज-पत्र देखैत छलथिन्ह आ निर्णय दैत छलथिन। वादी, प्रतिवादी, जयपत्र, मोकदमा, साक्षी प्रभृति शब्द सभक प्रयोग सँ मोकदमा सुनबाक तथा फैसला देबाक व्यवस्थाक संकेत भेटैछ। राजाक मंत्री आ पदाधिकारी तँ होइत छल, मुदा हुनक निरंकुशता पर कोनो रोक नहि छल। राजा बेस ठाठ-बाट सँ रहैत छलाह। निरन्तर युद्धक आशंका बनल रहलो सन्ता हुनक हास-विलास, नाच-रंग, दान-पुण्य मे कमी नहि होइत छल। रत्न-जवाहर हुनका उपहार मे भेटैत छलनि।

भूमिकर, जलकर, फलकर आदि लेल जाइत छल। खेती मे अधिक उल्लेख 'लिखनावली' मे धानक भेल अछि। गढ़वार, मगही धानक बीयाक उल्लेख कयल गेल अछि। खेतकेँ नीक जकाँ जोति-कोड़ि-पटाकऽ

तैयार करबाक आदेश एक पत्र मे कयल गेल अछि ।[115] विद्यापतिक 'विभागसार' मे सम्पत्ति-विभाजनक विधि-विधान, प्रथा तथा परम्परा विवेचित अछि । हाट, घाट आदिक सालाना बन्दोबस्ती कयल जाइत छल ।[116] मल्लाह केँ नदी, पोखरि, वा दह सँ माछ आ कछुआक ठीका सेहो सलियाना देल जाइत छल ।[117] मलाहक उपाधि साहनी वा धीवर छल ।

विद्यापति कानून, स्मृति, नीति, भूगोल आदिक ज्ञाता छलाह, रचयिता छलाह । हुनक सभ ग्रंथक अध्ययन सँ ई ज्ञात होइछ जे मिथिला आ बंगाल-असमक बीच ओहि समय मे घनिष्ट सम्पर्क छल आ मिथिला विश्वविद्यालय मे बाहर सँ बहुतो लोक अध्ययन लेल अबैत छलाह । विद्यापति अपन जीवन कालहि मे अत्यधिक ख्याति अर्जित कऽ लेने छलाह। जोनपुर सँ असम धरि हुनक कविताक प्रभाव छल । एहि समय मिथिला एक स्वतंत्र हिन्दू राष्ट्र छल, अतः बहुतो विद्वान एतय आबिकऽ शरण लैत छलाह। घुरवा काल ओ अपना संग विद्यापति एवं अन्य कविक सुमधुर गीत लेने जाइत छलाह । विद्यापतिक महत्व मूल रूप सँ एहि बात मे अछि जे ओ अपन रचना द्वारा मिथिला मे सामाजिक एकता केँ दृढ कयलनि आ जन-भाषाक माध्यम सँ समस्त मैथिल समाज केँ एक सूत्र मे बन्हलन्हि । सुन्दर, स्निग्ध एवं भावुकता सँ ओत-प्रोत हुनक गीत संजीवनीक परिचायक थीक ।[118]

सांस्कृतिक अवस्था :

सांस्कृतिक दृष्टिकोण सँ सेहो विद्यापतिक युग अत्यन्त महत्वपूर्ण मानल जाइछ । मिथिला ओहि समय मे बिहारक प्रधान शिक्षा केन्द्र छल आ भारतक विभिन्न भाग सँ जिज्ञासु विद्यार्थी नव्य-न्याय पढ़बाक हेतु अबैत छलाह । पक्षधर मिश्रक शिष्य पंडित रघुनाथ शिरोमणि अपन गुरुक आज्ञा सँ नवद्वीप (नदिया, बंगाल) मे नव्य न्यायक केन्द्र फोलने छलाह । न्याय-मीमांसाक क्षेत्र मे मिथिलाक देन अद्वितीय अछि तथा विद्यापतिक युग मे मिथिला एहि दृष्टिकोण सँ सभ सँ आगाँ अछि । विश्वास देवीक समय मे 1400 मीमांसक लोकनिक एक सभा आयोजित भेल छल । शंकर मिश्र अद्वैत वेदान्तक प्रमुख आलोचक छलाह तथा ओ कणादक सूत्र सभ पर टीका लिखने छलाह । साहित्य, विज्ञान, गणित, तर्क शास्त्र, कामशास्त्र, व्याकरण, धर्मशास्त्र आदि विषय मे असंख्य पोथीक रचना भेल । शब्द-विद्या, शिल्प-स्थान विद्या, चिकित्सा-विद्या, हेतु विद्या, आध्यात्म विद्या, काम विद्या

आदिक अध्ययन-अध्यापन होइत छल ।[119] परिवार नियोजनक कतिपय उपाय ज्योतिरीश्वरक 'पंचसायक' ग्रन्थ मे प्राप्त होइछ । विद्यार्थी लोकनिक जीवन अनुशासित होइत छल तथा समाज मे विद्वानक सर्वश्रेष्ठ सम्मान छल। विज्ञानक उपेक्षा नहि छल । मिथिला तंत्रक प्रधान केन्द्र छल आ बहुतो तांत्रिक वैज्ञानिक सेहो छलाह । समय आ कालक अध्ययन सेहो कयल जाइत छल । उदयन रचित 'किरणावली' मे एकर उल्लेख भेटैत अछि । नैयायिक लोकनि अणु-परमाणुक अध्ययन सेहो उपस्थित करैत छलाह । अणुक महत्ताक सम्बन्ध मे शंकर मिश्रक उक्ति छन्हि - 'नित्यं परिमंडलम-परिमंडलमेव पारिमांडल्यम् ।' ओ गतिक सेहो ज्ञाता छलाह । 'पुरुष परीक्षा' मे वनस्पतिशास्त्र तथा मवेशी विज्ञान शास्त्रक वर्णन उपलब्ध अछि । चिकित्सा विज्ञानक तँ अध्ययन होइतहि छल । 'वर्णरत्नाकर' मे.......विषवैद्य, नरवैद्य, गज वैद्य, अश्व वैद्य आदिक वर्णन अछि ।[120]

विद्यापतिक युग मे ज्योतिष, रेखा गणित आदिक सेहो विस्तृत अध्ययन होइत छल । वाचस्पतिक पुत्र लक्ष्मीदास, भास्कराचार्यक पुस्तक-सभ पर टीका लिखने छथि । विद्यापति 'भूपरिक्रमा'क माध्यम सँ अपन भौगोलिक ज्ञानक परिचय देने छथि । एहि ग्रंथ मे 45 ग्राम आ नगरक पौराणिक महत्वक संग विवरण देल गेल अछि । विद्यापतिक पूर्व ज्योतिरीश्वरक 'वर्णरत्नाकर' मे भारतक सभ प्रसिद्ध स्थान, पर्वत आ नदी सभक विस्तृत वर्णन भेटैत अछि ।[121] वाचस्पति कृत 'तीर्थलता' आ तीर्थचिन्तामणि' मे सेहो अनेक धार्मिक स्थान सभक उल्लेख भेल अछि । विद्यापतिक ग्रंथ सभमे गौड़, गज्जन, देवगिरि, गोरखपुर, द्वारका, दण्डकारण्य, विजयनगर, कान्यकुब्ज, अयोध्या, प्रयाग, कैलाश, रूढ़, सरयू, संगम, कांची, तेलंग, मथुरा, गोकुल, वृन्दावन, जौनपुर, हिमालय, मोरंग, तिरहुत, गया, मगध, नेपाल, चम्पारन, कर्णाट, काशी, उड़ीसा आदिक भौगोलिक उल्लेख कयल गेल अछि ।

विद्यापतिक युग मे मिथिला मे अनेक निबन्धकारक प्रादुर्भाव भेल छल । ई सभ विभिन्न प्रकारक निबन्ध लिखि मिथिलाक सांस्कृतिक एकता केँ बल प्रदान कयलनि । श्रीदत्त उपाध्याय, चण्डेश्वर, हरिनाथ उपाध्याय, मदन सिंह देव, रुद्रधर मिश्र, वाचस्पति मिश्र, रामदत्त, पद्मनाभ, विद्यापति, इन्द्रपति, प्रेमनिधि, लक्ष्मीपति, शंकर मिश्र, वर्द्धमान आदि ओहि युगक प्रमुख निबन्धकार छलाह । चण्डेश्वर अपन ग्रंथ सभ मे 'वर्ण-धर्म', आश्रम-धर्म' वर्णाश्रम-धर्म, गुरु-धर्म, निमित्त-धर्म आदिक विस्तृत विश्लेषण कयने छथि।

धर्म कें ओ चारि भाग मे विभाजित कयने छथि – 'स्वरूप' (परिभाषा) 'फल' (परिणाम), 'प्रमाण' (स्रोत) आ 'निमित्त'।[122] बंगालक निबन्धकार रघुनन्दन मैथिलीक निबन्धकार लोकनिक ऋणी छलाह आ ओ अपना ग्रंथ सभमे मैथिल मतकें प्रश्रय देने छथि, जे हुनक 'मैथिलास्तु' शब्दक प्रयोग सँ स्पष्ट होइछ। ओ रुद्रधर, वाचस्पति आ अन्य निबन्धकार लोकनिक सेहो ऋणी छथि। एहि सँ ई स्पष्ट अछि जे मिथिला स्कूलक बड़ प्रधानता छल तथा बंगालक सभ निबन्धकार मैथिल निबन्धकार लोकनिक मत कें महत्व दैत छलाह।

धर्म आ दर्शनक क्षेत्र मे ओहि युग मे भक्तिक प्रधानता छल। भाग्यवादक प्रधानताक विकास ओहि युग मे पूर्णरूपेण भऽ गेल छल। एहि युग मे बौद्ध धर्मक अवसान भऽ गेल छल तथा जैन धर्म सेहो सीमित स्थान मे केन्द्रित भऽ गेल छल। मिथिला मे हिन्दू धर्मक अंग-शैव, शाक्त, वैष्णव तथा तन्त्रक पूर्ण प्रचलन छल।[123] विद्यापतिक विभिन्न ग्रंथ सँ ई स्पष्ट होइछ जे एहि समय मिथिला मे शिव, शक्ति आ गंगाक प्रति लोकक अटूट आस्था भऽ गेल छलैक, संगहि कृष्णवादक सेहो जन्म भऽ गेल छल। विष्णु आ भैरबक पूजा कें विशेष महत्व प्रदान कयल जाइत छल।

कर्णाट तथा ओइनवार राज्य-काल मे अनेक नव नगर बसाओल गेल छल।[124] कर्मादित्यक बनबाओल सूर्य मन्दिर अत्यंत प्रख्यात अछि। एकर अतिरिक्त आरो कतेको छोट-पैघ मन्दिर एहि युगमे बनबाओल गेल।

संगीत तथा नृत्य कलाक एहि काल मे अत्यधिक उत्कर्ष भेल। विद्यापतिक पदावली एहि बातक अकाट्य प्रमाण थीक। विद्यापतिक सभ पद कोनो ने कोनो राग-रागिणी मे निबद्ध अछि। ओ सभटा रागबद्ध अछि। एहि संग्रहक सभ गीत मे मालव राग, धनछी राग, आसवारी राग, मल्हारी राग, सामरी राग, अतिरानी राग, केदार राग, कानड राग, कोलर राग, सारंगी राग, गूजरी राग, वसंत राग, विभास राग, नाट राग, ललित राग, बरली राग आदिक उल्लेख अछि।[125] विद्यापति अपन गीति-पद सभक रचनां पारम्परिक राग सभ पर कयलनि आ अपना गीत सभमे रागिणी कें निबद्ध कयलनिं जे हुनक महान देन छन्हि। विद्यापतिक सभ सँ प्रिय एवं प्रमुख राग निम्न लिखित छन्हि – मालव, सुहब, गुरजर, वसन्त, अहीर, श्री, धनछी, वराली, कोलय, कानल, ललित, विभास, अभोग्य, मनारी, मलतार, नरित, सारंगी आदि।[126] विद्यापति आ शिव सिंह अपनहुँ गान-विद्या मे कुशल छलाह।

विद्यापतिक संरक्षण आ निर्देशन मे हुनक पद सभ पर आधारित नृत्य सभक उल्लेख सेहो प्राप्त होइछ। विद्यापतिक निर्देश मे संगीत नृत्य कलाक अभूतपूर्वक विकास भेल। जयत नामक गायक-नर्तक कें विद्यापति द्वारा एहि विद्या सभमे निष्णात बनाओल जयबाक उल्लेख लोचनक 'रागतरंगिणी' मे कयल गेल अछि।[127]

नृत्यक क्षेत्र मे सेहो मिथिला एहि समय मे पाँछा नहि छलि। विद्यापतिक पुरुष परीक्षाक नृत्यविद्य-कथा सँ ई ज्ञात होइछ जे विद्यापतिक युग मे नृत्य-कला उत्कर्ष पर छल। ओ भरतक 'नाट्यशास्त्र'क श्लोक कें उद्धृत कय ई निर्दिष्ट कयलन्हि अछि जे ऋग्वेद सँ नाट्य, सामदेव सँ संगीत, यजुर्वेद सँ मुद्रा तथा अथर्ववेद सँ भावाभिव्यक्तिक विकास भेल।[128] नृत्यक दू भेद बताओल गेल अछि –[129] लास्य एवं ताण्डव। लास्य स्त्रीगणक नृत्य थिक जाहि सँ गौरी प्रसन्न होइछ आ ताण्डव पुरुषक नृत्य थिक जाहि सँ महादेव प्रसन्न होइछ। मैथिली लोक-गाथा तथा कविता मे जे 'नट' आ नटिन' शब्दक प्रयोग भेल अछि ताहि सँ ई भासित होइछ जे मिथिला मे मूक कला (Mime Art)क विकास भऽ चुकल छल। ज्योतिरीश्वर सेहो अपन 'वर्णरत्नाकर' मे नृत्यांगनाक विस्तृत वर्णन कयने छथि।[130] एकटा आर ध्यान देबाक बात ई थीक जे मधुबनी जिलाक उच्चैठ नामक स्थान सँ एक नृत्य-मुद्रा-युक्त मूर्ति हालहि मे प्राप्त कयल गेल अछि। एकर अतिरिक्त मिथिला असंख्य लोकनृत्यक प्रधान केन्द्र रहल अछि। एतय संगीत आ लोकनृत्यक मणि-कांचन संयोग पाओल जाइछ जे अपना मे अद्वितीय अछि। ज्योतिरीश्वरक 'वर्णरत्नाकर' मे विभिन्न प्रकारक लोक नृत्यक वर्णन प्राप्त अछि। एकर अतिरिक्त शुभंकर ठाकुर कृत 'श्रीहस्तमुक्तावली' मे सेहो पारम्परिक पद्धति पर आधारित विभिन्न प्रकारक नृत्य कलाक वर्णन कयल गेल अछि। एहि पोथीक गहन समीक्षा घनश्याम द्वारा कयल गेल अछि जाहि मे 212 प्रकारक मुद्राक वर्णन अछि।[131] विद्यापतिक युग मे किरतनिया नृत्यक प्रचलन छल। ई पुराण पर आधारित अछि। रामलीला आ कृष्णलीला नृत्य सेहो बेस प्रचलित छल। 'जट-जटिन नृत्य' बहु प्रशंसित नृत्य अछि जाहि मे मात्र नवयुवती कन्या लोकनि भाग लैछ। एकर अतिरिक्त 'सामा-चकेबा' मिथिलाक बहुचर्चित लोक-नृत्य थीक जकर उत्पत्ति-स्रोत स्कन्द पुराण एवं पद्मपुराण मे प्राप्त होइछ। 'नैना-जोगिन' सेहो एकटा प्रसिद्ध लोक नृत्य थीक जे तंत्र-संस्कृति पर आधारित अछि आ

विवाहोत्सव सँ सम्बन्धित अछि । 'सलहेस पूजा' सेहो मिथिलाक एक प्रकारक नृत्य थीक जे साधारणतः दुसाध जातिक लोक सभ सँ सम्बद्ध अछि ।[132] एकर अतिरिक्त 'कमला नृत्य' मलाह द्वारा कयल जाइछ, 'गौरैया नृत्य' धानुक आ मुसहर द्वारा कयल जाइछ, 'नाग-नृत्य' सपहरिया द्वारा, राहु-नृत्य दुसाध द्वारा 'दीना भद्री नृत्य, मुसहर, चमार आदि द्वारा कयल जाइछ ।[133] ज्योतिरीश्वर द्वारा 'लोरिक नृत्य'क चर्च कयल गेल अछि जे 13म शताब्दीक नृत्य थीक । एकर अतिरिक्त डा. ब्रजकिशोर वर्मा[134] मैथिली नृत्य' केँ सात वर्ग मे विभाजित कयने छथि, यथा-1 आदिम नृत्य, 2. लोक गाथा नृत्य, 3. पौराणिक नृत्य, 4. विद्यापति नृत्य, 5. सामाजिक नृत्य, 6. नारी नृत्य, 7. शिशु नृत्य । पुनः आदिम नृत्यक अन्तर्गत-विषहरा, अघोरी, लुखेसरी, बघसरी, शशिया; लोक गाथा नृत्यक अन्तर्गत-लोरिक, सलहेस, नयका-वनिजारा, दयालसिंह, कमला-कोयला । पुनः उपभेदक रूपमे कोबर नृत्य, विरोग वा वियोग नृत्य, काधिन नृत्य, कुसुमा दोना नृत्य, प्रथम-मिलन नृत्य, डोमकछ नृत्य, दयालसिंह नृत्य, कमला नृत्य । पौराणिक नृत्यक अन्तर्गत - राधाकृष्ण नृत्य, रास, पारिजात हरण, चीरहरण, नारदीय, अंकिया, किरतनिया; विद्यापति नृत्यक अन्तर्गत शिव पक्षक नृत्य, कृष्ण पक्षक नृत्य । उपभेद-शिवपक्षक- तोहें जे कहइ छऽ गौरा नाचय, रूसलि भवानी, कृष्ण पक्ष-बतान आ बाजत द्रिमि द्रिमि, धोँ द्रिमि ट्रिमिया-माधव की कहब सुन्दरि रूपे-वयःसन्धि, असि नृत्य, डामर, कामर, झरनी, बतहा-बतही नृत्य; नारी नृत्यक अन्तर्गत-नयना योगिन, घसकट्टी, सामाचकेवा, जट-जटिन तथा शिशु नृत्यक अन्तर्गत-मेघ नृत्य-करिया झूमरि एवं बगुला-बगुली, आइ-पाइ प्रभृति अनेकानेक भेदोपभेद कयने छथि ।

संगीत एवं नृत्यक अतिरिक्त विद्यापतिक युगीन मिथिला मे वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्र-कला, लोक-कला, कसीदा आदिक सेहो पूर्ण विकास भेल छल जाहि सँ मिथिला-संस्कृति उत्कर्षता केँ प्राप्त कयलक । एहि विभिन्न कलाक समीक्षात्मक विवरण मिथिलाक महान इतिहासकार प्रो. राधा कृष्ण चौधरी कृत 'मिथिला इन द एज आफ विद्यापति' मे प्रस्तुत कयल गेल अछि ।[135]

एवं विधि मिथिलाक लोक संस्कृतिक उपर छल गढ़ संस्कृति । एहि ठाम प्राचीन परम्परागत राज-सभाक संस्कृत भाषा आ संस्कृत पण्डित लोकनिक प्रभा झमान होबय लागल छल आ मुसलमानी दरबार वला रंग निखरय लागल छल । असि-मसिक परिसर मे शासन, षड्यंत्र, सन्धि,

विग्रह, तरुआरि, तरुणी, शास्त्रार्थ, सांस्कृतिक गोष्ठी, काव्य, संगीत, नृत्य, चित्र, सुरा आ सुन्दरीक वातावरण धहधह करैत रहैत छल । युद्ध मे तरुआरि आ शान्ति मे तरुणीक छटा सिरजब गढ़-संस्कृतिक यैह दू टा विधा छल । एहने वातावरण मे कीर्तिलता सन प्रशस्ति, विभागसार सन कानून, दांन-वाक्यावली सन पद्धति, दुर्गा-भक्ति-तरंगिनी आ शैव-सर्वस्व-सार सन पूजा-साहित्यक रचना संभव छल आ संभव छल राधा-कृष्णक माध्यम सँ नारी-भेद, नायिका-भेद, कच-कुच, सघन-जघन, कटि-नितम्ब, नयन-वाण, अधरामृत, चंचल-युग-कर, पीन-पयोधर, विरचित शयनम, रति-आसन, मुद्रा-छवि, विपरीत रति, सद्यःस्नाता आ निधुवन रास रभसक अभिव्यक्ति देवयवला साहित्य आ काम सूत्र ओ कोकशास्त्र केँ काव्यक भांग मे कलाक मेवा संग पीसि कऽ परसल जयबाक रचना ।[136]

गढ़ संस्कृतिक लगे मे छल मन्दिर-संस्कृति । दान, आराधना, व्रत, कथा-स्तुति, नचारी आ प्रायश्चित-पुरश्चरण एहने ठाम चलैत रहैत छल । सहज विलास एहिठाम गोलोक विहारीक शाश्वत लीला मानल जाइत छल । भैरवी चक्र मे फेनाइत पात्रमे शुद्धि (मदिरा) परसल जाइत छल आ शिवजीक बूटी केँ बड़ विन्यासपूर्वक त्रिकाल सेवन कयल जाइत छल । एवं प्रकारेँ विद्यापतिक रचना धाराक दूटा कूल स्पष्ट परिलक्षित होइछ - एकटा कूल पर छथि जन साधारण, जे अपन स्वकीया भाव मे परिवार-लिप्त छथि । ओहिठाम दैन्य अछि, अभाव अछि आ नचारी-निवेदन अछि । वासनात्मक परिवेश सँ मुक्त, पति-पत्नी आ धीया-पूता समन्वित पारिवारिक सहज छवि देखना जाइछ - हर - गौराक माध्यम सँ । हुनक यमुना, कमलाक प्रतीक अछि, राधा-गोपी सामन्ती रमणीक आ गौरा ग्रामीण परिवारक गृहिणीक । एकर दोसर कूल पर ठाढ़ छथि सामन्त लोकनि । एहि ठाम परकीया नायिका छथि, तेँ कनखी अछि, मटकी अछि, सिंगार अछि, पटार अछि आ वियोग ओ अभिसार अछि । नागर अछि, नागरि अछि, वसन्त अछि, वर्षा अछि, नग्न हास अछि आ विदग्ध विलास अछि । वस्तुतः विद्यापति जाहि सामाजिक ओ सांस्कृतिक आधार पर ठाढ़ छथि से भेल संगम-भूमि, शैव, शाक्त ओ वैष्णव साधनाक संगम स्थल, आगत इस्लामक 'ईश्क हकीकी' ओ 'ईश्क मजाजी' आ एहिठामक नायक-नायिका ओ प्रकृति-पुरुष लीला भावक मिलन-स्थल आ संस्कृतक परम्परा यमुनाक लोक भाषा मैथिलीक गंगा सँ एकाकार होयबाक प्रयास ।[137]

निष्कर्ष :

(1) मिथिलाक इतिहास मे विद्यापति-युग केँ स्वर्ण युग कहल गेल अछि । विदेह जनकेक समय सँ मिथिला भारतीय संस्कृति, साहित्य आ धर्मक प्रमुख केन्द्र रहल अछि । विदेह जनकक समय मे जाहि संस्कृतिक सूत्र-पात भेल, तकर चरमोत्कर्ष विद्यापतिक युग मे आबि कऽ भेल । तेँ विद्यापति-युगकेँ ऐतिहासिक दृष्टि सँ सर्वतोभावेन महत्वपूर्ण युग मानल जाइछ ।

(2) मैथिल संस्कृतिक उल्लेख राजशेखर, गुप्त अभिलेख, यशस्तिलक, पुरुष परीक्षा, कीर्तिलता आदि अनेक ग्रंथ मे तथा लेखक द्वारा कयल गेल अछि जाहि सँ ई प्रमाणित होइछ जे प्राचीन कालहि सँ मिथिलाक अपन सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परम्परा अक्षुण्ण रहलैक अछि ।

(3) मिथिला मे चौदहम-पन्द्रहम शताब्दी राजनीतिक दृष्टि सँ घोर उथल-पुथलक युग छल, अत्यंत अस्त-व्यस्त आ विक्षुब्धताक युग छल । उत्तर भारत मे मुख्यतः तुगलक वंशीय मुसलमान शासक अपन प्रभुत्व स्थापित करबाक उपक्रम कऽ रहल छल । दिल्ली मुख्य शासन केन्द्र छल, परंच केन्द्रीय शासन सुदृढ़ एवं सुव्यवस्थित नहि भऽ सकल छल । उत्तर भारतक विभिन्न प्रान्त मे छोट-छोट स्वतंत्र राज्य स्थापित भऽ गेल छल । प्रान्तीय शासन यदा-कदा केन्द्रीय शासनक प्रति विद्रोह कय अपन स्वतंत्र सत्ता स्थापित करबाक उपक्रम करैत छल। हिन्दू जनता मुसलमान शासनक कठोर नीति सँ असंतुष्ट छल । विद्यापति युगीन मिथिला मे दिल्लीक शासक गयासुद्दीन मुहम्मद आ फिरोजशाह सदृश तुगलक वंशीय बादशाहक अधीनता स्वीकार करैत हिन्दू राजा राज्य कऽ रहल छलाह।

(4) मिथिलाक सुप्रसिद्ध इतिहासकार प्रो. राधाकृष्ण चौधरीक अनुसारेँ विद्यापति-युग मे मिथिला एक स्वतंत्र राष्ट्र छल आ एहि बातक सबल प्रमाण ई थिक जे शिवसिंहक स्वर्ण-मुद्रा तथा भवसिंहक चाँदीक मुद्रा मिथिलाक क्षेत्र मे प्राप्त भेल अछि ।

(5) वस्तुतः विद्यापतिक युग राजनीतिक दृष्टि सँ अराजकतापूर्ण छल । मिथिला नरेश गणेश्वरक असलान द्वारा हत्या कऽ देल गेल छल, जाहि सँ सम्पूर्ण प्रदेश मे अराजकताक लहरि पसरि गेल छल । जनता नव शासक केँ स्वीकार करबा मे असमर्थ भऽ रहल छल, परिणामतः मुसलमान द्वारा हिन्दू पर अमानुषिक अत्याचार कयल जा रहल छल ।

(6) मिथिला मे कर्णाट राजवंशक संस्थापक नान्यदेव छलाह । कर्णाट वंशक स्थापना मिथिलाक लेल एक युगान्तरकारी घटना छल । विदेह

लोकनिक वाद 1500 वर्ष धरि जे मिथिला मे अनिश्चितता, आक्रमण, राजनीतिक शून्यताक दुःखद स्थिति परिव्याप्त छल तकर अंत एहि राजवंशक स्थापना सँ भेल । नान्यदेव मिथिला मे एक स्वतंत्र राज्यक स्थापना कय, 'मिथिलेश्वर'क उपाधि धारण कयलनि ।

(7) कर्णाट राज्यवंश मे नान्यदेव, मल्लदेव, गंगदेव, नरसिंह देव, रामसिंह देव, शक्तिसिंह देव तथा हरिसिंह देव- सात राजा भेलाह जाहि मे सभ सँ वीर, कलाविद् एवं पराक्रमी नान्यदेव छलाह । हिनका समय मे मिथिला साहित्य, दर्शन, ललित कला आदिक केन्द्र बनि गेल छल । विदेहे जकाँ एक बेर पुनः मिथिला ज्ञान-चिंतन, कला-कौशल तथा विद्वज्जनक भूमि बनि गेल । मिथिला मे कर्णाट वंशीय राजालोकनिक राज्यकाल 1097-1326 इ. धरि रहल।

(8) मिथिला मे लगभग 229 वर्ष धरि कर्णाट वंशीय शासनक पश्चात् मैथिल ब्राह्मणक एक नव ओइनवार राज्यवंशक उदय भेल जकर राज्य-काल लगभग सौ वर्षधरि (1350-1450 इ. धरि) बनल रहल ।

(9) ओइनवार राज्यवंश मे कामेश्वर ठाकुर, भोगीश्वर ठाकुर, गणेश्वर, कीर्तिसिंह, भवसिंह, देवसिंह, शिवसिंह, पद्मसिंह, विश्वासदेवी, नरसिंह, रत्नसिंह, भैरवसिंह तथा अमरसिंह आदि राजा भेलाह जाहि मे शिवसिंह सभ सँ अधिक चर्चित, कलाप्रेमी, विद्यानुरागी तथा पराक्रमी छलाह।

(10) उपर्युक्त तथ्य सभक आधार पर ई प्रमाणित होइछ जे विद्यापतिक युग राजनीतिक दृष्टि सँ घोर उथल-पुथलक युग छल । एहि समय मे तिरहुत कएक खण्ड मे विभाजित छल । तिरहुत पर मुसलमान राजालोकनिक बरोबरि आक्रमण होइत रहैत छल । राज्य शासन-व्यवस्था मे मंत्री लोकनिक महत्वपूर्ण स्थान छल । कर्णाट वंशीय राजा संप्रभुता-प्राप्त आ स्वतंत्र छलाह, मुदा ओइनवार वंशीय राजा स्वतंत्र तथा संप्रभुता प्राप्त नहि छलाह । राजा शिवसिंह संप्रभुता प्राप्त करबाक प्रयास कयने छलाह, मुदा सफल नहि भऽ सकलाह ।

(11) विद्यापतिक काव्य मे युगीय सामाजिक चेतना पर्याप्त मात्रा मे मुखरित भेल अछि । मिथिलाक सामाजिक जीवनक प्रभाव विद्यापतिक रचना सभ पर स्पष्टतः परिलक्षित होइछ । विद्यापति युगीन मिथिलाक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवस्था सँ संबंधित प्रचुर सामग्री ज्योतिरीश्वर ठाकुर, विद्यापति एवं अन्य कइएक कवि, पंडित आ लेखकक रचना सभ मे उपलब्ध अछि ।

(12) विद्यापति युगीन मैथिल समाज सामन्तवादी व्यवस्था पर आधारित छल तथा मध्यकालीन सामन्ती समाजक सभ दोष ओतए विराजमान छल ।

समाजमे मूलतः दू वर्गक लोक छल आ बेगारक प्रथा प्रचलित छल। एक वर्ग राजन्य वर्ग सँ सम्बद्ध उच्च श्रेणीक ऐश्वर्य-सम्पन्न शिष्ट लोकनिक छल आ दोसर वर्ग निम्न वर्गीय साधारण जनताक छल । सामान्य जनताक स्थिति बड़ दयनीय छल, सामन्त वर्गीय लोकक जीवन समृद्ध एवं आमोद-प्रमोद सँ परिपूर्ण छल ।

(13) विद्यापति कालीन मिथिला मे आर्थिक आ सामाजिक विषमता सर्वत्र व्याप्त छल आ तकर निराकरणो सुलभ नहि छल । समाज मे ब्राह्मण धनी होइत छलाह आ जमीन पर हुनके लोकनिक आधिपत्य छलन्हि । साधारण लोक केँ जीविकोपार्जनक लेल हुनकहि अधीनता स्वीकार कय हुनके लोकनिक मनोनुकूल चलय पड़ैत छलैक ।

(14) हरिसिंह देवक समय मे पंजी प्रथाक विकास सँ मिथिलामे जाति प्रथाकेँ आर कठोर बनयबाक प्रयास कयल गेल । एहि सँ धनिक लोक सभ पच्चीस-पच्चीस व्याह करब शुरू कऽ देलनि आ 'बिकौआ' प्रथाक प्रचलन भेल । ब्राह्मण मे कएक श्रेणी छल जाहि मे श्रोत्रिय आ योग्य (जोग) सर्वोच्च छलाह । राजपूत मे चौहान, चन्देल आदि कइएकटा शाखा-उपशाखा छल ।

(15) सभ सँ दयनीय अवस्था शूद्र लोकनिक छल । हिनका लोकनिक परिवारक परिवार बेचि देल जाइत छल । चारि रूपैया मे एक दासी आ दू रूपैया (रौप्य, टंक) मे एक दास केँ बेचल जाइत छल । सूदि पर रूपैया लगयबाक बेस प्रचलन छल, सूदिक दर ऊँच छल । एवं विधि समाज कतोक स्तर मे खण्ड-खण्ड भेल छल ।

(16) स्त्रीगणक स्थिति दयनीय छल । समाज मे सती प्रथाक प्रचलन छल । बहुविवाह, बालविवाह, अनमेल विवाहक बेस प्रचलन छल। विवाहिता पत्नीक अतिरिक्त सम्पन्न लोक अन्य रमणी सभक संग सेहो सम्बन्ध राखि सकैत छलाह । वेश्याक स्थान साहित्य आ समाज मे महत्वपूर्ण छल । वेश्या सँ कने हटि कऽ 'नागरि'क स्थान छल ।

(17) राजा केँ समाज मे ईश्वरक अवतार मानल जाइत छल । राजाकेँ ईश्वरक प्रतिनिधि घोषित कऽ सामन्तलोकनि सेहो अपना केँ ओही स्तर पर रखैत छलाह आ प्रजा सँ सेहो भक्तिक अपेक्षा करैत छलाह । प्रजा सँ कर लेल जाइत छल आ एकरा लेल पदाधिकारी, कर्मचारी आ स्थायुकवर (ठाकुर) नियुक्त कयल जाइत छलाह । राजाक मंगल कामनाक लेल यज्ञ, जाप, पूजा आदि अनुष्ठान होइत छल ।

(18) सेना मे विदेशी लोक केँ सेहो नियुक्त कयल जाइत छल । किछु स्थायी सैनिक रहैत छल आ समय-समय पर नियुक्तो कयल जाइत छल । दण्ड प्राप्त व्यक्ति केँ राजा सँ अनुमति प्राप्त कय मुक्त कऽ देबाक प्रथा छल । न्याय-शासनक कोनो सुनिश्चित व्यवस्था नहि छल ।

(19) सांस्कृतिक दृष्टिकोण सँ सेहो मिथिला ओहि समय मे बिहारक प्रधान शिक्षा केन्द्र छल आ भारतक विभिन्न भाग सँ जिज्ञासु विद्यार्थी नव्य-न्याय पढ़बाक हेतु एतए अबैत छलाह । न्याय-मीमांसाक क्षेत्र मे मिथिलाक देन अद्वितीय अछि तथा विद्यापति युग मे मिथिला एहि दृष्टिकोण सँ सभ सँ आगाँ छलि ।

(20) विद्यापति युगीन मिथिला मे साहित्य, विज्ञान, गणित, तर्कशास्त्र, कामशास्त्र, व्याकरण, धर्मशास्त्र आदि विषयक अनेक ग्रंथक रचना भेल । शब्द-विद्या, आध्यात्म विद्या, काम-विद्या आदिक ओहि युग मे अध्ययन-अध्यापन होइत छल । ओहि युग मे ज्योतिष, रेखागणित आदिक सेहो विस्तृत अध्ययन होइत छल । ओहि समय मे मिथिला मे मकरन्द-तिथि-तालिका (कलेंडर)क व्यवहार होइत छल ।

(21) धर्म आ दर्शनक क्षेत्र मे ओहि युग मे भक्तिक प्रधानता छल। मिथिला मे हिन्दू धर्मक अंग-शैव, शाक्त, वैष्णव तथा तन्त्रक पूर्ण प्रचलन छल । शिव, शक्ति आ गंगाक प्रति लोकक अटूट आस्था भऽ गेल छल, संगहि कृष्णवादक जन्म सेहो भऽ गेल छल ।

(22) संगीत तथा नृत्य कलाक एहि काल मे अत्यधिक उत्कर्ष भेल । विद्यापतिक 'पदावली' एहि बातक अकाट्य प्रमाण थीक । विद्यापतिक सभ पद कोनो-ने-कोनो राग-रागिनी मे निबद्ध अछि । डा० सुभद्र झा द्वारा सम्पादित 'विद्यापति गीत संग्रह' मे जे पद सभ देल गेल अछि, ओ सभ रागबद्ध अछि । विद्यापतिक गीतक एतेक ने प्रभाव भेल जे आगाँ चलि कऽ एक स्वतंत्र अस्तित्वक रूप मे 'विद्यापति-राग'क जन्म भेल ।

(23) नृत्यक क्षेत्र मे सेहो मिथिला पाछाँ नहि छलि । विद्यापतिक 'पुरुष-परीक्षा'क 'नृत्य-विद्य-कथा' सँ ई ज्ञात होइछ जे विद्यापतिक युग मे नृत्य-कला उत्कर्ष पर छल । एकर अतिरिक्त वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, लोक कला, कसीदा आदिक सेहो एहि युग मे पूर्ण विकास भेल जाहि सँ मिथिलाक संस्कृति उत्कर्ष केँ प्राप्त कयलक ।

●

संदर्भ

1. ये च दंडशेष निमित्तं कारागारे बद्धास्सन्ति ते परम दुर्गतः
प्राप्त्या क्लेशाः अपि किमपि धतुम् नराकुर्वन्ति म्रियन्तो परं ततो
यदि श्रृंखल बन्धनादेते विमोचन्ते तदा किंचिद्धन प्राप्तिरपि भवति
प्राणिवधवारणचं सम्भवतीत्यस्मभिग्गेचरितं
(लिखनावली, पत्र 16, पृ.-12-13)
2. ओएह, पत्र 52, पृ.-60-64
3. ओएह, पत्र सं. 55-60
4. कखन हरब दुख मोर, हे भोला नाथ ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाओल
सुख सपनहु नहि भेल, भोलानाथ ।
5. डा. शिव प्रसाद सिंह : विद्यापति,
6. पुरुष परीक्षा, पृष्ठ- 19
7. ओएह, पृ. 21
8. ओएह, पृ. 41
9. मि.म., पद- 15, पृष्ठ संख्या- 14
10. ओएह, पद-122, पृ. 159
11. ओएह, पद-452, पृ. 309
12. ओएह, पद-151, पृ. 113
13. लिखनावली, पत्र संख्या - 34, 52 आदि ।
14. मि.म., पद-614, बि.रा.प., पद-131, पृ.-171
15. ओएह, पद. 14, पृ. 14
16. ओएह, पद-104-6, पृ. 108
17. बि. रा. प., पद-25, पृ. 39
18. मि.म., पद 161, पृ. 120
19. मिथिला गीत संग्रह, भाग-2, पृ. 26
20. लिखनावली, पत्र सं. 39-40
21. वि.रा.प., पद-131, पृ. 172
22. पुरुष परीक्षा, कथा सं. 32, पृ.-178
23. ओएह, पृ. 179
24. बि.रा.प., पद सं. 11, पृ. 146
25. मि.म., पद-113, पृ. 55
26. ओएह, पद सं. 226, पृ. 167

27. ओएह, पद-248, पृ. 247
28. ओएह, पद-288, पृ. 271
29. ओएह, पद-138, पृ.-103-4
30. ओएह, पद-221, पृ. 165
31. विद्यापतिः युग और साहित्य, डा. अरविन्द ना. सिन्हा, पृ. 234
32. पुरुष परीक्षा, पृ. 3
33. मि.म., 45
34. वि.रा.प., पद 12, पृ. 17-18
35. मैथिली लोक-गीत : रामइकबाल सिंह, भूमिका - डा. अमरनाथ झा
36. विद्यापतिः बेनीपुरी, पद- 235
37. मैथिली लोक गीत, रामइकबाल सिंह, पृ. 147
38. ओएह
39. ओएह, पृ. 221
40. विद्यापति : बेनीपुरी, पद-208
41. Mithila in the age of Vidyapati; Rahakrishna Choudhary, Page, 19
42. तीरभुक्तीयाः स्वाभावाद् गुणगर्विणो भवन्ति । - पुरुष परीक्षा
43. कीर्तिलता, संपादक डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पृ. 19
44. विद्यापति : अनुशीलन एवं मूल्यांकन, संपादक-डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव, पृ.-1
45. हिस्ट्री आफ मिथिला, डा. उपेन्द्र ठाकुर, पृ.-317
46. महाकवि विद्यापति, पृष्ठ - 73, पं. शिवनन्दन ठाकुर
47. कीर्तिलता, सं. बाबूराम सक्सेना, द्वितीय पल्लव, पृ. 16
48. नन्देन्दुविन्दुविधुसम्मित शाक वर्षे सच्छावणे सितदले मुनिसिद्ध तिथ्याम् ।
स्वातो शनैश्चरदिने करिवेरिलग्ने श्रीनान्यदेव नृपतिर्व्यदधीत वास्तुम
-मिथिलातत्वविमर्श, पं. परमेश्वर झा, पूर्वार्द्ध पृ. 98
49. 'बांगालिकेति कथिता मिथिलेश्वरेण' -क्वार्टरली जर्नल आफ दि आन्ध्र, हिस्टोरिकल रिसर्च सोसाइटी, 1, पृ. 56-57
50. लुप्त मालव भूपाल कीर्ति मलिवयंचमीम् - ओएह, पृ. 56
51. जित सौवीर वीरेण सौवीरक उद्धतः - ओएह, पृ. 56
52. हिस्ट्री आफ मिथिला - डा. उपेन्द्र ठाकुर, पृ. 254
53. ओएह
54. क्वार्टरली जनरल आफ आन्ध्र, हिस्टोरिकल रिसर्च सोसाइटी, 1, पृ. 55-56
55. शाता नान्यपतिर्वभूव तदनु श्री गंगदेवोनृपः
तत्सूनुर्नरसिंहदेव नृपतिः श्रीरामसिंहस्ततः ।

तत्सूनुः किल शक्रसिंह विजयी भूपाल वन्धनस्ततो
जातः श्री हरिसिंहदेव नृपतिः कर्णाट चूड़ामणिः ।
-पंजी प्रबन्ध, मिथिलातत्व विमर्श, पूवार्द्ध, पृ. 146

56. पुरुष परीक्षा, सं. चन्द्रकान्त पाठक, पृष्ठ संख्या-20
57. हिस्ट्री आफ मिथिला - डॉ. उपेन्द्र ठाकुर, पृष्ठ - 256
58. ओएह, पृष्ठ - 264
59. मिथिला तत्वविमर्श (प्रथम खण्ड), पं. परमेश्वर झा, पृ. 270
60. हिस्ट्री आफ मिथिला - डा. उपेन्द्र ठाकुर, पृ. 179
61. ओएह, पृ. 283
62. किछु विद्वान नाह ठाकुर केँ ओइनी ग्रामक उपार्जक मानैत छथि ।
63. मिथिला तत्वविमर्श, पं. परमेश्वर झा, पृ. 147
64. ओएह
65. कीर्तिलता, सं. बाबूराम सक्सेना, द्वितीय पल्लव, पृ.-16
66. विद्यापतिक कीर्तिलता मे एकर उल्लेख भेल अछि -
लक्खणसेन नरेश लिहिअ जवै पक्ख पंच वे ।
तम्महुमासहि घढम पखख पंचमी कहिअ जे ।।
रज्जलुद्ध असलान बुद्धि विक्कम बले हारल ।
पास बइठि विसवासि राय गअनेसर मारल । (- कीर्तिलता, पृ. 30)
67. कीर्तिलता, सं. बाबूराम सक्सेना, द्वितीय पल्लव, पृ.-16
68. इबराहिम शाहक विषयमे विद्वानलोकनिमे मतभेद अछि । डा. विमान बिहारी मजुमदार, डा. जयकांत मिश्र, डा. उपेन्द्र ठाकुरक अनुसारे जौनपुरक राजा इबराहिम शाह शर्कीये इबराहीम शा भऽ सकैछ, मुदा डा. सुभद्र झा, वि.रा.भा. प. के सं. प्रो. रमानाथ झा एकरा कोनो अन्य इबराहिम शाह मानैत छथि ।
69. कीर्तिलता, पृ. 114
70. बन्धवजन उच्छाह कर तिरहुत पाइअ रूप । पातिसाह जसु तिलक करु कीर्तिसिंह भउ भूप ।। की.
71. मिथिला तत्वविमर्श, पृ. 150
72. भुक्त्वा राज्यसुखं विजित्य हरितो हत्वा रिपून संगरे
हुत्वा चैव हुताशनं मखविधो भृत्वाधनैरर्थिनः ।
वाग्वत्यां भवदेवसिंहनृपतिस्त्यक्त्वा शिवाग्रे वपुः
पूत यस्य पितामहः स्वरगमदारद्वयालंकृतः ।। पुरूष परीक्षा
73. विद्यापति, मित्र मजुमदार, पृ. 35
74. ओएह, पृ. 36, हिस्ट्री आफ मिथिला - डा. उपेन्द्र ठाकुर, पृ. 317

75. Journal of Numismatic Society of India; 1957, Vol. XIX, Part - II, Page - 198-199, 201
76. वर्णरत्नाकर, धूर्तसमागम - ज्योतिरीश्वर ठाकुर ।
कीर्तिलता, कीर्तिपताका, लिखनावली, वर्षकृत्य, गयापत्तलक, विभागसार आदि ---विद्यापति ।
77. कीर्तिलता आ लिखनावलीमे एहि प्रथाक वर्णन प्राप्त होइछ ।
78. पंचोभ ताम्र अभिलेख, विद्यापतिक कतिपय कृति आ विभिन्न साहित्यक स्रोतसभमे एहि शब्द सभक उल्लेख प्राप्त होइछ - यथा - मन्त्री, पुरोहित, धर्म्माधिकरणिक, सान्धिविग्रहिक, महामहत्तक, सेनापति, करणाध्यक्ष, शान्तिकरणिक आदि । वर्णरत्नाकर - पृ.-8
मिथिला इन द एज आफ विद्यापति, प्रो. राधा कृष्ण चौधरी, पृ. 102-104
79. (क) सुभाषितरत्नकोष सं 318, 1178, 1192, 1210, 1310, 1314 आदि ।
(ख) विद्यापति-मित्र मजुमदार, पद-350, 774, 775
(ग) वर्णरत्नाकर (भूमिका) । सदुक्तिकर्णामृतः, निहाररंजन राय-बांगालीर इतिहास।
80. आइयो मिथिलामे ब्राह्मण आ कायस्थमे पंजी प्रथा प्रचलित अछि । ब्राह्मण मे पं. रघुदेव झा आ कायस्थ मे सूर्यकर ठक्कुर एहि काज मे हरिसिंहदेवक सहायता कयने छलाह । ब्राह्मण आ करण कायस्थ मे सभ मिला कऽ लगभग 1300-1400 मूल अछि । पंजी मे मूल ग्राम, डेरा आ बीजीपुषक नाम भेटैछ । ग्रियर्सन पंजीकेँ महत्वपूर्ण मानने छथि - मिथिला इन द एज आफ विद्यापति - प्रो. राधाकृष्ण चौधरी, पृ. 114
81. मिथिलाक सांस्कृतिक इतिहास, वेदैही, नवम्बर-दिसम्बर 1963, पृ.-25
82. वर्ण रत्नाकर, पृष्ठ संख्या - 64
83. ए हिस्ट्री आफ मैथिली लिटेचर, भा. 1, पृ. 27
84. मि. म., पद-458, 459, 45
85. ओएह, पद सं. 460, 'धनिकक आदर सबतह होए, निरधन वापुर पुछए न कोए।
86. अत्र ब्रह्मपुर ब्राह्मणाः कृतवरणाः अग्निहोत्रिक श्री आवस्थिक श्री अमुक शुक्ल, श्री अमुक मिश्र, श्री अमुक महामहोपाध्याय, श्री अमुक प्रभृतयो दुर्गापाठ मंत्र जपं, नवग्रह होमंच कुर्ब्बाणाः चतुर्वेदि श्री अमुक त्रिपाठी श्री अमुक द्विवेदी, श्री अमुक प्रभृयोः वनज्जयं सामगान संहिता पाठंच विद्वानास्सन्ति ।
-लिखनावली, पत्र सं. 12, पृ.-8-9
87. ओएह, पत्र सं. 33, पृ. 22
88. ओएह, प सं. 55, पृ. 60

89. Mithila in the age of Viayapati; Radhakrishna Chaudhary, P. 132 " The sudras were the most despised and exploited and below them were the untouchables."
90. जाड़ल बाम्हन तेजय सनान । जाड़ल मानिनी तेजय मान । जाड़ल राड़ घोंषरी तान । - मि. म., पद-215, पृ. 160
91. लिखनावली, पत्र संख्या - 70-73
92. ओएह, पत्र संख्या - 29
93. मिथिलाक सांस्कृतिक इतिहास, वैदेही, नवम्बर-दिसम्बर 1963, पृ. संख्या-16-25
94. वर्णरत्नाकर, सम्पादक - सुनीतिकुमार चटर्जी एवं बबुआ मिश्र, पृ. 1
95. ओएह, पृष्ठ संख्या - 1
96. ओएह
97. लिखनावली, पत्र सं.-55, 56, 57, 58, 59, 60, 61 आदि शूद्र सँ सम्बन्धित
98. उच्चैः कक्षमधः कक्षं समकक्षं नरं प्रति
नियमे व्यवहारे च लिख्यते लिखनक्रमः ।। - लिखनावली, श्लोक-4
99. विद्यापति अनुशीलन एवं मूल्यांकन, सं. डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव, पृ. 9
100. मणिपद्म, मिथिलामिहिर, 21 नवम्बर, 1971, पृ. 7
101. राधाकृष्ण चौधरीक लगक उपलब्ध एक अकबर कालीन दस्तावेज अछि, जाहि मे एकर प्रमाण भेटैत अछि ।
102. मि.म., पद-597, पृ. 394, 'पिया मोर बालक हम तरुनी, कोन तप चुकलौह भेलहुँ जननी ।'
103. मिथिला इन द एज आफ विद्यापति'क परिशिष्टमे प्रकाशित मूल 'विभागसार' द्रष्टव्य पृष्ठ 531-554
104. विवादरत्नाकर, चण्डेश्वर, पृ. 95, विवाद चिन्तामणि, वाचस्पति, पृ.-218, 221, विवादचन्द्र, मिसरू मिश्र, पृ. 8
105. लिखनावली मे यौतुकक वर्णन प्राप्त अछि ।
106. पुरुष परीक्षा, सं. ग्रियर्सन, पृ. 152
107. तत्रैव, कथा संख्या-39
108. कीर्तिलता, सं. डा. बाबूराम सक्सेना, पृ. 42
109. वर्णरत्नाकर, सं. सुनीति कुमार चटर्जी, वेश्यावर्णन, पृ. 26-27
110. मिथिलामिहिर, 31 नवम्बर 1971, मणिपद्म, पृ. 7
111. लिखनावली, पृ. 20-25
112. मिथिला मिहिर, 21 नवम्बर 1971, मणिपद्म, पृ. 7
113. मिथिला इन द एज आफ विद्यापति, प्रो. राधाकृष्ण चौधरी ।
114. लिखनावली, पत्र 16, पृ. 12-13

115. क्षेत्रं च साधयित्वा कुद्दालैः सिद्धं करिष्यथ - वृषभपोषणं तथा करिष्यथ यथा कोऽपि वृषभा दुर्ब्बलाः न भवन्ति यथा वृषभशालायां मशकोपद्रवः कर्दमोपद्रवश्च न भवति तथा यत्नतः करिष्यथ - लिखनावली, पत्र सं. 34
116. लिखनावली, पत्र सं. 30, पृ. 21
117. ओएह, पत्र 21, पृ. 21
118. विद्यापति समीक्षा, निरंजन चक्रवर्ती, पृ. 94
119. मिथिलाक सांस्कृतिक इतिहास, वेदैही, नवम्बर-दिसम्बर, 1963, पृ. 55
120. वर्णरत्नाकर, सं. सुनीतिकुमार चटर्जी, पृ. 68
121. ओएह, पृ. 56-57
122. इण्डियन फिलासफी, डा. राधाकृष्णन, जिल्द-1, पृ. 239
123. मिथिला इन द एज आफ विद्यापति, राधाकृष्ण चौधरी, पृ. 213
124. गजरथपुर, देवकुली, सुगौणा, सिमराव आदि ।
125. विद्यापति गीत संग्रह, डा. सुभद्र झा
126. मिथिला इन द एज आफ विद्यापति, राधाकृष्ण चौधरी, पृ. 375
127. रागतरंगिणी, लोचन, पृ. 37
128. ऋभ्यौनाट्यमभूद्धीतं सामान्यः समपद्यत
यजुभ्योऽभिनया जाता रसाश्चाथर्वणाः स्मृताः ।। - नाट्यशास्त्र, भरत ।
129. स्त्रीनृत्यमुच्यते लास्यं पुन्नृत्यं ताण्डवं तथा
गौरी तुष्यति लास्येन ताण्डवेन महेश्वरः ।। - नाट्यशास्त्र, भरत 1 (17)
130. वर्णरत्नाकर, सं. सुनीतिकुमार चटर्जी
131. हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर, कृष्णमाचारी, पृ. 865
132. Maithili Chrestomathy; Grierson, Part-II, PP. 3-11
133. Mithila in the Age of Vidyapati; Radhakrishna Chaudhary, P. 379
134. Ebid, Appendix VI, PP. 586-602
135. मिथिला इन द एज आफ विद्यापति (1976)- राधा कृष्ण चौधरी, पृ. 358-372
136. मिथिला मिहिर, 21 नवम्बर, 1971, मणिपद्म, पृ.-8
137. ओएह, मणिपद्म, पृ. 20

अष्टम अध्याय

विद्यापतिक प्रेमकाव्यक परवर्ती कविलोकनि पर प्रभाव

अष्टम अध्याय

विद्यापतिक प्रेमकाव्यक परवर्ती कविलोकनि पर प्रभाव

(1) मिथिलाक काव्यानुराग :

उत्तर वैदिक काल मे आर्यावर्त्त मध्य सांस्कृतिक आन्दोलनक जे सूत्रपात भेल छल तकर नेतृत्व विदेहक राजधानी मिथिलाक हाथ मे छल । मिथिलाक जनप्रियता एतेक ने बढ़ल जे सम्पूर्ण जनपद केँ एही नाम सँ अभिहित कयल जाय लागल । ऋग्वेदक कतिपय ऋचाक ऋषि रहूगण जनक मिथि'क पुरोहित छलाह । हुनका नेतृत्व मे कयल गेल यज्ञक कारण सदानीरा (गंडकी) सँ पूर्वक क्षेत्र आर्य लोकनिक निवास-योग्य बनाओल जा सकल छल । एहि गौतम रहूगणक वंशधर गौतम अक्षपाद केँ न्याय-दर्शनक प्रणेता मानल गेल अछि । गौतम ऋषिक पुत्र गौतम शतानन्द सेहो बड़ पैघ नैयायिक भेल छलाह । सीताराम-विवाहोत्सव मे ओएह पौरहित्य-कर्म कयने छलाह । शुक्ल यजुर्वेद संहिताक संकलनकर्त्ता तथा शतपथ-ब्राह्मणक रचयिता सुप्रसिद्ध स्मृतिकार याज्ञवल्क्यक निवास स्थान मिथिला नगरक निकटवर्ती ग्राम जगवन मे छल । सांख्य-दर्शनक प्रणेता कपिल मुनिक आश्रम विदेह राज्य मे ओहि स्थान पर छल, जतय आइ ककरौड़ (मधुबनीक निकट) ग्राम अवस्थित अछि । वैशेषिक-दर्शनक प्रणेता कणाद सेहो मिथिलेक निवासी छलाह । सुप्रसिद्ध काम-सूत्र आ वात्स्यायन भाष्यक रचयिता वात्स्यायनक जन्मस्थान मिथिले छल । ब्रह्मज्ञानी जनकलोकनिक राजधानी मिथिला तत्ववेत्ता लोकनिक जन्मस्थान होयबाक कारणेँ प्राचीन कालहु मे प्रसिद्धिक शिखर पर छल । एहि ठामक राजसभा मे उद्दालक, आरुणि, विदुषी गार्गी तथा महान तत्ववेत्ता विदग्ध शाकल्य केँ पराजित कऽ याज्ञवल्क्य स्वर्ण जटित सींगवाली सहस्र गाय केँ प्राप्त कयने छलाह आ आध्यात्मवादक इतिहास मे अपन नाम अमर कयने छलाह । व्यास-पुत्र शुकदेवक ज्ञान-पिपासा सेहो विदेह जनकक सभे मे शान्त भेल छल । सुप्रसिद्ध तपस्वी कौशिक मुनिक ज्ञान-पिपासा

ताधरि शमित नहि भऽ सकल छल जाधरि ओ मिथिलाक प्रसिद्ध तत्व-वेत्ता धर्म-व्याध सँ उपदेश नहि प्राप्त कयने छलाह ।

ऋषिलोकनिक अतिरिक्त मैत्रेयी, गार्गी आदि तत्व-चिंतन मे निरत मैथिल ललना सेहो प्राचीन भारतक सांस्कृतिक इतिहास मे मिथिला केँ महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करौने छलीह । मिथिलाक इतिहास वीरोचित कथा-पिहानीक संग्रह नहि, ओ आत्म-चिंतन मे निरत ब्राह्मण एवं राजासभक संस्मरण मात्र थिक । न्याय दर्शनक जन्मस्थली होयबाक कारण मिथिला सर्वदा सँ नैयायिक लोकनिक क्रीड़ास्थल रहल अछि । एतुक्का ब्राह्मण अपन अलौकिक ब्रह्मज्ञानक कारणेँ बौद्ध धर्मक प्रभाव केँ कखनहु एहि भूखण्ड पर स्थापित नहि होबए देलन्हि । तखन, बौद्ध नैयायिक लोकनिमे अग्रगण्य अक्षपात, वात्स्यायन आ उद्योतकरक जन्मभूमि सेहो मिथिले छल। बौद्ध नास्तिक लोकनि केँ शास्त्र मे पराजित कऽ वेदक महत्ता केँ स्थापित कयनिहार मे 'श्लोकवार्तिक' क रचयिता मीमांसक-शिरोमणि कुमारिल भट्टक नाम सर्वप्रथम लेल जाइछ । ओ एही ठामक निवासी छलाह । जगद्विजयी शंकराचार्य सँ सफल शास्त्रार्थ कयनिहार दार्शनिक मण्डनमिश्र अपन समयक सर्वश्रेष्ठ विद्वान छलाह । हुनका द्वारा रचित 'विधिविवेक' आ 'भावनाविवेक' मीमांसा विषयक सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मानल जाइछ । एहि दुनू ग्रंथ रत्नक अतिरिक्त 'मण्डन-त्रिशतक' 'नेष्कर्म्यसिद्धि' आ 'वेदान्तवार्तिक'क गणना सेहो महत्वपूर्ण दार्शनिक ग्रंथक रूप मे कयल जाइछ । शंकर-मंडन-शास्त्रार्थक मध्यस्थता कयनिहारि विदुषी भारती, मंडन मिश्रहिक सहधर्मिणी छलीह । शास्त्रार्थ मे ओ शंकराचार्य केँ सेहो परास्त कयने छलीह । षट्दर्शनाचार्य महामहोपाध्याय वाचस्पति मिश्र विभिन्न दर्शन-ग्रंथ पर भाष्यक रचना कऽ अमरत्व केँ प्राप्त कयलन्हि । हुनका द्वारा रचित ग्रंथ सभमे 'सांख्यतत्वकौमुदी, तत्वबिन्दुवैशारती', 'तत्व समीक्षा' 'न्यायकणिका', 'न्यायवार्तिक- तात्पर्यटीका, 'वाचस्पत्य-भाष्य-भामती', 'द्वैतनिर्णय' आदि बेस प्रसिद्ध अछि । हुनक निवास मधुबनी जिलाक अन्धराठाढ़ी ग्राम मे छल। वास्चपति मिश्र नामक मिथिला मे एकटा आओर विद्वान भेल छलाह जनिक जन्म स्थान दड़िभंगा जिलाक सुप्रसिद्ध सरिसव गाँव छल । ओहो नैयायिक आ धर्मशास्त्री छलाह । हुनका द्वारा रचित ग्रंथ सभ मे 'द्वैतचिन्तामणि' 'आह्निक चिन्तामणि', 'नीति-चिन्तामणि', 'श्राद्धचिन्तामणि', 'व्यवहारचिन्तामणि', 'शुद्धचिन्तामणि', 'शूद्राकारचिन्तामणि', 'विवादनिर्णय', 'शुद्धिनिर्णय',

'तिथि-निर्णय', 'महादाननिर्णय', 'दत्तकविधि', 'प्रायश्चित्चिन्तामणि', 'कृत्यमहार्णव', पितृ-भक्ति तरंगिणी', 'गयाश्राद्ध पद्धति', 'गया प्रयोग', 'गयायात्रा', 'चन्दन-धेनु', प्रमाण', 'अनुमान खण्ड-टीका', 'शब्द निर्णय', 'खण्डोद्धार' तथा 'न्यायसूत्रोद्धार' आदि ग्रंथ सभ सेहो मिथिलाक कोन-कोन मे प्रचलित अछि । बौद्धमतक खण्डन कयनिहार सभ मे महामहोपाध्याय गंगेशोपाध्याय सेहो अग्रगण्य रहलाह अछि । ओ मधुबनीक निकटवर्ती ग्राम मंगरौनीक रहयवला छलाह । करियन (दरभंगा)क लगपास गंगाराही गाम मे हिनका द्वारा स्थापित विद्यालयक भग्नावशेष आइयो विद्यमान अछि । हिनक रचित 'तत्वचिन्तामणि' ग्रंथक गणना प्रमाण-कोटि मे कयल जाइछ । बंगाल आदि सुदूर प्रांत सँ छात्रलोकनि हिनका सँ न्यायशास्त्रक शिक्षा प्राप्त करबाक निमित्त अबैत जाइत छलाह । 'आर्यासप्तशती'क रचयिता कविवर गोवर्द्धनाचार्यक निवास सेहो करियन गामे मे छलन्हि । बौद्ध धर्मक मूलोच्छेद कयनिहार सुप्रसिद्ध दार्शनिक उदयनाचार्य सेहो एही गामक निवासी तथा गोवर्द्धनाचार्यक प्रधान शिष्य छलाह । हुनक रचित ग्रंथ सभमे 'कुसुमांजलि', किरणावली', 'आत्म-तत्व-विवेक', 'लक्षणावली' आ 'तात्पर्य परिशुद्धि' पूर्ण प्रसिद्ध अछि । हुनक निम्न गर्वोक्ति केँ स्मरण कय आइ कोनहु भारतवासीक मस्तक गर्वोन्नत भऽ जाइछ –

वयमिह पद विद्यां तर्कमान्वीक्षिकी वा
यदि पथि विपथे वा वर्तयामः स पंथाः ।
उदयति दिशि यस्यां भानुमान सैव पूर्वा,
नहि तरणिरुदिते दिक्पराधीनवृत्तिः ।।

'संवत्-सन'क प्रवर्तक शकारि विक्रमादित्यक नौरत्न मे सँ एक, आ 'लिंग वृत्ति' नामक सुप्रसिद्ध व्याकरण ग्रंथक रचयिता वररुचि मैथिल ब्राह्मणक सौरदपुर वंशक आदि पुरुष सुरेश्वर मिश्रक पूर्वज छलाह । हिनक वंश मे न्यासदत्त पातंजल-वेत्ता, जयादित्य मीमांसक, श्रीपति सांख्यशास्त्री, गणेश्वर, काव्य कोविद, रसमंजरी आदि रीति ग्रंथक रचयिता भानुमिश्र प्रसिद्ध कवि, हलायुध विख्यात विद्वान, श्रीदत्त धर्मशास्त्री, भवदत्त वेदान्ती, काव्यालंकार दामोदर आ व्याकरण दर्शनकार पद्मनाभ अपना समयक सर्वश्रेष्ठ विद्वान छलाह । वेदशास्त्रार्कतत्ववित्, हलायुधक नाम, कोषकारक रूपमे विख्यात अछि । हिनक वेदशास्त्रज्ञताक परिचय हिनक सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'ब्राह्मण सर्वस्व' सँ प्राप्त होइछ । आठम-नवम शताब्दीक आभ्यन्तर मिथिला मे संस्कृत

कविलोकनि मे महामहोपाध्याय मुरारी मिश्रक स्थान महत्वपूर्ण अछि । हिनका द्वारा रचित 'अनर्घराघव' नाट्य ग्रंथक संस्कृत साहित्य मे अधिकृत स्थान अछि । महामहोपाध्याय पार्थ सारथि मिश्र पूर्व मीमांसाक आचार्य मानल जाइत छथि । ओ 'शास्त्र दीपिका', 'न्यायरत्नकणिका', 'न्यायरत्नमाला' 'तन्त्ररस', 'श्लोक वार्तिक' आ 'न्यायरत्नाकर' आदि सुप्रसिद्ध ग्रंथक प्रणयन कयने छथि । हिनक समकालीन शालिक नाथ मिश्र 'प्रकरणभंजिका', 'न्यायरत्न', आ 'शबर-भाष्य-टीका'क रचना कयने छथि ।

एगारहम शताब्दीक अंतिम चरण सँ लऽ कए लगातार 1324 इ. पर्यन्त सुप्रसिद्ध नान्यवंशक राजालोकनि मिथिला पर शासन कयलनि । हिनका लोकनिक शासन कालक विद्वान लोकनि मे 'व्याख्यानामृत' नाम सँ अमरकोषक टीका कयनिहार महामहोपाध्याय श्रीकर आचार्य, 'सरस्वती कण्ठाभरण' (रत्नदर्पण) नामक काव्य ग्रंथ पर भाष्यक रचना कयनिहार रत्नेश्वर मिश्र आ 'मृच्छकटिक' नाटकक सुप्रसिद्ध भाष्यकार पृथ्वीधर आचार्य केँ विस्मृत नहि कयल जा सकैछ । सप्तरत्नाकर - 'कृत्यरत्नाकर', 'दान-रत्नाकर', 'व्यवहार-रत्नाकर', 'शुद्धि-रत्नाकर', 'पूजारत्नाकर', 'विवादरत्नाकर' आ 'गृहस्थ-रत्नाकर' आदि ग्रंथक रचयिता आ कवि कोकिल विद्यापतिक पूर्वज चण्डेश्वर नान्यवंशीय राजा शक्ति सिंह देवक प्रधान मंत्री छलाह । श्रीदत्त उपाध्याय, हरिनाथ उपाध्याय, भवशर्मा, इन्द्रपति आ लक्ष्मीपति सदृश विद्वान सेहो हिनके समकालीन छलाह । नान्यवंशक शासन कालहि मे ज्योतिरीश्वर 'पंचसायक', 'रंगशेखर' आ मैथिली भाषाक आदि महान ग्रंथ एवं सम्पूर्ण उत्तरी भारतक प्राचीन ग्रंथ 'वर्णरत्नाकर' ओ 'धूर्त समागम'क रचना कयलन्हि । उपर्युक्त महामहत्तक चण्डेश्वरक अनुज रामदत्त ठाकुर विवाह पद्धतिक रचना कयलन्हि तथा सुप्रसिद्ध कर्मकाण्डी धनपति उपाध्याय 'श्राद्धदर्पण' नामक ग्रंथक संकलन कयलनि जे अद्यपर्यन्त प्रामाणिक मानल जाइत अछि । ब्राह्मण आ पंडित लोकनिक आश्रयदाताक रूप मे एहि वंशक अंतिम राजा हरिसिंह देव आइयो मिथिला मे प्रसिद्ध छथि । मैथिल ब्राह्मण तथा मैथिल कर्ण कायस्थक पंजी प्रबंध हिनकहि आदेशानुसार पंडित रघुदेव झा द्वारा संग्रहीत भेल छल । पंजी प्रबन्ध एकटा विशाल ग्रन्थ थिक जाहि मे विभिन्न वंशक वंशावली आ वैवाहिक सम्बन्धक उल्लेख अछि । वर्तमान समय मे मैथिल ब्राह्मणक पंजी प्रबन्ध पर पं. रमानाथ झा तथा मैथिल कर्ण कायस्थक पंजी प्रबन्ध पर मेजर विनोद बिहारीवर्मा महत्वपूर्ण अनुसंधानात्मक कार्य कऽ चुकल छथि ।

नान्य वंशक शासन नेपाल से सेहो छल । राजा हरिसिंह देवकेँ विरक्त भय हिमालयक शरण लेलाक उपरान्त, दिल्लीश्वर गयासुद्दीन तुगलक सन् 1324 इ. मे मिथिला पर विजय प्राप्त कयलनि आ राज मंत्री कामेश्वर ठाकुर केँ ओहि ठामक मंत्री नियुक्त कयलनि । कामेश्वर ठाकुर ओइनवार वंशक मैथिल ब्राह्मण छलाह । हिनक वंशधर लोकनि संस्कृत साहित्य केँ पर्याप्त प्रोत्साहन देलनि । मैथिल ब्राह्मणक सुप्रसिद्ध अलई वंशक उसरौली तथा बैगनी शाखाक आदि पुरुष गदाधर झाक विद्वता पर मुग्ध भय सम्राट गयासुद्दीन अहमद हुनका उसरौली (पटना) तथा फरूखाबाद (दरभंगा)क जागीर प्रदान कयने छलाह । महाकवि विद्यापति ठाकुर ओइनवार वंशी राजा शिवसिंहक मंत्री तथा प्रधान राजपण्डित छलाह । राजा हुनका बिस्फी गाम पुरस्कार स्वरूप प्रदान कयने छलथिन्ह । हिनक कोमल कान्त पदावलीक प्रचार आइ मिथिलाक घर-घर मे अछि । अवहट्ठ भाषा रचित हिनक 'कीर्तिलता' तथा 'कीर्तिपताका' पूर्ण प्रतिष्ठा अर्जित कऽ लेने अछि । वर्षकृत्य, भूपरिक्रमा, पुरुष परीक्षा, दुर्गा भक्ति तरंगिणी, दानवाक्यावली, गंगाक्यावली, शैवसर्वस्वसार, गोरक्षविजय, मणिमंजरी, गयापत्तलक विभाग सार, लिखनावली, व्याडी-भक्ति तरंगिणी आदि संस्कृत ग्रन्थक रचयिता महाकवि विद्यापतिये छथि ।

सुप्रसिद्ध दार्शनिक आ कवि पक्षधर मिश्र महाकविक सहपाठी छलाह । पक्षधर मिश्रक वास्तविक नाम जयदेव छलनि । 'प्रसन्नराघव' नाटक ग्रंथक रचना ओ एही नाम सँ कयने छथि । गंगेशोपाध्याय-रचित 'तत्वचिन्तामणि' पर हिनक रचित 'आलोक' नामक भाष्य ग्रन्थ नव्यन्याय-पद्धतिक मूल ग्रन्थ मानल जाइछ । नवद्वीप बंगालक सुप्रसिद्ध नैयायिक बासुदेव सार्वभौम हुनक सहपाठी तथा रघुनाथ शिरोमणि हुनक प्रधान शिष्य छलथिन्ह । एही रघुनाथ शिरोमणि द्वारा नव्यन्याय बंगाल पहुँचल आ ओहिठाम सँ सम्पूर्ण भारतवर्षमे ओकर प्रचार भेल । महामहोपाध्याय पक्षधरक पित्ती आ गुरु हरि मिश्र ओहि युगक सर्वश्रेष्ठ न्यायाचार्य मानल जाइत छलाह । दुर्भाग्यवश हुनक रचित कोनो ग्रन्थ अद्यापि उपलब्ध नहि अछि । प्रायः एही समय मे मिथिला मे वररुचिक सुप्रसिद्ध सोदरीय दड़िभंगा मण्डलान्तर्गत सरिसव ग्राम मे महामहोपाध्याय शंकर मिश्रक जन्म भेल छल । हिनक पिता महामहोपाध्याय भवनाथ मिश्र अत्यंत संतोषी विद्वान छलाह ओ आजीवन ककरहु सँ याचना नहि कयलनि । अतः आइयो हम हुनका अयाची

मिश्रक नाम सँ अभिहित करैत छियनि । शंकर मिश्र रचित ग्रन्थ सभ मे वैशेषिक सूत्रोपस्कार, अनुदान-चिन्तामणि पीयूष, गौरी-दिगम्बर-प्रहसन, भेदरत्ना, कंटकोद्धार, रसार्णव, वादविनोद तथा छन्दोगाह्नि प्रसिद्ध अछि । हिनका विषय मे एकटा श्लोक अत्यंत प्रसिद्ध अछि -

शंकर वाचस्पत्यौः शंकर वाचस्पती सदृशौ ।
पक्षधर प्रतिपक्षी लक्ष्मीभूतो न क्वापि ।।

मिथिलेश शिवसिंहक कला प्रेमक कथा आइयो मिथिलाक घर-घर मे प्रचलित अछि -

पोखरि रजोखरि आर सब पोखरा ।
राजा शिवसिंह आर सब छोकरा ।।

कवि विद्यापतिक आश्रयदाताक संग-संग ओ स्वयं सेहो एक कलाकार छलाह । सिंहभूपति आ सिंह भूपालक नाम सँ, हुनक रचित ग्रंथ सभ मे संगीत-रत्नाकर, व्याख्या-संगीत आ रसार्णव सुधाकर आइयो उपलब्ध अछि। हिनक वंशधर राजा भैरवसिंह कोनो यज्ञक उपलक्ष्य मे एक सहस्र नैयायिक केँ आमंत्रित कऽ जुटौने छलाह, जकर उल्लेख प्राचीन ग्रंथ सभ मे कयल गेल अछि । श्री चित्रधरोपाध्याय, (भैरव सिंहक द्वार-पंडित) मुरारी मिश्र रचित 'अनर्घराघव'क टीका कयने छलाह । 'सप्तपदार्थिक' केर रचयिता श्री दत्तौपाध्याय चौदहम शताब्दी मे आ आचार्यादर्श तथा धर्मपितृभक्तिक रचयिता श्रीदत्त मिश्र पन्द्रहम शताब्दी मे अवतरित भेल छलाह । दड़िभंगा जिलाक देवकुली (देवकुल) गाँव मे वर्द्धमानेश्वर शिवक स्थापना कयनिहार वर्द्धमानोपाध्याय द्वारा रचित स्मृति परिभाषा 'किरणावली-प्रकाश तथा गया पद्धति धर्मशास्त्रक निबन्ध ग्रन्थ सभ सँ अधिक प्रामाणिक मानल जाइछ । कवि कोकिल विद्यापतिक पूर्वज महामहत्तक गणेश्वर चौदहम शताब्दी मे दानरत्नाकर, विवाहरत्नाकर, श्राद्धरत्नाकर, व्यवहार रत्नाकर आदि ग्रंथक रचना कयने छलाह । दड़िभंगा जिलाक भट्टसीमरि ग्राम निवासी महामहोपाध्याय गोविन्द ठाकुर मम्मट भट्टक मायक आग्रह पर काव्य-प्रकाश पर सुप्रसिद्ध भाष्य ग्रंथ प्रदीपक रचना कयने छलाह । महाकवि विद्यापति केँ लुब्धनगर याचक कहनिहार ओइनवार वंशक दौहित्र महामहोपाध्याय केशव मिश्र 'द्वैतपरिशिष्ट' संख्यापरिमाण आ तारभाष्य आदि ग्रंथक रचना कयने छलाह जे धर्मशास्त्र मे प्रमाणकोटिक बुझल जाइछ । महामहोपाध्याय कल्याणधर रचित सुश्लिष्ट परिशिष्ट, द्वैतपरिशिष्टहिक भाष्य थिक । कल्याणधरक शिष्य अपर

मुरारि मिश्र रचित शुभकर्म निर्णय आइयो सम्मानक दृष्टि सँ देखल जाइछ । शूलपाणि उपाध्याय रचित आचार विवेक, प्रायश्चित विवेक आ प्रायश्चित शूलपाणि आदि ग्रंथ विशेष महत्वक अछि । देवनाथ ठाकुर रचित आलोक परिशिष्ट आ तत्वचिन्तामणि ग्रंथ सेहो कम महत्वक नहि । एहि कालक मंगरौनी निवासी महामहोपाध्याय रुचिपति उपाध्याय अनर्घराघवक टीका कयलन्हि । पन्द्रहम शताब्दीक महामहोपाध्याय इन्द्रमणि ठाकुर केँ आइयो हम धर्मशास्त्रक सुप्रसिद्ध ग्रंथ मीमांसासार, रस-पल्लवक रचयिताक रूपे स्मरण करैत छियन्हि । श्री लक्ष्मीपति उपाध्याय रचित अर्द्धरत्न ग्रंथक मिथिलांचल मे सम्मान देल जाइछ । ज्योतिषाचार्य मधुसूदन (प्राचीन) ज्योतिष प्रदीपांकुर केँ ज्योतिष विषयक श्रेष्ठ ग्रंथक कोटि मे परिगणित कयल जाइछ। मधुसूदन ठाकुर रचित कंटकोद्धार 'समय प्रदीप - जीर्णोद्धार' तत्वचिन्तामण्यालोक आ द्वैतनिर्णयजीर्णोद्धार प्रसिद्ध ग्रंथ अछि ।

ओइनवार वंशक अन्तिम प्रसिद्ध राजा लक्ष्मीनारायण, उपनाम रिपुकंस नारायण सेहो पण्डितलोकनि आ कवि सभक आश्रयदाताक रूपमे विख्यात छथि । मैथिलीक सुप्रसिद्ध कवि गोविन्ददास झा हिनकहि सभाक रत्न छलाह। विदुषी रानी लखिमा ठकुराइनक विद्वत्ता आ धर्म शास्त्र विषयक निर्णय सभक चर्च आइयो सुनल जाइछ । राजा भैरवसिंहक भाय राजा चन्द्रसिंहक पटरानी रचित पदार्थचन्द्र आ विचारचन्द्र नामक दू न्याय-विषयक ग्रंथ उपलब्ध अछि ।

सुप्रसिद्ध छन्दग्रंथ 'वाणी-भूषण' क रचयिता महामहोपाध्याय दामोदर मिश्र, राजा कीर्तिसिंहक आश्रित छलाह आ काव्य प्रकाश पर सुप्रसिद्ध भाष्य काव्य प्रकाशक रचयिता रत्नपाणि ठाकुर राजा शिवसिंहक आश्रित छलाह। हुनक पुत्र रवि ठाकुर सेहो उपर्युक्त ग्रन्थ पर मधुमती नामक भाष्यक रचना कयने छलाह । एवं प्रकारेँ उपर्युक्त तथ्य सँ ई स्पष्ट अछि जे अति प्राचीन कालहि सँ मिथिला साहित्य आ संस्कृतिक महान केन्द्र रहल अछि । इतिहासक प्रकाण्ड विद्वान प्रो. राधा कृष्ण चौधरीक उक्ति सर्वांशतः सत्य सिद्ध होइछ जखन ओ कहैछ जे "Mithila has been the land of great scholars since time immemorial, Vidyapati was native of Mithila."

(2) मिथिलाक संगीत एवं नृत्य-परम्परा :

मिथिला मे व्याकरण, दर्शन, आचार-संहिता एवं संस्कृत काव्य-ग्रंथक अतिरिक्त सरस संगीत एवं नृत्य-कलाक सेहो सुष्ठु विकास परम्परा रहल अछि। मैथिल जीवन मे तँ संगीत आ नृत्य तेना भऽ कय ने रचि-बसि गेल अछि जे

एकरा सँ फराक भऽ कय मैथिल संस्कृतिक कल्पना नहि कयल जा सकैछ । एतबा दीर्घ एवं सम्पन्न परम्परा केँ रहलो सन्तां दुर्भाग्यवश मैथिली संगीत कलाक कोनो इतिहास ग्रंथ अद्यावधि नहि प्रकाशित भऽ सकल अछि। मिथिला मे अत्यन्त प्राचीन कालहि सँ संगीत केँ महत्व प्रदान कयल जाइत रहल अछि, मुदा एतद्विषयक कोनो प्रामाणिक रचना मैथिली मे दुष्प्राप्य अछि ।

मिथिलाक संगीत एवं नृत्य कलाक संकेत-सूत्र विदेह कालहि सँ प्राप्त होइछ । उदाहरणार्थ याज्ञवल्क्यक निम्न पंक्ति प्रस्तुत कयल जा सकैछ -

वीणावादनतत्वज्ञः श्रुतिजाति विशारदः ।
तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्गम्प्रयच्छति ।। [1]

विदेह जनकक सभासद मैथिल योगी याज्ञवल्क्यक उपर्युक्त कथन सँ स्पष्ट होइछ जे मिथिला मे एक दिस उपनिषदक विशद विवेचन होइत छल, तऽ दोसर दिस संगीतक श्रुति-मधुर तानक वितान सेहो तानल जाइत छल। महाज्ञानी जनकक दरबारो सर्वदा संगीतक स्वर-लहरी सँ मुखरित रहैत छल । अतः जखन पिताक आज्ञासँ बालब्रह्माचारी शुक़देव आत्मज्ञानक हेतु मिथिलाक दरबार मे उपस्थित भेलाह तखन हुनक चित्तवृत्ति निरोधक जिज्ञासार्थ मिथिलेश जनक परिचर्याक हेतु सर्व प्रथम संगीत मे निष्णात दासी सभकेँ पठाओल -

गीतवादित्रकुशलाः कामशास्त्रविशारदाः ।
तां आदिश्य च सेवार्थं शुकस्य मंत्रिसत्तमः ।। [2]

राजा जनक विदेह रहितहुँ, जीवन-मुक्त होइतहुँ संगीत सँ विमुख नहि छलाह, कारण -

गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञः पार्वतीपतिः ।
गोपीपतिरनन्तोऽपि वंशीध्वनिवशंगतः ।।
सामगीतिरतो ब्रह्मा वीणासक्ता सरस्वती ।
किमन्ये यज्ञगन्धर्वदेवदानवमानवाः ।। [3]

जखन ब्रह्मा, विष्णु, महेश सँ लऽकय यक्ष, गन्धर्व, देव, दानव, मानव पर्यन्त संगीतक प्रेमी छथि, तखन जनके एहि सँ किएक विमुख रहितथि ? एतबे नहि, जकरा ज्ञानक लेसो नहि छैक, नीक अधलाहक थोड़बो ज्ञान नहि छैक, सेहो संगीतक श्रुति-मधुर नाद सँ आहलादित भऽ जाइछ । माइक कोराक जन्मजात कनैत शिशु 'सोहर' सुनिकऽ चुप भऽ जाइछ । हाथी सनक वन्य पशु वीणाक मधुर नाद सँ मुग्ध भऽ व्याधक

बन्धन मे अनायास फँसि जाइछ । सपेरिहाक 'महुअरि' सुनि साँप झूमय लगैछ। कहबीयो अछि -

शिशुवेत्ति पशुर्वेत्ति वेत्ति गान रसं फणी ।

किंच

अज्ञातविषयास्वादो बालः पर्यंकिंकागतः ।
रूदन गीतामृतं पीत्वा हर्षोत्कर्ष प्रपद्यते ।।
वनेचरस्तृणाहारश्चित्रं मृगशिशुः पशुः ।
लुब्धो लुब्धक संगीते गीते यच्छतिजीवितम् ।।
तस्य गीतस्य महात्म्यं के प्रशंसितुमीशते ।
धर्मार्थकाममोक्षाणामिदमेवेकसाधनम् ।। [4]

ई भेल जनक - याज्ञवल्क्य कालीन मिथिलाक संगीत परक स्थितिक बात - मिथिलाक आरम्भ कालक बात । बाद मे परिस्थितिक आवर्त्तन-प्रत्यावर्त्तन सँ मिथिला मे कखनहु संगीतक ह्रास तँ कखनहुँ विकास होइत रहल । मुदा जखन पाल राजवंश लोकनिक अधिकार मे मिथिला आबि गेल, तखन जहिना एतय ब्राह्मण धर्म आ ब्राह्मण दर्शनक ह्रास भेल, तहिना संगीतोक ह्रास भेल । तीरभुक्तिक गौड़ वासवक दरबार बौद्ध-सिद्ध लोकनिक चर्यापद सँ मुखरित होबय लागल । यद्यपि चर्यापद मे संगीतक तत्व अछि, मुदा जे गांभीर्य आ श्रुति-माधुर्य मिथिलाक परम्परागत गीत सभमे छल, से ओहिमे कतए ? मुदा कर्णाट राज्यक प्रारम्भ होइतहि जहिना मिथिला मे ब्राह्मणधर्म आ ब्राह्मण दर्शनक धारा उद्दाम वेग सँ प्रवाहित होबए लागल, ताहिना संगीतोक मधुर-मसृण रागक अनुराग सँ मिथिलाक कण-कण अनुरंजित भऽ उठल । कारण, कर्णाट राज्यक संस्थापक नान्यदेव जेहने जेता छलाह, तेहने गुणरत्न-महार्णव छलाह । नान्यदेवक मंत्री क्षत्रियवंशावतंश श्रीधरक स्थापित विष्णु पाद-पीठक शिलालेख मे हुनका 'जेता' आ 'गुणरत्नमहार्णव' दुनू कहल गेल अछि -

श्रीमान्नान्यपतिर्जेता गुणरत्नमहार्णवः ।
यत्कीर्त्या जनितं विश्वं द्वितीयक्षीर सागरः ।। [5]

एही 'गुणरत्नमहार्णव' महाराज नान्यदेवक हाथे बौद्धक आक्रमण सँ उजड़लि मिथिला पुनः बसाओल गेलि । धर्म-प्राण मिथिलाक माटि-पानि मे जे किछु धर्म-कर्म आ साहित्य संगीतक सौरभ उपलब्ध अछि, ताहि सभक बीजारोपण महाराज नान्यदेवक हाथ सँ भेल छल । महाराज नान्यदेव

(1097-1133 इ.) अपनहुँ महान संगीतज्ञ छलाह । शंकरदेव (1200 इ.) अपन 'संगीत रत्नाकर' नामक संगीत विषयक सुप्रसिद्ध ग्रंथ मे संगीत विशारद लोकनिक परिगणन करैत महाराज नान्यदेवोक सादर स्मरण कयने छथि -

सदाशिवः शिवा ब्रह्मा भरतः कश्यपो मुनिः ।
मतंगो यष्टिको दुर्गा शक्तिः शाधल-कौहलौ ।।
बिशाखिलो दन्तिश्च कम्बलो वतरस्तथा ।
वायु-विश्वासू रम्मार्जुनो नारद-तुम्बरू ।।
आंजनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वरः ।
स्वातिर्गणो विन्दुराजः क्षेत्रराजश्च राहुलः ।।
रुद्रटो 'नान्यभूपालो' भोजवल्लभस्तथा ।
परमद्दी च सोमेशो जगदैक मही पतिः ।।
व्याख्यातारो भारती ये लोल्लटोभटशंकुकाः ।
भट्टाभिनवगुप्तश्च श्रीमत्कीर्तिधरः परः ।।
अन्ये च बहवः पूर्वे ये संगीत-विशारदाः ।

महाराज नान्यदेव मात्र संगीतज्ञे नहि, संगीत शास्त्रक लेखको छलाह । सिंहासनारोहणक पश्चात् हुनका द्वारा लिखल सरस्वती हृदय श्रृंगारहार नामक ग्रंथ एखनहुँ संगीतज्ञ लोकनिक पठन-पाठनक विषय बनल अछि । एतबे नहि, महाराज नान्यदेवक राज-दरबार मे जहिना विद्वानक आदर होइत छल, तहिना गुणी गबैयोक आदर होइत छल । हुनका संरक्षण मे प्रसिद्ध रागक विकास भऽ चुकल छल । हुनक दरबारक प्रसिद्ध राज-नर्तकी 'मीनाक्षी'क एखनहुँ मिथिलाक गुणी-गबैयाक बीच चर्च यदा-कदा भऽ जाइछ । एकर पश्चात् गीतगोविन्दकार जयदेवक मिथिलाक संगीत-कला-स्कूलक उत्पत्ति पर यथेष्ट प्रभाव पड़ल । हुनक सुमधुर तानक प्रभाव सँ मिथिला एवं अन्यत्रो कविताक नव प्रवृतिक आविर्भाव भेल ।

कर्णाट राज्यक अंतिम महाराज हरिसिंह देवक शिक्षा-दीक्षा सप्तरत्नाकर-कार मंत्रिवर चण्डेश्वरक देख-रेख मे भेल छलन्हि । हुनकहु राज-दरबार संख्यातीत 'रत्न' सँ चमत्कृत छल । एक सँ एक विद्वान आ गुणी गबैया हुनक दरबार कें सुशोभित करैत छलाह । ज्योतिरीश्वर ठाकुर चौसठियो कलाक ज्ञाता आ संगीत-शास्त्रक महान वेत्ता छलाह । काम शास्त्रक प्रसिद्ध ग्रंथ 'पंचसायक' कें प्रारम्भ करैत ओ अपना विषय मे लिखने छथि -

यश्चत्वारि शतानि बन्धघटनालंकारमाज्जि द्रुतं ।
लोकानां विदधाति कोतुकवशादेकाहमात्रे कविः ।।
ख्यातः क्ष्मातलमण्डलेष्वपि चतुःषष्ठेःकलानां निधिः
संगीतागमनागरो विजयते श्रीज्योतिरीशः कृती ।।

ज्योतिरीश्वर अपन प्रसिद्ध ग्रंथ 'वर्णरत्नाकर'[6] मे मिथिलाक चौदहम शतीक संगीतक गतिविधि सभक - अथ भाट वर्णना, अथ विद्यावन्त वर्णना, अथ नृत्य वर्णना, अथ पात्रनृत्य वर्णना, अथ प्रेरणनृत्य वर्णना, अथ वीना वर्णना शीर्षकक अन्तर्गत अत्यन्त सजीव वर्णन प्रस्तुत कयने छथि ।

महाराज हरिसिंह देव अपनहुँ बड़ पैघ संगीतज्ञ छलाह । 1326 इ. मे मुहम्मद तुगलकक आक्रमण सँ जखन हरिसिंहदेव गिरि-गह्वरक शरण लेलन्हि, तखन हुनक दरबारक प्रमुख गायक कलानिधि आश्रयक अन्वेषण करैत गोरखपुरक राजा उदयसिंहक दरबारमे गेलाह । ओतय महाराज हरिसिंह देवक प्रसंग मे हुनक निम्नलिखित गर्वोक्ति दर्शनीय अछि -

हरो वा हरसिंहो वा गीतविद्या विशारदो ।
हरसिंहे गते स्वर्गे गीतवित्केवलो हरः ।।[7]

कर्णाट वंशक एहि उर्वर धरातल मे अंकुरित संगीतक कल्पलता ओइनवार युग मे अबैत-अबैत एहि तरहें लतरल-पसरल जे सम्पूर्ण पूर्वोतर भारत मे एकर धाख जमि गेल । एही समृद्ध कल्प-लताक विकसित फूल महाकवि विद्यापति थिकाह, जनिक सौरभ-संभार सँ आइयो दिक्-दिगन्त आप्यायित अछि।

ओइनवार युग वस्तुतः मिथिलाक स्वर्ण युग थीक ।[8] एहि युग मे मिथिला जहिना दर्शनक निदर्शन कयलक, तहिना श्रृंगार रसोक सरस आवर्षण कयलक । एहि युग मे गंगेशोपाध्याय जहिना नव्य न्यायक प्रवर्त्तन कय अवच्छेदकावच्छिन्नक घटाटोप सँ समग्र प्राच्य दर्शन कें आच्छन्न कऽ लेलन्हि, तहिना अभिनव जयदेव विद्यापति लोक भाषा मैथिली मे मधुर-मसृण पदावलीक रचना कय गीतगोविन्दक रचयिता जयदेवहु कें पछुआ देलन्हि ।

ओइनवार वंशक राय अर्जुनक दरबार रास लीला सँ मुखरित होइत रहैत छल । रासलीलाक एकटा चित्र द्रष्टव्य अछि -

चलन्त गोपकामिनी गअन्द मन्दगामिनी ।
निरत्थ सव्वभूषणा विलास-हास-दूषणा ।।
सुवर्ण कर्ण कुण्डला स्वामि अंग मंगला ।
परक्खि याति संगिनी झुलन्त बाहु-किङ्किनी ।

सुसोभ सच्छलक्खणा विलासिनी बिलक्खणा ।
कलाकलापसारिणी पिआनुरागदायिनी ।।
कटक्खकष्ट मोचना सरोजपत्रलोचना ।
विलास-हास-मण्डिआ (कामकेलि-पण्डिआ) ।।

एहि दरबार मे रासक वाद संगीतक कार्यक्रम प्रारम्भ होइत छल । संगीतक कार्य क्रमक एकटा उदाहरण प्रस्तुत अछि –

'अथ तालमात्रास्वरकारेण हस्तकमस्तकानुसारेण गीतार्थानभिनयन्ता-अंडविकारि - चातुरीं दर्शयन्ती - भूलताविवत्तारुनुवर्तिनीभिः सरणिसहस्रतरंङ्गतरलाभिः कलाभिर्दिशः शुभ्रयन्ती-कदाचित स्वर-विशेषमूर्च्छनाक्न्रणि तस्तनमराड- लार्पितवीणाभारणन्ती-श्रवणेरमणीयं गायन्ती-काचिदानयति वारि, काचिदुपनयति कुसुमम्, काचिल्लीलाचलबलयझङ्कारमुखरं बीजयति चारु चामरम, वर्षति चन्दनसारशीकरम, नृत्यति हसति दूषयति हारयति हृदयम्- स्वपतिहृदये सम्पूरयति चरमसम्भोगेन कान्तमनोरथम ।' आदि ।

राय अर्जुनक बाद राजा शिवसिंहक दरबार सेहो सरस संगीतक मृदु मसृण निनाद सँ निनादित होइत रहैत छल । महाराज शिवसिंह सेहो बड़ पैघ कला-मर्मज्ञ छलाह –

वागर्थवत्यः कविताःसमस्ताः सर्वायुवत्यः स्तनकेशवत्यः ।
ता सां पुनः कापि कलावती या तां वेत्ति राजा शिवसिंह देवः।। [9]

महाराज शिवसिंहक दरबारमे अनुगुंजित होमयवला गीतक बानगी द्रष्टव्य अछि –

बाजत द्रिगि द्रिगि धो द्रिमि द्रिमिञा ।
नटति कलावति माति श्याम सङ
करे करु ताल प्रबन्धक धनिञा ।।
डम डम डम्फ द्रिमिकि द्रिमि मादल
रुनु-झुनु मज्जिर बोल ।
किङ्किनि रन-रनि, बलया कन-कनि
निधुबने रास तुमुल उतरोल ।।
बीन-रबाब-मुरज स्वरमण्डल
सरिगमपधनिस बहुबिध भाव ।
धेटिता-धेटिता-धृणि मृदङ ध्वनि
चञ्चल स्वरमण्डल करु राव ।।

श्रम-भरें गलित ललित कबरीयुत
मालति माल बिथारल मोति ।
समय वसन्त रास-रस वर्णने
विद्यापति मति छोभित होति ।। [10]

लोचन कविक प्रसिद्ध ग्रंथ 'रागतरंगिणी' सँ ज्ञात होइछ जे सुमति नामक एक प्रसिद्ध कथक भेल छलाह, जनिक पुत्र उदय छलथिन्ह । ओही उदयक पुत्र जयत महाराज शिवसिंहक दरबार मे रहैत छलाह । ई जे राग रचैत छलाह, विद्यापति तकर उपयुक्त ध्रुव (बोल) बना दैत छलथिन्ह वा ई कहू जे विद्यापतिक गीत केँ ओ लय दैत छलथिन्ह । जयतक पुत्र कृष्ण मल्लिक, पौत्र हरिहर मल्लिक, प्रपौत्र खड्गराम मल्लिक, घनश्याम मल्लिक ओ कल्लीराम मल्लिक तथा वृद्धप्रपौत्र छलीराम मल्लिक, राघव मल्लिक ओ टीकाराम मल्लिक-सभ ओइनवार राज्यकालक प्रख्यात गायक छलाह । लोचनक 'रागतरंगिणी' मे एहि मल्लिक घरानाक उल्लेख कयल गेल अछि। एवं विधि ओइनवार राज वंशक बाद मिथिलाक क्षेत्रीय शासन खण्डबला राजवंश (दड़िभंगाराज) क हाथ मे आयल आ उक्त लोचन कवि एही राज वंशक आश्रित छलाह । ओ रागतरंगिणी मे संगीत विषयक पोथीक चर्च कयने छथि जे दुर्भाग्यवश एखन धरि प्राप्त नहि भऽ सकल अछि । अतः ई निःसंदेह कहल जा सकैछ जे 'रागतरंगिणी' मे जे किछु कहल गेल अछि, ओ सत्यक पिष्टपेषण करैत अछि ।

1325 इ. मे हरिसिंहदेवक नेपाल पलायनक बाद संगीतक गतिविधि सेहो स्थानान्तरित भऽ गेल । अग्रिम शताब्दी मे मैथिल लोकनि नेपालहि मे संगीतक उन्नति कयलन्हि । ओहि ठामक संगीत उन्नायक मे सर्व प्रथम नाम सिंहभूपालक अछि । [11] ई ओएह भूपाल सिंह बुझल जा सकैछ जे नेपालक एक शिलालेख मे मैथिल शासकक रूप मे शक्ति सिंह आ हरिसिंहदेवक बाद वर्णित छथि । [12]

परवर्ती कालमे मुगल दरबार सँ ख्याल आ ठुमरीक बाढ़ि आयल आ ताहि सँ मिथिला सेहो बाँचि नहि सकल । ध्रुव-प्रधान परम्परागत मिथिला-संगीत तथा संगहि मैथिली निबद्ध गीतक धारा क्षीण भऽ गेल । तथापि मिथिलाक तीनू संगीत केन्द्र, पंचगछिया, दरभंगा आ बनैली सौभाग्यवश मिथिलाक संगीत केँ बहुत किछु संरक्षित कयने रहल आ मिथिलाक संगीतक परम्परा मे स्व. मांगनि खबास, स्व. पं. रघु झा, श्रीराम चतुर

मल्लिक, कुमार श्री श्यामनन्दन सिंह आदिक नाम उल्लेखनीय अछि । एकर अतिरिक्त मिथिलाक स्त्रीगण संगीतक बड़ सौखीन रहलीह अछि । मध्ययुग मे महादेवी लखिमा तथा चन्द्रकला (विद्यापतिक पुत्रवधू)क वर्णन उपलब्ध होइछ । आइयो प्रत्येक पावनि-तिहार, विवाह, मुण्डन, विभिन्न पूजा आदि अवसर पर स्त्रीगण द्वारा जे गीत सभ गाओल जाइछ, ओहि मे अपन लय आ राग-रागिनी निहित छैक जे अनुसन्धानक विषय थीक । आइयो खड़का-वसंत, शशिपुर, पिलखवार, सौराठ, रांटी, मंगरौनी, तरौनी, परसौनी, पोखरौनी, ककड़रौल, चकौती आदि गामक स्त्रीगणक गायन मिथिलाक लेल गौरवक वस्तु थीक ।

(3) मैथिली साहित्य :

सुविधाक हेतु डा. जयकान्त मिश्र[13] मैथिली साहित्यक सम्पूर्ण ऐतिहासिक सामग्री केँ तीन भाग मे विभक्त कयने छथि -

(1) प्रारम्भिक मैथिली साहित्य - (1300-1600 इ.) एहि मे मैथिली भाषाक प्रारम्भिक रूप, प्राचीन मैथिली आ प्रारम्भिक गीत शामिल अछि । 1400 ई. सँ आगाँक साहित्य पर विद्यापतिक प्रभुत्व अछि । हुनका अनुसारें एहि काल मे अपभ्रंशक पतनक पश्चात सम्पूर्ण पूर्वी भारत मे मैथिलीये साहित्यिक अभिव्यक्तिक एक मात्र प्रतिष्ठित माध्यम छल ।

(2) मध्य मैथिली साहित्य - (1600-1860 इ.) एहि काल मे साहित्यिक विधा रूपक (ड्रामा)क प्राधान्य रहल, परंच गीति विधि मिथिला सँ हटिकय नेपाल जा कऽ केन्द्रित भऽ गेल । वंशमणि झा, जगत् प्रकाश मल्ल आ उमापति उपाध्याय एहि युगक प्रतिनिधि लेखक मानल जाइछ । शंकर देवक 'अंकिया-नाट' तथा एहन अन्य रचनासभ सेहो एहि काल सँ सम्बन्धित अछि ।

(3) नवीन मैथिली साहित्य - (1860 इ.-आइधरि) एहि कालक साहित्य केँ प्रारम्भहि सँ निरन्तर क्षयक सामना करय पड़लैक, तथापि राजा लक्ष्मीश्वर सिंह (1880-1898 इ.)क समय मे नवयुगक अभ्युदय भेल । बीसम शदीक प्रारम्भहि मे एहि युगक साहित्यिक विधा (गद्य) केँ चिन्हल जा सकैछ । एकर विकास मे मुख्य बाधा मैथिलीक प्रान्तीय शिक्षण प्रणाली मे माध्यमक रूप मे अमान्यता रहल अछि । आइ अंग्रेजी शिक्षाक प्रचार तथा स्वाधीनताक परिणाम स्वरूप साहित्यक सभ विधा-नाटक, कविता, गद्य आदि अत्यन्त उन्नतशील अछि । मैथिलीक स्वातंत्र्योत्तर साहित्य-कविता, कथा, नाटक आदि सभ साहित्यिक विधा मे आशातीत प्रगति भेल अछि आ

एकर कतिपय विधा केँ भारतक कोनो उन्नतशील भाषाक साहित्यक समकक्ष राखल जा सकैछ ।

मैथिली कविता - भारतीय परम्परित कविताक प्रायः सम्पूर्ण विधा मैथिलीयो मे उपलब्ध अछि । संस्कृतक एतय 'अंकविलास', 'छन्दोलंकारमंजूषा' आ 'अलंकृति-बोध' सदृश अलंकार शास्त्र (लक्षणग्रंथ) सम्बन्धी, बूटी प्रकाश (वैद्यक विषयक) आदि ग्रंथ उपलब्ध अछि जे सामान्यतः छन्द मे नहि लिखिकऽ गद्य मे लिखल गेल अछि । काव्यात्मक दृष्टियें एतय सर्वप्रथम किछु महाकाव्य प्राप्त अछि जे कोनो भाषाक महाकाव्यक समकक्षता कऽ सकैछ । मैथिली महाकाव्यक तीन श्रेणी अछि - प्रथम, संस्कृत महाकाव्य सभ सँ अनूदित, जेना अच्युतानन्द कृत 'महाभारत' आ 'रघुवंश' । द्वितीय, संस्कृत महाकाव्य सभक रूढ़िक अनुसार स्वतंत्र रूप सँ रचित महाकाव्य, जेना बद्रीनाथ झा कृत 'एकावली परिणय', रघुनन्दन दास कृत 'सुभद्राहरण' तथा तारानाथ झा कृत 'कीचकवध' । गौरीशंकर झा कृत 'माइकेल मधुसूदन दत्तक 'मेघनाद'क छायानुवाद सेहो एही कोटिक महाकाव्य मे गनल जा सकैछ । तृतीय श्रेणीक प्रतिनिधि मनबोध कृत 'कृष्ण जन्म (हरिवंश पुराण) आ चन्दा झा कृत 'मिथिला रामायण' अछि । एहि दुनू रचना मे यद्यपि, महाकाव्यक-लक्षण सभकेँ कठोरता सँ पालन नहि कयल गेल अछि, तथापि एहि मे महाकाव्यक प्रमुख विशेषता सभ निहित अछि । दुनू सर्ग बद्ध अछि, स्तुति सँ प्रारम्भ होइत अछि, कथावस्तुक प्रथम उद्घोषणाक बाद कथा प्रारम्भ होइछ, ऐतिहासिक वा पौराणिक प्रसिद्ध महापुरुष आ हुनक जीवन चरित एकर कथाक आधार अछि तथा अन्त मे समस्त जीवनक वर्णनात्मक चित्र प्रस्तुत करबा मे समर्थ अछि ।

महाकाव्यक अपेक्षा मैथिली मे खण्डकाव्य अधिक प्राप्य अछि । खण्डकाव्य सँ महाकाव्य मे विभेदक तत्व यैह अछि जे महाकाव्यमे सर्ग-निबद्धता, पैघ-पैघ वर्णन, कथा-उपकथा आ सर्ग पाओल जाइछ । मैथिली मे खण्डकाव्यक छः भेद अछि । प्रथम श्रेणी मे मेघदूत, ऋतु, भर्तृहरि-निर्देशकाव्य तथा विरहिनी ब्रजांगना सदृश खण्डकाव्यक भावानुवाद अबैछ । द्वितीय मे लालदास कृत 'गंगालहरी' आ गणेशखण्ड, गुणवन्तलाल दास कृत 'गजग्रहोद्धार', रघुनन्दन दास कृत 'वीरबाला', ऋद्धिनाथ झा कृत 'सती विभूति', अनूप मिश्र कृत 'नारद विवाह' आदि ग्रंथ अबैछ । एहि सभ ग्रंथ मे पौराणिक वा कल्पित नायक चरित्र सभक पैघ वर्णन अछि । तृतीय श्रेणी मे 'वाताह्वान काव्य' अबैछ । मैथिली मे ई संस्कृतक विशिष्ट प्रकारक

काव्य थिक । ग्रीष्मऋतु मे वायुदेव कें प्रसन्न करबाक हेतु चन्दा झा एवं भाना झा एहि प्रकारक रचना मैथिली मे कयने छथि । चारिम श्रेणी मे विरुदावली सभ अबैछ, यथा, लालदास आ ऋद्धिनाथ झाक कृति । पांचम श्रेणी मे समय-समय पर कहल जायवला विभिन्न विषयक कविता सभ अबैछ, यथा काशीकान्त मिश्र 'मधुप' कृत 'कोबर गीत' । विषय-तत्वक दृष्टियें बादक तीन श्रेणी प्रथम दूक अपेक्षा निर्बल अछि । (सम्मर) संस्कृत स्वयंवर खण्डकाव्यक एक प्रमुख श्रेणी थीक जाहि मे राम, जगन्नाथ, कृष्ण सदृश महापुरुष लोकनिक विवाहप्रसंगहिक कथन रहैछ । 19म् शती मे एहन कविता कयनिहार अनेक गौण कवि भऽ चुकल छथि ।

मैथिली लोक साहित्य मे विशेष आकर्षक एवं पैघ-पैघ रोमांटिक कथा सभ छन्दोबद्ध अछि जकरा 'गीत कथा' कहल जा सकैछ । 'बिहुला गीत', दीना-भद्री गीत, सत्थी कुमारीक गीत[14] आदि एहि शैलीक उत्तम निदर्शन थीक ।

मैथिली कविताक क्षेत्र मे गीतिकाव्य (LYRIC POETRY) क धारा बेस प्रखर रहल अछि । वस्तुतः एहि गीत सभक रचना गायनक निमित्तहि कयल गेल अछि । गीति-काव्यक एहिठाम अनेक भेद पल्लवित भेल आ ई धारा अद्यपर्यन्त मैथिली मे कोनो-ने-कोनो रूपे विद्यमान अछि । गीतिक प्राचीनतम स्वरूप 'चर्यापद' मे भेटैछ, तथापि संस्कृत कवि जयदेवक अमर कृति 'गीतगोविन्द'क भाषा अनुवादहि सँ मैथिली मे गीतिकाव्य सर्वप्रथम लब्धप्रतिष्ठित भेल अछि । मैथिली गीतक सभ प्रकारक प्रयोगकर्त्ता सर्व प्रथम विद्यापतिये भेल छथि । वस्तुतः मैथिली गीति काव्यक प्रादुर्भाव प्रारंभिक 'चर्यापद' सँ भेल, जयदेव आ उमापति ओकरा प्रौढ़ता प्रदान कयलनि आ विद्यापति ओकरा चरमोत्कर्ष पर पहुँचा गौरवान्वित कयलनि ।[15]

विद्यापतिक पदावली एतेक ने लोकप्रिय भेल जे ओहि सँ एक दीर्घ काव्य-परम्पराक सूत्रपात भेल, जे उन्नैसम शताब्दीक अन्त धरि चलैत रहल । एहि परम्पराक कवि लोकनिक संख्या अतेक बेसी अछि जे ओकर विवरण देब एतय संभव नहि । अतः एहि ठाम किछु कवि लोकनिक नामोल्लेख मात्र कयल जा रहल अछि -

विद्यापतिक समकालीन :

(1400-1527 इ.) 1. अमृतकर, वा अमियकर, 2. चन्द्रकला, 3. हरपति, 4. भानुकवि, 5. गजसिंह, 6. भिखारी मिश्र, 7. रुद्रधर, 8.

दशावधान ठाकुर, 9. विष्णुपुरी, 10. यशोधर, 11. कवि शेखर, 12. राजपंडित, 13. चतुर चतुर्भुज, 14. मधुसूदन, 15. जीवनाथ, 16. लक्ष्मीनारायण, 17. गंगाधर, 18. लखिमीनाथ, 19. श्याम सुन्दर, 20. कंस नारायण, 21. गोविन्द, 22. काशीनाथ, 23. रामनाथ, 24. श्रीधर ।

(ख) विद्यापतिक परवर्ती :

(1529-1700 इ.) (1) हरि दास, (2) महेश ठाकुर, (3) भगीरथ कवि (4) महिनाथ ठाकुर, (5) लोचन ।

(ग) उत्तर मध्य युगक कवि :

(1700-1900 ई.) - (1) कवि शेखर भंजन, (2) बुद्धिलाल, (3) रामेश्वर, (4) लाल कवि (5) रमापति उपाध्याय, (6) केशव, (7) मोदनारायण, (8) हरिनाथ, (9) माधवी, (10) श्रीपति, (11) महीपति, (12) चक्रपाणि, (13) मनबोध, (14) नन्दी पति, (15) कर्ण जयानन्द, (16) कुलपति, (17) कृष्ण कवि, (18) करण श्याम, (19) हर्षनाथ ।

विद्यापतिक समकालीन कविलोकनिमे जनिक जे रचना उपलब्ध अछि, ओहि सभ पर विद्यापतिक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ । विद्यापति कालीन किछु प्रमुख कविक प्राप्य कविताक किछु पंक्ति उद्धृत कयल जा रहल अछि जाहि सँ विद्यापतिक प्रभावक परिज्ञान स्वतः भऽ जाएत । निम्न कवि लोकनि विद्यापतिक अनुकरण करैत मुक्तक गीत शैली मे प्रेमक सुन्दर चित्रण कयने छथि । भाषाक दृष्टियें सेहो हिनकालोकनि आ विद्यापति मे विशेष साम्य परिलक्षित होइछ । किछु उदाहरण द्रष्टव्य अछि -

(1) अमृतकर -

सुरति समापि सुतल वर नागर पानि पयोधर थापी ।
कनक सम्भु जनु पूजि पुजारी धएल सरोरूहे झापी ।
सखि हे, मालति केलि विलासे ।
मालति रमिञ तिरात्रि अगोरलि पुनु रति रङ्गक आसे ।।
मदन मोराए धएलन्हि मुखमण्डल कमले मिलल जनि चन्दा ।
भमर चकोर दुअओ अलसाएल पीवि अमिञ मकरन्दा ।।
भनए अमिञकर सुनु मधुरापति राधा चरित अपारे ।
राजा शिवसिंह रूपनारायण लखिमादेइ कण्ठहारे ।।[16]

महाकवि विद्यापति अमृतकरक प्रशंसा निम्न रूपें कयलन्हि अछि -

नीति निपुण गुणनाह अंक मे आगर,
कोष काव्य व्याकरण अधिक अधिकारक सागर ।

सब कर कर सम्मान सबहुँ सो नेह बढ़ाबिअ,
विप्र दीन अति दुखी सबहुँ का विपति छोड़ाबिअ ।
कायस्थ मांह सुरसिद्ध भउ चन्द्र तुलाइब शशिधर,
कवि कण्ठहार' कल उच्चरइ अमिअ बरस्संइ अभिअकर।[17]

(2) चन्द्रकला –

लोचन अपन रागतरंगिणी मे विद्यापतिक पुत्रवधू चन्द्रकलाक एक कविता उद्धृत कयने छथि जे 'प्राकृत' राग मे निबद्ध अछि । एकर किछु पंक्ति उद्धृत अछि –

श्यामा सवन्दिते अति समय गीत सुशोभिते ।
आत्मदान समान सुन्दरि धार वर्षति सिंचये ।।
सिंचह सुन्दरि मम हृदयम्, अधर सुधा मधुपानमियम् ।
चन्द्रकवि जयदेव मुद्रित मातेज तोहें राधिके ।।
वचन मम धर कृष्ण अनुस किन्नु काम कला शुभे ।
चन्द्र कलाहे वचन करसी, मानिनी माधव अनुसरसी ।।[18]

विद्यापति-युग मे मैथिली साहित्य-रचना मे त्रिभाषाक प्रयोगक प्रचार छल । उपर्युक्त पद मे एकर स्पष्ट प्रमाण प्राप्त होइछ । डा. कांचीनाथ झा 'किरण', जे गत किछु वर्ष मध्य विद्यापति एवं हुनक समकालीन कविक अप्राप्य रचना सभक अनुसन्धान कयलन्हि अछि, चन्द्रकलाक अद्यावधि प्राप्त परिचयक सत्यता पर प्रश्न चिन्ह लगौलन्हि अछि । जाधरि कोनो ठोस प्रमाण प्रकाश मे नहि अबैछ, एहि सम्बन्ध मे किछु नहि कहल जा सकैछ ।

(3) मोदनारायण –

नायिकाक सौन्दर्य वर्णन –

जमुना तीर कदम तर हे, एक अचरज देखी ।
तड़ित जलद जनु अबतरु हे, एक रूप विसेखी ।
× × × × × ×
अनुपम लोचन खंजन हे, बाकहु हरि हेरी ।
बदन बसन अभिनत के हे, मुसुकलि एक बेरी ।
काम-कला गुन आगरि हे, बैसल मुख फेरी ।
रंक समान फिरथि हरि हे, जनि रतनक ढेरी ।
थिर नहि रहत मुगुध मन हे, जीवन जग साले ।
आलिंगन रस परसल हे, पुलकित बनमाले ।[19]

(4) दसावधान –

विद्यापतिक समकालीन छला । हिनक कविता सभ लोचन कृत 'रागतरंगिणी' मे संग्रहीत अछि । एक उदाहरण –

उपरे पयोधर नखरेख सुन्दर मृगमद उड़े लेपला ।
जनि सुमेरु शशि खण्ड उदित भेल जलधर जाले झांपला ।
अभिरानि हे कपट करह का लागी ।
कोन पुरुष गुने लुबुध तोहर मन रयनि गमओलह जागी ।
कारने कओन अध भेल धूसर, तनु कोने आरत देल ।
दूधक परेस पवार धवल भेल, अरुण मजिठ भय गेल ।
नवि पनारि गर्जे गंजि नड़ाउलि परसलि सूर किरने ।
अैसन देखिअ कपट करह जनु वेकत नुकाओब कओने ।
दस अवधान मन पुरुष पेम गनि प्रथम समागम भेला ।
आलमसाह प्रभु भाविनि भजिरहु कमलिनि भमर भुलला।[20]

(5) गोविन्द दास –

विद्यापतिक पश्चात मैथिली साहित्य मे भाषा, भाव आ नवीनताक दृष्टियेँ गोविन्ददासेक स्थान अबैछ । मैथिली साहित्य मे गोविन्ददासक समय धरि विद्यापतिक स्पष्ट प्रभाव देखना जाइछ । गोविन्ददास विद्यापति केँ अपन गुरु मानैत छलाह –

विद्यापति पद युगल सरोरूह निस्यन्दित मकरन्दे ।
तसु मझु मानस मातल मधुकर पिवइते करु अनुवंधे ।।

गोविन्द दास एक एहन कुशल शिल्पी छलाह जनिक काव्य-कसीदा आ भाषाक बेल-बूटाक सजावटिक समता प्रायः अन्य कविक काव्य मे नहि प्राप्त होइछ ।[21] एक उदाहरण द्रष्टव्य अछि –

आंचर मुख शशि गोय । बेर-बेर लोचन रोय ।।
कारण बिनु क्षण हास । उतपत दीह निशास ।।
सुनु-सुनु सुन्दर श्याम । प्रेमक इहि परिनाम ।।[22]

उपरि उद्धृत पद सभ पर विद्यापतिक प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होइछ । विद्यापतिक परवर्ती कवि सभमे हरिदास, भगीरथ कवि, लोचनकवि, गोविन्ददास, भूपतीन्द्र उल्लेखनीय छथि । एहि मे लोचन तथा गोविन्ददासक प्रतिभा पर आँगुर नहि उठाओल जा सकैछ । लोचनक 'रागतरंगिणी' एक अद्भुत तथा ऐतिहासिक महत्वक पोथी अछि । 'रागतरंगिणी' मे विभिन्न

राग-रागिनीक लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत कयल गेल अछि । विद्यापतिक चर्च करैत लोचन लिखलन्हि अछि -

सुमति सुतोदय जन्मा जयतः शिवसिंह देवेन ।
पण्डितवर कविशेखर विद्यापतये तु संन्यस्तः ।।

× × × × × ×

तद्गानार्थन्तु विद्यापति कवि कृतिना कल्पितास्तुन्ध्रवायाः ।
तासामेकोग्रगाता भवदिह जयतः संसदि श्री नृपस्य ।।[23]

एहि सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे विद्यापति मात्र गीति पदक रचना कय काव्य-परम्पराक प्रवर्तन नहि कयलनि, प्रत्युत ओकरा संगहि ओ संगीत कला मे सेहो नूतन परम्पराक सूत्रपात कयलनि । हुनक प्रेरणा तथा प्रोत्साहन सँ गवैया सभक सेहो एक परम्परा स्थापित भेल जाहि मे जयत नामक कथक कें ओ संगीत एवं नृत्य-कला मे पूर्ण निष्णात बनौलन्हि । 'रागतरंगिणी' मे विभिन्न राग-रागिनीक उदाहरण स्वरूप विद्यापतिक 46 पद प्रस्तुत कयल गेल अछि जाहि सँ ई भासित होइछ जे मैथिलीक कवि-परम्परा एवं गीति-कला मर्मज्ञता पर हुनक सशक्त प्रभाव छल । 'राग तरंगिणी' मे संकलित अन्य मैथिल कविक पद सभ विद्यापतिक पद-परम्परा मे अबैछ । भाव, भाषा, शिल्प-सभ पर विद्यापतिक प्रभाव प्रत्यक्ष अछि ।

मिथिला मे पद-साहित्यक अतिरिक्त दोसर साहित्यिक विधा आधुनिक युगक पूर्व शती मे प्रचलित रहल, ओ थीक कीर्त्तनिञा नाटक । एहू परम्पराक आदि मे विद्यापतिये अबैछ । हुनक 'गोरक्षविजय' किरतनिया नाटकक परम्परा मे प्रथम रचना थीक जे लोकप्रियता कें अर्जित कयलक। कवि शेखराचार्य ज्योतिरीश्वरक 'धूर्तसमागम' तथा विद्यापतिक 'गोरक्षविजय' लोकप्रिय किरतनिया नाटकक प्रेरणा-स्रोत थीक । विद्यापतिक कृतिक सब सँ गंहीर आ स्थायी प्रभाव लोकजीवन एवं लोकमानस पर पड़ल । एहि दृष्टिसँ मिथिला मे विद्यापतिक ओएह स्थान अछि जे हिन्दी मे तुलसीदासक । विद्यापतिक गीत एहि ठामक लोक-जीवन मे एहि प्रकारें घुलि-मिल गेल अछि जे हुनक अनेक पद लोक-गीतक रूप मे पावनि-तिहार, झूला, व्याह, मुंडन-चूड़ाकर्ण आदिक अवसर पर गाओल जाइछ । कोनो गामक मन्दिर, देवस्थान मे गामक वृद्ध वा पुजेगरीक मुँह सँ 'कखन हरब दुःख मोर हे भोलानाथ'क स्वर सुनल जा सकैछ । विवाहक अवसर पर जे उचिती, महेशवाणी गाओल जाइछ, ताहू मे विद्यापतिक भणिता जोड़ल रहैछ । बाट चलैत जे वटगमनी गाओल जाइछ, ताहू

मे विद्यापतिक कतेको गीत रहैछ । 'उठ-उठ सुन्दरि हम जाइछी विदेस' पदक स्वर-लहरी ग्राम-कन्याक सुमधुर कण्ठ सँ कतहु सुनल जा सकैछ । एवं विधि मिथिलाक जन जीवनक संग विद्यापतिक पद तेना भऽ कय ने घुलि-मिल गेल अछि जे विद्यापति जन-मानसक अभिन्न उपादान भऽ गेल छथि ।

मिथिलाक लोक-जीवन पर विद्यापतिक एतेक ने व्यापक प्रभाव पड़ल अछि जे हुनक अनेक उक्ति लोकोक्तिक रूप धारण कऽ लेने अछि। किछु बहु प्रचलित उदाहरण द्रष्टव्य अछि :-

(1) केओ सुखे सुतए केओ दुखे जाग ।
अपन-अपन थिक भिन-भिन भाग ।
(2) बड़ेओ भुखल नहि दुहु कर खाय ।
(3) हाथक काकन आरसी काज ।
(4) आनक वेदन नई बुझ आन ।
(5) परके वेदन पर बांटि न लेइ ।
(6) अवसर बहला रह पचताय ।
(7) धनिकक आदर सब तँह होय ।
(8) अछय परम सुख मूढ़ गमार ।
(9) बानर मुँह की सोभए पान ।
(10) आगे गुनि जे काज न करए पाछे हो पचताओ ।

वस्तुतः मिथिलाक सामाजिक जीवन विद्यापति एवं हुनक सुविद्वान पूर्वज लोकनिक रचना, उक्ति तथा दिशा-संकेत द्वारा पूर्व चारि-पाँच शताब्दी सँ आमूलतः प्रभावित-निर्मित होइत रहल अछि ।[24] मैथिली मे ओ एक परम्परा बनि गेल छथि ।[25]

बंगला एवं ब्रजबुलि :

मिथिलाक बाहर सभ सँ अधिक प्रभाव विद्यापतिक बंगला भाषी समाज पर पड़ल अछि । बंगला साहित्यक सभ इतिहासकार एहि बात पर एकमत छथि जे विद्यापति आ चण्डीदास वैष्णव साहित्यक आदि गुरु छथि ।[26] बंगाल मे लगभग 150 पदकर्ता भेलाह आ 3000 क लगभग पद लिखल गेल ।[27] पद बंगला मे लिखल हो वा ब्रजबुली मे, सर्वत्र विद्यापति आ चण्डीदासक प्रभाव एक समान परिलक्षित होइछ । मिथिला मे विद्यापतिक पद सभ लौकिक प्रेम-गीतहिक रूप मे लोकप्रिय भेल, जखन कि बंगीय जनमानस ओकरा श्रृंगार-भजनक रूपमे ग्रहण कयलक । विद्यापति बंगाल,

उड़ीसा आ आसाम प्रान्त मे एकटा पैघ वैष्णवक रूप मे विख्यात भेलाह । ओएह पूर्वी भारतक सर्व प्रथम कवि छलाह जे भाषा कें साहित्यिक माध्यम धरि उठौलन्हि । हुनक कविता ओहि भूमि मे रचल गेल जे सर्वदा संस्कृत विद्या आ हिन्दू संस्कृतिक उन्नायिका छलि, जतए देश कें विभिन्न भाग सँ लोक पाण्डित्य आ योग्यता सम्पादन करबाक हेतु अबैत छलाह । विशेषत: पुराण द्वारा प्रतिष्ठित आ संस्कृत कवि जयदेव द्वारा विकसित कृष्ण-राधा-आराधनाक लोक-प्रिय-तहु मे विद्यापतिक गीत उत्प्रेरक बनि गेल । एकरा संगहि परम्परित लोकगीतक माधुर्य आ मसृणता विद्यापतिक असाधारण शैली कें समीपस्थ अन्य प्रान्त सभ मे सेहो लोकप्रिय बना देलक ।[28]

विद्यापतिक गीतक महत्व तखन आर अधिक बढ़ि गेल जखन चण्डीदास आ विद्यापतिक नाम संयुक्त रूपें लेबय जाय लागल ।[29] विद्यापति आ चण्डीदासक भेंट-वार्त्ता कें लए कए विद्वान मे बहुत दिन धरि मत-वैभिन्य रहल, मुदा ओकर समाधान रमेशचन्द्र दत्त द्वारा कएल गेल । ओ लिखलन्हि जे एहि बातक संभावना नहि केर बरोबरि अछि जे ई दुहु कवि कहियो परस्पर मिलल छलाह, चण्डीदासक कविता बादक अछि आ विद्यापति सँ प्रेरित अछि, विशेष कए कृष्ण-कीर्तन-प्रसंग मे ।[30]

सभ सँ महत्वपूर्ण बात ई भेल जे विद्यापतिक गीत बंगालक प्रसिद्ध वैष्णव सुधारक चैतन्य महाप्रभुक लेल एतेक प्रिय बनि गेल जे हुनका द्वारा गाओल गेल विद्यापतिक गीतक बंगला-गृहस्थ लोकनिक घर मे ओएह स्थान भए गेल जे स्थान बाइबिलक अंग्रेज लोकनिक घर मे छल । महाप्रभु चैतन्यदेव चण्डीदास, विद्यापति आ राय रमानन्दक पद सुनि कए अघाइत नहि छलाह । हुनका लोकनिक पद सभ कें सुनि-गाबि ओ आनन्द विभोर भए जाइत छलाह तथा नृत्य करए लगैत छलाह । विद्यापतिक किछु पद तँ हुनका अत्यंत प्रिय छलैन्ह ।[31]

ब्रजबुलिक जन्महि बंगाल मे विद्यापतिक गंभीर एवं व्यापक प्रभावक द्योतक थिक । एहि भाषा कें मैथिली आ बंगलाक संयुक्त संतति कहल जा सकैछ । एहि भाषा मे विद्यापति, गोविन्द दास आदिक पदक अनुकरण पर हजारहो पद लिखल गेल अछि । ब्रजबुलि कवि लोकनि मे गोविन्ददास आ विद्यापतिक अन्ध-अनुकरण उपलब्ध अछि ।[32] ओकर भाव-भंगिमा, छंद, अलंकार सभ मे एहि दुहु कविक पद सभक स्पष्ट छाप अछि । एहि प्रकारक कविता सभ क्षणदागीत चिन्तामणि (1700 इ.), पदामृत समुद्र

(1725 इ.), पद कल्पतरु (1750 इ.), संकीर्तनामृत (1771 इ.), पदरससार (1925 इ.) पदरत्नाकर (1653 इ.), अभिलेख पद कल्पलतिका (1839 इ.), गंगापद तरंगिणी (1903 इ.), अप्रकाशित पदरत्नावली (पदकल्पतरुक पूरक पोथी) बंग साहित्य परिषद पत्रिका तथा 'रसकल्पवल्ली', 'रसमंजरी', भक्तिरत्नाकर' आ 'नायिका रत्नमाला' सदृश वैष्णव कविता-ग्रंथ सभमे उपलब्ध अछि ।

ज्ञानदास, गोविन्ददास, बलरामदास, नरोत्तमदास आदि ब्रजबुलिक लगभग 300 कविलोकनिक परिचय डा. सुकुमार सेन अपन ग्रंथ मे देने छथि ।[33] गोविन्द दास एहि मे प्रमुख छथि । गोविन्द दासहुकें विद्यापति जकाँ बंगला साहित्यक इतिहासकार बंगालिये मानैत छलाह । बंगालक अन्य पदकर्ता जनिकालोकनि पर विद्यापतिक प्रभाव अछि, ओ थिकाह यदुनन्दन, जगदानन्द, राधाबल्लभ, हरिबल्लभ, साम गोपाल, सय्यद मुर्त्तजा, आलावल आदि । हिनका लोकनिक पद मे अपन विशेषता तँ छन्हिए, परंच सामान्यत: हिनका लोकनिक पद सभ मे पूर्ववर्ती पदकर्ता लोकनिक भाव आ संगीतहिक पुनरावृति पाओल जाइछ ।

विद्यापतिक सफल अनुकरण कयनिहार सभमे गोविन्द दास (मैथिल) अग्रगण्य छथि । श्री बल्लभदास हुनका द्वितीय विद्यापतिक अभिधा सँ अलंकृत कयने छथि –

'ब्रजेर मधुर लीला जा शुनि दरबे शिला
गाइलेन कवि विद्यापति ।
ताहा हेते नहे न्यून गोविन्द दासेर गुण
गोविन्द द्वितीय विद्यापति ।।[34]

गोविन्द दासक काव्य-प्रतिभाक उन्मेष विद्यापतिएक प्रभाव सँ भेल। एहि प्रभाव कें ओ कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार कयने छथि –

विद्यापति पद जुगल सरोरुह निस्यन्दित-मकरन्दे ।
तसु मधु मानस मातल मधुकर पिबइते करु अनुबन्धे ।।[35]

'प्रेमक अंकुर जात अत भेल – न भेल जुगल पलाश' प्रभृति विद्यापतिक अनेक पद सभकें गोविन्ददास पूर्ण कयने छलाह –

सम्पूर्ण पद बहु राखि विद्यापति पहुं परलोके करिला गमन ।
गुरुर आदेश क्रमे श्री गोविन्द क्रमे-क्रमे से सकल करिल पूरन ।।[36]

विद्यापतिक राधा सदृश गोविन्द दासक राधाक रूपदीप्ति शरीर सँ

प्रस्फुटित भऽ एक देहातीत सौन्दर्य मे पर्यवसित होइछ । राधाक लावण्य वर्णन मे गोविन्ददास विद्यापतिक अनुसरण कयने छथि –

विद्यापति – जहां-जहां पग-जुग धरई । ताहिं-तहिं सरोरूह भरई ॥
जहां-जहां झलकत अंग । तहिं-तहिं बिजुरी तरंग ॥ [37]

गोविन्ददास- जाहां-जाहां विकसये तनु-तनु जोति।
ताहां-ताहा बिजुरी चमकय होति ॥
जाहां-जाहां अरुण-चरण चल चलइ ।
ताहां-ताहां थल-कमल-दल खलइ ॥ [38]

सुप्रसिद्ध वैष्णव कवि ज्ञानदासक पदावली मे सेहो विद्यापतिक प्रभाव अन्तर्व्याप्त अछि । छन्द, उपमा, वर्णन-भंगी प्रभृति मे ज्ञानदास प्रारम्भ मे विद्यापतियेक अवलम्बन कयने छलाह । प्रथम यौवन-आविर्भाव मे देह-द्वन्द्वक संग मानस-द्वन्द्वक चित्रण मे ज्ञानदास विद्यापतिक अनुगमन कयने छथि। विद्यापतिक अनुसरण मे ओ नवोढ़ा-मिलनक वर्णन मे विह्वल यौवनक वासना उच्छ्वास कें सन्निविष्ट कयने छथि –

विद्यापति –
बदर सरिस कुच परसब लहु । कत सुख पाओब करित
उहु-उहु ॥ [39]

ज्ञान दास –
उरज उठल जनु बदरि । करे जनि कांपह सगरि ॥ [40]

आधुनिक युग मे महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर विद्यापति सँ अनुप्राणित भेल छथि । अदम्य जिज्ञासा सँ प्रेरित भऽ किशोरावस्था मे ओ विद्यापतिक पदावलीक मर्म मे प्रवेश करबाक चेष्टा कयने छलाह –

"विद्यापतिर दुर्बोध विकृत मैथिली पदगुलि अस्पष्ट बलियाइ वेशिकरिया आभार मनोजोग टानित । आमि टीका उपर निर्भर ना करिया निजे बुझिबार चेष्टा करिताम । विशेष कोनो दुरूह शब्द जे खाने जनबार व्यवहृत इहपाछे समस्त आमि एकटि छोटो बांधनो खाताय नोट करिया राखिताम, व्याकर पैर विशेषतत्व गुलियो आमार बुद्धि अनुसारे जथासाध्य टुकिया राखिया छिलाम ।" [41]

रवीन्द्रनाथ विद्यापति-काव्यक गम्भीर अध्येता छलाह । 'चण्डीदास ओ विद्यापति', शीर्षक निबन्ध मे दुनू महाकविक तुलनात्मक अध्ययनक ओ गहन अन्तर्दृष्टिक प्रमाण देने छथि ।[42] साधना मे प्रकाशित हुनक निबन्ध 'विद्यापतिर राधा' सेहो एहि क्रम मे उल्लेखनीय अछि ।[43] रवीन्द्रनाथ 'विद्यापतिर पदावली'क सम्पादन कऽ रहल छथि, एहि अभिप्रायक विज्ञापन

'सावित्री' मे प्रकाशित भेल छल ।[44] परंच हुनका द्वारा सम्पादित उक्त विज्ञापित कृति अद्यावधि प्रकाशित नहि भेल अछि ।

विद्यापतिक मधुर पदावली मे रवीन्द्रनाथ कें विशेष अनुरक्ति छलन्हि । नव-नव वर्षाक समागम पर हुनका हृदय मे विद्यापतिक गीत प्रतिध्वनित भेल छल – 'ए भरा बादर, माह भादर शून्य मंदिर मोर' – विद्यापतिक उक्त पद रवीन्द्रनाथ कें विशेष प्रिय छलन्हि । एहि सम्बन्ध मे ओ लिखने छथि –

"नूतन वर्षा नेमेछे । मेघेर छाया भेसे चलेछे सोतेर उपर ढेउ खेलिए मेघेर छाया कालो हये घनिए रयेछे ओ पारे बनेर माधाय । अनेक बार एउ दिने निजे गान तेरि करेछि से दिन ता होलो ना । विद्यापतिर पदटि जेगे उठल आमार मने 'ए भरा बादर, माह भादर शून्य मंदिर मोर' निजेर छाप ढ़लाई करे रागिनीर छाप मेरे ताके निजे करे निलुम ।" [45]

रवीन्द्र-प्रणीत 'भानुसिंहेर पदावली' मे सेहो विद्यापतिक भाव-माधुर्य एवं शिल्प-सौन्दर्यक व्यापक प्रभाव अन्तर्लीन अछि ।[46]

महाकवि चैतन्य द्वारा समादृत जयदेव, विद्यापति आ चण्डीदास वंगीय साहित्य कें अभिनव प्रेरणा प्रदान कयलन्हि ।[47] वंगीय वैष्णव साहित्य मे चण्डीदासक बाद द्वितीय स्थान विद्यापतिए कें प्राप्त भेलन्हि । गौरांग महाप्रभु द्वारा समादृत भए विद्यापतिक पद एकटा नूतन मूल्यबोध मे भास्वर भेल । हुनका गौड़ीय वैष्णव लोकनि मे असाधारण लोकप्रियता प्राप्त भेलन्हि । विद्यापतिक पदावलीए मे वंगीय वैष्णव ऐतिह्यक उन्मेष भेल । एवं क्रमे भू-लोक एवं भाषाक सीमाक अतिक्रमण कए विद्यापति बंगालक प्रेम-प्रवण हृदय मे स्थायी भाव सँ प्रतिष्ठित भए गेलाह । प्रेमक बल-प्रयोग सँ बंगाल विद्यापतिकें अपना लेलक ।[48]

असम, उत्कल आ वंगक भक्ति काव्य मे विद्यापति नूतन प्रेरणा एवं प्राणशक्तिक संचार कयल । परवर्ती वंग साहित्य पर हुनक गीति माधुर्यक प्रभाव विशेष रूप सँ परिलक्षित होइछ । श्रीवसन्त राय विद्वद्वल्लभ द्वारा आविष्कृत चण्डीदासक 'श्रीकृष्ण-कीर्तन' पर विद्यापतिक प्रभाव अन्तर्व्याप्त अछि । राधाक शारीरिक सौन्दर्यक वर्णन मे 'श्रीकृष्ण कीर्तन'क अनेक पंक्ति विद्यापतिक पंक्ति सँ अनुप्रेरित अछि । एहि ठाम एक-दू उदाहरण प्रस्तुत अछि–

(1) चण्डीदास –
कनक कुम्भ आकारे दुई तोर पयोधरे
ताहात उपर जगमुकुतार हारे ।

जैन्ह शोभ करे सुमेरु गंगार धारे ।[49]

विद्यापति -

पीन पयोधर अपरूब सुन्दर ऊपर मोतिम हार ।
जनि कनकाचल ऊपर विमल दुइ सुरसरि धार ।।[50]

संयोग-श्रृंगारजन्य साम्य -

(2) चण्डीदास -

रतिकथा सखि मुखे ना शुनीलो काने ।[51]

विद्यापति -

कभु नहि सुनिए सुरतक बात ।[52]

विप्रलंभ श्रृंगार जन्य साम्य -

(3) चण्डीदास -

चांद सुरूजेर भेद ना जानो चन्दन शरीर ताय ।[53]

विद्यापति -

चांद सुरुज बिसेख न जानए चान्द ने मानए माती ।[54]

एवं क्रमे विद्यापति यथार्थतः वैष्णव कविलोकनिक काव्य गुरु छथि। ओ बंगलाक कवि सभकेँ अपन रचनाक लेल भाषा, भाव तथा शैली सेहो प्रदान कयलन्हि । विद्यापतिक छन्द, भाषा एवं शैलीक अनुकरण एहि शताब्दी मे मात्र रवीन्द्रनाथहि नहि, प्रत्युत वंकिमचन्द्र, राजकृष्णराय, सुरेशचन्द्र, घटक एवं कालिदास राय सेहो विद्यापतिक एहि विषय सभ मे पदानुसरण कयने छथि। मैथिल विद्यापति वंगीय वैष्णव साहित्यक प्रणयन मे सौन्दर्यानुभूतिक एक नव प्रतिमानक सृष्टि कयलनि । परिणामतः हुनक भाव एवं संगीतक मधुर झंकार चैतन्योत्तर वंगीय वैष्णव काव्य मे दीर्घ काल धरि प्रतिध्वनित होइत रहल । वस्तुतः विद्यापति हिन्दी आ बंगलाक महत्वपूर्ण मिलन-बिन्दु छथि - 'तिरहुत, जकरा कविशेखरक जन्मभूमि होयबाक सौभाग्य प्राप्त छैक, हिन्दी आ बंगलाक संगम सँ तीर्थ-राज प्रयाग भऽ रहल अछि ।'[55]

नेपाली :

नेपाल पर विद्यापतिक विशेष प्रभाव पड़ल । मिथिलाक विद्वान लोकनि बरोबरि नेपालक राजदरबार मे आश्रयक लेल जाइत रहैत छलाह आ मैथिली नेपालक स्वीकृत भाषा सभमे सँ एक छल । विद्यापति-संगीतक ओतय विशेष प्रचार छल । अनेक मल्ल राजा लोकनि विद्यापतिक काव्य-रचनाक आदर्श केँ नेपालमे अपनौलन्हि । यद्यपि आधुनिक कतिपय नेपाली विद्वान

(यथा, डी.आर. रेग्मी) एहि बात सँ असहमत छथि जे नेपाल पर कर्णाट वंशीय राजाक आधिपत्य छल, मुदा मल्ल पाण्डुलिपि एवं अन्य प्राप्त पाण्डुलिपि सभ सँ ई सिद्ध होइछ जे नेपालक संग कर्णाटक राजनीतिकक सूत्रबद्धता छल ।[56] 'रामायणनाटकम्'क एक पाण्डुलिपि मे 'नेपाल कायल राज्य हरिसिंहदेवा', सदृश वाक्य प्राप्त होइछ । प्रो. प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन' नेपाल तराई मोरंग क्षेत्र सँ विद्यापतिक कतिपय गीत केँ खोजिकय ओकर प्रकाशन सेहो कयलन्हि अछि । लोक साहित्यक क्षेत्र मे डा. ब्रजकिशोर वर्मा द्वारा एहि प्रकारक अनेक अनुसन्धानपूर्ण कार्य कयल गेल अछि । विद्यापति नेपालक लेखक एवं कवि लोकनिकेँ नीक जकाँ प्रभावित कयने छलाह । मैथिली साहित्य केँ नेपाल मे राजकीय सम्मान प्राप्त छलैक आ नेपालक विभिन्न पुस्तकालय मे आइयो मैथिली गीतक अनेक पाण्डुलिपि प्राप्त अछि, यथा - कंसनारायण पदावली, विद्यापति गीतम्, गीतपंचासिका, भाषागीत संग्रह आदि । एकर अतिरिक्त नेपाल तराइक ओ भू-भाग जे मिथिलाक सीमावर्ती अछि, प्राचीन काल सँ अद्यपर्यन्त मिथिलाक सभ्यता-संस्कृतिक अन्तर्गत अबैछ । एहि क्षेत्र सभक भाषा सेहो मैथिली सँ मिलैत-जुलैत अछि । मोरंग, सप्तरी, महोत्तरी आदि नेपालक प्रादेशिक क्षेत्रक सभ्यता-संस्कृति मिथिलाक सभ्यता-संस्कृति सँ अभिन्न अछि। नेपालक राजधानी काठमांडू अनेक सदीधरि मिथिलाक सभ्यता-संस्कृति सँ प्रभावित रहल । नेपाल मे किरतनिया नाटकक बेस प्रचलन छल । तरौनी तालपत्र केँ छोड़ि, विद्यापतिक सभ सँ अधिक पद (262) नेपाल दरबारक आकर पोथीये सँ उपलब्ध अछि । एकर अतिरिक्त साहित्येतिहासक सर्वेक्षण सँ ई प्रमाणित भऽ चुकल अछि जे मैथिली संगीत ओ नाट्य साहित्यक जतेक उत्कर्ष भक्तपुरक राजा जगज्जोतिर्मल्ल, कान्तिपुरक कवीन्द्र प्रतापमल्ल एवं ललितपुर पाटनक कवि सिद्धिनरसिंहमल्लक राजत्वकाल मे देखल जाइछ, ओतेक अन्यान्य समय मे नहि ।[57] बालकृष्ण पोखरेलक शब्द मे मैथिली साहित्यक विकासक सन्दर्भ मे प्राचीन कालमे जे योगदान सिमरौनगढ़ देलक एवं आधुनिक काल मे दरभंगा दऽ रहल अछि, ओएह योगदान मध्यकाल मे काठमाण्डू उपत्यका सेहो देने छल ।[58] एहि तथ्य सभ सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे नेपाल मे विद्यापतिक गीतिकाव्य एवं संगीतक विशेष प्रभाव छल ।

असमिया :

असमिया साहित्य पर विद्यापतिक प्रभाव ब्रजबुली गीतक माध्यम सँ पड़ल एवं आसामक शंकर देव विद्यापति सँ अत्यधिक प्रभावित एवं प्रेरित

भेलाह । ध्यान देबाक अछि जे आसामक ब्रजबुली, बंगालक ब्रजबुली सँ भिन्न अछि तथा आसामक ब्रजबुलीक गीत दू भाग मे विभक्त अछि - बड़ गीत तथा अंकिया गीत । विद्यापतिक गीतहि जकाँ एहू गीत सभमे राग, ध्रुपद, भणिता आदि पाओल जाइछ तथा एहि गीतसभ पर मैथिलीक पैघ प्रभाव पड़ल अछि ।[59]

उड़िसा :

उड़ीसा आ मिथिलाक बीच प्राचीन कालहि सँ घनिष्ठ सम्बन्ध रहल अछि । उड़ीसा मे मैथिली भाषाक प्रभाव बंगालक माध्यम सँ आयल । उड़ीसाक रामानन्द राय ब्रजबुली मे रचना कयलन्हि ।[60] कहल जाइछ जे हुनक भेट चैतन्यदेव सँ भेल छलन्हि । उड़िया-ब्रजबुली मे मैथिली, ब्रजभाषा, बंगाली तथा उड़ियाक सम्मिश्रण अछि । रामानन्द रायक किछु कविता सुकुमार सेनक पुस्तक मे संकलित अछि । हालहि मे प्रो. प्रियरंजन सेन द्वारा 'राय रामानन्द भणितायुक्त पदावली' नामक संकलन सेहो प्रकाशित कयल गेल अछि ।[61]

भोजपुरी :

दुर्गाशंकर सिन्हा द्वारा प्रकाशित 'भोजपुरी लोक गीत' मे किछु एहन गीत संकलित अछि जाहि मे विद्यापतिक भणिता पाओल जाइछ -

भनहि विद्यापति रामा (सुनहु) ब्रजनारि ।
घरिजा धरे हुए राधा मिलि हे मुरारि ।।[62]

ग्रियर्सनक कहब छन्हि जे भोजपुरी क्षेत्र मे विद्यापतिक गीतक प्रचार नहि छलन्हि । भऽ सकैछ ग्रियर्सन महोदय एहि क्षेत्र मे विद्यापतिक गीत संकलित नहि कऽ सकल होथि, मुदा भोजपुरी लेखक स्वयं ई स्वीकार करैछ जे भोजपुरी पर विद्यापतिक प्रभाव अत्यधिक छल । विद्यापतिक प्रसिद्ध गीतक पंक्ति 'पियामोर बालक हम तरुणी' शारदा सिन्हाक 'भोजपुरी लोक गीत' मे सेहो संकलित अछि । हुनक कथन छनि जे विद्यापति भोजपुरी मे अत्यन्त लोकप्रिय छथि आ हुनक गणना सूर, तुलसी तथा कबीरो सँ श्रेष्ठ कविक रूपमे कयल जाइछ । भोजपुरी मे प्राप्त विद्यापतिक गीत सभ 'विद्यापतिराग'क नाम सँ अभिहित कयल जाइछ । श्रीमती सिन्हा द्वारा पैघ संख्या मे विद्यापतिक गीत संकलित कयल गेल अछि । (पृष्ठ-260, 325, 330, 331, 332, पृ. 44-45) । बारहमासा नामक गीत प्रायः मैथिली गीत अछि। हुनका विश्वास छन्हि जे विद्यापति एहि क्षेत्रक भ्रमण अवश्य कयने होयताह । सिन्हा तथा आर.

एन. त्रिपाठीक संकलनक अध्ययन सँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे विद्यापति भोजपुर क्षेत्र मे सेहो नाम आ यश अर्जित कयने छलाह । 'विद्यापतिराग' एहि बातक अकाट्य प्रमाण अछि जे ओ भोजपुरक लोक मे पूर्ण परिचित छलाह ।

निष्कर्ष :

(1) उत्तर वैदिक युग मे आर्यावर्त्त मध्य सांस्कृतिक आन्दोलनक जे सूत्रपात भेल छल, तकर नेतृत्व विदेहक राजधानी मिथिलेक हाथ मे छल । मिथिलाक जनप्रियता एतेक बढ़ल जे सम्पूर्ण जनपद एही नाम सँ अभिहित कयल जाय लागल ।

(2) मिथिला मे न्याय-दर्शनक प्रणेता गौतम अक्षपाद, शुक्ल यजुर्वेद संहिताक संकलन-कर्ता तथा शतपथ ब्राह्मणक रचयिता सुप्रसिद्ध स्मृतिकार याज्ञवल्क्य, सांख्य दर्शनक प्रणेता कपिल मुनि, वैशेषिक दर्शनक प्रणेता कणाद, कामसूत्र तथा वात्स्यायन-भाष्यक रचयिता वात्स्यायनक आविर्भाव भेल छल । एवं विधि ब्रह्मज्ञानी जनक लोकनिक राजधानी मिथिला तत्ववेत्ता लोकनिक जन्म स्थान होयबाक कारणें प्राचीन कालहु मे प्रसिद्धिक शिखर पर छल ।

(3) ऋषि लोकनिक अतिरिक्त मैत्रैयी, गार्गी आदि तत्व-चिंतन मे निरत मैथिल ललना सेहो प्राचीन भारतक सांस्कृतिक इतिहास मे मिथिला केँ महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करौने छलीह ।

(4) बौद्ध नास्तिक लोकनि केँ शास्त्रार्थ मे पराजित कय वेदक महत्ता केँ स्थापित कयनिहार, शंकराचार्य सँ सफल शास्त्रार्थ कयनिहार दार्शनिक मण्डन मिश्र अपन समयक सर्वश्रेष्ठ विद्वान छलाह । हुनक 'विधिविवेक' तथा 'भावनाविवेक' मीमांसा विषयक सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ मानल जाइछ । शास्त्रार्थ मे शंकराचार्य केँ परास्त कयनिहारि भारती, मण्डन मिश्रक सहधर्मिणी छलीह ।

(5) अन्धराठाढ़ी ग्रामक षड्दर्शनाचार्य महामहोपाध्याय वाचस्पति मिश्र द्वारा रचित 'सांख्यतत्व कौमुदी', 'तत्वविन्दु वैशारदी', 'तत्व समीक्षा', 'न्याय कणिका', 'न्यायवार्तिक-तात्पर्य टीका', 'वाचस्पत्य-भाष्य-भामती' 'द्वैतनिर्णय' आदि बेस प्रसिद्ध अछि । वाचस्पति मिश्र नामक एक अन्य नैयायिक आ धर्म शास्त्री मिथिलाक प्रसिद्ध ग्राम सरिसव मे भेल छलाह जनिका द्वारा रचित ग्रंथ सभमे द्वैतचिन्तामणि, व्यवहारचिन्तामणि, शुद्धचिन्तामणि, शूद्राकार-चिन्तामणि, विवादमणि, विवाद निर्णय, शुद्ध निर्णय, तिथि निर्णय, महादान निर्णय, दत्तक विधि, प्रायश्चित चिन्तामणि, कृत्यमहार्णव, पितृ-भक्ति-तरंगिणी, गयाश्राद्ध पद्धति, गया-प्रयोग, गया-यात्रा, चन्दन-धेनु-प्रमाण,

अनुमान-खण्ड-टीका, शब्दनिर्णय खण्डनोद्धार तथा न्यायसूत्रोद्धार आदि ग्रंथ सभ सेहो मिथिलाक कोन-कोन मे प्रचलित अछि ।

(6) बौद्ध धर्मक खण्डन कयनिहार महामहोपाध्याय गंगेशोपाध्याय क 'तत्वचिन्तामणि, गोबर्द्धनाचार्यक' 'आर्यासप्तशती', उदयनाचार्यक 'कुसुमांजलि, 'किरणावली', 'आत्म-तत्व-विवेक', लक्षणावली आ तात्पर्य परिशुद्धि पूर्ण प्रसिद्ध ग्रंथ अछि ।

(7) एहिना मिथिलाक 'लिंगवृत्ति' व्याकरण ग्रंथक रचयिता वररुचि, पातंजलवेत्ता न्यासदत्त, मीमांसक जयादित्य, सांख्य शास्त्री श्रीपति, काव्यकोविद गणेश्वर, रीति ग्रंथ रचयिता भानु मिश्र, धर्म शास्त्री श्रीदत्त, वेदान्ती भवदत्त, काव्यालंकार दामोदर, व्याकरण दर्शनकार पद्मनाभ आदि सभ क्यो मैथिल ब्राह्मणक सोरदपुर वंशक छलाह ।

(8) आठम नवम् शताब्दीक अभ्यन्तर मिथिलाक संस्कृत कवि लोकनि मे महामहोपाध्याय मुरारी मिश्रक स्थान महत्वपूर्ण अछि । हिनक रचित 'अनर्घराघव' नाटक-ग्रंथक संस्कृत साहित्य मे अधिकृत स्थान अछि। पूर्व मीमांसाक आचार्य पार्थ सारथि मिश्र अनेक सुप्रसिद्ध ग्रंथ सभक रचयिता छलाह । शालिक नाथ मिश्र हिनक समकालीन छलाह ।

(9) कर्णाट वंशक राज्यकाल मे अनेकानेक संस्कृतक प्रकाण्ड पंडित लोकनिक अवस्थितिक ज्ञान होइछ जाहि मे श्रीकर आचार्य, चण्डेश्वर, ज्योतिरीश्वर आदि प्रमुख छथि । ज्योतिरीश्वरक संस्कृत ग्रंथ मे 'पंचसायक' एवं 'रंगशेखर' आ मैथिली भाषाक आदि महान ग्रंथ एवं सम्पूर्ण उत्तरी भारतक प्राचीनतम गद्य-ग्रंथ 'वर्णरत्नाकर', आ प्रहसन 'धूर्त समागम'क नाम उल्लेखनीय अछि। एवं विधि विद्यापतिक पूर्व मिथिला मे संस्कृत साहित्यक दीर्घ एवं वैभवशाली परम्परा छल तथा मैथिली भाषा-साहित्य सेहो एकर स्वस्थ एवं स्पष्ट परम्परा रहल छल होएत जे विद्यापति-पदावली मे आबिकऽ उत्कर्ष कें प्राप्त कयलक ।

(10) मिथिला मे व्याकरण, दर्शन, आचार-संहिता एवं संस्कृत काव्य ग्रन्थक अतिरिक्त सरस संगीत एवं नृत्य कलाक सेहो सुष्ठु विकासक परम्परा छल । मिथिलाक संगीत एवं नृत्य-कलाक संकेतक सूत्र प्राप्त होइछ जे अद्यपर्यन्त अक्षुण्ण बनल अछि । स्वयं विद्यापति संगीत शास्त्र मे निष्णात छलाह तथा जयत नामक संगीतज्ञ महाराज शिवसिंहक राजदरबार मे रहैत छलाह जे विद्यापतिक गीतक राग रचैत छलाह आ विद्यापति तकर उपयुक्त ध्रुव (बोल) बना दैत छलथिन्ह ।

(11) मैथिली साहित्यक अति प्राचीन, सुदृढ एवं वैभवशाली परम्परा रहल अछि । भारतीय परम्परित कविताक प्रायः सभ विधा एहि मे उपलब्ध अछि । मैथिलीक आधुनिक साहित्य-कविता, कथा, नाटक आदि प्रायः सभ साहित्यिक विधा मे आशातीत प्रगति कयल अछि आ एकर कतिपय विधा कें भारतक कोनो उन्नतशील भाषाक साहित्यक समकक्ष राखल जा सकैछ ।

(12) विद्यापतिक पदावली एतेक ने लोकप्रिय भेल जे ओ एक दीर्घ काव्य-परम्पराक रूप धारण कऽ लेलक तथा उनैसम शताब्दीक अंतिम चरण धरि मैथिलीक कविलोकनि कें प्रभावित कयने रहल । विद्यापतिक समकालीन तथा उत्तर मध्य युगक कविलोकनिक काव्य पर विद्यापतिक स्पष्ट प्रभाव लक्षित होइछ ।

(13) विद्यापति मात्र गीति पदेक रचना कय काव्य-परम्पराक प्रवर्तन नहि कयलन्हि, प्रत्युत संगीत कला मे सेहो नूतन परम्परा स्थापित भेल, जाहि मे जयत नामक कथक कें ओ संगीत एवं नृत्य कला मे निष्णात बनौलन्हि । एकर अतिरिक्त 'गोरक्षविजय', नाटकक रचना कय ओ किरतनिया नाटकक परम्पराक सेहो सूत्रपात कयलन्हि । एवं विधि मैथिली मे विद्यापति, साहित्य सँ लऽ कय लोकजीवन धरि एक परम्परे बनि गेल छथि ।

(14) मिथिलाक बाहर विद्यापतिक सभ सँ विशेष प्रभाव बंगला भाषी समाज पर पड़ल । महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं विद्यापतिक गीतिपद सँ अत्यधिक प्रभावित भेल छलाह । रवीन्द्र प्रणीत 'भानुसिंहेर पदावली' मे सेहो विद्यापतिक भाव-माधुर्य एवं शिल्प-सौन्दर्यक व्यापक प्रभाव अन्तर्लीन अछि । विद्यापतिक छन्द, भाषा एवं शैलीक अनुकरण एहि शताब्दी मे मात्र रवीन्द्रनाथहि नहि प्रत्युत वंकिमचन्द्र, राजकृष्णराय, सुरेश चन्द्र घटक एवं कालिदास राय सेहो कयने छथि ।

(15) विद्यापतिक प्रभाव मात्र बंगला साहित्ये पर नहि, प्रत्युत ब्रजबुली, नेपाली, असामी, उड़िया, भोजपुरी आदि भाषाक साहित्य पर सेहो परिलक्षित होइछ । वस्तुतः विद्यापति एक अत्यंत ज्योतिर्मय नक्षत्र छलाह जनिक प्रभा-रश्मि सँ सम्पूर्ण भारतीय वाङमय उद्भासित एवं अनुप्राणित भेल अछि ।

संदर्भ

1. योगी-याज्ञवल्क्य ।
2. देवी भागवत ।

3. नाट्यशास्त्र-भरत ।
4. संगीतरत्नाकर - शंकरदेव ।
5. विद्यापति पदावली, प्रथम भाग (वि.रा.भा.प., पटना) भूमिका (पाद टिप्पणी) पृ.-4-5
6. वर्णरत्नाकर, सं. सुनीति कुमार चटर्जी, पृ. 44-52
7. पुरुष परीक्षा (गीतविद्य कथा) अध्याय-3
8. "The days of Oinwar rule over Methila were indeed the golden age of Mithila's history when she was centre of light and learning like the eternal kashi."
-पुरुष परीक्षा, सं. रमानाथ झा, भूमिका, पृ. 21
9. पुरुष परीक्षा
10. मैथिली संगीतांजलि (चेतना समिति, पटना सँ प्रकाशित), पृ. 43
11. हिस्ट्री ऑफ तिरहुत, डा. श्यामनारायण सिंह, पृ. 167
12. राजनीति रत्नाकर, स. काशी प्रसाद जायसवाल, पृ. 24
13. हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर, डा. जयकान्त मिश्र
14. Mithila in the age of Vidyapati; Radha Krishna Chaudhary.
15. "The tradition of lyric, set by the early Charyapadas and elaborated and perfected by Jayadeva and Umapati, reached its pinnacle of glory in Vidyapati."
-Mithila in the age of Vidyapati; Prof. Radhakrishna Chaudhary, Page - 419.
16. राग तर्रंगिणी, लोचन, पृ.-84-85, (डा. जयकान्त मिश्र, अमिअकर, अमृतकर, अमियंकर केँ एकहि व्यक्ति मानैत छथि (H.M.L.-I, P. 198), परंच ई भ्रान्तिपूर्ण बुझना जाइछ, कारण कायस्थक पंजीपोथी मे अमित्रकर तथा अमृतकर दू भिन्न नामक व्यक्तिक उल्लेख अछि जे प्रायः समसामयिक छलाह आ 'बलाइन' तथा बियरि संघ मूलक छलाह (प्रो. राधाकृष्ण चौधरीक ई विचार बहुलांश मे समीचीन प्रतीत होइछ, मुदा विनोद बिहारी वर्मा रचित मैथिल करण कायस्थक पंजीक सर्वेक्षण मे 20 गोट अमृतकरक उल्लेख अछि, तें प्रामाणिक तथ्यक अभाव मे सम्प्रति किछु निश्चयात्मक रूपें नहि कहल जा सकैछ ।)
17. मैथिली साहित्यक आदिकाल, पं. राजेश्वर झा, पृ.-114-15
18. History of Maithili Literature, Vol-I, P. 199. Dr. J.K. Mishra. - "He has in his possession another text of this poem."
19. हिस्ट्री आफ मैथिली लिटेरेचर, डा. जे. के. मिश्र, पृ. 414
20. रागतरंगिणी, लोचन, पृ. 86
21. विद्यापति काव्यालोक, नरेन्द्र नाथ दास, पृ. 156

22. हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर, जिल्द नं. 1, पृ. 239
23. रागतरंगिणी, लोचन, पृ. 37
24. "Oure life has been shaped by Vidyapati and his ancestors during all these centuries.", प्रो. रमानाथ झा, 'पुरुष परीक्षा'क भूमिका, पृ.19
25. "In Maithili he became a tradition; ' ओएह, पृ. 35
26. विद्यापति ओ चण्डीदास वैष्णव पदावली साहित्येर आदिम उत्स' - बंगला साहित्येर कथा, श्रीकुमार बन्धोपाध्याय, पृ. 9
27. बंगाली लिटेरेचर - डा. जे. सी. घोष, पृ. 56
28. History of Maithili Literature, Vol-I, P. 166-64, Dr. Jaykant Mishra.
29. विद्यापति काव्यालोक, नरेन्द्रनाथ दास, पृ. 64
30. बंगाली लिटरेचर, डा. जे.सी. घोष, पृ. 15
31. कि कहब हे सखि आनन्द ओर । चिर दिन माधव मन्दिर मोर । (बं.भा.ओ. सा. पृ.-147)
32. रीतिकाव्य और विद्यापति, डा. वीरेन्द्र कुमार बड़सूवाला, पृ. 475
33. हिस्ट्री आफ ब्रजबुलि लिटरेचर, डा. एस.के. सेन
34. श्री गौर-पद-तरंगिणी, पृ. 480
35. श्रीपद कल्पतरू, प्रथम खंड, प्रथम पल्लव, पद-12, पृ. 9
36. श्री गौर पद तरंगिणी, पृ. 480
37. विद्यापति की पदावली, रामवृक्ष बेनीपुरी, पद-86 (प्रेम प्रसंग), पृ. 65
38. श्री पद कल्पतरु, प्रथम शाखा, चतुर्थ पल्लव, पद-86, पृ. 65
39. विद्यापति पदावली, बि. रा. भा. प., पद-45, पृ. 57
40. ज्ञानदासेर पदावली,
41. घरेर पड़ा, जीवन स्मृति, पृ. 64
42. भारती, फाल्गुण 1282, बंगाव्द, पृ. 518
43. साधना, चैत्र, 1298, बंगाब्द ।
44. सावित्री, आश्विन, 1293 बंगाब्द
45. छेले बेला, पृष्ठ-48-59
46. विद्यापति अनुशीलन एवं मूल्यांकन, डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित, डा. मदन कुमार, पृ. 257
47. जयदेव विद्यापति ओर चण्डीदास (श्रीकृष्ण चरित्र तारा करिल प्रकाश) (चैतन्यचरितामृत)

48. 'विद्यापतिर समाधि-स्तम्भ उठिले बिस्फी तेई उठिबे, मैथिली गणइ ताहा के लइया गर्व्व करिबेन। तबे आमादेर एकटा भालबासार आधिपत्य आछे, बंगदेशेर बहुदिनेर अश्रु, सुख ओ प्रेमेर कथा संगे तार पदावली जड़ित हइया पड़ियाछि।'
– डा. दिनेशचन्द्र सेन, बंग भाषा ओ साहित्य, पृ. 226-7
49. श्री कृष्ण कीर्तन, दान खण्ड, पृ. 52
50. विद्यापति-पदावली, बि.रा.भा.प., पद-9, पृ. 143
51. श्रीकृष्ण कीर्तन, दान खंड – पृ. 18
52. मि.म., पद 673, पृ. 423
53. श्रीकृष्ण कीर्तन, वंशी खण्ड, पृ. 116
54. विद्यापति पदावली, बि.रा.भा., पद-214
55. बंगाल के कवियों की श्रृंगार वर्णना, प्रबन्ध-प्रतिभा, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पृष्ठ संख्या- 334।
56. ।। राधाकृष्ण चौधरी – बिहार एण्ड नेपाल, जी.डी. कालेज, बुलेटीन नं. 4
।। पी.के. सिंह 'मौन' -(अ) मोरंग मे प्राप्त मैथिली कविक पद (मि.मि.3 दिस. 1967)
(आ) मोरंग पदावलीक किछु पद, मि.मि., 7 जुलाई 1968 (इ) विद्यापति (मि.मि. 18 दिसम्बर 1966)
।। डा. शैलेन्द्र मोहन झा हालहि मे बैद्यनाथक चारि कविता प्राप्त कयलन्हि अछि तथा चतुर चतुर्भुज एवं सिद्धि नरसिंह मल्लक गीत सभ कें सेहो प्रकाशित कयलन्हि अछि।
57. नेपालक मैथिली साहित्यक इतिहास, प्रो. प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन' पृ. 79
58. ओएह – भूमिका – बालकृष्ण पोखरेल।
59. असामीज लिटरेचर – बरुआ।
60. बांगला साहित्येर इतिहास, डा. सुकुमार सेन, पृ. 28
61. राय रामानन्देर भणिता युक्त पदावली (1952) प्रो. प्रियरंजन सेन।
62. भोजपुरी लोक गीत, दुर्गाशंकर सिन्हा, पद-4, पृ. 255-56

●

नवम अध्याय

उपसंहार

नवम अध्याय

उपसंहार

संसारक समस्त रूपात्मक तथा जैवी विवृति अणु-परमाणु सभक विशेष संघटनक परिणाम थीक आओर एहि संघटनक ऊर्जा केर मात्रा मे जीवनक सचेतन, प्रसुप्त चेतन, अवचेतन आदि रूपक स्थिति संभव थीक। ई निष्कर्ष दर्शनक तार्किक सत्यहि नहि, विज्ञानक आनुसन्धानिक उपलब्धियो थीक। मानव जीवन मे अणु-परमाणुक संघटन-ऊर्जा अत्यंत रहस्यात्मक एवं जटिल रूप मे परिवर्तित होइत रहैछ। मानव एक विशेष भौतिक परिवेशहि मे नहि, चेतन परिवेशहु मे विकास प्राप्त करैछ, अतः ओकर जीवनकेर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, स्थूल-सूक्ष्म, सरल-जटिल दू विपरीत धारा दिस आकर्षित होयब स्वाभाविके नहि, अनिवार्य थीक।

गति अथवा क्रियाशीलता जीवनक धर्म थीक। आओर ई क्रियात्मक गतिशीलता अन्य कें कोनो-ने-कोनो रूपें स्पर्श करबे करत। मानव-जीवन सेहो अपन अन्तःबाह्य परिवेश सँ क्रिया-प्रतिक्रियात्मक सम्पर्क स्थापित करैत गतिशील रहैछ। जीवनक क्रिया-प्रतिक्रिया जनित कोनहु भौतिक किंवा मानसिक स्थितिक सुखात्मक वा दुःखात्मक अनुभूति हृदयक धर्म थीक आओर ओकर मूल्यात्मक ज्ञान बुद्धिक अधिकार। कविता मानवक एही सुख-दुःखात्मक संवेदनाक कथा थीक जे उक्त संवेदना कें सम्पूर्ण परिवेशक संग दोसराक अनुभूतिक विषय बना दैछ। कविता कोनो वस्तु वा घटना कें पूर्वापर सम्बन्ध मे राखि कय देखैछ, अतः ओ निकट युग-विशेषक अभिव्यक्ति, अतीत एवं अनागत युगक सत्य कें सेहो व्यक्त करबा मे समर्थ होइछ। कोनहु युगक घटना, कोनहु युगक संवेदना कविक लेल त्याज्य नहि होइछ, कारण ओ ओकरा माध्यम सँ अपन युग-सत्य कें कालातीत विराट सत्य सँ सम्पृक्त कय ओकरा नूतन रूप मे अवतरित करबाक क्षमता रखैछ। तें प्राचीन वाङ्मय मे 'ऋषयः मन्त्रद्रष्टारः' कहि कय कविकें मात्र मंत्रक रचयिते नहि, मन्त्रद्रष्टा सेहो कहल गेल अछि।

महाकवि विद्यापति सेहो एक मन्त्रद्रष्टा कवि छथि । ओ मूलतः प्रेम एवं सौन्दर्यक कवि छथि, यौवन एवं श्रृंगारक उन्मुक्त गायक छथि । हुनक एक-एक गीति पद प्रेमक मधुकलश थीक, हुनक एक-एक शब्द इन्द्रधनुषी सौन्दर्यक प्रतिछवि थीक । अतः विद्यापतिक प्रेम-सौन्दर्य सम्बन्धी अवधारणा केँ जानबाक लेल प्रेम एवं सौन्दर्यक स्वरूप-विकासक ज्ञान अपेक्षित अछि । 'प्रेम' शब्दक व्युत्पत्तिलब्ध अर्थ होइछ - प्रिय होयब, वा जे प्रीति दैत हो किंवा अनन्त तृप्ति प्रदान करैत हो । 'प्रेम' शब्द अनेक सूक्ष्म भावनाक वाहक थीक । तेँ प्रेम केँ 'अनिर्वचनीयं प्रेम स्वरूपम् । मूकास्वादनवत् ।' कहल गेल अछि । प्रेमक विवेचन आत्माक दृष्टि सँ तथा देह आओर चित्तक दृष्टि सँ कयल जा सकैछ । आत्माक दृष्टि सँ प्रेम शाश्वत आत्माक शाश्वत धर्म थीक, आओर चित्तक दृष्टि सँ प्रेम मात्र चित्त वा प्रतिक्रियेक धर्म थीक जे परिवर्तित भए अस्थिर एवं रूपात्मक भऽ जाइछ । अतः प्रेमक पूर्ण विकासक हेतु आत्मा एवं देह - दुनूक सामंजस्यक आवश्यकता अछि । सूत्रतः आत्मा केँ प्रेमक मूल स्रोत, चित केँ संचरणभूमि एवं देह केँ प्रेम-प्रकाशनक प्रकृत माध्यम मानल जा सकैछ । एही प्रकारेँ 'सौन्दर्य' शब्दक व्युत्पत्तिलब्ध अर्थ होइछ - जे आर्द्र वा सरस करय, जे नीक जकाँ प्रसन्न करय, जे कैंची जकाँ काटय, जे जीवनकेँ आओर आनन्द दिअय आदि । ओना तँ 'सौन्दर्य' शब्द बड़ व्यापक अर्थ केँ वहन करछै, परंच 'सौन्दर्य' शब्द मे बाह्य एवं आभ्यंतर दुनू प्रकारक सौन्दर्य समाविष्ट अछि । वस्तुतः प्रेम एवं सौन्दर्य मे अकाट्य एवं अविछिन्न सम्बन्ध अछि । प्रेम, वस्तु आ व्यक्ति मे नवीनता एवं सुषमाक सृष्टिकर्ता अछि, तँ सौन्दर्य, प्रेमक मूल तथा समग्र जीवन-स्पन्दन अछि । प्रेम सौन्दर्यहि सँ जीवन-रस ग्रहण कय पुनः सौन्दर्य मे पर्यवसित भऽ जाइछ, कारण प्रेम स्वयं आन्तरिक सौन्दर्यक चरम निदर्शक होइछ । एहि प्रेम एवं सौन्दर्य शब्दक व्युत्पति, शब्दार्थ एवं परिभाषाक संग ओकर मूल स्वरूप एवं विविध रूपक रूप-रेखा प्रस्तुत करबाक कदाचित पहिल प्रयास प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध मे कयल गेल अछि ।

वयः सम्बन्धक आधार पर प्रेम केँ तीन श्रेणी मे विभाजित कयल जाइछ - छोटक पैघक प्रति प्रीति अर्थात् श्रद्धा (देवता, ऋषि-मुनि, गुरु, नेता एवं अन्य श्रेष्ठ व्यक्तिक प्रति), समवयस्कक समवस्यकेर प्रति, अर्थात् सख्य वा मैत्री (मित्र वा प्रेमी-प्रेमिकाक पारस्परिक प्रेम जाहि मे 'प्रणय' सेहो सम्मिलित अछि) तथा श्रेष्ठक छोटक प्रति स्नेह अर्थात् वात्सल्य (अपन वा

आनक पुत्र, कोनो बालक-बालिका वा अन्य स्नेह-पात्रक प्रति प्रीति) । एहि मे द्वितीय कोटिक प्रेम सभ सँ गम्भीर, व्यापक एवं शक्तिशाली होइछ । प्रेम कोनो प्रकारक हो- भक्ति, दाम्पत्य वा वात्सल्य, ओकर मुख्य लक्ष्य थीक आत्मा केँ तृप्ति प्रदान करब । प्रेम मे दू व्यक्तिक कल्पना अनिवार्य होइछ - यथा, भक्त आ भगवान, प्रेमी आ प्रेमिका, मित्र आदि । अपन प्रिय केर प्रति सदा मंगल कामना राखब, उच्च कोटिक प्रेमक प्रधान गुण थीक । मानव-जीवन मे भक्ति, प्रणय, वात्सल्य, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम वा मानव-प्रेम, कुटुम्ब-प्रेम, मैत्री, श्रद्धा, सेव्यसेवक-प्रेम, सूक्ष्मक प्रति प्रेम, स्थूलक प्रति प्रेम, आत्म-प्रेम आदि अनेक कोटिक प्रेम पाओल जाइछ, तथापि ओहि सभमे प्रेमक आत्मा सम भावेँ व्याप्त रहैछ । साहित्य मे उपर्युक्त सभ कोटिक प्रेमक सम भावेँ चित्रण भेल अछि, मुदा ओहि सभमे सर्वाधिक महत्व प्रणय वा दाम्पत्ये केँ देल जाइछ, कारण ई काव्यक मूलभूत प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थीक । प्राचीन भारतीय तत्वचिंतक एवं मनोविज्ञानवेत्ता-दुनूक दृष्टियेँ 'काम' जे ब्रह्मक अनादि इच्छा 'एकोहं बहुस्यामि'क निर्वाहक हेतु मानव-प्राणी मे सृष्टि-संवर्द्धन-व्यापार आदि मे प्रेरणाक रूप मे परम्परा सँ आबि रहल अछि तथा ई हमर भावना एवं जीवन-व्यवहारक सूक्ष्म-स्नायुजालक पोषक जीवन-रस थीक ।

भारतीय एवं पाश्चात्य सौन्दर्य-तत्व-चिंतक वस्तुपरक दृष्टिकोणक आधार पर सौन्दर्य सम्बन्धी धारणा केँ क्रमशः वस्तुवादी किंवा यथार्थवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण, आत्मवादी किंवा आदर्शवादी दार्शनिक दृष्टिकोण तथा मध्यमार्गी समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रभृति तीन श्रेणी मे विभक्त कयल जा सकैछ । मार्क्सवादी सौन्दर्य-चिंतक एन.जी. चर्निशैवस्कीक अनुसार 'जीवन सौन्दर्य थीक । ओसभ किछु सुन्दर अछि, जे जीवन सँ सम्बन्ध रखैछ, जे जीवनक स्मृति दियबैछ आओर जे जीवन केँ अभिव्यक्ति प्रदान करैछ ।' एवंक्रमे पाश्चात्य एवं भारतीय सौन्दर्य-चिंतकलोकनि समन्वय सिद्धान्तक स्थापना द्वारा अतिवाद केँ समाप्त कय अपन स्वस्थ दृष्टिकोण केँ प्रस्तुत कयने छथि । एहि कोटिक सौन्दर्य चिंतक लोकनि मे प्लेटो, बौजांके, हिगेल, डा. कुमार स्वामी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, डा. आत्रेय, आ. रामचन्द्र शुक्ल आदिक नाम पांक्तेय अछि । उदात्त सौन्दर्य मे मानव एवं प्रकृति मे व्याप्त आत्माक अनन्तता, विशालता, उदात्तता तथा विराटताक दर्शन होइछ । लौंजाइनस पाटवपूर्ण वाग्मिता मे उदात्तक संभावना केँ मानलन्हि अछि । वस्तुतः उदात्त

ओ सौन्दर्य थीक जे आश्रय कें पहिने पराभूत आ तदनन्तर आकर्षित करैछ। एहि मे पहिने घात, तदुपरान्त आह्लाद निहित रहैछ। कलाक 'कुरूप' मे सेहो सौन्दर्य निहित रहैछ। अतः कुरूपता कें सेहो सौन्दर्य-चेतना सँ सम्बन्धित मानल जा सकैछ। एतावता हमर स्थापना ई अछि जे सौन्दर्यक मुख्यतः चारि स्वरूप निर्धारित कयल जा सकैछ - मानवीय सौन्दर्य, प्राकृतिक सौन्दर्य, वस्तुगत सौन्दर्य एवं कलागत सौन्दर्य। मानवीय सौन्दर्य काव्यक मूल प्रेरणाक अखण्ड स्रोत थीक। एकर कोनो सर्वमान्य कसौटी वा मानदंड वा आदर्श निश्चित नहि अछि। ओ व्यक्ति, जाति, देश, एवं कालक अनुरूपें परिवर्तित होइत रहैछ तथा ओ हमर स्वास्थ्य, मनोवृत्ति, जीवन-दृष्टिकोण आदि बात सभ सँ निर्धारित, नियंत्रित तथा परिचालित होइछ। भौगोलिक परिस्थिति सेहो एकरा विशेष रूपें परिचालित करैछ।

प्रेम एवं सौन्दर्य दुनू मे वस्तुतः पारस्परिक सम्बन्ध अछि। दुनू शब्द सहगामी थीक। यदि प्रेम वस्तु वा व्यक्ति मे नवीनता एवं सुषमाक सृष्टि करैछ तँ सौन्दर्य प्रेमक मूल तथा समग्र जीवन-स्पन्दन थीक। प्रेम, सौन्दर्यहि सँ संजीवन-रस ग्रहण कय पुनः सौन्दर्यहि मे पर्यवसित भऽ जाइछ, कारण प्रेम स्वयं आन्तरिक सौन्दर्यक चरम निदर्शक थीक।

मनोविज्ञानक आधार पर प्रेम कें संवेगक अन्तर्गत राखल जा सकैछ, मुदा एहि विषय पर हुनका लोकनि मे मत-वैभिन्य दृष्टिगोचर होइछ। वस्तुतः मनोविज्ञानक आधार पर ई कहल जा सकैछ जे प्रेम ओ अनुकूल वेदनीय मनोवृति थीक जे कोनो व्यक्ति, अन्य जीव वा पदार्थक सौन्दर्य, गुण, शील, सामीप्य आदिक कारण उत्पन्न होइछ। स्त्री-पुरूषक प्रेमक मूलाधार काम वा सेक्स थीक। काम वा सेक्स मे जे आकर्षण, जे गुरूत्व होइछ, से अन्यत्र नहि पओल जाइछ। स्त्री-पुरुषक प्रेम मे व्यक्तिक, पृथक सत्ता नष्ट भऽ जाइछ आओर एहि प्रकारक तादात्म्यमूलक प्रेम दृढ एवं स्थायी होइछ। वस्तुतः काम वा सेक्स एक स्थूल शारीरिक भूख थीक। ओ स्त्री-पुरूषक प्रेमक आधार तँ अछि, मुदा ओकरा प्रेमक समानार्थी नहि कहल जा सकैछ। कामजन्य सम्बन्ध मात्र तृप्ति-कालहि धरि सीमित रहैछ, जखन कि प्रेम जनित सम्बन्ध चिरस्थायी होइछ। अन्ततः शरीर, मन आ आत्माक तादात्म्य कें आदर्श प्रेम कहल जा सकैछ। सौन्दर्यक कोनो सर्वमान्य आदर्श नहि निर्धारित कयल जा सकैछ। रूप-लावण्य-युक्त शरीर प्रेमोत्पादनक मुख्य आधार थीक जे मानवक सौन्दर्य प्रियता कें लक्षित करैछ। सौन्दर्यक

वास्तविक मापक थीक - 'वीर्य विक्षोभण शक्ति'। काम भावनाक जाहि व्यक्ति मे जतबा आतिशय्य रहैछ, ओकरा दृष्टि मे कोनो विशेष नारी ओतबहि अधिक सुन्दर प्रतीत होइछ, मुदा कामोत्तेजनाक परिसमाप्तिक उपरान्त ओही नारीक सौन्दर्य ओहि व्यक्तिक दृष्टि मे अपेक्षाकृत कम भऽ जाइछ।

प्रेम एवं सौन्दर्य सम्बन्धी विभिन्न अवधारणाक अध्ययन एवं स्थापनाक पश्चात् विद्यापति साहित्य मे आओर विशेषतः 'पदावली' मे प्राप्त एहि तत्वक विश्लेषण अपेक्षित अछि। अतः विद्यापतिक प्रेम एवं सौन्दर्य मे अवगाहन करबाक पूर्व हुनक काव्यक आलम्बन राधा-कृष्णक स्वरूप-विकासक अध्ययनक संग-संग भारतीय साहित्य मे प्राप्त कृष्ण एवं राधाक क्रम-विकासक सम्यक ज्ञान प्राप्त कऽ लेब आवश्यक अछि। पुराणक अनुसार कृष्ण विष्णुक अवतार तथा वृष्णि-कुल-सम्भूत छथि। कृष्ण नाम सर्वप्रथम ऋग्वेद मे प्राप्त होइछ। एही वैदिक ऋषि कृष्णक नाम पर कार्षणायन गोत्र चलल, मुदा ई कृष्ण महाभारतक ऐतिहासिक पार्थ सारथी कृष्ण नहि छथि। पाणिनी, पतंजलि, छान्दोग्य उपनिषद आदिक आधार पर कृष्ण वासुदेव-देवकीक पुत्र, आंगीरस ऋषिक शिष्य, अर्जुनक सखा तथा महाभारत युद्धक संचालक सिद्ध होइछ। विद्यापतिक गीतिपद मे मधुसम्पन्न स्वरूपहि कें सर्वाधिक प्रश्रय प्राप्त अछि। यैह कारण जे 'पदावली' मे सभ सँ अधिक बेर 'माधव' नामहिक प्रयोग भेल अछि। भागवतक रसिया कृष्ण विद्यापतिक पद मे आर साकार भऽ उठल अछि। विद्यापतिक कृष्ण एक स्वच्छन्द प्रेमी छथि जनिका ने लोक-लाजक पिंजरे बन्दी बना सकैछ, ने मर्यादाक श्रृंखले बान्हि सकैछ, जनिका ने पापक अंशे छूबि सकैछ, ने कालुष्यक कैंचिये काटि सकैछ। वस्तुतः ओ नील गगनक उन्मुक्त विहग जकाँ उन्मुक्त प्रेमी छथि।

'राधा' शब्दक सर्व प्रथम प्रयोग कोन समय मे भेल से कहब कठिन अछि, मुदा छठम शताब्दी सँ सत्रहम शताब्दी धरिक सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय अनुपम नारी-रत्न राधाक छाया-व्यतिरेकक सौन्दर्य-सृष्टि सँ अनुप्राणित भेल अछि। दोसर शब्द मे सम्पूर्ण मध्य कालीन साहित्य ओही शब्द 'राधा' सँ व्यंजित भेल अछि। विद्यापतिक राधा, कृष्णक चरम आह्लाद-प्रदायिनी शक्ति छथि, मुदा हुनका मे देवत्वक प्रतिष्ठा नहि कय मानवीय रूपहिक चित्रण कयल गेल अछि। 'पदावली'क असाधारण नारी राधा अपार सुषमाक अखण्ड एवं विशाल राशि छथि। अद्वितीय रूप-यौवन-सम्पन्न रमणी राधाक

रोम-रोम, हुनक जीवन, यौवन एवं बुद्धि-वैभव कृष्ण कें समर्पित अछि। यैह कारण जे अन्ततः ओ अपन साधना, आत्म-समर्पण, रूप-सुषमा, विनय कातरता, तन-मनक आकुलता सँ कृष्ण कें प्राप्त कऽ लैछ । 'अनुखन माधव माधव रटइत राधा भेलि मधाई' मे जे उन्माद, तन्मयता, एकरूपता किंवा अद्वैतक चित्र उपलब्ध अछि, से अन्यत्र दुर्लभ थीक । वस्तुतः अपन अस्तित्व कें बिसरि माधव बनिं जयबाक क्षमता विद्यापतियेक राधा कें प्राप्त छनि ।

विद्यापतिक पूर्व, भारत मे प्रेम काव्यक एक सुदीर्घ एवं अत्यन्त वैभवपूर्ण परम्परा बनि गेल छल । भारतीय साहित्य मे प्रेमक प्राचीनतम रूप ऋग्वेदक यम-यमी सम्वाद तथा उर्वशी-पुरूरवा सम्वाद मे प्राप्त होइछ । दाम्पत्य प्रेमक प्रतिष्ठाक स्थापना वाल्मीकीय रामायणक राम-सीता मे भेल अछि । शौर्य प्रधान प्रेमक चित्रण महाभारत मे उपलब्ध होइछ । प्रेमक तेसर रूप कालिदासक मेघदूत, मालविकाग्निमित्र, ऋतुसंहार तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् मे प्राप्त होइछ जकरा कामजन्य प्रेम कहल जा सकैछ । कालिदासक पश्चात् प्रेम चित्रणक अन्य रसमय स्वरूप 'गाथा सप्तशती' तथा 'वज्जालग्गम्' नामक प्राकृतक मुक्तक काव्य मे उपलब्ध अछि । एकर अतिरिक्त भवभूतिक 'उत्तर रामचरितम्' तथा 'मालतीमाधव मे, शूद्रक्रक 'मृच्छकटिकम्', नाटक मे, श्रीमद्भागवत मे तथा जयदेवक 'गीतगोविन्द' मे प्रेमक अभिनव चित्र उपलब्ध अछि । भाव ई जे विद्यापतिक पूर्व प्रेम काव्यक कयक धारा-उपधारा संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश मे विकसित भऽ चुकल छल । विद्यापतिक प्रेम काव्य कें जयदेवक परम्परा मे राखल जा सकैछ, मुदा जयदेव एवं विद्यापति मे बाह्य एवं शैलीगत साम्य रहलो सन्ता दुनू मे महत्वपूर्ण भिन्नता अछि । निष्कर्ष ई जे जयदेवक प्रेम-काव्य प्रेम-चित्रणहिक लेल अछि, जखन कि विद्यापतिक प्रेम काव्य जीवनक विस्तृत धरातल सँ सम्पृक्त अछि ।

विद्यापति प्रधानतः प्रेम एवं सौन्दर्यक कवि छथि । यैह कारण जे ओ श्रृंगार कें 'त्रिभुवनसार', 'सगर संसारक सारे' आदि कहि ओकर महत्ता कें प्रतिपादित कयलन्हि अछि । हुनक रचनासभ मे प्रेमक विभिन्न स्वरूपक चित्रण भेल अछि । एहि मे कतहु वैवाहिक जीवनक मर्यादा सँ परिपूरित दाम्पत्य प्रेमक चित्रण अछि, तँ कतहु बहुवल्लभ कन्तक विलासक चित्रण अछि; कतहु वेश्या आ नागरिकालोकनिक प्रेमक वर्णन अछि, तँ कतहु

उपेक्षिता पत्नीक मर्म व्यथाक गीत मुखरित भेल अछि । वस्तुतः विद्यापतिक गीतिपद मध्यकालीन प्रेम काव्य-परम्पराक एक गोट अमूल्य श्रृंखला थीक । हुनक संस्कृत ग्रंथ 'गोरक्ष विजय' तथा 'पुरुष परीक्षा' मे एकाधिक स्थल पर प्रेम-चित्रण उपलब्ध अछि । एहि प्रकारें अवहट्ठ रचना 'कीर्तिलता' मे चोरीक प्रेमक प्रशंसा एवं वेश्याक प्रेमक निन्दा कयल गेल अछि । 'कीर्तिपताका' मे नग्न एवं मर्यादा-रहित कामाचारक चित्रण भेल अछि । 'पदावली'क प्रेम चित्रण मे मुख्यतः तीन पद्धति कें अपनाओल गेल अछि - नायक-नायिकाक रूप मे कृष्ण एवं राधाक प्रेम-चित्रण, सामान्य नायक-नायिकाक प्रेम गीत तथा शंकर-पार्वतीक दाम्पत्य जीवनक भक्ति रस-रंजित चित्र । सेक्स वा काम कें दाम्पत्य प्रेमक आधार मानि, प्रेमक तीन भेद मानल जा सकैछ - पूर्वराग, वैवाहिक एवं परकीय प्रेम । विद्यापतिक काव्य मे प्रेमक तीनू रूपक अभिनव चित्र उपलब्ध अछि ।

भारतक शस्य-श्यामल भूमि सौन्दर्यक अक्षय भण्डार थीक । प्रकृतिक श्री-सुषमा सँ सम्पन्न एहि देशक कण-कण सौन्दर्य माधुरी सँ आप्लावित अछि । यैह कारण जे विद्यापति सँ पूर्व भारतीय साहित्य मे सौन्दर्य-चित्रणक एक सुदीर्घ एवं वैभवशाली परंपरा उपलब्ध अछि । सर्व प्रथम ऋग्वेदक उषा सूक्त मे रमणीयताक, सौन्दर्यक प्रथम साहित्यिक अभिव्यक्ति उपलब्ध होइछ । 'वाल्मीकीय रामायण' मे तँ प्रकृतिक एक सँ एक भावक सौन्दर्य चित्रण उपलब्ध अछि । एहि ग्रंथ मे मानवीय सौन्दर्यक सेहो अनुपम चित्र अंकित अछि । एकर अतिरिक्त महाकवि कालिदासक कल्पना-प्रसूत रचना सभ मे प्रकृति आ मानव-सौन्दर्यक यथार्थ, नैसर्गिक एवं सफल चित्रांकन भेल अछि । शकुन्तलाक अभुक्तपूर्व यौवन तथा शारीरिक सौन्दर्यक आलंकारिक वर्णन 'अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलनं करूरूहै' तथा 'सरसिज मनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्' मे देखल जा सकैछ । एकर पश्चात् भवभूतिक 'कादम्बरी' मे प्रकृति-सौन्दर्यक मनोरम चित्रण भेल अछि । वृहत्रयीक सर्व श्रेष्ठ, प्रौढ़ एवं प्रगल्भ कल्पनाक आगम 'नैषघ' महाकाव्य मे मानव-सौन्दर्यक वर्णन अत्यंत तन्मयता एवं अनुरक्ति सँ कयल गेल अछि । भारवि, माघ आदि कविक रचना मे सौन्दर्य-चित्रण तँ भेल अछि, मुदा आलंकारिक रूढ़ि-वर्णनक प्राबल्यक कारण ओ प्रच्छन्न भऽ गेल अछि । अन्त मे मैथिली साहित्यक कविशेखराचार्य ज्योतिरीश्वर कृत 'वर्णरत्नाकर' मे मानवीय सौन्दर्य एवं प्रकृति-सौन्दर्यक अनुपम-अनिंद्य चित्र उपलब्ध अछि ।

विद्यापति प्रेम आ सौन्दर्य, यौवन आ श्रृंगारक कवि छथि । सौन्दर्यक रमणीय अभिव्यक्ति विद्यापतिक काव्यक साध्य रहल अछि । सौन्दर्यक अनुभूति सँ सौन्दर्यक अभिव्यक्तिक लेल कवि-हृदय फूटि पड़ल अछि - कविताक शब्द-शब्द सँ सौन्दर्य-मंदाकिनी प्रवाहित भेल अछि, एक-एक पद सँ सौन्दर्य-निर्झरनी निःसृत भेल अछि आ चहुधा रूपक वितान पसरि गेल अछि आ सौन्दर्य-लहरीक अनुगुंज सँ पाठकक हृदय आप्यायित भऽ उठल अछि । सौन्दर्यहि हुनक दर्शन छन्हि, सौन्दर्यहि हुनक जीवन-दृष्टि । एहि सौन्दर्य कें ओ नाना रूपमे देखने छलाह । अतः एकरा ओ एक कुशल मणिकार जकाँ चुनलन्हि, सजौलन्हि, सँवारलन्हि आ आलोकित कयलन्हि । विद्यापति मुख्यतः मानवीय सौन्दर्यक उपासक छलाह । मानवीय-सौन्दर्यक अन्तर्गत नारी-सौन्दर्यक चित्रण हुनक अभिप्रेत छलन्हि । नारी-सौन्दर्यक दू पक्ष - शारीरिक वा बाह्य सौन्दर्य तथा मानसिक सौन्दर्य केर ओ कुशल चित्रकार छलाह । अतः शारीरिक सौन्दर्यक अन्तर्गत ओ नेत्र, नेत्र-रूप एवं व्यापार, मुँह, केश, उरोज, नितम्ब, रोमावलि, अधर, दाँत, हास, मुस्कान, शरीर, कटि, नाभि, त्रिवली तथा यौवनावस्थाक अलंकार मे हाव, लीला, विलास, विच्छिति, किलकिंचित, ललित, मोट्टाइत, विव्वोक, विहित, कुट्टमित, हेलाक शत-सहस्र मधुर-मादक सौन्दर्य-चित्रक अंकन कयने छथि आओर मानसिक सौन्दर्यक अन्तर्गत संयोग मे शालीनता, हास-परिहास, ऋतु वर्णन, एवं वियोग मे मानक माध्यम सँ नायिकाक अनिंद्य रूप-लावण्यक अभिनव सौन्दर्य-छवि उतारने छथि । सूत्रवत् विद्यापतिक सौन्दर्य-भावना कें अपरूपक सौन्दर्य, चिरनूतन सौन्दर्य, सहज सौन्दर्य, पारस-रूप-सौन्दर्य, सूक्ष्म सौन्दर्य, चिरन्तन सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य आदि विभिन्न वर्ग मे विभक्त कयल गेल अछि ।

विद्यापति मुख्यतः 'सुन्दरम्' केर कवि छथि, मुदा हुनक सुन्दर मात्र सुन्दरे नहि, 'अपरूप' अछि । अपरूप अर्थात् अपूर्व । ई अपरूप अलौकिक थीक । सौन्दर्य-सम्बन्धी हुनक सम्पूर्ण दृष्टिकोण एहि 'अपरूप' (सौन्दर्य) शब्द मे समाहित अछि । अपरूप ओ रूप वा सौन्दर्य थीक जे विद्यापतियेक शब्द मे 'तिल-तिल नूतन होय' । हुनक ई अपरूप सम्पूर्ण त्रिभुवन कें विजित कयनिहार, ककरहु चित्त कें चंचल बनौनिहार तथा कोनो ज्ञानी कें क्षुब्ध कयनिहार अछि । यैह अपरूप हुनक ईश्वर, हुनक सिद्धि अछि । एहि अपरूपक समक्ष समर्पण नहि कय, ओकरा जानबाक निरन्तर अतृप्त इच्छहि

हुनका चालित बनौने रहैछ आओर यैह हुनक सौन्दर्य-बोधक अद्वितीयता अछि, यैह हुनक सौन्दर्य-पारखी नेत्रक वैशिष्ट्य अछि -

जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल ।

विद्यापतिक प्रतिभा बहुमुखी छल । अपन सुदीर्घ जीवन मे ओ विभव-पराभवक कतेको पराव देखलन्हि । कतेकहु राजा तथा हुनक पट्ट-महिषीक ओ स्तवन कयलन्हि, हुनका सँ सम्मानित एवं पुरस्कृत भेलाह । हुनक व्यवहार-बुद्धि अप्रतिम छल । विभिन्न भाषाक चयन एकर संकेत दैछ, हुनक संस्कृत ग्रंथ सभमे सरल, सहज, सुबोध भाषाक प्रयोग भेल अछि, तँ पदावली मे ओकर सहज-सुन्दर रूप प्राप्त होइछ । रस-तत्वक दृष्टि सँ विद्यापतिक प्रेमकाव्य पूर्ण सफल अछि । हुनक एक-एक पद रसराजक पारावारक अन्यतम अवदान थीक । संयोग श्रृंगार हो किंवा विप्रलंभ, सर्वत्र सहज रूपें ओकर रसानुभूति कयल जा सकैछ । वस्तुतः ओ उज्ज्वल वा मधुर रसक कवि नहि, श्रृंगारक उन्मुक्त गायक छथि । यद्यपि ओ अलंकारवादी कवि नहि, तथापि अलंकार हुनका लेल सहज स्वाभाविक अंग बनि गेल अछि । सौन्दर्य चित्रण सम्बन्धी हुनक पदसभ अलंकार-योजनाक उत्कृष्ट उदाहरण थीक ।

विद्यापति नारी-जीवनक मर्मी चित्रकार छथि । युग एवं परम्पराक प्रेरणा सँ नारीक प्रेयसी रूपहि हुनक काव्यक वर्ण्य विषय रहल अछि, मुदा एहि क्षेत्र मे किछुओ एहन नहि जे हुनक काव्य मे चित्रित नहि भेल हो । यैह कारण जे पदावली मे मुग्धा सँ प्रगल्भा धरि तथा वासकसज्जा सँ प्रोषितपतिका धरिक विभिन्न श्रेणीक नायिका सभहिक चित्र उपलब्ध अछि। एही प्रकारें हुनक गीतिपद मे शास्त्रीयताक दृष्टियें उक्ति एवं वाग्वैदध्य, प्रतीकात्मकता, बिम्ब-विधान, ध्वनिवादिता, दृष्टिकूट आदिक सुन्दर नियोजन भेल अछि । पदावलीक एक-एक पद आइ लोकोक्तिक रूप धारण कऽ लेने अछि । हुनक लोकोक्ति सभ कोनो भाव वा कथनक उत्कर्षक लेल, रस-वृद्धि वा अभिव्यंजना कें सबल आ प्रमाण-पुष्ट करबाक लेलहि प्रयुक्त भेल अछि। महाकविक वाक्यसभ काल-समुद्रक तरंग पर अमिट भऽ जन-मानस मे आइयो नृत्य कऽ रहल अछि । वस्तुतः हुनक लोकोक्ति सभ जन-समुद्र मे छिड़िआयल अमूल्य रत्न थीक जे जीवनक प्रत्यक्ष यथार्थ सँ उद्भूत अछि।

काव्यशास्त्र मे श्रृंगार रसक सर्वाधिक महत्व अछि । काम-देवक

उद्भेद कें श्रृंगार कहल जाइछ तथा एकर आगमनक लेल उत्तम प्रकृति-प्राय रस कें श्रृंगार रसक अमिधा सँ अलंकृत कयल जाइछ । श्रृंगारक परिधि मात्र दाम्पत्य प्रेमहि धरि समाहित भऽ सकैछ, विशुद्ध प्रेम, स्नेह, वात्सल्यादि कें एकर अन्तर्गत नहि राखल जा सकैछ । श्रृंगार मे काम, सौन्दर्य एवं प्रेम-एहि तीन तत्वक मिश्रण पाओल जाइछ जाहि मे काम भावनाक स्थिति कें अनिवार्य बताओल जाइछ। श्रृंगार सँ सम्बन्धित प्रेम वस्तुतः काम-समन्वित प्रेम थीक, तथापि ओ कामुकता सँ भिन्न वस्तु थीक । वासना (कामुकता) खान सँ निकलल अशुद्ध धातुक भाँति शरीरक एक प्राकृतिक वृत्ति मात्र थीक, जतय प्रेम धातुसभक संशोधन, परिष्कार एवं बहुमूल्य द्रव्य सभक योग सँ निर्मित रसायन थीक ।

विद्यापति श्रृंगारक उन्मुक्त गायक छथि, प्रेम आ सौन्दर्यक अनन्य पुजारी छथि । श्रृंगार रस विद्यापतिक काव्यक मूल स्वर थीक । यैह कारण जे ओ 'संसाररत्नं मृगशावकाक्षी रत्नं च श्रृंगार रसो रसानाम्' कहि श्रृंगार रसक महत्वक उद्घोष कयने छथि । हुनक काव्य मे श्रृंगारक एक रस-पारावार तरलायित अछि, श्रृंगारक दुनू पक्ष-संयोग एवं विप्रलंभ श्रृंगार अपन पूर्ण विस्तार एवं वैभवक संग हुनक साहित्य मे चित्रित भेल अछि । विद्यापतिक काव्य मे संयोग श्रृंगारक जतबा उन्मादक रसपूर्ण चित्र प्राप्त होइछ, विप्रलंभक सजल मर्मस्पर्शी गीत ताहि सँ कम नहि । हुनक काव्य मे चित्रित श्रृंगार रस नायक-नायिकाक यौवन-विकास-जन्य सौन्दर्य पर आश्रित अछि । नायक-नायिकाक हृदय मे नवांकुरित प्रेम, प्रथम मिलनक तैयारी, मिलन, नायिकाक विश्रम्भन, अभिसार, प्रणय-मान, पुनर्मिलन आदिक एक सँ एक सजीव चित्र 'पदावली' मे चित्रित अछि । सौन्दर्य-चित्रण मे सर्वदा उपमानहिक साहाय्य नहि लय, सोझे ओकर अपूर्वताक उल्लेख कय कौखन ओकर अप्रतिम वैशिष्ट्यक उल्लेख कयल गेल अछि तँ कौखन ओकर सहज सौन्दर्यक अंकन कयल गेल अछि । हुनक पद सौन्दर्यक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करैछ । संयोग श्रृंगारक जतबा दशा संभव भऽ सकैछ, ओहि सभक मार्मिक व्यंजना पदावली मे भेल अछि । नायक-नायिकाक हृदयक सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावोर्मिसभक मनोवैज्ञानिक चित्रण मे विद्यापतिक विलक्षण कौशल दृष्टिगत होइछ । प्रिय-समागमक वर्णन मे विद्यापति नायिकाक शारीरिक एवं मानसिक स्थितिक, ओकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतिक सफल चित्रण कय अपन नारी-मनोविज्ञानक पाण्डित्यक परिचय देलन्हि अछि ।

किशोर वयस्का कुमारि कन्याक स्वाभाविक चेष्टा, यौवनागम जन्य विकार तथा कायिक एवं मानसिक परिवर्तनक चित्रण मे विद्यापतिक वैशिष्ट्य सर्वसिद्ध अछि । हुनक सम्पूर्ण प्रेम-काव्य मे वैवाहिक जीवनक दाम्पत्य प्रेम तथा परकीय प्रेमक चित्रणक बाहुल्य परिलक्षित होइछ । बहुवल्लभ कन्तक उपेक्षिता प्रिया केर करुण व्यथाक चित्रण करबा मे ओ अद्वितीय छथि ।

विद्यापतिक वियोग वा विप्रलंभ श्रृंगारक चित्रण अन्तर्मुखी भावक बहुमूल्य रत्न थीक । हुनक प्रेम काव्यक ई दोसर पक्ष थीक - साओन भादवक वर्षाकालीन रात्रि सदृश गहन अन्धकारपूर्ण, सजल आ अन्हार-एहि ठाम कोनो विरह-विदग्धा-नायिकाक अन्तर मे पुनर्मिलनक इच्छा जागृत होइछ तँ ककरो अतीतक मादक-मदिर मिलनक चित्र मोन पड़ैछ, क्यो उन्माद, विलाप आ व्यग्रता सँ निष्फल प्रतीक्षा करैछ, तँ क्यो प्रवासी प्रियकेर विछोह मे रात्रिं-दिवा जागरण करैछ, कोनो उपेक्षिता अपन फूटल कपार पर नोर बहबैछ, तँ कोनो ललना सभ दोष अपना उपर लय प्रणयीक मंगल कामना करैछ । वस्तुतः विद्यापतिक विप्रलंभ पक्ष भावतरल, व्यथा सजल एवं अश्रुविगलित अछि । एहि मे दाम्पत्य-प्रेमक गांभीर्य-स्वर, नारी हृदयक सहनशीलता एवं भावुकता, पुरुषक भ्रमरी वृत्ति एवं चंचलता, उपेक्षिताक एकाकारिता आदिक स्वर स्पष्टतः श्रुति-मधुर अछि ।

कवि अपन युगक द्रष्टा आ स्रष्टा दुनू होइछ । परिवेशगत सत्य एवं युग-यथार्थ सँ ओ अपना कें असम्पृक्त नहि राखि पबैछ । परिणामतः ओ समाजक एक अभिन्न अंग बनि जाइछ - उर्ज्वस्वित प्रकाश-पिण्ड ! विद्यापति सेहो अपना युगक एक उर्ज्वस्वित-भास्वर-प्रकाश-पिण्ड छलाह । यैह कारण जे हुनक कृति सभ मे सम्पूर्ण युग जीवित-जागृत भऽ उठल अछि। दरबारी कवि रहलो सन्ता विद्यापति जन-जीवन कें सर्वथा उपेक्षित नहि कऽ सकलाह । अतः एक दिस हुनका काव्य मे कवि-हृदयक सहजानुभूतिक अभिव्यंजना भेल अछि, तँ दोसर दिस जनसामान्यक सामाजिक चेतना सेहो मुखरित भेल अछि। ओ संस्कृतक प्रकाण्ड पंडित छलाह, तथापि अपन युगक जन-जीवनक निकटता कें प्राप्त करबाक निमित्त पदावलीक रचना बुधजनक भाषा संस्कृत मे नहि कय जनसामान्यक भाषा मैथिलीमे कयलनि । तें ओ उद्घोष कयलनि -

सक्कय वाणी बुहअन भावइ, पाउअ रस को मम्म न पावइ।
देसिल बअना सब जन मिट्ठा, तें तैसन जम्पओ अवहट्ठा ।।

'देसिल बअना सब जन मिट्ठा' कहि ओ जन वाणीक प्रतिष्ठा मध्य युग मे कयलन्हि । एवंविधि भाषा-नीति लय विद्यापति 'क्रांतिदर्शी' छलाह।

विद्यापतिक कंठक काकली सँ समय-समय पर एहन गीतस्वर निःसृत भेल अछि जे सहस्रधा भए लोकजीवनक सामान्य सम्पति भऽ गेल अछि । यैह कारण जे अद्यपर्यन्त ललनाक ठोर पर, जन सामान्यक हृदय मे तथा बुधजनक मस्तिष्क पर हुनक लोक-गीत सभ चिर अंकित भऽ गेल अछि । ई मिथिलाक जनसामान्यक मूर्तचेतना, जीवन-स्पन्दन, विश्वास-वाणी थीक। वस्तुतः विद्यापति लोक-जीवनक महान उद्‌गाता एवं लोक तत्वक महान चयनकर्ता छलाह । यैह कारण जे पदावली मे अनेक छन्द, धुन, स्वर एवं शब्द-विन्यास लोक-जीवन सँ गृहीत अछि । राज-परिवार सँ संबंधित-सम्पर्कित रहलो सन्ता हुनक दृष्टि जन-सामान्ये पर केन्द्रित छल । यैह कारण जे विरहिणी नायिकाक चित्रण रानी वा राजकुमारीक रूप मे नहि, जन सामान्यक नारीयें रूप मे भेल अछि । पदावली मे प्रयुक्त जन-जीवन मे प्रचलित मुहाबरा एवं लोकोक्ति, नीति परक सूक्ति, सामान्य जीवन मे प्रचलित रूढ़ि एवं अन्ध विश्वास आदि हुनक लोक-चेतनाक द्योतक थीक। वस्तुतः हुनक गीतिपद राज दरबारक नर्तकी नहि, जन-मानसक अधीश्वरी बनि गेल अछि ।

मिथिलाक इतिहास मे विद्यापति-युग कें स्वर्ण युग कहल गेल अछि । विद्यापति-युग मे मिथिला एक स्वतंत्र राष्ट्र छल, जकर प्रमाण मिथिला-क्षेत्र मे प्राप्त शिवसिंहक स्वर्ण मुद्रा तथ भवसिंहक चानीक मुद्रा थीक । विद्यापतिक युग राजनीतिक दृष्टि सँ अराजकताक युग छल । विद्यापतिक काव्य मे युगीन सामाजिक चेतना पर्याप्त मात्रा मे मुखरित भेल अछि । विद्यापति-युगीन मिथिलाक सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक अवस्थाक प्रचुर सामग्री ज्योतिरीश्वर, विद्यापति तथा अन्य कवि, पंडित आ लेखक लोकनिक रचना सभक मध्य उपलब्ध अछि । सांस्कृतिक दृष्टिकोण सँ सेहो मिथिला ओहि समय मे बिहारक प्रधान शिक्षा-केन्द्र छल । विद्यापति युगीन मिथिला मे साहित्य, विज्ञान, गणित, तर्कशास्त्र, कामशास्त्र, व्याकरण, धर्मशास्त्र आदि विषयक अनेक ग्रंथक प्रणयन भेल । धर्म एवं दर्शनक क्षेत्र मे मिथिला मे भक्तिक प्रधानता छल - शैव, शाक्त, वैष्णव तथा तन्त्रक पूर्ण प्रचलन छल। शिव, शक्ति आ गंगाक प्रति लोकक अटूट आस्था छल तथा कृष्णवादहुक अवतारणा भऽ गेल छल । संगीत तथा नृत्य कलाक ई उत्कर्षक

काल छल। लोक-जीवन मे सेहो नृत्य-संगीतक बेस प्रचलन छल। लोरिक आदि कथा-गीत अत्यधिक लोकप्रिय छल । एवंविधि विद्यापतिक सम्पूर्ण काव्य मे लोक-चेतनाक उन्मेष भेल अछि जकर पर्याप्त सामग्री ज्योतिरीश्वरक 'वर्णरत्नाकर' तथा विद्यापतिक 'पुरुष-परीक्षा', 'कीर्तिलता', 'लिखनावली', 'गोरक्ष विजय' तथा 'विभागसार' आदि रचना मे उपलब्ध अछि ।

विद्यापति वस्तुतः विद्याक पति छथि । ओ युगद्रष्टा महाकवि छलाह आओर छलाह ओ लोकनायक तथा संस्कृतक विशिष्ट विद्वान । यैह कारण जे विद्यापतिक पीयूष वर्षी पदावली सात सए सँ अधिक वर्ष सँ भारतक एक गोट क्षेत्र कें रस प्लावित करैत आबि रहल अछि । पदावली विद्यापतिक सम्पूर्ण जीवनक साधना थीक । यैह कारण जे विद्यापतिक प्रेम काव्यक प्रभाव मात्र मैथिली साहित्ये पर नहि, प्रत्युत बंगला, ब्रजबुली, असामी, उड़िया, नेपाली, भोजपुरी प्रभृति भाषाक साहित्य पर सेहो परिलक्षित होइछ। एतबहि नहि, विद्यापतिक काव्य-सौरभ सँ सम्पूर्ण पूर्वी भारत तथा ओकर हृदय-प्रदेश सुरभित भऽ गेल अछि ।

विद्यापति प्रेम एवं सौन्दर्यक, यौवन एवं श्रृंगारक अमर कवि छथि। 'धम्म सहित सिंगार रस' हुनक आदर्श अछि । हुनक प्रेम काव्य मे दाम्पत्यक सुख-दुःख, परकीया एवं सामान्या नायिकाक सूक्ष्म मनोभाव तथा राधा-कृष्णक परम्परा मे चित्रित प्रेमक मनोभावक चित्र अंकित अछि । हुनक प्रेम काव्य आदर्श थीक-चन्द्रमा-कुमुदक किंवा सूर्य-सरोज-प्रेमक । 'धर्मसंपृक्त श्रृंगारो सीताराघवयोरिव' विद्यापति साहित्य मे प्रतिष्ठित प्रेमक मर्यादा एवं आदर्श थीक । विद्यापति 'अपरूप' सौन्दर्यक उपासक थिकाह जे 'तिल-तिल नूतन' होइत रहैछ । एकटा एहन सौन्दर्य, जकरा जन्म भरि निहारलो सन्ता अतृप्ति बनले रहैछ । 'जनम अवधि हम रूप निहारल, नयन न तिरपित भेल' । विद्यापतिक प्रेमकाव्य मे एही अपरूप, सहज एवं चिरनूतन सौन्दर्यक वितान आओर धम्म सहित सिंगार रसक इन्द्र धनुषी छवि-छटाक अभिव्यंजना निहित अछि । वस्तुतः विद्यापति एक महान ज्योर्तिमय नक्षत्र छथि जनिक प्रभा-रश्मि सँ सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय उद्‌भासित एवं अनुप्राणित अछि ।

●

परिशिष्ट

सहायक ग्रंथ एवं पत्र-पत्रिका

परिशिष्ट

सहायक ग्रंथ एवं पत्र-पत्रिका

(1) पदावली (हिन्दी)

1.	विद्यापति पदावली	संपादक- नगेन्द्र नाथ गुप्त
2.	विद्यापति	सं. खगेन्द्रनाथ मित्र एवं विमान बिहारी मजुमदार
3.	विद्यापति पद्य संग्रह	सं सतीशचन्द्र राय
4.	विद्यापति की पदावली	सं. रामवृक्ष बेनीपुरी
5.	मैथिल कोकिल विद्यापति: संक्षिप्त पदावली	सं. शंभु बहुगुणा
6.	विद्यापति पदामृत	सं. ओंकार नाथ मिश्र
7.	विद्यापति की पदावली	सं. बसंत कुमार माथुर
8.	विद्यापति पदावली	सं. कुमुद विद्यालंकार तथा जयवंशी झा
9.	विद्यापति	सं. सूर्यवली सिंह तथा देवेन्द्र सिंह
10.	विद्यापति पदावली (भाग-1)	प्रकाशक- बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना
11.	विद्यापति और उनकी पदावली	प्रो. देशराजसिंह भाटी एवं जीवन प्रकाश जोशी
12.	विद्यापति पदावली (द्वितीय भाग)	बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना
13.	कवि विद्यापति	गंगाधर मिश्र
14.	विद्यापति पदावली	संपादक-रामचन्द्र श्रीवास्तव 'चन्द्र'
15.	विद्यापति और उनकी पदावली	देश रंजन सिन्हा
16.	विद्यापति की पदावली	भुवनेश्वर 'माधव'
17.	विद्यापति की पदावली	कुमार गंगानन्द सिंह
18.	सौ गीत विद्यापति के	नागार्जुन
19.	विद्यापति की विशुद्ध पदावली	सं. पं. शिवनन्दन ठाकुर

20. विद्यापति विद पदावली: डा. विमान बिहारी मजुदार एण्ड ट्रान्सलेशन एण्ड इनट्रोडक्शन प्रो. ईश नाथ झा

(2) पदावली (मैथिली)

21. राग तरंगिणी संकलयिता–लोचन संपादक – बलदेव मिश्र
22. विशुद्ध विद्यापति पदावली संकलयिता – पं. शिवनन्दन ठाकुर
23. विद्यापति गीत–संग्रह डा. सुभद्र झा
24. विद्यापति पंचाशिका संकलयिता – लक्ष्मीपति सिंह
25. भाषा गीत संग्रह संपादक – रमानाथ झा
26. विद्यापति पद संग्रह संकलयिता – डा. शैलेन्द्र मोहन झा
27. मैथिली संगीतांजलि–विद्यापति गीत स्वर–लिपि (सागर) प्रकाशक – चेतना समिति, पटना
28. विद्यापति संगीत मे वर्णित नायक–नायिका भेद एवं राग–रागिनीक वर्गीकरण सं. पं. राजेश्वर झा
29. विद्यापतिक सुभाषित कमल नारायण झा

(3) पदावली (बंगला)

30. प्राचीन काव्य संग्रह (1876) सं. अक्षयचन्द्र सरकार
31. विद्यापति कृत पदावली सं. अक्षयचन्द्र सरकार
32. प्राचीन काव्य संग्रह (1884) सं. अक्षयचन्द्र सरकार
33. विद्यापति सं. काली प्रसन्न काव्य
34. महाजन पदावली (चण्डीदास ओ विद्यापति)
35. प्राचीन बंगलाय ग्रंथावली (प्राचीन)
36. वैष्णव पदावली सं. उपेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
37. वैष्णव पदावली सं. दुर्गादास जाहिदा
38. विद्यापति ठाकुरेर पदावली सं. खगेन्द्र नाथ मित्र
39. विद्यापति सं. काली प्रसन्न काव्य
40. महाजनी कीर्तन पदावली सं. कालीमोहन विद्यारत्न
41. कीर्तन पदावली सं. कालीमोहन विद्यारत्न
42. पद–रत्नाकर सं. लाल मोहन दास
43. विद्यापति सं. अमूल्यचरण विद्याभूषण
44. विद्यापति, चण्डीदास ओ अन्यान्य वैष्णव महाजनेर गीतिका सं. चारु चन्द्र वन्द्योपाध्याय
45. विद्यापति–चण्डीदास–अन्यान्य महाजन गीतिका : सं.चा.च. वन्द्योपाध्याय
46. विद्यापति पदावली सं. नगेन्द्र नाथ गुप्त
47. विद्यापति शतक सं. मुहम्मद सहिदुल्ला
48. विद्यापतिर शिव गीत सं. सुधीर चन्द्र मजुमदार
49. कवि विद्यापति सं. त्रिलोकीनाथ भट्टाचार्य
50. चंडीदास ओ विद्यापति सं. बंकरो
51. विद्यापति सं. खगेन्द्रनाथ मित्र ओ डा. विमानबिहारी मजुमदार
52. विद्यापति पदावली सं. शारदा चरण मित्रा
53. विद्यापति गोष्ठी डा. सुकुमार सेन
54. सुकवि विद्यापति डा. सुकुमार सेन
55. विद्यापति समीक्षा निरंजन चक्रवर्ती

(4) कीर्तिलता

56. कीर्तिलता सं. म.म. हर प्रसाद शास्त्री
57. कीर्तिलता सं. डा. बाबू राम सक्सेना
58. कीर्तिलता और अवहट्ठ भाषा सं. डा. शिव प्रसाद सिंह
59. कीर्तिलता सं. म.म. डा. उमेश मिश्र
60. कीर्तिलता व्याख्याकांर– डा. वासुदेवशरण अग्रवाल
61. कीर्तिलता सं. प्रो. रमानाथ झा

(5) कीर्तिपताका

62. कीर्तिपताका सं. म.म. डा. उमेश मिश्र

(6) पुरुष – परीक्षा

63. पुरुष परीक्षा सं. हर प्रसाद राय
64. पुरुष परीक्षा सं. कवीश्वर चन्दा झा
65. पुरुष परीक्षा सं. डा. गंगा नाथ झा
66. पुरुष परीक्षा सं. मृत्युंजय विद्यालंकार
67. पुरुष परीक्षा सं. चन्द्रकान्त पाठक
68. पुरुष परीक्षा सं. प्रो. रमानाथ झा
69. पुरुष परीक्षा सं. चन्द्रकान्त पाठक ओ आ० रमानाथ झा
70. पुरूष परीक्षा सं. जी. ए. ग्रियर्सन

71. पुरूष परीक्षा	सं. नेरूकर

(7) लिखनावली

72. लिखनावली	सं. डा. इन्द्रकान्त झा

(8) गोरक्ष विजय

73. गोरक्ष विजय	सं. म.म. डा. उमेश मिश्र एवं डा. जयकान्त मिश्र
74. गोरक्ष विजय-विद्यापति	सं. जगदीशचन्द्र माथुर एवं डा. दशरथ ओझा 'प्राचीन नाट्य संग्रह' मे संकलित

(9) मणिमंजरी

75. मणिमंजरी-विद्यापति	सं. प्रो. रमानाथ झा

(10) भूपरिक्रमा-विद्यापति

76. भूपरिक्रमा-विद्यापति	सं. डा. मुनीश्वर झा

(11) दुर्गाभक्ति तरंगिणी

77. दुर्गाभक्ति तरंगिणी-विद्यापति	प्रकाशित-संपादकक नाम ज्ञात नहि ।

(12) शैवसर्वस्वसार

78. शैवसर्वस्वसार-विद्यापति	अप्रकाशित, एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल मे एकर एक प्रति सुरक्षित अछि ।

(13) शैवसर्वस्वसार

79. शैवसर्वस्वसार-प्रमाणभूत पुराण संग्रह- विद्यापति	अप्रकाशित-एकर एक प्रति राज पुस्तकालय दरभंगा मे अछि ।

(14) गंगावाक्यावली-विद्यापति

80. गंगावाक्यावली-विद्यापति	एकर एक प्रति राज पुस्तकालय दरभंगा मे सुरक्षित अछि ।

(15) दानवाक्यावली-विद्यापति

81. दानवाक्यावली-विद्यापति	सं. फणि मिश्र

(16) विभागसार-विद्यापति

82. विभागसार-विद्यापति	अप्रकाशित-एकर एक प्रति लक्ष्मीकान्त झा, एडवोकेट, पटनाक घर मे अछि, एक प्रति पं. जगदीश झा, नवानीक लग मे अछि तथा एक प्रति वि.रा.भा.प. पुस्तकालय, पटना मे सेहो उपलब्ध अछि।

(17) गयापत्तलक-विद्यापति

83. गयापत्तलक-विद्यापति	लालगंज निवासी पं. शिवेश्वर झाक घर मे ई तालपत्र अछि ।

(18) वर्षकृत्य-विद्यापति

84. वर्षकृत्य-विद्यापति	ई पोथी दामोदर नारायण चौधरी, दरभंगाक लग मे सुरक्षित अछि ।

(19) व्याडीभक्ति तरंगिणी-विद्यापति

85. व्याडीभक्ति तरंगिणी-विद्यापति	सं. डा. प्रबोध नारायण सिंह, प्रो. राधाकृष्ण चौधरीक सद्यः प्रकाशित ग्रंथ मिथिला इन द एज आफ विद्यापति' मे सेहो ई पोथी संग्रहीत अछि ।

आलोचना (मैथिली)

86. विद्यापति सौरभ	जयकान्त झा 'श्रुतधर'
87. महाकवि विद्यापति	हरिनन्दन ठाकुर 'सरोज'
88. विद्यापति पर्व अंक	संपादक परमानन्द झा, शरतचन्द्र मिश्र
89. गोरक्ष-विजय नाटक	सं. महामहों डा. उमेश मिश्र
90. विद्यापति	सं. प्रो. आनन्द मिश्र
91. विद्यापतिक काव्य-साधना	प्रो. विश्वेश्वर मिश्र
92. विद्यापति वाङमय	डा. मुनीश्वर झा
93. विद्यापति पुनर्मूल्यांकन	प्रधान सं. दीनानाथ झा
94. स्मारिका	सं. उमानाथ झा एवं आनन्दमिश्र
95. विद्यापति विमर्श	डा. इन्द्रकान्त झा

आलोचना (हिन्दी)

96. महाकवि विद्यापति	पं. शिवनन्दन ठाकुर
97. विद्यापति काव्यालोक	नरेन्द्रनाथ दास
98. विद्यापति ठाकुर	डा. उमेश मिश्र
99. विद्यापति	डा. रामरतन भटनागर
100. विद्यापति	सं. सूर्यवली सिंह, लालबहादुर सिंह
101. विद्यापति	श्याम लाल वशिष्ट
102. विद्यापति	डा. जनार्दन मिश्र
103. मैथिल कोकिल विद्यापति	ब्रजनन्दन सहाय
104. विद्यापति	डा. शिव प्रसाद सिंह

105. विद्यापति:एक तुलनात्मक समीक्षा — प्रो. जयनाथ नलिन
106. गीतकार विद्यापति — राम वशिष्ट
107. विद्यापति वैभव सं. गुणानन्द — जुआल, विश्वम्भर 'अरूप'
108. विद्यापति की काव्य-प्रतिभा — डा. गोविन्द राम शर्मा
109. विद्यापति:युग और साहित्य — डा. अरविन्द नारायण सिन्हा
110. विद्यापति गोष्ठी — डा. सुकुमार सेन अनु. डा. शैलेन्द्र मोहन झा
111. रीतिकाव्य और विद्यापति — डा. वीरेन्द्र कुमार बड़सूवाला
112. विद्यापति की काव्य-साधना — कृष्णदेव शर्मा
113. विद्यापति : आलोचनात्मक अध्ययन — मुराली लाल उपेती
114. महाकवि विद्यापति:स्थापना और विवेचन — कृष्णानन्द 'पीयूष'
115. अपभ्रंश काव्य परम्परा और विद्यापति — अम्बादत्त पंत
116. विद्यापति — डा. आनन्द प्रकाश दीक्षित
117. विद्यापति का अमर काव्य — सं. गुणानन्द जयाल
118. विद्यापति का अमर काव्य — ले. गुणानन्द जयाल
119. विद्यापति का अमर काव्य — बहुगुणा शंभु प्रसाद
120. विद्यापति विभा — डा. वीरेन्द्र कुमार बड़सूवाला
121. विद्यापति की काव्य-साधना — भाटी देशराज सिंह
122. हिन्दी साहित्य:परम्परा और परख — डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव
123. विद्यापति:मूल्यांकन तथा अभिव्यक्ति — डा. मनमोहन सहगल
124. विद्यापति के देश मे — डा. जगन्नाथ मिश्र
125. श्री राधा का क्रम विकास — शशिभूषण दास गुप्त
126. भारतीय वाङमयमे श्रीराधा — पं. बलदेव उपाध्याय
127. मध्यकालीन धर्म साधना — डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी
128. मध्यकालीन प्रेम साधना — पं. परशुराम चतुर्वेदी
129. हिन्दी काव्य मे प्रेम-प्रवाह — पं. परशुराम चतुर्वेदी
130. उत्तर भारत की सन्त परम्परा — पं. परशुराम चतुर्वेदी

131. शैवमत — डा. यदुवंशी
132. आधुनिक हिन्दी काव्य मे प्रेम और सौन्दर्य — डा. खण्डेलवाल
133. हिन्दी काव्य मे प्रेम और श्रृंगार — डा. रांगेय राघव
134. आधुनिक हिन्दी काव्यों का शिल्प — डा. श्यामनन्दन 'किशोर'
135. हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि — डा. रत्ना कुमारी
136. हिन्दी काव्य मे श्रृंगार साधना और महाकवि बिहारी — डा. गणति चन्द्र गुप्त
137. रीति काल की भूमिका — डा. नगेन्द्र
138. रामचरित मानस — तुलसीदास
139. दोहावली — तुलसीदास
140. कामायनी — जयशंकर प्रसाद
141. पल्लव — सुमित्रानन्दन पंत
142. विनय पत्रिका — तुलसीदास
143. जगद्विनोद — पद्माकर
144. रसराज — मतिराम
145. चिन्तामणि — आ. रामचन्द्र शुक्ल
146. तवस्सुफ अथवा सूफीमत — डा. चन्द्रवली पाण्डेय
147. साहित्य संदीपनी — डा. चन्द्रवली पाण्डेय
148. चिदविलास — सम्पूर्णानन्द
149. सौन्दर्य-विज्ञान — हरिवंश सिंह शास्त्री
150. साहित्य और सौन्दर्य — डा. फतह सिंह
151. सौन्दर्य शास्त्र की पाश्चात्य धारणा — राजेन्द्र प्रताप सिंह
152. सौन्दर्य तत्व — दास गुप्त
153. कला और सौन्दर्य — रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख'
154. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व — डा. कुमार विमल
155. काव्य के उदात्त तत्व — डा. नगेन्द्र
156. नारद भक्ति सूत्र (योगदर्शन) — सं. हनुमान प्रसाद पोद्दार

157. पातंजल योगसूत्र (योगदर्शन) प्रकाशक-गीताप्रेस, गोरखपुर
158. प्रेमयोग — वियोगी हरि
159. आधुनिक हिन्दी काव्य मे सौन्दर्य भावना — शकुन्तला शर्मा
160. सौन्दर्य विज्ञान की भूमिका — ले. हरिवंश सिंह शास्त्री:भूमिका-संपूर्णानिंद
161. सौन्दर्य-शास्त्र — डा. हरद्वारी लाल
162. चित्र रेखा की भूमिका — ले. डा. राम कुमार वर्मा भूमिका ले.- डा. अमरनाथ झा
163. सौन्दर्यतत्व और काव्य सिद्धान्त — सुरेन्द्र वारलिंगे अनु.-मनोहर काले
164. उदात्त के विषय मे — डा. निर्मला जैन
165. आधुनिक हिन्दी काव्य मे विरह भावना — डा. मधुर मालती सिंह
166. रीतिकालीन कविता एवं श्रृंगार विवेचन — राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
167. आधुनिक काव्य मे नारी भावना — डा. शैल कुमारी
168. रसराज — मतिराम
169. गीतिकाव्य — राम खेलावन पाण्डेय
170. हिन्दी साहित्य बींसवी सदी — आ. नन्द दुलारे बाजपेयी
171. हिन्दी काव्य-धारा — राहुल सांकृत्यायन
172. हिन्दी साहित्य का इतिहास — आ. रामचन्द्र शुक्ल
173. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास — डा. राम कुमार वर्मा
174. हिन्दी साहित्य — डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी
175. हिन्दी साहित्य का आदिकाल — डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी
176. कामसूत्र (संस्करण 1902वि.) — वात्स्यायन श्री गंगाविष्णु दास
177. कवि रहस्य (प्रथम संस्करण) — डा. गंगानाथ झा
178. मैथिली लोक गीत — डा. अणिमा सिंह
179. मैथिली लोक गीत — रामइकबाल सिंह
180. मैथिली लोक गीतों का अध्ययन — डा. तेज नारायण लाल

181. मैथिली गीत संग्रह — भोला झा
182. विद्यापति:अनुशीलन एवं मूल्यांकन — सं. डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव
183. हिस्ट्री आफ मिथिला — डा. उपेन्द्र ठाकुर
184. हिस्ट्री आफ तिरहुत — श्याम नारायण सिन्हा
185. हिस्ट्री आफ संस्कृत लिलरेचर — मैकडोनल
186. हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर — डा. जयकान्त मिश्र

बंगला :

187. बंग भाषा ओ साहित्य — डा. दिनेश चन्द्र सेन
188. बंगला साहित्येर कथा — श्रीकुमार वंद्योपाध्याय
189. कृष्णकीर्तन — चण्डीदास
190. वैष्णव रस साहित्य — खगेन्द्र नाथ मित्र
191. चैतन्य चरितामृत — कृष्णदास कविराज
192. बंगाली लिटरेचर — डा. जे. सी. घोष
193. मध्ययुगेर साधना — क्षितिमोहन सेन
194. वैष्णव साहित्य — सुशील कुमार चक्रवर्ती
195. ओरिजन एण्ड डेवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज — डा. सुनीति कुमार चटर्जी
196. हिस्ट्री आफ ब्रजबुली — डा. सुकुमार सेन

संस्कृत :

197. ऋग्वेद
198. अथर्ववेद
199. कठोपनिषद्
200. श्वेताश्वरोपनिषद्
201. बृहदारण्यक उपनिषद्
202. केनोपनिषद्
203. मुण्डकोपनिषद्
204. तैत्तरीयोपनिषद्
205. ऐतरेयोपनिषद्
206. छांदोग्योपनिषद्
207. ईशोपनिषद्
208. श्रीमद्भागवत

209. ब्रह्मवैवर्तपुराण
210. विष्णु पुराण
211. वृहद् विष्णु पुराण
212. ऋग्वेद संहिता
213. तैत्तरीय आरण्यक
214. तैत्तरीय बाह्मण
215. ब्रह्मसूत्र
216. शंकर भाष्य
217. नारदभक्ति सूत्र
218. शांडिल्य भक्ति सूत्र
219. महाभारत - वेदव्यास
220. औचित्य-विचार-चर्चा-क्षेमेन्द्र
221. काव्यप्रकाश - मम्मट
222. काव्यादर्श - दंडी
223. ध्वन्यालोक-आनन्दवर्द्धनाचार्य
224. काव्यालंकार-वामन
225. साहित्यदर्पण-विश्वनाथ
226. रस-गंगाधर-पंडितराज जगन्नाथ अमरकोष उज्जवलनीलमणि
227. वाल्मीकि रामायण-वाल्मीकि
228. काव्य-मीमांसा-राजशेखर
229. नाट्यशास्त्र-भरतमुनि
230. कामसूत्र - वात्स्यायन
231. कर्पूरमंजरी - राजशेखर
232. अभिज्ञान शाकुन्तलम्-कालिदास
233. मालविकाग्निमित्र-कालिदास
234. विक्रमोर्वशीय-कालिदास
235. मृच्छकटिकम् - शूद्रक
236. मेघदूत-कालिदास
237. उत्तर रामचरितम् - भवभूति
238. मालतीमाधव - भवभूति
239. नैषध चरितम् - श्रीहर्ष
240. दशकुमार चरितम् - दण्डी

241. अमरूकशतक - अमरूक
242. आर्यासप्तशती - गोवर्द्धनाचार्य
243. गीतगोविन्द - जयदेव
244. सदुक्तिकर्णामृत - श्रीधरदास
245. रसिक जीवनम् - गदाधर भट्ट
246. गाहासत्तसई - हाल, सं. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी
247. बज्जालग्गम् - जयबल्लभ
248. प्राकृत पैंगलम् - नागकृत
249. संदेशरासक - अब्दुर्रहमान
250. अलंकारशेखर - केशव मिश्र
251. वृहद् संहिता - वराहमिहिर
252. रसार्णवसुधाकर - श्रृङ्गारदेव
253. रसतरंगिणी - भानुदत्त
254. श्रृंगारशतक - भर्तृहरि
255. श्रृंगार तिलकम् - रुद्रभट्ट
256. श्रृंगार प्रकाश - भोजराज सं. बी. राघवन
257. दशरूपक - धनंजय
258. वेदान्त वार्तिक - मंडन मिश्र
259. द्वैतनिर्णय - महामहो० वाचस्पति मिश्र

(ENGLISH)

260.	Symposium	Plato
261.	Phaedrus	Plato
262.	Studies in a Dying Culture	C. Caudwell
263.	Among the Great	D. K. Roy
264.	Kalidas : A study	G. C. Jhala
265.	Gitanjali	Rabindranath Tagore
266.	The Number of Rasas	V. Raghawan
267.	Psychology of Sex	Oswald Schwarz
268.	The Pleasures of Philosophy	Will Durant
269.	The Mansions of Philosophy	Will Durant
270.	Married Love	Marrie Stopes
271.	Sexual side of Marriage	M. J. Exner
272.	Thus spake Vivekanand	Vivekanand
273.	Sanskrit English Dictionary	Sri Monier - Williams
274.	New International Dictionary of English Language	Webster
275.	Sanskrit - English Dictionary	V. S. Apte
276.	Sadhana	Rabindranath Tagore
277.	A History of Aesthetics (1949)	Bernard Bosanquet
278.	The Principles of Criticism	W. Basil Worsfold
279.	What is Art	L. Tolstoy
280.	Aesthetics	Douglas Ainslic
281.	Philosophy of Croce	Wildon Carr
282.	Essays in criticism	Mathew Arbold
283.	Art and Social Life	G. V. Plenkhanov
284.	The Philosophy of Beautiful	W. Knight
285.	A Modern Book of Aesthetics	Melvin M. Rader
286.	Indian Aesthetics	R. K. Ramswami
287.	Eastern Lights	Mahendranath Sircar
288.	The Dance of Shiva	Ananda Coomarswami
289.	'Art'	Clive Bell
290.	The Making of Literature	R. A. Scott James
291.	Encyclopedia of Religion and Ethics	
292.	Chamber's Encyclopedia Vol. - 1, Revised Edition	
293.	An Introduction to Aesthetics	E. F. Carrit
294.	The Sublime	Longinus. Translator- H.L. Havel
295.	Beauty and other Forms of Value	S. Alexander
296.	Treatment of Love in Sanskrit Literature	S. K. Dey
297.	A General Introduction to Psycho Analysis	Sigmund Freud
298.	Freud : His Dream and Sex Theories	Joseph Jastorw
299.	Dreams and Night mares	J. A. Hadfield
300.	Symbolism : A Psychological study	Dr. Padma Agrawal
301.	Personality	Rabindranath Tagore
302.	Principles of Criticism	L. Abercrombic
303.	Judgement in Literature	W. Basil Worsfield
304.	A Dictionary of Philosophy	Drener James
305.	The Erotic Motive in Literature	Friedlander
306.	Purgatoria	Dante
307.	Love against Hate	Karl Manninger
308.	Outline of Psychology	Mc Dougall
309.	Psychology	Shaffer, 0ilmer B. and schoem M.
310.	Psychology	Woodworth, R. S.
311.	The Foundation of Characters	A. F. Shand
312.	Sence of Emotion	Dr. Bhagwandas
313.	Sex in relation to Society	Havlock Ellis
314.	The Sense of Beauty	G. Gantayan
315.	Psychology of Sex	Havlock Ellis
316.	Fashion in Love - do what you will	A. Huxley
317.	Post Sahajiya Cult	Mahendramohan Bose
318.	Beauty (1930)	H. H. Purkhurast
319.	Studies of the Psychology of Sex Vol-I	Havlock Ellis
320.	Essays in Criticism (Poems of Wordsworth)	Mathew, Arnold
321.	The History of Philosphy (1927)	Durant, Will
322.	Three Lectures on Aesthetics	Bernard Bonanquet
323.	Illusion and Reality	Caudwell, Christopher
324.	Psychological Studies in Rus	Dr. Rakesh Gupta
325.	An Introduction to Social Psychology	W. Macdougall
326.	Psychology	R. S. Woodworth
327.	Psychology of Emotion	Maccurdy
328.	A Guide to Philosophy	C. E. M. Joad
329.	A Study in Aesthetics (1931)	Louis Arnauld Ried
330.	The Position of Women in Hindu Civilization	A. S. Altaker
331.	Women in the Vedic Age	Shakuntala Rao
332.	Prignancy - Birth Abortion	Kinsay Institute of Sex Research
333.	Love in Hindu Literature	Dr. B. K. Sirkar
334.	Love in the Poems and Plays of Kalidas (1942)	V. Raghawan
335.	Marriage and Morals	Russel
236.	A study in the Psychology of Human actions	A. H. Burlton Allien
337.	Individual Psychology	Adler
338.	Pleasures and Instincts	Allien, S.
339.	Poetry and Fine Arts (Tragedy - Aristotle)	Butcher
340.	Dictionary of Philosophy and Psychology	Balwin
341.	Innumberable Instincts of Man	Claud, A

342. Three Essays on Theory of Sexuality — Helene Deutsch M. D.
343. Personality and Problems of Adjustment — Jung
344. Ideal Marriage — Van-de-Veldar
345. Kinsay Report — Kinsay
346. Sex and character — Weinenger
347. Studies in the Kamasutra — Chakladar
348. Similies of Kalidas — K. C. Pillai
349. Indian coschumes (1941) — G. C. Dhorye
350. Sahitya Darapan of Viswanath — Kane
351. The Problems of Style — J. Mury Midelton
352. Dictionary of world Literary Terms — J. S. Shiple
353. A Note on Literary criticism — T. Farell
354. Indian Heritage — Humayun Kabir
355. Poetic Image — C. D. Lewis
356. Modern Indian Culture — D. P. Mukherjee
357. Literature and Reality — Howard Fast.

पत्र-पत्रिका :

(1) इण्डियन हिस्ट्री क्वार्टरली, अंक 35, 1959
(2) जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल (1903)
(3) जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसाइटी, अंक 43, 45
(4) इण्डियन ऐंटिक्वेरी, 1875, 1899
(5) जर्नल आफ इण्डियन हिस्ट्री, अंक 32
(6) जर्नल आफ द न्युमिस्मेटिक सोसाइटी आफ इण्डिया, 1957, अंक-19, खंड-2
(7) समालोचक (आगरा) क सौन्दर्य शास्त्र विशेषांक, सम्पादकीय, पृष्ठ-3, 4
(8) बी. एच. यू. जर्नल, सिलवर जुबली, नम्बर, 1942
(9) मिथिला मिहिर सं. सुधांशु शेखर चौधरी, (पटना)क विद्यापति विशेषांक (1970) सँ 1977 धरि।
(10) स्मारिका (विद्यापति विषयक विविध निबन्ध), चेतना समिति, पटना, 1971
(11) मिथिला दर्शन : सं. डा. प्रबोध नारायण सिंह एवं डा. अणिमासिंह, कलकत्ता
(12) मैथिली प्रकाश : सं. इन्द्रगोविन्द झा एवं मदन चौधरी, कलकत्ता।
(13) मिथिला भारती : सं. राजेश्वर झा, मैथिली संस्थान, पटना ।

●



नाम : **डॉ० वीरेन्द्र मल्लिक**
पिता : स्व० अजब नारायण मल्लिक
जन्म : 3 जनवरी, 1937 ई.
जन्मस्थान : परसौनी, मधुबनी, बिहार-847228
शिक्षा : एम.ए., पी.एच-डी.
वृत्ति : एम.जी.आर. अकादमी, कोलकाताक अवकाशप्राप्त हिन्दी विभागाध्यक्ष। प्रेसिडेंसी कालेज कोलकाता मे पूर्व पार्ट टाइम हिन्दी लेक्चरर।
प्रकाशित कृति : **अग्नि-शिखा** (कविता-संग्रह)-2006 ई.
प्रेम-सौन्दर्य-विधायक विद्यापति (शोध-ग्रंथ)-2016 ई.
अप्रकाशित कृति : नाटक आ रंगमंच : प्रकृति आ प्रतिमान (आलोचना), प्रथम पुरुष (काव्यालोचना), विभूति-विमर्श (शोधपरक साहित्यिक परिचय), अथातो काव्य जिज्ञासा (कविता-संग्रह), मिस लाल (कथा-संग्रह), मैथिली पत्र-पत्रिका : एक सर्वेक्षण (शोधपरक आलेख), धिया-पुताक नाम।
अनुवाद अप्रकाशित : व्यक्तिगत (डा. लक्ष्मी नारायण लालक नाटक) हिन्दी सँ मैथिली।
आधे-अधूरे (मोहन राकेशक चर्चित नाटक) हिन्दी सँ मैथिली।
आषाढ़ का एक दिन (मोहन राकेशक नाटक) हिन्दी सँ मैथिली।
सम्पादन : **आखर** (मासिक पत्रिका) 1967 ई., कोलकाता
मि० (प्रथम मैथिली मिनी पत्रिका) 1970 ई., कोलकाता
अग्नि-पत्र (अनियमित पत्रिका) 1973 ई., कोलकाता
अभिनय संवाद (हिन्दी नाट्य पत्रिका) 1979 ई., कोलकाता
सम्मान : मिथिला विकास परिषद, कोलकाता (यात्री सम्मान) 2011 ई.
विद्यापति स्मारक मंच, कोलकाता (लाइफ एचिभमेंट अवार्ड) 2012 ई.
अखिल भारतीय मिथिला संघ, दिल्ली सम्मान, 2013 ई.
कोलकाताक वरिष्ठ साहित्यकार ओ युवा कविलोकनि द्वारा प्रदत्त साहित्य सम्मान, 2016 ई.
यात्री चेतना पुरस्कार, चेतना समिति, पटना, 2016 ई.
* बंगला, पंजाबी, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषा मे अनेकहु कविता प्रकाशित।
* नाटक आ रंगमंच सँ प्रतिबद्ध, विगत पचास वर्ष सँ मिथिला-मैथिलीक समर्पित- सेनानी।

सम्पर्क : ए-816, फर्स्ट फ्लोर, जी.डी. कालोनी, हनुमान मन्दिर के पास, मयूर विहार-III, दिल्ली-96, मोबाइल : 09830460649


प्रकाशक
शेखर प्रकाशन, पटना

ISBN : 978-81-931779-2-1